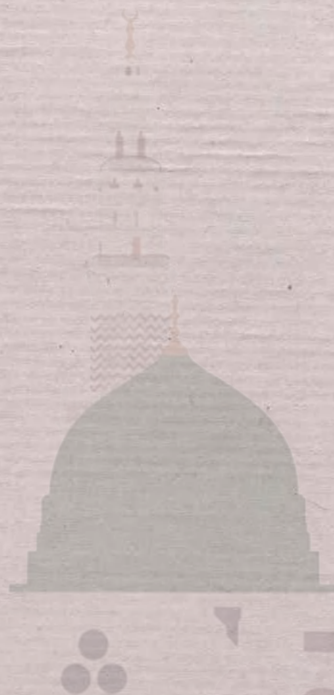
بسم اللہ الرحمن الرحیم

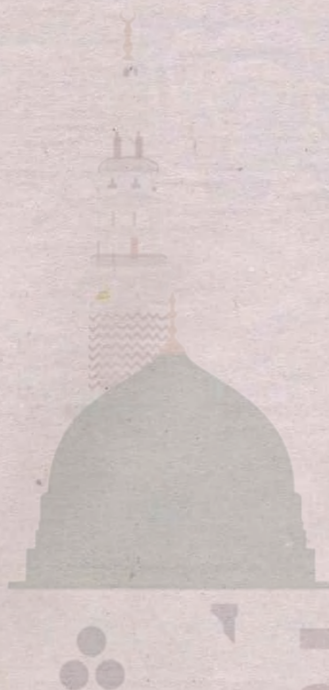
# احسن البیان فی تفسیر القرآن

حضرت العلامہ مولانا محمد ادریس

ناشر

ادارۃ خدمۃ القرآن والسنۃ




www.maktabah.org



بِسۡمِ اللّٰهِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ

إِنَّ هَٰذَا الْقُرْآنَ يَهْدِي لِلَّتِي هِيَ أَقْوَمُ وَيُبَشِّرُ الْمُؤْمِنِينَ (الاسراء)

تحقيق هيءُ قرآن هدايت ڪري ٿو ان (وات)، لاءِ جيڪا صفا سڌي آهي ۽ ايمان وارن

کي خوشخبري ڏي ٿو

# احسن البيان في تفسير القرآن


حضرت الحاج مولانا محمد ادريس ڏاهري



ناشر:

ادارهٔ خدمة القرآن والسنة

شاهپور جهانيان ضلع نوابشاه

نالو : اَحسَنُ البيان
فـي
تفَسِيرِ القُرآن

مفسّر: شيخ التفسير والحديث
حضرت الحاج مولانا مُحمّد ادريس ڈاهري
مهتمم جامعه مُحمّديه مدير ادارهٔ خدمة القران
والسُنّة ـ شاهپور جهانيان

0244-314244 - 0300-3028840
0301-3814120 - 03342822660

تاريخ اشاعت : 2006

ڇپائيندڙ : ادارهٔ خدمة القرآن والسنة
شاهپور جهانيان ضلع نواب شاهه سنڌ

پريس : ضياء القرآن پبليڪيشنز لاهور

زيرنگراني : صاحبزاده عاشق حسين ڈاهري
صاحبزاده حافظ احسانُ الله ڈاهري
صاحبزاده قاري محمّد اسد الله ڈاهري

ملڻ جو هنڌ
جامعه محمديه
شاهپور جهانيان ضلع نواب شاهه سنڌ

# احسن البيان

في

# تفسير القرآن

(جلد پيو)

مفسر: حضرت علامه مولانا الحاج محمد ادريس الداهري النقشبندي

چپائيندڙ

ادارہ خدمة القرآن والسنة

مدرسه عربيه جامعه محمديه شاهپور، جهانيان، ضلع نوابشاهه

كتاب جو نالو: احسن البيان في تفسير القرآن

مفسر: حضرت علامه مولانا الحاج محمد ادريس الداهري النقشبندي

كمپوزنگ: اسلامک کمپيوٽر ڪمپوزنگ سينٽر- لطيف آباد نمبر ۴- حيدرآباد

كمپوزر: اسدالله پنهور- ظهيرالدين پنهور

طباعت: نفيس پرنٽنگ پريس - لجپت روڊ حيدرآباد، سنڌ

هديو ۲۵۰/ روپيا

ملڻ جو هنڌ

# اداره خدمة القرآن والسنة

شاهپور جهانيان، ضلع نوابشاهه- سنڌ

# سورة آلعمران جي مضمونن جي فهرست


| عنوان | صفحو |
|---|---|
| تعارف | ١ |
| بقره سان تعلق ۽ ربط | ۴ |
| ٻيا نالا | ٥ |
| فائدو | ٦ |
| آلعمران جون ڀلايون ۽ برڪتون | = |
| آيت ١ کان ۴ تائين - تفسير | ٧ |
| شان نزول | ٨ |
| فائدو | ١١ |
| فائدو | ١٢ |
| آيت ٥ کان ٩ تائين | ١٣ |
| فائدا | ١۴ |
| تفسير | ١٦ |
| سوال - جواب | ١٩ |
| الراسخون في العلم | ٢٠ |
| فائدو | ٢١ |
| آيت ١٠ | ٢٢ |
| آيت ١١- تفسير | ٢٣ |
| فائدا | ٢۴ |
| آيت ١٢- تفسير | ٢٥ |
| فائدو | ٢٦ |
| آيت ١٣ | ٢٧ |
| فائدو | ٢٨ |
| فائدو | ٢٩ |
| فائدو - سوال - جواب | ٣٠ |
| آيت ١۴- ١٥- تفسير | ٣١ |
| فائدا | ٣٣ |
| آيت ١٦- ١٧- تفسير | ٣۴ |
| آيت ١٨ - تفسير | ٣٧ |

| عنوان | صفحو |
|---|---|
| سوال - جواب | ٣٨ |
| حديثون - فائدو | ٣٩ |
| شان نزول ۽ هن آيت جي تلاوت کان پوءِ ڇاچئجي؟ | ۴٠ |
| آيت ١٩ | ۴١ |
| آيت ٢٠ - تفسير | ۴٢ |
| حضور عليه الصلواة والسلام جن ساري مخلوق لاءِ رسول آهن | ۴٥ |
| عام رسالت جا دليل | = |
| آيت ٢١- ٢٢ | ۴٨ |
| آيت ٢٣- ٢۴- ٢٥- تفسير | ۴٩ |
| فائدو | ٥٠ |
| آيت ٢٦- ٢٧ | ٥١ |
| تفسير | ٥٢ |
| هنن آيتن پڙهڻ جون برڪتون | ٥٣ |
| آيت ٢٨- تفسير | ٥٥ |
| شان نزول | ٥٦ |
| فائدا | ٥٧ |
| لللهيت واري محبت جو ثواب | ٥٩ |
| سوال - جواب | ٦٠ |
| آيت ٢٩- ٣٠ | ٦٢ |
| تفسير- فائدو | ٦٣ |
| آيت ٣١- ٣٢ | ٦۴ |
| فائدا | ٦٦ |
| مسئلو- اطاعت ۽ اتباع ڇا آهي؟ | ٦٨ |
| فائدا | ٦٩ |
| نقل | ٧٢ |
| آيت ٣٣- ٣۴- شان نزول | ٧٣ |

| | |
|---|---|
| سوال - جواب | ٧۴ |
| آلعمران مان مراد | ٧٦ |
| فائدا | ٧٧ |
| آيت ٣۵- ٣٦ | ٨٣ |
| آيت ٣٧- تفسير | ٨۴ |
| سوال - جواب - فائدو | ٨۵ |
| زڪريا عليہ السلام جي تربيت جا فائدا | ٨٧ |
| ڪرامتن جو ثبوت | ٨٨ |
| هڪ عجيب نڪتو | ٩٢ |
| فائدا | ٩٣ |
| فائدا- تنبيه | ٩٦ |
| آيت ٣٨ کان ۴١ | ٩٧ |
| تفسير | ٩٨ |
| فائدا | ١٠١ |
| آيت ۴٢- ۴٣ | ١٠۴ |
| تفسير | ١٠۵ |
| سوال جواب - مريم سائڻ جو شان | ١٠٦ |
| سوال - جواب | = |
| ٽي حديثون | ١٠٧-١٠٨ |
| سوال - جواب | ١١٠ |
| مسئلو- فائدا | = |
| آيت ۴۴ - تفسير | ١١٣ |
| تنبيه | ١١۵ |
| آيت ۴۵ کان ۴٨ | ١١٦ |
| آيت ۴٩ - تفسير | ١١٨ |
| تنبيه | ١١٩ |
| سوال- جواب - فائدو | ١٢٣ |
| سوال - جواب | ١٢۴ |
| فائدو | ١٢٧ |
| معجزا حق آهن | ١٢٩ |
| تنبيه | ١٣٠ |
| تنبيه- فائدا | ١٣١ |
| فائدو- خصوصي ڪرم | ١٣٢ |
| آيت ۵٠- ۵١- تفسير | ١٣٣ |
| فائدا | ١٣۴ |
| آيت ۵٢- ۵٣- تفسير | ١٣۵ |
| حوارين جي معنيٰ | ١٣٦ |
| حضرت زبير جي فضيلت - انصارالله جي معنيٰ | ١٣٧ |
| فائدو | ١٣٨ |
| آيت ۵۴- تفسير | ١٣٩ |
| سوال - جواب | ١۴٠ |
| آيت ۵۵- ۵٦- ۵٧- ۵٨- تفسير | ١۴٢ |
| حضرت عيسيٰ عليہ السلام جي حياتيءَ نزول جو مسئلو | ١۴٧ |
| حديث ١- ٢ | ١۵٠ |
| حديث ٣- ۴ | ١۵١ |
| آيت ۵٩- ٦٠- تفسير | ١۵٢ |
| فائدا | ١۵٣ |
| آيت ٦١- ٦٢- ٦٣- تفسير | ١۵۴ |
| مباهلي جي معنيٰ | ١۵۵ |
| سوال - جواب | ١۵٧ |
| چار آيتون | ١۵٨ |
| سوال - جواب | ١۵٩ |
| فائدو- سوال - جواب | ١٦٠ |
| آيت ٦۴- ٦۵- تفسير | ١٦١ |
| فائدو | ١٦٢ |
| سوال - جواب - فائدو | ١٦٣ |
| آيت ٦٦- ٦٧- ٦٨- تفسير | ١٦٦ |
| آيت ٦٩ کان ٧١ تائين | ١٦٧ |
| آيت ٧٢- ٧٣- ٧۴- تفسير | ١٦٩ |
| آيت ٧۵- ٧٦- تفسير | ١٧٢ |
| سوال - جواب - مسئلو | ١٧٣ |
| فائدو- آيت ٧٧ | ١٧۴ |
| تفسير- شان نزول | ١٧۵ |
| فائدو - آيت ٧٨- تفسير | ١٧٦ |
| آيت ٧٩- ٨٠- تفسير | ١٧٧ |
| شان نزول | ١٧٨ |

| | |
|---|---|
| فائدو۱- فائدو ۲ | ۱۷۹ |
| نبين عليهم السلام جو معصوم هجڻ | ۱۸۰ |
| آيت ۸۱- ۸۲- تفسير | ۱۸۲ |
| فائدا | ۱۸۳ |
| سوال - جواب - فائدو | ۱۸۴ |
| سوال - جواب - فائدو | ۱۸۵ |
| سوال - جواب - آيت ۸۳ | ۱۸٦ |
| آيت ۸۴- تفسير- سوال- جواب- فائدو | ۱۸۷ |
| آيت ۸۵- تفسير | ۱۸۸ |
| آيت ۸٦ کان ۸۹ - تفسير | ۱۹۰ |
| آيت ۹۰- ۹۱- تفسير | ۱۹۱ |
| آيت ۹۲ | ۱۹۲ |
| سوال - جواب - فائدا | ۱۹۳ |
| سوال - جواب - آيت ۹۳ | ۱۹۴ |
| آيت ۹۴- ۹۵- تفسير- سوال- جواب | ۱۹۵ |
| فائدا | ۱۹٦ |
| آيت ۹٦- ۹۷- تفسير | ۱۹۷ |
| مکي مکرمه جي مختصر تاريخ | ۱۹۹ |
| مڪ مڪرم جا نالا | ۲۰۰ |
| بيت الله جا نالا | = |
| بيت الله جي حاضريءَ جون ڀلايون | ۲۰۳ |
| حج نہ ڪندڙ جي سزا | ۲۰۴ |
| آيت ۹۸- ۹۹- ۱۰۰- ۱۰۱- تفسير | ۲۰۵ |
| آيت ۱۰۲- ۱۰۳- تفسير | ۲۰۷ |
| پهريون اصول | ۲۰۸ |
| تقويٰ جو حق ڇا آهي؟ | = |
| ٻيو اصول | = |
| سوال- جواب | ۲۰۹ |
| آيت ۱۰۴ - ۱۰۵- تفسير | ۲۱۰ |
| هڪ غلطيءَ جو ازالو- فائدو- | |
| چڱائي چوڻ لاءِ ضروري ڳالهہ | ۲۱۱ |
| فائدا | ۲۱۳ |
| سوال - جواب | ۲۱۴ |
| آيت ۱۰٦-۱۰۷-۱۰۸-۱۰۹- تفسير | ۲۱۵ |
| سوال | ۲۱٦ |
| جواب | ۲۱۷ |
| فائدو | ۲۱۸ |
| فائدا | ۲۱۹ |
| فائدو- آيت ۱۱۰ | ۲۲۰ |
| شان نزول- نبوي حديثن مان هن امت | |
| جون ڀلايون | ۲۲۱ |
| فائدو | ۲۲۳ |
| سوال - جواب | ۲۲۴ |
| فائدا | ۲۲۵ |
| آيت ۱۱۱- ۱۱۲ | ۲۲٦ |
| تفسير- آيت ۱۱۳ | ۲۲۷ |
| آيت ۱۱۴- ۱۱۵- ۱۱٦- تفسير | ۲۲۸ |
| فائدا | ۲۲۹ |
| فائدو- آيت ۱۱۷- تفسير | ۲۳۰ |
| فائدو- هڪ علمي نڪتو | ۲۳۱ |
| آيت ۱۱۸- شان نزول | ۲۳۲ |
| تفسير- فائدا | ۲۳۳ |
| افسوس موجوده دور- فائدو | ۲۳۴ |
| آيت ۱۱۹- تفسير | ۲۳۵ |
| فائدا | ۲۳٦ |
| فائدا- آيت ۱۲۰- تفسير | ۲۳۷ |
| فائدو- مسئلو | ۲۳۸ |
| آيت ۱۲۱- ۱۲۲- تفسير- احد جي | |
| جنگ جو واقعو | ۲۳۹ |
| حضور عليہ الصلواة والسلام جن جي تلوار | ۲۴۱ |
| مسلمانن جو لشڪر | ۲۴۲ |
| منافقن جي غداري | ۲۴۳ |
| جنگ جو ميدان ملهائڻ | ۲۴۴ |
| آيت ۱۲۳ کان ۱۲۷ | ۲۴٦ |
| تفسير- بدر جي جنگ جو مختصر احوال | ۲۴۷ |
| ڇا ملائڪ جنگ ۾ پهتا هئا | ۲۴۹ |
| آيت ۱۲۸- ۱۲۹ | ۲۵۰ |
| تفسير | ۲۵۱ |

| | |
|---|---|
| تنبيه | ٢٥٢ |
| آيت ١٣٠- ١٣١- ١٣٢- تفسير | ٢٥٤ |
| فائدو | ٢٥٥ |
| سوال - جواب | ٢٥٦ |
| آيت ١٣٣ کان ١٣٦ | ٢٥٩ |
| تفسير- سوال - جواب | ٢٦٠ |
| فائدو | ٢٦١ |
| هڪ عجيب سوال - جواب | ٢٦٢ |
| فائدو | ٦٣ |
| امام زين العابدين جو واقعو | ٢٦٤ |
| مغفرت طلب ڪرڻ جون ڀلايون | ٢٦٥ |
| آيت ١٣٧- ١٣٨- تفسير | ٢٦٧ |
| آيت ١٣٩ کان ١٤٣ | ٢٦٩ |
| تفسير | ٢٧٠ |
| فائدو | ٢٧٢ |
| آيت ١٤٤- ١٤٥ | ٢٧٤ |
| تفسير | ٢٧٥ |
| فائدو | ٢٧٦ |
| حبيب ﷺ جن جي ذاتي نالي | |
| محمد ﷺ جون برڪتون | ٢٧٧ |
| حبيب ﷺ حقيقي دنياوي جسماني | |
| حياتيءَ سان زنده آهن | ٢٧٩ |
| قرآن ڪريم مان ثبوت | ٢٨٠ |
| نبوي حديثن مان ثبوت - حديث ١ | ٢٨٢ |
| حديث ٢- ٣ | ٢٨٣ |
| حديث ٤ | ٢٨٤ |
| مسلمانو! خبردار رهو | ٢٨٨ |
| توڪل جو ترهو | ٢٨٩ |
| آيت ١٤٦ کان ١٤٨- تفسير | ٢٩١ |
| آيت ١٤٩- ١٥٠- ١٥١- تفسير | ٢٩٣ |
| حضور عليہ الصلوٰة والسلام جن | |
| جو دشمن تي رعب | ٢٩٥ |
| آيت ١٥٢- ١٥٣- تفسير | ٢٩٦ |
| فائدو | ٢٩٩ |
| آيت ١٥٤- تفسير | ٣٠١ |
| سوال - جواب - فائدو | ٣٠٣ |
| آيت ١٥٥- تفسير | ٣٠٤ |
| حضرت عثمان رضي الله عنه تي اعتراض ۽ جواب | ٣٠٥ |
| فائدا | ٣٠٦ |
| تنبيه- آيت ١٥٦ | ٣٠٧ |
| آيت ١٥٧- ١٥٨- تفسير | ٣٠٨ |
| ٻه عجيب ڳالهيون | ٣٠٩ |
| آيت ١٥٩- تفسير | ٣١١ |
| فائدو | ٣١٢ |
| فائدو | ٣١٣ |
| فائدو- حضور ﷺ جن جا صلاحڪار | ٣١٤ |
| صلاح ڪرڻ سهڻو ڪم آهي ۽ ان لاءِ | |
| نبوي ارشادات | ٣١٥ |
| فائدو- آيت ١٦٠ | ٣١٧ |
| آيت ١٦١- ١٦٢- ١٦٣- تفسير | ٣١٨ |
| توڪل جون ڀلايون ۽ برڪتون | ٣١٩ |
| امانت ۾ خيانت جي سزا | ٣٢٠ |
| آيت ١٦٤ | ٣٢٢ |
| تفسير | ٣٢٣ |
| آيت ١٦٥- ١٦٦ کان ١٦٨- تفسير | ٣٢٨ |
| هڪ عجيب واقعو | ٣٣٠ |
| آيت ١٦٩ کان ١٧٥- تفسير | ٣٣٢ |
| شهيدن جي حياتي ڪهڙي آهي؟ | ٣٣٤ |
| ڇا غير شهيد شهيد جي درجي کي | |
| پهچي سگهي ٿو؟ | ٣٣٦ |
| فائدو | ٣٣٧ |
| شهادت ۽ شهيدن جو شان | ٣٣٨ |
| شهيد تي ڇانو- هڪ عظيم واقعو | ٣٣٩ |
| فائدا | ٣٤٢ |
| حسبنا الله ونعم الوڪيل پڙهڻ جا فائدا | ٣٤٥ |
| آيت ١٧٦ کان ١٧٨- تفسير | ٣٤٦ |
| آيت ١٧٩- تفسير | ٣٤٨ |
| الله تعاليٰ جي عطا سان نبي عليهم السلام | |
| ۽ ولي غيب جون ڳالهيون ڄاڻندا آهن | |
| قرآن مان دلائل | ٣٥٠ |

نبوي حديثن مان دلائل١ ٣٥١
دليل ٢- ٣ ٣٥٢
دليل ۴- آيت ١٨٠- ١٨١- ١٨٢ ٣٥٣
تفسير
زكواة نہ ڏيندڙن جي سزا ٣٥۴
فائدو ٣٥٥
ضروري وضاحت ٣٥٦
آيت ١٨٣- ١٨۴- تفسير ٣٥٧
آيت ١٨٥- ١٨٦- تفسير ٣٥٨
فائدو ٣٦٠
شان نزول ٣٦٢
آيت ١٨٧- ١٨٨- ١٨٩- تفسير ٣٦٣
مسلمان علماءِ متوجہ ٿين ٣٦۴
قرآن كريم كي پٺي ڏئي ويهڻ ٣٦٥
حرام آهي ٣٦٦

شان نزول - تنبيه ٣٦٩
اصحابن سڳورن ۾ آخرت جي سوچ ٣٧٠
آيت ١٩٠ كان ١٩٥- تفسير ٣٧٢
ولين جا فكر لاءِ فرمان ٣٧۴
هك سهڻي دعا ٣٧٧
هك عجيب واقعو- مغفرت طلبيءَ
سان مشكل حل ٿين ٿا ٣٨٠
مسلمان عورتون خبردار رهن ٣٨٢
ٻہ عجيب واقعا ٣٨۴
آيت ١٩٦ كان ٢٠٠ تائين- تفسير ٣٨٥
ابرار سڏڻ جو سبب ٣٨٦
جهاد لاءِ تيار رهڻ جو ثواب
هك عجيب ڳالهه ٣٨٩




# سورة النساءِ جي مضمونن جي فهرست



| عنوان | صفحو |
|---|---|
| سورة النساءِ جو تعارف | ٣٩١ |
| سوال - جواب | = |
| نبوي حديثن مان هن سورة جون ڀلايون | ٣٩٤ |
| پيارن اصحابن جو پيارو ارشاد | ٣٩٥ |
| آيت ١ کان ٤ تائين | ٣٩٦-٣٩٧ |
| سوال - جواب - مائٽي ڇنڻ جو گناهه | ٣٩٩ |
| سوال - جواب - فائدو | ٤٠٠ |
| فائدو | ٤٠٢ |
| شان نزول - فائدو | ٤٠٣ |
| حضور عليه الصلواة والسلام جن جي | |
| گهڻين شادين ۾ حڪمتون | ٤٠٥ |
| شادي شده عورتن سان شادي ڪرڻ | |
| ۾ حڪمتون | ٤٠٧ |
| سيده خديجه سان شادي ڪرڻ ۾ حڪمت | ٤١٢ |
| سيده خديجه جي عقلمندي ۽ سيده | |
| سودة سان شادي ڪرڻ ۾ حڪمت | ٤١٣ |
| سيده عائشه سان شادي ڪرڻ ۾ حڪمت | ٤١٤ |
| سيده حفصه سان شادي ڪرڻ ۾ حڪمت | = |
| سيده زينب بنت خزيمه سان شادي | |
| ڪرڻ ۾ حڪمت | ٤١٥ |
| سيده زينب بنت جحش سان شادي | |
| ڪرڻ ۾ حڪمت | = |
| سيده ام حبيبه، سيده جويريه، سيده | |
| صفيه، سيده ميمونه رضي الله عنهن | |
| سان شاديون ڪرڻ ۾ حڪمت | ٤١٦ |
| ٻانهن ۽ ٻانهين رکڻ تي اعتراض ۽ | |
| ان جو جواب | ٤١٧ |
| سوال - جواب | ٤١٨ |
| هڪ اهم مسئلو- فائدو | ٤٢١ |

| عنوان | صفحو |
|---|---|
| فائدا- عورتن کي مڙسن جي حقوق | |
| جو خيال رکڻ ضروري آهي | ٤٢٢ |
| آيت ٥- ٦ | ٤٢٣ |
| تفسير- فائدو | ٤٢٤ |
| مسئلو - سوال - جواب | ٤٢٦ |
| دانائي ۽ عقلمند هجڻ ڪيئن معلوم ٿيندو | ٤٢٧ |
| آيت ٧- ٨- ٩ | ٤٢٨ |
| آيت ١٠- تفسير | ٤٢٩ |
| فائدو | ٤٣٠ |
| فائدو | ٤٣١ |
| يتيم جي مال کائيندڙ جي سزا جو بيان | ٤٣٢ |
| هڪ اهم مسئلو- تنبيه - مسئلو | ٤٣٤ |
| مسئلا | ٤٣٥ |
| آيت ١١ | ٤٣٦ |
| تفسير | ٤٣٧ |
| مسئلا- نياڻين کي حصي ڏيڻ | |
| جي اهميت | ٤٣٨ |
| سوال - جواب | ٤٣٩ |
| آيت ١٢ | ٤٤١ |
| تفسير- مسئلو | ٤٤٢ |
| فائدا | ٤٤٣ |
| ضروري وضاحت - وصيت جا | |
| مسئلا- سوال | ٤٤٤ |
| جواب - مسئلو | ٤٤٥ |
| آيت ١٣- ١٤- تفسير | ٤٤٦ |
| انگريزي قانون تي عمل ڪندڙن | |
| ۽ ورثو نه ڏيندڙن لاءِ سزا | ٤٤٧ |
| علم الفرائض جي اهميت | ٤٤٩ |

| | |
|---|---|
| آيت ١٥- ١٦- تفسير | ٤٥٠ |
| زنا جي ثبوت لاءِ چار شاهد ڇو؟ | ٤٥١ |
| لونڊي بازي ڪندڙن جي سزا | ٤٥٢ |
| آيت ١٧- ١٨- تفسير | ٤٥٥ |
| فائدو- توبه ڪرڻ جون ڀلايون | ٤٥٦ |
| فائدو | ٤٥٨ |
| آيت ١٩- ٢٠- ٢١- تفسير | ٤٥٩ |
| فائدو | ٤٦٤ |
| فائدو | ٤٦٢ |
| افسوس هلندڙ دور جا ماڻهو | ٤٦٣ |
| آيت ٢٢- ٢٣ | ٤٦٤ |
| تفسير- مسئلا | ٤٦٥ |
| مسئلو | ٤٦٦ |
| کير پيئڻ جي مدت - مسئلا | ٤٦٧ |
| مسئلا | ٤٦٨ |
| مسئلا | ٤٦٩ |
| مسئلا | ٤٧٠ |
| مسئلو- وارثن جا قسم | ٤٧١ |
| مسئلا | ٤٧٢ |
| عدت ۾ وينل عورت جو مسئلو- | |
| نبين عليهم الصلواة والسلام جو ورثو | |
| نہ ورهايو ويندو شيعن جي طرفان سوال | ٤٧٣ |
| جواب | ٤٧٤ |
| سوال - جواب | ٤٧٦ |
| سوال - جواب - سوال - | ٤٧٨ |
| سوال - جواب | ٤٧٩ |
| آيت ٢٤- ٢٥ | ٤٨٠ |
| تفسير | ٤٨٣ |
| مسئلو | ٤٨٤ |
| سوال - جواب - وقتي نڪاح ۾ متعو | ٤٨٤ |
| ڪرڻ حرام آهي | |
| فائدو | ٤٨٧ |
| آيت ٢٦- ٢٧- ٢٨- تفسير | ٤٩٠ |
| آيت ٢٩- ٣٠- ٣١ | ٤٩٢ |
| آيت ٣٢- ٣٣- تفسير | ٤٩٣ |
| تجارت جي ڀلائي ۾ برڪت | ٤٩٤ |
| خودڪشي حرام آهي | ٤٩٦ |
| فائدو | ٤٩٧ |
| فائدو | ٤٩٨ |
| قلب جي صفائيءَ جي اهميت | ٥٠٠ |
| تنبيه | ٥٠١ |
| فائدو | ٥٠٥ |
| ڪبيرا گناهہ ڪيترا آهن؟ | ٥٠٣ |
| آيت ٣٤- ٣٥- تفسير | ٥٠٥ |
| ديندار عورتن جون ڀلايون | ٥٠٨ |
| سوال - جواب - آيت ٣٦- ٣٧ | ٥١١ |
| تفسير - عبادت جا قسم | ٥١٢ |
| مائٽن سان احسان ڪرڻ جي ڀلائي- | |
| نبوي حديثن ۾ يتيمن جي سنڀالڻ | |
| جو ثواب | ٥١٤ |
| مسڪينن جا قسم ۽ انهن جو حڪم | ٥١٥ |
| نبوي حديثن مان مهمان نوازيءَ جو ثواب | ٥١٧ |
| چوپاين تي رحم ڪرڻ لاءِ نبوي ارشاد | ٥١٨ |
| نبوي حديثن ۾ بخيليءَ جي مذمت | ٥١٩ |
| آيت ٣٨- ٣٩- ٤٠- تفسير | ٥٢٠ |
| ماڻهن کي ڏيکارڻ لاءِ خرچ ڪرڻ | |
| وڏو گناهہ آهي | ٥٢١ |
| آيت ٤١- ٤٢ | ٥٢٢ |
| تفسير- فائدو | ٥٢٣ |
| فائدو | ٥٢٤ |
| ختم نبوت جو دليل | = |
| انبياءِ عليهم السلام امتين | |
| جي احوال کان باخبر هوندا آهن | ٥٢٥ |
| آيت ٤٣ | ٥٢٦ |
| تفسير- هر قسم جو نشو حرام آهي | ٥٢٧ |
| مسئلو- غسل ڪرڻ ۾ حڪمت | ٥٢٨ |
| تيمم ڇاسان ڪجي- تيمم جو طريقو | = |
| مسئلو | ٥٢٩ |

| | |
|---|---|
| آيت ۴۴- ۴۵- ۴۶ | ۵۳۰ |
| آيت ۴۷- تفسير | ۵۳۱ |
| فائدو | ۵۳۲ |
| آيت ۴۸- ۴۹- ۵۰- تفسير- | ۵۳۳ |
| شرڪ جي معنيٰ ۽ ان جا قسم | ۵۳۴ |
| شرڪ ڇونه ٿو بخشيو وڃي | ۵۳۵ |
| پنهنجي يا ٻئي جي تعريف ڪرڻ جو مسئلو | ۵۳۷ |
| آيت ۵۱- ۵۲- ۵۳- ۵۴- ۵۵ | ۵۳۹ |
| تفسير- جبت ۽ طاغوت جي معنيٰ | ۵۴۰ |
| لعنت جا حقدار ڪير آهن؟ مسئلو | ۵۴۱ |
| حسد ڪرڻ گناهه آهي | ۵۴۲ |
| آيت ۵۶- ۵۷ | ۵۴۳ |
| تفسير | ۵۴۴ |
| سوال - جواب | ۵۴۵ |
| آيت ۵۸- تفسير | ۵۴۶ |
| آيت ۵۹- تفسير | ۵۴۹ |
| فائدا | ۵۵۰ |
| فائدو- مسئلو | ۵۵۱ |
| آيت ۶۰- ۶۱- ۶۲ | ۵۵۲ |
| آيت ۶۳- تفسير- شان نزول | ۵۵۳ |
| فائدا | ۵۵۴ |
| فائدا | ۵۵۶ |
| فائدو- آيت ۶۴ | ۵۵۷ |
| آيت ۶۵- تفسير | ۵۵۸ |
| هڪ عظيم الشان واقعو | ۵۵۹ |
| فائدو-اعتراض | ۵۶۰ |
| جواب - اعتراض- جواب | ۵۶۱ |
| مسئلو | ۵۶۲ |
| آيت ۶۶- ۶۷- ۶۸- ۶۹- ۷۰- تفسير | ۵۶۳ |
| فائدو | ۵۶۴ |
| فائدو | ۵۶۵ |
| هن آيت جو شان نزول- | = |
| اصحاب ڪرام جي دلين ۾ | = |
| رسول الله ﷺ جن سان جنت ۾ گڏ رهڻ جو شوق | ۵۶۶ |
| جنت ۾ نبين عليهم السلام سان گڏ رهڻ وارن جا عمل ۽ نبين سان قرب جو شرط انهن سان سڪ ۽ محبت آهي | ۵۶۹ |
| رسول الله ﷺ جن سان رفاقت ڪنهن رنگ ۽ نسل تي موقوف ناهي | ۵۷۰ |
| فائدو | ۵۷۱ |
| آيت ۷۱- ۷۲- ۷۳- ۷۴- تفسير | ۵۷۲ |
| آيت ۷۵- ۷۶- تفسير | ۵۷۵ |
| فائدو | ۵۷۶ |
| آيت ۷۷ | ۵۷۷ |
| آيت ۷۸- تفسير | ۵۷۸ |
| آيت ۷۹ | ۵۸۰ |
| سوال | ۵۸۱ |
| جواب- آيت ۸۰- ۸۱- ۸۲ | ۵۸۲ |
| تفسير | ۵۸۳ |
| فائدو | ۵۸۴ |
| آيت ۸۳- تفسير | ۵۸۵ |
| شان نزول- هرڪا ٻڌل ڳالهه ڪرڻ گناهه آهي | ۵۸۶ |
| فائدو-اولي الامر مان مراد ڪير آهن؟ | = |
| سوال-جواب | ۵۸۷ |
| آيت ۸۴- تفسير | ۵۸۹ |
| فائدا - آيت ۸۵ | ۵۹۰ |
| آيت ۸۶- ۸۷- تفسير | ۵۹۱ |
| سلام ۽ ان جي جواب جي تعليم | ۵۹۲ |
| اسلام جو سلام ٻين طريقن کان ڀلو آهي | ۵۹۳ |
| سلام ورائڻ جون ڀلايون | = |
| مسئلا- فائدا | ۵۹۵ |
| مسئلا - فائدو | ۵۹۶ |
| آيت ۸۸- ۸۹ | ۵۹۸ |
| آيت ۹۰- تفسير | ۵۹۹ |

| | |
|---|---|
| فائدا | ٦٠١ |
| آيت ٩١ | ٦٠٢ |
| آيت ٩٢- تفسير | ٦٠٣ |
| فائدو | ٦٠٤ |
| فائدو- مسئلو- آيت ٩٣ | ٦٠٥ |
| آيت ٩٤- تفسير- ناحق قتل جي سزا | ٦٠٦ |
| فائدو | ٦٠٨ |
| آيت ٩٥- ٩٦- تفسير | ٦٠٩ |
| فائدو | ٦١٠ |
| آيت ٩٧- ٩٨- ٩٩ | ٦١١ |
| آيت ١٠٠- تفسير | ٦١٢ |
| فائدا | ٦١٣ |
| آيت ١٠١ | ٦١٤ |
| آيت ١٠٢- ١٠٣ | ٦١٥ |
| آيت ١٠٤- تفسير- سفر ۾ نماز قصر | |
| ڪرڻ جي احڪام جو بيان | ٦١٦ |
| مسئلو | ٦١٧ |
| فائدو | ٦١٩ |
| فائدو- آيت ١٠٥ | ٦٢١ |
| آيت ١٠٦- ١٠٧- ١٠٨- تفسير | ٦٢٢ |
| شان نزول | ٦٢٣ |
| هڪ غلط فهميءَ جو ازالو | ٦٢٤ |
| آيت ١٠٩ | ٦٢٥ |
| آيت ١١٠- ١١١- ١١٢- تفسير | ٦٢٦ |
| آيت ١١٣- تفسير | ٦٢٨ |
| تنبيه | ٦٣١ |
| آيت ١١٤- ١١٥- تفسير | ٦٣٣ |
| امت جو اجماع حجت آهي | ٦٣٥ |
| آيت ١١٦- ١١٧- ١١٨- ١١٩- ١٢٠- ١٢١ | ٦٣٧ |
| تفسير- سوال - جواب | ٦٣٨ |
| شرڪ جي حقيقت - فائدو- هڪ اهم مسئلو | ٦٣٩ |
| تنبيه - فائدو- حضرت علي رضي الله | |
| تعاليٰ عنه جي پياري آيت - فائدو | ٦٤٠ |
| "من دون الله" جي تحقيق ۽ سمجهاڻي | ٦٤٢ |

| | |
|---|---|
| آيت ١٢٢- ١٢٣- ١٢٤- ١٢٥- | ٦٤٤ |
| تفسير- شان نزول - آيت ١٢٦ | ٦٤٥ |
| صالح عمل لاءِ ايمان ڪامل اولين شرط آهي | ٦٤٧ |
| شان نزول- خليل جي لغوي ۽ اصطلاحي معنيٰ | ٦٤٨ |
| هڪ عجيب روايت | ٦٤٩ |
| اسان جو نبي سڳورو صلي الله عليه وآله | |
| وسلم الله تعاليٰ جي حبيب هجڻ سان گڏ | |
| خليل به آهي جيئن هنن حديثن مان | |
| ثابت آهي- حديث ١ | ٦٥٣ |
| حديث ٢- حديث ٣- حديث ٤- حديث ٥ | ٦٥٤ |
| هڪ عجيب ۽ اهم فائدو- امام رباني | |
| مجدد الف ثاني عليه الرحمه جو مقام | ٦٥٥ |
| آيت ١٢٧- تفسير | ٦٥٦ |
| شان نزول | ٦٥٧ |
| آيت ١٢٨- ١٢٩- ١٣٠- تفسير | ٦٥٩ |
| آيت ١٣١- ١٣٢- ١٣٣- ١٣٤- تفسير | ٦٦٢ |
| سوال-جواب-مسلمانو! هوشيار رهو | ٦٦٣ |
| فائدو- آيت ١٣٥ | ٦٦٥ |
| تفسير | ٦٦٦ |
| هڪ اعليٰ مثال | ٦٦٧ |
| آيت ١٣٦- ١٣٧- تفسير | ٦٦٨ |
| فائدو | ٦٦٩ |
| آيت ١٣٨- ١٣٩- ١٤٠ | ٦٧٠ |
| آيت ١٤١- تفسير | ٦٧١ |
| آيت ١٤٢ کان ١٤٧ - تفسير | ٦٧٧ |
| نماز ۾ سستي ڪرڻ منافق جو | |
| ڪم آهي | ٦٧٨ |
| فائدا | ٦٧٩ |
| تنبيه- آيت ١٤٨- پ ٦ | ٦٨١ |
| آيت ١٤٩- تفسير | ٦٨٢ |
| دنيا تان ظلم هٽائڻ جو هڪ قانون | = |
| آيت ١٥٠- ١٥١ | ٦٨٤ |
| آيت ١٥٢- تفسير | ٦٨٥ |
| سوال - جواب - فائدو | ٦٨٦ |

| | |
|---|---|
| صرف الله تعاليٰ جي توحيد جو قائل ته | |
| شيطان به هو- اعتراض- جواب | |
| اهل كتاب مان كنهن عورت سان | |
| مسلمان مرد كي نكاح كرڻ جي | |
| اجازت ٻن شرطن سان آهي | ٦٨٧ |
| اعتراض-جواب | ٦٨٨ |
| اعتراض-جواب | ٦٨٩ |
| فائدو | ٦٩٠ |
| آيت ١٥٣- تفسير | ٦٩١ |
| آيت ١٥٤- ١٥٥ | ٦٩٢ |
| تفسير | ٦٩٣ |
| آيت ١٥٦- ١٥٧- ١٥٨ | ٦٩٥ |
| مرزائين ۽ قاديانين جو رد | ٦٩٧ |
| فائدو- آيت ١٥٩ | ٦٩٨ |
| آيت ١٦٠- ١٦١- ١٦٢- تفسير | ٦٩٩ |
| مرزا قادياني ۽ ملعون جو نسورو كوڙ | ٧٠٠ |
| فائدو ١- فائدو ٢ | ٧٠١ |
| فائدو ٣- فائدو ٤- اعتراض | ٧٠٢ |
| جواب - فائدو ٥- | ٧٠٣ |
| دين كان روكڻ جا به رستا- تنبيه | ٧٠٤ |
| آيت ١٦٣- ١٦٤ | ٧٠٦ |
| قاديانين جي طرفان معنوي تحريف- | |
| محبوب عليه الصلواة والسلام سان | |
| الله تعاليٰ پردي كان سواءِ ڳالهايو | ٧٠٩ |
| آيت ١٦٥- ١٦٦- تفسير | ٧١٢ |
| آيت ١٦٧ | ٧١٣ |
| آيت ١٦٨- ١٦٩- ١٧٠- تفسير | ٧١٤ |
| آيت ١٧١- تفسير | ٧١٦ |
| فائدو- هك عيسائيءَ جو اسلام | |
| قبول كرڻ | ٧١٨ |
| آيت ١٧٢ | ٧١٩ |
| آيت ١٧٣- تفسير | ٧٢٠ |
| سوال - جواب - فائدو | ٧٢١ |
| آيت ١٧٤- ١٧٥- تفسير | ٧٢٢ |
| آيت ١٧٦- فائدو | ٧٢٤ |
| تفسير | ٧٢٥ |

بسم الله الرحمٰن الرحيم

# سورة آل عمران جو تعارف

هن سورة سڳوريءَ جو نالو آل عمران آهي. قرآن پاڪ جي مفسرن جو اتفاق آهي ته هيءَ سورة مديني منوره ۾ نازل ٿي هئي هن ۾ ويهه (٢٠) رڪوع، ٻه سؤ (٢٠٠) آيتون، ٽي هزار پنج سؤ ٻائيتاليهه (٣٥٤٢) الفاظ، پندرهن هزار ٽي سؤ ڇٽيهه (١٥٣٣٦) حرف آهن. هن کي مطالعي ڪرڻ سان هن سورة سڳوريءَ جا ست مضمون نظر اچن ٿا.

١- هڪ ته هن پياريءَ سورة ۾ کولي کولي ٻڌايو ويو آهي ته انسانن جي هدايت لاءِ انهن جي خالق، مالڪ، الله جل جلاله جيڪو ضابطہ حيات عطا ڪيو آهي سو سيني جي لاءِ هڪ آهي، جنهن جو نالو "اسلام" آهي، ان جا بنيادي عقائد ۽ اصول زماني ۽ مڪان جي مختلف ۽ متعدد هجڻ جي باوجود ازلي ۽ ابدي آهن ڇوته هي دين انساني عقل ۽ دانائيءَ جو ناهيل نه پر سيني جي سچي معبود، الله جل جلاله جو عطا ڪيل آهي جيڪو حق آهي ۽ هر حال، هر زماني ۾ حق هڪ هوندو آهي هن سورة سڳوريءَ ۾ اسلام جي نالي کان پڄندڙن اهل ڪتاب کي صاف صاف ٻڌايو ويو آهي ته جن نبين سڳورن عليهم الصلواة والسلام جي نالن مبارڪن تي اوهان جدا جدا مذهبن جو بنياد قائم ڪيو آهي انهن سيني جو ۽ اوهان جي ڏاڏي سيدنا ابراهيم عليه الصلواة والسلام جو دين به اهوئي اسلام هو. اهڙيءَ طرح قرآن ڪريم دين ۽ مذهب جي نالي تي انسانيت جي وحدت ۽ ٻڌيءَ کي ٽڪرا ٽڪرا ڪندڙ تحريڪن کي سخت ڌڪ لڳائي انسانيت جي ايڪي لاءِ اهڙو مضبوط، مستحڪم اساس ۽ بنياد قائم ڪيو آهي جو جڏهن به انسان پنهنجي ذاتي، وطني ۽ قومي خودغرضين ۽ لالچن کان ڇوٽڪاري حاصل ڪرڻ ۾ ڪامياب ٿيو ته اهو ان اتحاد ۽ محبت جي مضبوط رشتي ۾ منسلڪ ٿيندو ڇوته سڀ انبياءِ سڳورا عليهم الصلواة والسلام ان هڪ دين جي لاءِ سڏيندڙ ۽ ان جا مبلغ هيا. اهوئي سبب هو جو هر نبي سڳوري عليه الصلوٰة والسلام پنهنجي دور کان اڳ ۾ آيل نبي ۽ رسول جي تصديق ڪئي ۽ پنهنجيءَ امت کي بعد ۾ اچڻ واري نبي سڳوري تي ايمان آڻڻ جي لاءِ هدايت ڪئي ان ئي سنت تي اسان جي آقا

ومولىٰ سرتاج انبياءِ، سرور اصفياءِ، حضور پرنور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن بہ عمل كيو ۽ اڳين سڀني نبين عليهم الصلوٰة والسلام تي پر جڏهن تہ كائنن پوءِ كوبہ رسول يا نبي اچڻو نہ هو ان جي ڪري بعد ۾ ڪنهن بہ نبي جي اچڻ جي نہ بشارت ڏنائون ۽ نہ ان تي ايمان آڻڻ جي لاءِ ڪو حڪم صادر فرمايائون. اها ڳالهہ سندن ذات والا صفات تي نبوت جي ختم هجڻ جو روشن دليل آهي انسانيت جي تڙيل، پکڙيل ذهنن کي درست ۽ هڪ ڪرڻ جي لاءِ قدرتي مشيت ان ذات، قدسي صفات، ختم الرسل، مولائي ڪل، هادي سبل صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن ڪي موڪليو ۽ اڳ ۾ اچڻ وارن سڀني پيغمبرن ڀلارن عليهم الصلواة والسلام کان سندن ذات تي ايمان آڻڻ، سندن تائيد ۽ مدد ڪرڻ لاءِ ميثاق ۽ پڪو عهد ورتو تانتہ انهن جي امتن کي بہ انڪار ڪرڻ جي مجال نہ رهي ۽ انهن جي اڳيان واضح ڪيو ويو تہ سڀني کي ٻڌيءَ اتحاد ۽ اتفاق جي لذت ۽ لطف جيڪڏهن ملندو ۽ حاصل ٿيندو تہ صرف اسلام جي جهنڊي هيٺان ۽ رحمة للعالمين، محبوب صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي قيادت ۾ ملندو.

٢- ٻيو تہ هن سورة کان اڳئين سورة بقره سڄوريءَ ۾ ڪافرن سان جنگ ۽ جهاد ڪرڻ جو حڪم هو ۽ هن سورة ۾ مسلمانن کي يهودين، نصارن ۽ مشرڪن جي خطرناڪ سازشن کان خبردار ڪندي سندن تربيت ڪئي وئي آهي ۽ ان تربيت ۽ تعليم تي خلوص دل سان عمل ڪرڻ جو نتيجو اهو نڪتو جو مسلمانن جي ننڍن لشڪرن روم ۽ ايران جي وڏن وڏن لشڪرن کي شڪستون ڏئي فتح حاصل ڪئي.

٣- ٽيون تہ هن سورة سڄوريءَ ۾ مسلمانن کي سندن مٿاهين مقام، منصب ۽ مرتبي کان واقف ڪندي ٻڌايو ويو آهي تہ اوهان سڀني امتن ۾ ڀلي امت آهيو اوهان جون ڀلائيون ۽ برڪتون صرف پنهنجي لاءِ نہ پر سموري انساني نوع بلڪ ساري ڪائنات لاءِ آهن مگر اهو منصب ۽ مرتبو جيترو اعلىٰ ۽ عظيم آهي اوترو ئي مشڪل ۽ ڏکيو بہ. ان جي ڪري اوهان جي هڪ ٻئي سان محبت ۽ ٻڌي ضروري آهي اوهان کي ختم ڪرڻ جي لاءِ دشمنن ۽ مخالفن جي طرفان حسد ۽ عناد جا وڏا وڏا طوفان سامهون ايندا پر جيڪڏهن اوهان الله جل شانه جي رسيءَ کي مضبوطيءَ سان جهلي، اسلامي ڀائپيءَ ۽ اخوت جي جذبي سان سرشار رهي پاڻ ۾ جهيڙا شروع نہ ڪيا تہ اوهان جو نالو ۽ ناموس هر خطري کان محفوظ رهندو.

٤- چوٿون تہ هن کان اڳ ۾ سورة بقره ۾ يهودين کي درست ڪرڻ جي

زبردست ڪوشش ڪئي وئي هئي ڇوته اهي مديني منوره جا رهاڪو هئا ۽ مسلمان صبح ۽ شام انهن سان ملندا رهندا هئا ۽ هن سورة ۾ عيسائين جي عقيدن کي درست ۽ صحيح ڪرڻ جي ڪوشش ڪئي وئي آهي انهن جي ٽن خدا ڇوڻ واري عقيدي تي نهايت ئي سختيءَ سان اهڙي وٽ پڪڙ ڪيل آهي جنهن جو جواب انهن وٽ نه ان وقت هو نه هاڻي آهي.

٥- پنجون ته معاشي مشڪلاتون به قوم جي صفن کي گهڻ وڏ ڪري وجهنديون آهن ۽ انهن جي هوندي ڪا نصيحت گهڻ اثر ڪندي آهي معاشي ترقيءَ لاءِ ڪيترا ظاهر بين وياج جو ڪاروبار شروع ڪندا آهن جيڪو وڏو ناسور ۽ ظلم وارو نظام آهي ان جو حرام هجڻ ته سورة بقره ۾ بيان ٿي آيو پر تاڪيد لاءِ هن سورة ۾ به ان جو حرام هجڻ وري بيان ڪيو ويو آهي تانته ماڻهو ان کان بلڪل پري رهن.

٦- ڇهون ته سيدنا عيسيٰ عليه الصلواة والسلام کي عيسائين الله يا الله جو پٽ قرار ڏنو هو (العياذ بالله) بلڪ سيده مريم رضي الله تعاليٰ عنها جهڙيءَ نيڪ، صالحه، دينداز ٻانهيءَ کي ظالمن الله جل شانه جي زال سڏيو. (تعالي الله عن ذالک علوا کبيرا) جيڪو سراسر رباني توحيد ۽ الله جل مجده جي شان ۽ پاڪ هجڻ جي خلاف هو، قرآن پاڪ، (جيڪو مالڪ مٿي جي هيڪڙائيءَ جو مبلغ ۽ ان عقيدي ڏانهن سڏيندڙ آهي) انهن جي ان باطل عقيدي جي ترديد ڪندي ان کي ڪوڙو سڏيندي، ان جي باطل هجڻ کي کولي کولي بيان ڪيو، مگر ڪهڙي نموني سان، ڇا حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جي شان مبارڪ گهٽائڻ سان؟ سندس ذات کي الله تعاليٰ جي طرفان عطا ڪيل معجزن جي انڪار ڪرڻ سان؟ ان جي نبوت واري احترام کي پويان اڇلائڻ سان؟ نه هرگز نه. بلڪ ان نبي عليه الصلواة والسلام جي تقدس بيان ڪرڻ، ان جي ولادت وقت عجيب عجيب ڳالهين ۽ معجزن جي ظاهر ٿيڻ، ان جي هٿان حيران ڪندڙ ڳالهين جي وجود ۾ اچڻ، الله جل شانه جي اذن سان مئلن کي جيئري ڪرڻ، انڌن کي سڄي ڪرڻ ۽ ڪوڙهه جي بيماريءَ ۾ مبتلا ٿيلن کي شفا ڏيڻ جي ذڪر سان، قرآن پاڪ اهو به ٻڌايو آهي ته حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام ماڻهن جي گهرن ۾ رکيل شين ۽ جيڪي کائيندا هئا ان جو به علم رکندو ۽ انهن کي ٻڌائيندو هو. مقصد ته توحيد جي ثابت ڪرڻ وقت به نبي سڳوري عليه الصلواة والسلام کي عطا ٿيل بلند مقام کي گهٽائڻ جي ڪوشش نه ڪئي وئي آهي پر عجب آهي هن وقت جي انهن

ماڻهن جو جيڪي پنهنجي باطل ۽ غلط گمان ۾ مسلمانن کي مشرڪ تصور ڪندا آهن ۽ انهن کي توحيد جي درس جي ناليءَ ۾ حضور، پرنور، فخر موجودات، مصدر ڪمالات، سيدالمرسلين صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن جي بلند ۽ بالا شان کي گهٽائڻ جي ڪوشش ڪندا آهن ۽ ان کي پنهنجي علمي ڪمالات ۽ عملي بلندين جو معراج تصور ڪندا آهن اهي هن سورة سڄوريءَ کي تعصب جي پٽي اکين تان لاهي سمجهن تہ ڇا اهي قرآن ڪريم جي اتباع ڪري رهيا آهن يا شيطان جي تابعداري ڪري پنهنجا ٻئي جهان تباهہ ڪري رهيا آهن.

٧- ستون تہ هن سورة جا معنوي لحاظ سان چار حصا سمجهہ ۾ اچن ٿا. پهريون سورة جي شروعات کان وٺي چوٿين (۴) رڪوع جي شروعات وارين ٻن آيتن تائين، ٻيو حصو آيت مبارڪہ "اِنَّ اللّٰہَ اصۡطَفٰۤی اٰدَمَ وَنُوۡحًا وَّاٰلَ اِبۡرٰهِيۡمَ وَاٰلَ عِمۡرٰنَ عَلَى الۡعٰلَمِيۡنَ" کان وٺي ڇهين رڪوع جي پوري ٿيڻ تائين، ٽيون ستين (٧) رڪوع جي شروعات کان وٺي ٻارهين (١٢) رڪوع جي پوري ٿيڻ تائين، چوٿون تيرهين رڪوع کان وٺي سورة سڄوريءَ جي پوري ٿيڻ تائين.

## سورة آل عمران جو سورة بقره سان تعلق ۽ ربط

هنن ٻنهي سورتن جو پاڻ ۾ ڳانڍاپو ۽ ربط ڇهن (٦) وجهن جي ڪري آهي. ١- هڪ تہ ٻنهي جي شروعات ڪتاب جي ذڪر سان ڪري اهو بيان ڪيو ويو آهي تہ ان مان فائدو ڪير وٺندا ۽ ڪيئن حاصل ڪندا. سورة بقره ۾ ماڻهن جا قسم ۽ نمونا بيان ڪيا ويا مومن، ڪافر ۽ منافق وغيره ۽ اصول بہ ائين آهي تہ انهن جو ذڪر اڳ ۾ آندو وڃي ۽ سورة آل عمران ۾ انهن سچ ۽ حق کان ٿڙڻ ويلن جو بيان ڪيو ويو آهي جيڪي متشابهات جي تابعداري ڪندا ۽ انهن جو تاويل ڳوليندا آهن مگر علم ۽ عقيدي ۾ مضبوط ۽ راسخ رهندڙ حق تي ايمان آڻيندا، محڪم ۽ متشابهہ کي مڃيندا ۽ چوندا تہ هي سڀ رب العالمين جل شانه جي طرفان آهي ۽ اسان جو انهن سڀني تي ايمان آهي ۽ مناسب بہ ائين هو تہ انهن جو ذڪرپوءِ ڪيو وڃي ڇوتہ اهو انهن کي دين جي دعوت ملڻ کان پوءِ جو بيان آهي. ٢- ٻيو تہ ٻنهي سورتن ۾ اهلِ ڪتاب سان بحث آهي پهرينءَ ۾ يهودين سان، ٻيءَ ۾ نصارن سان ۽ نصاريٰ يهودين کان وجود ۾ بہ پوءِ آهن تہ اسلام جي دعوت ملڻ ۾ بہ. انهيءَ جي ڪري نصارن سان

بحث ٻيءَ سورة ۾ آندو ويو آهي. ٣- ٽيون تہ پهرينءَ سورة سڳوريءَ ۾ حضرت آدم عليه الصلواة والسلام جو ذکر آهي جنهن کي الله تعالیٰ پنهنجي ڪامل قدرت سان پيءُ ۽ ماءُ کان سواءِ پيدا فرمايو ۽ ٻيءَ سورة ۾ حضرت عيسیٰ عليه الصلواة والسلام جو ذکرآهي جنهن کي صرف پيءُ کان سواءِ ماءُ مان پيدا ڪيو ويو. ۴- چوٿون تہ ٻنهي سورتن ۾ ڪافرن جي ظلمن کي دفع ڪرڻ لاءِ جنگ ۽ جهاد جو ذکر آهي مگر غور ڪرڻ سان معلوم ٿيندو تہ پهرينءَ سورة جا مضمون پهريان بيان ڪرڻ جهڙا ۽ ٻيءَ سورة جا پوءِ آڻڻ جهڙا آهن. ۵- پنجون تہ ٻنهي پلارين سورتن جي آخري رڪوعن ۾ الله تعالیٰ کان دعائن گهرڻ جو ذکرآهي. ٦- ڇهون تہ پهرينءَ سورة جي پهرئين رڪوع ۾ متقين جي لاءِ "اُولٰٓئِکَ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ" آندو ويو ۽ ٻيءَ سورة جي پوئين رڪوع ۾ "لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ" آڻي انهن لاءِ فلاح ۽ ڪاميابيءَ جو ذکر ڪيو ويو آهي.

# سورة آل عمران جا پيا نالا

قرآن پاڪ جي مفسرن علامه قرطبيءَ ۽ علامہ آلوسيءَ بغداديءَ عليهما الرحمة سورة آل عمران سڳوريءَ جا ٻيابہ ست (٧) نالا لکيا آهن. ١- هڪ طيبه، هر طرح پاڪ. هن سورة سڳوريءَ جو هي نالو توراة ۾ بہ ذکر ڪيل آهي. ٢- ٻيو زهراوَ- يعني روشن. حضرت ابوامامه باهلي رضي الله تعالیٰ عنہ کان روايت آهي تہ رسول الله صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن فرمايو "اِقْرَؤُا الزَّهْرَاوَيْنِ الْبَقَرَةَ وَسُوْرَةَ اٰلِ عِمْرَانَ فَاِنَّهُمَا يَاْتِيَانِ يَوْمَ الْقِيَامَةِ كَاَنَّهُمَا غَمَامَتَانِ اَوْ كَاَنَّهُمَا غَيَابَتَانِ اَوْ كَاَنَّهُمَا فِرْقَانِ مِنْ طَيْرٍ صَوَافَّ تُحَاجَّانِ عَنْ اَصْحَابِهِمَا - الحديث (١) يعني ٻہ روشن سورتون پڙهو بقره ۽ سورة آل عمران ان ڳالهہ ۾ ڪوبہ شڪ نہ آهي تہ اهي ٻئي قيامت ۾ ائين اينديون جڻ تہ ٻہ ڪڪر آهن يا ٻہ ڇاپا آهن يا پکين جابہ ٽولا جيڪي پر، پرن سان ملائي ڇانوَ ڪري بيهن. ٣- ٽيون الكنز- خزانو. ۴- چوٿون الامان- پناهہ پردو ۽ بلائن کان امن ۾ رکندڙ. ۵- پنجون المغنيه- غني بنائيندڙ. ٦- ڇهون المجادله پنهنجي پڙهندڙ جي پاران قبر ۽ قيامت ۾ لڙندڙ. ٧- سورة الاستغفار، مغفرت طلب ڪرڻ واري سورة. (٢) هن سورة جا هي سڀ نالا معنیٰ ۽ مضمونن جي لحاظ سان آهن.

(١) تفسير القرطبي ص١ جلد۴ روح المعاني ص٧٣ جلد ١جزء٣
(٢) تفسير جمل ص٢۴ جلد ١

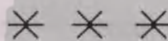
# فائدو

قرآن پاڪ کي سورتن، رڪوعن، آيتن ۽ ٽيهن پارن ۾ تقسيم ان جي تلاوت ڪرڻ، سکڻ، پڙهڻ، پڙهائڻ ۽ سيني ۾ سانڍڻ کي آسان ڪرڻ جي لاءِ ڪئي وئي آهي. آيتون پڙهندڙ کي پڙهڻ جي دوران ساهه کڻڻ جي لاءِ، رڪوع نماز ۾ تلاوت ڪرڻ جي لاءِ، منزلون ستن ڏينهن ۾ ختم ڪرڻ جي لاءِ، ٽيهه پارا مهيني ۾ ختم ڪرڻ جي لاءِ. باقي سورتن ۾ تقسيم ته اصل آهي جو قرآن پاڪ لٿوئي ان تقسيم سان هو.

# هن سورة جون پلايون ۽ برڪتون

هيءَ سورة وڏي شان، مرتبي واري ۽ گهڻين برڪتن سان پرپور آهي، جيئن مٿي نالن جي ذڪر ۾ هڪ حديث شريف لکي وئي آهي.

طبراني شريف حضرت عبدالله بن عباس رضى الله تعالىٰ عنهما کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن فرمايو "مَنْ قَرَءَ السُّوْرَةَ الَّتِيْ يُذْكَرُ فِيْهَا آلُ عِمْرَانَ يَوْمَ الْجُمُعَةِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَمَلَآئِكَتُهُ حَتّٰى تَغِيْبَ الشَّمْسُ" يعني جنهن جمعي جي ڏينهن اها سورة تلاوت ڪئي جنهن ۾ آل عمران جو ذڪر آهي ته الله ۽ ان جا ملائڪ سج لهڻ تائين ان تي رحمتون موڪليندا رهندا. سعيد بن منصور ۽ شعب الايمان ۾ بيهقيءَ حضرت عمر بن الخطاب رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي، ان فرمايو ته "جنهن سورة بقره، سورة آل عمران ۽ سورة النساءِ جي تلاوت ڪئي اهو الله تعالىٰ وٽ حڪمت وارن ۾ لکيو ويندو. ديلمي محمد بن نصر ۽ شعب الايمان ۾ بيهقيءَ حضرت عبدالله بن مسعود رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي ته "مَنْ قَرَءَ آلَ عِمْرَانَ فَهُوَ غَنِيٌّ" جنهن سورة آل عمران پڙهي اهو غني آهي. (١)



(١) تفسير فتح القدير ص٣١١ جلد ١

وَهِيَ مِائَتَا آيَةٍ وَ عِشْرُوْنَ رُكُوْعًا

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

شروع ٿو ڪيان الله جي نالي سان جو گھڻو مهربان، هميشه رحم ڪندڙ آهي

سُوْرَةُ اٰلِ عِمْرَانَ مَدَنِيَّةٌ

سوره آل عمران مديني ۾ نازل ٿيل آهي

۽ اها به سؤ (٢٠٠) آيتون ۽ ويهه (٢٠) رڪوع آهي

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

شروع ٿو ڪيان الله جي نالي سان جو گھڻو مهربان، هميشه رحم ڪندڙ آهي

الٓمّٓ ① اللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّوْمُ ② نَزَّلَ عَلَيْكَ

الف، لام، ميم، سچو معبود ناهي ڪو به عبادت جو لائق ان کان سواءِ (پاڻ) جيئرو (سڀن کي) قائم رکندڙ آهي لاٿائين تو تي

الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ وَاَنْزَلَ التَّوْرٰىةَ

ڪتاب سچو جيڪو تصديق ڪندڙ آهي ان کان اڳين (ڪتابن) جي ۽ لاٿائين توراة

وَالْاِنْجِيْلَ ③ مِنْ قَبْلُ هُدًى لِّلنَّاسِ وَاَنْزَلَ الْفُرْقَانَ اِنَّ الَّذِيْنَ

۽ انجيل. اڳ ۾ هدايت ڪري ماڻهن جي لاءِ ۽ لاٿائين (حق ۽ ناحق ۾) فرق ڪندڙ بيشڪ جن

كَفَرُوْا بِاٰيٰتِ اللّٰهِ لَهُمْ عَذَابٌ شَدِيْدٌ وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ ذُو انْتِقَامٍ ④

ڪفر ڪيو الله جي آيتن جو انهن لاءِ سخت عذاب آهي ۽ الله غالب، بدلي وٺڻ وارو آهي

## تفسير

الٓمّٓ- هي جدا جدا حرف آهن جن جي صحيح مفهوم، معنيٰ ۽ مراد الله ۽ ان جو رسول صلى الله تعالىٰ عليه وسلم ۽ انهن کان پوءِ صرف اولياءِ سگورا سجاڻن

تا. (١)

## هنن آيتن جو شان نزول

مفسرن سڳورن لکيو آهي تہ سورة آل عمران جون پهريون اسيءَ (٨٠) کان وڌيڪ آيتون ان وقت نازل ٿيون هيون جڏهن سنہ ٩ هجريءَ ۾ نجران جي عيسائين مان سٺ (٦٠) ڄڻن جو وفد پنهنجي عقائد جي متعلق رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن سان بحث ڪري رهيو هو. انهيءَ وفد ۾ سندن چوڏهن (١۴) سردار ۽ ٽي (٣) قومي اڳواڻ هئا. ١- هڪ عاقب جنهن جو نالو عبدالمسيح هو. اهو انهن جو اهڙو پيشوا هو جنهن جي راءِ کان سواءِ ڪوبہ ڪم نہ ڪندا هئا. ٢- ٻيو سيد جنهن جو نالو ايهم هو هي سندن معتمد اعظم (وڏي اعتماد جوڳو) ۽ سندن ماليات جو اهم آفيسر ۽ عهديدار هو سندن کاڌي پيتي ۽ رسد جا سمورا انتظام هن جي حڪم سان هلندا هئا. ٣- ٽيون ابوحارثہ بن عقلمہ، جيڪو سندن سيني پادرين جو پيشوا ۽ مذهبي درسگاهن جو اڳواڻ هو. هيءُ اصل ۾ عرب جي مشهور قبيلي "بني بڪر بن وائل" مان هو جڏهن عيسائي بڻيو تہ رومي بادشاهہ سندس مذهبي پڪائيءَ کي ڏسي سندس وڏي تعظيم ڪندا هئا. گهڻي مالي امداد ڏيڻ سان گڏ سندس لاءِ گرجائون تعمير ڪرائي ڪيس مذهبي امور جي اعليٰ منصب تي مقرر ڪيو هيائون.

اهي سيئي عيسائين جا اڳواڻ گڏجي، بدن تي نهايت عمدا ۽ قيمتي لباس پائي جڏهن نبوي مسجد ۾ پهتا تہ نبي ڪريم صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن عين ان وقت وچين نماز پڙهائي رهيا هيا. انهن بہ نبوي مسجد ۾ اوڀر پاسي منهن ڪري پنهنجي مذهب موافق نماز ادا ڪئي. (٢) نماز کان فارغ ٿي جڏهن حضور عليه الصلواة والسلام جن وٽ ويٺا تہ پاڻ انهن کي مخاطب ٿي فرمايائون تہ "اسلام قبول ڪيو" چيائون تہ "اسان اوهان کان اڳ ۾ اسلام قبول ڪيو آهي" پاڻ ڪريمن صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن ڪين فرمايو تہ "اوهان جي طرفان الله تعاليٰ جي لاءِ اولاد جي دعويٰ، صليب جي پوڄا ۽ سوئر جي گوشت کائڻ اوهان کي اسلام کان روڪي ڇڏيو آهي" انهن سيني گڏجي هڪ آواز ٿي چيو تہ "جيڪڏهن (حضرت) عيسيٰ (عليه الصلواة والسلام) الله جو پٽ نہ آهي تہ سندس پيءُ ڪير آهي؟ پاڻ فرمايائون تہ "ڇا

(١) روح المعاني ص ١٠٠ جزءُ ٣ جلد ١ (٢) روح البيان ص ٢ ج ٢

اوهان کي خبر نہ آهي تہ پٽ پيءُ سان مشابهہ هوندو آهي؟ سينيٰ اقرار ڪيو تہ "هائو" پاڻ فرمايائون تہ "ڇا اوهان کي خبر نہ آهي تہ اسان جو الله حَيٌّ لَا يَمُوْتُ (جيئرو، نہ مرڻ وارو) آهي ان جي لاءِ موت محال آهي ۽ (حضرت) عيسيٰ (عليه الصلواة والسلام) تي (آخر زماني ۾) موت اچڻ وارو آهي" سيني اقرار ڪيو تہ "هائو" پاڻ فرمايائون تہ "اوهان کي خبر نہ آهي تہ اسان جو رب ٻانهن جو ڪارساز، حقيقي محافظ ۽ روزي ڏيڻ وارو آهي" سيني اقرار ڪيو. پاڻ فرمايائون تہ "ڇا عيسيٰ (عليه الصلواة والسلام) ۾ اهي صفتون آهن؟ چيائون تہ "نہ" پاڻ فرمايائون تہ "اوهان کي خبر نہ آهي تہ الله تعاليٰ کان ڪابہ شيءِ آسمانن ۽ زمينن ۾ لڪل نہ آهي" سيني اقرار ڪيو. پاڻ فرمايائون تہ "عيسيٰ (عليه الصلواة والسلام) الله تعاليٰ جي ڄاڻائڻ کان سواءِ انهن مان ڪجهہ ڄاڻي ٿو؟" چيائون تہ "نہ" پاڻ فرمايائون تہ "ڇا اوهان ڄاڻو ٿا تہ (حضرت) عيسيٰ (عليه الصلواة والسلام) ماءُ جي پيٽ ۾ رهيو ۽ ٻين انسانن وانگر ڄائو، ٻارن وانگر غذا ڏنو ويو ۽ کائڻ، پيئڻ سان گڏ ٻيون بشري صفتون بہ رکندو هو؟" چيائون تہ "هائو" پاڻ فرمايائون تہ "پوءِ اهو الله ڪيئن ٿي سگهندو؟" اهو ٻڌي جڏهن سيئي چپ ٿي ويا ۽ ڪوبہ جواب ڏئي نہ سگهيا. تڏهن هي آيتون نازل ٿيون (١) ان موقعي جي مناسبت سان هن سورة جو آغاز الله جل شانہ جي توحيد بيان ڪرڻ سان ڪيو ويو آهي. لَآ اِلٰـهَ اِلَّا اللّٰهُ (الله کان سواءِ ڪو سچو معبود ناهي) دعويٰ آهي تہ اَلْحَيُّ الْقَيُّوْمُ (هميشہ جيئرو، ٻين کي قائم رکندڙ) ان جو دليل آهي يعني عبادت جو لائق اهوئي ٿي سگهي ٿو جيڪو هميشہ کان زنده هو، آهي ۽ هوندو ۽ هر شيءِ پنهنجي وجود، بقا، وڌڻ ۽ وڌي ٽيڻ ۾ ان جي محتاج هجي ۽ اهي صفتون صرف الله جل شانہ سان خاص آهن ۽ اهوئي سچو ۽ حق وارو معبود آهي عيسائي حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام کي الله يا الله جو پٽ چوندا هئا قرآن ڪريم جي هنن مختصر لفظن سان انهن جي ترديد ڪئي وئي ۽ ٻڌايو ويو تہ جڏهن حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام ۾ اهي صفتون موجود نہ آهن تہ ان ۾ اهڙو عقيدو رکڻ ڪٿان جي عقلمندي آهي ۽ عيسائين سان گڏ سيني مشرڪ قومن جي عقيدن جو غلط ۽ باطل هجڻ بہ ثابت ڪيو ويو آهي جيڪي ڪنهن نہ ڪنهن مخلوق کي خدا سڏيو وينا آهن.

(١) تفسير حقاني ص٩٢ جلد ٣

"نَزَّلَ عَلَيْكَ الْكِتَابَ" (لاٿائين توتي ڪتاب) هنن لفظن سان ٻڌايو ويو آهي تہ جڏهن ڪا شخصيت اهڙي ملڪ ۾ رهي ٿي جتي علم ۽ ٻين فنن جو ڪو رواج نہ آهي ۽ خاص ڪري ان شخصيت نہ ڪڏهن لکيو آهي نہ پڙهيو ۽ نہ ڪنهن علم واري يهوديءَ، مجوسيءَ يا عيسائيءَ جي صحبت ڪئي اٿس ۽ نہ انهن سان گڏجي جهان ۾ گهميو آهي پر پنهنجي عمر جا پڙهڻ لاءِ مناسب چاليهہ (٤٠) سال هڪ واريا سي ملڪ جي ٻن خشڪ جبلن جي وچ ۾ گذاريا اٿس ان کان سواءِ دنياوي، ظاهري مسڪينيءَ سان گڏ عزيزن ۽ قريبن جا ظلم بہ ان ئي ذات تي وسندا رهن انِ شخصيت کان اهڙي عظيم ڪتاب جو ظاهر ٿيڻ جنهن ۾ "بالحق" (سچو) ۽ "مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ" (پاڻ کان اڳين ڪتابن جي تصديق ڪندڙ) واريون صفتون موجود هجن بلاشڪ ان ذات جو معجزو آهي اهو ڪتاب آسماني ڪتاب ۽ اها شخصيت نبي آهي. (عليه الصلواة والسلام)

"بِالْحَقِّ" (سچو) هن مان مراد اهڙا دليل آهن جن جو ڪوبہ جواب ناهي. چاڻڻ گهرجي تہ ڪنهن بہ قول يا فعل کي حق ان وقت چئبو آهي جڏهن بالڪل مناسب ۽ موزون هجي ۽ جڏهن بہ ڪا ضرورت پوي تہ پوري ڪري سگهي. قرآن پاڪ کي "بِالْحَقِّ" جي صفت سان متصف ڪري الله جل جلالہ اها حقيقت واضح ڪئي آهي تہ قرآن ڪريم اهڙي ئي شان سان آيو آهي جهڙو هجڻ کپي ۽ اهڙن دليلن سان سينگاريل آهي جن کي عقل سليم مڃڻ تي مجبور ٿي پوي ۽ عين ان وقت آيو آهي جڏهن هر طرف ظلمات ۽ انڌيرن جا ڪڪر ڇانيل هئا ۽ انسانيت جو قافلو حيرت ۽ گمراهيءَ جي ميدان ۾ ڀٽڪندو ٿي رهيو ۽ قرآن پاڪ ان وقت جي تقاضائن کي تڏهن پورو ڪرڻ لاءِ آيو آهي جڏهن انساني عقل پنهنجي ٻاراڻيءَ حياتيءَ جي سرحدن کان لنگهي فڪر ۽ نظر جي واديءَ ۾ پهچي ويو هو ۽ انسان کي ڏيڄارڻ وارن ڪارنامن کان وڌيڪ عقل ۽ سمجهہ کي مطمئن بنائيندڙن، روشن دليلن جي ضرورت زيادهہ هئي. سبحان الله، قرآن پاڪ محبوب عليه الصلواة والسلام جن جو کهڙو نہ دائمي معجزو آهي جو سندس بيان ڪيل "بِالْحَقِّ" جي هڪ لفظ ۾ معنائن جا سمنڊ سمايا پيا آهن. قرآن مجيد جا مٿاهان مطلب (ذات، صفات، مبدءَ، معاد، انسان جي نيڪ بختي، بدبختي، گذريل قومن جا قصا، ايندڙ دور جون خبرون، ملت جا قانون ۽ دستورالعمل، ملڪي سياست، ورثو، ترڪو، وڪڻڻ ۽ خريد ڪرڻ، حلال ۽ حرام، پاڪائي ۽ پليدي،

اخلاق جو علم ۽ رحمدلي، سچ ڳالهائڻ، بردباري، خدا کان ڊڄڻ، دنيا جي محبت کان دل پاڪ رکڻ، پاڪيزه ۽ صاف عبارت جيڪا شاعرانہ مبالغي ۽ جاهلن جي خيالات کان خالي هجي) اهڙا آهن جن مان ڪوبہ عقل سليم جي خلاف ناهي.

"مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ" (پاڻ کان اڳين نازل ڪيل ڪتابن جي تصديق ڪندڙ) هي بہ قرآن پاڪ جي نهايت عاليشان صفت آهي. قرآن مجيد ۽ اڳين ڪتابن جي اصول ۾ ڪوبہ تفاوت نہ آهي باقي ملڪ ۽ زماني جي لحاظ سان جزئي ۽ فروعي اختلاف آهن جيڪي اڳئين دور ۾ الله تعالىٰ جي پيغمبرن پارن (عليهم الصلواة والسلام) الله تعالىٰ جي اذن سان بيان ڪيا هئا پوءِ جڏهن هي رباني ڪتاب انهن کي سچو ٿو چوي تہ هن جي ڪلام الله هجڻ ۾ ڪوبہ شڪ ناهي ۽ جنهن نبي مڪرم، محبوب معظم صلى الله تعالىٰ عليه وسلم تي اهو نازل ٿيو آهي اهو بہ سچو ۽ برحق نبي آهي. (عليه الصلواة والسلام)

## فائدو

سورة آل عمران جي ٻي آيت "اَللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّوْمُ" هڪ ننڍو جملو ضرور آهي پر توحيد جي بيشمار دليلن، حجتن ۽ برهانن جو مجموعو آهي. جنهن سان عيسائين جي ٽن غلط ۽ گمراهہ ڪندڙ عقيدن جو صاف ۽ چٽو رد ڪيو ويو آهي.

١- انهن جو پهريون غلط عقيدو هي آهي تہ هڪ الله، ٻيو عيسيٰ ۽ ٽيون روح القدس گڏجي هڪ خدا آهن. بعضي عيسائي وري حضرت بيبي مريم (عليها السلام) کي ٽيون قنوم قرار ڏيندا آهن.

٢- ٻيو غلط عقيدو هي آهي تہ صرف حضرت عيسىٰ خدا آهي جيڪو انساني صورت ۾ ظاهر ٿيو هو.

٣- ٽيون غلط عقيدو- ڪن عيسائين جو هي آهي تہ عيسيٰ (عليه الصلواة والسلام) الله تعالىٰ جو پٽ آهي. هن وقت جا اڪثر عيسائي اهو عقيدو رکن ٿا. قرآن پاڪ جي متينءَ آيت ۾ ٽنهي عقيدن جو باطل هجڻ ثابت ڪيو ويو آهي. پهرئين جو هيئن تہ ٽن الٰهن مڃڻ ۽ هڪ الله کي مڃڻ ۾ صريح، ڪليل اختلاف ۽ تضاد آهي جيڪڏهن ٽنهي مان هرهڪ کي مستقل خدا چيو ويندو تہ ٽي خدا ٿيندا

جيڪي هڪ ٻئي جي مدد ۽ تائيد جا محتاج هوندا ۽ حقيقي الله محتاجيءَ کان پاڪ آهي ۽ جيڪڏهن ٽنهي کي گڏيل خدا چونداءُ ته اهو اعتباري واحد آهي حقيقي ناهي ۽ انهن ٽنهي مان اول ڪير چونداءُ؟ جنهن کي به اول رکو ته ٻيا به ان کان پوءِ ڇيا ويندا ۽ پوءِ اچڻ حادث هجڻ جو دليل آهي، اهو قديم نه هوندو پر حقيقي الله قديم آهي ۽ حادث هجڻ کان پاڪ آهي. اهوئي قيوم جو مفهوم آهي ڇوته قيوم اهو آهي جيڪو پاڻ پاڻهي قائم هجي ۽ ٻين کي به قائم رکي.

ٻئي عقيدي جو رد هيئن آهي ته جيڪڏهن عيسىٰ عليه الصلواة والسلام کي به خدا مڃيندؤ ته حقيقي توحيد قائم نه رهندي حالانڪ سڀ انبياءِ ڀلارا (عليهم الصلواة والسلام) ان حقيقي توحيد جي دعوت ڏيڻ آيا هئا.

ٽئين عقيدي جو رد هن طرح آهي ته جيڪڏهن حضرت عيسىٰ عليه السلام کي (معاذالله) الله جو پٽ چونداءُ ته اهو قيوم نه رهندو ڇوته پٽ کي قائم ڪرڻ ۾ پيءُ جو واسطو ۽ ذريعو آهي ۽ ذريعي ۽ واسطي سان وجود حاصل ڪندڙ الله نه ٿو بنجي سگهي. جڏهن حي، قيوم هڪ مالڪ مٺي جي ذات اقدس آهي ته معبود بالحق به اهو هڪ آهي جيئن سيد عبداللطيف ڀٽائي عليه الرحمة فرمايو آهي ته:

چؤ تون الله هيڪڙو، ٻي وائي م سک - لکيو ويٺي لک اکر اهوئي من ۾ (١).

## فائدو

قرآن ڪريم جي نازل ڪرڻ کي ڪٿي نَزَّلَ سان ته ڪٿي اَنْزَلَ سان ان جي ڪري بيان ڪيو ويو آهي جو نزل تنزيل کان ورتل آهي جنهن جي معنىٰ آهي ٿورو ٿورو ڪري نازل ڪرڻ ۽ انزل انزال کان ورتل آهي جنهن جي معنىٰ پوري جو پورو نازل ڪرڻ آهي. قرآن مجيد لوح محفوظ کان يڪو پهرئين آسمان تي ۽ اتاهين ٿورو ٿورو ڪري زمين تي لاٿو ويو هو ان جي ڪري ڪٿي نزل ته ڪٿي انزل جا الفاظ آندا ويا آهن مگر توراة، انجيل ۽ زبور هڪ ئي وقت پورا پورا لاٿا ويا تنهن جي ڪري انهن لاءِ انزل جو لفظ استعمال ڪيو ويو آهي. (٢)

"وَاَنْزَلَ الْفُرْقَانَ" (۽ فرقان نازل ڪيائين) اَلْفُرْقَانَ مان مراد هر زماني ۽ دور جي مناسب اهڙا احڪام نازل ڪرڻ آهن جيڪي حق ۽ باطل، حلال ۽ حرام، ڪوڙ

(١) شاهه جو رسالو- سر ص (٢) تفسير جلالين ص٤٦

۾ سچ ۾ فيصلا ڪندڙ هجن ان ۾ عقل سليم ، آسماني ڪتاب ۽ نبين عليهم الصلواة والسلام جا معجزا ، سڀ داخل آهن اشارتاً اهو به ٻڌايو ويو آهي تہ جن جن مسئلن ۾ ڳالهين ۾ يهودي ۽ نصاريٰ اختلاف ڪندا آيا آهن انهن جو فيصلو به قرآن ڪريم جي ذريعي حل ڪيو ويو آهي. پهرينءَ آيت ۾ الله جل شانه جي توحيد بيان ڪندي "نَزَّلَ عَلَيْكَ الْكِتَابَ" کان محمدي نبوت (عليٰ صاحبها الصلواة والسلام) ثابت ڪئي وئي آهي مگر گفتگوءَ جو توجهہ نجران جي نصارن ڏي به آهي تہ جڏهن اوهان توراة ۽ انجيل کي الله تعاليٰ جو ڪتاب تسليم ٿا ڪيو ۽ انهن تي ايمان آڻڻ جو دليل هي ٿا آڻيو تہ جن هستين تي اهي ڪتاب لاٿا ويا هئا اهي اهڙن معجزن جا صاحب هيا جن جي صداقت ۽ برحق هجڻ جي تسليم ڪرڻ لاءِ اوهان مجبور آهيو تہ پوءِ قرآن ڪريم جي ڪلام الله هجڻ کي ڇونہ ٿا تسليم ڪيو؟ حالانڪ جنهن محبوب ذات (عليها الصلواة والسلام) جي مٿان اهو لاٿو ويو آهي ان کان تہ اهڙا معجزا ظاهر ٿي رهيا آهن جن جو مثال ملڻ ئي محال آهي.

"إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا" (بيشڪ جن ڪفر ڪيو) هنن لفظن کان اڳ ۾ انسان جي عقل سليم کي مطمئن ڪرڻ لاءِ دليل پيش ڪيا ويا ۽ هاڻي انهن دليلن کي نہ مڃڻ وارن هٺيلن کي دردناڪ عذاب، سخت انتقام ۽ سزا جي ڌمڪي ڏني وئي آهي تہ الله تعاليٰ غالب، بدلي وٺڻ وارو آهي اهو اهڙن مجرمن ۽ منڪرن کي سزا ڏيڻ کان سواءِ نہ ڇڏيندو ۽ نہ اهي ان جي پڪڙ کان بچي سگهندا.

## فائدو ا

هن سورة جو نالو آل عمران رکڻ مان انهن ماڻهن جي ان ڳالهہ جو غلط هجڻ ثابت ٿيو جيڪي چوندا آهن تہ درود شريف "اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى آلِ مُحَمَّدٍ" ۾ حضور عليه الصلواة والسلام جن جون گهرواريون داخل نہ آهن صرف سندن اولاد داخل آهي. ڇوتہ قرآن پاڪ ۾ آل جو لفظ عمران جي نياڻيءَ سان گڏ ان جي گهرواريءَ لاءِ بہ آيل آهي ۽ جڏهن عمران جي گهرواري ان جي آل ۾ داخل آهي تہ محبوب عربي صلى الله تعاليٰ عليه وسلم جن جون گهرواريون بہ درود يا ٻئي ڪنهن جاءِ ۾ آيل آل جي لفظ ۾ داخل آهن اها درود واري رحمت انهن تي بہ آهي.

# فائدو ٢

هن سورة ۾ حضور عليه الصلواة والسلام جن جو نصارن سان مناظري ڪرڻ جو ذڪر آهي جنهن مان ثابت ٿيو تہ گمراهن ۽ بدمذهبن سان مناظرو ڪرڻ حضور عليه الصلواة والسلام جن جي سنت آهي.

# فائدو ٣

"نَزَّلَ عَلَيۡكَ الۡكِتَابَ بِالۡحَقِّ" مان ثابت ٿيو تہ اسان وٽ موجود قرآن پاڪ سچو، صحيح، مڪمل آهي ڪٿل ناهي ان جي پوري يا سچي هجڻ ۾ شڪ ۽ تردد ڪندڙ يا جيڪو چوي تہ جبريل ڀلجي پيو هو (معاذالله) اهو ڪافر مرتد آهي، مسلمان نہ آهي.

# فائدو ٤

جيڪڏهن ڪنهن الله تعاليٰ جي پياري ٻانهي ۾ ماڻهن جو عقيدو غلط، حد کان وڌيل آهي تہ انهن ماڻهن کي سمجهائجي پر ان بزرگ، الله جل جلالہ جي پياري ٻانهي کي برو نہ چئجي جيئن حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جن جي لاءِ نصارن غلط عقيدا رکيا هئا پر الله تعاليٰ انهن جي غلط عقيدن جي ترديد ڪئي ۽ پنهنجي پياري نبي عليه الصلواة والسلام جا معجزا ۽ شان کولي کولي بيان فرمايو.

إِنَّ اللّٰهَ لَا يَخۡفٰى عَلَيۡهِ شَىۡءٌ فِى الۡاَرۡضِ وَلَا فِى السَّمَآءِ ﴿٥﴾

بيشڪ الله نہ ٿي ڳجهي رهي ان کان ڪا شيءِ (نہ) زمين ۾ ۽ نہ آسمان ۾

هُوَالَّذِىۡ يُصَوِّرُكُمۡ فِى الۡاَرۡحَامِ كَيۡفَ يَشَآءُ ؕ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ

اهوئي آهي جو صورت ٿو ناهي اوهان جي (مائرن جي) ڳيرڻن ۾ جيئن نموني گهري، ناهي ڪو سچو معبود ان کان سواءِ

الۡعَزِيۡزُ الۡحَكِيۡمُ ﴿٦﴾ هُوَ الَّذِىۡۤ اَنۡزَلَ عَلَيۡكَ الۡكِتَابَ مِنۡهُ

غالب، حڪمت وارو آهي اهوئي آهي جو نازل ڪيائين توتي ڪتاب ان مان ڪجهہ آيتون

اٰيٰتٌ مُّحۡكَمٰتٌ هُنَّ اُمُّ الۡكِتٰبِ وَاُخَرُ مُتَشٰبِهٰتٌ ؕ فَاَمَّا

محڪم آهن جو اهي ڪتاب جو اصل آهن ۽ ٻيون متشابه آهن پوءِ پر

الَّذِيۡنَ فِىۡ قُلُوۡبِهِمۡ زَيۡغٌ فَيَتَّبِعُوۡنَ مَا تَشَابَهَ مِنۡهُ ابۡتِغَآءَ

اهي ماڻهو جن جي دلين ۾ ڏنگائي آهي پوءِ پيروي تا ڪن ان جي جو متشابه ٿيو ان مان فتني قائم ڪرڻ

الۡفِتۡنَةِ وَابۡتِغَآءَ تَاۡوِيۡلِهٖ ۚ وَمَا يَعۡلَمُ تَاۡوِيۡلَهٗۤ اِلَّا اللّٰهُ ۘؔ

۽ ان جي تاويل طلب ڪرڻ جي لاءِ ۽ نه ٿو ڄاڻي ان جي تاويل ڪي ڪوبہ الله ڪان سواءِ

وَالرّٰسِخُوۡنَ فِى الۡعِلۡمِ يَقُوۡلُوۡنَ اٰمَنَّا بِهٖ ۙ كُلٌّ مِّنۡ عِنۡدِ رَبِّنَا ۚ

۽ پڪائي رکندڙ علم ۾ چون ٿا تہ ايمان آندوسون ان تي هي سڀ اسان جي رب وٽان آهي

وَمَا يَذَّكَّرُ اِلَّاۤ اُولُوا الۡاَلۡبَابِ ﴿۷﴾ رَبَّنَا لَا تُزِغۡ قُلُوۡبَنَا بَعۡدَ اِذۡ

۽ نہ ٿا نصيحت قبول ڪن مگر عقل وارا اي اسان جا پالڻهار! نہ ڏنگيون ڪر اسان جون دليون ان ڪان پوءِ جو

هَدَيۡتَنَا وَهَبۡ لَنَا مِنۡ لَّدُنۡكَ رَحۡمَةً ۚ اِنَّكَ اَنۡتَ الۡوَهَّابُ ﴿۸﴾

هدايت ڪيئي اسان کي ۽ عطا ڪر اسان کي پاڻ وٽان رحمت بيشڪ تون ئي زياده ڏيندڙ آهين

رَبَّنَاۤ اِنَّكَ جَامِعُ النَّاسِ لِيَوۡمٍ لَّا رَيۡبَ فِيۡهِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ لَا

اي اسان جا پالڻهار! بيشڪ تون گڏ ڪندڙ آهين ماڻهن جو ان ڏينهن ۾ جو ناهي ڪو شڪ ان ۾ بيشڪ الله نہ ٿو

يُخۡلِفُ الۡمِيۡعَادَ ﴿۹﴾ ع

مخالفت ڪري وعدي جي

وقف لازم

ع ٩ ١

## تفسير

"اِنَّ اللّٰهَ لَا يَخْفٰى" الأية- کان حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي متعلق الـه هجڻ جي عقيدي رکڻ جي باطل هجڻ جو ٻيو دليل پيش کندي ٻڌايو ٿو وڃي تہ الله (سچو معبود) اهو آهي جنهن جو علم ايترو وسيع ۽ هر شيءِ کي گهيرو کندڙ آهي جو ڪابہ شيءِ، ڪنهن بہ وقت ان کان لڪل نہ آهي ان جو علم ذاتي، ازلي، ابدي، قديم آهي ڪنهن جو بہ عطا ڪيل نہ آهي ۽ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جو علم نہ ذاتي آهي نہ ازلي، نہ ابدي ۽ نہ قديم آهي بلڪ جيترو بہ سندس علم آهي اهو ڪيس الله تعالىٰ جو عطا ڪيل آهي ۽ اهڙي عطائي علم وارو، الـه ڪيئن ٿي سگهندو؟ الله جل جلالـه جو اقتدار ۽ اختيار ڪامل ۽ سندس علم اهڙو نرالو آهي جو ڪائنات جي ڪابہ شيءِ ننڍي هجي يا وڏي هڪ پساه جي وقت جيترو بہ ان جي علم کان غائب ناهي سڀ ٻانها صالح ۽ ڏوهي ۽ انهن سڀني جي ڏوهن جي نوعيت ۽ مقدار بہ ان جي علم ۾ آهي.

"يُصَوِّرُكُمْ" (اوهان کي صورت ٿو عطا ڪري) هن مان مراد آهي تہ پنهنجي علم، حڪمت ۽ قدرت جي ڪمال سان جيئن ۽ جهڙي نموني گهري اوهان جي مائرن جي پيٽن ۾ اوهان جون صورتون تيار ٿو ڪري. مرد، عورت، ڪارو، گورو، سهڻو، ڪوجهو جيئن بہ پيدا ڪرڻ گهري ٿو ڪري ٿو. پاڻيءَ جي هڪ ڦڙي کي مختلف مرحلن مان آڻي انسان کي ڪهڙي نہ عجيب صورت عطا ڪيائين. جنهن جي قدرت ۽ ڪاريگريءَ جو هيءُ ڪمال آهي ڇا ان جي علم ۾ ڪوتاهي ٿي سگهي ٿي؟ يا ڪو انسان جيڪو پاڻ بہ ماءُ جي پيٽ جي انڌيرن ۾ رهي آيو هجي ۽ عام ٻارن وانگر کائيندو، پيئندو، پيشاب ۽ پائخانو ڪندو هجي الله جل جلالـه جو پٽ چورائي سگهندو؟ نہ- هرگز نہ- عيسائين جو سوال هو تہ جڏهن حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جو ٻيو ڪو ظاهري پيءُ نہ آهي تہ آخر الله جل شانه کان سواءِ ان جو پيءُ ڪير آهي؟ "يُصَوِّرُكُمْ فِي الْاَرْحَامِ كَيْفَ يَشَآءُ" ۾ ان جو جواب ڏنو ويو آهي تہ اها الله تعالىٰ جي ڪامل قدرت آهي جو ماءُ جي ڳڀيرڻ ۾ جيئن گهري ٿو انسان جو نقشو پيءُ ۽ ماءُ ٻنهي جي ملڻ سان يا صرف ماءُ ۾ رکيل قوت منفعله سان ناهي ٿو جيئن سندس فرمان آهي "وَهُوَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ" يعني اهو اهڙو غالب، آهي جو ان جي طاقت کي ڪوبہ محدود ڪري نہ

تو سگهي ۽ اهڙو حڪمت وارو آهي جو جتي جئين مناسب سمجهي تو ڪري ٿو. سندس ٿي حڪمت آهي جو حضرت آدم عليه الصلواة والسلام کي پيءُ ۽ ماءُ ٻنهي کان سواءِ ۽ حضرت بيبي حوا رضی الله تعالیٰ عنها کي ماءُ کان سواءِ ۽ حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام کي پيءُ کان سواءِ پيدا ڪيائين. ڪير ٿو سندس اڻ ڪٿ حڪمتن جو گهيرو ڪري سگهي؟

"هُوَ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ عَلَيْکَ الْكِتَابَ" (اهو (الله) اهوئي آهي جنهن توتي ڪتاب لاٿو) جڏهن نجران وارا نصاريٰ سيني دليلن جي جواب کان عاجز ٿي پيا ته هرويرو هوڏ ڪري چوڻ لڳا ته "اوهان به ته حضرت عيسيٰ (عليه الصلواة والسلام کي روح الله ۽ ڪلمة الله مڃيو ٿا بس اسان جي مقصد ۽ مدعا ثابت ڪرڻ لاءِ اهوئي ڪافي آهي. هتي انهن جي ان ڳالهه جو عام اصول ۽ ضابطي جي صورت ۾ تحقيقي جواب ڏيندي ٻڌايو ويو آهي ته صرف قرآن ڪريم نه پر سيني آسماني ڪتابن ۾ ٻن قسمن جون آيتون هڪڙيون محڪمات ٻيون متشابهات نازل ڪيون ويون آهن. محڪمات اهي آيتون آهن جن جي مراد ۽ معنيٰ ٻوليءَ ۽ لفظن جي هڪ ٻئي سان ڳانڍاپي جي لحاظ سان معلوم ۽ مقرر آهي انهن ۾ استعمال ٿيل لفظن جي معنيٰ ۾ نه ڪا منجهه آهي نه انهن جي عبارت ٻنن معنائن جو احتمال رکي ٿي ۽ نه انهن جي مراد عام تسليم ٿيل قاعدن جي خلاف آهي يا ته انهن جي عبارت ۽ استعمال ڪيل لفظن ۾ ٻوليءَ جي لحاظ سان ڪيترين معنائن جو احتمال ٿي سگهيو ٿي پر نبي اڪرم صلی الله تعالیٰ عليه وسلم جن کان آندل حديثن (جيڪي محدثن جي اصول مطابق حديث مستفيض جي مقام کي پهتل آهن) يا امت جي اجماع يا مذهب جي عام تسليم ٿيل اصول سان انهن مان مراد قطعي طرح مقرر ۽ متعين ٿي چڪي آهي انهن جي مفهوم ۽ مراد ايتري واضح آهي جو لفظ يا معنيٰ جي اعتبار سان انهن تي ڪوبه شبهو وارد ٿي نه ٿو سگهي. حقيقت ۾ قرآن ڪريم جي ساريءَ تعليم جو بنياد اهي آيتون آهن.

مُتَشَابِهَاتٌ- اهي آيتون آهن جن جو تفسير ڪنهن لفظي يا معنوي پيچيدگيءَ جي ڪري سمجهڻ مشڪل هجي انهن متشابهات جي لاءِ صحيح طريقو هي آهي ته انهن کي محڪمات جي روشنيءَ ۾ ڏسجي جيڪا معنيٰ محڪمات جي خلاف هجي ان جو بالڪل انڪار ڪجي ۽ جيڪا مراد محڪمات سان موافق آهي اها قبول ڪجي پر جيڪڏهن جدوجهد ۽ گهڻي ڪوشش جي باوجود انهن مان مراد مقرر

ڪري نہ ٿي سگهجي تہ پاڻ کي سموري علم جو صاحب سمجهي حدڪان لنگهڻ نہ گهرجي دنيا تي ڪيترين اهڙين حقيقتون آهن جن کي انسان انهن سان واسطو رکندڙ علم جي نہ هجڻ جي ڪري نہ ٿو سمجهي سگهي. متشابهات جي لاءِ اهڙا تاويل اصل نہ ڪجن جيڪي مذهب جي تسليم ڪيل اصول ۽ محڪم آيتن جي خلاف هجن. مثلاً قرآن پاڪ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي لاءِ صراحت سان فرمايو تہ "اِنْ هُوَ اِلَّا عَبْدٌ اَنْعَمْنَا عَلَيْهِ" (اهو تہ صرف ٻانهو آهي جنهن تي اسان نعمت ڪئي هئي) يا "اِنَّ مَثَلَ عِيسىٰ عِنْدَاللهِ كَمَثَلِ آدَمَ خَلَقَهُ مِنْ تُرَابٍ" يعني بيشڪ عيسىٰ (عليه الصلواة والسلام) جو مثال الله وٽ آدم (عليه الصلواة والسلام) وانگر آهي جنهن کي مٽيءَ مان پيدا ڪيائين. يا "ذَالِكَ عِيسَى ابْنُ مَرْيَمَ قَوْلَ الْحَقِّ الَّذِيْ فِيْهِ يَمْتَرُوْنَ مَاكَانَ لِلّٰهِ اَنْ يَتَّخِذَ مِنْ وَّلَدٍ سُبْحَانَهٗ" يعني اهو عيسىٰ بن مريم سچو قول آهي جنهن ۾ شڪ ٿا ڪن الله جي (شان) جي لائق نہ آهي جو اولاد رکي پاڪائي آهي ان جي لاءِ- قرآن پاڪ ۾ جابجا ان جي الله هجڻ واريءَ ڳالهہ جو رد ڪيو ويو آهي هاڻي جيڪڏهن ڪو شخص انهن سيني محڪم آيتن ڪان منهن ڦيرائي "كَلِمَةُ اَلْقَاهَآ اِلٰى مَرْيَمَ وَرُوْحٌ مِّنْهُ" يعني (حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام الله جل جلاله جو) فرمان آهي جنهن کي (بيبي) مريم ڏانهن القاءَ ڪيائين ۽ ان جو روح آهي- وغيره متشابهہ آيتن کي وٺي، انهن جون محڪم آيتن جي روشنيءَ ۾ مقرر ڪيل معنائون ڇڏي اهڙي مراد وٺي جيڪا قرآني تصريحات ۽ متواتر بيانات جي خلاف هجيٌ اهو تڪبر، غرور ۽ غلط ڳالهہ نہ آهي تہ ٻيو ڇا آهي؟ بعضي قلبن جا ڪنيل ماڻهن کي منجهائي پنهنجيءَ راءِ تي متشابهہ آيتن جو مطلب ڪڍي خدا تعاليٰ جي خلق کي خراب ڪندا وتندا آهن. مسلمانن کي انهن ڪان پري رهڻ گهرجي. متشابهہ آيتن جو مطلب اصل ۾ الله تعاليٰ ڄاڻي ٿو ۽ اهوئي پنهنجي لطف ۽ ڪرم سان جنهن ٻانهي کي جيترو گهري ٿو تو آگاهي بخشي ٿو.

"وَالرَّاسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ" بعضي عالمن هن جملي کي الله جي لفظ تي عطف ڪيو آهي ان قول جي مطابق معنيٰ هينئن ٿيندي تہ متشابهات جو حقيقي مقصد الله تعاليٰ ۽ ان جي ٻانهن علماء الراسخون في العلم ڪان سواءِ ڪير بہ نہ ٿو ڄاڻي ۽ ڪن اَلرَّاسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ کي اڳتي مستقل جملو قرار ڏنو آهي انهن جي قول مطابق معنيٰ هيءَ ٿيندي تہ متشابهات جو علم صرف الله تعاليٰ کي آهي باقي راسخ علماء انهن آيتن جي حقيقت کي نہ ڄاڻڻ جي باوجود انهن جي حقانيت ۽ الله تعاليٰ جي طرفان

نازل ڪيل هجڻ تي ايمان رکن ٿا انهن کي يقين آهي تہ پنهي قسمن جون آيتون هڪ ئي سرچشمي کان آيل آهن جن ۾ تناقض جو ڪو امڪان نہ آهي ان جي ڪري اهي متشابهات کي محڪمات ڏي موٽائي ان جو مطلب سمجهندا آهن ۽ جيڪو حصو سندن سمجهہ کان مٿي هوندو آهي ان جو علم الله تعالىٰ جي حوالي ڪري چوندا آهن تہ اهوئي ان کي ڄاڻي ٿو اسان جو ڪم صرف ان تي ايمان آڻڻ آهي "كُلٌّ مِّنْ عِنْدِ رَبِّنَا" (سڀ اسان جي پالڻهار وٽان آهي) اهي پنهنجي علمي ڪمال ۽ ايماني قوت تي مغرور ناهن. هميشہ الله تعالىٰ کان استقامت، وڌيڪ فضل ۽ عنايت جا طلبگار آهن تانتہ ڪيل ڪمائي ضايع نہ ٿئي ۽ هدايت واريون دليون گمراهہ نہ ٿين.

## سوال

قرآن ڪريم جي متشابهہ آيتن جي نازل ڪرڻ جو ڪهڙو فائدو جو نہ انهن کي ڪو سمجهي ۽ نہ انهن مان هدايت حاصل ڪري سگهي؟

## جواب

متشابهات جي نازل ڪرڻ ۾ هي حڪمتون آهن: ١- هڪ تہ جيئن دنيا جي حاڪمن جي طرفان هيٺين ڪم ڪندڙن ڏانهن صريح ۽ چٽا حڪم موڪلڻ سان گڏ ڪجهہ رمزون ۽ اشارا بہ هوندا آهن جن کي مخصوص ڪوڊ ورڊ سڏيندا آهن ۽ انهن کي عام ماڻهو نہ سمجهندو آهي اهڙيءَ طرح الله تعالىٰ پنهنجي پياري حبيب صلى الله تعالىٰ عليه وسلم ۽ اڳين نبين عليهم السلام ڏي ڪي اهڙا ارشاد نازل فرمايا آهن جن کي اهي پيارا ئي ڄاڻندا آهن پيغام آڻيندڙ جبريل عليه السلام کي بہ انهن جي خبر نہ هوندي آهي.

٢- ٻيو تہ علماءِ ڪرام کي جڏهن انهن جو مطلب ۽ مفهوم سمجهہ ۾ نہ ايندو آهي تہ رب العزة جل شانه جي بارگاهہ ۾ پنهنجيءَ عاجزيءَ جو اعتراف ڪندي "سُبْحَانَكَ لَا عِلْمَ لَنَآ اِلَّا مَا عَلَّمْتَنَا" (پاڪائي آهي تنهنجي اسان کي جيڪي تو ڄاڻايو آهي ان کان سواءِ ڪو بہ علم نہ آهي) چوڻ جو درجو حاصل ڪندا آهن.

٣- ٽيون تہ متشابهہ آيتن جي ذريعي الله تعالىٰ جي ڪتاب ۽ ٻانهن جي لکيل ڪتابن ۾ فرق ٿيندو آهي انسان جي ڪتاب کي اول کان آخر تائين سمجهي

سگهبو آهي مگر الله تعالىٰ جو ڪتاب اهو آهي جو ڪتي سمجهہ ۾ اچي تہ ڪتي پانهو عاجز ٿي بيهي رهي. علامہ آلوسي بغداديءَ عليه الرحمة لکيو آهي تہ جن عالمن وٽ متشابهات مان مراد اهي امر آهن جن جو علم الله تعالىٰ پنهنجي لاءِ خاص ڪيو آهي اهي بہ هن ڳالهہ جو انڪار نہ ٿا ڪن تہ الله تعالىٰ انهن جو علم وحي جي ذريعي پنهنجي رسول مقبول صلى الله تعالىٰ عليه وآله وسلم جن کي ڏنو آهي ۽ ڪامل ولين جي قلبن ۾ القاءُ فرمايو آهي ڇوتہ جيڪو شخص محبوب ڪريم عليه الصلواة والسلام جن جي متاهين مقام ۽ سندن امت جي ڪاملن ولين جي مرتبي کي سڃاڻي ٿو اهو انڪار نہ ٿو ڪري سگهي هتي علم محيط ۽ ان علم جي نفي آهي جيڪو نظر ۽ فڪر سان حاصل ٿيندو آهي باقي ان علم جي نفي ناهي جيڪو وحي ۽ الهام سان حاصل ٿيندو آهي. (١)

## الراسخون في العلم ڪير آهن؟

علامہ ثناءُ الله پاني پتي عليه الرحمة لکيو آهي تہ اهي اهل السنت والجماعت آهن جيڪي محڪمات تي مضبوطيءَ سان عمل ڪندڙ ۽ قرآن ڪريم جي تفسير ۾ سلف صالحن، اصحابن، تابعين ۽ امت جي پلن پانهن جي اجماع جا تابعدار، متشابهہ آيتن کي محڪم آيتن سان پيٽي شيطاني ڪمن ۽ نفساني خواهشن کي ڇڏي ڏيندا آهن ۽ الله تعالىٰ جي پيارن صوفياءِ ڪرام جو فرمان آهي تہ الراسخون فی العلم اهي آهن جيڪي نفساني خواهشن کان نڪري قلب، نفس ۽ عنصرن کي فنا جي مقام تي پهچائي ذاتي تجلين ۾ اهڙا تہ مشغول ٿي ويندا آهن جو ڪا شيءِ بہ انهن کي غافل ڪري نہ ٿي سگهي اهي يقين جي ان اعلىٰ منزل تي پهتل آهن جو جيڪڏهن سندن اڳيان حجاب هٽايا وڃن تہ انهن جي يقين ۾ ڪوبہ واڌارو نہ ايندو ڇوتہ ڪين اڳئي ايترو ڪامل يقين آهي.

طبراني شريف ۾ حضرت ابودرداءِ رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن جي خدمت ۾ عرض ڪيو ويو تہ اَلرَّاسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ ڪير آهن؟ پاڻ فرمايائون تہ "مَنْ بَرَّ يَمِيْنَهٗ وَصَدَّقَ لِسَانَهٗ وَاسْتَقَامَ قَلْبُهٗ وَعَفَّفَ بَطْنَهٗ وَفَرْجَهٗ فَذَالِکَ مِنَ الرَّاسِخِيْنَ فِی الْعِلْمِ" قلت "هذا شان الصوفيه" (٢) يعني جنهن

(١) روح المعاني ص٨٧ جلد١ جزءُ ٣ (٢) تفسير مظهري ص١٤ جلد ٢

جو قسم صحيح، زبان سچي، قلب سڌيءَ واٽ وارو، پيٽ ۽ اگهڙ پاڪ رهيا اهو اَلرَّاسِخُوْنَ فِی الْعِلْمِ مان آهي - (مان چوان ٿو ته هي صوفين جو شان آهي.)

## فائدو

حضرت عبدالله بن عباس رضي الله عنهما فرمايو آهي ته "مان الراسخون في العلم مان آهيان" حضرت مجاهد جو چوڻ آهي ته "مان انهن مان آهيان جيڪي متشابه آيتن جو تاويل ڄاڻندا آهن." حضرت انس بن مالڪ رضي الله تعالیٰ عنه کان روايت آهي ته الراسخ في العلم اهو عالم آهي جيڪو پنهنجي علم جي تابعداري ڪندو هجي. قرآن پاڪ جي معنيٰ سمجهائيندڙن مفسرن ڀلارن جو هڪ قول هي به آهي ته الراسخون في العلم اهي آهن جن ۾ هي چار صفتون هجن. ١- هڪ الله تعالیٰ جو خوف ۽ تقويٰ ٢- ٻيو ماڻهن سان هيٺاهين ۽ تواضع سان پيش اچڻ. ٣- ٽيون دنيا کان بي رغبتي ۴- چوٿون نفس سان مجاهدو ڪرڻ. (١)

"رَبَّنَا لَا تُزِغْ قُلُوْبَنَا" ۾ عرض ڪيو ويو آهي ته اي اسان جارب! اسان کي سڌي واٽ تي قائم دائم رک اسان جي دلين کي ڏنگو نه بناءِ ڪٿي اسان جو حال به انهن يهودين ۽ نصارن جهڙو نه ٿئي جيڪي الله تعالیٰ جي نبين عليهم الصلواة والسلام جي اچڻ ۽ خدائي ڪتابن جي ملڻ کان پوءِ به گمراهه ٿي ويا. اها انهن علم ۾ راسخ رهندڙن جي دعا آهي جيڪي علم ۾ مضبوط هجڻ تي ناز نه ٿا ڪن بلڪ ڊڄن ٿا ته ڪائنڻ اها نعمت کسجي نه وڃي "مِنْ لَّدُنْکَ رَحْمَةً" چئي ٻڌائن ٿا ته اسان کي پنهنجي فضل، رحم، ڪرم، لطف ۽ عنايت سان سڌي واٽ تي هميشه هلاءِ. هنن لفظن ۾ دعا گهرڻ جي آداب جي به اشارتاً تعليم ڏني وئي آهي ته دعا ۾ اول ۽ آخر الله تعالیٰ جي سهڻين صفتن جو ذڪر ڪرڻ گهرجي جيئن هن دعا جي اول ۾ ربنا ۽ آخر ۾ "اَنْتَ الْوَهَّابُ" آيل آهي دعا هميشه جامع گهرجي جنهن جا الفاظ ٿورا پر معنائون گهڻيون هجن جيئن "رحمة" جو لفظ جامع آهي. حضرت ام المؤمنين ام سلمه رضي الله تعالیٰ عنها کان روايت آهي ته حضور صلی الله تعالیٰ عليه وسلم جن هيءَ دعا گهڻي پڙهندا هئا. "يَا مُقَلِّبَ الْقُلُوْبِ ثَبِّتْ قُلُوْبَنَا عَلیٰ دِيْنِکَ" (٢) يعني اي دلين کي ڦيرائڻ وارا! اسان جي دلين کي پنهنجي دين تي ثابت رک.

(١) تفسير خازن ص٢١٨ جلد ١ (٢) تفسير مظهري ص١٦ جلد ٢ ابن جرير ص١٢٥ جلد ٣

"رَبَّنَآ اِنَّکَ جَامِعُ النَّاسِ" هت عرض ٿا ڪن تہ اي اسان جا پالڻهار! اهو ڏينهن ضرور ايندو جنهن ۾ سڀني ماڻهن کي گڏ ڪندين ۽ جيڪي ضدي، هٺ ڌرم، حق جي رستي کان ٽڙيل، مسئلن ۾ اختلاف ۽ جهيڙا ڪندڙ آهن انهن سڀني جو فيصلو ڪيو ويندو هر هڪ مجرم کي ان جي سزا ملندي. اي اسان جا پالڻهار! اسين انهن جي رستي کان پري رهي شريعت تي استقامت ۽ تنهنجي رحمت جا طالب آهيون اسان کي دنيوي نعمتن سان گڏ آخرت جي ڪاميابي بہ عطا ڪجانء. بخاريء ۽ مسلم حضرت عائشہ صديقہ رضي الله تعاليٰ عنها کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن هيء آيت "هُوَ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ عَلَيْکَ الْکِتَابَ مِنْهُ اٰيَاتٌ مُّحْکَمَاتٌ" پڇاڙيء تائين پڙهي فرمايو تہ "جڏهن اهي ماڻهو ڏسو جيڪي متشابه آيتن جي پويان پيل آهن تہ سمجهو تہ هي اهي ئي آهن جن جو الله تعاليٰ (قرآن پاڪ ۾) ذڪر ڪيو آهي، پوء انهن کان ڊڄو ۽ ڪانئن پري رهو." (١)

"اِنَّ اللّٰهَ لَا يُخْلِفُ الْمِيْعَادَ" (بيشڪ الله وعدي جي برخلافي نہ ڪندو آهي) هنن لفظن سان انهن غلط عقيدي رکندڙن ماڻهن جو رد ڪيو ويو آهي جيڪي چوندا هئا تہ الله تعاليٰ وعدو ڪري وساري ٿو ڇڏي يا اهو وعدو ڪيس ڪنهن مصلحت جي خلاف نظر ٿو اچي تہ ان کي ٽاري ٿو ڇڏي. الله تعاليٰ فرمايو تہ مان وعدي برخلافي نہ ڪندو آهيان منهنجو وعدو حق ۽ سچ آهي.

اِنَّ الَّذِيْنَ کَفَرُوْا لَنْ تُغْنِيَ عَنْهُمْ اَمْوَالُهُمْ وَلَآ اَوْلَادُهُمْ مِّنَ

بيشڪ جن ڪفر ڪيو هرگز نہ بچائي سگهندا انهن کي مال انهن جا ۽ نہ اولاد انهن جو الله جي

اللّٰهِ شَيْـًٔا ۭ وَاُولٰٓئِکَ هُمْ وَقُوْدُ النَّارِ ⑩ کَدَاْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَ ۙ

(عذاب کان) ڪجهہ بہ ۽ اهي ئي باهہ جو ٻارڻ آهن (انهن جو حال) فرعونين ۽ انهن جهڙو آهي

وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ۭ کَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا ۚ فَاَخَذَهُمُ اللّٰهُ بِذُنُوْبِهِمْ ۭ

جيڪي کانئن اڳي هيا ڪوڙو ڄاڻون اسان جي آيتن کي پوء پڪڙيو انهن کي الله انهن جي گناهن

(١) جلالين شريف ص٤٦ مطبوعه ڪراچي

وَاللّٰهُ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ⑪

جي ڪري ۽ الله سخت عذاب ڏيندڙ آهي

## تفسير

هنن آيتن ۾ بہ نجران وارن عيسائين جي وفد جو ذڪر آهي جنهن ڪي عيسائي مذهب ۽ قوم جي قيادت مليل هئي. علامہ رازي عليه الرحمة لکيو آهي تہ جڏهن عيسائين جو هي وفد مديني شريف ڏانهن هلڻ جي ارادي سان نجران کان روانو ٿيو ۽ سندن مذهبي پادريءَ ابوحارثه بن علقمه جي خچر کي هلندي ٿاپو آيو تہ ان جي ڀاءُ ڪرز بن علقمه جي زبان مان نڪتو "تعس الابعد" شال هلاڪ ٿئي ابعد- ابعد جي لفظ مان سندس مراد رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن هئا. (معاذالله) ابوحارثہ اهو ٻڌندي ئي پنهنجي ڀاءُ کي تنبيهہ ڪندي چيو "تعست امک" تنهجي ماءُ هلاڪ ٿئي (ائين ڇو چيئي؟) ڪرز حيرت ۾ پئجي ڀاءُ کان ان ڪاوڙ ڪرڻ جو سبب پڇيو تہ ابوحارثہ ڪيس هنن لفظن ۾ جواب ڏنو:

الله جو قسم آهي اسين چڱيءَ طرح ڄاڻون ٿا تہ بيشڪ هي اهوئي نبي آهي جنهن جي اسان جي ڪتابن ۾ بشارت ڏنل آهي. ڪرز چيس تہ پوءِ ان تي ايمان ڇونہ ٿا آڻيو؟ جواب ۾ چيائين تہ لان هؤلاءِ الملوک اعطونا اموالا ڪثيرة واڪرمونا فلو اٰمنا بمحمد لاخذوا منا ڪل هذه الاشياءِ يعني هنن بادشاهن اسان کي گهڻا مال ۽ عزت ڏني آهي جيڪڏهن اسان محمد (صلى الله تعالىٰ عليه وسلم) جن تي ايمان آندو تہ اسان کان هر شيءِ ڪسي وٺندا. ڪرز اها ڳالهہ دل ۾ رکي ۽ آخر ۾ اهائي ڳالهہ ان جي ايمان آڻڻ جو سبب بڻي. (١) هنن آيتن ۾ ابوحارثہ جي انهن لفظن جو جواب ڏيندي ٻڌايو ويو آهي تہ جيڪي ماڻهو دنيوي مال، سامان ۽ لالچ جي ڪري الله تعالىٰ جي نبي عليه الصلواة والسلام تي ايمان نہ ٿا آڻين انهن کي سندن اهو مال ۽ اولاد الله تعالىٰ جي عذاب کان بچائي نہ سگهندو انهن لاءِ آخرت جو وڏو عذاب تيار آهي. "كَدَاْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ" ۾ ٻڌايو ويو آهي تہ فرعون، ان جا ساٿي ۽ انهن کان اڳيان الله

(١) تفسير ڪبير ص١٨٤ جزءُ ٧

جل شانه جي حڪمن ڪي نہ مڃڻ جي ڪري تباهہ ٿي ويا تہ ٻيا ڪيئن بچي سگهندا.
"كَذَّبُوْا بِاٰيَاتِنَا" اسان جي آيتن ڪي ڪوڙو ڄاڻيائون. انهن آيتن مان مراد الله تعالىٰ جي توحيد جا دليل ۽ نبين عليهم الصلواة والسلام جا معجزا ۽ اهي نشانيون آهن جيڪي آسماني ڪتابن ۽ صحيفن ۾ لکيل هيون.
"وَاللّٰهُ شَدِيْدُ الْعِقَابِ" ۽ الله سخت عذاب ڏيندڙ آهي. قرآن ڪريم هن حقيقت ڪي بار بار واضح ۽ روشن ڪندو ٿو اچي تہ ڪنهن بہ قوم تي الله تعاليٰ جو عذاب هروڀرو نہ ايندو آهي بلڪ سندن تباهي ۽ بربادي سندن برن ۽ بڇڙن عملن جو نتيجو هوندي آهي جيڪا قوم صالح عمل ۽ سهڻي ڪردار سان پاڻ ڪي عزت ۽ عظمت جو حقدار ثابت نہ ٿي ڪري اها ان وڏيءَ نعمت ڪان محروم ڪئي ويندي آهي هنن آيتن تي غور ڪرڻ سان هي فائدا حاصل ٿين ٿا.

## فائدو ١

آيت ١٠ مان ثابت ٿيو تہ قيامت ۾ ڪافرن ڪي انهن جو مال ۽ اولاد فائدو نہ ڏيندو ۽ نہ انهن تان عذاب ڪي دفع ڪندو، پر ايمان وارن جو مال ۽ اولاد انهن ڪي نفعو ڏيندو ۽ انهن جي ذريعي ۽ صدقي ڪانئن عذاب دفع ڪيو ويندو.

## فائدو ٢

آيت ١١ جي لفظ "بِذُنُوْبِهِمْ" مان ثابت ٿيو تہ ڪافرن ڪي سندن سڀني گناهن جي سزا ملندي پر مومنن لاءِ اهو حڪم نہ آهي رب العزة جل مجده انهن ڪي سيئي گناهہ بخش ڪندو يا ڪجهہ بخش ڪري، ڪجهہ گناهن جي سزا ڏيندو، انهن جو معاملو جدا آهي.

## فائدو ٣

فرعون جي تابعدارن ڪي آل فرعون سڏيو ويو آهي، ڇوتہ عربي زبان ۾ ڪنهن جي پوئلڳ ڪي ان جي آل چئبو آهي. حضور سيدالمرسلين صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي تابعداري ڪندڙن ڪي بہ آل محمد (صلى الله عليه وسلم) چئي سگهجي ٿو.

## فائدو ۴

ڪي ماڻهو چوندا آهن تہ درود شريف ۾ صرف حضور صلى الله عليه وسلم جن جي اولاد جو ذڪر آهي ڇو تہ ان ۾ آل جو لفظ ايندو آهي پر انهن جو اهو چوڻ سراسر غلط آهي آل محمد صلي الله تعالىٰ عليه وسلم ۾ حضور عليه الصلواة والسلام جن جا اصحاب ۽ سيئي سچا تابعدار داخل آهن. ڇو تہ قرآن پاڪ ۾ تابعداري ڪندڙ ڪي آل سڏيو ويو آهي.

قُلْ لِّلَّذِيْنَ كَفَرُوْا سَتُغْلَبُوْنَ وَتُحْشَرُوْنَ اِلٰى جَهَنَّمَ ۚ وَبِئْسَ

فرماءِ انهن کي جو ڪفر ڪيائون تہ جلدي مغلوب ڪيا ويندؤ ۽ اٿاريا ويندؤ جهنمر ڏانهن ۽ اهو

الْمِهَادُ ﴿١٢﴾

بڇڙو هنڌ آهي

## تفسير

سيدنا رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن بدر جي جنگ ۾ ڪامياب ۽ فتحياب ٿيڻ کان پوءِ يهودين کي اسلام جي دعوت ڏيندي فرمايو تہ "جيڪڏهن اسلام قبول نہ ڪندؤ تہ اوهان جو بہ مڪي پاڪ جي قريشين وارو حال ٿيندو. ان تي يهودي غصي کان ڳاڙها ٿي چوڻ لڳا تہ اوهان مڪي جي ڄڻن ناتجربيڪارن کي جنگ ۾ هارايو هو جيڪڏهن اسان سان جنگ ڪيو تہ خبر پئجي ويندي تہ جنگي جوان ڪيئن هوندا آهن. انهن جي ان متڪبرانہ گفتگو جي جواب ۾ الله تعالىٰ هيءَ آيت لاهي پنهنجي حبيب عليہ الصلواة والسلام جن کي حڪم ڏنو تہ "اوهان يهودين جي ذلت، رسوائيءَ ۽ هار کائڻ جو اعلان ڪيو." (١) بعضي مفسرن لکيو آهي تہ بدر جي جنگ ۾ ڪافرن جي حالت ڏسي ڪجهہ يهودي اسلام ڏانهن مائل ٿيا هئا پر ٻئي سال احد جي جنگ ۾ مسلمانن کي آيل تڪليف ڏسي سندن دليون اهڙيون

(١) الدرالمنثور ص١٥٨ جلد٢

سخت ٿيون جو مسلمان ٿيڻ کان انڪار ڪري ويهي رهيا. انهن جي باري ۾ هيءَ آيت نازل ٿي. (١) "قُلْ" جي لفظ ۾ حضور پرنور صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن سان خطاب آهي. يعني اوهان فرمايو.

## فائدو

قل جي صيغي آڻڻ ۾ ٻه حڪمتون آهن. ١- هڪ ته اها يهودين جي مغلوب ۽ هار کائڻ جي خبر حضرت حبيب ڪريم صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي زبان پاڪ کان پڌري ڪرائڻي هئي ته يهودين کي سندن شڪست جي پڪ ٿئي ڇو ته اهي دل ۾ يقين رکندا هئا ته سندن زبان پاڪ مان جيڪي نڪرندو آهي تيئن ئي ٿيندو آهي. ٢- ٻيو ته سندن علم جي ڪمال جو اظهار ٿئي ته پاڻ ڪيئن ٻيا اڳيئي اعلان ڪن ته يهوديؤ! اوهان دنيا ۾ جلدي مغلوب ٿيندؤ ۽ آخرت ۾ جهنم ڏي موڪليا ويندؤ اها خبر حضور عليه الصلواة والسلام جن کي عطا ٿيل علوم مان هڪ ذرو آهي. جيئن حضرت شرف الدين بوصيري عليه الرحمة قصيدي بردي شريف ۾ فرمايو آهي

فَإِنَّ مِنْ جُوْدِكَ الدُّنْيَا وَضَرَّتُهَا
وَمَنْ عُلُوْمِكَ عِلْمُ اللَّوْحِ وَالْقَلَمِ (٢)

يعني اي حبيب! دنيا ۽ آخرت اوهان جي سخاوت جو ذرو ۽ لوح ۽ قلم وارو علم اوهان جي علمن مان ذرو آهي.

"سَتُغْلَبُوْنَ" ۾ س جي لفظ اچڻ سان مستقبل قريب جي معنىٰ پيدا ٿيندي يعني اوهان تمام جلدي هار کائي مغلوب ٿيندؤ. الله تعالىٰ جي حڪم سان ٿيو به ائين جو ٿوري عرصي ۾ يهودين جا وڏا قبيلا بني نضير ۽ بني قريظه تباهه ٿي ويا، خيبر جو علائقو مسلمانن فتح ڪيو ۽ يهودين تي جزيو رکيو ويو. (٣) علامه اسماعيل حقي عليه الرحمة "سَتُغْلَبُوْنَ" لفظ جو تفسير ڪندي لکيو آهي ته وهو من اوضح شواهد النبوة (٤) علامه رازيءَ لکيو آهي ته ولما كان ذالک خارجا عن العادة كان معجزا (٥) مٿين ٻنهي عبارتن جو مفهوم هي آهي ته اها خبر ڏيڻ ته يهودي جلد مغلوب ٿيندا ۽ ٿيا حضور عليه الصلواة والسلام جن جي سچي نبي هجڻ جو دليل ۽ سندن معجزو آهي.

(١) تفسير ڪبير ص١٨٧ جزءُ ٧ (٢) احسن التشريح ص٢٣٦ (٣) تفسير مظهري ص١٨ جلد ٢
(٤) روح البيان ص٨ جلد ٢ (٥) تفسير ڪبير ص١٨٩ جزءُ ٧

قَدْ كَانَ لَكُمْ اٰيَةٌ فِيْ فِئَتَيْنِ الْتَقَتَا ؕ فِئَةٌ تُقَاتِلُ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

تحقيق هئي اوهان لاءِ نشاني ٻن جماعتن ۾ جيڪي سامهون ٿيون (بدر جي جنگ ۾) هڪ جماعت وڙهي ٿي

وَاُخْرٰى كَافِرَةٌ يَّرَوْنَهُمْ مِّثْلَيْهِمْ رَاْىَ الْعَيْنِ ؕ وَاللّٰهُ يُؤَيِّدُ

الله جي واٽ ۾ ۽ ٻي (جماعت وارا) ڪافر هئا ڏسن پيا انهن کي ٻيڻو انهن کان اک جو ڏسڻ ۽ الله تائيد ٿو ڪري

بِنَصْرِهٖ مَنْ يَّشَآءُ ؕ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَعِبْرَةً لِّاُولِى الْاَبْصَارِ ﴿۱۳﴾

پنهنجيءَ مدد سان جنهن کي گهري. بيشڪ ان ۾ عبرت آهي سمجهدارن لاءِ

## تفسير

هن آيت ۾ بدر واريءَ جنگ جو ذڪر آهي جيڪا هجرت جي ٻئي سال رمضان المبارڪ مهيني جي سترهينءَ تاريخ جمعه جي ڏينهن بدر نالي ميدان ۾ لڳي هئي جنهن ۾ مسلمانن جو تعداد ٽي سؤ تيرهن (۳۱۳) هو جن مان ستهتر (۷۷) مهاجر ۽ ٻه سؤ ڇٽيهه (۲۳۶) انصار هئا ۽ انهن وٽ ڇهه (٦) زرهون ٻه گهوڙا هڪ مقداد بن عمرو جو ۽ ٻيو مرثد بن ابي مرثد جو (۱) مهاجرن اصحابن جو جهنڊو حضرت علي ڪرم الله وجهه جي هٿ ۾ ۽ انصارن جو جهنڊو حضرت سعد بن عبادة جي هٿ ۾ هو (۲) بدر جي جنگ پهرين جنگ هئي جنهن ۾ رسول الله صلي الله تعالیٰ عليه وسلم جن بذات خود شريڪ ٿيا هئا هيءَ جنگ هجرت کان ارڙهن (۱۸) مهينا پوءِ لڳي هئي. (۳) هن جنگ ۾ جملي چوڏهن (۱۴) اصحابي، اٺ (۸) انصار ۽ ڇهه (٦) مهاجر شهيد ٿيا هئا. (۴) مسلمانن جي مقابلي ۾ ڪافرن جو لشڪر نون (۹۰۰) سون کان مٿي هڪ هزار جي لڳ ڀڳ هو. (۵) سڀئي هٿيارن سان مسلح هيا سندن سواريءَ لاءِ هڪ سؤ (۱۰۰) گهوڙا ۽ ست سؤ (۷۰۰) اٺ هئا ڪاڌي جي لاءِ هرروز هڪ اٺ ڪهندا

(۱) تفسير المراغي ص۱۰٦ جلد ۱ جزءِ ۳ (۲) روح المعاني ص۹٦ جلد۱ جزءِ۳
(۳) تفسير مظهري ص۱۸ جلد ۲ (۴) تفسير جمل ص۲۴۷ جلد ۱
(۵) تفسير ابن ڪثير ص۳۵۰ جلد ۱

هئا. ڪافرن جي ايڏي وڏيءَ فوج جو مسلمانن جي ٿوريءَ ۽ غيرمسلح فوج جي هٿان شڪست کائڻ الله جل جلاله جي قدرت جو ڪمال ۽ حق جي نشاني آهي، جنهن کي هتي بيان ڪيو ٿو وڃي.

## فائدو

ڄاڻڻ گهرجي ته هتي ٻن جماعتن جو ذڪر آٿي انهن جو تعارف مختلف نموني سان ڪرايو ويو آهي. پهرين لاءِ "فِئَةٌ تُقَاتِلُ فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ" (هڪ جماعت الله جي واٽ ۾ وڙهي رهي آهي) ۽ ٻيءَ لاءِ "وَاُخْرٰى كَافِرَةٌ" (ٻي جماعت ڪافرن جي آهي) آيو آهي پهرينءَ لاءِ جيڪڏهن "فِئَةٌ مُّسْلِمَةٌ" اچي ها ته ٻنهي جا صيغا هڪ ٻئي سان ملن جلن ها پر ان ترتيب جي بجاءِ پهرين ترتيب دنيا جي اڳيان هن ڳالهه کي واضح ڪرڻ لاءِ اختيار ڪئي وئي آهي ته اصحابن سڳورن جو جنگ ڪرڻ ۾ ٻيو ڪو غرض، مقصد يا مطلب نه هو اهي صرف ۽ صرف الله تعالىٰ جي رضا لاءِ خلوص ۽ سچائيءَ سان وڙهي رهيا هئا انهن جو مقصد انفرادي يا اجتماعي قومي برتري ثابت ڪرڻ نه پر الله جل شانه جي ڪلمي کي بلند ڪرڻ هو.

"يَرَوْنَهُمْ مِّثْلَيْهِمْ" انهن کي پاڻ کان ٻيڻو ٿا ڏسن. يعني هر جماعت پنهنجي مقابل جماعت کي ٻيڻي ٿي نظر آئي. مقصد اهو هو ته ڪافر مسلمانن جي گهٽائي تصور ڪري ڊڄن ۽ مسلمان انهن کي ٻيڻو ڏسي الله تعالىٰ ڏانهن وڌيڪ متوجهه ٿين ۽ ان جي پاڪ ذات تي پورو ڀروسو ڪري فتح، نصرت، ڪاميابي ۽ ڪامراني حاصل ڪن.

علامه ابن جرير هن آيت جو تفسير ڪندي لکيو آهي ته يرون ۾ فاعل جو ضمير مسلمانن ڏي ۽ هم جمع جو ضمير ڪافرن ڏانهن ٿو وري. يعني مسلمان پنهنجن اکين سان ڏسي رهيا هئا ته ڪافر انهن کان ٻيڻا آهن پر تڏهن به ثابت قدم رهي لڙيا ۽ الله جل جلاله جي تائيد ۽ مدد سان ڪافرن کي زبردست شڪست ڏنائون جنهن ۾ ابوجهل سميت انهن جا ستر (٧٠) قريشي سردار مارجي ويا ۽ ستر (٧٠) ڄڻا قيدي بڻيا.

سمجهڻ گهرجي ته اهو ٻنهي جماعتن جو هڪ ٻئي کي گهٽو ڏسڻ به ڪنهن ڪنهن مهل هو نه ته ڪنهن ڪنهن مهل هڪ ٻئي کي ٿورو به ڏنائون ٿي جيئن

انشاءَ الله تعالىٰ سورة الانفال ۾ ايندو.
"وَاللّٰهُ يُؤَيِّدُ بِنَصْرِهٖ مَنْ يَّشَاۤءُ" (۽ الله تائيد ٿو ڪري پنهنجي مدد سان جنهن کي گهري) هنن لفظن ۾ واضح ڪيو ويو آهي ته جنگ جي ميدان ۾ ڪاميابي فوج ۽ سازوسامان جي گهڻائيءَ تي نه پر الله تعالىٰ جي مدد تي منحصر آهي هڪ ٿورڙيءَ جماعت جو بي سرو سامانيءَ جي حالت ۾ اهڙي مضبوط لشڪر جي مقابلي ۾ انهن پيش گوين جي مطابق جيڪي مڪي مڪرمه ۾ ڪيون ويون هيون اهڙي نموني ڪامياب ٿيڻ ۾ اکين رکڻ وارن لاءِ عبرت ئي عبرت آهي جيڪا "اِنَّ فِيْ ذَالِكَ لَعِبْرَةً لِّاُولِي الْاَبْصَارِ ۾بيان ڪئي وئي آهي.

# فائدو

هن جنگ ۾ ٽي ڳالهيون سبق سيکاريندڙ آهن. ١- پهرين ته مسلمان ۽ ڪافر جنهن نموني سان هڪ ٻئي جي سامهون منزل انداز ٿيا هئا انهن جي اٿڻ ويهڻ مان ئي ٻنهي ڌرين جو اخلاقي فرق ظاهر ٿي رهيو هو. ڪافرن جي لشڪر ۾ شراب، ناچ ڪرڻ، ڳائڻ واريون عورتون ۽ ڪاڏي پيتي جو سامان گهڻو هو جنهن جي ذريعي وڏا عيش ڪري رهيا هئا ۽ مسلمانن جي لشڪر ۾ پرهيزگاري، خدا جو خوف، بلند اخلاقي، نمازون، رب جي مٺي نالي جي پڪار، سندس دربار ۾ دعائون ۽ عاجزانه التجائون هيون ٻنهي لشڪرن کي ڏسندي ئي سمجهدار ماڻهو سمجهي ٿي سگهيو ته ڪهڙو لشڪر الله کي پيارو آهي.؟ ٢- ٻي ته مسلمان ٿوري تعداد، بي سرو سامانيءَ جي هوندي ڪافرن جي گهڻي تعداد، اعلىٰ اسلحي ۽ تجربيڪار فوج جي مقابلي ۾ جنهن نموني سان ڪامياب ٿيا هئا اها ايزدي تائيد ۽ خداوندي مدد هئي. ٣- ٽين ته جيڪي ماڻهو الله جل شانه جي غالب قوت کان غافل ٿي پنهنجن هٿيارن ۽ سامان تي ناز ڪندا آهن انهن کي هي واقعو اکيون کولائيندڙ آهي ته الله تعالىٰ ڪيئن مسڪينن، پرديسين، مهاجرن، مديني پاڪ ۾ رهندڙ هارين ۽ جنگ جي فن کان ناواقفن مسلمانن جي هڪ ننڍيءَ جماعت کي مڪي پاڪ جي قريشي سردارن، نامور پهلوان ڪافرن جي وڏيءَ جماعت تي فتح عطا ڪري انهن کي خواري ۽ شڪست ڏياري.

# فائدو

هن آيت ۾ مسلمانن جي لاءِ آيل "فِئَةٌ تُقَاتِلُ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ" (هڪ جماعت الله جي واٽ ۾ وڙهي ٿي) لفظن مان ثابت ٿيو ته جيڪي اصحابي حضور سرور ڪائنات صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن سان بدر جي جنگ ۾ گڏ هئا اهي سيئي پڪا مومن، مجاهد، مخلص ۽ سچا هئا. انهن ۾ حضرت ابوبڪر صديق ۽ حضرت عمر فاروق رضي الله تعاليٰ عنهما به شامل هئا جيڪو انهن پيارن کي سچو ۽ پڪو مومن نه مڃي اهو پاڻ بي ايمان ۽ قرآن ڪريم جو منڪر آهي.

# سوال

حضرت عثمان رضي الله تعالىٰ عنه بدر جي جنگ ۾ ڇو ڪونه هو؟

# جواب

سندس گهرواري حضور عليه الصلواة والسلام جن جي نياڻي حضرت رقيه رضي الله تعاليٰ عنها بيمار هئي. حضرت عثمان حضور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي حڪم سان ان جي تيمارداريءَ ۽ سنڀال ۾ مشغول رهيو ۽ جنگ ۾ شريڪ ڪونه ٿي سگهيو، پر حضور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن ڪيس بدر وارن مجاهدن ۾ شامل قرار ڏيندي غنيمت جي مال مان به حصو ڏياريو هو. پوءِ جنهن کي محبوب عليه الصلواة والسلام ان اعلىٰ مرتبي ۾ شامل ڪري ان تي ڪوبه ايمان وارو ڪيئن اعتراض ڪري سگهندو؟

زُيِّنَ لِلنَّاسِ حُبُّ الشَّهَوَاتِ مِنَ النِّسَآءِ وَالْبَنِيْنَ وَالْقَنَاطِيْرِ

سينگاري وئي ماڻهن لاءِ محبت خواهشن جي عورتن ۽ پٽن ۽ گڏ ڪيلن

الْمُقَنْطَرَةِ مِنَ الذَّهَبِ وَالْفِضَّةِ وَالْخَيْلِ الْمُسَوَّمَةِ

(خزانن جي) ڍيرن جي سون ۽ چانديءَ ۽ گهوڙن نشان ڪيلن

وَالْاَنْعَامِ وَالْحَرْثِ ؕ ذَالِکَ مَتَاعُ الْحَيواةِ الدُّنْيَا ۚ وَاللّٰهُ عِنْدَهٗ

چوپاين جانورن ۽ پوک مان اهو دنيا جي حياتيءَ جو سامان آهي ۽ الله وٽ ئي

حُسْنُ الْمَاٰبِ ﴿۱۴﴾ قُلْ اَؤُنَبِّئُكُمْ بِخَيْرٍ مِّنْ ذَالِكُمْ ؕ لِلَّذِيْنَ اتَّقَوْا

سهڻي جاءِ آهي فرماءِ ته آءُ توهان کي ٻڌايان؟ ڀلي شيءِ انهيءَ کان؟ انهن لاءِ جو متقي ٿيا

عِنْدَ رَبِّهِمْ جَنّٰتٌ تَجْرِىْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خَالِدِيْنَ فِيْهَا

سندن رب وٽ بهشت آهن وهن ٿيون هيٺان انهن جي نهرون هميشه رهندڙ هوندا انهن ۾

وَاَزْوَاجٌ مُّطَهَّرَةٌ وَّرِضْوَانٌ مِّنَ اللّٰهِ ؕ وَاللّٰهُ بَصِيْرٌۢ بِالْعِبَادِ ﴿۱۵﴾

۽ زالون پاڪ ۽ راضپو آهي الله جي طرفان ۽ الله ڏسندڙ آهي ٻانهن کي

## تفسير

هنن آيتن ۾ اهڙين شين سان طبعي لڳاءُ ۽ محبت جو ذڪر آهي جن سان انسان لاڳاپيل آهي ۽ انهن سان محبت رکڻ ۾ به الله تعالىٰ جون ڪئين حڪمتون سمايل آهن جيڪڏهن اها محبت نه هجي ها ته شادي ڪرڻ جون سخت ذميداريون ڪير کڻي ها؟ اولاد جي نپائڻ لاءِ سڄيون راتيون جاڳي راحت ۽ آرام ڪير ڦٽائي ها؟ بلڪ انساني نسل جي بقا ڪيئن ممڪن ٿئي ها؟ سون، چاندي، پلن گهوڙن، چوپاين جانورن ۽ پوڪن سان به جيڪڏهن انسان جي طبيعت نه لڳي ها ته دنيوي رونقون سڀ ختم ٿي وڃن ها پر اهو سڀ ڪجهه ان لاءِ ناهي ته انسان رات ڏينهن انهن جي پويان هلندو، ڀڄندو رهي انهن جي محبت ۾ گم ٿي پنهنجي پالڻهار کي وساري ويهي رهي. هي ٻن ڏينهن جي حياتيءَ جو سامان آهي انهن کي فنا ۽ خواب سمجهي ڪين رب العزة جل شانه جي راضي ڪرڻ لاءِ استعمال ڪري. جيڪڏهن عورتن جي محبت مان مقصد

پاڪدامني ۽ اولاد جو هجڻ آهي ته اهو سٺو مقصد آهي جيئن حضور صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن جو ارشاد مبارڪ آهي ته "اَلدُّنْيَا مَتَاعٌ وَخَيْرُ مَتَاعِهَا الْمَرْءَةُ الصَّالِحَةُ اِنْ نَّظَرَ اِلَيْهَا سَرَّتْهُ وَاِنْ اَمَرَهَا اَطَاعَتْهُ وَاِنْ غَابَ عَنْهَا حَفِظَتْهُ فِیْ نَفْسِهَا وَمَالِهٖ"(۱) يعني دنيا سامان آهي ۽ ان مان ڀلو سامان اهڙي زال آهي جو جيڪڏهن (مڙس) ان ڏانهن نهاري ته ان کي خوش ڪري ۽ جيڪڏهن مڙس ان کي ڪو امر ڪري ته مڃي ۽ جيڪڏهن مڙس ان کان غائب ٿئي ته ان جي (عزت ڪرڻ لاءِ) پنهنجي سر کي برائيءَ کان ۽ ان جي مال کي اجائي خرچ ڪرڻ کان حفاظت ۾ رکي.

پٽن جي محبت به ان لاءِ رکڻ ته الله جل جلاله جي هيڪڙائيءَ کي مڃڻ وارا حضرت رسول مقبول صلى الله تعاليٰ عليه وسلم جن جا امتي وڌن ته اها سهڻي سوچ آهي رسول الله صلى الله تعاليٰ عليه وسلم جن فرمايو آهي ته "تَزَوَّجُوا الْوَدُوْدَ الْوَلُوْدَ فَاِنِّیْ مُكَاثِرٌۢ بِكُمُ الْاُمَمَ يَوْمَ الْقِيَامَةِ" (۲) يعني (مڙسن سان) محبت رکندڙ، ٻار ڄڻيندڙ (زال سان) شادي ڪيو ڇوته مان اوهان سان (اڳين) امتن کان گهڻائي ثابت ڪندڙ آهيان. ائين ئي ٻين شين سان محبت رکڻ جو معاملو آهي.

"قُلْ اَؤُنَبِّئُكُمْ" ۾ حضور عليه الصلواة والسلام جن کي حڪم آهي ته اي حبيب! (صلي الله عليڪ وسلم) انهن غافلن کي جيڪي فاني دنيا جي سينگارن ۾ ڦاسي آخرت کان غافل ٿي ويا آهن فرماءِ ته اچو ته مان اوهان کي اهڙيءَ شيءِ جو ڏس ڏيان جيڪا انهن سڀني کان اعليٰ ۽ افضل آهي ڇوته دنيا جي هر نعمت ڪنهن نه ڪنهن مصيبت سان شامل ۽ فاني آهي پر اخروي نعمتون خالص ۽ باقي آهن دنيوي سامان ۾ گهڻو مشغول رهڻ الله تعاليٰ جي ناراض ٿيڻ جو سبب آهي ۽ آخرت جي سوچ ۽ فڪر ۾ رهڻ الله تعاليٰ کي راضي ڪرڻ جو ذريعو آهي جيڪي ٻانها الله تعاليٰ تي ايمان آڻي، تقويٰ اختيار ڪندا انهن لاءِ آخرت جون نعمتون، جنت جون اهڙيون محلاتون آهن جن جي هيٺان ماڪيءَ ۽ کير جون نهرون پيون وهنديون. انهن نعمتن ۾ هميشه هوندا نه اتي موت آهي ۽ نه اتاهين انهن کي ڪو ڪڍي ڇڏيندو. اتي ڪين مليل زالون ظاهري ۽ باطني عيبن، حيض، نفاس، پيشاب ۽ پائخاني کان پاڪ هونديون ۽ سندن سينا حسد ۽ ڪيني کان . صاف هوندا.

"وَرِضْوَانٌ مِّنَ اللهِ" ۽ الله جي طرفان راضپو- الله تعاليٰ قيامت جي ڏينهن

(۱) تفسير ابن ڪثير ص۳۵۱ جلد ۱ (۲) تفسير ابن ڪثير ص۳۵۱ جلد ۱

جنتين کان پڇندو تہ راضي ٿيا آهيو؟ عرض ڪندا تہ يا الله! اجان بہ راضي نہ ٿينداسون حالانڪ اسان کي اهڙيون نعمتون عطاڪيون اٿئي جو ڪنهن کي بہ نہ مليون آهن. الله جل شانه پڇندن تہ ڇا اوهان کي ان کان بہ پلي نعمت نہ عطا ڪيان؟ عرض ڪندا تہ ها ان کان پلي ڪهڙي نعمت آهي؟ الله تعالىٰ فرمائيندو تہ "مان اوهان سان راضي آهيان. هن کان پوءِ اوهان تي اصل ڪاوڙ نہ ڪندس." (١)

# فائدو

هن آيت مبارڪ جي اول ۾ عورتن سان محبت رکڻ جو ذڪر ان جي ڪري آندو ويو آهي جو دنيا ۾ وڏي ۾ وڏو فتنو اهي بنجنديون آهن. سيدالمرسلين صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو آهي تہ "مَا تَرَكْتُ بَعْدِيْ فِتْنَةً اَضَرَّ عَلَى الرِّجَالِ مِنَ النِّسَآءِ" (٢) يعني مون پنهنجي رحلت کان پوءِ مردن لاءِ وڏي ۾ وڏو نقصان ڏيندڙ ڪوبہ فتنو عورتن کان وڌيڪ نہ ڇڏيو آهي.

# فائدو

گهوڙا ٽن وجهن جي ڪري رکيا ويندا آهن. ١- هڪ ان لاءِ تہ جهاد جي وقت انهن تي سوار ٿي الله جي ڪلمي کي بلند ڪجي ان نيت سان گهوڙو پالڻ ثواب ۽ سهڻو ڪم آهي. ٢- ٻيو تہ ماڻهن کي ڏيکاري فخر ۽ وڏائي ڪجي اهو گناهہ آهي. ٣- ٽيون تہ هي هڪ سٺو جانور آهي پلي ان جو نسل وڌي. اهو ارادو ڪرڻ گناهہ ناهي بلڪ گهوڙي جي پاليندڙ لاءِ ستر ۽ ڍڪ آهي.

# فائدو

هن آيت ۾ "وَالْبَنِيْنَ" آٽي پٽن سان محبت جو ذڪر ڪيو ويو آهي وَالْبَنَاتِ چئي ڌيئرن جو ذڪر ان جي ڪري نہ ڪيو ويو آهي جو جيتري محبت پٽن سان هوندي آ اوتري ڌيئرن سان نہ هوندي آهي. گهڻو ڪري انسان مال، ملڪيت بہ پٽن لاءِ گڏ ڪندو آهي.

(١) روح المعاني ص١٠١جلد١ جزء٣ (٢) تفسير ابن ڪثير ص٣٥١ جلد ١

اَلَّذِيۡنَ يَقُوۡلُوۡنَ رَبَّنَآ اِنَّنَآ اٰمَنَّا فَاغۡفِرۡ لَنَا ذُنُوۡبَنَا وَقِنَا عَذَابَ

اهي (ٻانهن) جو چون ٿا ته اي اسان جا پالڻهار! بيشڪ اسان ايمان آندو پوءِ بخش ڪر اسان کي اسان جا گناهه

النَّارِ ﴿١٦﴾ اَلصّٰبِرِيۡنَ وَالصّٰدِقِيۡنَ وَالۡقٰنِتِيۡنَ وَالۡمُنۡفِقِيۡنَ

۽ بچاءِ اسان کي باهه جي عذاب کان صبر ڪندڙ ۽ سچ ڳالهائيندڙ ۽ عاجزي ڪندڙ ۽ خرچ ڪندڙ

وَالۡمُسۡتَغۡفِرِيۡنَ بِالۡاَسۡحَارِ ﴿١٧﴾

۽ مغفرت طلب ڪندڙ پوئين رات جو

## تفسير

هنن آيتن ۾ الله تعالىٰ جي پيارن پرهيزگار ٻانهن جون جن جي لاءِ جنت پنهنجي پوريءَ سونهن، صفائي، زيب ۽ زينت سان منتظر آهي. ڇهه اهڙيون سهڻيون صفتون ذڪر ڪيون ويون آهن جن جي مٿان تقويٰ جو مدار آهي.

١- پهرين صفت ايمان آڻڻ آهي جيڪو گناهن جي معافيءَ لاءِ اولين شرط آهي ان کان سواءِ معافي ڪڏهن به نه ملندي. ٢- ٻي صفت صبر ڪرڻ آهي. يعني الله تعالىٰ جي واٽ ۾ وڏي کان وڏيون تڪليفون سهي سندس فرمانبرداريءَ تي مضبوط رهڻ، ٻي فرمانيءَ کان پڄڻ ۽ بچڻ. ٣- ٽين صفت سچ ڳالهائڻ آهي يعني زبان، نيت، دل ۽ معاملات ۾ صاف ۽ سچو هجڻ ۽ هر قسم جي ڪوڙ کان پاسو ڪرڻ. ٤- چوٿين صفت قنوت آهي. يعني عبادت ۾ تڪبر، هٺ ۽ خودپسنديءَ کان پري رهي عاجزي ڪرڻ ۽ پوريءَ تسليم ۽ انقياد سان مالڪ، خالق جل جلاله جا احڪام بجا آڻڻ. ٥- پنجين صفت رب جي واٽ ۾ خرچ ڪرڻ آهي. يعني الله جل شانه جي عطا ڪيل خزانن، مال، ملڪيت، ڌن ۽ دولت کي سندس واٽ ۾ سندس ٻڌايل حڪم مطابق خرچ ڪرڻ. ٦- ڇهين صفت الله تعالىٰ کان مغفرت طلب ڪرڻ آهي. يعني رات جي پوئين حصي ۾ (جيڪو دل جي اطمينان ۽ دعا جي مقبوليت جو وقت هوندو آهي پر ان

وقت ننڊ مان اٿڻ ڏکيو لڳندو آهي) پنهنجي پالڻهار کان پنهنجن گناهن ۽ قصورن جي معافي گهرڻ. اهي الله تعاليٰ جي پيارن ٻانهن جون پياريون صفتون آهن.

ابن جرير ۽ ابن مردويه حضرت انس بن مالڪ رضي الله تعاليٰ عنه کان روايت آندي آهي ته "اَمَرَنَا رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالىٰ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ اَنْ نَّسْتَغْفِرَ بِالْاَسْحَارِ سَبْعِيْنَ مَرَّةً" (١) يعني رسول الله صلى الله عليه وسلم جن اسان کي امر ڪيو هو ته رات جي پوئين حصي ۾ ستر (٧٠) ڀيرا استغفار پڙهون. ابراهيم بن حاطب پنهنجي پيءُ کان روايت آندي آهي، ان فرمايو ته "مون رات جي پوئين حصي ۾ (نبوي) مسجد جي ڪنڊ مان آواز ٻڌو ته ڪو ماڻهو الله تعاليٰ جي بارگاهه ۾ عرض ڪري رهيو هو ته: اي منهنجا پالڻهار! تو حڪم ڪيو مون مڃيو ۽ هيءُ رات جو پويون حصو آهي مون کي بخش فرماءِ. مون ڏٺو ته اهو عرض ڪرڻ وارو رسول الله صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن جو صحابي حضرت عبدالله بن مسعود رضي الله تعاليٰ عنه هو. (٢) علامه رازي عليه الرحمة لکيو آهي ته رات جي پوئين حصي ۾ مغفرت طلب ڪرڻ سان ايمان جي قوت ۽ عبوديت جو ڪمال ٻن وجهن جي ڪري وڌيڪ حاصل ٿيندو آهي.

١- هڪ ته اهو وقت صبح جي قريب آهي ۽ گهڻي دير تائين رات جي انڌيري کان پوءِ صبح جو نور نڪرندو آهي ۽ ماڻهو ننڊ مان ائين اٿندا آهن جڻ ته مئل جيئرا ٿيا آهن اهو وقت عام سخا ۽ ڪامل فيض جو هوندو آهي ۽ الله تعاليٰ جي رحمت کان اها ڳالهه پري ناهي جو سندس جلال جو نور سندس عاجز ٻانهي جي قلب ۾ ظاهر ٿئي. ٢- ٻيو ته انسان کي رات جي پوئين حصي ۾ تمام گهري ننڊ ايندي آهي ۽ ايتري گهري ۽ لذت واري ننڊ مان اٿي الله تعاليٰ جي عبادت ڪرڻ عبادت جو ڪمال آهي ان وقت استغفار پڙهڻ کي خصوصي مقبوليت ملندي آهي. (٣)

حضرت امام حسن بصري رضي الله تعاليٰ عنه روايت ڪئي آهي ته حضرت لقمان سائينءَ پنهنجي پٽ کي فرمايو هو ته تون رات جي پوئين حصي ۾ ٻانگون ڏيندڙ ڪڪڙ کان وڌيڪ عاجز نه ٿيءُ اهو پنهنجي پالڻهار کي ياد ڪري رهيو آهي ۽ تون ننڊ ۾ پيو آهين. (٣) علامه ثناءالله پاني پتي عليه الرحمة هن آيت جي تفسير ۾ لکيو آهي ته "اَلصَّابِرِيْنَ" صبر ڪندڙ، دلين ۽ نفسن کي صاف رکندڙ، صوفي بزرگ، غازي ۽ شهيد آهن.(٤) "اَلصَّادِقِيْنَ" سچا، حديث پاڪ ۽ ٻيون صحيح روايتون بيان

(١) الدرالمنثور ص١٦٤ جزء ٣ جلد ٢ (٢) تفسير ابن ڪثير ص٣٥٣ جلد١
(٣) تفسير ڪبير ص٢٠٢ جزءُ ٧ (٤) تفسير مظهري ص٢٤ جلد٢

ڪندڙ علماء آهن.(١) "اَلْقَانِتِيْنَ" نوڙت ڪندڙ، زاهد ۽ نمازي آهن جيڪي وڏي نيازمنديءَ سان الله تعالىٰ کان ڊڄندي ۽ ان جي رحمت ۾ اميد رکندي دعائون گهرندا ۽ عاجزي ڪندا آهن. "اَلْمُنْفِقِيْنَ" خرچ ڪندڙ، اهي صالح ۽ شاهوڪار مومن آهن جيڪي حلال طريقي سان مال ڪمائي الله جي واٽ ۾ خرچ ڪندا آهن. "اَلْمُسْتَغْفِرِيْنَ بِالْاَسْحَارِ" رات جي پوئين حصي ۾ مغفرت طلب ڪندڙ، اهي آهن جيڪي اڻ ڄاڻائيءَ ۾ گناهه ڪري جلدي توبه ڪندا آهن.

ڄاڻڻ گهرجي ته استغفار تڏهن فائدو ڏيندو جڏهن دل جي حضور سان پڙهيو ويندو گناهن کان سچي توبه ڪئي ويندي. صرف زبان سان توبه، توبه ڪرڻ ۽ دل ۾ گناهن جا پڪا عزم ۽ ارادا رکڻ واري جي توبه قبول ناهي. پلو آهي ته سيدالاستغفار جا الفاظ پڙهجن جيئن بخاري شريف ۾ حضرت شداد بن اوس رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آهي ته رسول الله صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو سيدالاستغفار هي آهي: "اَللّٰهُمَّ اَنْتَ رَبِّيْ لَآ اِلٰهَ اِلَّآ اَنْتَ خَلَقْتَنِيْ وَاَنَا عَبْدُكَ وَاَنَا عَلٰي عَهْدِكَ وَوَعْدِكَ مَا اسْتَطَعْتُ اَعُوْذُبِكَ مِنْ شَرِّ مَا صَنَعْتُ اَبُوْءُ لَكَ بِنِعْمَتِكَ عَلَيَّ وَاَبُوْءُ بِذَنْبِيْ فَاغْفِرْلِيْ فَاِنَّهٗ لَا يَغْفِرُ الذُّنُوْبَ اِلَّآ اَنْتَ" (اي الله! تون منهنجو رب آهين ڪوبه توکان سواءِ عبادت جو لائق نه آهي تو ئي مون کي پيدا ڪيو آهي ۽ مان تنهنجو ٻانهو ۽ جيتري قدر ٿي سگهيو تنهنجي عهد ۽ وعدي تي آهيان تنهنجي پناهه ٿو وٺان انهن ڪمن جي برائيءَ کان جيڪي مون ڪيا پنهنجي مٿان تنهنجي نعمت جو اقرار ٿو ڪيان ۽ پنهنجو گناهه مڃيان ٿو پوءِ مون کي بخش ڪر توکان سواءِ ڪوبه گناهه نه ٿو بخشي.) فرمايائين ته جنهن يقين سان اهو استغفار ڏينهن جو پڙهيو ۽ رات اچڻ کان اڳ ۾ مري ويو ته اهو جنتي آهي ۽ جنهن اهو رات جو پڙهيو ۽ ڏينهن اچڻ کان اڳ ۾ مري ويو ته اهو به جنتي آهي. حضرت علي بن ابي طالب رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آهي ته رسول الله صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن ڪيس هٿ مان وٺي فرمايو ته "ڇا مان توکي اهڙا الفاظ پڙهڻ نه سيکاريان جو انهن جي پڙهڻ سان تنهنجا گناهه ڪٽي دنيا ۾ ڳاڙهين، سنهڙين ڪولين جيترا هجن ته به الله تعالىٰ بخشي ڇڏيندو (اهي الفاظ هي آهن) "اَللّٰهُمَّ لَآ اِلٰهَ اِلَّآ اَنْتَ سُبْحَانَكَ عَمِلْتُ سُوْءً اَوْ ظَلَمْتُ نَفْسِيْ فَاغْفِرْ لِيْ فَاِنَّهٗ لَا يَغْفِرُ الذُّنُوْبَ اِلَّآ اَنْتَ" (اي الله! توکان سواءِ ڪوبه عبادت جو لائق نه آهي تون پاڪ آهين. مون جيڪا به برائي يا پنهنجي نفس تي ظلم ڪيو آهي مون کي بخش ڪر. يقيناً توکان سواءِ ڪوبه گناهه نه ٿو بخشي. (٢)

(١) تفسير مظهري ص٢٤ جلد٢ (٢) تفسير القرطبي ص٤٠ جلد٤

شَهِدَ اللّٰهُ اَنَّهٗ لَآ اِلٰـهَ اِلَّا هُوَ ۙ وَالْمَلٰٓئِكَةُ وَاُولُوا الْعِلْمِ

شاهدي ڏني الله (هن ڳالھ جي تہ) يقيناً ناهي ڪو بہ سچو معبود ان کان سواءِ ۽ ملائڪن ۽ علم وارن

قَآئِمًاۢ بِالْقِسْطِ ؕ لَآ اِلٰـهَ اِلَّا هُوَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ﴿١٨﴾

(بہ اها شاهدي ڏني آهي) عدل تي قائم ٿي. ناهي ڪو بہ سچو معبود ان کان سواءِ غالب، حڪمت وارو آهي

## تفسير

هن سورة جي ابتدا ۾ نصارن سان خطاب ڪندي نهايت عجيب انداز سان سيدنا عيسىٰ عليہ السلام کي الله سمجهڻ واري عقيدي کي باطل ثابت ڪندي خالص توحيد جو اعلان ڪري ان تي ايمان آڻڻ جي رغبت ڏني وئي هئي . وچ ۾ انهن رڪاوٽن جو بہ ذڪر ڪيو ويو جيڪي حق جي واضح هجڻ جي باوجود ايمان جي شرف سان مشرف ٿيڻ کان محروم رکن ٿيون يعني مال، اولاد ، عيش ۽ عشرت جو سامان، ان کان پوءِ مؤمنن جي سهڻين صفتن ۽ عمدن اخلاقن کي بيان ڪري توحيد واري اصلي مضمون ڏي موٽ ڪئي وئي آهي. ڄاڻڻ گهرجي تہ دنيا ۾ سڀ کان وڏي ۽ اهم شاهدي توحيد جي شاهدي آهي الله تعالىٰ پنهنجي وحدانيت جو سيني کان وڏو پاڻ شاهد آهي جيڪو پنهنجن سيني ڪتابن ۾ پنهنجي وحدانيت بيان ڪندو آهي. ۽ ان جي پيدا ڪيل ڪائنات جو ذرو ذرو ٻڌائي رهيو آهي تہ هڪ رب العالمين جل شانہ جي ذات کان سواءِ ڪير بہ عبادت جو لائق ناهي جيئن الله جل جلالہ جي هڪ ٻانهي جو شعر آهي:

وفي كل شيءٍ لہ آية  تدل علىٰ انه واحد

يعني جهان جي هر شيءِ ۾ ان جي (ڪامل قدرت) جي نشاني آهي جيڪا ٻڌائي ٿي تہ يقيناً اهو (الله) هڪ آهي.

ٻيءَ آيت ۾ ارشاد آهي "سَنُرِيْهِمْ اٰيٰتِنَا فِى الْاٰفَاقِ وَفِىٓ اَنْفُسِهِمْ حَتّٰى يَتَبَيَّنَ لَهُمْ اَنَّهُ الْحَقُّ ؕ اَوَلَمْ يَكْفِ بِرَبِّكَ اَنَّهٗ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ شَهِيْدٌ" (١) يعني سگهوئي

(١) سورة حٰمٓ السجده آيت ٥٣

ڏيکاريندا سون انهن کي پنهن (جي قدرت) جون نشانيون ٻاهرين پاسن ۾ ۽ سندن وجود ۾ تانجو ظاهر ٿئي انهن لاءِ تہ بيشڪ اهو (قرآن) حق آهي ڇا تنهنجو پالڻهار ڪافي ناهي؟ بيشڪ اهو هر شيءِ تي حاضر آهي. ان ڪان سواءِ الله تعاليٰ جي پياري ۽ گناهن ڪان پاڪ مخلوق ملائڪ ۽ اهل علم بہ ان جا شاهد آهن ظاهر آهي تہ ملائڪن جي شاهدي الله تعاليٰ جي شاهديءَ جي خلاف ڪيئن ٿي سگهندي؟ ملائڪ تہ نالو ئي اهڙي مخلوق جو آهي، جيڪا سچ ۽ حق جي رستي ڪان منهن نہ ٿي موڙي سگهي. انهن جي تسبيح ۽ تمجيد سچي توحيد ئي تہ آهي.

## سوال

الله تعاليٰ پنهنجيءَ هيڪڙائيءَ جو پاڻ شاهد ڪيئن آهي؟

## جواب

علامہ بيضاوي عليہ الرحمۃ ان جي وضاحت ڪندي لکيو آهي تہ بين وحدانيته بنصب الدلائل الدالة عليها وانزال الايات الناطقة بها (١) يعني الله جل شانه پنهنجي وحدانيت دلالت ڪندڙن دليلن ۽ ناطق آيتن جي نازل ڪرڻ سان بيان فرمائي آهي ۽ اهي اهڙا روشن دليل آهن جن ڪان ڪوبہ سليم عقل وارو انڪار ڪري نہ ٿو سگهي ۽ نہ انهن ۾ ڪا شڪ ۽ شبهي جي گنجائش آهي. اهل علم بہ هر دور ۾ تڪويني ۽ تشريعي دليل ڏسي رب العزة جل مجده جي هڪ هجڻ جي شاهدي ڏيندا آيا آهن.

## علم جي فضيلت

ڄاڻڻ گهرجي تہ قرآن ڪريم هر مناسب موقعي تي علم ۽ علم وارن جي عظمت ۽ شان بيان ڪري پنهنجن مڃيندڙن کي علم حاصل ڪرڻ جي رغبت ڏياري آهي. هتي بہ توحيد جي شاهدن ۾ علم وارن کي شامل ڪري انهن جي عزت افزائي ڪئي وئي آهي علم تمام گهڻو شانائتو آهي. الله جل جلاله پنهنجي نبي مڪرم صلى الله تعاليٰ عليه وسلم کي علم ۾ زيادتي گهرڻ لاءِ حڪم ڪيو آهي. جيئن فرمان ايزدي آهي "قل رَّبِّ زِدْنِيْ عِلْمًا" (چؤ تہ اي منهنجا پالڻهار! مون کي علم وڌائي ڏي) جيڪڏهن شان ۾ علم ڪان مٿي ڪا شيءِ هجي ها تہ الله تعاليٰ پنهنجي حبيب

(١) بيضاوي ج١ ص ٦٩

عليه الصلواة والسلام کي ان ۾ واڌاري جي لاءِ دعا سيکاري ها. حديثن ۾ بہ علم وارن جو شان آيل آهي.

## حديث ١

حضور صلی الله تعالیٰ عليہ وسلم جن فرمايو آهي تہ "اِنَّ الْعُلَمَآءَ وَرَثَةُ الْاَنْبِيَاءِ" بيشڪ عالم ئي نبين جا وارث آهن.

## حديث ٢

رسول الله صلی الله تعالیٰ عليه وسلم جن فرمايو "اَلْعُلَمَآءُ وَرَثَةُ الْاَنْبِيَآءِ يُحِبُّهُمْ اَهْلُ السَّمَآءِ وَيَسْتَغْفِرُ لَهُمُ الْحِيْتَانُ فِی الْبَحْرِ اِذَا مَاتُوْا اِلٰی يَوْمِ الْقِيَامَةِ" يعني علماءِ نبين (عليهم الصلواة والسلام) جا وارث آهن آسمان وارا انهن سان محبت رکن ٿا ۽ جڏهن علماءِ مرندا تہ سمنڊ جون مڇيون انهن لاءِ قيامت تائين مغفرت طلب ڪنديون رهنديون. (١)

## فائدو

"قَآئِمًا بِالْقِسْطِ" هي جملو ترڪيب جي لحاظ سان حال ۽ "شَهِدَاللهُ" ۾ الله جو لفظ ذوالحال آهي يا اهو حال ۽ "لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ" ۾ "هو" ضمير ذوالحال ۽ ان جي معنوي صفت آهي ان صورت ۾ هي مشهود به (جنهن سان شاهدي ڏني وڃي) ۾ داخل آهي يعني انهن سيني شاهدن الله تعاليٰ جي وحدانيت، عدل ۽ انصاف جي شاهدي ڏني آهي. ان مالڪ جل شانه جو عدل ۽ انصاف ڪنهن هڪ شيءِ سان مخصوص نہ آهي پر ساري ڪائنات جي تخليق، فطرت جا ڪلي قاعدا ۽ شرعي قوانين مقصد تہ هر اها شيءِ جنهن کي ان سان نسبت آهي سندس عدل ۽ انصاف جي جيئري جاڳندي تصوير آهي.

"لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ" (ان ڪان سواءِ ڪوبہ عبادت جو لائق نہ آهي غالب، حڪمت وارو آهي) ڄاڻ گهرجي تہ ڪنهن بہ معاملي ۾ انصاف ڪرڻ جي لاءِ بہ ڳالهيون ضروري هونديون آهن. ١- هڪ تہ انصاف ڪندڙ اهڙو زبردست هجي جو ان جي فيصلي ڪان ڪوبہ منهن موڙي نہ سگهي. ٢- ٻيو تہ حڪمت جو صاحب هجي جو هر ڳالهہ کي حڪمت ۽ دانائيءَ سان چڱيءَ طرح سمجهي، ڄاڻي پوءِ فيصلو ڏي ۽ ان جو ڪوبہ حڪم بي موقع نہ هجي. جڏهن الله جل جلالہ مطلق انصاف ڪندڙ، عزيز، غالب ۽ حڪمت وارو آهي تہ ان جي فيصلي ۾ ڪهڙو شڪ آهي؟

(١) تفسير القرطبي ص٤٠ جلد ٤

## هن آيت جو شان نزول

امام بغويءَ پنهنجي تفسير ۾ آندو آهي ته شام جي ملڪ کان يهودين جا ٻه وڏا عالم پنهنجي خيال سان مديني منوره ۾ آيا ۽ شهر جو نظارو ڏسي پاڻ ۾ هڪ ٻئي کي چوڻ لڳا ته هيءُ اهو شهر آهي جنهن جي لاءِ توراة ۾ ذڪر ڪيل آهي ته هتي آخري زماني ۾ موڪليل الله تعالىٰ جو نبي رهندو. جڏهن ڪين ٻڌايو ويو ته هتي الله تعالىٰ جو پيارو نبي رهي ٿو ته ٻئي ڄڻا محبوب عليہ الصلواة والسلام جن جي خدمت ۾ حاضر ٿيا سندن ديدار ڪري، سيئي قدرتي نشانيون سندن منهن مبارڪ ۾ ڏسي عرض ڪيائون ته ڇا اوهان محمد (ﷺ) آهيو؟ پاڻ فرمايائون ته هائو. وري عرض ڪيائون ته ڇا اوهان احمد (ﷺ) آهيو؟ پاڻ فرمايائون ته هائو، مان محمد (ﷺ)، مان احمد (ﷺ) آهيان. وري عرض ڪيائون ته الله تعالىٰ جي ڪتاب ۾ سڀ کان وڏي شاهدي ڪهڙي آهي؟ انهن جي سوال جي جواب ۾ آيت نازل ٿي جڏهن پاڻ انهن کي اها پڙهي ٻڌايائون ته اهي ٻئي مسلمان ٿيا. (١)

## هن آيت جي تلاوت ڪرڻ کان پوءِ ڇا چئجي؟ ۽ هن جي پڙهڻ جو ثواب

مسند امام احمد بن حنبل ۾ آهي ته رسول الله صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن عرفات جي ميدان ۾ هيءَ آيت پڙهي فرمايو "وَاَنَا عَلىٰ ذَالِكُمْ مِّنَ الشَّاهِدِيْنَ يَا رَبِّ" يعني اي پالڻهار! مان به ان تي شاهدي ڏيندڙن مان آهيان. اعمش جي هڪ روايت مان معلوم ٿئي ٿو ته جيڪو شخص هن آيت جي تلاوت کان پوءِ "اَنَا عَلىٰ ذَالِكُمْ مِّنَ الشَّاهِدِيْنَ يَا رَبِّ" (اي پالڻهار مان به ان تي شاهد آهيان) چوندو ته الله تعالىٰ قيامت ۾ ملائڪن کي فرمائيندو ته منهنجي ٻانهي مون سان عهد ڪيو هو ۽ مان سيني کان وڌيڪ عهد پورو ڪندڙ آهيان ان جي ڪري منهنجي هن ٻانهي کي جلدي جنت ۾ داخل ڪيو. (٢)

ديلميءَ حضرت ابوايوب انصاري رضي الله تعالىٰ عنہ کان مرفوعاً روايت آندي آهي ته جڏهن الله تعالىٰ الحمد لله رب العالمين، آية الكرسي، شَهِدَ اللّٰهُ (واري آيت) ۽ قُلِ اللّٰهُمَّ مَالِكَ الْمُلْكِ - "بِغَيْرِ حِسَابٍ" تائين آيتون نازل ٿي ڪيون ته انهن عرض ڪيو هو ته يا الله! ڇا اسان کي بيفرمان قوم تي ٿو نازل ڪرين؟ الله تعالىٰ فرمايو ته مون کي پنهنجي عزت، جلال ۽ بلند شان جو قسم آهي ته جيڪو ٻانهو به هر فرض نماز

(١) تفسير خازن ص٢٢٢ جلد ١ (٢) تفسير ابن ڪثير ص٣٥٣ جلد ١

كان پوءِ اوهان كي پڙهندو ته ان كي مغفرت نصيب كندس ۽ ان كي جنت الفردوس ۾ رهائي ملندس هر روز ستر (٧٠) ڀيرا ڪرم جي نظر ڪندس ۽ سندس ستر (٧٠) حاجتون پوريون ڪندس جن مان گهٽ ۾ گهٽ مغفرت آهي.

ابن عدي، طبراني، بيهقي، خطيب ۽ ابن النجار حضرت ابووائل بن عبدالله رضي الله عنه كان روايت آندي آهي ته رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو ته "الله تعالىٰ قيامت ۾ "شَهِدَ اللّٰهُ" آيت جي پڙهندڙ کي آڻي فرمائيندو ته "منهنجي ٻانهي مون سان عهد ڪيو هو ۽ مان عهد وفا ڪندڙن ۾ سڀني کان وڌيڪ آهيان منهنجي هن ٻانهي کي جنت ۾ داخل ڪيو."

سعيد بن جبير كان روايت آهي ته (بيت الله شريف وانگر) مديني جي پسگردائيءَ ۾ ٻه ٽي سؤ سٺ (٣٦٠) بت رکيل هيا جڏهن هي آيت (شهد الله) نازل ٿي ته اهي سڀئي بت بيت الله شريف ڏانهن سجدي ۾ ڪري پيا. (١)

سيدنا عبدالله بن عباس رضي الله عنهما فرمايو آهي ته الله تعالىٰ جسمن كان چار هزار سال اڳ ۾ ارواح پيدا ڪيا ۽ ارواح كان چار هزار سال اڳ سڀني لاءِ رزق پيدا ڪيو ۽ ان ساريءَ خلق كان اڳ ۾ پنهنجي هيڪڙائيءَ جي پاڻ شاهدي ڏني هيائين. هتي ان شاهديءَ جو بيان ڪيو ويو آهي.

اِنَّ الدِّيْنَ عِنْدَاللّٰهِ الْاِسْلَامُ ۫ وَمَا اخْتَلَفَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا

بيشڪ دين الله وٽ اسلام ئي آهي ۽ نه اختلاف ڪيو انهن جيڪي ڏنا ويا

الْكِتٰبَ اِلَّا مِنْۢ بَعْدِ مَا جَآءَهُمُ الْعِلْمُ بَغْيًاۢ بَيْنَهُمْ ؕ وَمَنْ

ڪتاب مگر ان كان پوءِ جو آيو انهن وٽ (صحيح) علم- سببان حسد ڪرڻ جي پاڻ ۾ ۽ جيڪو انڪار

يَّكْفُرْ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ فَاِنَّ اللّٰهَ سَرِيْعُ الْحِسَابِ ﴿١٩﴾ فَاِنْ حَآجُّوْكَ

ٿو ڪري الله جي آيتن جو پوءِ بيشڪ الله تڪڙو حساب ڪندڙ آهي پوءِ جيڪڏهن جهيڙو ڪن توسان

فَقُلْ اَسْلَمْتُ وَجْهِيَ لِلّٰهِ وَمَنِ اتَّبَعَنِ ؕ وَقُلْ لِّلَّذِيْنَ اُوْتُوا

پوءِ فرماءِ ته نوايم پنهنجو منهن الله لاءِ ۽ انهن لاءِ جيڪي تابع ٿيا منهنجا ۽ فرماءِ انهن کي جو ڏنا ويا

(١) روح المعاني ص١٠٦ جزء ٣

الْكِتَابَ وَالْاُمِّيّٖنَ ءَاَسْلَمْتُمْ ؕ فَاِنْ اَسْلَمُوْا فَقَدِ اهْتَدَوْا ۚ وَاِنْ

ڪتاب ۽ اڻ پڙهيلن کي تہ ڇا اسلام قبول ڪيو؟پوءِ جيڪڏهن اسلام قبول ڪن تہ پوءِ پڪ هدايت وارا ٿيا ۽ جيڪڏهن

تَوَلَّوْا فَاِنَّمَا عَلَيْكَ الْبَلٰغُ ؕ وَاللّٰهُ بَصِيْرٌۢ بِالْعِبَادِ ﴿۲۰﴾

منهن ڦيرائن تہ پوءِ تحقيق اوهان تي پيغام پهچائڻ آهي ۽ الله ڏسندڙ آهي ٻانهن کي

## تفسير

يهودين ۽ عيسائين جي دعويٰ هئي تہ پلو دين يهوديت آهي يا عيسائيت. الله تعالىٰ انهن جو رد ڪندي فرمايو تہ منهنجي بي نياز بارگاهہ ۾ مقبول ۽ صحيح دين اسلام آهي ان کان سواءِ ڪوبہ سچو ۽ حق وارو دين نہ آهي. اسلام جي مفهوم آسان ۽ واضح لفظن ۾ بيان ڪندي علامه ابن ڪثير عليہ الرحمة لکيو آهي تہ هو اتباع الرسل فيما بعثهم الله به في كل حين حتىٰ ختموا بمحمد صلى الله عليه وآله وسلم (١) يعني هر زماني جي نبين عليهم الصلواة والسلام کي جن حڪمن سان الله تعالىٰ موڪليو هو انهن جي تابعداري ڪرڻ اسلام آهي تانجو انهن نبين عليهم السلام جي اچڻ جو سلسلو (حضرت) محمد صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي اچڻ سان ختم ٿيو جنهن جي رستي کان سواءِ ٻيا سڀ رستا بند ڪيا ويا آهن.

هاڻي اسلام ئي حضرت محمد صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي تابعداريءَ جو نالو آهي ان جي اتباع کان سواءِ ٻيو ڪوبہ رستو صحيح ۽ سڌو نہ آهي هڪ مسلمان جو پاڻ کي پوريءَ طرح الله جي حوالى ڪري سندس حڪمن جي اڳيان ڪنڌ جهڪائڻ جو نالو اسلام آهي هن آيت ۾ ٻڌايو ويو آهي تہ دنيا جي اندر مختلف وقتن ۾ مختلف انبياءِ عليهم الصلواة والسلام جيڪو پيغام ڪٺي آيا ۽ ان جي تبليغ ڪيائون اهو هڪ اسلام هو جيڪو پوريءَ دنيا لاءِ ڪامل، جامع، عالمگير ۽ هميشہ ڪم اچڻ واريون هدايتون ڏي ٿو. ان جي واٽ کان سواءِ ٻي ڪابہ واٽ قبول ناهي. هن

(١) تفسير ابن ڪثير ص٣٥٤ جلد ١

آيت سڳوريءَ نجران جي نصارن جي اڳيان خصوصاً ۽ سيني قومن ۽ مذهبن جي سامهون عموماً اعلان ڪيو آهي تہ ٻانهي جو پاڻ کي دل ۽ جان سان الله تعالىٰ جي حوالي ڪرڻ ۽ سندس حڪم اڳيان ڇون، ڇرا ڪان سواءِ سر تسليم جهڪائڻ خالص دين آهي، پر جيڪي ماڻهو (معاذالله) الله جل جلالہ جي لاءِ پٽ ۽ پوٽا تجويز ڪري مسيح ۽ مريم جي تصويرن ۽ صليب جي پوڄا ٿا ڪن، سوئر جو گوشت کائي انسان کي خدا ۽ خدا کي انسان ٿا چون، نبين ڀلارن عليهم الصلواة والسلام ۽ اوليائن پيارن کي شهيد ٿا ڪن، سچي دين جي مٽائڻ جي پويان آهن، حضرت موسىٰ ۽ حضرت عيسىٰ عليهما الصلواة والسلام جي فرمان موافق جيڪو نبي صلى الله تعالىٰ عليه وسلم انهن ٻنهي کان بہ شان ۾ ڀلو، وڏيڪ معجزاءِ ڪمال ڏيڪاريندڙ آهي ڄاڻي واڻي ان ۽ ان جي آندل ڪلام ۽ حڪمن سان ڇڙون ڪندي نہ ٿا مڃن. بيوقوف بنجي پٿرن، وڻن، تارن، سج ۽ چنڊ جي اڳيان سجدا ٿا ڪن، حلال ۽ حرام جو معيار پنهنجن نفسن جي خواهشن کي ٿا بنائين ڇا اهي مسلمان سڏائڻ جا لائق ۽ ملت ابراهيميءَ جا سچا تابعدار ٿي سگهن ٿا؟ نہ، هرگز نہ.

"وَمَا اخْتَلَفَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتَابَ" الايہ- ۾ هڪ سوال جو جواب آهي. سوال اهو آهي تہ جيڪڏهن سيني نبين عليهم الصلواة والسلام جو اصل دين هڪ آهي تہ پوءِ ايترا ڳڻڻ کان ڳرا مذهب ڪيئن ظاهر ٿيا جو انهن جي اختلافن جي ڪري ڪئين پيرا دنيا مان امن امان ختم ٿي ويو آهي؟

جواب ۾ ٻڌايو ويو آهي تہ اسلام هڪ واضح ۽ روشن دين آهي جنهن سان حضرت موسىٰ ۽ حضرت عيسىٰ عليهما الصلواة والسلام جن جي رسالت ۽ نبوت جا دليل توراة ۽ انجيل جي آسماني ڪتابن هجڻ جو ثبوت ملي ٿو. اسلام رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي نبي هجڻ ۽ قرآن ڪريم جي ڪلام الله هجڻ جا بہ ڀلا، مضبوط ۽ زندهہ دليل پيش ڪري ٿو بلڪ اهي ڪتاب پاڻ ئي سندن حقانيت جي شاهدي ڏئي رهيا آهن. خالص توحيد هڪ صاف مضمون آهي جنهن جي خلاف پيءُ ۽ پٽ جو نظريو رکڻ اهڙي گمراهي آهي جنهن جي ڪوبہ ماڻهو علمي ۽ اصولي تائيد ڪري نہ ٿو سگهي. جيڪي اهل ڪتاب اسلام جا مخالف ٿي انهن روشن حقيقتن کي ڪوڙو ڇئي الله جل جلالہ جي حڪم کان منهن ٿا موڙين اهي صرف حسد، عناد، مال ۽ اسباب جي لالچ ۽ حرص ۾ ٿا ائين ڪن جيڪا انهن جي پراڻي عادت آهي يهودين

۽ نصارن جا هڪ ٻئي سان اختلاف يا سيني مذهبن ۾ گهڻن فرقن جو پيدا ٿيڻ ۽ هڪ ٻئي سان خوفناڪ جهيڙا ۽ جهڳڙا ڪرڻ، انهن سيني جي منشا عموماً غلط فهمي يا بي علمي نه پر سون ۽ چانديءَ جي محبت، مال ۽ مرتبي جي پوڄا انهن ۾ اختلاف پيدا ڪيا آهن.

"وَمَنْ يَكْفُرُ بِاٰيَاتِ اللهِ" (جيڪو الله جي آيتن جو انڪار ٿو ڪري) هن ۾ ٻڌايو ويو آهي ته ڪافر ڪفر تي خوش ٿي بي فڪر نه رهي. اهو الله تعالىٰ وٽ جلدي دنيا ۾ يا آخرت ۾ جواب ڏيندو.

"فَاِنْ حَآجُّوْكَ" ۾ ٻڌايو ويو آهي ته جيڪڏهن اهي حق ٻڌڻ، سمجهڻ ڪان پوءِ به حسد جي ڪري حق جو انڪار ڪندي اوهان سان بحث ڪن ته انهن سان لفظي بحث ۾ اچي پنهنجو قيمتي وقت ضايع نه ڪيو. اوهان انهن جي پسند يا ناپسند کان بي نياز ۽ بي پرواهه ٿي پنهنجي ۽ پنهنجن تابعدارن جي مضبوط ۽ محڪم عقيدي جو ڪليل لفظن ۾ اعلان ڪيو ان جو انهن تي نفسياتي اثر ٿيندو. ڇوته اهي جڏهن ڏسندا ته انهن جي هزارين حيلن ۽ لڪين فريبن جي باوجود به حق وارن جا پير ترڪن ته نه ٿا پر روزانو وڌندا ٿا وڃن ته سندن حوصلا هيٺ ۽ اسلام دشمنيءَ ۾ گرمجوشي ٿڌي ٿيندي ۽ ڪين خبردار ڪيو ته اسلام ڏسٹو اٿوَ ته منهنجي ۽ منهنجي تابعدارن جو ايمان، سيرت، اخلاق ۽ اعمال ڏسو جيڪي شرڪ، بت پرستيءَ، بداخلاقيءَ، فسق، فجور، ظلم ۽ زيادتيءَ جو سختيءَ سان مقابلو ڪري پنهنجي جان، مال، وطن، ڪٽنب، ٻچا ۽ زالون مقصد ته سيئي پياريون ۽ محبوب شيون الله تعالىٰ کي راضي ڪرڻ لاءِ قربان ڪري رهيا آهن. انهن جا منهن ۽ نظرون الله تعالىٰ جي حڪم جون منتظر آهن ته ڪڏهن ٿو مالڪ جو حڪم مٿان اچي ته ان تي عمل ڪري ڏيکاريون. اي يهودي ۽ نصارا سڏائڻ وارؤ! اوهان پنهنجين نجين محفلن ۽ ڪچهرين ۾ اڪيلا ويهي حبيب ڪريم صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي رسالت ۽ نبوت جو اقرار ٿا ڪيو ته حضور صلى الله عليه وسلم واقعي سچو ۽ برحق نبي آهي ، پر جيڪڏهن مٿس ايمان آڻينداسون ته دنيا جون لالچون ڇڏڻيون پونديون. ان جي ڪري ايمان نٿا آڻيون. الله تعالىٰ پنهنجي پياري نبي صلى الله عليه وسلم کي فرمايو ته يهودين، نصارن ۽ مڪي جي اڻ پڙهيلن کي ٻڌايو ته اسين اوهان کي اسلام جي بار بار دعوت ان لاءِ ڪونه ٿا ڏيون ته اوهان جي اچڻ سان پنهنجي لاءِ قوت حاصل

ڪيون پر اسلام قبول ڪرڻ ۾ اوهان جو فائدو آهي جيڪڏهن ضد ۾ رهي قبول نہ ٿا ڪيو تہ پنهنجي دنيا ۽ آخرت تباهہ ٿا ڪيو.

## حضور ﷺ جن ساريءَ مخلوق جي لاءِ نبي ۽ رسول آهن

"وَقُلْ لِّلَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتَابَ وَالْاُمِّيّٖنَ" (۽ اهل ڪتاب ۽ اڻ پڙهيلن کي فرماءِ تہ) هنن لفظن مان ثابت آهي تہ حضور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن الله تعالىٰ جي ساري مخلوق جي لاءِ نبي ۽ رسول آهن مفسر قرآن علامہ ابن ڪثير عليه الرحمة لکيو آهي تہ وهذه الأية وامثالها من اصرح الدلالات علىٰ عموم بعثته صلوات الله وسلامه عليه الي جميع الخلق كما هو معلوم من ضرورة دينه (١) يعني هيءَ آيت ۽ ان جهڙيون ٻيون آيتون ان ڳالهہ تي صراحت سان دلالت ٿيون ڪن تہ حضور صلوات الله وسلامه عليه جن الله جي ساري مخلوق لاءِ نبي آهن. سندن دين جي سيني کي ضرورت آهي.

## قرآن پاڪ جون ٻيون آيتون جن مان سندن عام رسالت ثابت آهي

### آيت ١

الله جل جلاله فرمايو آهي "قُلْ يَآ اَيُّهَا النَّاسُ اِنِّيْ رَسُوْلُ اللّٰهِ اِلَيْكُمْ جَمِيْعًا" (٢) فرماءِ تہ اي انسانو! مان اوهان سيني ڏانهن الله جو رسول آهيان.

### آيت ٢

"وَمَآ اَرْسَلْنَاكَ اِلَّا كَآفَّةً لِّلنَّاسِ بَشِيْرًا وَّنَذِيْرًا" (٣) (۽ اسان اوهان کي سيني ماڻهن لاءِ (جنت جي) خوشخبري ڏيندڙ ۽ (جهنم کان) ڊيڄاريندڙ ڪري موڪليو آهي) هنن آيتن ۾ صرف انسانن لاءِ رسالت جو ذڪر آهي.

---

(١) تفسير ابن ڪثير ص٣٥٤ جلد ١ (٢) سورة الاعراف آيت ١٥٨
(٣) سورة السبا آيت ٢٨

## آيت ٣

"وَاِذْ صَرَفْنَآ اِلَيْکَ نَفَرًا مِّنَ الْجِنِّ" (١) ۽ جنهن وقت ڦيرائي سون اوهان ڏانهن هڪڙي جماعت جنن مان.

## آيت ۴

"قُلْ اُوْحِيَ اِلَيَّ اَنَّهٗ اسْتَمَعَ نَفَرٌ مِّنَ الْجِنِّ" (٢) فرماءِ (اي حبيب ﷺ) تہ مون ڏانهن (هن ڳالهہ جو) وحي ڪيو ويو آهي تہ جنن مان هڪ ٽوليءَ (قرآن) ٻڌو. هنن ٻنهي آيتن مان سندن خدمت عاليہ ۾ جنن جو اچڻ، مسلمان ٿيڻ ۽ امتي هجڻ ثابت آهي.

## آيت ٥

"تَبَارَکَ الَّذِیْ نَزَّلَ الْفُرْقَانَ عَلٰی عَبْدِهٖ لِيَکُوْنَ لِلْعَالَمِيْنَ نَذِيْرًا" (٣) برڪت وارو آهي اهو (الله) جنهن پنهنجي ٻانهي تي فرقان (حق ۽ ناحق ۾) فرق ڪندڙ (ڪتاب) نازل فرمايو تانت اهو سيني جهانن لاءِ ڊيڄاريندڙ هجي.

## آيت ٦

"وَمَا اَرْسَلْنَاکَ اِلَّا رَحْمَةً لِّلْعَالَمِيْنَ" (۴) ۽ اسان توکي سيني جهانن لاءِ رحمت بنائي موڪليو آهي.

هنن آيتن مان ثابت آهي تہ پاڻ سيني جهانن لاءِ الله جل شانه جا رسول آهن ڇوتہ سندن رحمة للعالميني سندن نبوت ۽ رسالت جي حيثيت سان ٿي آهي ۽ هي بہ متواتر طريقي سان ثابت آهي تہ حضور صلی الله تعالیٰ عليہ وسلم جن دنيا جي بادشاهن ڏانهن اسلام قبول ڪرڻ لاءِ خط لکيا ۽ عربن، عجمين، پڙهيلن ۽ اڻ پڙهيلن کي دين جي دعوت ڏني. اهي سڀ ڳالهيون سندن رسالت جي عام هجڻ جو دليل آهن.

(١) سورة الاحقاف آيت ٢٩ (٢) سورة الجن آيت ١
(٣) سورة الفرقان آيت ١ (۴) سورة الانبياء آيت ١٠٧

# نبوي حديثون جن ۾ سندن عام رسالت جو بيان آهي

## حديث ١

محدث عبدالرزاق حضرت ابوهريره رضي الله تعاليٰ عنه کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلى الله تعاليٰ عليه وسلم جن فرمايو "وَالَّذِيْ نَفْسِيْ بِيَدِهٖ لَا يَسْمَعُ بِيْ اَحَدٌ مِنْ هٰذِهِ الْاُمَّةِ يَهُوْدِيٌّ وَلَا نَصْرَانِيٌّ وَمَاتَ وَلَمْ يُؤْمِنْ بِالَّذِيْ اُرْسِلْتُ بِهٖ اِلَّا كَانَ مِنْ اَهْلِ النَّارِ" يعني ان ذات جو قسم جنهن جي (قدرتي) هٿ ۾ منهنجو ساهه آهي ته هن امت مان ڪوبه شخص يهودي هجي يا نصارو منهنجو ٻڌي ۽ جنهن پيغام سان مان موڪليو ويو آهيان ان تي ايمان آڻڻ کان سواءِ مري ويندو ته جهنمي هوندو.

## حديث ٢

رسول الله صلى الله تعاليٰ عليه وسلم جن فرمايو ته "بُعِثْتُ اِلَى الْاَحْمَرِ وَالْاَسْوَدِ" يعني مان ڳاڙهي ۽ ڪاري ڏي موڪليو ويو آهيان. مراد آهي ته ڪارن، گورن سيني جو نبي آهيان.

## حديث ٣

رسول الله صلى الله تعاليٰ عليه وسلم جن فرمايو ته "كَانَ النَّبِيُّ يُبْعَثُ اِلٰى قَوْمِهٖ خَاصَّةً وَبُعِثْتُ اِلَى النَّاسِ عَامَّةً" يعني (مون کان اڳ ۾) هر هڪ نبي خاص ڪري پنهنجي قوم ڏي موڪليو ويندو هو ۽ مان سيني ماڻهن ڏي موڪليل آهيان.(١)

اهڙيون بيون به ڪيتريون حديثون ۽ واقعات شاهد آهن ته حضور صلى الله تعاليٰ عليه وسلم جن صرف انسانن ۽ جنن جا نه پر الله تعاليٰ جي سموري خلق جا نبي آهن. (صلى الله تعاليٰ عليه وآله وصحبه وسلم)

"فَاِنْ اَسْلَمُوْا فَقَدِ اهْتَدَوْا وَاِنْ تَوَلَّوْا" الاية (پوءِ جيڪڏهن اسلام قبول ڪيائون ته يقيناً هدايت وارا ٿيا ۽ جيڪڏهن منهن موڙيائون الخ) هنن لفظن جي وضاحت ڪندي علامه ثناءالله پاني پتي عليه الرحمة لکيو آهي ته جڏهن رسول الله صلى

(١) تفسير ابن ڪثير ص۳۵۴ جلد١

الله تعاليٰ عليه وسلم جن اها آيت يهودين ۽ نصارن کي پڙهي ٻڌائي ته ٻنهي ڏرين چيو ته اسان اسلام قبول ڪيو آهي. حضور عليه الصلواة والسلام جن ڪائنڻ ڪولي پڇڻ لاءِ يهودين کي فرمايو ته "اوهان عيسيٰ (عليه الصلواة والسلام) کي الله جو رسول ڪري مڃيو ٿا؟ چيائون ته رب پناهه ۾ رکندو (اهو ڪونه ٿا مڃيون) وري عيسائين کي فرمايائون ته "اوهان عيسيٰ کي الله جو نبي ۽ ٻانهو مڃيو ٿا" انهن به چيو ته الله ان ڳالهه کان پناهه ۾ رکي جو عيسيٰ الله جو ٻانهو هجي (اسين اها ڳالهه ڪونه ٿا مڃيون) تڏهن الله تعاليٰ فرمايو ته "جيڪڏهن اهي منهن موڙي نه ٿا مڃين ته (اوهان تي ڪا ميار نه آهي) اوهان تي صرف پيغام پهچائڻ آهي." (١)

اِنَّ الَّذِيۡنَ يَكۡفُرُوۡنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ وَيَقۡتُلُوۡنَ النَّبِيّٖنَ بِغَيۡرِ حَقٍّ

بيشڪ اهي (ماڻهو) جو انڪار ٿا ڪن الله جي آيتن جو ۽ شهيد ٿا ڪن نبين کي ناحق ۽ شهيد

وَّيَقۡتُلُوۡنَ الَّذِيۡنَ يَاۡمُرُوۡنَ بِالۡقِسۡطِ مِنَ النَّاسِ ۙ فَبَشِّرۡهُمۡ بِعَذَابٍ

ٿا ڪن انهن ماڻهن کي جو امر ٿا ڪن عدل جو پوءِ بشارت ڏي انهن کي دردناڪ

اَلِيۡمٍ ﴿٢١﴾ اُولٰٓئِكَ الَّذِيۡنَ حَبِطَتۡ اَعۡمَالُهُمۡ فِى الدُّنۡيَا وَالۡاٰخِرَةِ

عذاب جي اهي ئي آهن جو چٽ ٿيا عمل انهن جا دنيا ۽ آخرت ۾ ۽ ناهن انهن جي لاءِ ڪي

وَمَا لَهُمۡ مِّنۡ نّٰصِرِيۡنَ ﴿٢٢﴾ اَلَمۡ تَرَ اِلَى الَّذِيۡنَ اُوۡتُوۡا نَصِيۡبًا مِّنَ

مددگار ڇا نه ڏٺئي انهن ڏانهن جو ڏنا ويا ڪجهه حصو ڪتاب مان سڏيا ٿا

الۡكِتٰبِ يُدۡعَوۡنَ اِلٰى كِتٰبِ اللّٰهِ لِيَحۡكُمَ بَيۡنَهُمۡ ثُمَّ يَتَوَلّٰى

وڃن الله جي ڪتاب ڏانهن تانت فيصلو ڪري انهن ۾ تنهن ڪان پوءِ ڦري ٿي

(١) تفسير مظهري ص٢٨ جلد ٢

فَرِيقٌ مِّنْهُمْ وَهُمْ مُّعْرِضُونَ ﴿٢٣﴾ ذَالِكَ بِاَنَّهُمْ قَالُوا لَنْ

هڪ جماعت انهن مان ۽ اهي منهن موڙيندڙ آهن اهو ان جي ڪري جو بلاشبه انهن چيو ته اصل نه

تَمَسَّنَا النَّارُ اِلَّآ اَيَّامًا مَّعْدُودَاتٍ وَّغَرَّهُمْ فِىْ دِيْنِهِمْ

ڇهندي اسان کي باهه مگر ڏينهن ڳڻيل ۽ مغرور ڪيائين انهن کي انهن جي دين ۾ ان شيءِ

مَّاكَانُوا يَفْتَرُوْنَ ﴿٢٤﴾ فَكَيْفَ اِذَا جَمَعْنٰهُمْ لِيَوْمٍ لَّارَيْبَ فِيْهِ

جو هٿ سان ٺي ٺاهيائون پوءِ ڪيئن (ٿيندو) جڏهن گڏ ڪنداسون انهن کي ان ڏينهن لاءِ جو ناهي شڪ ان ۾

وَوُفِّيَتْ كُلُّ نَفْسٍ مَّا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ ﴿٢٥﴾

۽ پورو بدلو ڏنو ويندو سڀڪو نفس (ان عمل جو) جيڪي ڪيائين ۽ اهي نه ظلم ڪيا ويندا

## تفسير

هنن سيني آيتن ۾ يهودين جي بدعنوانين، سرڪشي، حق کان عملاً انڪار ڪرڻ ۽ حق وارن تي ظلم ڪري انهن کي بي رحميءَ سان شهيد ڪرڻ واريءَ پراڻيءَ عادت جو ذڪر آهي ۽ انهن کي قيامت جي ڏينهن جون سختيون ياد ڏياري تنبيهه ڪئي وئي آهي. اهي ان غلط فهميءَ ۾ بريءَ طرح مبتلا هئا ته اهي ڪٿي ڪيڏو گناهه به ڪن ڪين عذاب يا ته ٿيندو ئي ڪونه يا ٿيو ته به ٻه ٽي ڏينهن. هتي انهن کي ڪولي ڪولي سمجهايو ويو آهي ته اهي اوهان جون هٿرادو ڳالهيون ڪنهن به ڪم جون ناهن اوهان کان اوهان جي هر بڇڙي عمل جي پڇا به ٿيندي ۽ ان تي سزا به ملندي. علامه جلال الدين عليه الرحمة لکيو آهي ته انهن هڪ ڏينهن جي صبح واري هڪ ڪلاڪ ۾ ٽيتاليهه (٤٣) نبي (عليهم الصلواة والسلام) ۽ هڪ سؤ ستر (١٧٠) صالح ٻانها (جن ڪين نبين ڀلارن جي ناحق قتل کان روڪيو ٿي) شهيد ڪيا هئا. (١)

(١) تفسير جلالين ص٤٨

الله تعاليٰ جي نبين ۽ صالح ٻانهن کي شهيد ڪري انهن جي رت سان هٿ رنگين بنائڻ ڪا رواجي ۽ معمولي ڳالھ ناهي سندن دنيا ۾ ڪيل چڱا عمل تہ برباد ٿي ويا پر آخرت ۾ بہ انهن کي بچائڻ وارو ڪو يار، مددگار نہ هوندو.

"اَلَمْ تَرَ اِلَى اَلَّذِيْنَ اُوْتُوْا نَصِيْبًا مِّنَ الْكِتٰبِ" ڪان الله جل جلالہ پنهنجي حبيب، نبي صلي الله تعاليٰ عليہ وسلم جن کي ٻڌايو تہ انهن وٽ جيڪو توراة جو ٿورو حصو لفظي ۽ معنوي تحريف ڪان بچيل هو يا جيڪا ٿوري گهڻي ڪتاب جي سمجھ ڪين مليل هئي ان جو بہ خيال نہ ڪيائون. جڏهن ڪين سڏي چئجي ٿو تہ "اچو الله جي نازل ڪيل ڪتاب (قرآن پاڪ) ڪان فيصلو وٺو تہ منهن موڙي ڀڄن ٿا." اهو ان جي ڪري جو سندن وڏن مان ڪي اهڙي هٺرادو ڳالھ ڪري ويا هئا تہ اسان کي عذاب ٿيندو ئي ڪونہ ڇوتہ اسين حضرت يعقوب عليہ السلام جو اولاد آهيون پر جيڪڏهن هرو ڀرو ٿيو تہ بہ ايترو وقت جيترو هٺرادو ڳابي جي پوڄا ڪئي هئي سين. الله جل شانہ فرمايو تہ "فَكَيْفَ اِذَا جَمَعْنٰهُمْ" يعني جڏهن ڪين قيامت واري يقيني ڏينهن لاءِ سڏي، هر هڪ نفس کي پورو پورو حساب ڏنو ويندو تہ پوءِ هي ڪيئن ڪندا؟

## فائدو

حضرت عبدالله بن عباس رضى الله تعاليٰ عنهما ڪان آيت مبارڪ "اَلَمْ تَرَ اِلَى اَلَّذِيْنَ اُوْتُو نَصِيَباً مِّنَ الْكِتٰبِ" جي شان نزول لاءِ بہ روايتون ذڪر ڪيل آهن. ١- هڪ تہ جڏهن رسول الله صلى الله تعاليٰ عليہ وسلم جن يهودين کي اسلام جي دعوت ڏني تہ نعيم بن عمرو ۽ حارث بن زيد نالي يهودين پڇيو تہ اوهان ڪهڙي دين تي آهيو؟ فرمايائون تہ "ملت ابراهيمي تي" انهن چيو تہ حضرت ابراهيم (عليہ الصلواة والسلام) تہ يهودي هو. پاڻ فرمايائون تہ "توراة آڻيو تہ اتي جو اتي فيصلو ٿي وڃي" پر اهي ڦري ويا نہ آندائون تڏهن هيءَ آيت نازل ٿي ۽ ان لحاظ سان آيت جي لفظ "مِنَ الْكِتَابِ" مان مراد توراة ۽ "ڪتاب الله" مان مراد قرآن ڪريم آهي. ٢- ٻي تہ خيبر جي يهودين مان هڪ مرد ڪنهن عورت سان زنا ڪئي ۽ توراة ۾ ان گناھ ڪرڻ واري جي سزا ان کي پٿر هڻي مارڻ هو، پر جڏهن تہ اهو مرد بااثر خاندان مان هو ان جي ڪري اهو فيصلو يهودي عالمن جي بجاءِ رسول الله صلى الله تعاليٰ عليہ وسلم جن جي خدمت ۾ آندو ويو تہ شايد پاڻ سنگسار ڪرڻ جو حڪم نہ ڏين مگر جڏهن حضور صلى الله

تعالىٰ عليہ وسلم جن بہ ہنهي کي سنگسار ڪرڻ جو فيصلو صادر فرمايو تہ فيصلو ٻڌي انهن مجڻ جي بجاءِ شور ڪندي چيو تہ الله تعالىٰ جو حڪم اهو ناهي. حضور صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن فرمايو تہ "توراة ڪٽي اچو ۽ ان کان فيصلو وٺو" چيائون تہ صحيح آهي. جڏهن توراة مقدس ڪٽي آيا تہ سندن وڏي عالم، عبدالله بن صوريا پڙهڻ شروع ڪيو ۽ جڏهن سنگسار واريءَ آيت تي پهتو تہ ان تي هٿ رکي اڳتي پڙهڻ شروع ڪيائين، مگر حضرت عبدالله بن سلام سندس هٿ هٽائي اها آيت پڙهي ورتي يهودي ذليل ۽ خوار ٿيا ۽ انهن ٻنهي زاني مرد ۽ عورت کي سنگسار ڪيو ويو. تڏهن اها آيت نازل ٿي. (١)

قُلِ اللّٰهُمَّ مَالِكَ الْمُلْكِ تُؤْتِى الْمُلْكَ مَنْ تَشَآءُ وَتَنْزِعُ

عرض ڪر تہ اي الله! اي مالڪ سيني ملڪن جا! ڏين ٿو بادشاهي جنهن کي گهرين ۽ ڪسين ٿو

الْمُلْكَ مِمَّنْ تَشَآءُ وَتُعِزُّ مَنْ تَشَآءُ وَتُذِلُّ مَنْ تَشَآءُ بِيَدِكَ

بادشاهي جنهن کان گهرين ۽ عزت ٿو ڏين جنهن کي گهرين ۽ ذليل ٿو ڪرين جنهن کي گهرين تنهنجي (قدرتي) هٿ ۾

الْخَيْرُ اِنَّكَ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ قَدِيْرٌ ﴿٢٦﴾ تُوْلِجُ الَّيْلَ فِى النَّهَارِ

سڀ ڀلائي آهي بيشڪ تون هر شيءِ تي قادر آهين داخل ٿو ڪرين رات (جي حصي) کي ڏينهن ۾

وَتُوْلِجُ النَّهَارَ فِى الَّيْلِ وَتُخْرِجُ الْحَىَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَتُخْرِجُ

۽ داخل ٿو ڪرين ڏينهن (جي حصي) کي رات ۾ ۽ ڪڍين ٿو جيئري کي مئل مان ۽ ڪڍين ٿو

الْمَيِّتَ مِنَ الْحَىِّ وَتَرْزُقُ مَنْ تَشَآءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٢٧﴾

مئل کي جيئري مان ۽ رزق ٿو ڏين جنهن کي گهرين حساب کان سواءِ

(١) البحر المحيط ص٤١٦ جلد ٢ تفسير مظهري ص٣٠ جلد ٢

# تفسير

هنن آيتن ۾ پهريان الله تعالىٰ پنهنجي محبوب عليه الصلواة والسلام جن ۽ سندن واسطي سان ساريءَ امت کي اهڙن پاڪ ۽ سهڻن ڪلمن سان دعا گهرڻ جي تعليم ڏني آهي، جنهن ۾ نهايت اثرائتي نموني سان سندس توحيد ۽ عظيم قدرت جو ذڪر ڪيل آهي يعني حڪومت ڏيڻ ۽ کسڻ، عزت وارو بنائڻ ۽ خوار ڪرڻ سڀ سندس طاقت ۽ وس ۾ آهي ڪنهن فرد يا قوم کي حق نه آهي جو اهو انهن شين کي پنهنجو پاور سمجهي ان مڪر ۾ قائل رهي ته ان جا عمل ڪيترا خراب ڇو نه هجن، ان جو ڪردار ڪيترو ڪريل ۽ ان جي سيرت داغدار ڇو نه هجي پر نه ان کان حڪومت کسي ويندي ۽ نه ان کي عزت کان محروم ڪيو ويندو. مگر ائين نه آهي. هر شيءِ ان حقيقي مالڪ جي اختيار ۾ آهي اهو الله جل جلاله جنهن جي علم، حڪمت رحمت ۽ عدل سان سيئي ڳالهيون قائم ۽ دائم آهن ان جي ازلي سنت اها آهي ته اهو جڏهن ڪنهن فرد يا قوم ۾ رحم ۽ عدل جون تقاضائون پوريون ڪرڻ جي صلاحيت ڏسي ٿو ته انهن کي حڪومت ۽ عزت سان نوازي ٿو ۽ جڏهن اهي فرد يا قوم پنهنجي عمل سان پاڻ کي ان نعمت جو نااهل ثابت ڪن ٿا ته ڪين خواريءَ جي کڏي ۾ اڇلائي ٿو.

هن آيت ۾ يهودين جي ٻن ڳالهين کي بيان ڪيو ويو آهي.

١- هڪ ته جڏهن سيدنا رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو ته "روم ۽ فارس ٻنهي وڏن ملڪن جي بادشاهي منهنجي امت کي ملندي." ته يهودين چيو ته اهو ڪيئن ٿو ٿي سگهي؟ ٢- ٻي ته يهودين جي ذهن ۾ اها ڳالهه هئي ته اسان کي يهودي بادشاهن کان جيڪو انعام ۽ مالي مدد ملي ٿي اها مسلمان ٿيڻ جي ڪري بند ٿي ويندي. الله جل شانه فرمايو ته جن بادشاهن جي مال ۽ عزت تي اوهان مست آهيو اهي الله تعالىٰ جي قدرت کان ٻاهر نه آهن رب العزة جل مجده انهن يهودين کان اها عزت ۽ بادشاهي کسي مسلمانن کي ڏئي سگهي ٿو ۽ واقعي ائين ئي ٿيو ۽ سڄي دنيا ڏٺو ته روم ۽ فارس، ٻئي وڏا ملڪ حضرت عمر فاروق رضي الله تعالىٰ عنه جي وقت ۾ فتح ٿيا ۽ سندن گڏ ڪيل خزانا مسلمانن ۾ ورهايا ويا. اصل ڳالهه هيءَ آهي ته جڏهن عزت جو آخري ۽ انتهائي مقام، نبوت ۽ رسالت وارو منصب بني اسرائيل

مان ڪڍي بني اسماعيل ۾ آندو ويو تہ روم ۽ فارس جي ظاهري بادشاهي عرب جي مسڪين ماڻهن ڏانهن منتقل ڪرڻ ڪهڙي نہ ٿيڻ واري ڳالهہ آهي؟ هيءَ دعا گويا هڪ طرح جي پيشنگوئي هئي تہ دنيا جي موجوده حالت جلد مٽجڻ واري آهي جيڪا قوم پوريءَ دنيا کان الڳ ۽ پري پئي هئي اها اسلامي تعليمات کي دل سان قبولڻ جي ڪري ٿوري عرصي ۾ عزتن ۽ سلطنتن جي مالڪ ٿيندي ۽ جيڪي بادشاهي ڪري رهيا آهن انهن کي سندن ئي برن عملن جي ڪري ذليل ۽ خوار ڪيو ويندو.

"تُوْلِجُ الَّيْلَ" الاية هن آيت ۾ الله تعاليٰ پنهنجي ڪامل قدرت جا ٻيا بہ ثبوت بہ بيان فرمايا آهن. ١- هڪ رات کي ڏينهن ۾ ۽ ڏينهن کي رات ۾ داخل ڪرڻ جو ڪڏهن رات کي گهٽائي ڏينهن وڌائي ٿو ۽ ڪڏهن ڏينهن کي گهٽائي رات وڌائي ٿو. ڪنهن موسم ۾ رات چوڏهن ڪلاڪ ۽ ڏينهن ڏهہ ڪلاڪ ٿيندو آهي ڪجهہ مهينن کان پوءِ وري رات گهٽجي ڏهہ ڪلاڪ ۽ ڏينهن وڌي چوڏهن ڪلاڪ ٿيندو آهي اها سڀ قير قار الله تعاليٰ جي قدرتي هٿ ۾ آهي جوتہ سج، چنڊ ۽ سڀئي ستارا ان جي ارادي کان سواءِ چري بہ نہ ٿا سگهن. ٢- بيو جيئري کي مئل مان ڪڍڻ ۽ مئل کي جيئري مان ڪڍڻ يعني ڪڪڙ جي بچي کي آني مان ۽ آني کي ڪڪڙ مان ڪڍڻ، انسان کي منيءَ جي ڦڙي مان ۽ منيءَ جي ڦڙي کي انسان مان، جاهل کي عالم مان عالم کي جاهل مان، ڪامل کي ناقص مان، ناقص کي ڪامل مان ڪڍڻ سندس ئي قدرت جو ڪمال آهي.

"وَتَرْزُقُ مَنْ تَشَآءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ" يعني جنهن کي بہ گهرين تہ حساب کان سواءِ رزق ڏيندو آهين. هن رزق ۾ حسي ۽ معنوي بئي رزق شامل آهن.

## هنن آيتن جي پڙهڻ جون ڀلايون ۽ برڪتون

هنن آيتن کي روزانو پڙهڻ جو ثواب ۽ برڪت ڪيترين حديثن ۾ آيل آهي پر هتي انهن مان صرف بہ حديثون لکجن ٿيون.

### حديث ١

حضرت معاذ بن جبل رضي الله تعاليٰ عنه کان روايت آهي تہ مان هڪ

ڏينهن گهر ۾ ويهي رهيس ۽ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن سان جمعي جي نماز پڙهي نہ سگهيس (ملاقات ڪرڻ وقت) پاڻ (ﷺ) جن پڇيو تہ "معاذ! توکي جمعي جي نماز تي اچڻ کان ڪنهن روڪيو؟" عرض ڪيم تہ يارسول الله! (ﷺ) مون تي يوحنا بن باريا يهوديءَ جو چانديءَ جي هڪ اوقيہ (تقريباً پوڻا چار تولا) قرض هو ۽ اهو اچي منهنجي گهر جي دروازي تي ويهي رهيو مان ان ڊپ کان تہ متان مون کي اوهان جي خدمت ۾ حاضر ٿيڻ کان روڪي ڇڏي ٻاهر نہ نڪتس. حضور صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن اهو ٻڌي فرمايو تہ "ڇا تون گهرين ٿو تہ الله تعالىٰ تنهنجو قرض لاهي ڇڏي؟" عرض ڪيم تہ هائو فرمايائون تہ "روزانو قُلِ اللّٰهُمَّ مَالِكَ الْمُلْكِ- بِغَيْرِ حِسَابٍ" تائين ۽ "رَحْمٰنَ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَرَحِيْمَهُمَا تُعْطِيْ مِنْهُمَا مَنْ تَشَاءُ وَتَمْنَعُ مِنْهُمَا مَنْ تَشَاءُ اِقْضِ عَنِّيْ دَيْنِيْ" پڙهندو رهہ." جيڪڏهن توتي سون سان ڀريل ساري زمين جيترو قرض هوندو تہ بہ الله تعالىٰ لاهي ڇڏيندو."

## حديث ٢

حضرت علي رضي الله عنه کان روايت آهي تہ رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو: "جڏهن الله تعالىٰ فاتحة الكتاب، آيت الكرسي، شهدالله (واري آيت) ۽ قُلِ اللّٰهُمَّ مَالِكَ الْمُلْكِ- بِغَيْرِ حِسَابٍ" تائين آيتون نازل ڪرڻ جو ارادو فرمايو تہ اهي اهڙي حال ۾ عرش کي چنبڙي پيون جو انهن ۽ الله تعالىٰ جي وچ ۾ ڪو بہ حجاب نہ هو ۽ عرض ڪيائون تہ اي رب! اسان کي گناهن جي جاءِ ۾ بي فرمانن ڏانهن ٿو لاهين؟ الله تعالىٰ فرمايو تہ "مون کي پنهنجيءَ عزت ۽ جلال جو قسم آهي تہ اوهان کي ڪوبہ ٻانهو هر فرض نماز کان پوءِ پڙهندو تہ ان کي سندس گناهن جي باوجود حظيرة القدس ۾ رهائيندي ان ڏانهن روزانو ستر (٧٠) ڀيرا پنهنجي لڪل نگاهہ سان نهاريندس، ان جون روزانو ستر (٧٠) حاجتون پوريون ڪندس جن مان گهٽ ۾ گهٽ حاجت سندس گناهن جي مغفرت آهي، ان کي هر دشمن کان بچائي ان جي متان غالب ڪري سندس مدد ڪندس ۽ ان کي موت کان سواءِ جنت ۾ داخل ٿيڻ کان ڪير بہ نہ روڪيندو. (١) يعني مرڻ شرط جنت ۾ ويندو.

(١) تفسير قرطبي ص ٥٤- جلد٢

لَا يَتَّخِذِ الْمُؤْمِنُوْنَ الْكَافِرِيْنَ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ ج

نہ بنائين مومن ڪافرن کي دوست مومنن کان سواءِ ۽ جيڪو اهو (ڪافرن سان دوستيءَ جو

وَمَنْ يَّفْعَلْ ذَالِكَ فَلَيْسَ مِنَ اللّٰهِ فِيْ شَيْءٍ اِلَّآ اَنْ تَتَّقُوْا

ڪم) ڪندو پوءِ ناهي (ان جو) الله سان ڪو تعلق مگر (هن حالت ۾) جو بچو

مِنْهُمْ تُقٰـةً ط وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهٗ ط وَاِلَى اللّٰهِ الْمَصِيْرُ (٢٨)

انهن کان بچڻ ۽ ڊيڄاري ٿو اوهان کي الله پنهنجيءَ ذات کان ۽ الله ڏانهن موٽڻو آهي

## تفسير

هيءَ آيت مبارڪ اهو بنياد ۽ اساس آهي جنهن تي اسلامي حڪومت جي خارجہ پاليسيءَ جو دارومدار آهي. ان اهميت کي نظر ۾ رکندي هن آيت ڏانهن پورو پورو توجهہ ڏيڻ ۽ ان کي سمجهڻ گهرجي تانتہ ان کي صحيح نہ سمجهڻ جي ڪري غلطيءَ جو شڪار نہ ٿجي.

ڄاڻڻ گهرجي تہ هن آيت ۾ ايمان وارن کي مؤمنن کان سواءِ ڪافرن سان دوستي رکڻ کان منع ڪيل آهي. ان منع ۾ اولياءَ جو لفظ آيل آهي. ان جي ڪري پهريان ان لفظ جو مفهوم چڱيءَ طرح ذهن نشين ڪرڻ گهرجي.

توجهہ ۾ رهي تہ اولياءَ ولي جو جمع آهي ۽ اهو ولاية (واو جي زير سان) يا ولاية (واو جي زبر) کان ورتل آهي علامہ راغب اصفهاني عليه الرحمة لکيو آهي تہ الولاية النصرة والولاية تولي الامر وقيل الولاية والولاية واحدة (١) يعني الولاية (واو جي زير سان) جي معنيٰ آهي مدد ڪرڻ ۽ الولاية (واو جي زبر سان) جي معنيٰ آهي ڪنهن ڪم جي سنڀال ۽ ذميداري محسوس ڪرڻ ۽ ڪن جو چوڻ آهي تہ ٻنهي جي معنيٰ هڪڙي آهي. علامہ قرطبيءَ هن آيت جو تفسير ان ئي سورة جي آيت ١١٨

(١) المفردات ص۵۵۵

"لَا تَتَّخِذُوا بِطَانَةً مِّنْ دُونِكُمْ" سان ڪندي لکيو آهي تہ پنهنجن اهم امرن جي متعلق ڪافرن سان مشورو ڪرڻ ۽ پنهنجا سيئي ڪم انهن جي سپرد ڪرڻ. قرآن ڪريم جي ان فرمان جي روشنيءَ ۾ قطعي طرح ممنوع آهي. اهڙو رويو اختيار ڪرڻ ڪنهن بہ آزاد قوم ۽ آزاد حڪومت جي شايان شان نہ آهي. بلڪ اهو ذهني غلاميءَ جو ٻيو نالو آهي. جنهن ڪي اسلامي غيرت برداشت ڪري نہ ٿي سگهي.

## شان نزول

حضرت عبدالله بن عباس رضي الله تعالىٰ عنهما ڪان روايت آهي تہ حضرت عبادة بن الصامت رضي الله تعالىٰ عنه (جيڪو نهايت متقي ۽ بدري صحابي هو) جو مديني منوره جي رهاڪن يهودين سان وفاداريءَ جو عهد ٿيل هو (جيڪو شرعاً ان وقت تائين منع ٿيل بہ نہ هو) جڏهن حضور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن خندق جي جنگ لاءِ نڪتا تہ ان عرض ڪيو تہ يا رسول الله! مون سان معاهدي ۾ پنج سؤ (٥٠٠) يهودي ٻڌل آهن هاڻ سوچيان ٿو تہ جيڪڏهن اجازت هجي تہ انهن کي پاڻ سان گڏ وٺي هلجي ۽ دشمنن تي غلبو حاصل ڪجي. تڏهن الله جل جلاله هيءَ آيت لاهي ڪافرن سان دوستيءَ ڪان روڪيو (١)

حقيقت هيءَ آهي تہ ڪافر پنهنجي غرض ۽ مقصد لاءِ مسلمانن جي خوشامد ڪري، انهن کي طرح طرح جا ساوا باغ ڏيکاريندو آهي پر جڏهن بہ سندس اغراض ۽ مقاصد مسلمانن جي ٽڪر ۽ مقابلي ۾ ايندا تہ اهو انهن جي پاڙن پٽڻ ۾ ذرا برابر بہ پوئتي نہ پوندو ۽ ان وقت ڪيس ياد بہ نہ رهندو تہ مسلمان سندس مخلص دوست هئا جن سندس مفاد لاءِ پنهنجي ديني پائرن جي رت وهائڻ ۾ بہ ذري جو خيال ۽ فڪر نہ ڪيو هو. تفسير المنار جي صاحب لکيو آهي تہ: فالممنوع منها مايكون فيه خذلان لدينک وايذاءٌ لاهله او اضاعة لمصالحهم (٢) يعني ڪافرن سان اها دوستي رکڻ منع آهي، جنهن سان تنهنجي دين جي خواري يا دينداررن کي ايذاءُ يا سندن مصلحتن کي نقصان پهچي. جڏهن هر شيءِ الله تعالىٰ جي هٿ ۾ آهي تہ مسلمانن کي سندس دشمنن سان دوستي رکڻ ڪڏهن بہ لائق ناهي.

---

(١) تفسير القرطبي ص ٥٨- جلد ۴ (٢) تفسير المنار ص ٢٧٨- جلد ٣

# فائدو

چاڻ گهرجي تہ ٻن شخصن يا جماعتن ۾ تعلقات جا مختلف درجا هوندا آهن. ١- هڪ قلبي موالات يعني دلي دوستي ۽ محبت ۽ اها صرف مؤمنن سان مخصوص آهي ڪافر سان اهو تعلق رکڻ اصل جائز ناهي. ٢- ٻيو مواسات همدردي، خيرخواهي ڪرڻ ۽ نفعو پهچائڻ. اها مسلمانن سان وڙهندڙن ڪافرن کان سواءِ ٻين غير مسلمانن لاءِ بہ جائز آهي. ٣- ٽيون مداراة، يعني ظاهري خوش خلقي ۽ دوستاڻو برتاؤ جيڪڏهن ان مان مقصد دين جي لاءِ انهن کي آماده ۽ تيار ڪرڻ آهي تہ اهو بہ سيني غير مسلمانن لاءِ جائز آهي. ۴- چوٿون معاملات- يعني واپار، نوڪري، مزدوري، هنر ۽ ڪاريگري وغيره جا معاملا غيرمسلمانن سان رکيا وڃن تہ جائز آهن ان شرط سان جو ٻين مسلمانن کي ان مان نقصان پهچڻ جو خطرو نہ هجي. سيدالمرسلين صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن ۽ خلفاءِ راشدين پنهنجن نہ مڃڻ وارن دشمنن سان بہ سهڻي اخلاق ۽ مٺي مزاج سان پيش ايندا هئا.

# فائدو

الله جل جلالہٗ قرآن ڪريم ۾ ڪافرن سان قلبي تعلق ۽ دلي دوستي رکڻ کان سختيءَ سان ان جي ڪري منع ڪئي جو انسان جو وجود عام جانورن، يا جهنگل جي وڻ، زمين ۾ ڄمندڙ گاهہ يا سڪل ٻهہ وانگر ناهي جو پيدا ٿيو، وڌو ٿيو ۽ ويو. پر انساني زندگيءَ جي حالتن، ڪائڻ، پيئڻ، اٿڻ، ويهڻ سيني مان مقصد الله تعالىٰ جي عبادت ۽ اطاعت آهي. جيستائين سندس هر قول ۽ فعل ان مقصد جي مطابق آهي تيستائين صحيح ۽ درست آهي جيئن صوفين جي سرواڻ حضرت عارف بالله، جلال الدين روميؒ جو ارشاد آهي:

زندگي از بهر ذڪرو بندگي است
بي عبادت زندگي شرمندگي است

يعني دنيا تي جيئرو رهڻ الله جل شانہ جي ذڪر ۽ عبادت لاءِ آهي عبادت کان سواءِ حياتي شرمساري آهي.

الله تعالىٰ جي ان زاهد ۽ متقي ٻانهي جي نظر ۾ ان مقصد کان هٽڻ وارو

صحيح معنيٰ ۾ انسان ئي ناهي جيئن سندس پيو فرمان مبارڪ آهي:

آنچہ مي بيني خلاق آدم اند
نيستند آدم غلاق آدم اند

يعني جيڪي ماڻهو ڏسين پيو اهي انسانيت جي خلاف آهن اهي انسان نہ پر انسان جي ويس ۾ آهن. مقصد تہ جڏهن انسان جي پيدا ڪرڻ مان غرض الله جل شانه جي اطاعت ۽ عبادت آهي تہ ان جا دنيوي ڪاروبار، حڪومت، سياست، خانداني ۽ گهرو واسطا بہ سڀ ان جي حڪم مطابق هجڻ کپن. پر جيڪو ان سوچ ۽ فڪر وارو ناهي اهو انسانيت جو وڏ ۾ وڏ ويري آهي سچي انسان جي ان سان دوستي ۽ قلبي محبت ناممڪن آهي.

"اِلَّآ اَنْ تَتَّقُوْا مِنْهُمْ تُقٰىةً" (مگر هن حالت ۾ جو) انهن (ڪافرن کان بچاءُ وٺو) هن مان مراد آهي تہ جيڪڏهن ڪو مسلمان ڪافرن جي گهيري ۾ اچي وڃي ۽ ان جي جان کي خطرو آهي يا ڪيس مال کسجڻ يا عزت جي لٽجڻ جو قوي انديشو آهي تہ اهو ڪنهن طريقي سان جان بچائي نڪري اچي پوءِ چونہ ان کان ڪو غير اسلامي ڪلمو چورايو وڃي تہ بہ ان کي بچاءُ حاصل ڪرڻ جي موڪل آهي. قرآن ڪريم جي تفسيرن لکيو آهي تہ: اما ما يرجع ضرره الي الغير كالقتل والزنا وغصب الاموال، والشهادة بالزور وقذف المحصنٰت واطلاع الكفار علىٰ عورات المسلمين فذالك غير جائز البتة (١) يعني ان خوف ۽ خطري جي حالت ۾ ڦاٿل کي اها موڪل ناهي جو اهو اهڙو ڪم ڪري يا اهڙي ڳالهہ چوي جنهن سان ٻئي مسلمان کي نقصان پهچي مثلاً ڪنهن کي ناحق قتل ڪرڻ، زنا ڪرڻ، ڪنهن جو مال ڦرڻ، ڪوڙي شاهدي ڏيڻ، ڪنهن پاڪدامن عورت تي بهتان هڻڻ، ڪافرن کي مسلمانن جا راز ٻڌائڻ، اهي سڀئي ڪم يقيني طور ناجائز آهن. ها غيرمسلم حڪومتن سان تجارتي سلسلو رکڻ، عوام جي فلاح ۽ ڀلائيءَ لاءِ تعاون ڪرڻ، عالمي امن ۽ سلامتيءَ جي بقا لاءِ جدوجهد جاري رکڻ يا ڪنهن گڏيل دشمن جي مقابلي لاءِ فوجي معاهدو ڪرڻ، يا عام ميل جول ۽ معاشري ۾ انهن سان سهڻي سلوڪ ۽ خنده پيشانيءَ سان پيش اچڻ قرآن ڪريم جي آيتن ۽ حضور پرنور، شافع يوم النشور صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي سهڻي سيرت مان ثابت آهي. هڪ انسان جي ٻئي انسان سان محبت شرعي حدن جي

(١) تفسير الكبير ص ١٣- جزءِ ٨

اندر، خلوص ۽ سچائيءَ واري آهي تہ ان جو اجر ۽ ثواب وڏو آهي.

# للّٰهيت واري محبت جو ثواب

سرور ڪائنات، مفخر موجودات صلی الله تعالیٰ عليه وسلم جن ڪيترين حديثن ۾ خدا واسطي ۽ سچي محبت جو ثواب بيان فرمايو آهي جن مان چار حديثون هتي لکجن ٿيون.

## حديث ١

رسول الله صلی الله عليه وسلم جن فرمايو تہ "مَنْ اَحَبَّ لِلّٰهِ وَاَبْغَضَ لِلّٰهِ فَقَدِ اسْتَكْمَلَ اِيْمَانَهٗ" يعني جنهن الله جي راضي ڪرڻ لاءِ (ڪنهن سان) محبت يا بغض رکيو ان پنهنجو ايمان ڪامل بنايو

## حديث ٢

حضرت ابن مسعود رضي الله تعالیٰ عنه روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن فرمايو: "اَلْمَرْءُ مَعَ مَنْ اَحَبَّ" يعني (قيامت جي ڏينهن) مڙس ان سان گڏ هوندو جنهن سان محبت رکي هوندائين. پوءِ جيڪڏهن الله جل شانه جي حبيب عليه الصلواة والسلام جن يا صحابن، امامن، اوليائن سان محبت هونديس تہ جنت ۾ بہ انهن سان گڏ هوندو.

## حديث ٣

حضرت انس رضي الله عنه کان روايت آهي تہ رسول الله صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن فرمايو: "اَنْتَ مَعَ مَنْ اَحْبَبْتَ" (قيامت ۾) تون ان سان گڏ هوندين جنهن سان محبت اٿئي.

## حديث ۴

حضرت عبدالله بن عباس رضي الله تعاليٰ عنهما کان روايت آهي تہ رسول الله صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن (حضرت) ابوذر (رضي الله تعاليٰ عنه) کي (خطاب ڪندي) فرمايو: "اَيُّ عُرَي الْاِيْمَانِ اَوْثَقُ" ايمان جي ڪڙن مان ڪهڙو ڪڙو

وڏيڪ مضبوط آهي؟ عرض ڪيائين ته الله (جل شانه) ۽ ان جو رسول (ﷺ) وڏيڪ ڄا ڻن پاڻ فرمايائون ته "اَلْمُوَالَاةُ فِى اللّٰهِ وَالْحُبُّ فِي اللّٰهِ وَالْبُغْضُ فِى اللّٰهِ" الله جي (رضا) لاءِ دوستي ۽ الله جي رضا، لاءِ محبت ۽ الله جي (رضا) لاءِ (ڪنهن سان) دشمني رکڻ.

## حديث ٥

حضرت ابوذر رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آهي ته نبي ڪريم صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو "اِنَّ اَحَبَّ الْاَعْمَالِ اِلَي اللّٰهِ تَعَالٰى اَلْحُبُّ فِى اللّٰهِ وَالْبُغْضُ فِى اللّٰهِ" يعني الله تعاليٰ وٽ وڏيڪ پيارو عمل الله جي (رضا) لاءِ محبت ۽ ان جي (رضا) لاءِ (ڪنهن سان) دشمني رکڻ آهي (١)

## سوال

شيعا صاحب قرآن ڪريم جي هن آيت "اَنْ تَتَّقُوْا مِنْهُمْ تُقٰةً" مان تقيه ثابت ڪندا آهن. ان جي معنيٰ، مفهوم ۽ مطلب ته سمجهايو؟

## جواب

قرآن پاڪ جي انهن لفظن جي صحيح مختصر مفهوم ۽ معنيٰ ته مٿي بيان ٿي چڪي آهي، رهيو انهن لفظن مان تقيه ثابت ڪرڻ، سو بالڪل غلط آهي. اوهان تقيه جي معنيٰ ۽ مفهوم ٻڌو پوءِ پاڻ فيصلو ڪيو ته تقيه ڪهڙي شيءِ آهي. شيعن عالمن جي چوڻ موجب شريعت جي برخلاف حڪم ڏيڻ يا دل ۾ هڪ ۽ ظاهر ۾ ٻي چوڻ جو نالو تقيه آهي. ايراني انقلاب جي اڳواڻ، شيعن جي ليڊر ۽ سندن آيت الله خميني لکيو آهي ته: معني تقيه آنست ڪه انسان حڪمے را برخلاف واقع گويد يا عمل برخلاف ميزان شريعت ڪند (٢) يعني تقيه جي معنيٰ آهي ته انسان حقيقت جي خلاف ڪو حڪم هلائي يا شرعي ميزان جي خلاف ڪو عمل ڪري. مٿين ذڪر ڪيل عالم اڳتي لکيو آهي ته: عقل وهرڪس ڪه جزئي خرد داشته باشد مي فهمد ڪه حڪم تقيه از احڪام قطعيه خدا است چنانچه وارد شده ڪه ڪس ڪه تقيه ندارد دين ندارد (٣) يعني

(١) تفسير مظهري ص٣٤ ج٢ (٢) ڪشف الاسرار ص ١٢٨ (٣) حوالو ساڳيو ص ١٢٩

جيڪو ٿورڙي سمجهہ ۽ عقل رکي ٿو سمجهي ٿو تہ تقيه الله جي قطعي حڪمن مان آهي جيئن روايت ۾ آهي تہ جيڪو تقيه نہ ٿو رکي دين نہ ٿو رکي. هاڻي مٿيون ٻئي عبارتون غور ڪري پڙهو. مٿي لکي آيو تہ حقيقت جي خلاف حڪم ڪرڻ يعني جيڪا ڳالهہ هجي ٿي نہ اها ڪرڻ- (جنهن کي ڪوڙ سڏيو ويندو آهي) ۽ شريعت جي خلاف عمل ڪرڻ (جنهن کي برائي ۽ بڇڙائي سڏيو ويندو آهي) جو نالو تقيه آهي. ڪوڙ ڳالهائڻ تہ اهڙي مڇيل برائي آهي جنهن کي هر معاشري، هر فلسفي، هر مذهب تانجو هر سمجهدار انسان برو سمجهيو آهي ان لاءِ چوڻ تہ اهو الله جو قطعي حڪم آهي ڪيڏي نہ وڏي برائي آهي. ذرا سمجهڻ جي ڪوشش تہ ڪبو. ڪوڙ ڳالهائڻ منافقن جو ڪم آهي. جيئن رباني ارشاد آهي "فِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ فَزَادَهُمُ اللّٰهُ مَرَضًا وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ بِمَا كَانُوْا يَكْذِبُوْنَ" (١) يعني انهن (منافقن) جي دلين ۾ (ڪوڙ هڻڻ جي) بيماري آهي پوءِ الله انهن، جي بيماري وڌائي ۽ انهن لاءِ ان جي ڪري دردناڪ عذاب آهي جو اهي هميشہ ڪوڙ ڳالهائيندا رهيا آهن.

ٻيءَ آيت ۾ آهي تہ "فَمَنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ مِنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ" (٢) يعني جن ان کان پوءِ الله تي ڪوڙ ناهي هنيو اهي ئي ظالم آهن." ثابت ٿيو تہ ڪوڙ هڻڻ منافقن جو ڪم آهي ائين چوڻ تہ اهو الله تعالیٰ جي قطعي حڪمن مان آهي. الله تعالیٰ تي ڪوڙ هڻڻ آهي ۽ ڪوڙ هڻندڙ کي قرآن ڪريم ظالم سڏيو آهي.

تقيه ڪرڻ جيڪڏهن ديني حڪم هجي ها تہ الله تعالیٰ جا انبياء ۽ مرسل سڳورا نہ پنهنجا وطن ڇڏين ها ۽ نہ پنهنجن پوئلڳن کي هجرت لاءِ حڪم ڪن ها سيئي دل ۾ هڪ زبان تي ٻي رکيو وينا هجن ها. حضور عليه الصلواة والسلام ۽ اصحاب پلارن رضي الله تعالیٰ عنهم دين لاءِ تڪليفون ڏسي صبر ڪيو پر منافقت نہ ڪيائون. الله تعالیٰ جو فرمان آهي "فَلَا تَخَافُوْهُمْ وَخَافُوْنِ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ" (٣) انهن ڪافرن کان نہ ڊڄو جي مؤمن آهيو تہ مون کان ڊڄو. ٻيءَ جاءِ تي آهي "فَلَا تَخْشَوُا النَّاسَ وَاخْشَوْنِ" (٤) ماڻهن کان نہ ڊڄو مون کان ڊڄو.

سيدنا امام حسين رضي الله تعالیٰ عنہ تقيو ڪندي يزيد پليد جي بيعت نہ ڪئي. قرآن پاڪ ۾ اصحابِ ڪهف جو ذڪر آهي انهن جبل جو غار وڃي وسايو پر

(١) سورة البقره آيت ١٠ (٢) سورة آلعمران آيت ٩٤
(٣) سورة آل عمران آيت ١٧٥ (٤) سورة المائده آيت ٤٤

تقيو نہ ڪيو. دل ۾ هڪ زبان تي بي رکڻ اها پهرين پهرين سازش هئي جيڪا شيطان ڪئي هئي. الله تعالىٰ جو فرمان آهي "وَقَاسَمَهُمَآ اِنِّیۡ لَكُمَا لَمِنَ النّٰصِحِیۡنَ" (١) يعني شيطان دل ۾ هڪ زبان تي بي آڻي حضرت آدم ۽ بيبي حوا کي قسم کڻي چيو هو تہ مان اوهان جي خيرخواهن مان آهيان. عبيدالله بن زياد بہ ڪوفي جي شهر ۾ داخل ٿيڻ وقت منافقي ڪندي چيو هو تہ مان حسين بن علي آهيان پر پاڻ حسين بن علي رضي الله عنہ نہ هو. المقصد تہ آيت پاڪ سان شيعن جي تقيہ جو ڪوبہ تعلق نہ آهي. الله جل شانہ جو ڪوبہ پلو پانهو اهڙي سوچ نہ رکندو تہ الله جل شانہ اهڙي غلط ذهن رکڻ جو حڪم فرمايو آهي.

قُلۡ اِنۡ تُخۡفُوۡا مَا فِیۡ صُدُوۡرِكُمۡ اَوۡ تُبۡدُوۡهُ یَعۡلَمۡهُ اللّٰهُ ؕ وَیَعۡلَمُ

فرماءِ تہ جيڪڏهن لڪائيندؤ اها ڳالهہ جيڪا اوهان جي سينن ۾ آهي يا ظاهر ڪندؤ اها تہ ڄاڻي ٿو ان کي الله

مَا فِی السَّمٰوٰتِ وَمَا فِی الۡاَرۡضِ ؕ وَاللّٰهُ عَلٰی كُلِّ شَیۡءٍ قَدِیۡرٌ ﴿۲۹﴾

۽ ڄاڻي ٿو جو ڪجهہ آسمانن ۾ آهي ۽ جو ڪجهہ زمين ۾ آهي ۽ الله هر شيءِ تي قادر آهي

یَوۡمَ تَجِدُ كُلُّ نَفۡسٍ مَّا عَمِلَتۡ مِنۡ خَیۡرٍ مُّحۡضَرًا ۖۚ وَّمَا عَمِلَتۡ

ان ڏينهن لهندو هر نفس جيڪا بہ نيڪي ڪيائين حاضر ۽ جيڪا برائي ڪيائين پسند ڪندو تہ

مِنۡ سُوۡٓءٍ ۚۛ تَوَدُّ لَوۡ اَنَّ بَیۡنَهَا وَبَیۡنَهٗۤ اَمَدًۢا بَعِیۡدًا ؕ وَیُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ

جيڪر ان بري عمل ۽ سندس وچ ۾ (هجي ها) گهڻو (سنئو) ۽ ڊيڄاري ٿو اوهان کي الله

٣٤٠ نَفۡسَهٗ ؕ وَاللّٰهُ رَءُوۡفٌۢ بِالۡعِبَادِ ﴿۳۰﴾ ع

پنهنجيءَ ذات کان ۽ الله ٻانهن سان ٻاجهارو آهي

(٣) سورة الاعراف آيت ٢١

## تفسير

هنن آيتن ۾ الله جل جلاله ٻانهن کي تنبيهه ڪئي آهي ته اوهان پنهنجين دلين ۾ به سٺا سٺا خيال آڻيو ڇوته الله تعالىٰ کان اوهان جي سينن وارا راز به لڪل ناهن ۽ آسمانن ۽ زمينن ۾ موجود هر شيءِ پوءِ اها وڏي هجي يا ننڍي سندس علم کان اصل ٻاهر نه آهي ۽ اهو هر شيءِ تي قادر به آهي. جڏهن سندس علم ايترو وڏو ۽ سندس قدرت ايڏي ڪامل آهي ته ڪوبه ڏوهي نه پنهنجو ڏوهه ان کان لڪائي سگهندو ۽ نه ان جي سزا کان بچي سگهندو. قيامت جي ڏينهن هر انسان کي سندس سڄيءَ زندگيءَ جو عملنامو هٿ ۾ ڏئي سندس هر چڱائي ۽ برائي اڳيان آندي ويندي. ان وقت اهو ڏوهي آرزو ۽ تمنا ڪندو ته ڪيڏو نه ڀلو ٿئي ها جو هي ڏينهن يا هي اعمال مون کان تمام گهڻو پري هجن ها ۽ انهن کي ويجهو به نه وڃان ها.

"وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهٗ" الله تعالىٰ اوهان کي پنهنجي بي مثل ۽ بي پرواهه ذات کان ڊيڄاري ٿو. تانته ڪافرن جي دوستي ۽ هر قسم جي گناهن کان پري رهي، ڀلائيءَ جي رستي تي هلي پاڻ کي ان جي قهر، غضب ۽ غصي کان بچايو.

"وَاللّٰهُ رَءُوْفٌۢ بِالْعِبَادِ" (۽ الله ٻانهن سان ٻاجهارو آهي) هتي الله تعالىٰ پنهنجيءَ ذات جو خوف ڏياري وري مهربانيءَ جو ذڪر به آندو آهي ۽ اهو قرآن ڪريم جي بيان جو خصوصي ۽ عجيب انداز آهي جو عموماً خوف سان گڏ اميد ۽ اميد سان گڏ خوف بيان ڪري ٻانهن کي نااميديءَ ۽ مايوسيءَ کان بچايو ويندو آهي.

## فائدو

هتي صرف آسمانن ۽ زمينن ۾ رهڻ ۽ موجود هجڻ وارين شين جي ذڪر تي اڪتفا ڪئي وئي آهي (حالانڪ الله جل جلاله جو علم ته آسمانن کان مٿي ۽ زمينن کان هيٺ هر ذري کي محيط آهي) سو صرف ان جي ڪري جو عام ماڻهن جي سوچ ۽ نظرون انهن تائين ڪم ڪن ٿيون ۽ جڏهن ان مالڪ جل مجده جي علم کان ڪابه شيءِ، ڪوبه ذرو ٻاهر يا لڪل نه آهي ته ان جي منڪرن، ڪافرن سان نه دلي محبت رکجي نه پيار ڪجي ڇوته اهو دنيا ۾ ذليل ٿيڻ، مغلوب هجڻ ۽ آخرت ۾

عذاب جو سبب آهي. متصوف بزرگن ۽ سالڪن لکيو آهي تہ عقلمند انسان کي
جڳائي تہ پنهنجي نفس کي برن اخلاقن، دل کي دنيوي تعلقات کان صاف رکي،
صالح عملن سان الله جل جلالہ جي ذات کي راضي ڪندي ان وٽان ثواب ۽ ٻنهي
جهانن جي نيڪنامي ۽ سعادت حاصل ڪري.

قُلْ اِنْ كُنْتُمْ تُحِبُّوْنَ اللّٰهَ فَاتَّبِعُوْنِيْ يُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ وَيَغْفِرْ لَكُمْ

فرماءِ تہ جيڪڏهن محبت ٿا رکو الله سان تہ پوءِ منهنجي تابعداري ڪيو تہ محبت رکندو اوهان سان الله ۽ بخشيندو اوهان لاءِ

ذُنُوْبَكُمْ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿٣١﴾ قُلْ اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ

اوهان جا گناهہ ۽ الله بخشيندڙ، مهربان آهي فرماءِ تہ اطاعت ڪيو الله جي ۽ رسول جي

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْكٰفِرِيْنَ ﴿٣٢﴾

پوءِ جيڪڏهن منهن موڙين پوءِ بيشڪ الله نہ ٿو پسند ڪري ڪافرن کي

## تفسير

سيدنا عبدالله بن عباس رضي الله تعالىٰ عنهما فرمايو آهي تہ هڪ ڀيري
محبوب ڪريم عليہ الصلواة والسلام جن ڏٺو تہ ڪافر بيت الله ۾ هڪ بت کي
سينگاري سجدا ڪري رهيا هئا پاڻ صلي الله عليہ وسلم جن ڪين مخاطب
ٿي فرمايو تہ "اي قريشيو! الله تعالىٰ جو قسم آهي تہ اوهان پنهنجن ابن ڏاڏن، حضرت
ابراهيم ۽ حضرت اسماعيل عليهما الصلواة والسلام جي (متان لاٿل الله تعالىٰ جي
سچي) دين کان ڦري ويا آهيو" انهن چيو تہ نہ. اسين انهن جي دين تي آهيون هنن بتن
جي پوڄا صرف ان جي ڪري ٿا ڪيون جو اسان جي الله سان محبت آهي ۽ هي اسان
کي الله تعالىٰ ڏانهن ويجهو بنائيندا. انهن جي ان غلط ڳالهہ کي رد ڪرڻ جي لاءِ الله

تعاليٰ هي آيتون لاٿيون. (١) ۽ بيان فرمايو ته الله جي پياري نبي صلى الله عليه وسلم جن جي تابعداريءَ ۽ اطاعت کان سواءِ الله تعاليٰ جي محبت جي دعويٰ قبول ناهي. علامه ابن الجوزي لکيو آهي ته نجران جي نصارن چيو هو ته اسين حضرت عيسيٰ عليه الصلوٰة والسلام کي الله تعاليٰ جو (معاذالله) پٽ الله جي محبت ۽ تعظيم لاءِ ٿا چئون. انهن جي رد ۾ اهي آيتون نازل ٿيون. (٢) المقصد ته الله تعاليٰ جي محبت جي دعويٰ جي سچائي لاءِ ڪسوٽي رسول الله صلى الله عليه وسلم جن جي اتباع ۽ اطاعت آهي. جيڪو به شخص سندن آندل نوراني شمع کي مشعل راهه بنائي سندن رستي تي هلندو ڪٿي ڪهڙي به زماني يا ملڪ ۾ هجي، اهو محبت جي دعويٰ ۾ سچو آهي ۽ ان جي محنت ۽ محبت جو بدلو اهو آهي جو الله تعاليٰ پاڻ ان سان محبت رکندو ۽ سندس گناهه بخش ڪندو. ۽ ان جي لاءِ الله تعاليٰ جي ٻانهن ۾ به محبت پيدا ٿيندي. جيئن حديث شريف ۾ رسول الله صلى الله تعاليٰ عليه وسلم جن جو فرمان آهي ته "جڏهن الله تعاليٰ ڪنهن ٻانهي سان محبت رکي ٿو ته جبريل (عليه السلام) کي سڏي فرمائي ٿو ته "مان فلاڻي سان محبت ٿو رکان. تون به ان سان محبت رک." پوءِ جبريل به ان سان محبت ٿو رکي ۽ آسمان ۾ اعلان ٿو ڪري ته "الله تعاليٰ فلاڻي ٻانهي سان محبت ٿو رکي (اي آسمانن وارؤ!) اوهان به ان سان محبت رکو." (ان اعلان کان پوءِ) آسمان وارا ان سان محبت ٿا رکن ۽ زمين ۾ به ان کي مقبوليت ٿي ملي ۽ جڏهن الله ڪنهن ٻانهي سان ناراض ٿو ٿئي ته جبريل کي سڏي فرمائي ٿو "مان فلاڻي ٻانهي تي ناراض آهيان تون به ان سان ناراض رهه" پوءِ جبريل ان تي ناراض ٿو رهي ۽ آسمان ۾ اعلان ڪري ٿو ته "الله فلاڻي ٻانهي سان ناراض آهي اوهان به ان سان ناراض رهو، پوءِ آسمان وارا ان سان ناراض ٿا رهن ۽ ان لاءِ زمين (واريءَ مخلوق) ۾ به ناراضپو رکيو ٿو وڃي." ٻي حديث شريف ۾ آيو آهي ته حضور صلى الله تعاليٰ عليه وسلم جن فرمايو "مَنْ اَرَادَ اَنْ يُّحِبَّهُ اللهُ فَعَلَيْهِ بِصِدْقِ الْحَدِيْثِ وَاَداءِ الْاَمَانَةِ وَاَلَّا يُؤْذِيَ جَارَهٗ" (٣) يعني جيڪو اها خواهش ٿو رکي ته الله ان سان محبت رکي ته اهو سچ ڳالهائڻ ۽ امانت جي ادا ڪرڻ کي لازم ڪري وٺي ۽ پنهنجي پاڙي واري کي نه ايذائي.

---

(١) تفسير ڪبير ص١٧ جزءِ ٨ (٢) زادالمسير ص٣٧٢ جلد ١
(٣) تفسير القرطبي ص٦١ جلد٤

# فائدو

هن آيت مبارڪ ۾ نبوي حديث جي منڪرن جو به رد آهي جيڪي چون ٿا ته اسين صرف قرآن پاڪ کي مڃيون ٿا جيئن پرويزي وغيره. الله تعالىٰ پنهنجي حبيب صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي تابعداريءَ کي فرض قرار ڏنو آهي ۽ اهائي سندن حديث مبارڪ جي اتباع آهي. جيئن هنن حديثن ۾ آهي ته انهن نه مڃڻ وارن جي خبر حضور عليه الصلواة والسلام جن اڳ ۾ ئي ٻڌائي ڇڏي هئي.

## حديث ١

امام احمد، ابوداؤد، ترمذي، ابن ماجه، ابن حبان ۽ حاڪم حضرت ابورافع رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلي الله عليه وسلم جن فرمايو "لَا اَلْفِيَنَّ اَحَدَكُمْ مُتَّكِئًا عَلٰى اَرِيْكَتِهٖ يَاْتِيْهِ الْاَمْرُ مِنْ اَمْرِىْ مِمَّا اَمَرْتُ بِهٖ فَيَقُوْلَ لَا نَدْرِيْ مَا وَجَدْنَا فِي كِتَابِ اللهِ اِتَّبَعْنَاهُ" يعني اوهان مان ڪنهن هڪ کي ان حال ۾ نه ڏسان جو ٽيڪ ڏيو ويٺو هجي، جيڪي امر مان ڪيان انهن مان ڪو امر ان وٽ اچي ته چوي اسان کي ڪا خبر ناهي. جيڪو الله جي ڪتاب ۾ ڏسنداسون ان جي تابعداري ڪنداسون.

## حديث ٢

حضرت ابن عمررضي الله تعالىٰ عنهما کان روايت آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "لَنْ يَّسْتَكْمِلَ مُؤْمِنٌ اِيْمَانَهٗ حَتّٰى يَكُوْنَ هَوَاهُ تَبَعًا لِمَا جِئْتُ بِهٖ" (١) يعني ڪوبه مومن پنهنجي ايمان کي تيستائين ڪامل نه بنائي سگهندو جيستائين سندس خواهشون منهنجي آندل حڪم جون تابع نه ٿينديون.

# فائدو

هن آيت مبارڪ کي "قل" لفظ سان شروع ڪرڻ ۾ سهڻي رسول الله صلى الله عليه وسلم جن سان خطاب آهي. ۽ "اِنْ كُنْتُمْ" ۾ كُنْتُمْ مان مراد الله جي محبت جي .

(١) الدرالمنثور ص١٧٩ جلد ٢

دعويٰ ڪندڙ آهن پوءِ اهي يهودي هجن، عيسائي هجن يا عام انسان هجن. سيني کي حڪم آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن جي تابعداري ڪيو.

## فائدو

محبوب عليه الصلواة والسلام کي "قُلْ" جي لفظ سان خطاب قرآن پاڪ ۾ ڪيترين جاين تي آيل آهي. مگر هي سمجهڻ ضروري آهي تہ "قل" جو مقولو يعني جن ڳالهين جو حڪم ڪيو ٿو وڃي اهي مختلف آهن. ڪا اهڙي ڳالهہ آهي جنهن جي چوڻ جو حق صرف حضور عليہ الصلواة والسلام جن کي آهي. جيئن فرمان آهي "قُلْ اِنَّمَا اَنَا بَشَرٌ مِّثْلُكُمْ" (فرماءِ تہ مان تہ صرف اوهان جهڙو بشر آهيان) حضرت حبيب ڪريم صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن پاڻ کي چيو تہ مان بشر آهيان. اسان کي حق ناهي جو ڪين پاڻ جهڙو سمجهون يا چوندا وتون تہ جهڙو نبي تهڙا اسين. (جيئن هن وقت اها مهم هلائي وئي آهي).

حضرت آدم عليہ الصلواة والسلام ۽ حضرت بيبي حوا رضي الله عنها ڪٺڪ جو داڻو کائڻ کان پوءِ الله تعالىٰ جي بارگاهہ ۾ عرض ڪيو هو تہ "رَبَّنَا ظَلَمْنَا اَنْفُسَنَا وَاِنْ لَّمْ تَغْفِرْ لَنَا وَتَرْحَمْنَا لَنَكُوْنَنَّ مِنَ الْخَاسِرِيْنَ (١) اي اسان جا پالڻهار! اسان پنهنجو پاڻ سان ظلم ڪيو آهي ۽ جي تون اسان کي نہ بخشيندين ۽ اسان تي رحم نہ ڪندين تہ ضرور نقصان وارن مان ٿي پونداسين.

هن آيت مان ثابت ٿيو تہ الله تعالىٰ جي نبي حضرت آدم عليه الصلواة والسلام پاڻ کي ظالم سڏيو پر ڪو بہ حلالي پٽ حضرت آدم عليہ الصلواة والسلام لاءِ نہ چوندو تہ اهو ظالم هو. حضرت يونس عليہ الصلواة والسلام جڏهن مڇيءَ جي پيٽ ۾ هو تہ فرمايائين "لَآاِلٰهَ اِلَّآ اَنْتَ سُبْحَانَكَ اِنِّيْ كُنْتُ مِنَ الظّٰلِمِيْنَ" (٢) توکان سواءِ ڪوبہ سچو معبود ناهي تون پاڪ آهين بيشڪ مان ظالمن مان هوس. ڇا ڪو سچو مسلمان اها جرات رکندو جو چوي تہ (معاذالله) حضرت يونس عليه الصلواة والسلام ظالم هو؟ نہ ڪڏهن بہ نہ. حالانڪ ٻنهي آيتن ۾ ٻنهي نبين عليهما الصلواة والسلام جا پنهنجي لاءِ اهي الفاظ استعمال ڪيل آهن. ڪڏهن "قل" سان ڪنهن ڳالهہ جو حڪم ڪرائي ٿين ڪان بہ اها ڳالهہ چورائي ويندي آهي. جيئن ارشاد رباني آهي "قُلْ

(١) سورة الاعراف آيت ٢٣ (٢) سورة الانبياءِ آيت ٨٧

هُوَ اللّٰهُ اَحَدٌ" فرماءِ (اي حبيب!) شان هي آهي تہ الله هڪ آهي. اهو الله جل جلالہ جي توحيد جو اقرارحضور عليہ الصلواۃ والسلام جن سان گڏ سندن امت کي بہ ڪرڻو آهي. سمجهڻ گهرجي تہ "قل اِنْ کُنْتُمْ "۾ اتباع لاءِ سڏڻ صرف حضور عليہ الصلواۃ والسلام جن جو مقام آهي اهي پنهنجي تابعداريءَ لاءِ سڏي سگهن ٿا ٻيو ڪوبہ پنهنجي تابعداريءَ لاءِ نہ ٿو سڏي سگهي. حضور صلي الله عليہ وسلم جن جو هر حڪم شريعت آهي جنهن تي عمل ڪرڻ امت لاءِ اهم آهي. شريعت نالو ئي مصطفوي فرمان جو آهي.

## مسئلو

جيڪڏهن رسول الله صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن قرآن پاڪ جي عام حڪم ۾ تخصيص ڪن تہ ڪري سگهن ٿا. جيئن قرآن پاڪ جي حڪم مطابق هڪ مرد هڪ ئي وقت چار زالون نڪاح ۾ رکي تہ جائز آهي پر رسول الله صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن حضرت علي رضي الله تعالىٰ عنہ کي سيده فاطمہ زهرىٰ رضي الله تعالىٰ عنها جي هوندي ٻيءَ شاديءَ جي موڪل نہ ڏني.

## اطاعت ۽ اتباع ڇا آهي؟

ڪنهن جي احترام ۽ تعظيم کي لحاظ ۾ رکندي ان جي ڪم جهڙو ڪم ڪرڻ اطاعت آهي. حضور صلي الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جي ذات اقدس جمال ۽ ڪمال جو اهڙو پيڪر آهي جنهن کان وڌيڪ حسين ۽ جميل شيءِ جو تصور بہ نہ ٿو ڪري سگهجي. اسين سندن ڪمن جهڙا ڪم صرف ان جي ڪري ڪيون جو پاڻ اهي ڪيا اٿن اها الله کي راضي ڪرڻ واري شيءِ آهي ۽ اتباع پويان پويان اچڻ کي چئبو آهي برابري ڪندڙ يا اڳيان هلڻ وارو ڪمال حاصل ڪري نہ ٿو سگهي ڪمال ان کي حاصل ٿيندو جيڪو سندن غلامي قبولي همسريءَ ۽ برابريءَ جي سوچ بہ نہ رکي. حضور صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جا ڪم چار قسم آهن.

١- هڪ فرض ٢- ٻيا واجب ٣- ٽيون تاڪيدي سنتون ۴- چوٿون مستحبّ ۽ عاداتي سنتون. جن کي سنن زوائد بہ سڏيو ويندو آهي. صرف فرضن ۽ واجبن ۾ تابعداري ڪرڻ کي اتباع ناقص سڏبو. ڪامل اتباع سندن سيني ڪمن ۾ تابعداري ڪرڻ آهي ۽ جيڪو جيتري ڪامل تابعداري ڪندو اهو اوتري اعلىٰ درجي جي

محبوبيت ماڻيندو. اطاعت ٻه قسم آهي ١- هڪڙي ڊپ ۽ لالچ جي ڪري ٢- ٻي محبت جي ڪري. هتي اطاعت مان مراد محبت واري اطاعت آهي.

"قُلْ اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ" (فرماءِ ته الله ۽ رسول جي اطاعت ڪيو) هنن لفظن ۾ به انهن ئي ماڻهن لاءِ سبق آهي جيڪي وڏيءَ سرگرميءَ سان اها تحريڪ پيا هلائن ته صرف قرآن ڪريم جي تابعداري ڪيو نبوي سنت جي ڪا ضرورت ناهي. هنن آيتن جي هوندي قرآن ڪريم آڏيندڙ محبوب عليه الصلواة والسلام جي سنتن ۽ حديثن جو انڪار ممڪن ئي ناهي. ڪيترين آيتن ۾ آهي ته نبي جي سڌ ڪي جيءُ چئو. نبي صلى الله عليه وسلم جن اوهان لاءِ "اُسْوَةٌ حَسَنَةٌ" سهڻو نمونو آهن. سندن سهڻن اخلاقن ۽ پاڪيزه عادتن جو علم حديث پاڪ جي ذريعي حاصل ٿيندو آهي جنهن جو انڪار ڪرڻ بي حيائيءَ کان سواءِ ڪجھ به ناهي.

## فائدو

هن آيت مبارڪ مان ثابت ٿيو ته حضور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن الله تعالىٰ جا نهايت پيارا ۽ اعلىٰ محبوبيت جا مالڪ آهن ڇوته جڏهن سندن تابعداري ڪندڙن سان "يُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ" (اوهان سان الله محبت رکندو) جو وعدو آهي ته سندن ذات جي محبوبيت جو مقام ڇا هوندو؟

## فائدو

جيڪو ماڻهو رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن سان محبت جي دعوىٰ ڪري ٿو پر سندن سنت جي مخالفت ٿو ڪري اهو قرآن ڪريم جي هن آيت جي فيصلي موجب دعوىٰ ۾ ڪوڙو آهي عشق جو قانون ۽ محبت جي تقاضا آهي ته عاشق کي معشوق ۽ محب کي محبوب جي هر ادا، انداز، سيرت، صورت، غلام، وطن، ملڪ، محلو، در ۽ ديوارون پياريون لڳنديون آهن.

## فائدو

اتباع ۽ اطاعت ۾ فرق آهي. اتباع خاص ۽ اطاعت عام آهي انهيءَ جي ڪري الله تعالىٰ جي محبوبيت اتباع سان خاص ڪئي وئي آهي. اطاعت الله جل شانه

جي، حضور صلی الله عليہ وسلم جن جي، وقت جي حاڪمن جي، مرشدن جي، ماءُ، پيءُ جي ۽ استاد جي ٿي سگهي ٿي پر اتباع صرف نبي ڪريم صلی الله عليہ وسلم جن جي ٿيندي. اتباع ڪنهن جو عمل ڏسي ان جهڙي عمل ڪرڻ کي چئبو آهي الله تعالیٰ کي ڪير ڏسي ڪونہ ٿو سگهي جو ان جي عمل کي ڏسي ان جهڙو عمل ڪري پر الله جل شانه جي محبوب عليہ الصلواة والسلام جي عمل کي ڏسي ان جهڙو عمل ڪرڻ ممڪن آهي ان جي ڪري "فَاتَّبِعُوْنِيْ" ۾ سندن ئي اتباع جو حڪم مليو ۽ اطاعت لاءِ حڪم آيو "اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ وَاُولِى الْاَمْرِ مِنْكُمْ" (الله جي اطاعت ڪيو ۽ رسول جي اطاعت ڪيو ۽ امر جي صاحبن جي اطاعت ڪيو) ٻنهي آيتن تي غور ڪرڻ سان فرق ظاهر آهي جنهن جو سمجهڻ ۽ ذهن نشين ڪرڻ ضروري آهي.

## فائدو

صرف حضور صلی الله عليہ وسلم جن جي اتباع (تابعداري ڪرڻ) ۾ سندن محبت رکڻ ئي الله تعالیٰ وٽ پهچڻ جو ذريعو آهي سندن رستي کان سواءِ ڪوبہ رستو خطري کان خالي ناهي. رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو آهي تہ "وَلَوْ كَانَ مُوْسٰى حَيًّا لَمَا وَسِعَهٗ اِلَّا اتِّبَاعِىْ" (١) جيڪڏهن موسیٰ (عليه الصلواة والسلام هن وقت ظاهري طرح دنيا تي) جيئرو هجي ها تہ ان کي بہ منهنجي اتباع کان سواءِ ڪو عمل ڪرڻ جائز نہ هجي ها. حضور صلي الله عليہ وسلم جن جي اطاعت ۽ اتباع سان دنيا ۾ ايمان، يقين، الله جي محبوبيت، آخرت ۾ عذاب کان ڇوٽڪارو، جنت ۽ جنت ۾ الله تعالیٰ جو ديدار نصيب ٿيندو. تنهن جي ڪري ئي تہ سيدنا عبدالقادر جيلاني عليه الرحمة فرمايو:

وكل ولي لہ قدم واني
عليٰ قدم النبي بدر الكمال (٢)

يعني الله تعالیٰ جو هر ولي ڪنهن نہ ڪنهن (نبي) جي قدم تي هوندو آهي ۽ مان ڪمال واري، چوڏهينءَ جي چنڊ (حضور صلی الله عليہ وسلم جن) جي قدم تي آهيان. سندن ڪمالات، ڪرامتون، فيض ۽ فضيلتون سڀ حضور پرنور صلی الله تعالیٰ عليہ وسلم جن جي اتباع جي صدقي هيون ۽ آهن.

(١) رواه احمد والبيهقي في شعب الايمان مشكواة ص٣٠
(٢) التحفة المرضية شرح القصيدة الغوثية ص٥٨

# فائدو

حضور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي محبت سندن قول، فعل، عمل، اخلاق، احوال، سيرت ۽ عقيدن تي هلڻ سان حاصل ٿيندي پاڻ ئي محبت جا مظهر ۽ قطب آهن ۽ محبت سندن طريقي مبارڪ جو نالو آهي، جيڪو سندن نقش قدم تي نہ هلندو ان کي محبت مان حصو نہ ملندو ۽ جڏهن ڪو ماڻهو سندن باطن، سر ۽ قلب سان مناسبت پيدا ڪري سندن تابعداري ڪندو تہ سندس باطن نبوي نور مان منور ٿيندو ۽ ان کي الله تعالىٰ جي محبت مان حصو عطا ٿيندو.

رسول الله صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو تہ "كُلُّ اُمَّتِيْ يَدْخُلُوْنَ الْجَنَّةَ اِلَّا مَنْ اَبىٰ قَالُوْا وَمَنْ يَّابىٰ يَا رَسُوْلَ اللهِ؟ قَالَ مَنْ اَطَاعَنِيْ دَخَلَ الْجَنَّةَ وَمَنْ عَصَانِيْ فَقَدْ اَبىٰ" يعني منهنجا سڀ امتي جنت ۾ داخل ٿيندا مگر جنهن انڪار ڪيو (اهو جنت ۾ داخل نہ ٿيندو) (ٻڌڻ وارن) عرض ڪيو تہ يا رسول الله! ڪير انڪار ڪندو؟ فرمايائون "جنهن منهنجي اطاعت ڪئي اهو جنت ۾ داخل ٿيندو ۽ جنهن بي فرماني ڪئي ان انڪار ڪيو يعني بي فرماني ڪرڻ انڪار ڪرڻ آهي. ٻيءَ حديث شريف ۾ آهي تہ رسول الله صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو "مَنْ اَطَاعَ مُحَمَّداً فَقَدْ اَطَاعَ اللهَ وَمَنْ عَصىٰ مُحَمَّداً فَقَدْ عَصَى اللهَ وَمُحَمَّدٌ فَرَقٌ بَيْنَ النَّاسِ" (رواه البخاري) يعني جنهن محمد (ﷺ) جي اطاعت ڪئي ان الله جي اطاعت ڪئي ۽ جنهن محمد (ﷺ) جي بي فرماني ڪئي ان الله جي بي فرماني ڪئي ۽ محمد (ﷺ) ماڻهن ۾ (حق ۽ ناحق ۾) فرق ڪرڻ واري ذات آهي. (١)

حضرت جابر رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آهي تہ ملائڪ رسول الله صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي خدمت ۾ آيا ۽ پاڻ آرامي هئا. انهن ملائڪن مان ڪن چيو تہ ننڊ ۾ آهي ڪن چيو تہ اکيون ننڊ ۾ ۽ دل سجاڳ اٿس پوءِ پاڻ ۾ چوڻ لڳا تہ هن صاحب جو مثال تہ ٻڌايو ڪيئن آهي؟ چيائون تہ "هن جو مثال ان مرد وانگر آهي جنهن هڪ دار (وڏي ڪوٺ سان نهرايل جاءِ) نهرائي، ان ۾ دعوت جو انتظام ڪري ۽ دعوت لاءِ سڏيندڙ کي موڪليو پوءِ جيڪو ان سڏيندڙ جي سڏ کي قبول ڪري ان دار ۾ ايندو تہ کاڌو کائيندو ۽ جنهن ان سڏيندڙ جي سڏ کي قبول نہ ڪيو تہ نہ دار ۾ داخل ٿيندو ۽ نہ

(١) تفسير مظهري ص٣٩ جلد٢

ڪاڏو ڪائيندو، پوءِ پاڻ ۾ چوڻ لڳا تہ ڪولي بيان ڪيو تہ سمجھ ۾ اچي چيائون تہ دار (وڏي ڪوٽ سان نهيل جاءِ) بهشت آهي ان ڏانهن سڏيندڙ (حضرت محمد (ﷺ) آهي جنهن ان جي تابعداري ڪئي ان الله جي تابعداري ڪئي ۽ جنهن ان جي بي فرماني ڪئي ان الله تعالىٰ جي بي فرماني ڪئي.

## نقل

علامہ اسماعيل حقي عليه الرحمة لکيو آهي تہ هڪ ڀيري سلطان محمود غزنويؒ عليه الرحمة پنهنجي مرشد ۽ الله تعالىٰ جي پياري ولي حضرت ابوالحسن خرقانيؒ عليه الرحمة جي خدمت ۾ حاضر ٿي عرض ڪيو تہ مرشد سائين! حضرت بايزيد بسطامي عليه الرحمة لاءِ ڇا ٿا چئو؟ڪهڙي مرتبي وارو هو؟ حضرت ابوالحسن خرقاني عليه الرحمة فرمايو تہ "اهو اهڙي هستي هو جنهن بہ ان جي زيارت ڪئي تہ هدايت وارو ٿيو ۽ سعادتمند بڻيو. سلطان محمود عرض ڪيو تہ: قبلا! ابوجهل حضور عليه السلام جن کي ڏٺو تہ بہ هدايت وارو نہ ٿيو تہ حضرت بايزيد جي ڏسڻ وارو هر شخص ڪيئن هدايت وارو ۽ سعادتمند ٿيندو؟ خواجہ ابو الحسن خرقاني عليه الرحمة فرمايو تہ ابوجهل نياڳي حضرت رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن کي ڏٺو ئي ڪو نہ هو. جيئن قرآن پاڪ ۾ الله تعالىٰ جو فرمان آهي "تَرَاهُمْ يَنْظُرُوْنَ اِلَيْکَ وَهُمْ لَا يُبْصِرُوْنَ" (١) يعني" انهن کي ڏسندؤ تہ اوهان ڏانهن نهارين پيا ۽ اهي اوهان کي ڏسن ڪو نہ ٿا. ابوجهل حضور ﷺ جن کي صرف محمد بن عبدالله سمجهي ڏٺو هو ڪين الله جو رسول (ﷺ) سمجهي ڏسي ها تہ هدايت وارو ٿئي ها. (٢) حضرت سهل بن عبدالله التستري عليه الرحمة جو فرمان آهي تہ الله تعالىٰ جي محبت جي نشاني قرآن ڪريم جي محبت آهي ۽ قرآن ڪريم سان محبت جي نشاني رسول الله صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن سان محبت آهي ۽ رسول الله ﷺ جن سان محبت جي نشاني سندن سنتن سان محبت آهي ۽ انهن سيني محبتن جي نشاني آخرت جي محبت آهي ۽ آخرت سان محبت جي نشاني پنهنجو پاڻ سان محبت جي نشاني آهي ۽ پاڻ سان محبت جي نشاني دنيا سان بغض رکڻ آهي ۽ دنيا سان بغض رکڻ جي نشاني اها آهي تہ ان مان صرف ضرورت آهر (ڪائڻ، پيئڻ، پائڻ، سواري وغيره) رکي وڌيڪ نہ رکي (٣)

(١) سورة الاعراف آيت ١٩٨ (٢) روح البيان ص٢٤ ج٢ (٣) تفسير قرطبي ص٦٣ ج٤

إِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰىٓ اٰدَمَ وَنُوْحًا وَّاٰلَ اِبْرٰهِيْمَ وَاٰلَ عِمْرٰنَ عَلَى

بيشـڪ الله برگـزيدو بنايـو آدم ۽ نوح ۽ ابـراهيـم جي گهـراڻي ۽ عمـران جي گهـراڻي کـي

الْعٰلَمِيْنَ ﴿٣٣﴾ ذُرِّيَّةًۢ بَعْضُهَا مِنْۢ بَعْضٍ ۗ وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ﴿٣٤﴾

جهانن تي-اولاد آهي بعض انهن مان بعض جو ۽ الله ٻڌندڙ، ڄاڻندڙ آهي

## شان نزول

حضرت عبدالله بن عباس رضي الله تعالىٰ عنهما فرمايو آهي تہ يهوديـن چيو تہ اسين حضرت ابراهيم حضرت اسحاق ۽ حضرت يعقوب عليهم الصلواة والسلام جن جو اولاد ۽ انهن جي دين تي سچيءَ دل سان پائبند آهيون تڏهن الله تعالىٰ هيءَ آيت نازل ڪري ارشاد فرمايو تہ الله تعالىٰ انهن ٻانهن کي اسلام سان برگزيدو ۽ بلند بنايـو هو ۽ اوهان اسلام کان صفا باغي، پري ۽ اسلام جا منکر آهيو (١) اوهان اها دعويٰ ڪيئن ٿا ڪيو؟ ۽ بين مفسرن جو چوڻ آهي تہ عيسائيـن چيـو هو تـہ (حضرت) عيسىٰ الله يا الله جو پٽ آهي الله تعالىٰ انهن جي رد ۾ هيءَ آيت نـازل ڪـري فـرمـايـو تـہ "الله تعالىٰ ڪيترن ئي ٻانهن کي برگزيدو بنايو آهي ۽ حضرت عيسىٰ عليه السلام بہ ان جي پيارن ٻانهن مان هڪ ٻانهو آهي. (٢) نہ الله آهي نہ الله جو پٽ.

"إِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰىٓ" الله برگزيدو بنايو- اصطفىٰ ماضيءَ جو صيغو اصطفاء کان ورتل آهي معنيٰ برگزيدو بنائڻ- هتي ان مان مراد نبوت واريءَ نعمت سان نوازڻ ۽ ان لاءِ منتخب ڪرڻ آهي. الله جل جلاله جي مخلوق ۾ زمين، آسمان، سج، چنڊ، تارا، ملائڪ، جن، وڻ، پٿر مطلب تہ هر شيءِ شامل هئي، پر الله تبارڪ وتعالىٰ پنهنجي بي حساب علم ۽ بالغ حڪمت سان جيڪي روحاني ۽ جسماني ڪمال حضرت آدم عليه الصلواة والسلام ۾ رکايا هئا اهي عام مخلوق کي حاصل نہ هئا ڪيس نوري ملائڪن کان سجدو ڪرائي ثابت ڪيو ويو تہ ٻاڻ عزت ۽ عظمت ۾ ڪيترن کان

(١) تفسير خازن ص ٢٢٩ جلد١ (٢) البحر المحيط ص٤٣٤ جلد٢

گهٽو مٽي آهي. حضرت آدم عليه السلام کي عطا ڪيل اهو علم ۽ نبوت صرف سندس شخصيت ۽ ذات تي منحصر نہ هيا پر ان کان منتقل ٿي سندس اولاد مان حضرت نوح عليه السلام، حضرت ابراهيم عليه السلام، انهن جي اولاد ۽ عمران جي اولاد کي بہ عطا ٿيا.

## سوال

هن آيت ۾ الله تعاليٰ حضرت آدم، حضرت نوح ۽ حضرت ابراهيم عليهم السلام جا نالا مبارڪ ذڪر ڪري بيان ڪيو تہ اهي برگزيدا ٿيا هئا پر اسان جي پياري نبي صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن جو نالو مبارڪ ڇو نہ آندو ويو؟

## جواب

ان سوال جو جواب علامه قرطبيءَ هنن لفظن سان ڏنو آهي. فاما محمد صلي الله عليه وسلم فقد جازت مرتبته الاصطفاء لانه حبيب ورحمة قال الله تعالىٰ "وَمَآ اَرْسَلْنٰكَ اِلَّا رَحْمَةً لِّلْعٰلَمِيْنَ" فالرسل خلقوا للرحمة وهو خلق بنفسه رحمة فلذالک صارا مانا للخلق لما بعثه الله امن الخلق العذاب الي نفخة الصور وسائر الانبياء لم يحلوا هذا المحل لذالک قال عليه السلام "انا رحمة مهداة" (١) يعني حضرت محمد ﷺ جن هن آيت ۾ ذڪر ڪيل اصطفاء (برگزيدي هجڻ) کان مٿاهين مرتبي تي پهتل آهن، ڇو تہ پاڻ حبيب ۽ رحمت آهن جيئن الله تعاليٰ فرمايو آهي "۽ اسان توکي سڀني جهانن لاءِ رحمت ڪري موڪليو آهي" جڏهن الله تعاليٰ کين دنيا تي موڪليو تہ قيامت جي اچڻ تائين الله تعاليٰ جي مخلوق عام عذاب کان امن ۾ رهي ۽ ٻيا انبياء عليهم السلام ان مرتبي کي نہ پهتا هئا. ٻيا انبياء عليهم الصلواة والسلام رحمت حاصل ڪرڻ لاءِ پيدا ڪيا ويا ۽ حضور صلى الله تعاليٰ عليه وسلم جن جو وجود مسعود پاڻ ئي رحمت آهي ان جي ڪري پاڻ فرمايو اٿن تہ "مان (الله تعاليٰ جي طرفان) هديو ڪري ڏنل رحمت آهيان." هن آيت ۾ الله تعاليٰ حضرت آدم عليه الصلواة والسلام ۽ حضرت نوح عليه الصلواة والسلام جا نالا مبارڪ آندا آهن. حضرت آدم جي نالي جي معنيٰ سوره بقره جي آيت ٢٣ جي تفسير ۾ بيان ٿي چڪي

(١) تفسير القرطبي ص٦٣ جلد٤

آهي. الله تعالىٰ حضرت آدم عليه السلام کي پنجن شين سان برگزيدو بنايو
١- هڪ تہ الله جل شانه کيس پنهنجي قدرتي هٿ سان تمام سهڻي صورت ۾ پيدا فرمايو
٢- ٻيو تہ کيس سيني شين جي نالن جو علم عطا ڪيو ويو.
٣- ٽيون تہ ملائڪن جهڙي پياري ۽ نوري مخلوق کان کيس سجدو ڪرايو ويو.
۴- چوٿون تہ کيس پيدا ڪرڻ کان پوءِ جنت ۾ رهايو ويو.
۵- پنجون تہ سندس ئي نسل مان قيامت تائين اچڻ وارن انسانن کي وجود ڏنو ويو.

حضرت نوح عليه السلام- هن نالي مبارڪ جي متعلق ٻہ قول آهن. ١- هڪ تہ اهو ناح، ينوح کان ورتل آهي. معنيٰ روئندڙ، پاڻ الله تعالىٰ جي خوف کان گهڻو روئندو هو. ٢- ٻيو تہ نوح عجمي نالو آهي، ٽن حرفن هجڻ جي ڪري منصرف آهي. سندس آمد ڪڏهن ٿي. مفسر قرطبيءَ جو قول آهي تہ حضرت آدم عليه الصلواة والسلام جن کان پوءِ اهو پهريون رسول (عليه السلام) آهي. جيڪي تاريخون لکن ٿيون تہ حضرت ادريس عليہ السلام حضرت نوح عليه السلام کان اول آيو هو علامہ موصوف انهن جي قول کي رد ڪندي لکيو آهي تہ ومن قال ان ادريس کان قبله من المؤرخين فقد وهم (١) يعني جن تاريخدانن جو چوڻ آهي تہ حضرت ادريس حضرت نوح عليهما السلام کان اڳ ۾ هو اهو انهن جو وهم آهي. حضرت نوح عليه السلام جن کي ٻہ پنجن نعمتن سان برگزيدو بنايو ويو.

١- هڪ تہ سندس وقت ۾ آيل طوفان کان پوءِ صرف پاڻ ۽ کيس سچو مڃيندڙ سندس اولاد بچيو هو ۽ هي انسان سڀ سندس اولاد مان آهن ان جي ڪري پاڻ حضرت آدم عليه الصلواة والسلام وانگر ابوالبشر بڻيو.
٢- ٻيو تہ الله جل شانہ کيس وڏي ڄمار عطا ڪئي هئي جنهن ۾ گهڻا سهڻا عمل ڪرڻ ۽ الله جي دين لاءِ تڪليفون گهٽيون ڏسڻ جي ڪري وڏو درجو ۽ ثواب حاصل ڪيائين.
٣- ٽيون تہ مومنن جي بچڻ ۽ ڪافرن کي تباهہ ڪرڻ لاءِ سندس دعا

(١) القرطبي ص٢٢ جلد۴

قبول ڪئي وئي
۴- چوٿون تہ سندس اچڻ کان پوءِ اڳين حڪمن مان ڪجھہ حڪم منسوخ ڪيا ويا.
۵- پنجون تہ ڪيس ۽ سندس مڃڻ وارن کي ٻيڙيءَ ۾ سوار ڪري ٻڏڻ کان بچايو ويو.
"آلَ اِبْرَاهِيْمَ" ۾ الله تعاليٰ حضرت ابراهيم ۽ ان جي اولاد کي برگزيده بنائڻ جو ذڪر ڪيو آهي. انهن کي بہ پنجن نعمتن سان نوازيو ويو.
١- هڪ تہ حضرت ابراهيم عليه السلام کي نبين عليهم الصلواة والسلام جو پيءُ بنايو ويو. ڪيترا انبياءِ عليهم السلام سندس اولاد مان آهن.
٢- ٻيو تہ "وَاتَّخَذَاللهُ اِبْرَاهِيْمَ خَلِيْلًا" چئي الله تعاليٰ ڪيس پنهنجو خليل بنائڻ جو اعلان فرمايو.
٣- ٽيون تہ جڏهن ڪيس باهہ ۾ اڇلايو ويو تہ الله تعاليٰ ان باهہ مان باغ بنايو
۴- چوٿون تہ الله تعاليٰ ڪيس بعد ۾ اچڻ وارن ماڻهن جي لاءِ اڳواڻ بنايو. جيئن قرآن پاڪ ۾ آهي" اِنِّيْ جَاعِلُکَ لِلنَّاسِ اِمَامًا" مان توکي ماڻهن جو امام ٿو بنايان.
۵- پنجون تہ الله تعاليٰ ڪيس مختلف نمونن جي امتحانن سان آزمائي ڪامياب قرار ڏنو.

## آل عمران

عمران مان مراد جيڪڏهن حضرت موسيٰ عليه السلام جو والد آهي تہ ان جي آل مان مراد حضرت موسيٰ عليه السلام آهي الله تعاليٰ ان کي برگزيدو بنائي پنهنجو ڪليم ڪيو ان جي دعا سان سندس امت تي من ۽ سلويٰ لاٿائين، جيڪي ڪنهن بہ نبي جي امت کي نہ مليا هئا ۽ جيڪڏهن عمران مان مراد بي بي مريم ﷺ ڀلاريءَ جو والد آهي تہ آل مان مراد بيبي مريم سائڻ پاڻ آهي ان کي بہ الله تعاليٰ برگزيده بنايو جو ڪيس حضرت عيسيٰ عليه السلام جهڙو پاڪ پٽ، مڙس کان سواءِ مليو. ڪيس اڻ منداٽتا ميوا ملندا هئا. سندس هٿ مبارڪ جي برڪت سان ڪجيءَ جي ٿڙ مان سندس ڪائڻ

لاءِ ڪجور ڪري پئي. اڪثر مفسرن هتي عمران مان مراد بيبي مريم سائڻ جو والد عمران بن ماثان ورتو آهي جيڪو سيدنا سليمان عليه السلام جي اولاد مان هو. "اِذْ قَالَتِ امْرَاَةُ عِمْرَانَ" سان به ان ئي گهراڻي جو قصو بيان ٿي رهيو آهي ۽ سورة جو نالو آل عمران به ان جي ڪري رکيو ويو آهي جو حضرت بيبي مريم ۽ حضرت عيسىٰ عليهما السلام جن جو قصو ان ۾ تفصيل سان بيان ٿيل آهي.

"ذُرِّيَّةً بَعْضُهَا مِنْۢ بَعْضٍ" يعني هڪٻئي مان اولاد آهن جيئن حضرت نوح عليه السلام حضرت آدم عليه السلام جي اولاد مان ۽ حضرت ابراهيم عليه السلام حضرت نوح عليه السلام جي اولاد مان ۽ ڪيترا نبي حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جي اولاد مان آيا هيا.

"وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ" ۽ الله ٻڌندڙ، ڄاڻندڙ آهي. جيڪو سيني جون ڳالهيون ۽ دعائون ٻڌي ۽ سيني جا ظاهري ۽ باطني احوال ۽ استعداد ڄاڻي ٿو. تنهن جي ڪري اهو وهم ئي نه ڪجي ته انهيءَ جو ٻانهن کي برگزيدو ۽ منتخب بنائڻ جيئن تيئن هوندو بلڪ سندس، هر حڪم علم ۽ حڪمت تي ٻڌل هوندو آهي.

## هن آيت مان حاصل ٿيندڙ فائدا

### فائدو ١

اهو يقين ۽ پڪو عقيدو رکڻ گهرجي ته الله تعالىٰ جو هر سچو نبي عليه السلام غير نبي کان ڀلو آهي اهو غير نبي ڀلي غوث يا قطب يا ڪنهن ٻئي مرتبي تي پهتل هجي پر الله جل شانه جي نبي جهڙو نه ٿي سگهندو .

### فائدو ٢

نياڻيءَ جو اولاد به آل ۾ داخل آهي حضرت عيسىٰ عليه السلام عمران جي نياڻيءَ مريم سائڻ جو پٽ هو پر ان کي الله تعالىٰ آل عمران ڪري سڏيو آهي. انهيءَ جي ڪري سيده فاطمه زهراءِ رضي الله عنها جو اولاد به حضور ﷺ جن جي آل ۾ داخل آهي.

## فائدو ٣

مخلوق ٻہ قسم آهي ١- هڪ مڪلف (شريعت تي عمل ڪرڻ لاءِ تڪليف ڏنل) ٢- ٻي غير مڪلف (شريعت تي عمل ڪرڻ لاءِ تڪليف نہ ڏنل) مڪلف غير مڪلف کان ڀلي آهي علماءِ ڪرام جو متفق عليه قول آهي تہ مڪلف مخلوق چار قسم آهي. ١- هڪڙا ملائڪ ٢- ٻيا انسان ٣- ٽيان جن ۴- چوٿان شيطان- ملائڪ هر گناهہ کان پاڪ ۽ آسمانن جا رهاڪو آهن. شيطان ڪافر ۽ انسانن جا دشمن آهن. جنن مان ڪي ڪافر تہ ڪي مسلمان آهن. انسان سيئي حضرت آدم عليه السلام جو اولاد آهن. هن ڳالهہ تي بہ علماءِ دين جو اتفاق آهي تہ جنن ۽ شيطانن کان انسان ڀلا آهن پر ملائڪن کان ڀلا آهن يا نہ ان ۾ ٻہ قول آهن ١- هڪ تہ انسان ملائڪن کان ڀلا آهن ائين چوڻ وارن جو دليل آيت مبارڪ "اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰٓى اٰدَمَ وَنُوْحًا وَّاٰلَ اِبْرٰهِيْمَ وَاٰلَ عِمْرٰنَ عَلَى الْعٰلَمِيْنَ" آهي جنهن ۾ انهن ڀلارن کي جهانن کان ڀلو ۽ برگزيدو سڏيو ويو آهي ۽ اهي جڏهن تہ انساني نوع مان آهن ان جي ڪري انهن جو ملائڪن کان ڀلو هجڻ انسان جي نوع جو ڀلو هجڻ آهي.

## فائدو

امام ابو عبدالله حسين الحليمي پنهنجي ڪتاب المنهاج ۾ لکيو آهي تہ الله جل جلاله جا نبي عليهم الصلواة والسلام ٻين ماڻهن کان جسماني ۽ روحاني قوت ۾ نرالا آهن. جسماني قوتون ٻہ قسم آهن. ١- هڪڙيون مدرڪہ (جن سان ڪن شين کي پروڙي سگهجي انهن کي انساني حواس بہ سڏيو ويندو آهي. ٢- ٻيون محرڪہ (انهن کي اپاريندڙ ۽ مٿي ڪندڙ.)

مدرڪه قوتون يعني حواس ٻہ قسم آهن ١- هڪڙا ظاهري ٢- ٻيا باطني ظاهري پنج آهن.

١- هڪ قوت باصره (ڏسڻ واري قوت) جيڪا الله تعالىٰ پنهنجي حبيب عليه الصلواة والسلام جن کي ٻين کان نرالي عطا ڪئي آهي. حضرت ثوبان رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو: "اِنَّ

اللّٰهَ زَوَيٰ لِيَ الْاَرْضَ فَرَئَيْتُ مَشَارِقَهَا وَمَغَارِبَهَا " الحديث (١) يعني "بيشڪ الله مون لاءِ زمين ويڙهي گڏ ڪئي تانجو ان جا اوڀر ۽ اولهه ڏٺم." هن حديث شريف جو شرح ڪندي علامه حسين بن محمد بن عبدالله الطيبي لکيو آهي ته ومعناه ان الارض زويت لي جملتها مرة واحده فرئيت مشارقها ومغاربها (٢) يعني ان جي معنيٰ آهي ته "مون لاءِ ساري زمين هڪ ئي ڀيري ۾ گڏ ڪري، ويڙهي ڏيکاري ويئي ۽ مون ان جا اوڀر ۽ اولهه سڀ ڏٺا." علامه علي قاري عليه الرحمة لکيو آهي ته" فَرَءَيْتُ مَشَارِقَهَا وَمَغَارِبَهَا" اي جميعها (٣) يعني ساري زمين ڏٺم.

حضرت انس رضي الله عنه کان روايت آهي ته رسول الله صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن نماز ۾ جماعت کي فرمائيندا هئا. "اِسْتَوُوْا، اِسْتَوُوْا، اِسْتَوُوْا، فَوَالَّذِيْ نَفْسِيْ بِيَدِهٖ اِنِّي لَاَرَاكُمْ مِّنْ خَلْفِيْ كَمَا اَرَاكُمْ مِّنْ بَيْنِ يَدَيَّ" يعني برابر ٿي بيهو، برابر ٿي بيهو، برابر ٿي بيهو، قسم آهي ان پاڪ ذات جو جنهن جي قدرتي هٿ ۾ منهنجو ساهه آهي ته مان اوهان کي جيئن پنهنجي اڳيان بيٺل ڏسان ٿو تئين پويان به ڏسان ٿو. علامه علي قاريءَ لکيو آهي ته بالمشاهدة او المكاشفة (۴) مشاهدي سان يا مڪاشفي سان. ام المومنين سيده عائشه رضي الله تعالىٰ عنها کان روايت آهي ته کان رسول الله صلى الله عليه وسلم يري في الظلماء كما يري في الضوء (٥) يعني رسول الله ﷺ جن اونداهيءَ ۾ به ائين ڏسندا هئا جيئن روشنيءَ ۾ ڏسندا هئا. علامه زرقانيءَ لکيو آهي ته انما كان يبصر من خلفه لانه كان يري من كل جهة (٦) يعني حضور ﷺ جن پويان ان جي ڪري ڏسندا هيا جو پاڻ هر جهت يعني چئني پاسن کان ڏسندا هئا. حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جن لاءِ الله تعالىٰ فرمايو: "وَكَذٰلِكَ نُرِيْٓ اِبْرٰهِيْمَ مَلَكُوْتَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَلِيَكُوْنَ مِنَ الْمُوْقِنِيْنَ "(٧) ۽ اهڙي طرح ڏيکاري سون ابراهيم کي آسمانن ۽ زمين جي بادشاهي ۽ تان ته اهو يقين وارن مان هجي. مفسرن لکيو آهي ته حضرت ابراهيم عليه السلام کي هڪ پٿر تي بيهاري حڪم ڪيو ويو ته مٿي نهار پاڻ مٿي نگاهه ڪنيائون ته عرش، ڪرسي، لوح، قلم غرض ته سيئي آسماني شيون تانجو جنت ۾ پنهنجو مقام به ڏنائون وري حڪم ٿيو ته "هيٺ نهاريو" هيٺ نگاهه ڪيائون ته

(١) مشكواة المصابيح ص٥١٢ باب فضائل النبي ﷺ
(٢) الكاشف عن حقائق السنن ص٣۴۴ جلد ١٠
(٣) مرقاة ص٣٦١ ج٥ (۴) مرقاة ص٨٢ جلد ٧ (٥) مواهب اللدنيه ص٢٢٦ ج٢
(٦) زرقاني شرح المواهب ص٨۴ ج۴ (٧) سوره الانعام آيت ٧٦

زمين کان تحت الثرىٰ بلڪ جيڪو انهن ۾ اندر هو سڀ ڪجهه ڏٺائون. (١)

حضرت ابوهريره رضي الله تعالىٰ عنه نبي ڪريم ﷺ جن کان روايت آندي آهي ته لَمَّا تَجَلَّى اللهُ لِمُوسَىٰ كَانَ يُبْصِرُ النَّمْلَةَ عَلَى الصَّفَا فِى اللَّيْلَةِ الظَّلْمَاءِ مَسِيْرَةَ عَشْرَةِ فَرَاسِخَ (٢) يعني جڏهن الله تعالىٰ (طور جبل تي حضرت) موسىٰ (عليه السلام) کي تجلي ڏيکاري ته ان کان پوءِ ڏهن فرسخن (ٽيهن ميلن جي) پنڌ تي اونداهيءَ رات ۾ جبل تي هلڻ واريءَ ڪول کي ڏسندو هو. راقم الحروف عرض گذار آهي ته هيءَ الله تعالىٰ جي ڪليم جي نگاهه آهي ته پوءِ الله تعالىٰ جي حبيب عليه الصلواة والسلام جي نگاهه ڪيئن ۽ ڪٿي پهچندي هوندي.

٢- ٻي قوة سامعه (ٻڌڻ واري قوت) هيءَ قوت به سيد المرسلين صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن کي ٻين کان نرالي ۽ وڏيڪ عطا ٿيل آهي. ترمذي شريف حضرت ابوذر رضي الله عنه کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو: "اِنِّىْ اَرىٰ مَالَا تَرَوْنَ وَاَسْمَعُ مَالَا تَسْمَعُوْنَ اَطَّتِ السَّمَاءُ وَحَقَّ لَهَا اَنْ تَئِطَّ لَيْسَ فِيْهَا مَوْضِعُ اَرْبَعَ اَصَابِعَ اِلَّا وَمَلَكٌ وَاضِعٌ جَبْهَتَهٗ سَاجِدًا لِلّٰهِ" (٣) يعني بيشڪ مان اهو ڏسان ٿو جيڪو اوهان نه ٿا ڏسو ۽ اهو ٻڌان ٿو جيڪو وهان نه ٿا ٻڌو آسمان دانهن ٿو ڪري ۽ ان جو حق آهي- ته دانهن ڪري ان ۾ چئن آڱرين جيتري جاءِ به خالي ناهي جتي ڪو ملائڪ پيشاني رکي سجدي ۾ نه هجي.

حضرت ابوهريره رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آهي ته هڪ ڏينهن رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن وٽ وينا هئاسين ته هڪ کڙڪو ٻڌوسين پاڻ فرمايائون ته سمجهو ٿا ته اهو ڇا آهي؟ اسان عرض ڪيو ته الله ۽ ان جو رسول وڏيڪ ڄاڻندڙ آهن. فرمايائون ته ستر سالن کان هڪ پٿر جهنم ڏي اڇلايو ويو هو جيڪو هاڻي ان جي تري ۾ پهتو آهي. (٤) (اهو کڙڪو ان جو آهي.)

حضرت سليمان عليه السلام جي وڏي لشڪر کي ڏسي هڪ ماڪوڙيءَ (ڪول) ٻين کي چيو ته "يَاَيُّهَا النَّمْلُ ادْخُلُوا مَسَاكِنَكُمْ" (٥) اي ماڪوڙيون (ڪوليون) پنهنجن سوراخن ۾ لهي وڃو متان اوهان کي سليمان (عليه السلام) ۽ ان جو لشڪر لتاڙي ڇڏين. مفسرن جي بقول پاڻ ٽن ميلن جي فاصلي کان ان جو آواز ٻڌائون ۽ ڪلي

(١) نور العرفان ص٢١٧ (٢) زرقاني شرح المواهب ص٨٥ ج ٤ (٣) مواهب اللدنيه ص٢٣١ ج٢
(٤) مسند امام احمد ص٣٧١ ج٢ (٥) سورة النمل آيت ١٨

ڏنائون اسان جي پياري حبيب عليه الصلواة والسلام جن به اٺ ۽ ٻگهڙ جي ٻولي ٻڌيءَ ۽ سمجهيا هئا، جيئن سيرت جي مستند ڪتابن ۾ لکيل آهي.

٣- ٽين قوت شامه (سنگهڻ جي قوت) جيئن الله تعالىٰ حضرت يوسف عليه الصلواة والسلام جي قصي کي بيان ڪندي فرمايو آهي ته "جڏهن حضرت يوسف عليه السلام پنهنجي قميص حضرت يعقوب عليه السلام جي اکين مبارڪن کي روشن ڪرڻ لاءِ موڪلي ۽ اها قميص کڻي قافلي وارا روانا ٿيا اهو قافلو اجان ڪيترن ڏينهن جي پنڌ تي پري هو ته حضرت يعقوب عليه السلام فرمايو "اِنِّيْ لَاَجِدُ رِيْحَ يُوْسُفَ" (١) بيشڪ مان يوسف جي خوشبوءِ محسوس ڪري رهيو آهيان.

٤- چوٿين قوت ذائقه (چکڻ واري قوت) جيئن حضور ﷺ جن کي يهودياڻيءَ گوشت ۾ زهر ملائي ڏنو هو ۽ پاڻ اهو نه کاڌائون ۽ فرمايائون ته "مون کي هن ٻڪريءَ جي ران خبر ڏني آهي ته مون ۾ زهر ملايل آهي." (٢)

٥- پنجين قوة لامسه (ڇهڻ واري قوت) جيئن حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جن کي باهه ۾ اڇلايو ويو ۽ ڪين نه ساڙيائين.

باطني حواس به انبياءِ ڪرام عليهم الصلواة والسلام جا نرالا آهن. مثلاً قوة حافظه (ياد ڪرڻ واري قوت) الله تعالىٰ پنهنجي محبوب نبي عليه الصلواة والسلام جن کي فرمايو "سَنُقْرِئُكَ فَلَا تَنْسٰىٓ" (٣) (اسين اوهان کي جلدي پڙهائينداسون پوءِ اوهان نه وساريندؤ) حضور ﷺ جن کي الله تعالىٰ جي طرفان قرآن ڪريم پڙهايو وڃي ۽ پاڻ نه وسارين اهو سندن حافظي جي قوت جو ڪمال آهي.

حضرت علي المرتضىٰ رضي الله عنه جو فرمان آهي ته علمني رسول الله صلى الله عليه وسلم الف باب من العلم واستنبطت من كل باب الف باب (٤) يعني مون کي رسول الله ﷺ جن علم جا هزار باب پڙهايا ۽ مون وري هڪ هڪ باب مان علم جا هزار باب ڪڍيا آهن جڏهن ولي جو مقام اهو آهي ته نبي عليه الصلواة والسلام جو مرتبو ۽ علمي مقام ڇا هوندو؟

محرڪ (اڀاريندڙ) قوتون- جيئن حضور ﷺ جن جو معراج يا حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جو ۽ ڪن روايتن مطابق حضرت ادريس ۽ الياس

(١) سورة يوسف آيت ٩٤ (٢) خصائص الكبري ص٦٣- ٦٥
(٣) سورة الاعلىٰ آيت ٦ (٤) تفسير كبير ص٢١- ٢٢ جزءِ ٨

عليهما السلام جو آسمان تي کڄي وڃڻ يا حضرت سليمان عليه السلام جي خدمت ۾ بلقيسا جي تخت جو آڻڻ- اهي سڀ محرڪ قوتون آهن. انبياءِ عليهم السلام کي مليل روحاني ۽ عقلي قوتون به عجيب آهن المقصد ته الله جل جلاله جي پيارن نبين عليهم السلام جي ذات پنهنجي ماهيت ۾ ٻين کان نرالي هوندي آهي انهن ۾ ذڪاءِ، هوشياري، فڪر جي آزادي ۽ بلندي، جسمانيات ۽ شهوت جي غلبي کان آزادي ۽ رفعت گهڻي هوندي آهي جن جو روح نهايت صاف، پاڪ ، شرف وارو ۽ بدن نهايت سٺرو ۽ صاف هوندو ته انهن جون مدرڪه ۽ محرڪه قوتون ڪمال درجي واريون هونديون ۽ انهن سان ئي روح جي جوهر مان انوار نڪري بدن ۾ ايندا. (١)

حضرت شاه عبدالعزيز محدث دهلوي عليه الرحمة کان هڪ عيسائي سوال ڪيو ۽ حضرت شاه صاحب ان جو جيڪو جواب ڏنو اهو سوال ۽ جواب ٻئي شاه صاحب پنهنجي فارسي شعرن ۾ هيئن آندا آهن، هي آهن.

کسے بگفت که عيسيٰ ز مصطفيٰ اوليٰ است

که او بزير زمين دفن وآن باوج سما است

يعني ڪنهن ماڻهوءَ چيو ته حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام حضرت محمد مصطفيٰ صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن کان ڀلو آهي ڇو ته حضور ﷺ جن زمين ۾ اندر مدفون آهن ۽ حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام آسمان تي آهي.

بگفتمش که نه اين حجتے قوي باشد

حباب برسر آب وگهر ته دريا است

يعني مون ان کي جواب ۾ چيو ته اهو دليل قوي نه آهي، سمنڊ جي گجي مٿان هوندي آهي ۽ موتي درياءَ جي تري ۾ هوندا آهن. جيئن موتي هيٺ ته آهن، پر انهن جو مرتبو مٿان رهڻ واري گجيءَ کان مٿاهون آهي تيئن حضور ﷺ جن بظاهر ته گنبذ خضراءِ جي ڇانو ۾ آهن پر سندن بلنديءَ کي ڪو ٻيو نبي پهچي ته ڇا ويجهو به نه ٿو وڃي سگهي جيئن حضرت بوصيري عليه الرحمة فرمايو آهي.

فاق النبيين في خلق وفي خلق

ولم يدا نوه في علم ولا ڪرم (٢)

يعني حضور ﷺ جن ٻين نبين عليهم الصلواة والسلام کان خلقت ۾ ۽ اخلاق ۾ ايترو مٿي آهن جو ٻيا سندن علم ۽ ڪرم جي مقام کي ويجها به نه وڃي سگهيا آهن.

(١) التفسير الڪبير ص٢١-٢٢جزء ٨ (٢) احسن التشريح لبردة المديح ص ٨٩

إِذْ قَالَتِ امْرَاَةُ عِمْرَانَ رَبِّ إِنِّيْ نَذَرْتُ لَکَ مَا فِيْ بَطْنِيْ

جڏهن عرض ڪيو زال عمران جي ته اي منهنجا پالڻهار! بيشڪ مون نذر ڪيو تنهنجي لاءِ جو به منهنجي پيٽ ۾ آهي

مُحَرَّرًا فَتَقَبَّلْ مِنِّيْ ۚ إِنَّکَ أَنْتَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ﴿٣٥﴾ فَلَمَّا

(سڀني ڪمن کان) آزاد ڪيل پوءِ قبول فرماءِ منهنجي طرفان بيشڪ تون ئي ٻڌندڙ ڄاڻندڙ آهين پوءِ جڏهن

وَضَعَتْهَا قَالَتْ رَبِّ إِنِّيْ وَضَعْتُهَآ أُنْثٰى ؕ وَاللّٰهُ أَعْلَمُ بِمَا

ڄڻيائين ان کي عرض ڪيائين ته اي منهنجا پالڻهار! بيشڪ ڄڻي مون ڌيءَ ۽ الله وڌيڪ ڄاڻندڙ آهي جيڪو

وَضَعَتْ ؕ وَلَيْسَ الذَّکَرُ کَالْأُنْثٰى ۚ وَإِنِّيْ سَمَّيْتُهَا مَرْيَمَ وَإِنِّيْٓ

ڄڻيائين ۽ ناهي نر (پٽ) مادي (ڌيءُ) جهڙو ۽ بيشڪ مون نالو رکيو ان جو مريم ۽ بيشڪ مان

أُعِيْذُهَا بِکَ وَذُرِّيَّتَهَا مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيْمِ ﴿٣٦﴾ فَتَقَبَّلَهَا رَبُّهَا

تنهنجي پناهه ۾ ٿي ڏيان ان کي ۽ ان جي اولاد کي شيطان تڙيل کان. پوءِ قبول ڪئي اها سندس پالڻهار

بِقَبُوْلٍ حَسَنٍ وَّأَنْبَتَهَا نَبَاتًا حَسَنًا ۙ وَّکَفَّلَهَا زَکَرِيَّا ۚ کُلَّمَا

سهڻيءَ قبوليت سان ۽ وڌايائين ان کي وڌائڻ سهڻو ۽ سنڀاليندڙ ٿيو ان جو زڪريا جڏهن به

دَخَلَ عَلَيْهَا زَکَرِيَّا الْمِحْرَابَ ۙ وَجَدَ عِنْدَهَا رِزْقًا ۚ قَالَ يٰمَرْيَمُ

داخل ٿيو ان وٽ زڪريا ان جي عبادت واريءَ جاءِ ۾ ته لڌائين ان وٽ کاڌي جون شيون فرمايائين ته اي مريم!

أَنّٰى لَکِ هٰذَا ۭ قَالَتْ هُوَ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ ؕ إِنَّ اللّٰهَ يَرْزُقُ مَنْ يَّشَآءُ

ڪٿان آيو آهي تو لاءِ هي؟ چيائين ته اهو الله وٽان آهي بيشڪ الله رزق ٿو ڏي جنهن کي گهري

بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٣٧﴾

حساب کان سواءِ

## تفسير

هنن آيتن ۾ الله تعاليٰ جي فرمانبردار ٻانهيءَ، عمران جي گهرواريءَ، حنه بنت فاقوذا جي دعا ۽ ان جي نتيجي جو بيان آهي. مفسرن ڀلارن لکيو آهي ته بي بي صاحبه کي جڏهن حمل جي ڳرائي محسوس ٿي ته پنهنجي پالڻهار جي بارگاهه ۾ نهايت ئي عبديت ۽ نيازمنديءَ جو اظهار ڪندي عرض ڪرڻ لڳي ته اي منهنجا خالق! منهنجي پيٽ ۾ جيڪو ٻار آهي، مان نذر ٿي ڪيان ته ان کي پنهنجي خدمت ۽ گهرو ڪم ڪار کان آزاد ڪري تنهنجي گهر بيت المقدس جي خدمت جي حوالي ڪنديس، منهنجو هي نذر قبول ڪر تون ئي منهنجي دل جي پڪار ٻڌڻ وارو ۽ منهنجي نيت جي اخلاص ۽ اندر جي جذبات کي ڄاڻندڙ آهين - جڏهن پيٽ وارو ٻار ڄائو ته اهو پٽ نه پر نياڻي هئي. نهايت ئي عاجزانه انداز ۾ وري عرض ڪرڻ لڳي ته اي منهنجا پالڻهار! مون ته ڌيءُ ڄڻي آهي ۽ ڌيءُ پٽ وانگر ناهي جو بيت المقدس جي صحيح خدمت ڪري سگهي پر جڏهن ته ٻاس ٻاسيل ۽ نذر ڪيل آهي ان جي ڪري ان کي تنهنجي گهر جي حوالي ٿي ڪريان ۽ ان جو نالو مريم (ان لفظ جي معنيٰ انهن جي ٻوليءَ ۾ عبادت گذار ۽ خدمت ڪندڙ آهي) رکيو اٿم. (١)

"وَإِنِّيٓ أُعِيذُهَا بِكَ وَذُرِّيَّتَهَا مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ" (۽ مان ان کي ۽ ان جي اولاد کي تڙيل شيطان کان تنهنجي پناهه ۾ ٿي ڏيان) ان جي ڪري مريم سائڻ کي ڄمڻ وقت به شيطان هٿ لائي نه سگهيو هو حضرت ابوهريره رضي الله تعاليٰ عنه کان روايت آهي ته رسول الله ﷺ جن فرمايو: "مَا مِنْ مَوْلُودٍ يُولَدُ إِلَّا وَالشَّيْطَانُ يَمَسُّهُ حِينَ يُولَدُ فَيَسْتَهِلُّ مِنْ مَسِّهِ إِلَّا مَرْيَمَ وَابْنَهَا" متفق عليه (٢) يعني ڪو به ٻار ڄمندو آهي ته شيطان ان کي هٿ هڻندو آهي ۽ ان هٿ لڳڻ جي ڪري دانهن ڪندو آهي، مگر مريم ۽

(١) تفسير ابي السعود ص٢٩ جزءُ٢ (٢) تفسير مظهري ص٤٢ ج٢

ان جو پٽ (ان هٿ هٿڻ کان محفوظ رهيا هئا) رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن بہ حضرت عليءَ فاطمة زهراء رضي الله عنها ۽ حسنين اولادﷺ اها دعا گهري هئي ۽ يقين سان چئجي ٿو تہ حضور صلى الله تعاليٰ عليه وسلم جن بيبي حنه بنت فاقوذا کان وڌيڪ شاندار ۽ مستجاب الدعوات آهن ۽ سندن دعا سندن نياڻيءَ حضرت علي رضي الله تعالىٰ عنهما ۽ سندن اولاد لاءِ قبول آهي. (١)

## سوال

ڇا رسول الله صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي ڄمڻ وقت بہ شيطان سندن جسم اطهر کي هٿ لاتو هو ۽ پاڻ رنو هيائون؟

## جواب

سيد المرسلين صلى الله تعاليٰ عليه وسلم جن جي جسم اطهر کي هٿ لڳائڻ تہ ٺهيو پر شيطان کي سندن ويجهو بہ نہ ڇڏيو ويو هو. علامہ جلال الدين سيوطي عليه الرحمة - پنهنجي ڪتاب البهجة السنية ۾ حضرت عڪرمه رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ جڏهن رسول الله ﷺ جن جي ولادت ٿي تہ ساري زمين سندن نور سان روشن هئي ۽ شيطان چيو تہ اسان جي ڪم کي ختم ڪرڻ وارو اچي ويو آهي سندس لشڪرين کيس چيو تہ تون بہ ڪين ويجهو وڃين ڪجهہ تہ ڪر. ان ويجهو ٿيڻ لاءِ ڪوشش ڪئي پر جبريل عليه السلام کيس پنهنجي نوراني پير سان اهڙو ٺڏو هنيو جو مڪي پاڪ کان پري عدن جي علائقي ۾ وڃي ڪريو. (٢)

## فائدو

ٻار جي ڄمڻ وقت ئي ان جو نالو رکڻ بہ جائز آهي، جيئن بيبي حنه پنهنجيءَ نياڻيءَ جو مريم نالو رکيو. سيدنا رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو تہ: "وُلِدَ لِيَ اللَّيْلَةَ وَلَدٌ سَمَّيْتُهُ بِاسْمِ اَبِيْ اِبْرَاهِيْمَ" مون کي اڄ رات پٽ ڄائو آهي مون ان جو نالو پنهنجي بابي (حضرت) ابراهيم (عليه السلام) وارو رکيو آهي. بخاريءَ جي روايت ۾ آهي تہ هڪ شخص عرض ڪيو تہ: يا رسول الله! اڄ رات مون کي

(١) تفسير مظهري ص٤٢ ج٢ (٢) روح المعاني ص١٣٨ جزء ٣

پٽ ڄائو آهي پاڻ فرمايائون تہ "سَمِّ ابْنَکَ عَبْدَالرَّحْمٰنِ" (١) يعني پنهنجي پٽ جو نالو عبدالرحمان رک. ترمذي ۽ مسند امام احمد بن حنبل ۾ روايت آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو تہ "هر ٻار عقيقيٰ جي لاءِ گروي پيل آهي تنهن جي ڪري ستين ڏينهن جانور ذبح ڪري ان جو عقيقو ڪيو وڃي، ان جو نالو رکيو وڃي ۽ ان جو مٿو ڪوڙيو وڃي" ان جو مطلب آهي تہ ان جو نالو عقيقي ڪرڻ وقت مشهور ڪيو وڃي باقي ڄمڻ واري ڏينهن نالو رکڻ سنت آهي. (٢)

"فَتَقَبَّلَهَا رَبُّهَا بِقَبُوْلٍ حَسَنٍ وَّاَنْۢبَتَهَا نَبَاتًا حَسَنًا ۙ وَّكَفَّلَهَا زَكَرِيَّا ۚ" (پوءِ سندس رب ان کي سهڻيءَ قبوليت سان نوازيو ۽ان کي سهڻي نموني سان وڌايو ۽ زڪريا کي ان جو سنڀاليندڙ بنايو) يعني بيبي صاحبہ جيڪو عرض ڪيو هو سو الله تعالىٰ قبول فرمائي، مريم سڳوريءَ کي سٺي نموني وڌايو ۽ حضرت زڪريا عليه السلام جي سنڀال ۾ رکيو- حقيقت هيئن آهي تہ پٽ ۽ ڌيءُ برابر ناهن پر بيبي حنه کي اهڙي ڌيءُ عطا ٿي هئي جنهن جو مقابلو ڪيترا پٽ بہ ڪري نہ سگهيا. ان نياڻيءَ مان جيڪي برڪت، رحمت ۽ هدايت جا چشما ظاهر ٿيا ۽ نوراني چمڪارا نڪتا اهي هزارين اجايل دلين کي سيراب ڪندڙ ۽ انڌيرن کي روشن بنائيندڙ هئا، اها نهايت ئي سعادتمند نياڻي هئي، جيڪا الله تعالىٰ جي هڪ شاندار نبي حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي امان بڻي.

الله تعالىٰ حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام ۽ بيت المقدس جي ٻين خادمن جي دلين ۾ ان جي اهڙي محبت ۽ ان تي اهڙي شفقت پيدا فرمائي جو عام دستور جي خلاف هڪ ننڍڙيءَ نياڻيءَ کي سنڀالڻ جي لاءِ پاڻ ۾ ڪٺو وڌائون ۽ جڏهن حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام جي نالي مبارڪ تي ڪٺو نڪتو تہ ان جي سنڀال سندس حوالي ڪئي ويئي. الله تعالىٰ ان ٻانهيءَ کي جسماني، روحاني، علمي ۽ اخلاقي هر حيثيت سان غيرمعمولي طور تي وڌايو.

(١) تفسير ابن ڪثير ص٣٥٨ جلد ١ (٢) تفسير ابن ڪثير ص٣٥٩ جلد١

# حضرت زکريا عليه الصلواة والسلام جي زير تربيت رهڻ مان فائدا

## فائدو ١

ته حضرت زکريا عليه الصلواة والسلام جي گهر ۾ سيده مريم سائڻ جي ماسي هئي پاڻ پنهنجي ماسيءَ جي آغوش شفقت ۾ پرورش حاصل ڪري.

## فائدو ٢

ته علم ۽ دينداريءَ حاصل ڪرڻ جي لاءِ مرشد ۽ مربيءَ جي ضرورت هوندي آهي. مريم سڳوريءَ کي حضرت زکريا عليه الصلواة والسلام جهڙو رب جو پيارو نبي معلم ۽ مربي ڪري ڏنو ويو جيڪو سندس لاءِ وڏو الله تعالیٰ جو انعام هو. جيئن هڪ شاعر چيو آهي.

اگر کوئي شعيب آئے ميسر
شباني سے کليمي دو قدم هے

حضرت زکريا عليه الصلواة والسلام مريم سائڻ جي پوري پوري مراعات ۽ سنڀال ڪندي سندس تعليم ۽ تربيت لاءِ گهڻي جدوجهد ڪئي جڏهن حضرت بيبي مريم سائڻ رضي الله تعالیٰ عنها وڏي ۽ سمجهدار ٿي ته حضرت زکريا عليه الصلواة والسلام کيس الله تعالیٰ جي عبادت ڪرڻ لاءِ بيت المقدس واريءَ مسجد جي پر ۾ هڪ مخصوص حجرو ٺهرائي ڏنو جنهن کي قرآن ڪريم "المحراب" ڪري سڏيو آهي. المحراب جي لغوي معنیٰ آهي "اکرم موضع في المجلس" مجلس ۾ وڏيءَ عزت واري جاءِ. عام طرح عبادت جي ان حجري کي المحراب سڏيندا آهن جيڪو زمين جي سطح کان ڪجھ مٿي هوندو آهي ۽ ان ۾ وڃڻ لاءِ ڏاڪڻ جي ضرورت پوندي آهي. بيت المقدس جي چوڌاري بين خادمن ۽ چاليها ڪيندڙن جي لاءِ به حجرا نهيل هوندا هئا، پر مريم سائڻ جو حجرو انهن کان مٿي ۽ خصوصي طرح تيار ٿيل هو سائڻ سڄو ڏينهن اتي عبادت ڪندي هئي ۽ رات جو موٽي پنهنجيءَ ماسيءَ وٽ اچي رهندي هئي.

"كُلَّمَا دَخَلَ عَلَيْهَا زَكَرِيَّا الْمِحْرَابَ وَجَدَ عِندَهَا رِزْقًا" الاية - حضرت زکريا عليه الصلواة والسلام جن سائڻ جي سنڀال ڪرڻ جي لاءِ جڏهن به سندس حجري ۾

ايندا هئا تہ ان وٽ نموني نموني جا اڻ منڊائتا ميوا يعني گرميءَ جي مند ۾ ٿيڻ وارا سرديءَ ۾ ۽ سرديءَ جي مند وارا گرميءَ ۾ ڏسندا هئا. مجاهد جو قول آهي تہ بيبي سائڻ کي جيڪو رزق ملڻ جو ذڪر آهي ان مان مراد علمي مواد هو جيڪو سندس روحاني غذا هو، بهرحال اتي ئي حضرت بيبي مريم رضي الله تعالىٰ عنها جون ڪرامتون، برڪتون ۽ سندس شاندار هجڻ جا غيرمعمولي نشان ظاهر ٿيڻ شروع ٿيا هئا جن جو بار بار مشاهدو ڪرڻ تي حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام ڪائنس پڇيو تہ هي تو وٽ ڪٿان ٿا اچن؟ جواب ۾ عرض ڪيائين تہ "الله تعالىٰ وٽان ٿا اچن" پنهنجي ڪامل قدرت سان مون کي اهي شيون ائين ٿو پهچائي جو وهم، قياس ۽ عقل اتي عاجز ٿيو پوي، الله تعالىٰ جنهن کي گهري ٿو تہ ان کي حساب کان سواءِ رزق ڏئي ٿو.

## ڪاملن جي ڪرامتن جو ثبوت

هن آيت ۾ الله تعالىٰ جنهن رزق جو بيان ڪيو آهي عام مفسر فرمائن ٿا تہ اهو رزق ڪيس ڪرامت ۽ خرق عادت طور ملندو هو، عڪرمہ، سعيد بن جبير، ابو الشعثاءِ، ابراهيم نخعي، ضحاڪ، قتاده، ربيع بن انس عطيه عوفي ۽ سديءَ کان اهي روايتون آيل آهن (١) علامه ابن حيان اندلسي عليه الرحمة لکيو آهي تہ والظاهر انها كرامة خص الله بها مريم ولو كان خارقا لاجل زكريا لم يسئل عنه زكريا واما كون ذالک لاجل نبوة عيسىٰ فهو كان لم يخلق بعد (٢) يعني ظاهر اها ڳالهہ آهي تہ اهو ميون وغيره جو اچڻ مريم سائڻ جي خاص ڪرامت هئي ۽ جيڪڏهن اهو حضرت زڪريا عليه السلام جو معجزو هجي ها تہ اهو بيبي صاحبہ کان نہ پڇي ها ۽ اهي حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي نبوت جي ڪري بہ نہ هيا، ڇو تہ اهو تہ اڃان وجود ۾ ئي نہ آيو هو، تنهن جي ڪري اها مريم سائڻ جي خاص ڪرامت آهي، جيڪا قرآن ڪريم بيان ڪئي آهي. پنهنجي وقت جي وڏي محدث ۽ قرآن ڪريم جي عاليشان مفسر علامه ثناءالله پاني پتيءَ لکيو آهي تہ وهذه القصة دليل علىٰ كرامة الاولياء يعني هي قصو ولين جي ڪرامت جو دليل آهي- اڳتي علامہ موصوف لکيو آهي تہ محدث ابويعلىٰ پنهنجي مسند ۾ حضرت جابر رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ حضرت حبيب ڪريم صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي نياڻيءَ سيده فاطمه رضي الله تعالىٰ

(١) تفسير ابن ڪثير ص٣٦٠ ج١ (٢) البحر المحيط ص٤٤٣ جلد٢

عنها پنهنجي والد مڪرم، محبوب نبي معظم صلی الله تعالیٰ عليه وسلم جن جي خدمت عاليه ۾ ٻه مانيون ۽ گوشت جو ٽڪرو ڏڪي، هديو ڪري موڪليا، پاڻ اهي موٽائي ڪٽي سيده جي گهر ۾ آيا ۽ ڪيس سڏي فرمايائون ته "هلمي يا بنية!" اي ڌيئڙي هلي آءُ! سائڻ اچي جو اهو کوليو ته سجو ٿانءُ گوشت ۽ مانيءَ سان ڀريل هو پاڻ حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام وانگر سيده کان پڇيائون ته هيءُ تو لاءِ ڪٿان آيو آهي؟ سيده سائڻ به حضرت بيبي مريم وانگر عرض ڪيو ته "اهو الله تعالیٰ وٽان آيو آهي" پوءِ پاڻ فرمايائون ته "الحمد لله الذي جعلكِ شبيهة سيدةِ نساءِ بني اسرائيل- يعني سڀ ساراهه ان الله جي ذات لاءِ ثابت آهي جنهن توکي بني اسرائيل جي عورتن جي سردار (مريم) جهڙو بنايو (جيئن ان لاءِ غيبي رزق ٿي آيو تيئن تو لاءِ به آيو آهي!) ان کان پوءِ حضرت علي، حضرت حسن، حضرت حسين ۽ سيني گهر ۾ رهڻ وارن کي گڏ وهاري کارايائون سيني ڪائي ڍؤ ڪيو تڏهن به طعام جيترو هو اوترو ئي بچي پيو ۽ سيده فاطمه رضي الله تعالیٰ عنها پاڙي وارن ڏي ورهائي موڪليو(١)علامه ابن ڪثير لکيو آهي ته وفيه دلالة علیٰ ڪرامات الاولياءِ ولها نظائر ڪثيرة يعني ان قصي ۾ ولين جي ڪرامتن جو دليل آهي ۽ اهڙا گهڻا مثال آهن، ان کان پوءِ علامه موصوف حضرت بيبي فاطمة زهريٰ رضي الله عنها جو مٿي ذڪر ڪيل واقعو هن نموني لکيو آهي! حضرت جابر رضي الله تعالیٰ عنه کان روايت آهي ته رسول الله صلی الله عليه سلم جن ڪيترا ڏينهن ڪاڏي ڪائڻ کان سواءِ رهيا ان حالت ۾ ڪين ڪجهه مشقت محسوس ٿي ۽ پاڻ پنهنجين سيني گهر وارين وٽ تشريف وٺي ويا، پر انهن مان ڪنهن هڪڙيءَ وٽ به ڪائڻ لاءِ ڪا شيءِ موجود ڪو نه هئي، پوءِ (پاڻ پنهنجيءَ نياڻيءَ) فاطمه رضي الله تعاليٰ عنها وٽ تشريف فرما ٿيا ۽ ڪانئس پڇيائون ته "مون کي بک لڳي آهي تو وٽ ڪا ڪاڏي جي شيءِ آهي ته ڪاوان؟" عرض ڪيائين ته "الله جو قسم آهي ته ڪا به شيءِ (في الحال) موجود نه آهي" جڏهن پاڻ اتاهين نڪتا ته سندن نڪرڻ کان پوءِ هڪ پاڙي واريءَ عورت مانيءَ جون ٻه ڍڳڙيون ۽ گوشت جو هڪ ٽڪرو موڪليو فاطمة زهراءِ رضي الله تعاليٰ عنها اهي وٺي هڪ ٿانو ۾ وجهي رکيا ۽ فرمايائون ته "هي الله تعالیٰ جي رسول، پنهنجي پياري والد (صلي الله تعالیٰ عليه وسلم) کي ضرور کارائينديس ۽ پاڻ کان ۽ پاڻ وٽ رهڻ وارن (حضرت علي، حضرت حسن، حضرت حسين ۽ ٻين

(١) تفسير مظهري ص ٤٤ ج ٢

نياڻين زينب ۽ ام كلثوم ) كان وڌيڪ كين اهميت ڏينديس" پوءِ پنهنجن پٽن مان حسن يا حسين كي سندن خدمت ۾ عرض كرڻ لاءِ موكليائين ته پاڻ موٽي آيا ۽ كين عرض كيائين ته " الله تعالىٰ كجهه كاڏو موكليو آهي جيكو مون اوهان لاءِ لكائي ركيو آهي" پاڻ كيس فرمايائون ته "هَلُمِّيْ يَا بُنَيَّةُ" اي ڌيئڙي! كڻي آ- فاطمه سائڻ جو فرمان آهي ته"پوءِ مان اهو ٿانءُ كڻي آيم جڏهن كوليم ته سڄو مانين ۽ گوشت سان ڀريل هو. ڏسي حيرت ۾ پئجي ويس ۽ سمجهيم ته اها الله تعالىٰ جي طرفان بركت آهي، الله تعالىٰ جو حمد كندي، نبي كريم صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن تي صلوات پڙهندي سندن اڳيان ركيم ، پاڻ ڏسي، الله تعالىٰ جو حمد كندي فرمايائون ته: مِنْ اَيْنَ لَكِ هٰذَا يَا بُنَيَّةُ! "اي ڌيئڙي! هي تولاءِ كٿان آيو آهي؟" عرض كيم ته "هُوَ مِنْ عِنْدِاللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ يَرْزُقُ مَنْ يَّشَاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ" اهو الله وٽان آهي يقيناً الله جنهن كي گهري ٿو حساب كان سواءِ رزق ڏي ٿو" پاڻ اهو جواب ٻڌي فرمايائون ته "اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِي جعلك يا بنيه! شبيهه بسيدة نساءِ بَنِيٓ اِسْرَآئِيْلَ فَاِنَّهَا كَانَتْ اِذَا رَزَقَهَا اللّٰهُ شَيْئًا وَسُئِلَتْ عَنْهُ قَالَتْ هُوَ مِنْ عِنْدِاللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ يَرْزُقُ مَنْ يَّشَآءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ" يعني سڀ ساراهه الله جي لاءِ آهي جنهن توكي اسرائيلي عورتن جي سردار سان مشابهه بنايو آهي اها به ائين هوندي هئي جو جڏهن الله كيس رزق ڏيندو هو ۽ پڇيو ويندو هوس ته هيءُ تو لاءِ كٿان آيو آهي؟ ته چوندي هئي ته "اهو الله وٽان آهي الله جنهن كي گهري ٿو ته حساب كان سواءِ رزق عطا كري ٿو". ان كان پوءِ رسول الله ﷺ جن حضرت علي ڏانهن ماڻهو موكليو جڏهن اهو آيو ته پاڻ ﷺ جن علي، فاطمه، حسن ۽ حسين رضي الله عنهم ۽ ٻين سيني گهر ۾ رهڻ وارن گڏجي كائي ڍؤ كيو، پر اهو ٿانءُ ائين ئي ڀريل رهيو جيئن ڀريان هو-(كائڻ سان ختم نه ٿيو ۽) اهو ٿانو ۾ بچي پيل طعام سيني پاڙيسرين كي موكليائون- الله تعالىٰ ان ۾ بركت ۽ گهڻو خير پيدا كرڻ فرمايو. (١)

علامه علاؤالدين علي الخازن لكيو آهي ته وفي هذه الاية دليل علىٰ جواز كرامات الاولياءِ وظهور خوارق العادات علي ايديهم (٢) يعني هن آيت ۾ اوليائن جي كرامتن جي جواز ۽ سندن هٿان خرق عادت (عام نه ٿيڻ واري ڳالهين) جي ظاهر ٿيڻ جو دليل آهي.

علامه رازي عليه الرحمة لكيو آهي ته احتج اصحابنا علىٰ صحة القول بكرامة

(١) تفسير ابن كثير ص٣٦٠ ج١ (٢) تفسير خازن ص٢٣١ ج ١

الاولياءِ بهذه الاية (١) يعني اهل سنت جي علماءِ اوليائن جي ڪرامتن جي صحيح هجڻ واري قول تي هن آيت سان دليل ورتو آهي ان ڪان پوءِ مفسر موصوف پنهنجي شهرهٔ آفاق تفسير ۾ مفصل نموني سان ڪرامتن جي منڪرن، معتزلن جو زبردست رد لڪيو آهي جيڪو بہ وڌيڪ تحقيق ڪرڻ گهري سو اهو مطالعو ڪري ڏسي.

علامہ آلوسي بغدادي عليه الرحمة لڪيو آهي تہ واستدل بالاية علیٰ جواز الكرامة للاولياءِ (٢) يعني هن آيت سان اوليائن جي ڪرامتن جي جائز هجڻ تي دليل ورتو ويو آهي (تہ اهي حق آهن)

علامه ابو السعود لڪيو آهي تہ وهو دليل علیٰ جواز الكرامة للاولياءِ (٣) يعني اهو اوليائن جي ڪرامتن جي جواز جو دليل آهي.

علامه اسماعيل حقيءَ عليه الرحمة لڪيو آهي تہ في الاية دليل علیٰ جواز الكرامة للاولياءِ (۴) يعني هن آيت ۾ اوليائن جي لاءِ ڪرامتن جي جواز جو دليل آهي. ڪمالين شرح اردو تفسير جلالين جي صاحب لڪيو آهي تہ "وَجَدَ عِنْدَهَا رِزْقًا" قول مشهور پر کہ حضرت مريم وليه تهين اس سےكرامات اولياءِ کا اثبات هوتا هے (٥)

مولوي محمد عثمان نورنگ زادي صاحب لڪيو آهي تہ هن مان اوليائن جون ڪرامتون صفا ثابت ٿين ٿيون ڇو تہ بيبي مريم نبي نہ هئي(٦) بلڪ حضرت عيسیٰ عليه الصلواة والسلام جي امان ۽ سندس امتياڻي، الله تعالیٰ جي صالحه ٻانهي هئي اهڙن پيارين ٻانهين ۽ ٻانهن کان هميشہ جي عادت ۽ معمول جي خلاف ڪمن جو ظاهر ٿيڻ سندن ڪرامت آهي.

علامه جمال الدين قاسميءَ لڪيو آهي تہ هن آيت ۾ ولين جي ڪرامتن جي واقع ٿيڻ جو دليل آهي جيئن حضرت خبيب انصاري رضي الله تعالیٰ عنه مڪي مڪرمہ ۾ شهيد ٿيڻ واري وٽ انگورن جو ڇڳو آيو هو. (٧)

---

(١) تفسير ڪبير ص٣٠ جزءُ ٨ — (٢) روح المعاني ص١۴٠ جزءُ ٣
(٣) تفسير ابي السعود ص٣٠ جزءُ ٢ — (۴) روح البيان ص٢٩ جلد٢
(٥) ڪمالين ص٣٦١ ج ١ — (٦) تنوير الايمان ص٦٠ پ٣
(٧) تفسير القاسمي ص٩٢ سورة آل عمران جلد ٢ جزء ۴

# ڪرامت جي حق هجڻ لاءِ امت جي عظيم علماء جا ارشادات

حضرت امام شعراني عليه الرحمة لکيو آهي تہ ان ڪرامات الاولياء حق (١) يقيناً ولين جون ڪرامتون حق آهن.

علامه نبهاني عليه الرحمة ڪجهہ اصحابن سڳورن رضي الله تعالیٰ عنهم جون ڪرامتون گڏ لکي عقلي ۽ نقلي دليلن سان ڪرامتن کي ثابت ڪندي لکيو آهي تہ اجمعوا علیٰ اثبات الڪرامات (٢) امت جي علماءِ ڪرامتن جي ثابت ڪرڻ تي اجماع ڪيو آهي مقصد تہ ڪرامتن جو منڪر حق وارن جي جماعت کان خارج آهي.

علامه طحاوي عليه الرحمة لکيو آهي تہ ونؤمن بما جاءَ من ڪراماتهم وصح عن الثقات من رواياتهم (٣) يعني جيڪي ڪرامتون صحيح روايتن سان معتبر راوين کان آيل آهن اسين انهن تي ايمان رکون ٿا.

## هڪ عجيب نڪتو

امام شعراني عليه الرحمة لکيو آهي تہ عارف بالله حضرت ابوالحسن شاذلي عليه الرحمة فرمايو آهي تہ شروعات ۾ حضرت بيبي مريم وٽ اڻ مندائتا ميوا ان جي ڪري ٿي آيا تہ سندس يقين ڪامل ۽ محڪم ٿئي ۽ جڏهن بہ حضرت زڪريا عليه السلام وٽس ايندو هو تہ اهي اڻ مندائتا ميوا ڏسندو هو پر جڏهن بيبي صاحبہ يقين جي منزل کي پهتي تہ حضرت عيسیٰ عليه الصلواة والسلام جي ڄڻڻ وقت ڪيس بہ حڪم ڪيو ويو تہ "وَهُزِّيٓ اِلَيۡكِ بِجِذۡعِ النَّخۡلَةِ تُسٰقِطۡ عَلَيۡكِ رُطَبًا جَنِيًّا" ۽ پاڻ ڏانهن ڪجيءَ جي ٿڙ کي ڌوڻ ڏي تہ تو ڏانهن تازا ڏوڏا ڪيرائيندو.

### فائدو ١

زڪريا جي لفظ جي لغوي معنيٰ آهي "تذڪار الرب" رب جو ياد ڪرڻ (٤)

(١) اليواقيت ص١٠١ ج٢ (٢) التحفه المستطابه في ڪرامات بعض الصحابه ص١١
(٣) شرح العقيدة الطحاويه للالباني ص٥٥٨
(٤) تفسير القاسمي ص٩٢ سورة آل عمران جلد ٢ جزء ٤

## فائدو ٢

ڪرامتن جي واقع ٿيڻ جو انڪار ڪرڻ گمراهي ۽ قرآن پاڪ ۽ حديثن جو انڪار ڪرڻ آهي قرآن پاڪ مختلف مقامن تي ولين کان ڪرامتن جي صادر ٿيڻ جو ذڪر آندو آهي، هن آيت ۾ بيبي مريم رضي الله تعالىٰ عنها جي ڪرامت جو ذڪر آهي سورة النمل ۾ آصف بن برخيا جي ڪرامت جو بيان آهي جنهن اک ڇنڀڻ کان اڳ ۾ بلقيسا جو تخت يمن کان ڪڍي شام ۾ حضرت سليمان عليه الصلواة والسلام جي خدمت ۾ حاضر ڪيو هو. سورة الڪهف ۾ اصحاب ڪهف جو سوين سال غار ۾ جيئري رهڻ واري ڪرامت جو ذڪر آهي جو مٽيءَ تي رهڻ جي باوجود ايتري وڏي عرصي ۾ سندن جسم به محفوظ رهيا ته ڪپڙا، لٽا به سلامت رهيا. بيبي مريم سائڻ کي مڙس کان سواءِ پٽ جو ملڻ ۽ سيدنا جبرئيل عليه السلام جو ساڻس هم ڪلام ٿيڻ به سندس ڪرامت آهي.

## فائدو ٣

قرآن ڪريم ۾ انهن ڪرامتن ۽ ڪرامتن جي صاحبن جي ذڪر ڪرڻ مان ثابت ٿيو ته الله تعالىٰ جي پيارن ٻانهن جي احوال، ڪرامات ۽ بلند مقامات کي بيان ڪرڻ سنت الٰهيه آهي.

## فائدو ٤

الله تعالىٰ جا ڪي ڪي ٻانها ڄمندي ئي ولي هوندا آهن ولايت عبادت تي موقوف ناهي جيئن حضرت بيبي مريم سائڻ ڄمندي ئي وليه ۽ ڪرامتن واري هئي.

## فائدو ٥

ڀلن ۽ نيڪيءَ جي ڪمن ۾ حرص ڪرڻ جائز ۽ سٺي شيءِ آهي جيئن بيت المقدس جي خادمن ۽ سنڀاليندڙن حضرت بيبي مريم کي پالڻ لاءِ ڪوششون ڪيون هيون.

## فائدو ٦

رب العزة جل جلاله جي پيارن ٻانهن جي اولاد جي خدمت ڪرڻ نيڪ

بختيءَ جي نشاني آهي ۽ هميشه کان رب جي پيارن جو ان تي عمل رهيو آهي بيت المقدس جي خادمن مريم سائڻ جي سنڀال کي ان جي ڪري سعادت سمجهيو هو جو اها انهن جي اڳواڻ، بيت المقدس جي خلوص سان خدمت ڪندڙ، عمران جي نياڻي هئي، ان ئي لحاظ سان سرور ڪونين صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي اولاد جي عزت ۽ خدمت ڪرڻ به اجر ۽ ثواب جو ڪم آهي.

## فائدو ٧

الله تعالىٰ جي ولين کي لدني علم هوندو آهي جيئن حضرت خضر عليه السلام جي لاءِ فرمان ايزدي آهي "وَعَلَّمْنَٰهُ مِن لَّدُنَّا عِلْمًا" اسان ان کي پاڻ وٽان علم عطا ڪيو هو، بيبي مريم سائڻ به ان علم جي ڪري حضرت زڪريا عليه السلام جي اڳيان الله تعالىٰ جون سهڻيون صفتون بيان ڪيون هيون.

## فائدو ٨

هن هلندڙ امت ۾ جيڪي ماڻهو اصحاب ڪرام يا اهل بيت عظام کي برو ٿا چون اهي انهن يهودين وانگر آهن جيڪي بيبي مريم کي گهٽ وڌ ڳالهائيندا آهن. مريم سڄوري بيت المقدس جي پاسي ۾ رهي. الله تعالىٰ جي پياري نبي زڪريا عليه الصلواة والسلام جي تربيت سان ڪمال حاصل ڪيو ۽ اصحاب ڪرام ۽ اهل بيت عظام مڪي ۽ مديني ۾ انبيائن جي آقا، رسول الله ﷺ جن جي صحبت ۾ رهي ظاهري، باطني ڪمال، وڏي علم ۽ عرفان جا صاحب بڻيا.

## فائدو ٩

قرآن پاڪ جي تفسيرن ۽ نبوي احاديث جي شرحن کي مطالعي ڪرڻ سان معلوم ٿئي ٿو ته جمڻ کان پوءِ پينگهي ۾ سمهڻ واريءَ حالت جي دوران يارهن (١١) ڄڻن ڳالهايو هو.

١- سيد المرسلين نبي اڪرم حضرت محمد مصطفىٰ صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي ذات عالي صفات.

٢- حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام کي پيريءَ ۾ مليل پياري پٽ

حضرت يحيىٰ عليه السلام.

٣- الله تعالىٰ جي خليل سيدنا حضرت ابراهيم عليه السلام.

٤- مريم سائڻ جي دلبند حضرت عيسىٰ پيغمبر عليه السلام .

٥- الله تعالىٰ جي نيڪوڪار ٻانهيءَ حضرت بيبي مريم عليها السلام

٦- جريج جي پاڪدامني بيان ڪرڻ واري ٻار

٧- حضرت يوسف عليه الصلواة والسلام جي لاءِ شاهدي ڏيڻ واري ٻار

٨- جن الله تعالىٰ جي صالح ٻانهن ڪيٰ ڪافرن زوريءَ زبردستيءَ باهه جي کڏن ۾ ٽي اڇلايو انهن جي ٻار

٩- فرعون جي ڌيءُ جي مٽي ڪي ڦٽي ڏيندڙ ٻانهيءَ جڏهن حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام جي دين جي دعوت قبول ڪري اسلام آندو تہ فرعون انتقامي ڪارروائي ڪندي ان ڪي ٻچن سوڌو باهه ۾ ٽي ساڙايو اها ٻانهي مايوس ٽي تہ ان جي ننڍڙي ٻار ڳالهايو تہ ظاهري باهه ڏسي گهبرايو نہ ظاهر ۾ باهه آ پر اندران قدرتي طرح جنتي باغ آهن.

١٠- حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام تي قارون هڪ بدڪار عورت ڪي ڪوڙو بيان ڏياري ڪيس بدنام ڪرڻ جي سازش ڪئي هئي پر ان عورت جي ٻار پاڻ شاهدي ڏني تہ منهنجي ماءُ ڪوڙي آهي ۽ الله تعالىٰ جو نبي موسىٰ عليه الصلواة والسلام پاڪدامن ۽ سچو آهي.

١١- اهو ننڍو ٻار جنهن سهڻي رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي زيارت ڪرڻ شرط سلام پڙهيو هو، جيئن علامه روميءَ عليه الرحمة فرمايو آهي.

گفت كودك سلم الله عليك

يا رسول الله! قد جئنا اليك

يعني ٻار عرض ڪيو تہ اي الله جا رسول! اوهان تي الله جو سلام آهي اسين اوهان جي خدمت ۾ حاضر ٿيا آهيون.

# فائدو ١٠

قرآن مقدس جي هنن آيتن ۾ بيبي مريم جي ماءُ جي پيٽ ۾ هجڻ جو ذڪر "ما فِي بطنِي محررا" ۽ ڄمڻ جو ذڪر "اِنِّيۡ وَضَعۡتُهَا اُنۡثٰى" ۽ سنڀال جو ذڪر "وَكَفَّلَهَا زَكَرِيَّا" ڪرڻ سان ثابت ٿيو ته الله تعالىٰ جي پيارن جي پيدائش، ڄمڻ ۽ سنڀالڻ جو ذڪر ڪرڻ سنت الـهيه آهي تنهن جي ڪري حضور، شافع يوم النشور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي ڄمڻ، وڏي ٿيڻ، دين جي دعوت ڏيڻ وغيره جو ذڪر ڪرڻ به سنت الهيه آهي ۽ اهڙي ذڪر لاءِ ميلاد جون محفلون منعقد ڪرڻ به سهڻو عمل آهي ۽ اهو به ثابت ٿيو ته دين جي ڪم ۽ خدمت لاءِ پنهنجي اولاد کي وقف ڪرڻ جي باس باسڻ، نذر ڪرڻ جيئن بيبي مريم جي والده باس باسي هئي سهڻو عمل آهي ۽ اهو به ثابت ٿيو ته اولاد جو حق ماءُ تي به آهي ۽ ماءُ پنهنجي اولاد جو پاڻ نالو رکي ته به جائز آهي جيئن حنه سائڻ پنهنجي ڌيءُ جو نالو مريم رکيو هو.

# تنبيه

ڪرامتن کي مڃڻ جو مطلب اهو نه آهي ته ماڻهو هر ڪم جي نسبت هرويرو ان ڪرامت ظاهر ڪندڙ ولي ڏي ڪري پر پلو ۽ سهڻو طريقو اهو آهي ته شرڪ ۽ ڪفر جي شبهي کان بچندي ڪرامت سان ظاهر ٿيندڙ ڪم جي نسبت به الله تعالىٰ ڏانهن ڪجي جيئن بيبي مريم سائڻ اڻ منداتا ميوا ملڻ واريءَ ڪرامت کي الله تعالىٰ ڏانهن نسبت ڪندي فرمايو ته "هُوَ مِنۡ عِنۡدِاللّٰهِ" اهو الله وٽان آهي- ها- جيڪڏهن ان ڪم جي نسبت الله تعالىٰ جو ٻانهو مجازاً پاڻ ڏي ڪري يا ٻيو ڪو ان ڏانهن ڪري ته ان کي به ڪافر يا مشرڪ نه چئبو جيئن قرآن پاڪ ۽ حديث جي ڄاڻندڙن جي اڳيان نيڪ روشن آهي. هر ڳالهه ۾ اسلامي احڪام جي سختيءَ سان پائبندي ڪرڻ مسلمان جو خصوصي شان آهي.

هُنَالِكَ دَعَا زَكَرِيَّا رَبَّهٗ ۚ قَالَ رَبِّ هَبْ لِيْ مِنْ لَّدُنْكَ ذُرِّيَّةً

اتيئي دعا گهري زڪريا پنهنجي رب کان، عرض ڪيائين تہ اي منهنجا پالڻهار! عطا ڪر مون

طَيِّبَةً ۚ اِنَّكَ سَمِيْعُ الدُّعَآءِ ﴿٣٨﴾ فَنَادَتْهُ الْمَلٰٓئِكَةُ وَهُوَ قَآئِمٌ

کي پاڻ وٽان اولادپاڪ بيشڪ تون دعا ٻڌندڙ آهين پوءِ سڏيو ان کي ملائڪن ۽ اهو بيٺو نماز

يُّصَلِّيْ فِي الْمِحْرَابِ ۙ اَنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكَ بِيَحْيٰى مُصَدِّقًا ۢ بِكَلِمَةٍ

پڙهي عبادت واريءَ جاءِ ۾ تہ بيشڪ الله خوشخبري ٿو ڏي توکي يحيىٰ جي تصديق ڪندڙ الله جي

مِّنَ اللّٰهِ وَسَيِّدًا وَّحَصُوْرًا وَّنَبِيًّا مِّنَ الصّٰلِحِيْنَ ﴿٣٩﴾ قَالَ رَبِّ

(طرفان آيل) فرمان جي ۽ سردار ۽ عورتن کان بچندڙ ۽ نبي صالحن مان هوندو عرض ڪيائين تہ اي منهنجا پالڻهار!

اَنّٰى يَكُوْنُ لِيْ غُلٰمٌ وَّقَدْ بَلَغَنِيَ الْكِبَرُ وَامْرَاَتِيْ عَاقِرٌ ۭ قَالَ

ڪٿان ٿيندو مون کي پٽ ۽ تحقيق پهتي مون کي پوڙهائپ ۽ منهنجي زال سنڍ آهي (الله) فرمايو تہ

كَذٰلِكَ اللّٰهُ يَفْعَلُ مَا يَشَآءُ ﴿٤٠﴾ قَالَ رَبِّ اجْعَلْ لِّيْٓ اٰيَةً ۭ قَالَ

ائين ئي الله ڪري ٿو جيڪي گهري ٿو عرض ڪيائين تہ اي منهنجا پالڻهار! مقرر ڪر تون مون لاءِ ڪا نشاني

اٰيَتُكَ اَلَّا تُكَلِّمَ النَّاسَ ثَلٰثَةَ اَيَّامٍ اِلَّا رَمْزًا ۭ وَاذْكُرْ رَّبَّكَ

(الله) فرمايو تہ تو لاءِ نشاني هيءَ آهي جو نہ ڳالهائي سگهندين ماڻهن سان ٽي ڏينهن اشاري کان سواءِ ۽ ياد ڪر پنهنجي

كَثِيْرًا وَّسَبِّحْ بِالْعَشِيِّ وَالْاِبْكَارِ ﴿٤١﴾ ع

رب کي گهڻو ۽ تسبيح پڙهہ شام ۽ صبح جو

ع ١٢/٤

# تفسير

حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام جي تمام گهڻي عمر اولاد کان سواءِ گذري وئي هئي جڏهن مريم سائڻ وٽ اڻ مندائتا ميوا ڏسڻ لڳو ته سندس دل ۾ به آرزو پيدا ٿي ته جيئن الله تعاليٰ مريم سائڻ کي اڻ مندائتا ميوا ڏي ٿو ته مونهنجي پيريءَ ۾ جيڪا اولاد جي مند نه ناهي جيڪڏهن مون کي به اڻ مندائتو اولاد ڏيندو ته ان جي اڳيان ڪا وڏي ڳالهه ناهي. پوءِ بيبي مريم پلاريءَ جي عبادت واريءَ جاءِ ۾ ئي الله تعاليٰ کان دعا گهريائين ته اي منهنجا پالڻهار! مون کي پنهنجيءَ عنايت سان پاڪ، صاف ٻچو عطا فرماءِ، بيشڪ تون دعائون ٻڌندڙ رب آهين.

"فَنَادَتْهُ الْمَلَائِكَةُ" يعني پاڻ پنهنجي عبادت خاني ۾ عبادت ڪري رهيو هو ته ڪيس ملائڪن سڏي الله تعاليٰ جي بارگاهه ۾ سندس دعا جي مقبوليت جي خوشخبري ڏني ته الله تعاليٰ اوهان کي پٽ عطا ڪندو، جنهن جو نالو مبارڪ يحيٰ هوندو، يحيٰ جي معنيٰ زنده رهڻ وارو. مفسر قرآن، ابن جرير عليه الرحمة مختلف روايتن سان حضرت قتادة کان آندو آهي ته انما سمي يحيٰ لان الله احياه بالايمان (١) يعني يحيٰ نالو ان جي ڪري رکيو ويس جو الله تعاليٰ ان کي ايمان سان زنده رکيو هو.

"مُصَدِّقًا بِكَلِمَةٍ مِّنَ اللهِ" الله جي فرمان جي تصديق ڪندڙ هوندو، حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام کي پٽ جي خوشخبري ڏيڻ سان گڏ اهو به ٻڌايو ويو ته توکي عطا ڪيل پٽ الله تعاليٰ جي ڪلمه "ڪن" سان پيدا ٿيندڙ عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جي پاڪ ۽ نبي هجڻ جي به تصديق ڪندڙ هوندو، حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جو پيءُ کان سواءِ پيدا ٿيڻ حيران ڪندڙ امر هو ان جي ڪري سندس آمد کان اڳ ۾ ئي حضرت يحيٰ عليه الصلواة والسلام سندس اچڻ جي خبر ڏيڻ شروع ڪري ڏني هئي جو ته حضرت يحيٰ عليه الصلواة والسلام جي بزرگيءَ ۽ پاڪدامنيءَ جو سيني کي اعتراف هو.

"وَسَيِّدًا" (۽ سردار) حضرت ابن عباس رضي الله عنهما جو فرمان آهي ته سيد جي معنيٰ آهي بردبار ۽ پرهيزگار. مجاهد جو چوڻ آهي ته سيد جي معنيٰ الڪريم

(١) تفسير ابن جرير ص١٧١ جلد ٣

على الله. الله وٽ عزت وارو. عڪرمه جو فرمان آهي تہ سيد جي معنيٰ جنهن تي ڪاوڙ غالب نہ اچي، سعيد بن مسيب جو ارشاد آهي تہ سيد جي معنيٰ فقہ وارو عالم. (١) علامه استاد، زجاج جو فرمان آهي تہ سيد جي معنيٰ پنهنجي همعصرن کان هر شيءِ ۾ بلند هجڻ وارو. (٢)

"وَحَصُوْرًا" ستوجتو (پاڻ کي روڪيندڙ) مراد آهي تہ طاقت جي باوجود پاڻ کي عورتن کان روڪيندڙ، ڪن لکندڙن لکيو آهي تہ حضرت يحيىٰ عليه الصلواة والسلام ۾ مڙسي نہ هئي يا ڪيس مردن وارو عضوو نہ هو، پر اهو چوڻ صحيح نہ آهي، ائين چوڻ الله تعالىٰ جي نبي ۾ عيب ڪڍڻ آهي جيڪو سخت گناهہ آهي صحيح معنيٰ آهي تہ ان پلاري طاقت هوندي پاڻ کي عورتن کان روڪيو هو الله تعالىٰ جي عبادت ۾ ايترو تہ مشغول هوندو هو جو عورتن ڏي توجهہ ڪرڻ لاءِ وقت ئي نہ ملندو هوس. مگر اسان جي پياري نبي صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي ذات جامع صفات آهي پاڻ الله تعالىٰ جي عبادت سان گڏ معاشري کي درست رکڻ ۽ ماڻهن کي حقوق جي تعليم ڏيڻ لاءِ شاديون ڪيون هيائون تنهن جي ڪري محمدي امت کي پنهنجي رسول صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جي رستي تي هلڻ گهرجي.

"وَنَبِيًّا مِّنَ الصّٰلِحِيْنَ" يعني صلاح ۽ رشد جي اعلىٰ مرتبي نبوت تي فائز ۽ نهايت لائق هوندو. علامه قرطبيءَ لکيو آهي تہ "الصالح الذي يؤدي للهماافترض عليه والى الناس حقوقهم (٣) يعني صالح ماڻهو اهو آهي جيڪو الله جا فرض ۽ ماڻهن جا حق ادا ڪري.

"قَالَ رَبِّ اَنّٰى يَكُوْنُ لِيْ غُلَامٌ" آلاية- جڏهن حضرت زڪريا عليه السلام کي پٽ ڄمڻ جي خوشخبري ملي تہ پنهجي پوڙهائپ ۽ پنهنجي گهر واريءَ جي وڏي عمر کي بارگاهہ ايزديءَ ۾ پيش ڪندي عرض ڪرڻ لڳو تہ مولا! مون کي هن وڏيءَ عمر ۾ وڏيءَ عمر واريءَ گهر واريءَ مان پٽ ڪيئن ڄمندو؟ تہ ان جو انتظار ڪريان ان جي اچڻ جي صورت ڪهڙي هوندي؟ ڇا منهنجي جواني موٽي ايندي يا منهنجي گهرواريءَ ۾ ٻار ڄڻڻ جي صلاحيت پيدا ڪئي ويندي؟ الله تعالىٰ فرمايو تہ اهو سڀ منهنجي قدرت جي اڳيان آسان آهي، جيڪي ناهيان جهڙي نموني ناهيان مرضيءَ وارو آهيان.

(١) تفسير الدرالمنثور ص٢١-٢٢ ج٢ (٢) تفسير القرطبي ص٧٧ ج٤
(٣) تفسير القرطبي ص٧٩ جلد٤

هن جهان جو نظام اسباب جي ذريعي هلي ٿو پر منهنجي قدرت ۽ مشيت اسباب جي پائبند نہ آهي. عادي اسباب جي خلاف غيرمعمولي طريقي سان ڪنهن شيءِ کي پيدا ڪيان تہ ڪري سگهان ٿو. اصل ڳالهہ هيءَ آهي تہ بيبي مريم سائڻ کي اڻ منداڻا ميوا ملڻ ۽ سندس لاءِ غيرمعمولي ڳالهين جي ظاهر ٿيڻ کي ڏسي حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام جي پيريءَ ۾ پٽ لاءِ دعا گهرڻ ۽ ڪيس ان عمر ۾ پٽ ملڻ، سڀ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي پيءُ ڪان سواءِ پيدا ٿيڻ لاءِ حجتون قائم ڪرڻ هو تہ جيڪو ماڻهو مٿيون ڳالهيون ڏسندو اهو حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي پيءُ ڪان سواءِ پيدا ٿيڻ کي بہ مڃڻ ۾ دير نہ ڪندو. وري عرض ڪيائين تہ اي مالڪ! يلا ان پٽ جي ماءُ جي پيٽ ۾ اچڻ جي ڪا نشاني تہ ٻڌاءِ جو ان نشانيءَ سان سمجهان تہ هاڻي منهنجو پٽ پنهنجي ماءُ جي پيٽ ۾ اچي ويو آهي. الله تعالىٰ اها سندس دعا قبول ڪري فرمايو تہ نشاني هيءَ آهي جو جڏهن اهو ماءُ جي پيٽ ۾ ايندو تہ تون ماڻهن سان ٽي ڏينهن ڳالهائي نہ سگهندين صرف اشارن سان ڪين جواب ڏيندين ۽ ڪم ڪار سمجهائيندين. ڄاڻڻ گهرجي تہ حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام جي طرفان اهو عرض ڪري نشاني گهرڻ شڪ جي بنياد تي نہ هو. علامه آلوسيءَ بغدادي عليه الرحمة لکيو آهي تہ ليتلقىٰ تلک النعمة بالشکر حين حصولها (١) يعني حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام جي اها دعا ان لاءِ هئي تہ ان نعمت جي ملڻ جو وقت معلوم ٿئي تہ اها نعمت الله تعالىٰ جو شڪر ڪندي حاصل ڪجي ۽ سندس بي نياز بارگاهہ ۾ نياز نوڙت سان سجدي گذار رهجي.

"وَاذْكُرْ رَبَّكَ بِالْعَشِيِّ وَالْإِبْكَارِ" پنهنجي رب کي شام ۽ صبح ياد ڪر جيڪڏهن تنهنجي زبان ڳالهائي نہ سگهي تہ بہ دل ۾ الله تعالىٰ کي ياد ڪندو رهہ. محمد بن ڪعب قرظي عليه الرحمة فرمايو آهي تہ جيڪڏهن الله تعالىٰ جي ذڪر ڇڏڻ جي ڪنهن کي رخصت هجي ها تہ حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام کي هجي ها ۽ جيڪڏهن ذڪر ڇڏڻ جي اجازت هجي ها تہ جنگ جي ميدان ملهائيندڙن مجاهدن کي هجي ها. انهن جي لاءِ بہ حڪم آهي "يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا إِذَا لَقِيتُمْ فِئَةً فَاثْبُتُوا وَاذْكُرُوا اللَّهَ كَثِيرًا لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ (٢) اي ايمان وارؤ! جڏهن دشمنن جي جماعت سان مقابلي ۾ اچو تہ ثابت قدم رهو ۽ الله جو ذڪر گهڻو ڪيو تان تہ ڪامياب ٿيو.

(١) تفسير روح المعاني ص١٥٥ جزءُ ٣ (٢) الانفال آيت ٤٥

متي ذڪر ڪيل آيتن ۾ غور ڪرڻ سان هيٺيان فائدا حاصل ٿيا..

## فائدو ١

الله تعاليٰ جي پيارن کان نقل ڪيل دعائون قبول پونديون آهن هتي حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام به اها دعا گهري هئي جيڪا ڪيترن نبين عليهم الصلواة والسلام جي ڏاڏي حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جن گهري هئي.

## فائدو ٢

حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام اتي ئي دعا گهري جتي بيبي مريم سائڻ هئي جيئن قرآن جي لفظ "هُنَالِکَ" مان معلوم ٿيو. ان مان معلوم ٿئي ٿو ته جنهن جاءِ ۾ الله تعاليٰ جا صالح ٻانها يا ٻانهيون رهن اتي دعا گهرڻ سٺي ڳالهه آهي ۽ الله تعاليٰ پنهنجي فضل وڪرم سان اها دعا قبول ٿو ڪري. علامه ابن عابدين شامي عليه الرحمة لکيو آهي ته حضرت امام شافعي عليه الرحمة فرمايو آهي ته مان حضرت امام ابو حنيفه عليه الرحمة سان برڪت حاصل ڪندو آهيان ۽ سندس قبر (مبارڪ) تي ايندو آهيان جيڪڏهن الله تعاليٰ جي درگاهه ۾ ڪا حاجت هوندي اٿم ته ٻه رڪعتون نفل پڙهي ۽ امام صاحب جي قبر وٽ الله تعاليٰ کان دعا گهرندو آهيان ته (ان بزرگ ٻانهي جي برڪت سان) الله تعاليٰ اها منهنجي حاجت جلد پوري ڪندو آهي. (١)

## فائدو ٣

جڏهن ڪنهن ٻانهي وٽ الله تعاليٰ جي ڪا نعمت ڏسجي ته پنهنجي لاءِ به الله تعاليٰ کان اها نعمت گهرجي، جيئن حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام بيبي مريم وٽ اڻ مندائتا ميوا ڏسي پنهنجي لاءِ اڻ مندائتو (پيريءَ ۾) پٽ گهريو هو. برسات ۽ مينهن پوڻ وقت دعا گهرڻ به سٺي ڳالهه آهي.

## فائدو ٤

انبياءِ ڪرام عليهم الصلواة والسلام جو شان ۽ سندن سهڻيون صفتون

(١) رد المختار ص٥١ جلد١

بيان ڪرڻ خداوندي سنت آهي. جيئن الله تعالىٰ حضرت يحيىٰ عليه الصلواة والسلام جون سهڻيون صفتون، مصدقاً، سيداً، حصوراً، نبياً، من الصالحين بيان فرمايون آهن.

## فائدو ٥

آيت ٣٩ مان معلوم ٿيو تہ علوم خمسه (پنج علم، ڪڏهن مرندو ڪٿي دفن ٿيندو، پيٽ ۾ ڇا آهي؟ صبحاڻي ڇا ٿيندو؟ قيامت ڪڏهن ايندي؟) جو علم بہ الله تعالىٰ پنهنجي ڪن پيارن کي عطا ڪندو آهي الله تعالىٰ جڏهن حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام کي ملائڪن جي ذريعي خوشخبري ڏني تہ توکي مٿين صفتن واري پٽ جي مبارڪ آهي ۽ سندس گهرواريءَ جي پيٽ ۾ ان پٽ جي اچڻ جي نشاني (ماڻهن سان اشاري سان ڳالهائڻ) ظاهر ٿي تہ ڪيس ۽ سندس گهرواريءَ کي خبر هئي تہ پيٽ ۾ اچڻ وارو، پٽ آهي ان سان گڏ ان پٽ جي مٿي لکيل صفتن سان موصوف هجڻ جو بہ علم هو.

## فائدو ٦

الله تعالىٰ جي دربار ۾ پٽ جي ملڻ لاءِ دعا گهرڻ ان نيت سان تہ اهو وڏو ٿي الله تعالىٰ جي دين جي خدمت ڪري نبين عليهم الصلواة والسلام جي سنت آهي جيئن حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام جون دعائون مختلف لفظن سان قرآن ڪريم بيان ڪيون آهن. صالح اولاد پيءُ ۽ ماءُ جي لاءِ صدقو جاري آهي. جيڪو دنيا جي حياتيءَ، قبر ۽ قيامت ۾ ڪم ايندو آهي.

## فائدو ٧

الله تعالىٰ جي پيارن نبين عليهم الصلواة والسلام جي دنيا تي پهچڻ کان اڳ ۾ ئي سندن آمد جي خبر دنيا ۾ مشهور ٿي ويندي آهي جيئن حضرت آدم عليه الصلواة والسلام جي آمد کان اڳ سندس خبر ملائڪن ۾ مشهور ٿي ويئي هئي، حضرت ابراهيم ۽ حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام جي خبر سندن ڄمڻ کان پهريان دنيا وارن جي ڪنن تي پهتي هئي جو نمرود ۽ فرعون ظلم ڪندي ڪيترا ٻار کهايا هئا حضرت يحيىٰ عليه السلام جي خبر حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام جي اشارن سان ڳالهائڻ جي ڪري ماڻهن ۾ هلي وئي هئي ۽ اسان جي آقا، الله تعالىٰ جي آخري

پيغمبر عليہ الصلواة والسلام جن جي آمد جي خبر ٻ اڳيئي دنيا ۾ مشهور ٿي چڪي هئي، جيئن سيرت جي ڪتابن ۾ صاف صاف لکيل آهي.

## فائدو ٧

حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام جي اولاد لاءِ دعا گهرڻ مان ثابت ٿيو ته شادي ڪري اولاد جي تمنا رکڻ، نبين ڀلارن عليهم الصلواة والسلام جي سنت ۽ سندن پسند آهي ابن ماجه سيده عائشه رضي الله تعاليٰ عنها کان روايت آندي آهي ته رسول الله ﷺ جن فرمايو "اَلنِّكَاحُ مِنْ سُنَّتِىْ فَمَنْ لَّمْ يَعْمَلْ بِسُنَّتِىْ فَلَيْسَ مِنِّىْ وَتَزَوَّجُوْا فَاِنِّىْ مُكَاثِرٌ بِكُمُ الْاُمَمَ وَمَنْ كَانَ ذَا طَوْلٍ فَلْيَنْكِحْ وَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَعَلَيْهِ بِالصَّوْمِ فَاِنَّهٗ لَهٗ وِجَآءٌ" (١) يعني نڪاح ڪرڻ منهنجي سنت آهي پوءِ جنهن منهنجي سنت تي عمل نہ ڪيو اهو منهنجي امت مان ناهي. جيڪو (مالي) طاقت وارو آهي اهو نڪاح ڪري ۽ جيڪو (مالي) طاقت نہ ٿو رکي اهو روزو رکڻ لازم سمجهي اهوئي ان لاءِ بچاءُ آهي. هڪ حديث ۾ آيو آهي تہ حضرت انس رضي الله تعاليٰ عنه جي ماءُ ام سليم حضور عليه الصلواة والسلام جن جي خدمت عاليه ۾ عرض ڪيو تہ" انس اوهان جو خادم آهي ان لاءِ دعا گهرو"، پاڻ ان لاءِ هيئن دعا فرمايائون تہ "اَللّٰهُمَّ اَكْثِرْ مَالَهٗ وَوَلَدَهٗ وَبَارِكْ لَهٗ فِيْمَا اَعْطَيْتَهٗ" اي الله! انس جو مال ۽ اولاد گهڻو ڪر ۽ جيڪي ڪيس ڏنو اٿئي ان ۾ برڪت وجهي ڏيس حبيب ڪريم ﷺ جن جي برڪت واريءَ دعا جو اثر اهو ٿيوجو حضرت انس رضي الله عنه پنهنجيءَ حياتيءَ ۾ سو (١٠٠) جي قريب اولاد ڏٺو ۽ ڪيس مالي وسعت بہ نصيب ٿي. (٢)

## فائدو ٨

حضرت عيسيٰ عليه السلام جي ذڪر کان اڳيان حضرت يحييٰ عليه الصلواة والسلام جو ذڪر ان جي ڪري آندو ويو تہ جيڪڏهن پيرسنيءَ ۽ نااميديءَ جي عالم ۾ حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام کي حضرت يحييٰ عليه السلام جهڙو پاڪ، صاف پٽ ڏيڻ الله تعاليٰ جي قدرت جو ڪمال آهي تہ مريم سڳوريءَ کي بہ مڙس

(١) تفسير القرطبي ص٧٢ ج٤
(٢) تفسير القرطبي ص ٧٣ جلد٤ معارف القرآن ص٥٧ جلد٢

کان سواءِ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جهڙو پٽ ڏيڻ ان جي قدرت جو ڪرشمو آهي. حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام نہ الله آهي نہ الله جو پٽ پر سندس پيدا ڪيل ٻانهو آهي.

## فائدو ٩

حضرت يحيىٰ عليه الصلواة والسلام ماءُ جي پيٽ ۾ هوندو هو تہ بيبي مريم سائڻ جي وجود ۾ حضرت عيسىٰ کي ڏسي جُهڪندو هو ۽ ان جي تعظيم ڪندو هو. علامه آلوسيءَ عليه الرحمة امام احمد جي حوالي سان مجاهد جي روايت آندي آهي تہ قالت امراة زكريا لمريم انى اجد الذى فى بطنى يتحرك للذى فى بطنك يعني زڪريا عليه السلام جي گهر واري حضرت بيبي مريم کي چوندي هئي تہ مان محسوس ٿي ڪيان تہ جيڪو ٻچو منهنجي پيٽ ۾ آهي تنهنجي پيٽ واري (کي ڏسي ان) لاءِ تڙپي ٿو. ان ئي معنىٰ واري روايت ابن جرير حضرت ابن عباس رضي الله تعالىٰ عنهما کان بہ آندي آهي. (١)

وَاِذْ قَالَتِ الْمَلٰٓئِكَةُ يٰمَرْيَمُ اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰكِ وَطَهَّرَكِ

۽ (ياد ڪريو) جڏهن چيو ملائڪن تہ اي مريم! بيشڪ الله برگزيدو بنايو توکي ۽ پاڪ ڪيو توکي

وَاصْطَفٰكِ عَلٰى نِسَآءِ الْعٰلَمِيْنَ ﴿٤٢﴾ يٰمَرْيَمُ اقْنُتِىْ لِرَبِّكِ

۽ چونڊيو آهي توکي جهانن جي عورتن تي اي مريم! خلوص سان عبادت ڪر پنهنجي رب جي

وَاسْجُدِىْ وَارْكَعِىْ مَعَ الرّٰكِعِيْنَ ﴿٤٣﴾

۽ سجدو ڪر ۽ رڪوع ڪر رڪوع ڪندڙن سان گڏ

(١) روح المعاني ص١٤٧ جزءِ ٣

## تفسير

حضرت زڪريا ۽ يحييٰ عليه الصلواة والسلام جو قصو جنهن ۾ عمران جي اولاد جي برگزيده هجڻ جو ذڪر ۽ حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جي آمد جي تمهيد هئي ضمني مناسبات جي ڪري وچ ۾ آيو هو هاڻي وري حضرت بيبي مريم ۽ سندس فرزند حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جي واقعن ڏانهن ڪلام منتقل ٿي رهيو آهي ۽ ٻڌايو پيو وڃي تہ حضرت بيبي مريم سلام الله عليها کي ملائڪن مخاطب ٿي چيو هو تہ اي مريم! قدرت واريءَ نگاهہ انتخاب توکي شروعات واريءَ عمر کان ئي منتخب فرمايو هو. الله جل جلاله جي نبي حضرت زڪريا عليه الصلواة والسلام تنهنجي سرپرستي ۽ سنڀال ڪئي. الله تعاليٰ تنهنجي دل ۾ پنهنجي ذڪر ۽ عبادت سان لڳاءُ پيدا ڪيو تنهنجي لاءِ غيب کان اڻ منڌائتا ۽ نموني نموني ميوا موڪليا ويا. عورت هجڻ جي باوجود توکي مالڪ مٺي جي ذات اعليٰ منصب تي پهچائي توکان مختلف نمونن جون ڪرامتون ظاهر ڪرايون. الله تعاليٰ توکي سهڻا اخلاق، پاڪ طبيعت، ظاهري، باطني نزاهت ۽ صفائي نصيب ڪئي ۽ تنهنجو بيت المقدس سان متصل رهڻ قبول فرمايو (تنهنجي وقت وارن) سيني جهانن جي عورتن تي توکي فضيلت، شرف ۽ شان بخشيو، مفسرن پلارن لکيو آهي تہ ملائڪنمان اهو سائڻ سان ڳالهائڻ وارو جبرئيل هو ۽ اهو وحي نہ پر الهام هو (١) ڪن بزرگن جو چوڻ آهي تہ بيبي سائڻ سان ملائڪن جي روبرو گفتگو سندس ڪرامت هئي. قيل ڪلموها شفاها ڪرامہ لها (٢) الهام طور ملائڪن جو غير نبي سان ڳالهائڻ ممڪن آهي منع نہ آهي صرف الله تعاليٰ جي دين جي دعوت ۽ تبليغ وارو وحي غير نبي ڏي نہ ٿيندو آهي.

## سوال

مٿي ذڪر ڪيل آيت "قَالَتِ الْمَلٰٓئِكَةُ" ۾ الملائڪة جمع جو صيغو آهي ان مان صرف هڪ جبريل مراد ڪيئن ٿو وٺي سگهجي؟

(١) تفسير المراغي ص١٥٠ ج١ جزءُ ٣ (٢) تفسير ابوالسعود ص٣٥ جلد١ جزءُ٢

## جواب

علامه اسماعيل حقي عليه الرحمة لکيو آهي ته وانما جمع تعظيما له - يعني جمع جو صيغو حضرت جبرئيل عليه السلام جي تعظيم لاءِ آندو ويو آهي تورو اڳتي لکيو اٿس ته فکلمها شفاها کرامة لها وکرامات الاولياءِ حق (١) يعني جبرئيل عليه السلام جو سائڻ سان روبرو ڳالهائڻ سندس کرامت هئي ۽ ولين جون کرامتون حق آهن. علامه ابو حيان اندلسي عليه الرحمة لکيو آهي ته جڏهن جبرئيل عليه السلام لهندو آهي ته ان سان گڏ ٻيا ملائڪ به لهي ايندا آهن پوءِ جڏهن جبرئيل بيبي صاحبه سان ڳالهايو تي ته ان وقت به اهي ملائڪ ساڻس گڏ هئا ان جي ڪري الملائكة جمع آندو ويو آهي. (٢)

## بيبي مريم سائڻ جو شان

قرآن ڪريم جي هن آيت مان ثابت ٿيو ته بيبي مريم سائڻ کي الله تعالىٰ برگزيدو ۽ پيارو بنايو هو. ٻيءَ آيت ۾ الله جل جلاله جو فرمان آهي ته "وَأُمُّهُ صِدِّيقَةٌ" (٣) يعني ان (حضرت عيسىٰ عليه السلام) جي ماءُ صديقه هئي. ٽين آيت ۾ آهي "وَصَدَّقَتْ بِكَلِمَاتِ رَبِّهَا وَكُتُبِهِ وَكَانَتْ مِنَ الْقَانِتِيْنَ" (٤) يعني پنهنجي رب جي فرمانن ۽ ان جي ڪتابن جي تصديق ڪيائين ۽ هئي فرمانبردارن مان- هنن آيتن ۾ سندس صديقيت ۽ الله جي ڪلمات ۽ ڪتابن جي تصديق ڪرڻ ۽ فرمانبرداري جي مقام تي فائز هجڻ جو ذڪر آيو آهي.

## سوال

سيني عورتن ۾ پلي عورت ڪهڙي آهي؟

## جواب

قرآن ڪريم جي هن آيت مان جيڪو سيده بيبي مريم رضي الله تعالىٰ عنها جو سيني عورتن کان پلو هجڻ بيان ٿيو آهي سو بعض وجوهات جي ڪري آهي

(١) روح البيان ص٣٢ جلد٢ (٢) البحر المحيط ص٤٥٥ جلد٢
(٣) سورة المائده آيت ٧٥ (٤) سورة التحريم آيت ١٢

مثلاً الله تعالىٰ ان ۾ اهڙي صلاحيت، لياقت ۽ استعداد رکيو هو، جو ڪنهن انسان جي هٿ لڳائڻ کان سواءِ ئي سندس وجود مسعود مان حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جهڙو اولو العزم پيغمبر پيدا ٿيو ۽ اها امتيازي حيثيت ٻي ڪنهن به عورت کي نه عطا ٿي، تنهن ڪري وڏن وڏن مفسرن لکيو آهي ته "وَاصْطَفٰكِ عَلٰى نِسَآءِ الْعَالَمِيْنَ" ۾ عالمين (جهانن) مان مراد ان وقت جا جهان آهن، اها پنهنجي همعصر عورتن مان سيني کان پلي آهي ۽ اهڙو استعمال قرآن پاڪ جي ٻين آيتن ۾ به آيل آهي جيئن ارشاد ايزدي آهي "وَاِذْ قَالَ مُوْسٰى لِقَوْمِهٖ يَا قَوْمِ اذْكُرُوْا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ جَعَلَ فِيْكُمْ اَنْبِيَآءَ وَجَعَلَكُمْ مُّلُوْكًا وَّاٰتَاكُمْ مَّالَمْ يُؤْتِ اَحَدًا مِّنَ الْعَالَمِيْنَ (١) يعني (ياد ڪر) جڏهن موسىٰ (عليه السلام) پنهنجي قوم کي چيو ته اي منهنجي قوم وارؤ! پاڻ تي الله جي نعمت ياد ڪيو جو اوهان ۾ نبي پيدا ڪيائين ۽ اوهان کي (دنيا ۾) بادشاهه بنايائين ۽ اوهان کي اهي (نعمتون) ڏنائين جو جهانن مان ڪنهن کي به نه ڏنائين. هتي به العالمين مان مراد ان وقت جا جهان آهن. هن آيت "وَلَقَدِ اخْتَرْنٰهُمْ عَلٰى الْعَالَمِيْنَ" (٢) (البته تحقيق برگزيدو بنايوسون انهن (بني اسرائيلن) کي جهانن کان) ۾ به مراد ان وقت جا جهان آهن. علامه شوڪانيءَ لکيو آهي ته ان مريم عليها السلام سيدة نساءِ عالمها لا نساءَ جميع العالم(٣) يعني بيشڪ مريم سلام الله عليها پنهنجي وقت واري جهان جي عورتن کان پلي هئي، سڄي دنيا جي عورتن کان پلي ناهي. حضور ﷺ جن جي حديثن ۾ ٻين ٻيبين جي پلائي به آيل آهي.

## حديث ١

ابن ابي شيبه، بخاري، مسلم، ترمذي، نسائي، ابن جرير، ابن مردويه سيني محدثن حضرت علي رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي ته رسول الله ﷺ جن فرمايو ته "خَيْرُ نِسَآءِهَا مَرْيَمُ بِنْتُ عِمْرَانَ وَخَيْرُ نِسَآءِهَا خَدِيْجَةُ بِنْتُ خُوَيْلِدٍ" يعني دنيا جي عورتن ۾ پلي مريم بنت عمران آهي ۽ دنيا جي عورتن ۾ پلي خديجه بنت خويلد آهي. هن حديث شريف ۾ حضرت ام المؤمنين خديجه رضي الله عنها کي به ٻيبي مريم سائڻ وانگر عورتن ۾ پلو سڏيو ويو آهي.

(١) سورة المائده آيت ٢٠ (٢) سورة الدخان آيت ٣٢
(٣) فتح القدير ص٣٤٠ جلد١

## حديث ٢

محدث حاكم صحيح سند سان حضرت عبدالله بن عباس رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله عليه وسلم جن فرمايو "اَفۡضَلُ نِسَآءِ الۡعَالَمِيۡنَ خَدِيۡجَةُ وَفَاطِمَةُ وَمَرۡيَمُ وَآسِيَةُ امۡرَأَةُ فِرۡعَوۡنَ" يعني جهانن جي عورتن کان ڀليون خديجه، فاطمه، مريم ۽ فرعون جي گهرواري آسيه آهن. جيئن حضرت بيبي مريم حضرت عيسىٰ عليه السلام کي ڄڻيو ۽ ان جي پرورش ڪئي هئي تيئن آسيه سائڻ حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام کي ڏسي فرمايو هو تہ "قُرَّةُ عَيۡنٍ لِيۡ وَلَكَ لَا تَقۡتُلُوۡهُ عَسٰى اَنۡ يَنۡفَعَنَا اَوۡ نَتَّخِذَهٗ وَلَدًا (١) يعني هيءُ (ٻچو) منهنجي ۽ تنهنجي لاءِ اک جو ٺار آهي، ان کي قتل نہ ڪيو اميد آهي تہ اسان کي نفعو ڏيندو يا ان کي پٽ ڪري رکنداسين.

## حديث ٣

ابن ابي شيبه، بخاري، مسلم، ترمذي، نسائي، ابن ماجه ۽ ابن جرير حضرت ابوموسىٰ اشعري رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله عليه وسلم جن فرمايو "كَمُلَ مِنَ الرِّجَالِ كَثِيۡرٌ وَلَمۡ يَكۡمُلۡ مِنَ النِّسَآءِ اِلَّا مَرۡيَمَ ابنت عِمران وَآسِيَةُ امۡرَاَةُ فِرۡعَوۡنَ وَفَضۡلُ عَائِشَةَ عَلَى النِّسَآءِ كَفَضۡلِ الثَّرِيۡدِ عَلَي الطَّعَامِ" يعني مرد گهڻا ڪمال وارا ٿيا ۽ عورتن مان مريم بنت عمران ۽ فرعون جي زال آسيه ڪمال واريون هيون ۽ عائشه عورتن کان ائين فضليت واري آهي جيئن ثريد (ڪُٽي ۽ چوري) ٻين کاڌن کان ڀلو کاڌو آهي. (٢) ابوحيان اندلسيءَ لکيو آهي تہ اسان جي بعضي علماءِ پنهنجن مشائخن کان هن ڳالهہ تي اتفاق نقل ڪيو آهي تہ ان فاطمة افضل النساءِ المتقدمات والمتاخرات لانها بضعة من رسول الله صلی الله تعالىٰ عليه وسلم (٣) يعني يقيناً حضرت بيبي فاطمه رضي الله عنها دنيا جي اڳين ۽ پوين عورتن کان ڀلي آهي ڇو تہ اها رسول الله صلی الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي جسم اطهر جو ٽڪرو آهي ۽ جيئن سندن جسم ساري ڪائنات ۾ افضل آهي تيئن سندن نياڻي سيده فاطمه زهرىٰ بہ ساريءَ دنيا جي عورتن کان افضل آهي. حضرت مولانا مخدوم محمد هاشم

(١) سورة القصص آيت ٩ (٢) الدر المنثور ص١٩٤ جلد٢

(٣) البحر المحيط ص ٤٥٦ جلد٢

صاحب جن بہ سنڌي زبان ۾ لکيل عقائد جي ڪتاب ۾ ائين آندو آهي. (١)

"وَطَهَّرَكِ" (۽ پاڪ بنايائين توکي) هن مان مراد بااخلاق، عادات ۽ ڪردار جي پاڪائي آهي يا حيض کان پاڪ ۽ صاف هجڻ آهي. علامه رشيد رضا صاحب لکيو آهي تہ والتطهير قد فسر بعدم الحيض وبذالک کانت اهلا لملازمة المحراب يعني تطهير (پاڪ ڪرڻ) جو تفسير حيض جي نہ اچڻ سان بہ ڪيو ويو آهي ۽ ان جي ڪري ئي بيت المقدس جي پر واريءَ عبادت جي جاءِ ۾ هميشه رهڻ جي لائق هئي. هن کان ٿورو اڳتي لکيو اٿس تہ روي ان السيدة فاطمة الزهراء ما کانت تحيض وانها لذالک لقبت بالزهراءِ (٢) يعني روايت ۾ آيو آهي تہ سيده فاطمه زهراءِ رضي الله تعالىٰ عنها کي حيض نہ ايندو هو ۽ يقيناً انهيءَ جي ڪري ئي کيس زهراءِ لقب ڏنو ويو هو.

"يٰمَرْيَمُ اقْنُتِيْ لِرَبِّكِ" اي مريم! پنهنجي رب جي خلوص سان عبادت ڪر- عبد بن حميد حضرت مجاهد کان روايت آندي آهي تہ جڏهن مريم سائڻ کي ملائڪن اهو حڪم پهچايو تہ الله تعالىٰ جي عبادت ۾ ايتري بيهندي هئي جو سندس پير مبارڪ سڄي پوندا هئا، ابن جرير امام اوزاعيءَ کان روايت آندي آهي تہ بيبي مريم ايتري قدر بيهندي هئي جو سندس پير مبارڪ سڄي ڦاٽي تہ پوندا هئا پر انهن مان پونءِ بہ وهندي هئي. (٣) هڪ روايت ۾ آهي تہ عبادت ۾ بيبي سائڻ ائين ڄمي بيهندي هئي جو پکي کيس بي ساهي شيءِ سمجهي سندس مٿان اچي ويهندا هئا (۴) المقصد تہ بيبي صاحبه کي خصوصي طرح حڪم ڪيو ويو هو تہ جڏهن الله تعالىٰ توکي ايتري عزت، بلند مقام ۽ مرتبو عطا ڪيو، ايترين نعمتن سان نوازيو آهي تہ الله جل جلاله جي اڳيان اخلاص ۽ تذلل سان سندس انعامن جو شڪر ادا ڪندي سندس بي نياز ۽ بي پرواه بارگاه ۾ جهڪيل رهہ. عبوديت جا فرائض سرانجام ڏيندي سندس فرمان کي ادا ڪرڻ ۾ سرگرمي ۽ محنت ڏيکار تانت جنهن عظيم امر جي پوري ڪرڻ جي لاءِ الله تعالىٰ توکي ذريعو مقرر ڪيو آهي، اهو ظاهر ٿئي.

"وَاسْجُدِيْ وَارْكَعِيْ مَعَ الرّٰكِعِيْنَ" (۽ سجدو ڪر ۽ رڪوع ڪندڙن سان گڏ رڪوع ڪر) هنن لفظن ۾ رڪوع کان سجدي کي اڳ ۾ ذڪر ڪيو ويو آهي

(١) تفسير تنوير الايمان ص٢٦ پ٣ (٢) تفسير المنار ص٣٠٠ جلد٣
(٣) الدر المنثور ص١٩٥ جلد٢ (۴) البحر المحيط ص۴٥٦ جلد٢

حالانڪ رڪوع اڳ ۾ سجدو پوءِ هوندو آهي. سو ان جي ڪري جو سجدو رڪوع کان وڏيڪ شرف ۽ شان وارو آهي يا انهن جي شريعت ۾ سجدو اڳ ۾ رڪوع پوءِ هوندو هو (١) يا تہ واو عطف جو ترتيب لاءِ نہ هوندو آهي صرف گڏ ڪرڻ لاءِ هوندو آهي ان فرمان مان مقصد سجدا ۽ رڪوع سڀ ادا ڪرڻ آهي ترتيب مقصود نہ آهي.

## سوال

"وَارْكَعِيْ مَعَ الرَّاكِعِيْنَ" هنن لفظن ۾ حڪم آهي تہ رڪوع ڪندڙن سان گڏ رڪوع ڪر. سيده مريم سائڻ تہ عورت هئي اها مردن رڪوع ڪندڙن سان گڏ رڪوع ڪيئن ڪري سگهندي؟ ان حڪم مان مراد ڇا آهي؟

## جواب

ان مان مراد آهي تہ جيئن مرد همت، جرءت، نياز ۽ نوڙت سان رڪوع ڪن تون بہ انهن جي رڪوع وانگر رڪوع ڪر ۽ الهي احڪام جي پائبند رهہ.

## مسئلو

هن مان اهو بہ ثابت ٿيو تہ رڪوع ۾ پهچڻ وارو جماعت ڪي پهچندڙ چيو ويندو ان جي ڪري هتي نماز ڪي رڪوع سان تعبير ڪيو ويو آهي.

هنن آيتن ۾ غور ڪرڻ سان هي فائدا حاصل ٿيا.

### فائدو ١

جنهن تي الله تعالىٰ جون نعمتون گهڻيون هجن ان ڪي الله تعالىٰ جو شڪر ۽ عبادت بہ گهڻي ڪرڻ گهرجي، جيئن حضرت بيبي مريم سائڻ تي الله تعالىٰ جون نعمتون گهڻيون هيون تہ ڪيس گهڻيءَ عبادت ڪرڻ جو حڪم مليو هو.

### فائدو ٢

ديني يا دنيوي اڳواڻن ڪي گهرجي تہ اهي وڌيڪ ديندار رهن. شريعت مطهرہ تي مضبوطيءَ سان عمل ڪن تانت سندن ماتحت عملو ۽ ٻيا ماڻهو ڪين ڏسي

---

(١) ڪمالين شرح اردو جلالين ص٣٦٤ ج ١

ديندار ٿين سيده مريم جي حالات مان عورتون سبق حاصل ڪن ۽ گهڻي شوق ۽ محبت سان الله جل جلاله جي عبادت ڪن.

## فائدو ٣

نبين عليهم الصلواة والسلام ڪان سواءِ ٻين سان بہ ظاهري يا باطني نموني سان ملائڪ ڳالهائيندا آهن. جنهن ڪي الهام سڏيو ويندو آهي جيئن "وَاِذْ قَالَتِ الْمَلٰٓئِكَةُ" مان ظاهر آهي مگر دين جي دعوت ۽ تبليغ لاءِ وحي ڪرڻ نبين عليهم الصلواة والسلام سان خاص هوندو آهي.

## فائدو ٤

مرد هجڻ واري صفت عورت هجڻ واريءَ صفت ڪان يقيناً وڌيڪ ڀلي آهي، پر ڪي عورتون شان، علم، عقل، ديانت ۽ عبادت جي لحاظ سان مردن ڪان بہ مٿاهيون هونديون آهن.

## فائدو ٥

مرد جو انتهائي ڪمال ڪيس نبوت جو عطا ٿيڻ آهي ۽ عورت جو انتهائي ڪمال صديقيت جي مقام تي فائز ٿيڻ آهي. ڪنهن ولي سڳوري ڪان پڇيو ويو هو تہ ابدال مڙئي ڪيترا آهن؟ جواب ۾ فرمايائين تہ چاليهہ نفس (هستيون) عرض ڪيو ويو تہ چاليهہ مرد ڇونہ ٿا چئو؟ فرمايائين تہ انهن ۾ ڪي عورتون بہ آهن.

## فائدو ٦

نماز جماعت سان پڙهڻ گهرجي جيئن "مَعَ الرّٰكِعِيْنَ" مان ظاهر آهي.

## فائدو ٧

نبوت صرف مردن ڪي ملي آهي عورتن مان ڪابہ عورت نبوت جي درجي تي نہ پهتي آهي جيئن الله تعالىٰ جو فرمان آهي "وَمَا اَرْسَلْنَا قَبْلَكَ اِلَّا رِجَالًا نُّوْحِيْٓ اِلَيْهِمْ" (١) ۽ اسان توکان اڳي صرف مرد (نبي ڪري) موڪليا هئا ۽

(١) سورة الانبياءِ آيت ٧

ٻيءَ آيت ۾ آهي "وَمَآ اَرۡسَلۡنَا مِنۡ قَبۡلِكَ اِلَّا رِجَالًا نُّوۡحِیۡۤ اِلَیۡهِمۡ" (١) يعني اوهان کان اڳي صرف مرد (نبي ڪري) موڪليا هياسون جن ڏانهن وحي ٿي ڪيوسون. باقي حضرت بيبي مريم ۽ حضرت بيبي آسيہ رضي الله عنهما جي لاءِ جيڪو وحي جو لفظ آيو آهي ان مان مراد نبوت نہ پر ڪجهي سمجهاڻي آهي. جيئن ماکيءَ جي مک لاءِ حڪم آهي "وَاَوۡحٰی رَبُّكَ اِلَی النَّحۡلِ(٢)" ۽ تنهنجي رب ماکيءَ جي مک ڏانهن الهام ڪيو ڇا ماکيءَ جي مک کي بہ نبي چوندؤ؟ نہ هرگز نہ.

## فائدو

بيبي مريم، بيبي آسيہ ۽ بيبي ڪلثم جنت ۾ حضور عليہ السلام جن جون گهرواريون هونديون. طبراني سعد بن جناده عوفيءَ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله تعالیٰ عليه وسلم جن فرمايو "اِنَّ اللّٰهَ زَوَّجَنِیۡ فِی الۡجَنَّةِ مَرۡیَمَ بِنۡتَ عِمۡرَانَ وَامۡرَاَةَ فِرۡعَوۡنَ وَاُخۡتَ مُوۡسٰی" بيشڪ الله جنت ۾ منهنجي شادي عمران جي ڌيءُ مريم ۽ فرعون جي گهرواري (آسيه) ۽ موسیٰ (عليہ الصلواة والسلام) جي ڀيڻ (ڪلثم) سان ڪرائي آهي.

۽ ابويعلیٰ حضرت ابوامامه رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله تعالیٰ عليه وسلم جن ڪيس مخاطب ٿي فرمايو "اَشۡعَرۡتِ اَنَّ اللّٰهَ زَوَّجَنِیۡ مَرۡیَمَ بِنۡتَ عِمۡرَانَ وَآسِیَةَ بِنۡتَ مُزَاحِمٍ وَکُلۡثَمَ اُخۡتَ مُوۡسٰی" توکي خبر آهي تہ الله تعالیٰ مون کي عمران جي ڌيءُ مريم ۽ مزاحم جي ڌيءُ آسيه ۽ موسیٰ جي ڀيڻ ڪلثم پرڻائي ڏنيون آهن.

۽ حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان روايت آهي تہ رسول الله صلي الله تعالیٰ عليه وسلم جن حضرت خديجة (الڪبریٰ پنهنجي گهر واريءَ) وٽ سندس مرڻ واريءَ بيماريءَ جي حالت ۾ تشريف فرما ٿيا ۽ ڪيس فرمايائون تہ خديجہ! جڏهن پنهنجن ڀاڄن (مڙس جون ٻيون زالون) سان ملين تہ ڪين منهنجي طرفان سلام چئجانءِ. عرض ڪيائين تہ يا رسول الله! ڇا اوهان مون کان اڳ ۾ شادي ڪئي هئي؟ فرمايائون تہ "نہ" پر الله تعالیٰ منهنجي عمران جي ڌيءُ مريم ۽ مزاحم جي ڌيءُ آسيه ۽ موسیٰ جي ڀيڻ ڪلثم سان شادي ڪرائي آهي. (٢) (جيڪي اڳيءُ جنتياڻيون آهن.)

(١) سورة النحل آيت ٤٣ (٢) سورة النحل آيت ٦٨ (٣) البدايه والنهايه ص٦٢ جزءُ ٢

ذَالِكَ مِنْ اَنْبَآءِ الْغَيْبِ نُوْحِيْهِ اِلَيْكَ ۚ وَمَا كُنْتَ لَدَيْهِمْ اِذْ

اهو (واقعو) غيب جي خبرن مان آهي وحي ٿا ڪيون اهو توڏانهن ۽ نه هئين تون انهن وٽ جڏهن

يُلْقُوْنَ اَقْلَامَهُمْ اَيُّهُمْ يَكْفُلُ مَرْيَمَ ۖ وَمَا كُنْتَ لَدَيْهِمْ اِذْ

اڇلائين پيا پنهنجا قلم ته ڪهڙو انهن مان سنڀالي مريم کي ۽ نه هئين تون انهن وٽ جڏهن

يَخْتَصِمُوْنَ ﴿۴۴﴾

جهيڙو پيا ڪن.

## تفسير

سمجهڻ ڳهرجي ته ڪنهن به شيءِ جي ڄاڻ لاءِ ٽي (۳) اسباب ۽ ذريعا هوندا آهن. ١- هڪ عقل ۲- ٻيو ڪنهن کان ٻڌڻ ۳- ٽيون حواس. مٿي ذڪر ڪيل قصا حضور عليہ الصلواة والسلام جن نہ پنهنجي عقل مبارڪ سان بيان فرمايا هئا ڇوته اهڙيون ڳالهيون عقل سان بيان نه ٿينديون آهن ۽ نه ٻڌڻ سان. ڇوته پاڻ ڪنهن انسان وٽ نه پڙهڻ ۽ لکڻ سکيا هئا جو ان کان ٻڌي بيان ڪندا هجن ۽ نه پاڻ اهل ڪتاب، عيسائين ۽ يهودين جي ڪا صحبت ڪئي هيائون جنهن جي ذريعي ڪين گذريل واقعن جي اهڙي تحقيقي معلومات ٿي هجي ۽ بالفرض جيڪڏهن انهن سان سندن صحبت ٿئي ها ته به اهي ته پاڻ ئي وهمن ۽ غلط ڳالهين جي انڌيرن ۾ ڪري، ڀٽڪي رهيا هئا انهن مان ڪن الله تعالىٰ جي نبين عليهم الصلواة والسلام سان عداوت ۽ دشمنيءَ ۾ ته ڪن وري حد کان وڌيڪ محبت ۾ اچي صحيح واقعن کي ئي مسخ ڪري ميٽي ڇڏيو هو اهڙن انڌن جي اکين مان روشني حاصل ڪرڻ ته ناممڪن هئي ۽ نه وري اهي واقعا هٿن، پيرن هٿڻ سان حاصل ٿي سگهيا ٿي انهن سيني حالتن جي باوجود مڪي توڙي مدني ٻنهي قسمن جي سورتن ۾ انهن واقعن کي کولي کولي صحيح ۽ اهڙي تفصيل سان بيان ڪرڻ جو وڏن وڏن ڪتابن جي عالمن کي به حيران ڪري ڇڏي ۽ ڪنهن کي به انڪار ڪرڻ جي جرأت ۽ مجال نه رهي ان ڳالهه جو ڪليل

دليل آهي تہ اللہ تعالىٰ کين اهو علم وحي جي ذريعي عطا ڪيو هو ان ڪان سواءِ نہ پاڻ اتي جسم اطهر سان موجود هئا نہ وٽن ٻيو ڪو خارجي ذريعو هو.

"ذَالِکَ مِنْ اَنْبَآءِ الْغَيْبِ نُوْحِيْهِ اِلَيْکَ" اهي غيبي خبرون آهن جيڪي اسين توڏانهن وحي ڪيون ٿا. هن مان ثابت ٿيو تہ اللہ تعالىٰ وحي جي ذريعي پنهنجي محبوب نبي صلى اللہ تعالىٰ عليہ وسلم جن کي غيب جون خبرون ٻڌائي ٿو. علامہ ثناءُاللہ پاني پتيءَ عليہ الرحمہ لکيو آهي تہ فبيان القصص منه صلى اللہ تعالىٰ عليه وسلم علىٰ ما هو الواقع المعلوم عند اهل العلم بالاخبار معجزة له صلى اللہ تعالىٰ عليه وسلم ودليل قطعي علىٰ کونه نبيا وکون ما يتلوا عليهم وحيا من اللہ تعالىٰ (١) يعني حضور صلى اللہ تعالىٰ عليہ وسلم جن جي طرفان قصن جو اهڙي نموني بيان ڪرڻ جيئن (اهل ڪتاب جا) اهل علم ڄاڻندا هئا حضور صلى اللہ تعالىٰ عليہ وسلم جن جو معجزو ۽ سندن نبي هجڻ ۽ جيڪو پاڻ تلاوت فرمائن ٿا ان جي اللہ تعالىٰ جي طرفان وحي هجڻ جو قطعي دليل آهي.

"وَمَا کُنْتَ لَدَيْهِمْ" الاية- ۽ نہ هئين تون انهن وٽ. ڄاڻڻ گهرجي تہ جڏهن بيبي حنہ پنهنجي نذر ڪيل نياڻيءَ مريم سڳوريءَ کي بيت المقدس ۾ ڇڏڻ لاءِ آئي تہ بيت المقدس جي خادمن ان جي سنڀالڻ ۽ پالڻ تي اختلاف ڪيو ۽ هر ڪنهن جي دل گهريو تہ بيبي صاحبہ کي اهو سنڀالي. نيٺ فيصلي کي طي ڪرڻ ۽ نبيرڻ جي لاءِ ڪٺي وجهڻ تي هن طرح اتفاق ڪيائون تہ توراة لکڻ وارا قلم ڪٺي درياءَ ۾ اڇلايو جنهن جو قلم پاڻيءَ کي چيري مٿي وهي بيبي سائڻ جي سنڀال ان جي حوالي ڪئي وڃي. هتي اللہ تعالىٰ اهو ذڪر ٻڌائي رهيو آهي تہ: اي حبيب! عليک الصلواة والسلام! اوهان (جسماني لحاظ سان) اتي موجود نہ هئا جنهن وقت اهي درياءَ ۾ قلم اڇلائي ڪٺا وجهي رهيا هئا تہ ڪير مريم کي سنڀالي. علامہ صاوي عليه الرحمة هن آيت جي تفسير ۾ لکيو آهي تہ هذا بالنظر للعالم الجسماني لاقامة الحجة علي الخصم واما بالنظر للعالم الروحاني فهو حاضر رسالة کل رسول وما وقع له من لدن آدم الي ان ظهر بجسمه الشريف ولکن لا يخاطب به اهل العناد (٢) يعني حضور صلي اللہ تعالىٰ عليہ وسلم جن جو ڪٺي وجهڻ وقت اتي موجود نہ هجڻ جسماني لحاظ سان هو دشمن جي

(١) تفسير مظهري جلد ٢ ص٤٩ (٢) تفسير صاوي ص٢٠٦ جزءُ ٣

مٿان حجت قائم ڪرڻ لاءِ. باقي روحاني لحاظ سان ته پاڻ هر رسول جي رسالت ۽ جيڪي به آدم عليه السلام جي وقت کان ٿيو ٿي ان تي ان وقت حاضر هئا تانجو پنهنجي جسم شريف سان دنيا ۾ ظاهر ٿيا. علامه اسماعيل حقي عليه الرحمه سورة الفتح جي آيت ٨- ٩ جي تفسير ۾ لکيو آهي ته: فانه لما كان اول مخلوق خلقه الله كان شاهدا بوحدانيه الحق وربوبيته وشاهدا بما اخرج من العدم الي الوجود من الارواح والنفوس والاجرام والاركان والاجسام والاجساد والمعادن والنبات والحيوان والملک والجن والشيطان والانسان وغير ذالک لئلا يشذ عنه ما يمكن للمخلوق دركه من اسرار افعاله وعجائب صنعه وغرائب قدرته بحيث لا يشاركه فيه غيره ولهذا قال عليه السلام "علمت ما كان وما سيكون" لانه شاهد الكل وما غاب لحظة" (١) يعني حضور صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن جڏهن ته الله جل شانه جي مخلوق ۾ سڀني کان پهريائين پيدا ڪيل آهن تڏهن سندس وحدانيت ۽ ربوبيت جا شاهد آهن ۽ جيڪي به الله تعاليٰ ارواح، نفوس، اجرام، ارڪان، جسم، جسا، ڪاٺيون، سلا، حيوان، ملائڪ، جن، شيطان ۽ انسان وغيره عدم مان وجود ۾ آندا انهن جا به شاهد آهن تانت الله تعاليٰ جي ڪمن جي اسرار، ڪاريگريءَ جي عجائب ۽ قدرت جي حيران ڪندڙ ڪارنامن مان جن جو پروڙڻ مخلوق (۽ خاص ڪري سندن لاءِ) ممڪن آهي ڪائي مخفي نه رهي ۽ انهيءَ جي ڪري ئي پاڻ عليه الصلواة والسلام جن فرمايو: "علمت ما كان وما سيكون" جيڪو ٿيو ۽ جلد ٿيندو اهو منهنجي علم ۾ آهي. ڇوته پاڻ سڀني جا شاهد آهن هڪ لحظو به غائب ناهن.

## تنبيهه

انهن مفسرن جي انهن عبارتن تي نظر ڪندي "وَمَا كُنْتَ لَدَيْهِمْ" جي تفسير ۾ ٻڌايو ويو ته پاڻ ظاهري جسماني طرح اتي نه هيا، پر روحاني طرح سڀ واقعا سندن نظرن کان گذريا هئا.

(١) تفسير روح البيان ص١٨ جلد ٩

اِذْ قَالَتِ الْمَلٰٓئِكَةُ يٰمَرْيَمُ اِنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكِ بِكَلِمَةٍ مِّنْهُ ۖ اسْمُهُ

جڏهن چيو ملائڪن تہ اي مريم! بيشڪ الله بشارت ٿو ڏئي توکي فرمان جي پاڻ وٽان جو نالو ان جو

الْمَسِيْحُ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ وَجِيْهًا فِى الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَمِنَ

مسيح عيسيٰ پٽ مريم جو آهي، مرتبي وارو ۽ دنيا ۽ آخرت ۾ ۽ (الله تعاليٰ جي)

الْمُقَرَّبِيْنَ ﴿٤٥﴾ وَيُكَلِّمُ النَّاسَ فِى الْمَهْدِ وَكَهْلًا وَّمِنَ

مقربن مان آهي ۽ ڳالهائيندو ماڻهن سان پينگهي ۾ ۽ پڪيءَ عمر ۾ ۽

الصّٰلِحِيْنَ ﴿٤٦﴾ قَالَتْ رَبِّ اَنّٰى يَكُوْنُ لِىْ وَلَدٌ وَّلَمْ يَمْسَسْنِىْ

خاص ٻانهن مان هوندو. چيائين تہ اي رب منهنجا! ڪٿان ٿيندو مون لاءِ پٽ ۽ نہ هٿ لاتو مون کي

بَشَرٌ ۭ قَالَ كَذٰلِكِ اللّٰهُ يَخْلُقُ مَا يَشَآءُ ۭ اِذَا قَضٰٓى اَمْرًا فَاِنَّمَا

ڪنهن انسان. فرمايائين تہ ائين الله پيدا ٿو ڪري جيڪي گهري. جڏهن ارادو ڪري ٿو ڪنهن امر جو تہ پوءِ تحقيق

يَقُوْلُ لَهٗ كُنْ فَيَكُوْنُ ﴿٤٧﴾ وَيُعَلِّمُهُ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَالتَّوْرٰىةَ

فرمائي ٿو ان لاءِ ٿيءُ. تہ پوءِ اهو ٿي پوي ٿو. ۽ پڙهائيندو ان کي ڪتاب ۽ حڪمت ۽ تورات

وَالْاِنْجِيْلَ ﴿٤٨﴾ وَرَسُوْلًا اِلٰى بَنِىْٓ اِسْرَآءِيْلَ ۙ اَنِّىْ قَدْ جِئْتُكُمْ بِاٰيَةٍ

۽ انجيل ۽ (موڪليندو ان کي) رسول ڪري بني اسرائيلن ڏانهن (چوندو تہ) تحقيق مان آيس اوهان وٽ نشانيءَ سان

مِّنْ رَّبِّكُمْ ۙ اَنِّىْٓ اَخْلُقُ لَكُمْ مِّنَ الطِّيْنِ كَهَيْـــَٔةِ الطَّيْرِ فَاَنْفُخُ

اوهان جي رب وٽان بيشڪ مان ٺاهيان ٿو اوهان لاءِ گاري مان پکيءَ جي صورت وانگر. پوءِ ڦوڪ ٿو ڏيان

فِيْهِ فَيَكُوْنُ طَيْرًۢا بِاِذْنِ اللّٰهِ ۚ وَاُبْرِئُ الْاَكْمَهَ وَالْاَبْرَصَ وَاُحْيِ

ان ۾ پوءِ ٿي ٿو پوي پکي الله جي اذن سان ۽ سجو ٿو کيان ماءُ جي پيٽان انڌي ڄاول ۽ ڪوڙهه واري کي ۽ جيئرو ٿو ڪيان

الْمَوْتٰى بِاِذْنِ اللّٰهِ ۚ وَاُنَبِّئُكُمْ بِمَا تَاْكُلُوْنَ وَمَا تَدَّخِرُوْنَ ۙ فِىْ

مئلن کي الله جي حڪم سان ۽ ٻڌايان ٿو اوهان کي جيڪي کائو ٿا ۽ جيڪي گڏ ڪري رکو ٿا

بُيُوْتِكُمْ ۭ اِنَّ فِىْ ذٰلِكَ لَاٰيَةً لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿٤٩﴾

پنهنجن گهرن ۾. بيشڪ ان ۾ نشاني آهي اوهان لاءِ جيڪڏهن آهيو ايمان وارا

## تفسير

سمجهڻ گهرجي ته هنن آيتن سڳورين ۾ حضرت بيبي مريم رضي الله تعالىٰ عنها کي پٽ جي بشارت ملڻ ۽ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام کي عطا ڪيل معجزات جو بيان آهي. اول ٻڌايو ويو آهي ته الله تعالىٰ جي ملائڪن حضرت بيبي مريم رضي الله عنها کي ٻڌايو هو ته الله تعالىٰ توکي پنهنجي طرفان "ڪلمه" جي بشارت ٿو ڏي. هن آيت کان سواءِ ٻين جاين تي به حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن جي لاءِ "ڪلمة" جو لفظ آيل آهي جيئن فرمان آهي "اِنَّمَا الْمَسِيْحُ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ رَسُوْلُ اللّٰهِ وَكَلِمَتُهٗ ۚ اَلْقٰهَآ اِلٰى مَرْيَمَ وَرُوْحٌ مِّنْهُ" (سورة النساءِ رڪوع ٢٣) هونءَ ته ڪائنات جي هر شيءِ الله تعالىٰ جي فرمان "ڪن" سان جلوه گر ٿي آهي پر الله تعالىٰ پنهنجي ڪامل حڪمت سان ٻين شين کي سبب ۽ مسبب، علت ۽ معلوم جي ڏاڳي ۾ ٻڌو آهي، ان جي ڪري انهه جي ظهور ۽ تخليق ۾ عام نگاهون سبب ۽ علت جي حجاب ۾ اٽڪيل رهن ٿيون. پر هتي جڏهن ته حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي ولادت جو عادي سبب (پيءُ) موجود نه آهي، ان جي ڪري اهو حجاب وچ ۾ نه آهي ۽ "ڪن" جي ڪلمي جي جلوه گري ۽ ڪرشمه آفريني گهڻي واضح ۽ نمايان آهي. ان جي ڪري حضرت عيسىٰ عليه السلام لاءِ "ڪَلِمَةٌ مِّنْهُ" خصوصاً ارشاد ٿيو آهي. علامه فخرالدين رازيءَ عليه الرحمة لکيو آهي ته "انه خلق بكلمة الله وهو قوله كن من غير

واسطة الاب فلما كان تكوينه بمحض قول الله "كن" وبمحض تكوينه وتخليقه من غير واسطة الاب والبذر لا جرم سمي "كلمة" يسمي المخلوق خلقا والمقدور قدرة والمرجو رجاء وهذا باب مشهورة في اللغة (١) يعني حضرت عيسىٰ عليہ الصلواة والسلام الله تعالىٰ جي كلمہ "كن" سان پيءُ جي واسطي كان سواءِ پيدا ٿيو هو. جڏهن سندس وجود ۾ اچڻ پيءُ ۽ ٻج جي واسطي كان سواءِ صرف الله تعالىٰ جي كلمہ "كن" سان ٿيو تڏهن سندس تكوينن ۽ تخليق خصوصي آهي. ان جي كري "كلمة" سڏيو ويو. مخلوق كي خلق، مقدور كي قدرة، مرجو كي رجاءِ سڏيو ويندو آهي ۽ لغت ۾ هيءُ باب مشهور آهي.

جيكي كم عام عادي اسباب كان خارج هوندا آهن انهن جي نسبت الله تعالىٰ ڏي كئي ويندي آهي. جيئن فرمان ايزدي آهي "وَمَا رَمَيْتَ إِذْ رَمَيْتَ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ رَمٰى (٢) (۽ نہ اڇلايو اوهان جڏهن اڇلايو تو ۽ پر الله اڇلايو)

"اِسْمُهُ الْمَسِيْحُ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ" اسم جي لغوي معنىٰ آهي السمة والعلامة المميزة يعني اهو نشان ۽ علامت جيكا كنهن شيءِ كي ٻين كان ممتاز ۽ جدا كري. حضرت عيسىٰ عليہ الصلواة والسلام كي ٻين كان جدا كرڻ لاءِ ان جو لقب مسيح، ان جو نالو عيسىٰ ۽ ان جو كنيو ابن مريم ذكر كيو ويو، تانتہ اهو پنهنجي مڙني صفتن ۽ خصوصي امتيازات سان ممتاز ٿئي. مسيح عبراني ٻولي آهي، اهو اصل ۾ ماشيح ۽ مشيحا هو. جنهن جي معنىٰ آهي مبارك (بركت وارو) حضرت ابن عباس رضي الله تعالىٰ عنهما جو فرمان آهي تہ كيس مسيح سڏڻ جو وجه هيءُ آهي جو پاڻ جنهن بيمار تي هٿ ڦيرائيندا هئا تہ اهو صحت ياب ٿي ويندو هو. (٣) هك قول هيءُ بہ آهي تہ سمي مسيحا لانه كان مسيحا الارض يعني كين مسيح ان جي كري سڏيو ويو جو پاڻ كٿي بہ مستقل رهائش اختيار نہ كئي هيائون. سدائين دين جي تبليغي سرگرمين ۾ اچ هتي تہ صبحاڻي ٻيءَ جاءِ تي سفر ۾ رهندا هئا. كن جو چوڻ آهي تہ مسيح جي معنىٰ آهي هٿ لڳايل. جڏهن حضرت عيسىٰ عليہ الصلواة والسلام ڄائو هو تہ كيس پاك، صاف تيل مكيل هو.

---

(١) تفسير كبير ص٣٦ جزءُ ٨ (٢) سورة الانفال آيت ١٧

(٣) تفسير كبير ص٤٩ جزءُ ٨

# تنبيهه

مسلمانن کي خبردار رهڻ گهرجي تہ مسيح جي لفظ جي معنيٰ سياح، سير سفر ڪندڙ مراد وٺي قادياني، مرزائي ڪافرن بهانو بنائي حضرت عيسيٰ عليہ الصلواة والسلام جن جيّ لاءِ ائين هلايو آهي تہ پاڻ جهان گهمندڙ هئا ۽ جڏهن گهوڙي تي چڙهي ملڪ ملڪ، شهر شهر گهمندي ڪشمير ۾ پهتا تہ سرينگر جي هڪ محلي ۾ وفات ڪيائون ۽ اتي ئي سندن قبر آهي. (معاذالله ثم معاذالله) اهو سچو ڪوڙ هنن پنهنجي هٽرادو، نبوت جي ڪوڙيءَ دعويٰ کي بچائڻ لاءِ ٺاهيو آهي جيڪو قرآني تصريحات، نبوي احاديث (عليٰ قائلها الصلواة والتسليمات) جي واضح بيانات ۽ تاريخي تسليم ڪيل حقائق جي خلاف، حق کان دور، عقل کان پري، توهمات ۽ مفروضات تي بنايل آهي، جنهن کي ڪوبہ پڪو مسلمان، حضور پرنور شافع يوم النشور صلي الله عليہ وسلم جن جو سچو امتي ڪڏهن بہ نہ مڃيندو.

عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ:- عيسيٰ اصل ۾ عبراني زبان جو لفظ يشوع آهي جنهن کي عربيءَ ۾ عيسيٰ سڏيو ويو آهي معنيٰ سردار. هتي سندس تعارف ڪنهن پيءُ نسبت جي بجاءِ ابن مريم سان ڪرايو ويو آهي. ابن مريم لفظ کي سندس نالي مبارڪ جي پنيان جزءَ طور ان لاءِ بيان ڪيو ويو آهي تہ پيءُ نہ هجڻ جي صورت ۾ ان جي نسبت هميشہ ماءُ ڏي ٿيندي ۽ ماڻهن کي قرآن ڪريم جي هيءَ آيت آهي جڏهن تہ هميشہ ياد هوندي تہ بيبي مريم سائڻ رضي الله تعاليٰ عنها جي بزرگيءَ جو ذڪر بہ ٿيندو رهندو.

"وَجِيْهًا فِى الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ" (دنيا ۽ آخرت ۾ عزت وارو هوندو) ممڪن هو تہ بيبي مريم سائڻ کي اهو خدشو دل ۾ اچي تہ الله تعاليٰ جي قدرتي عجيب نموني سان سندس وجود مان پيدا ٿيل ٻچي جي ڪري ماڻهو مٿس تهمتون ۽ طرحين طرحين جا الزام لڳائيندا ۽ ڪيس عزت جي نگاهہ سان نہ ڏسندا ۽ سندس پٽ کي بہ هميشہ بري لقب سان مشهور ڪري ايذاءُ پهچائيندا رهندا تہ ان جي صفائي ڪيئن پيش ڪئي وڃي. ان کي تسلي ڏيڻ لاءِ الله تعاليٰ فرمايو تہ اهو نہ صرف آخرت ۾ بلڪ دنيا ۾ بہ

وڏي عزت، مرتبي، مانَ ۽ وجاهت وارو هوندو. اهو پاڻ دشمنن جا سڀ الزام رد ڪري ڇڏيندو ۽ آخرت ۾ به سيئي انبياءِ ڪرام عليهم الصلواة والسلام عزت وارا هوندا، قرآن پاڪ ۾ ٻيءَ جاءِ تي حضرت موسىٰ عليہ الصلواة والسلام جن جي لاءِ آيو آهي: يَآاَيُّهَا الَّذِيْنَ آمَنُوْا لَا تَكُوْنُوْا كَالَّذِيْنَ آذَوْا مُوْسىٰ فَبَرَّءَهُ اللّٰهُ مِمَّا قَالُوْا ۭ وَكَانَ عِنْدَاللّٰهِ وَجِيْهًا (١) اي ايمان وارو! نہ هجو انهن وانگر جن ايذايو موسىٰ (عليہ الصلواة والسلام) کي پوءِ پاڪ ثابت ڪيو ان کي الله ان (تهمت کان) جو چيائون ۽ آهي الله وٽ عزت وارو. ثابت ٿيو تہ جن کي الله تعالىٰ "وجيه" سڏيندو آهي انهن کي طعنن، تشنيع ۽ الزامات کان صاف بہ ثابت ڪندو آهي. حضرت عيسىٰ عليہ الصلواة والسلام جي نسب پاڪ ۾ جيڪي باطن جا خبيث ماڻهو طعن ڪندا ياهوڙهٽي الله تعالىٰ يا ڪنهن انسان کي ان جو پيءُ ٺاهيندا، يا واقع جي خلاف ان کي مقتول يا مصلوب يا بحالت زندگي مردو چوندا، يا ان جي الوهيت (خدا هجڻ) يا ابنيت (خدا جو پٽ هجڻ) وغيره جهڙي باطل ۽ مشرڪانہ عقائد جي تعليم ڏيندا اهي گمراه آهن. الله تعالىٰ اهڙن قسمن جي سيني الزامن کان دنيا ۽ آخرت ۾ سندس پاڪائي ثابت ڪئي آهي. آخرت ۾ سندس پاڪائيءَ مرتبي واري هجڻ ۽ صاف ستروهڻ کي ساري مخلوق جي روبرو اظهار فرمائيندو، نہ صرف هيءُ جو دنيا ۽ آخرت ۾ باعزت ۽ عظمت وارو هوندو پر الله تعالىٰ جي اخص الخواص مقربن مان بہ هوندو. پر جيڪا عزت ۽ مرتبو ڪيس ولادت ۽ بعثت کان پوءِ دنيا ۾ حاصل ٿيو هو ان جي بہ پوري پوري تڪميل سندس آسمان تان لهڻ کان پوءِ ظاهر ٿيندي. جيئن مسلمانن جو اجماعي عقيدو آهي تہ پاڻ آسمان تي جيئرو کڃي ويو آهي ۽ آخر زماني ۾ آسمان کان هيٺ لهي ايندو.

ان کان پوءِ "اَءَنْتَ قُلْتَ لِلنَّاسِ اتَّخِذُوْنِيْ" وارو سوال ڪري ڪيس خصوصي انعام ياد ڏياري سيني اولين وآخرين جي روبرو سندس شان ۽ ڪرامت جو اظهار ڪيو ويندو جيئن سورة "مائده" ۾ مذڪور آهي.

(١) سورة الاحزاب آيت ٦٩

وَجِيهًا فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ اي شريفا ذاجاه وقدر (١) يعني شريف، مرتبي ۽ قدر جو صاحب، هنن لفظن جي وضاحت كندي جمال الدين شامي لكيو آهي تہ: اي سيدا ومعظما فيهما (٢) يعنـي سـردار، دنياءِ آخرت ۾ تعظيـم كيـل، يـا وجيهـا وجه (منهن) كان ورتل آهي، پاڻ نهايت سهڻو ۽ خوبصورت هو، جو كيترن ماڻهن كيس ڏسڻ شرط ايمان آندو هو، ان جي كري كيس وجيهہ، حسين ۽ جميل جي معنيٰ سان سڏيو ويو آهي.

امام غزالي عليه الرحمة جو چوڻ آهي تہ الجاه ملك القلوب. يعني جاه دلين جي بادشاهہ كي چئبو آهي. حضرت عيسيٰ عليه السلام لاءِ سندس ڏسڻ كان سواءِ ٿي ماڻهن جي دلين ۾ محبت آهي، جيكا دنيا جي اميرن جي محبت كان نرالي آهي، ڇو تہ اميرن سان محبت ڊپ جي كري يا عارضي كرسيءَ يا لالچ جي كري آهي حقيقي ناهي اها صرف محبت جي صورت آهي حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جن دنيا ۾ ڇهن نمونن سان عزت وارا آهن. ١- هك تہ سندن پيدائش نرالي نموني جي آهي، حضرت آدم عليه السلام ۽ بيبي حوا رضي الله عنها جي پيدائش بہ عجيب نموني هئي پر انهن ۾ حضرتؑ آدم عليه الصلواة والسلام جي لاءِ مٽيءَ كي مادو بنايو ويو ۽ حضرت بيبي حوا ساڻن ئي جي خلقت لاءِ حضرت آدم عليه الصلواة والسلام جي پاسيري كم ۾ آندي وئي مگر حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جن كي صرف الله تعاليٰ جي فرمان "كُنْ" سان وجود مليو هو. ٢- ٻيو تہ حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جن آخر زماني ۾ حضور ﷺ جن جي امت ۾ مجتهد مطلق ٿي ايندا. ٣- ٽيون تہ حضور ﷺ جن جي گنبذ خضريٰ جي ڇانو ۾ ساڻن گڏ دفن ٿيندا. ٤- چوٿون تہ ٻين نبين سڳورن عليهم الصلواة والسلام جي هجرت زمين تي ٿي، مگر حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جن جي هجرت زمين كان آسمان ڏانهن ٿي. (حبيب كريم صلى الله عليه وسلم جن تہ لا مكان تائين ويا هئا تن جي كري حضرت عيسيٰ عليه السلام جن آسمانن تي كجھ جي كري كائن پلا نہ آهن)٥- پنجون تہ پاڻ انسان ٿي كري آسمان تي ملائكن وانگر زندگي گذاري رهيا آهن سندن غذا الله تعاليٰ جي عبادت آهي. ٦- ڇهون تہ سندن دعا سان مئل جئرا، انڌا سڄا ۽ كوڙهہ جا مريض صحتياب ٿيا.

(١) قرطبي ص٩٠ ج٤ (٢) تفسير القاسمي ص١٠٠ جلد ٢ جزء٤

آخرت ۾ به پاڻ ٻن وجهن جي ڪري عزت وارا آهن ١- هڪ ته جڏهن آخرت ۾ ماڻهو شفاعت طلبيءَ لاءِ نبين عليهم الصلواة والسلام جي دروازن تي ايندا ته ٻيا انبياءَ عليهم الصلواة والسلام نه انهن جي پاڻ شفاعت ڪندا نه شفاعت ڪندڙ جو ڏس ڏيندا پر حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن حضور ﷺ جن جو ڏس ڏيندا، ٢- ٻيو ته ٻين نبين سڀني عليهم الصلواة والسلام وٽ جڏهن ماڻهو شفاعت لاءِ ايندا ته اهي پنهنجون پريشانيون بيان ڪندا، پر حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام ڪجهه به بيان نه ڪندو صرف حضور ﷺ جن جو ڏس ڏيندو.

" وَمِنَ الْمُقَرَّبِيْنَ " ۽ الله تعالىٰ جي مقرب (ٻانهن) مان هوندو. زمخشري لکيو آهي ته: وكونه من المقربين رفعه الي السماء وصحبته للملائكة (١) يعني مقربن مان هجڻ جي مراد آهي ته الله تعالىٰ ان کي آسمان تي کڻايو ۽ ملائڪن سان گڏ رهايو ابو حيان اندلسيءَ لکيو آهي ته: اعلم تعالىٰ ان ثم مقربين وان عيسىٰ منهم (٢) يعني الله تعالىٰ "وَمِنَ الْمُقَرَّبِيْنَ" ۾ "من" جو لفظ آڻي ٻڌايو ته اتي ٻيا به مقرب هوندا ۽ عيسىٰ عليه السلام به انهن مان هوندو. اهو دعا جي مقبول هجڻ سان گڏ ماڻهن ۾ به مقبول هوندو.

## تنبيه

هن آيت ۾ الله تعالىٰ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن کي "وَجِيْهًا فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ" دنيا ۽ آخرت ۾ عزت وارو سڏيو آهي. مگر اسماعيل دهلوي جي گستاخي ڏسو. جنهن لکيو آهي ته " هر مخلوق بڑا هو يا چهوٹا وه الله كے شان كے آگے چمار سے بهي ذليل هے (٣ ) معاذ الله ثم معاذالله ڪيڏي نه سخت بي ادبي آهي. الله تعالىٰ ٻيءَ جاءِ تي فرمايو آهي. "وَلِلّٰهِ الْعِزَّةُ وَلِرَسُوْلِهٖ وَلِلْمُؤْمِنِيْنَ" (٤) ۽ الله ۽ ان جي رسول ۽ مؤمنن جي لاءِ عزت آهي . الله تعالىٰ کان دلي دعا آهي ته بي ادبي ۽ بي ادبن کان بچڻ جي توفيق عطا ڪري. آمين يا رب العالمين "وَيُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ" (۽ ماڻهن سان پينگهي ۾ ڳالهائيندو) پينگهي ۾ سندس گفتگو بي معنيٰ نه هوندي، بلڪ ان ۾ نبوت جو وقار ۽ رسالت جي سنجيدگي لڏي ويندي. ان وقت به جيڪي الفاظ ان جي پاڪ زبان فيض ترجمان مان نڪرندا، اهي حقائق ومعارف سان لبريز هوندا. ان

(١) الكشاف ص٤٣ جلد١ (٢) البحر المحيط ص٤٦١ ج٢
(٣) تقوية الايمان ص١٣ (٤) سورة المنفقون آيت ٨

معصوميت جي زماني ۾ بہ اهو الله تعالىٰ جي توحيد ۽ پنهنجي رسالت جو اهڙو زبردست اعلان ڪندو جو ڪنهن کي انڪار ڪرڻ جي مجال ئي نہ رهندي. (ان جو تفصيلي ذڪر انشاءَ الله سورة مريم ۾ ايندو).

## سوال

هر ٻار پينگهي ۾ ڪجهہ نہ ڪجهہ ڳالهائيندو آهي پوءِ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي ان ۾ ڪهڙي خصوصيت آهي؟

## جواب

هيءُ نہ صرف غلط پر انصاف سان ظلم آهي جو حضرت عيسىٰ عليه السلام جي ڳالهائڻ سان ٻئي کي تشبيهہ ڏني وڃي. سيدنا عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جو ڪلام معجزه نظام فصاحت بلاغت جو موجون هڻندڙ سمنڊ آهي، جنهنجي هر هڪ حرف تي غور ڪبو تہ بين ٻارن جو ڳالهائڻ ان جي هڪ حرف جو مقابلو بہ نہ ٿو ڪري سگهي، حضرت بيبي مريم رضي الله تعالىٰ عنها کان روايت آهي،ان فرمايو تہ" جڏهن مان اڪيلي هوندي هيس تہ مون سان منهنجي پيٽ وارو پٽ (حضرت عيسىٰ عليه السلام) پيٽ مان ڳالهائيندو هو ۽ جيڪڏهن ڪو ماڻهو مون وٽ ايندو هو تہ پوءِ منهنجي پيٽ ۾ الله تعالىٰ جي تسبيح پڙهندو هو، جيڪا مان ٻڌندي هيس. (١)

## فائدو

حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن جو زندگيءَ جي مختلف مرحلن ٻاراڻيءَ، جوانيءَ، ڪرڙو ڊائيءَ ۾ اچڻ ۽ انهن سيني ڪمالات، معجزات جي باوجود سندن زندگيءَ جون مختلف منزلن ۾ تبديليون ۽ تغيرات ان ڳالهہ جو واضح ثبوت آهن تہ پاڻ الله نہ آهن،جيڪڏهن الله هجن ها (معاذالله جيئن عيسائين جو چوڻ آهي)تہ زندگيءَ جي ان مختلف مرحلن مان نہ گذرن ها.

" وَكَهْلًا" ۽ ڪرڙوڊ مان مراد چاليهن کان سٺ سال واري عمر آهي، ان عمر ۾ سندس ڳالهائڻ تڏهن ٿيندو جڏهن آسمان کان لهي ايندو ۽ ان عمر کي پهچندو. پاڻ ٽيٽيهن (٣٣) سالن جي عمر ۾ آسمان تي کنيا ويا هئا. (٢)"ومن الصالحين"- ۽ صالحن مان هوندو، جيئن حضرت ابراهيم، حضرت اسحاق، حضرت يعقوب عليهم

(١) تفسير جمل ص٢٨٢ جلد١ (٢) روح المعاني ص١٦٣ جزءُ ٣

السلام الله تعالىٰ جا صالح ٻانها هئا، تيئن هيءُ بہ هوندو، پهريائين ماءُ جي جهوليءَ ۾ پوءِ وڏو ٿي عجيب ۽ غريب ڳالهيون ڪندو. ملائڪن هنن لفظن سان پيغام پهچائيندي حقيقت ۾ حضرت بيبي مريم سائڻ رضي الله عنها جي پوري تسڪين ڪئي هئي، گذريل بشارتن سان ممڪن هو تہ بيبي سائڻ خيال ڪري ها تہ منهنجي ٻچي ڪي وجاهت تہ تڏهن حاصل ٿيندي جڏهن وڏو ٿيندو، مگر سندس ولادت شرط ٿي جيڪي طعنا شروع ٿي ويندا انهن کان پاڪدامني پيش ڪرڻ جي ڪهڙي صورت هوندي؟ ان ڪي ٻڌايو ويو تہ گهبراءِ نہ، توکي ڪجهہ جي ضرورت ئي نہ پوندي تنهنجو ٻچو پاڻ ڳالهائي سڀ ڪجهہ بيان فرمائيندو.

"وَمِنَ الصّٰلِحِيْنَ" جي لفظ سان نصارن جي عقيدي جو رد ڪندي ٻڌايو ويو آهي تہ عيسىٰ عليه الصلواة والسلام انهن سيني ڪمالات جي هوندي الله جي نيڪ ۽ صالحن ٻانهن مان نهايت شائستہ اخلاق وارو ۽ اعلىٰ درجي جو پلو ٻانهو هوندو.

"قَالَتْ رَبِّ اَنّٰى يَكُوْنُ لِيْ وَلَدٌ" عرض ڪيائين تہ اي منهنجا رب! مون ڪي اولاد ڪٿان ٿيندو؟ حضرت بيبي مريم رضي الله تعالىٰ عنها ڪي جڏهن اهڙي ٻار جي بشارت ڏني وئي تہ پاڻ ڪنواري هئي، ششدر ٿي پڇڻ لڳي تہ جڏهن مون ڪي ڪنهن انسان هٿ ئي نہ لاتو آهي تہ پوءِ مون ڪي ٻار ڪيئن ٿيندو؟ ڪيس جواب ڏنو ويو تہ الله تعالىٰ جي مرضي آهي جيڪي پيدا ڪري ۽ جيئن پيدا ڪري ڪري سگهي ٿو.

## سوال

متي حضرت يحيىٰ عليه الصلواة والسلام جي پيدا ڪرڻ جي ذڪر ۾ الله تعالىٰ فرمايو "يَفْعَلُ اللّٰهُ مَا يَشَآءُ" الله جيڪي گهري ٿو اهو ڪري ٿو ۽ بيبي مريم رضي الله عنها جي حيرت ڪي دور ڪرڻ لاءِ فرمان ٿيو. "كَذٰلِكِ اللّٰهُ يَخْلُقُ مَا يَشَآءُ" ائين الله پيدا ٿو ڪري جيڪي گهري ٿو. هنن ٻنهين جملن ۾ فرق ڇو ڪيو ويو؟

## جواب

يفعل فعل کان ۽ يخلق خلق کان ورتل آهي، علامہ رشيد رضا صاحب لکيو آهي تہ: لفظ الفعل يستعمل كثيرا فيما يجري علىٰ قانون الاسباب المعروفة ولفظ الخلق يستعمل فى الابداع والايجاد (١) يعني اهڙا واقعات جيڪي پنهنجي اسباب جي وجود

(١) تفسير منار ص٣٠٧ جلد٣

سان وقوع پذير ٿين. انهن تي فعل جو لفظ استعمال ڪيو ويندو آهي، ۽ جيڪي واقعا ظاهري اسباب کان سواءِ رونما ٿيندا آهن انهن کي خلق جي لفظ سان بيان ڪيو ويندو آهي. حضرت يحيىٰ عليه الصلواة والسلام جي ولادت جڏهن تہ والدين جي ذريعي مادي سبب سان ٿي هئي، ان جي ڪري اتي يفعل ۽ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة جي ولادت صرف ماءُ مان ٿي ۽ عادي سبب پيءُ مفقود هو ان جي ڪري هتي "يخلق" آندو ويو.

الله تعالىٰ جڏهن ڪنهن شيءِ کي پيدا ڪرڻ جو ارادو ڪندو آهي تہ ان کي فرمائيندو آهي "كُنْ" (موجود ٿيءُ) تہ اها موجود ٿي پوندي آهي حضرت بيبي مريم رضي الله تعالىٰ عنها کي سمجهايو ويو تہ الله تعالىٰ انسان جي هٿ لڳائڻ کان سواءِ توکي پٽ ڏيڻ جو ارادو فرمايو آهي عادت ۽ دستور جي خلاف هجڻ جي ڪري نہ تعجب ڪر نہ الله تعالىٰ جي قدرت جي حد بندي ڪر- اهو نہ ماده جو محتاج آهي ۽ نہ اسباب جو "وَيُعَلِّمُهُ الْكِتَابَ" کان ٻڌايو ويو آهي تہ الله تعالىٰ ان کي ڪتاب ۽ حڪمت جي تعليم ڏيندو، هدايت جي عام ڪتابن جي عمومًا توراة ۽ انجيل جي خصوصًا ۽ تمام گهريءَ ۽ اونهيءَ حڪمت جون ڳالهيون ڪندو. بعض مفسرن لکيو آهي تہ "اَلْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ" مان مراد قرآن ۽ سنت آهي ڇو تہ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام آسمانن تان لهي اچڻ کان پوءِ قرآن ڪريم ۽ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن جي سنت موافق حڪم ڪندو ۽ اهو تڏهن ٿي سگهي ٿو جڏهن انهن جوڪين علم عطا ڪيو وڃي. (١)

"وَرَسُوْلًا اِلٰى بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ" يعني پاڻ صرف بني اسرائيل ڏي رسول ڪري موڪليا ويا. سندن رسالت سڄي عالم انسانيت لاءِ نہ هئي. قرآن حڪيم جي ان فرمان جي تصديق خود انجيل جي متعدد آيتن سان ٿئي ٿي جيڪي تفسير ضياءُ القرآن ۾ آنديون اٿس (٢) انهن ۾ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام پاڻ اعتراف ڪيو آهي تہ منهنجي نبوة جو دائرو بني اسرائيل تائين محدود آهي، ان جي ڪري عيسائي مبلغن جي بني اسرائيل کان سواءِ ڪنهن ٻئي کي عيسائيت جي لاءِ دعوت ڏيڻ سندس هدايتن جي صريح خلاف ورزي آهي.

"اَنِّىْ قَدْ جِئْتُكُمْ بِاٰيَةٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ" (مان اوهان وٽ اوهان جي رب وٽان نشانيءَ "معجزه" سان آيو آهيان) ۾ سندن قوم کي سمجهاڻي آهي، ڇو تہ سندن

(١) حاشيہ شبير احمد عثماني ص٧٢ مطبوعه سعودي عرب
(٢) تفسير ضياءُ القرآن ص٢٣١ ج١

ولادت جنهن غير معروف طريقي سان ٿي هئي ان سان مخالفن، معاندن کي ڪافي اعتراضات جا موقعا فراهم ٿيا هئا ۽ سندن قوم وارا بہ هر ڳالهہ جي حجت کي ڪٿڻ ۾ پنهنجو مٽ پاڻ هئا، ان جي ڪري الله تعاليٰ کين اهڙا معجزا عطا ڪيا جن کي ڏسي ڪنهن بہ عقلمند جي لاءِ انڪار جي گنجائش باقي نہ رهي هئي، قرآن ڪريم انهن معجزن کي وڏي وضاحت سان بيان ڪندي ان کي "آية" جي لفظ سان تعبير فرمايو آهي. "آية" چوندا آهن، "العلامة الظاهرة" چٽي نشانيءَ کي جنهن سان ڪنهن جي سڃاڻپ ۾ ڪو بہ ابهام، شڪ، شبهو نہ رهي، حضرت عيسيٰ عليہ الصلواة والسلام جن جا اهي معجزا پنجن قسمن تي مشتمل هئا. ١- هڪ تہ مٽيءَ مان پکيءَ جي صورت ناهي، ان ۾ ڦوڪ ڏيئي ان کي زنده ڪندا هئا. ٢- ٻيو تہ ماءُ جي پيٽان انڌي ڄاول کي ڏسندڙ بڻائيندا هئا. ٣- ٽيون تہ ڪوڙهہ جي بيمار کي هٿ مبارڪ هٽي صحتياب ڪندا هئا. ۴- چوٿون تہ مئل کي جيرو ڪندا هئا. هي چارئي قسم عملي معجزات جا هئا ۵- پنجون سندن علمي معجزو هو يعني غيب جون خبرون ڏيڻ، پاڻ ٻڌائيندا هئا تہ اوهان اڄ هي شيون کاڌيون آهن، ۽ هي هي شيون اوهان گهرن ۾ رکيون آهن، جڏهن تہ هيءُ امور انساني قدرت کان ٻاهر آهن، ان جي ڪري قوي انديشو هو تہ شايد ماڻهو حضرت عيسيٰ عليہ الصلواة والسلام کي خدا مڃڻ لڳن ان جي ڪري انهن معجزن جي بيان سان گڏ" بِاِذْنِ اللّٰهِ" جو قيد هنيو ويو تہ هيءُ سڀ ڪجهہ جيتوڻيڪ ظاهر مون کان ٿي رهيو آهي. پر انهن جو حقيقي فاعل "الله" آهي "اَخْلُقُ" ۾ خلق جي جيڪا نسبت سيدنا عيسيٰ عليہ الصلواة والسلام پاڻ ڏي ڪئي هئي، سا صرف شڪل ۽ صورت ناهڻ جي ڪري ظاهري حيثيت سان هئي. جيئن صحيح حديث مبارڪ ۾ آهي تہ"قيامت جي ڏينهن تصوير (فوٽو) ڪڍندڙن کي چيو ويندو. "اَحْيُوا مَا خَلَقْتُمْ" جيڪي ناهيا هُيَوَ انهن کي جيئرو ڪيو، يا الله تعاليٰ پنهنجي شان ۾ فرمايو آهي "فَتَبَارَكَ اللّٰهُ اَحْسَنُ الْخَالِقِيْنَ" پوءِ برڪت وارو آهي الله سڀ کان سهڻو خالق خالقن ۾ - هتي بہ محض ظاهري صورت ناهڻ جي لحاظ سان غيرالله تي خلق جو لفظ ڳالهايو ويو آهي. جيتوڻيڪ حقيقي تخليق جي لحاظ سان الله تعاليٰ جل شانه کان سواءِ ڪو بہ خالق نہ آهي، شايد ان جي ڪري"اَنِّيْ اَخْلُقُ لَكُمْ مِّنَ الطِّيْنِ" طيرا نہ فرمايائين" كَهَيْـَٔةِ الطَّيْرِ" فرمايائين تہ مان مٽيءَ مان پکيءَ جي شڪل ناهي ان ۾ ڦوڪ ڏيان ٿو پوءِ اهو الله تعاليٰ جي حڪم سان جيئرو ٿئي ٿو. بهرحال هيءُ معجزو پاڻ ڏيکاريو هيائون. علماءِ

ڪرام فرمايو آهي تہ بچپن ۾ ئي سندن هٿان ارهاص طور هيءَ خرق عادات ظاهر ٿيون، تانت تهمت لڳائڻ وارن کي خدا وندي قدرت جو هڪ ننڍو نمونو ڏيکاري تہ جڏهن منهنجي ڦوڪ سان الله تعاليٰ مٽيءَ جي بيجان صورت کي جاندار بنائي سگهي ٿو تہ انسان جي هٿ لڳائڻ کان سواءِ صرف روح القدس جي ڦوڪ سان بہ هڪ پلاريءَ پرهيزگار عورت جي پاڻيءَ تي عيسوي روح کي فائض ڪري تہ ڪهڙو تعجب آهي؟ بلڪ جڏهن حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام حضرت جبرئيل عليه الصلواة والسلام جي ڦوڪ سان پيدا ٿيو آهي تہ سندس ڦوڪ کي بہ جبرئيل جي ڦوڪ جو اثر سمجهڻ ممڪن آهي. المقصد تہ حضرت عيسيٰ عليہ الصلواة والسلام تي مَلَڪي ۽ روحاني ڪمالات جو غلبو هو ۽ سندس هٿان انهن جي مناسب آثار ظاهر ٿيندا هئا. پر جيڪا مقدس ذات روحاني ۽ جسماني ڪمالات جو مجموعو ۽ انهن جي اعليٰ درجي تي فائز آهي يقينًا اها حضرت عيسيٰ عليہ الصلواة والسلام کان افضل ۽اعليٰ آهي ۽ اها قدسي صفات ذات حضرت محمد مصطفيٰ، احمد مجتبيٰ ﷺ جن جي آهي.

وَاُبۡرِيءُ الۡاَكۡمَهَ وَالۡاَبۡرَصَ وَاُحۡيِ الۡمَوۡتيٰ بِاِذۡنِ اللهِ " ۽ چڱايان ٿو مادر زاد انڌي ۽ ڪوڙهہ واري کي ۽ جيئرو ٿو ڪيان مئلن کي الله جي اذن سان، هنن لفظن ۾ ٻڌايو ويو آهي تہ ماءُ جي پيٽان ڄاول انڌي، ۽ ڪوڙهہ جي بيمار کي سندن هٿان شفا ملندي هئي ۽ پاڻ الله جي اذن سان مئلن کي جيئرو ڪندا هئا.

ڄاڻڻ گهرجي تہ جنهن زماني ۾ حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام آيو هو. ان وقت طبيبن جي طب ۽ حڪمت جو دور ۽ زور هو ان جي ڪري حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جن کي بہ اهڙا معجزا عطا ڪيا ويا جيڪي ماڻهن تي انهن جي سڀ کان وڏيڪ مايه ناز فن ۾ سندس نمايان مٿاهين ۽ بلندي ثابت ڪن. بلاشبہ مئل کي جيئرو ڪرڻ الله تعاليٰ جي صفت آهي جيئن "بِاِذۡنِ اللهِ" جي قيد مان صاف ظاهر آهي، مگر اهو حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جي ذريعي ظاهر ٿي رهيو هو ان جي ڪري ان کي مجازي طور پاڻ ڏي نسبت ڪري رهيو آهي.

## فائدو

حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جو انهن ڪمن کي پاڻ ڏي منسوب ڪرڻ ان ڳالهہ تي دلالت ٿو ڪري تہ جيڪڏهن اهڙن ڪمن جي نسبت هيئن سمجهندي تہ انهن جو حقيقي فاعل الله تعاليٰ آهي. انهن جي ظاهري اسباب ڏانهن

كئي وجي تہ جائز آهي شرڪ نہ آهي، جيئن حضرت امام اعظم عليه الرحمة حضور سرور ڪائنات عليه الصلوات والتحيات جن جي خدمت عاليہ ۾ عرض ڪيو آهي.

وَشَفَيْتَ ذَا الْعَاهَاتِ مِنْ اَمْرَاضِهِمْ
وَمَلَأْتَ كُلَّ الْاَرْضِ مِنْ جَدْوَاكَ (١)

**ترجمو:**

(يا رسول الله صلي الله عليک وسلم) اوهان بيمارن کي سندن بيمارين کان شفا ڏني ۽ روءِ زمين کي پنهنجي سخاوت سان ڀري ڇڏيو.

## سوال

قرآن پاڪ ۽ احاديث مبارڪ ۾ آيو آهي تہ ازل کان ابد تائين ڪنهن بہ مئل کي دنيا ۾ دوباره زنده نہ ڪيو ويندو تہ پوءِ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن جي دعا سان مئل ڪيئن ٿي زنده ٿيا؟

## جواب

اها اهڙي دعوىٰ آهي جنهن جو ڪو ثبوت نہ آهي جيڪڏهن قرآن پاڪ ۾ "فَيُمْسِكُ الَّتِيْ قَضٰى عَلَيْهَا الْمَوْتَ وَيُرْسِلُ الْاُخْرٰى (٢)" فرمائي ٻڌايو ويو آهي تہ الله تعالىٰ مرڻ واري جي روح کي روڪي رکي ٿو ۽ ننڊ ڪرڻ واري جي روح کي ائين نٿو روڪي تہ اهو فرمان ڪٿي آهي؟ " تہ الله تعالىٰ کي ان روڪڻ ڪانپوءِ ڇڏي ڏيڻ جو اختيار نہ آهي. ياد رکو تہ معجزو هوندو ئي اهو آهي جيڪو الله تعالىٰ جي عام دستور جي خلاف نبوت جي دعوىٰ ڪندڙ جي تصديق لاءِ ظاهر ڪيو وڃي. پوءِ الله تعالىٰ جي عام دستور کي بيان ڪندڙن دليلن سان مئلن کي جيئرو ڪرڻ جي نفي ڪرڻ معجزي جي صفا انڪار سان گڏ پنهنجي حماقت ۽ بيوقوفيءَ جو اظهار آهي. معجزو جيڪڏهن عام دستور جي موافق اچي تہ ان کي معجزو چئجي ڇو؟ سيدنا عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جو بغير پيءُ جي پيدا ٿيڻ، يا هٿ لڳائڻ سان ماءُ جي پيٽان انڌي ڄاول ۽ ڪوڙهہ واري کي صحت ڏيڻ، مئلن کي جيئرو ڪرڻ وغيره اهل اسلام وٽ سلف ۽ خلف ۾ تسليم ٿيل آهي. صحابہ ڪرام ۽ تابعين عظام جو هڪ قول بہ ان جي انڪار لاءِ پيش ڪري نٿو سگهجي. اڄ ڪلهہ جا ملحد ئي هيءَ دعوىٰ ٿا ڪن تہ معجزن جو

(١) منحة المنان شرح قصيدة النعمان ص١٠٨ (٢) سورة الزمر آيت ٤٢

مجڻ قرآن پاڪ جي محڪمات جي خلاف آهي. ڇا اهي اهڙين آيتن کي محڪمات ٿا چون؟ جن جي صحيح مطلب سمجهڻ کان ساري امت عاجز رهي؟ يا سيئي محڪمات کي ڇڏي متشابهات جي پويان پئجي "فِيْ قُلُوْبِهِمْ زَيْغٌ" جو مصداق ٿيايا اچ ڪالهه جي ملحدن کان سواءِ متشابهات کي محڪمات ڏانهن ورائڻ جي ڪنهن کي توفيق نصيب نه ٿي؟ العياذ بالله حق هيءُ آهي ته اهي آيتون جن جي ظاهري معنيٰ کي ساري امت مڃيندي آئي آهي محڪمات آهن.ا نهن کي وراڻي سراڙي محض استعارات ۽ تمثيلات تي حمل ڪري معجزات جي نفيءَ تي عمومي عادت سان دليل آڻڻ اهڙن گمراهن جو ڪم آهي، جن کان پري رهڻ جي حضور ﷺ جن هدايت ڪئي آهي.

## انبياءِ عليهم السلام جا معجزا حق آهن.

جاڻڻ گهرجي ته هر ڪم ننڍو هجي يا وڏو ان کي پيدا ڪندڙ الله تعالىٰ آهي جيڪو هر چيز تي قادر آهي. جيڪي گهري جنهن وقت گهري جيئن گهري ڪري سگهي ٿو. ان پنهنجي ڪامل حڪمت سان سيني ڪمن ۽ سيني شين کي ڪنهن نه ڪنهن سبب سان متعلق ڪيو آهي. ان مان بعضي سبب اهي آهن جن کي انسان سمجهي ٿو، ۽ بعضي اهي آهن جن جي حقيقت سمجهڻ کان انسان جو عقل قاصر آهي، اهڙا ڪم جن جو اسين ڪو به ظاهري سبب بيان ڪري نه ٿا سگهون، ٿي سگهي ٿو ته انهن جي ظهور جو ڪو اهڙو سبب هجي جنهن تائين اسان جي عقل جي رسائي اڃا نه ٿي آهي ۽ جڏهن اسين سيني سببن ۽ علتن جو گهيراءُ نه ٿا ڪري سگهون ته اسان کي اهو حق نه آهي جو اسين اهڙن واقعن جو صرف ان جي ڪري انڪار ڪيون جو عقل انهن جي واقع ٿيڻ کي جائز نه ٿو سمجهي. جڏهن هن اسباب ۽ علتن جي احاطي ۽ گهيري ڪرڻ جي دعويٰ ته اڄ تائين ڪنهن سائنسدان به نه ڪئي آهي صرف ان جي ڪري ڪنهن واقعي جو انڪار ڪرڻ ته اهو اسان جي دانش، سمجهه ۽ عقل جي ڪسوٽيءَ تي پورو نه ٿو لهي پنهنجين حدن کان تجاوز ڪرڻ جي مترادف آهي. نيوٽن لکيو آهي ته منهنجو مثال ان ٻار وارو آهي جيڪو سمنڊ جي ڪناري تي راند پيو ڪري جنهن کي پنهنجن ساٿين کان زياده ڪو پٿر خوبصورت ملي ٿو وڃي پر اڃان ان بحر ذخار جي حقيقت ان جي سامهون آهي جنهن جو ان کي ڪو علم نه آهي. (١)

Heros of Civilization B, Josephandhav. M

(١) ضياءُ القرآن ص ٢٣٣ جلد ١

جڏهن حقيقت اها آهي ته قرآن پاڪ جي بيان ڪيل معجزن جي تسليم ڪرڻ کان انڪار ڪرڻ يا انهن جو اهڙو تاويل ڪرڻ جنهن کي عربي زبان ۾ قرآن پاڪ جو فصيح ۽ بليغ اسلوب بيان قبول ڪرڻ لاءِ تيار نه آهي نه ئي علم جي خدمت آهي نه قرآن پاڪ جي ۽ جيڪڏهن هڪ لمحي جي لاءِ اهو ڪٿي مڃجي ته سببن ۽ علتن جون سڀ ڪڙيون اسان جي گرفت ۾ اچي ويون آهن ۽ اسان انهن جو ڪليه احاطو ڪري ورتو آهي ته پوءِ به معجزات جي انڪار جي ڪا گنجائش نه آهي. ڇو ته قادر مطلق الله جل شانه، پنهنجي ڪامل حڪمت سان هڪ شيءِ کي هڪ علت سان وابسته ڪيو آهي اهو ان تي به قادر آهي جو ان شيءِ جي تخليق ۽ پيدائش کي ان کان سواءِ ڪنهن ٻيءَ شيءِ سان به وابسته رکي، معجزات جي ظاهر ٿيڻ جو مقصد ئي هيءُ آهي ته حق جي منڪرن ۽ معاندن جي سامهون نبين عليهم السلام جي صداقت جا ناقابل انڪار دليل پيش ڪيا وڃن ۽ انهن تي اهو واضح ڪيو وڃي ته الله تعالىٰ جي تائيد ۽ مدد انهن سان شامل آهي جنهن جي ڪري اهي حيرت ۾ وجهندڙ واقعا انهن جي اشارن تي واقع ٿي رهيا آهن ۽ عام طرح هر نبي کي ان زماني جي ضرورتن جي مطابق معجزات ڏنا ويندا آهن.

## تنبيه

چاٽڻ گهرجي ته قاديانين ملعونن الله تعالىٰ جي انبياء ڪرام عليهم الصلواة والسلام جي معجزات جو انڪار ۽ قرآن پاڪ جي آيتن ۽ حديثن جا غلط ۽ بيجا تاويل صرف ان جي ڪري ڪيا آهن جو انهن واري نبوت جي ڪوڙي مدعيءَ، دجال، مرتد ۽ ملعون غلام احمد قاديانيءَ عليه اللعنة کان معجزا ۽ ڪمال ظاهر نه ٿي سگهيا هئا، انهن سوچيو ته متان ماڻهو چون ته اوهان واري اڳواڻ معجزا ڇو نه ظاهر ڪيا ان جي ڪري معجزن جي واقع ٿيڻ جوئي انڪار ڪري ويهي رهيا. اهي اندر جا انڌا ۽ گمراه، قرآن ۽ حديث جا منڪر ڪافر آهن انهن کي ڪافر نه چوندڙ ۽ ڪافر نه سمجهندڙ خود ڪافر آهي. مسلمانن کي انهن جي مڪرن کان هوشيار رهڻ ضروري آهي. "وَاُنَبِّئُكُمْ بِمَا تَاْكُلُوْنَ وَمَا تَدَّخِرُوْنَ فِيْ بُيُوْتِكُمْ" (جيڪي کائو ٿا ۽ جيڪي گهرن ۾ ذخيرو ڪري رکو ٿا ان جي اوهان کي خبر ڏيان ٿو) هن جملي ۾ عملي معجزات جي ذڪر ڪرڻ کان پوءِ علمي معجزو ذڪر ڪيو ويو آهي. يعني بعضي ماضي ۽ مستقبل

جون غيبي خبرون اوهان کي ٻڌايان ٿو. منهنجي نگاهه جي اڳيان ويجهيون، پري، ڪليل ۽لڪل سڀ شيون برابر آهن،مون کي سيني جي خبر آهي، منهنجي سيني تي نظر آهي. ڀلي اهي ڪيترو به پري ڇو نه هجن، اوهان رات جي انڌيري ۾ ،ڪارين ڪوٺين ۾ جو ڪجهه کائو ۽ پيو ۽ جيڪي بچائي رکو ٿا مون کي انهن سيني جي خبر آهي.

هنن آيتن مان هيءُ فائدا حاصل ٿيا.

## فائدو ١

الله تعاليٰ جا پيارا الله جي اذن سان مئلن کي زنده ڪندڙ، بيمارن کي شفا ڏيندڙ، انڌن کي سجو ڪندڙ، مصيبتون دفع ڪندڙ، ڏک لاهيندڙ هوندا آهن. پيدائشي انڌو هجڻ،ڪوڙهه جي مرض ۾ مبتلا رهڻ وڏيون بلائون آهن پر حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جن فرمايو ته"مان انهن کي شفا ڏيان ٿو "بِاِذْنِ اللّٰهِ" الله جي اذن سان، برسات سان قحط ۽ ڏڪار، دفع ٿيندو آهي اها دافع القحط آهي. بعضي ٻوٽيون نزلي، زڪام، جريان ۽ بخار لاءِ دافع آهن. انهن کي دافع چوڻ به جائز آهي ۽ الله تعاليٰ جي پيارن کي "دافع البلاءِ والوباءِ والقحط" جيئن درود تاج ۾ آهي ان ارادي سان چوڻ ته انهن جي دعا سان اهي دفع ٿين ٿا جائز آهي.

## فائدو ٢

نبين سڳورن عليهم الصلواة والسلام جون صفتون، ڪمالات، معجزا وغيره بيان ڪرڻ ايمان ۾ داخل آهن. ڏسو حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جن به پنهنجون صفتون پاڻ بيان ڪري ٻڌايون ته مون ۾ هي هي صفتون آهن ۽ مان الله جو رسول آهيان. حضور پر نور ﷺ جن به قريش ڪان اول پنهنجون صفتون پڇيون هيون ته"مون کي ڇا ٿا سمجهو" چيائون ته "سچو، امانت وارو" ان ڪان پوءِ نبوت جو اعلان فرمايائون "ته مان الله جل شانه جو رسول آهيان"

## فائدو ٣

الله تعاليٰ جي ڪمن کي الله تعاليٰ جا پيارا پاڻ ڏي نسبت ڪري سگهن ٿا ڇو ته اهي ڪم انهن جي هٿن تي ظاهر ٿين ٿا ۽ اهي پيارا انهن ڪمن جو مظهر آهن جيئن حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام فرمايو ته مان ٿو جيئرو ڪيان مان ٿو ڇڏايان وغيره. حضرت بيبي مريم سڳوريءَ کي جبرئيل عليه السلام چيو "لِاَهَبَ لَكِ

غُلَامًا زَكِيًّا (١) "تانت مان توکي پاڪ پٽ ڏيان" حالانڪ ڏيڻ وارو الله تعالىٰ آهي.

## فائدو ۴

ڦيٽي سان ڦوڪ ڏيڻ انبياءِ ڪرام عليهم الصلواة والسلام جي سنت آهي حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام ڦوڪ سان پکين ۾ ساهه ٿي وڌو. هاڻي بہ اولياءِ ڪرام ڦيٽي جي ڦوڪ سان بيمارن تي دم ڪندا آهن تہ اهي الله تعالىٰ جي فضل سان چاڪ ٿي ويندا آهن، انهن جي دعائن سان تقدير ۾ تبديلي ايندي آهي. عمريون وڌنديون آهن، مشڪلاتون حل ٿينديون آهن، نصيب ڪلندا آهن، الله تعالىٰ پنهنجن پيارن کي عالمِ اجسام، عالمِ امڪان، عالمِ امرتي حڪومت ڏيندو آهي ۽ الله جي اذن سان سندن حڪم هر جاءِ تي هلندو آهي.

## فائدو۵

خيال ۾ رهڻ گهرجي تہ مردن کي جيئرو ڪرڻ ۽ مادر زادي انڌي ۽ ڪوڙهه واري کي شفا ڏيڻ ۾ حضرت عيسىٰ عليه السلام جن صرف دعا نہ گهرندا هئا، پر پنهنجي خداداد قوت ۽ تصرف کي بہ استعمال ڪندا هئا. جيڪڏهن صرف دعا گهرندا رهن ها تہ ابريءُ احيي (متڪلم جا صيغا)مان ٿو چڱايان مان ٿو جيئرو ڪيان،) نہ چون ها. ٻين انبياءِ ڪرام عليهم الصلواة والسلام جي دعائن سان بہ مئل جيئرا ٿيا هئا. حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام جي دعا سان ٧٠ ستر بني اسرائيل جيئرا ٿيا هئا. (ثُمَّ بَعَثْنَاكُمْ مِنْ بَعْدِ مَوْتِكُمْ) حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جي دعا سان چار پکي جيئرا ٿيا هئا. حضرت عزير عليه الصلواة والسلام جي دعا سان سندس سواريءَ وارو گڏهه ۽ حضرت حزقيل عليه الصلواة والسلام جي دعا سان ستر هزار (٧٠٠٠٠) مئل ۽ حضور سرور ڪائنات ﷺ جن جي دعا سان سندن والدين رضي الله عنهما ۽ ٻيا جيئرا ٿيا هئا، پر انهن مان ڪنهن بہ نہ چيو تہ مان ٿو جيئرو ڪريان ۽ چڱايان.حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام صرف ان قوة ۽ تصرف استعمال ڪرڻ جي ڪري ائين فرمايو هو

## خصوصي ڪرم

اڄ ١٧ تاريخ جمادي الاولىٰ ١۴١۴هـ الموافق ٣ نومبر ١٩٩٣ع اربع جي ڏينهن مٿيون تفسير جو صفحو لکي ١١ بجي آرام ڪرڻ لاءِ پنهنجي لائبريري ۾ ئي

سمهي رهيس خواب ۾ ڏسان پيو تہ مديني منوره پهتو آهيان ۽ اتي اهو جمعہ جو ڏينهن ۽ جمعہ جي نماز جو وقت آهي نماز پڙهڻ لاءِ حرم شريف ۾ گهڙيو آهيان ۽ اتي مون کي الهڏنو خان ڏاهري زميندار ٻانڌي ضلع نوابشاھ بہ گڏ نظر آيو. جنهن منهنجي تفسير جو پهريون جلد ڇپارايو هو. مون اندر حرم ۾ وڃڻ کان پوءِ حبيب ڪريم صلى الله عليه وسلم جن جي پيرانديءَ کان وڃڻ لاءِ سوچيو اتي ويس تہ جاءِ صفا خالي هئي ۽ پيرانديءَ مبارڪ کان جيڪا لوھ جي تلهي جاري لڳل هوندي آهي ان جي بجاءِ اهڙو صاف شيشو نظر آيو جنهن مان عينڪ جي شيشي وانگر نظر اندر وڃي رهي هئي، مون اندر نهاريو تہ ٽي بابرڪت مزارون نظر آيون، هڪ مزار جي پير ۾ هڪ شخص چادر ۾ ڍڪيل ستل نظر آيو ۽ ان ڳالهائي ٻڌايو تہ هيءُ وڏي مزار حضور پر نور ﷺ جن جي آهي ۽ ٻي حضرت ابوبڪر صديق جي، ٽين حضرت عمر فاروق رضي الله تعالىٰ عنهما ڇو رهيو سوال تہ اهو ڳالهيندڙ ڪير هو؟ جنهن سمجهايو ۽ ٻڌايو. منهنجي ناقص عقل ۾ تہ حضرت عيسىٰ عليہ الصلواة والسلام جن هئا، جن جو ذڪر هنن صفحات ۾ لکي رهيو هوس. والله اعلم بحقيقة الحال والحمد لله علىٰ هذه الزيارة المباركة

وَمُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيَّ مِنَ التَّوْرٰىةِ وَلِاُحِلَّ لَكُمْ بَعْضَ الَّذِيْ

۽ تصديق ڪندڙ ان (ڪتاب) جي جو مون کان اڳ ۾ (نازل ڪيل آهي) توراة جي ۽ تانتہ حلال ڪيان اوهان لاءِ بعض اهي

حُرِّمَ عَلَيْكُمْ وَجِئْتُكُمْ بِاٰيَةٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ فَاتَّقُوا اللّٰهَ

شيون جو حرام ڪيون ويون اوهان تي (هن کان اڳ ۾) ۽ آندي مون اوهان وٽ نشاني اوهان جي رب وٽان پوءِ ڊڄو الله کان

وَاَطِيْعُوْنِ ﴿٥٠﴾ اِنَّ اللّٰهَ رَبِّيْ وَرَبُّكُمْ فَاعْبُدُوْهُ هٰذَا صِرَاطٌ مُّسْتَقِيْمٌ ﴿٥١﴾

۽ تابعداري ڪيو منهنجي بيشڪ الله رب منهنجو ۽ رب اوهان جو آهي پوءِ عبادت ڪيو ان جي هيءُ واٽ سڌي آهي.

## تفسير

هنن آيتن ۾ بہ حضرت عيسىٰ عليہ الصلواة والسلام جو بيان هلي رهيو آهي تہ مان حضرت موسىٰ عليہ الصلواة والسلام تي نازل ڪيل توراة سڳوري جي تصديق ڪيان ٿو تہ اهو بہ الله تعالىٰ جو نازل ڪيل ڪتاب آهي ۽ ان جي عام اصول ۽

احڪام ڪي بحال رکندي زماني جي مناسب الله تعالىٰ جي حڪم سان ڪجهہ جزئي، ۽ فرعي تغيرات ۽ تبديليون ڪندس، مثلاً جن بعضي حڪمن ۾ اول سختي هوندي هئي هاڻي اها ختم ڪئي ويندي پوءِ ان جو نالو نسخ رکو يا تڪميل، اوهان ڪي اختيار آهي اوهان تي جيڪي قيد ۽ سختيون اوهان جي علمائن پنهنجي طرفان عائد ڪيون آهن مان اهي هلڪيون ڪرڻ آيو آهيان ۽ اوهان جڏهن منهنجي ايترن حيران ڪندڙن ڪمالات ڪي ڏٺو آهي جو الله تعالىٰ جي اذن سان مئلن ڪي جيئرو انڌن ڪي سجو، لاعلاج مريضن ڪي صحتياب ڪيان ٿو تہ الله تعالىٰ کان ڊڄي منهنجي اطاعت ڪيو. ۽ اهو بہ ذهن نشين ڪيو تہ انهن سيني ڳالهين جي هوندي مان الله نہ پر الله تعالىٰ جو ٻانهو آهيان، اهو منهنجو ۽ اوهان سيني جو رب آهي اهوئي عبادت ۽ پرستش جو لائق آهي، ٻيو ڪو ٻلي ڪيترو بہ صاحب ڪمال هجي، عبادت جو لائق نہ آهي، الله تعالىٰ ڪي وحده لا شريڪ له تسليم ڪرڻ ۽ صرف ان جي عبادت ڪرڻ اهائي صراط مستقيم (سڌي راهہ) آهي ۽ جيڪو بہ ان رشد ۽ هدايت جي شاهراه کان وار جي برابر منحرف ٿيندو تہ گمراهہ ٿي ويندو.

**هنن آيتن مان هي فائدا حاصل ٿيا**

## فائدو ١

ڪو بہ نبي ڪنهن بہ آسماني ڪتاب ڪي ڪوڙو نہ چوندو آهي بلڪ ان جي تصديق ئي ڪندو آهي، جيئن "مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيَّ" مان صاف ظاهر آهي ها اهو انهن جي ڪجهہ احڪام ڪي الله تعالىٰ جي حڪم سان منسوخ ڪري سگهي ٿو.

## فائدو ٢

پيغمبرن سڀني عليهم السلام ڪي ڪجهہ شرعي حڪمن جو اختيار بہ هوندو آهي ڏسو حضرت عيسىٰ عليه السلام فرمايو "وَلِأُحِلَّ لَكُمْ" (۽ تانتہ مان حلال ڪيان اوهان لاءِ) معلوم ٿيو تہ حلال ۽ حرام ڪرڻ جو انهن ڪي بہ اختيار هوندو آهي، هڪ ڀيري حضور ﷺ جن فرمايو تہ "حج ڪيو" ڪنهن عرض ڪيو تہ " هر سال" فرمايائون تہ جيڪڏهن مان ها ڪيان ها تہ اوهان تي هر سال حج فرض ٿي وڃي ها- نہ صرف هڪ ڀيرو فرض آهي؛ سندن ها ۽ نہ ۾ ايترو تہ اثر هو. اهڙا ڪيترائي مثال بہ حديثن ۾ ملن ٿا.

فَلَمَّآ اَحَسَّ عِيۡسٰى مِنۡهُمُ الۡكُفۡرَ قَالَ مَنۡ اَنۡصَارِىۡۤ اِلَى اللّٰهِ ؕ

پوءِ جڏهن محسوس ڪيو عيسىٰ انهن کان ڪفر- فرمايائين ته ڪير آهن مددگار منهنجا الله جي (واٽ ۾)

قَالَ الۡحَوَارِيُّوۡنَ نَحۡنُ اَنۡصَارُ اللّٰهِ ۚ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ ۚ وَاشۡهَدۡ بِاَنَّا

چيو حوارين ته اسين مددگار الله (جي دين) جا آهيون ايمان آندوسون الله تي ۽ شاهد رهه ته بيشڪ اسين

مُسۡلِمُوۡنَ ﴿۵۲﴾ رَبَّنَآ اٰمَنَّا بِمَآ اَنۡزَلۡتَ وَاتَّبَعۡنَا الرَّسُوۡلَ فَاكۡتُبۡنَا

مسلمان آهيون اي اسان جا رب ايمان آندوسون ان تي جو نازل ڪيو تو ۽ تابعداري ڪئي سون رسول جي، پوءِ لک تون اسان کي

مَعَ الشّٰهِدِيۡنَ ﴿۵۳﴾

(حق جي) شاهدي ڏيندڙ سان .

## تفسير

حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام ابتداءِ ۾ اڪيلي سردين جي دعوت ڏيڻ شروع ڪئي هئي ۽ پاڻ انهن کي حڪيمانه ڪلام سان سمجهائيندي انهن جي اڳيان معجزا به ظاهر ڪندا رهيا پر انهن اطاعت جي بجاءِ حسد ڪندي ڪين ايذائڻ ۽ شهيد ڪرڻ جو پروگرام ٺاهيو. حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن انهن جي ان ارادي ۽ سوچ کي سمجهي ويا ۽ پاڻ فرمايائون ته ڪير آهن جو منهنجي الله تعالىٰ جي دين لاءِ مدد ڪن؟ حوارين عرض ڪيو ته "اسين الله جي دين جا مددگار آهيون" اسان الله تي ايمان آندو آهي ۽ اوهان به شاهدي ڏيو ته اسين بلاشڪ ۽ شبهي جي مسلمان آهيون" ان کان پوءِ انهن حوارين الله تعالىٰ کان دعا گهري ته "اي اسان جا پالڻهار! جيڪي تو نازل ڪيو آهي ان تي ايمان آندو اٿئون ۽ تنهنجي پيغمبر (عليه الصلواة والسلام) جي تابعداري ڪئي اٿئون پوءِ اسان کي (پنهنجي بارگاهه ۾ به) شاهدي ڏيندڙن ۾ لک. جو اسان تنهنجي توحيد ۽ تنهنجي نبين سڳورن عليهم السلام جي نبوت جا شاهد آهيون، عطاءِ بن ابي رباح سڳوري فرمايو آهي ته هن مان مراد آهي ته اسان جي شاهدي نبين جي شاهديءَ سان گڏي لک ۽ حضرت ابن عباس رضي الله تعالىٰ عنهما جو فرمان

آهي تہ هن مان مراد آهي تہ اسان کي حضرت محمد ﷺ جن ۽ انهن جي امت سان گڏ شاهدن ۾ لک چو تہ اهي اڳين نبين سڳورن عليهم الصلواة والسلام جي تبليغ ۽ دين جي دعوت جا شاهد هوندا ۽ شاهدي ڏيندا.

## حوارين جي معنيٰ ۽ ان مان مراد ڪير آهن؟.

حواريون حواري جو جمع آهي ان جي معنيٰ آهي خالص دوست. بعضي علماء فرمايو آهي تہ حواري هڪ خاص شهر جو نالو آهي ان ڏانهن نسبت ڪري حواري سڏيا ويا آهن،حواري ۾ ي نسبت جي آهي جيئن بغدادي وغيره، بعضي علماءِ وٽ حواري حور جي لفظ کان ورتل آهي حور جي معنيٰ موٽڻ، جيئن قرآن پاڪ ۾ آهي "اِنَّهٗ ظَنَّ اَنْ لَّنْ يَّحُوْرَ" (١) مشوري کي تحاور چيو ويندو آهي جو ان ۾ ڳالهہ کي هڪ ٻئي ڏانهن موٽايو ويندو آهي. جيئن ارشاد رباني آهي "وَاللّٰهُ يَسْمَعُ تَحَاوُرَكُمَا" الله توهان جي صلاح مشوري کي ٻڌي ٿو. جڏهن تہ خالص دوست ڏانهن بہ موٽڻ ٿيندو آهي ان جي ڪري ان کي حواري سڏيو ويو آهي. بعض علماء فرمايو آهي تہ حور جي معنيٰ سفيدي (اڇائي) آهي جنهن جي اک جي سفيدي گهڻي تيز هجي ان کي حور چوندا آهن ۽ ان جي ڪري جنت ۾ رهڻ وارين کي حور سڏيو ويندو آهي، حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جا اهي ساٿي يا تہ ڌوٻي هئا جو ماڻهن جا ڪپڙا صاف ڪندا هئا، يا تہ پاڻ سفيد ڪپڙا پائيندا هئا، يا انهن جا منهن سفيد هئا، يا انهن جون دليون منور هيون، يا انهن جا اخلاق سهڻا هئا ان جي ڪري انهن کي حواري چوندا هئا. (٢)

علامه ابو السعود لکيو آهي تہ اهي بادشاهہ هئا انهن مان هڪڙي بادشاهہ سڀني جي دعوت ڪئي جڏهن ماڻهو گڏ ٿيا تہ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن ان دعوت۾ هڪ پيالي مان کائڻ ويٺا پر ان ۾ ايتري تہ برڪت پيدا ٿي جو کٽي نہ پيو اها ڳالهہ ماڻهن وجي بادشاهہ سان ڪئي ان حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام سان ملاقات ڪري ڪانئس پڇيو تہ اوهان ڪير آهيو؟ پاڻ فرمايائون تہ "مان عيسىٰ بن مريم آهيان" پوءِ اهو بادشاهہ بادشاهي ڇڏي پنهنجن مٽن،مائٽن سوڌو حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي پويان هليو. اهي آهن حواري، ڪن عالمن فرمايو آهي تہ اهي مڇي مارڻ وارا هئا، اڇا ڪپڙا پائيندا هئا انهن ۾ شمعون، يعقوب ۽ يوحنا نالن سان بہ شامل هئا حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن جڏهن

(١) سورة الانشقاق آيت ١۴ (٢) تفسير نعيمي ص٥٦٣ جلد٣

اتاهين اچي لنگهيا تہ فرمايائون تہ "اوهان مڇيءَ جو شڪار پيا ڪيو جيڪڏهن منهنجي تابعداري ڪندؤ تہ هميشہ واريءَ حياتي حاصل ڪندؤ پڇيائون تہ اوهان ڪير آهيو؟ فرمايائون تہ مان عيسيٰ بن مريم الله جو رسول ۽ ان جو ٻانهو آهيان. پوءِ حضرت عيسيٰ عليه السلام کان معجزي جي گهر ڪيائون انهن مان جنهن جو نالو شمعون هو تنهن پنهنجو ڄار مڇيءَ ڦاسائڻ لاءِ سڄي رات پاڻيءَ ۾ هٽي ڇڏيو هو پر ان ۾ هڪ مڇي بہ نہ ڦاٿي هئي حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام ان کي امر ڪيو تہ ٻيو ڀيرو ڄار پاڻيءَ ۾ اڇلاءِ، ان ڄار اڇلايو تہ ايتري تہ مڇي اچي ڦاٿي جو هڪ ٻيڙي تہ پرجي وئي پر مدد لاءِ ٻي ٻيڙي بہ طلب ڪيائين ۽ ٻئي ٻيڙيون پري ٻاهر ڪڍيائون. پوءِ اهي سڀئي حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام تي ايمان آڻي سندس ساٿ ۾ هلڻ لڳا، بعض علماء جو چوڻ آهي تہ اهي ٻارهن ١٢ ڄڻا هيا جڏهن ڪين بک ۽ اڃ لڳندي هئي تہ حضرت عيسيٰ عليه السلام کي چوندا هيا. تہ بک ۽ اڃ لڳي آهي، روح الله پاڻ زمين تي هٿ هڻي هر هڪ لاءِ بہ پڪل مانيون ۽ پاڻي ڪڍندو هو ۽ اهي کائيندا ۽ پيندا هئا .وري عرض ڪيائون تہ اسان مان ڀلو ڪير آهي؟ حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جن فرمايو تہ " جيڪو هٿ جو پورهيو ڪري ڪمائي ۽ کائي اهو ڀلو آهي" پوءِ اهي مزدوريءَ تي ڪپڙا ڌوئندا هئا ان جي ڪري حواري سڏيا ويا. ڪن جو چوڻ آهي تہ حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جن هڪ ڪٽيءَ وٽ رهندا هئا، ان ڪٽيءَ کي هڪ ڏينهن ڪنهن ڪم سان وڃڻو هو ۽ ڪين چئي ويو تہ مون سيني ڪپڙن تي نشان ڪري ڇڏيا آهن. جنهن تي جهڙو نشان آهي ان کي اهڙي رنگ سان رنگيندا. حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام سڀئي ڪپڙا هڪڙي رنگ واري مٽ ۾وجهي فرمايو تہ "جيئن منهنجو ارادو آهي تيئن ئي وڃجو" ڪٽي جڏهن موٽي آيو تہ اچي کائڻ پڇيائين تہ ڇا ڪيُوَ؟ پاڻ فرمايائون تہ" سڀئي ڪپڙا هڪڙي مٽ ۾ وجهي ڇڏيا اٿم " ان چيو تہ اوهان تہ منهنجو ڪم خراب ڪري ڇڏيو پاڻ فرمايائون تہ "اٿي هلي ڏس" پوءِ هٿ وجهندا هڪ هڪ ڪپڙو ڪڍندا ويا ۽ جنهن تي جهڙو نشان هو اهو ان رنگ ۾ رڱجي ويو، ڪو سائو تہ ڪو ڳاڙهو، ڪو ڦڪو تہ ڪو نيرو جڏهن سڀئي ٻاهر ڪڍيائين تہ تمام سهڻي نموني رڱيل هئا .اهو سڄو نظارو انهن ماڻهن بہ ڏٺوجيڪي اتي موجود هئا، سڀئي عجب ۾ پئجي ويا ۽ سيني ايمان آڻي سندن اتباع ڪئي- اهي حواري آهن جن جو ذڪر قرآن ڪريم ۾ آيو آهي. قفال عليه الرحمة فرمايو آهي تہ انهن سيني قولن کي

ملائڻ لاءِ تطبيق هن طرح آهي تہ اها هڪ قوم هئي جن مان ١٢ ڄڻا بادشاهہ هئا باقي کن جو ڏنڊو مچي مارڻ هو کي ڪٽي هئا تہ کي ڏوبي هئا ،سيني کي حواري ان جي ڪري سڏيو ويو آهي، جو خلوص دل سان حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جا دوست، ساٿي ۽ مددگار هئا. (١)

## حضرت زبير رضي الله تعالىٰ عنه جي فضيلت

صحيح بخاري ۽ مسلم شريف روايت ڪئي آهي تہ جڏهن رسول الله صلى الله عليه وسلم جن احزاب جي جنگ لاءِ مسلمانن کي حرص ڏياريو تہ حضرت زبير رضي الله عنه جلدي ڪري عرض ڪيو تہ مان حاضر آهيان. ٻيو ٻيرو حرص ڏيارياٺون تہ بہ حضرت زبير جلد اٿي عرض ڪيو تہ مان حاضر آهيان پوءِ پاڻ فرمايائون تہ "لِكُلِّ نَبِيٍّ حَوَارِيٌّ وَحَوَارِيِّي الزُّبَيْرُ" يعني هر نبيءَ جو حواري (مخلص دوست) هوندو آهي ۽ منهنجو حواري (مخلص دوست) زبير آهي.

## انصار الله

انصار ناصر جو جمع آهي معنىٰ مدد ڪندڙ، هن مان مراد الله تعالىٰ جي دين جي دعوت ڏيڻ ۾ مدد ڪندڙ آهن جيئن حضور ﷺ جن هجرت کان اڳ ۾ حج جي موسم ۾ فرمائيندا هئا تہ: "مَنْ رَجُلٌ يُؤْوِينِي حَتَّى أُبَلِّغَ كَلَامَ رَبِّي فَإِنَّ قُرَيْشًا قَدْ مَنَعُونِي اَنْ اُبَلِّغَ كَلَامَ رَبِّيْ" ڪهڙو مڙس آهي جو مون کي جاءِ ڏئي تانتہ مان پنهنجي رب جي ڪلام جي تبليغ ڪيان. بيشڪ قريشين مون کي روڪيو آهي هن کان جو پنهنجي رب جي ڪلام جي تبليغ ڪيان. پوءِ کين مديني شريف جا انصار مليا جن کين جاءِ ڏني ۽ مدد ڪئي جنهن جي ڪري پاڻ انهن ڏانهن هجرت ڪيائون ۽ انهن هر دشمن کان سندن دفاع ڪيو (٢)

## فائدو

ابن مردويہ حضرت ابو سعيد خدري رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن نماز کان پوءِ دعا جا هي الفاظ چوندا هئا.

(١) تفسير ابي السعود ص٤١ جلد١ جزءُ٢ (٢) تفسير ابن ڪثير ص٣٦٥ ج١

”اَللّٰهُمَّ اِنِّيْ اَسْئَلُکَ بِحَقِّ السَّائِلِيْنَ عَلَيْکَ فَاِنَّ لِلسَّائِلِيْنَ عَلَيْکَ حَقًّا اَيُّمَا عَبْدٍ اَوْ اَمَةٍ مِنْ اَهْلِ الْبَرِّ وَالْبَحْرِ تَقَبَّلْتَ دَعْوَتَهُمْ وَاسْتَجَبْتَ دُعَآءَهُمْ اَنْ تُشْرِكَنَا فِيْ صَالِحِ مَا يَدْعُوْنَکَ بِهٖ وَاَنْ تُعَافِيَنَا وَاِيَّاهُمْ وَاَنْ تَقَبَّلَ مِنَّا وَمِنْهُمْ وَاَنْ تَجَاوَزَ عَنَّا وَعَنْهُمْ بِاَنَّا آمَنَّا بِمَآ اَنْزَلْتَ وَاتَّبَعْنَا الرَّسُوْلَ فَاكْتُبْنَا مَعَ الشَّاهِدِيْنَ“

اي منهنجا الله! بيشک مان توکان تنهنجي دروازي جي سائلن جي صدقي دعا تو گهران پوءِ يقينًا توتي تنهنجي سائلن جو حق آهي کنهن بہ ٻانهي يا ٻانهيءَ جي پٽ جي يا سمنڊ وارن مان دعا قبول کئي اٿئي يا عرض اگهايو اٿئي تہ اسان کي بہ انهن جي صالح دعا ۾ شريک کر ۽ اسان کي ۽ انهن کي عافيت عطا کر ۽ اسان ۽ انهن جا عرض قبول کر ۽ اسان ۽ انهن کان درگذر فرماءِ، ان جي کري جو اسان ان تي ايمان آندو آهي جيکو تو نازل کيو آهي پوءِ اسان کي شاهدن ۾ لک .

۽ فرمائيندا هئا تہ جيکو بہ هي کلما چوندو تہ الله تعالىٰ ان کي بر ۽ بحر وارن جي دعا ۾ شريک کندو پلي کٽي بہ هجي (١)

وَمَكَرُوْا وَمَكَرَ اللّٰهُ وَاللّٰهُ خَيْرُ الْمَاكِرِيْنَ ﴿٥٤﴾

الثلثة ٥ ع ١٤

۽ ڳجهي رٿ کيائون ( حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي شهيد ڪرڻ جي لاءِ) ۽ ڳجهي رٿ کئي الله (حضرت عيسىٰ عليه السلام جي بچائڻ جي لاءِ) ۽ الله ڀلو ڳجهي رٿ ڪندڙ آهي.

## تفسير

هن آيت جي تفسير ۾ حضرت ابن عباس رضي الله تعالىٰ عنهما کان روايت آهي تہ هک ڀيري حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن يهودين جي هک ٽولي کان اچي لنگهيا تہ اهي کين ڏسندي ئي جادوگر، جادوگر جو پٽ وغيره چئي کين ۽ سندن والده ماجده کي گاريون ڏيڻ لڳا ، اللّٰه تعالىٰ جي نبي عليه الصلواة والسلام کي ڏک ٿيو. پاڻ انهن کي بددعا کندي انهن تي لعنت کيائون تہ سيئي اتي جو اتي سوئر بنجي ويا . اها ڳالهہ جڏهن انهن يهودين جي وڏي ۽ بادشاهہ کي پهتي ۽ انهن سوئر ٿيلن کي بہ ڏٺائين تہ ڊڄي ويو ۽ يهودين جي ميٽنگ کري صلاح کيائين تہ هاڻي ڇا ڪرڻ گهرجي؟ سيني هکراءِ ٿي فيصلو ڏنو تہ (حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام ؑ

(١) الدر المنثور ص٢٢٤ جلد٢

جن کي شهيد ڪجي ۽ شهيد ڪرڻ لاءِ ان گهر ڏانهن ڪاهي آيا جنهن ۾ پاڻ رهيل هئا، ان گهر جي ڇت ۾ روشنيءَ ۽ هوا اچڻ لاءِ هڪ دري ٺهيل هئي. الله تعالىٰ جي حڪم سان حضرت جبرئيل عليه السلام حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن کي انهيءَ دريءَ مان ٻاهر ڪڍي مٿي آسمانن تي کڻي ويو ۽ يهودين پنهنجي هم خيالن مان ططيانوس نالي هڪ يهوديءَ کي حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن جي ڏسڻ لاءِ اندر موڪليو اهو جيئن جو اندر گهڙيو ته الله تعالىٰ هڪدم ان کي حضرت عيسىٰ عليه الصّلواة والسلام جن جهڙي ظاهري شڪل ڏني ۽ اهو جڏهن حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام کي اندر نه ڏسي مايوس ٿي ٻاهر نڪتو ته ٻاهران بيٺل يهودين کيس (حضرت) عيسىٰ (عليه الصلواة والسلام) سمجهي پڪڙي، ڦاسيءَ تي چاڙهي، قتل ڪري ڇڏيو. هت اهو واقعو ذڪر ڪندي الله تعالىٰ فرمايو آهي ته" هنن پنهنجي رٿي الله تعالىٰ پنهنجي رٿ ڪئي" ۽ رٿ اهائي ڪامياب ٿي جيڪا الله تعالىٰ رٿي هئي.

## سوال

هن آيت ۾ مڪر جي لفظ جي نسبت الله تعالىٰ ڏي ڪيل آهي (وَمَكَرَاللهُ) حالانڪ مڪر ته ڌوڪي ۽ فريب کي سڏيو ويندو آهي؟

## جواب

مڪر جو لفظ اردو ۽ سنڌي زبان ۾ به استعمال ٿيل آهي مگر اهو اصل ۾ عربي جو لفظ آهي ۽ پنهنجي اصل زبان ۾ ان جي معنىٰ آهي تدبير ڪرڻ ۽ ڪنهن جي لڪل سازش کي خفيه طريقي سان ناڪام بنائڻ. خاص ڪري جڏهن ان جي نسبت الله تعالىٰ جي ان پاڪ ۽ مقدس ذات ڏي ڪيل هجي جيڪو هر عيب، نقص ۽ نازيبا فعل کان پاڪ آهي ته اتي ڌوڪي، ٺڳيءَ يا فريب جي معنىٰ سوچڻ سراسر ناداني ۽ نالائقي آهي.

جڏهن حضرت بيبي مريم سائڻ رضي الله تعالىٰ عنها کي اها خبر پهتي ته اوهان جي پٽ حضرت عيسىٰ عليه السلام کي ڦاسي ڏئي شهيد ڪيو ويو آهي ته پاڻ پريشان ٿي روئندي رهي، ستين ڏينهن الله تعالىٰ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام کي حڪم فرمايو ته اوهان آسمانن تان هيٺ لهي پنهنجي والده سڳوريءَ جي

زيارت ڪري ان کي تسلي ڏئي اچو. پاڻ رات جو هڪ جبل تي لهي آيا تہ سڄو جبل نور تي ويو ۽ پنهنجيءَ والده ۽ حوارين کي سڏائي انهن سان مليا، سندن والده تہ ساڻن چنبڙي پئي ۽ چوڻ لڳي تہ پٽ! اوهان ڪٿي آهيو؟ پاڻ فرمايائون تہ” امان اوهان صبر ڪريو جنهن کي قاسي ڏني وئي اهو ٻيو هو“. پوءِ پنهنجن حوارين کي الله تعالىٰ جي دين جي تبليغ لاءِ علائقا مقرر ڪري ڏنائون تہ فلاڻن، فلاڻن علائقن ۾ وڃي تبليغ ڪيو. ان کان پوءِ پاڻ جڏهن آسمانن ڏي روانا ٿيڻ لڳا تہ سندن والده ماجده کانئن پڇيو تہ ”ڪيڏانهن ٿا وڃو“ فرمايائون تہ الله تعالىٰ ڏانهن. پڇيائين تہ ڪڏهن ملندؤ؟ فرمايائون تہ ”قيامت ۾“ ان کان پوءِ سندس نگاهن کان غائب ٿي ويا (١)

علامه علاؤالدين بغدادي عليه الرحمة لکيو آهي تہ فلما اصبح الحواريون تكلم كل واحد منهم بلغة من ارسله عيسىٰ اليهم (٢) يعني صبح جو جڏهن اهي حواري اٿيا جن کي حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام مختلف علائقن ڏانهن ۾ موڪليو تہ اهائي ٻولي خود بخود ڳالهائڻ لڳا، جيڏانهن وڃڻا هئا.

# ضروري وضاحت

حضرت بيبي مريم رضي الله عنها تيرهن سالن جي عمر ۾ حامله ٿي ۽ بيت المقدس جي پر ۾ بيت اللحم جي علائقي ۾ کجيءَ جي هڪ ٿڙ جي هيٺان جيڪو پهريائين سڪل هو حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام کي ڄڻيائين. اهو کجيءَ جو ٿڙ سندس هٿ لڳائڻ سان سرسبز ۽ شاداب ٿي کجور جهلي بيٺو. حضرت عيسىٰ جي ولادت سڪندر بادشاه جي طرفان بابل شهر کي فتح ڪرڻ کان پنجهٺ (٦٥) سال پوءِ ٿي هئي ٽيهن سالن جي عمر ۾ مٿس وحي نازل ٿيو ۽ ٽيٽيهہ سالن جي عمر ۾ رمضان المبارڪ جي ٢٧ تاريخ شب قدر ۾ آسمان تي کنيا ويا. سندن والده سڳوري سندن آسمان تي کڄڻ کان پوءِ ڇهہ ٦ سال جيئري رهي. (٣)

إِذْ قَالَ اللَّهُ يَٰعِيسَىٰٓ إِنِّى مُتَوَفِّيكَ وَرَافِعُكَ إِلَىَّ وَمُطَهِّرُكَ

جڏهن فرمايو الله اي عيسىٰ يقينا مان پوريءَ عمر تائين پهچائيندڙ آهيان توکي ۽ مٿي کڻندڙ آهيان توکي پاڻ ڏانهن ۽ پاڪ

(١) تفسير نعيمي ص٥٦٧ جلد٣ (٢) الخازن ص٢٤٠ جلد١
(٣) المظهري ص٥٧ جلد٢

مِنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَجَاعِلُ الَّذِيْنَ اتَّبَعُوْكَ فَوْقَ الَّذِيْنَ

کنڌڙ آهيان توکي انهن جي (تهمتن) کان جن کفر ڪيو ۽ ڪنڌڙ آهيان انهن جو جن تابعداري ڪئي تنهنجي مٿان انهن جي

كَفَرُوْٓا اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ ۚ ثُمَّ اِلَيَّ مَرْجِعُكُمْ فَاَحْكُمُ بَيْنَكُمْ

جو کفر ڪيائون ڏينهن قيامت تائين، ان کان پوءِ مون ڏانهن موٽڻ آهي اوهان جو ۽ (ان وقت) فيصلو ڪندس اوهان جي وچ ۾،

فِيْمَا كُنْتُمْ فِيْهِ تَخْتَلِفُوْنَ ۝٥٥ فَاَمَّا الَّذِيْنَ كَفَرُوْا فَاُعَذِّبُهُمْ عَذَابًا

انهن (ڳالهين) جو جن ۾ اختلاف ٿي ڪيُو. پوءِ پر جن کفر ڪيو پوءِ عذاب ڪندس انهن کي، عذاب

شَدِيْدًا فِى الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ۡ وَمَا لَهُمْ مِّنْ نّٰصِرِيْنَ ۝٥٦ وَاَمَّا الَّذِيْنَ

سخت دنيا ۽ آخرت ۾ ۽ ناهن انهن جا ڪي مددگار ۽ پر جن

اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ فَيُوَفِّيْهِمْ اُجُوْرَهُمْ ۭ وَاللّٰهُ لَا

ايمان آندو ۽ ڪيائون چڱا ڪم. پوءِ پورا پورا ڏيندو انهن کي اجر انهن جا، ۽ الله نٿو

يُحِبُّ الظّٰلِمِيْنَ ۝٥٧ ذٰلِكَ نَتْلُوْهُ عَلَيْكَ مِنَ الْاٰيٰتِ وَالذِّكْرِ الْحَكِيْمِ ۝٥٨

محبت رکي ظالمن سان اهو (قصو) پڙهون ٿا ان کي اوهان تي آيتن ۽ نصيحت حکمت واريءَ مان.

## تفسير

هن آيت سڄوريءَ ۾ الله تعاليٰ جي طرفان حضرت عيسيٰ عليه الصلاة والسلام سان ڪيل پنج وعدن جو بيان آهي ١- پهريون "اِنِّيْ مُتَوَفِّيْكَ" متوفي لفظ جي معنيٰ ڇا آهي؟ ابن تيميه الجواب الصحيح ص٨٣ جلد٢ تي لکيو آهي تہ المتوفي في لغة العرب معناها بالقبض والاستيفاء وذالک ثلاثة انواع احدها التوفي في النوم والثاني توفي الموت والثالث توفي الروح والبدن جميعًا

ڪليات ابو البقاءِ ۾ آهي التوفي الامنة وقبض الروح وعليه استعمال العامة اوالاستيفاء واخذ الحق وعليه استعمال البلغاءِ (١) يعني توفي عربي ٻوليءَ ۾

(١) معارف القرآن ص٦٩ جلد٢

قبضي ۽ پوري طرح وٺڻ کي چئبو آهي ۽ اهو ٽي قسم آهي. ١- هڪ ننڊ ۾ وٺڻ ٢- ٻيو موت ڏيڻ ٣- ٽيون روح ۽ بدن جو گڏي وٺڻ - ۽ ابو البقاء جي ڪليات ۾ آهي ته توفي جي لفظ جو استعمال عام وٽ مارڻ ۽ روح قبض ڪرڻ لاءِ ايندو آهي ۽ بليغن وٽ پوريءَ طرح وٺڻ ۽ حق حاصل ڪرڻ لاءِ استعمال ٿيندو آهي.

راقم عرض ٿو ڪري ته هيءَ آيت روح ۽ جسد ٻنهي کي چڱيءَ طرح سنڀالي وٺڻ جي معنيٰ ۾ استعمال ٿيل آهي، ڇو ته الله تعاليٰ جو ڪلام ساري دنيا جي بليغن، فصيحن ۽ ڪلام جي ماهرن جي ڪلام کان وڌيڪ آهي. ان ۾ اهو لفظ بلاغت واريءَ اصلي ۽ حقيقي معنيٰ ۾ استعمال ٿيل آهي،ان جي واضح معنيٰ ۽ مقصد هيءَ آهي ته "اسين توکي يهودين جي هٿن ۾ نه ڇڏينداسين بلڪ پاڻ توکي آسمانن ڏي ڪڻائي وٺنداسين" سيدنا ابن عباس رضي الله تعاليٰ عنهما جو فرمان آهي ته هتي متوفيک جو لفظ پڙهڻ ۾ ڪٿي اڳ ۾آيل آهي مگر معنيٰ ۾ پوءِ آهي(١) علامه سيوطيءَ لکيو آهي ته " عن ابن عباس في قوله تعاليٰ اِنِّيْ مُتَوَفِّيْكَ وَرَافِعُكَ اِلَيَّ يعني رافعک ثم متوفيک في آخرالزمان يعني مان توکي اول پاڻ ڏي آسمانن تي کڻندس، ان کان پوءِ آخري زماني ۾دنياتي لاهي، وفات ڪرائيندس آهيان، ابن ابي حاتم قتادة کان روايت آندي آهي ته" اِنِّيْ مُتَوَفِّيْكَ وَرَافِعُكَ اِلَيَّ" معنيٰ ۾ اڳي پوءِ آهي (٢) ابن جرير لکيو آهي ته قالوا ومعنيٰ الوفات القبض كما يقال توفيت من فلان مالي بمعنيٰ قبضته واستوفيته قالوا فمعنيٰ قوله "اِنِّىْ مُتَوَفِّيْكَ وَرَافِعُكَ" اي قابضک من الارض حيًا اليٰ جواري وأخذک اليٰ ما عندي بغير موت ورافعک من بين المشركين واهل الكفر بک(٣) يعني وفات جي معنيٰ آهي پوريءَ طرح وٺڻ جيئن چيو ويندو آهي ته فلاڻي تي جيڪو به منهنجو حق هو اهو پورو پورو ورتم. آيت جي معنيٰ به آهي ته مان توکي تنهنجيءَ حياتيءَ هوندي مرڻ کان سواءِ زمين تان مشرڪن ۽ ڪافرن کان بچائي پاڻ ڏي کڻائي ٿو وٺان. ڄاڻڻ گهرجي ته ڪيترا الفاظ اهڙا به آهن جن جي هڪ اصلي ۽ حقيقي معنيٰ آهي ته ٻي مجازي - ۽ علم معانيءَ جو تسليم ٿيل قاعدو آهي ته حقيقي معنيٰ مجازي معنيٰ کان وڌيڪ ترجيح واري هوندي آهي. ها جيڪڏهن اهڙو ڪو قرينو آهي جنهن سان اصلي ۽ حقيقي معنيٰ جو استعمال متعذر ۽ مشڪل آهي ته پوءِ مجازي معنيٰ مراد وٺي سگهجي ٿي.پر جيڪڏهن قرينو ۽ دليل به حقيقي ۽ اصلي

(١) تنوير المقباس ص٤٨ (٢) الدر المنثور ص٢٢٦ ج٢
(٣) ابن جرير ص٢٠٢ جلد٣ جزء ٣

معنيٰ جي تائيد ڪندڙ آهن ته پوءِ مجازي معنيٰ مراد وٺڻ سراسر ناانصافي ۽ غلط آهي.

هتي متوفي اسم فاعل جو صيغو توفي کان ورتل آهي جنهن جي اصلي ۽ حقيقي معنيٰ آهي پورو پورو وٺڻ. تاج العروس ۾ وفي جي لفظ جي تحقيق ڪندي لکيو اٿس ته: توفاه اي لم يدع منه شيئا[1] يعني اهڙو پورو پورو ورتائين جو ان مان ڪا به شيءِ نه رهايائين. مفسر ابن جوزيءَ عليه الرحمة لکيو آهي ته متوفي جي معنيٰ آهي قابضک من الارض وافيًا تامًا من غير ان ينال منک اليهود شيئًا (٢) يعني مان توکي زمين تان پوري طرح اهڙو کڻندڙ آهيان جو توکي يهودين کان ڪو به ايذاءُ نه پهچندو. علامه قرطبيءَ توفيءَ جي معنيٰ بيان ڪندي لکيو آهي ته چوندا آهن ته توفيت مالي من فلان اي قبضته (٣) مون فلاڻي کان سمورو مال ورتو اهو لفظ مجازي طرح ننڊ ۽ موت جي معنيٰ ۾ به استعمال ٿيل آهي. تاج العروس واري لکيو آهي ته ومن المجاز ادرکته الوفاة اي الموت والمنية وتوفي فلان اذا مات (٤) يعني موت جي معنيٰ ۾ اهو لفظ مجازا استعمال ٿيل آهي مگر هن آيت ۾ متوفي جي اصلي، حقيقي ۽ صحيح معنيٰ آهي ته مان تنهنجو پوريءَ طرح وٺندڙ آهيان، هتي موت جي معنيٰ مراد وٺڻ بالڪل غلط ۽ سراسر ناانصافي آهي. هتي ته قرينا ۽ دليل به آهن جيڪي ٻڌائن ٿا ته موت مراد نه آهي. ١- هڪ ته آيت جي اڳيان ۽ پويان نجران جي نصارن سان گفتگو آهي جيڪي حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جي الوهيت جا قائل هئا، ۽ ڪلام جو مقصد الله تعاليٰ جي توحيد ثابت ڪرڻ ۽ عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جي الوهيت جي باطل هجڻ جو بيان ڪرڻ آهي. جيڪڏهن حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جن وفات ڪري ويا هجن ها ته ڪيتري نه صاف ڳالهه هئي جو چيو وڃي ها ته جنهن کي اوهان خدا ٿا چئو اهو ته مري ويو ۽ جيڪو مري ويو اهو خدا ڪيئن ٿي سگهندو. پر قرآن ڪريم اهو بيان نه ڪري ٻيو انداز اختيار ڪيو آهي اهو ان ڳالهه جو واضح دليل آهي ته قرآن ڪريم جي هن آيت ۾ حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جي مري وڃڻ جو بيان نه آهي. ٢- ٻيو ته حضور ﷺ جن جا ڪيترا ارشاد آهن جن مان حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جن جو نه مرڻ ثابت آهي ان جي ڪري جمهور مفسرن، محدثن، محققن جو فرمان آهي ته هتي متوفيک جي حقيقي معنيٰ مراد آهي مجازي نه

(١) تاج العروس ص (٢) زادالمسير ج ١ ص ٣٩٦
(٣) القرطبي ص ١٠٠ ج ٤ (٤) تاج العروس ص

آهي. علامه زمخشريءَ لکيو آهي تہ معناه اني عاصمک من ان يقتلک الکفار (١) مان توکي کافرن جي قتل کان بچائيندڙ آهيان،امام ابن جرير لکيو آهي واوليٰ هذه الاقوال بالصحۃ عندنا قول من قال معنيٰ ذالک اني قابضک من الارض ورافعک الي لتواتر الاخبار من رسول الله صلی الله عليه وسلم (٢) يعني اسان وٽ وڌيڪ صحيح قولن مان ان جو قول آهي جنهن چيو تہ هن جي معنيٰ آهي تہ مان توکي زمين تان چڱيءَ طرح وٺي پاڻ ڏي کڻندڙ آهيان ڇو تہ ان جي متعلق رسول الله ﷺ جن جون متواتر حديثون آيل آهن تہ پاڻ لهندو ۽ دجال کي قتل کندو.

٢-ٻيو وعدو "رَافِعُکَ اِلَيَّ" (۽ توکي پاڻ ڏانهن کڻندڙ آهيان) هن ۾ ک ضمير خطاب جو آهي جنهن سان حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام کي خطاب کيو ويو آهي، تہ مان توکي پاڻ ڏي کڻندڙ آهيان (کَ) ۽ "توکي" ۾ حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جو جسم ۽ روح ٻئي داخل آهن. عيسيٰ روح ۽ جسم ٻنهين جو نالو آهي تنهنجي کري صرف روح جو کڻڻ مراد وٺڻ غلط آهي. رهيو سوال تہ رفع جو لفظ درجات جي بلنديءَ لاءِ بہ استعمال ٿيل آهي جيئن قرآن پاڪ ۾ ارشاد ايزدي آهي "رَفَعَ بَعْضَکُمْ فَوْقَ بَعْضٍ دَرَجٰتٍ" (٣) يا "يَرْفَعِ اللّٰهُ الَّذِيْنَ آمَنُوْا مِنْکُمْ وَالَّذِيْنَ اُوْتُو الْعِلْمَ دَرَجٰتٍ" (٤) سو اهو مجازا استعمال ٿيل آهي ۽ ظاهر آهي تہ هتي "رَافِعُکَ" ۾ کو بہ مجازي معنيٰ وٺڻ لاءِ قرينو نہ آهي. ان کان سواءِ هتي "رَافِعُکَ" جي پويان اِلَيَّ ٻيڻو آهي ۽ سورت النساءَ ۾ جتي يهودين جي عقيدي جو رد کيو ويو آهي اتي بہ "وَمَا قَتَلُوْهُ يَقِيْنًا بَلْ رَّفَعَهُ اللّٰهُ اِلَيْهِ" آيو آهي يعني (يهودين ان حضرت عيسيٰ) کي يقينًا قتل نہ کيو هو بلڪ ان کي تہ الله تعاليٰ پاڻ ڏي کڻائي ورتو هو ۽ پاڻ ڏي کڻائي وڻڻ روح مع الجسد لاءِ فرمايو ويو آهي.

٣- ٽيون وعدو "وَمُطَهِّرُکَ مِنَ الَّذِيْنَ کَفَرُوْا" (۽ توکي کافرن کان پاڪ کندڙ آهيان) يعني يهودين جيکي توتي ۽ تنهنجي والده ماجده تي تهمتون هنيون انهن کان تنهنجي ۽ تنهنجي والده جي پاڪائي پنهنجي آخري پيغمبر حضرت محمد ﷺ جن جي زبان سان بيان کرائيندس ۽ واقعي جڏهن سرور کونين ﷺ جن تشريف فرما ٿيا تہ حضرت عيسيٰ ۽ ان جي والده تي هنيل بهتانن جي ترديد کيائون- يهودين طعنو ٿي هنيو تہ حضرت عيسيٰ پيءُ کان سواءِ کيئن پيدا ٿيو؟ الله تعاليٰ

(١) کشاف ص٤٣٢ جلد١ (٢) ابن جرير ص٢٠٣ -٢٠٤ ج٣
(٣) سورة الانعام آيت ١٦٦ (٤) سورة المجادلة آيت ١١

قرآن پاڪ ۾ فرمايو آهي ته اها ڪا عجب جي ڳالهه ۽ حيرت ۾ وجهڻ جهڙي شيءِ نه آهي زياده تعجب جي شيءِ ته حضرت آدم عليه السلام جو پيءُ ماءُ ٻنهي ڪان سواءِ پيدا ٿيڻ آهي. اتي اعتراض نه ٿا ڪيو ته هتي ڇو ٿا ڪيو؟ يهودي الزام هڻندا هئا ته حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام ته ان جي برعڪس پنهنجي لاءِ عبديت، بندگيءَ ۽ انسان هجڻ جو اقرار ڪيو هو.

۴- چوٿون وعدو "وَجَاعِلُ الَّذِيْنَ اتَّبَعُوْكَ" الخ (۽ جن تنهنجي تابعداري ڪئي، انهن کي نه مڃڻ وارن ڪان مٿي ڪندڙ آهيان) هتي اتباع مان مراد حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي نبوت جو اعتقاد ۽ اقرار آهي ان ۾ نصاريٰ ۽ مسلمان ٻئي داخل آهن ڇو ته اهي حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي نبوت جا معتقد آهن اها جدا ڳالهه آهي ته صرف ايترو اعتقاد آخرت ۾ نجات لاءِ ڪافي ناهي آخرت جي نجات جو دارومدار ان ڳالهه تي آهي ته حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي سڀني حڪمن تي اعتقاد ۽ ايمان رکي، ۽ ان ضروري ۽ قطعي حڪمن مان هيءُ به آهي ته حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام ڪان پوءِ خاتم الانبياءِ حضرت محمد ﷺ جن تي به ايمان آڻدو وڃي. نصارن ان ڳالهه تي ايمان ۽ اعتقاد نه رکيو ان جي ڪري آخرت ۾ نجات ڪان محروم رهيا. مسلمانن ان تي عمل ڪيو ان جي ڪري آخرت ۾ نجات جا حقدار بڻيا. باقي دنيا ۾ يهودين تي غالب رهڻ جو وعدو سو صرف حضرت عيسىٰ عليه السلام تي ايمان آڻڻ سان وابسته هو اهو نصارن ۽ مسلمانن کي حاصل آهي ۽ هميشه رهندو.

رهيو اسرائيل جي موجوده حڪومت جو سوال سو به صحيح نه آهي ڇو ته اول ته ان حڪومت جي حيثيت ان ڪان سواءِ ڪجهه نه آهي ته اها روس يورپ ۽ آمريڪا جي نصارن جي مشترڪ ڇانوڻي آهي جيڪا انهن مسلمانن جي خلاف قائم ڪري رکي آهي. جيڪڏهن اهي ملڪ ان تان هٿ ڪڍن ته ان جو وجود ئي دنيا تان مٽجي وڃي. پر جيڪڏهن ان کي هڪ حڪومت ڪٿي ڇئجي ته به اها مسلمانن ۽ نصارن جي گڏيل قوت جي اڳيان مقهور ۽ مجبور آهي. پلا اجا به ڪو نه مڃي ته قيامت جي وقت کي ويجهو يهودين جي حڪومت ته خود اسلامي روايات ۾ به آيل آهي.

۵- پنجون وعدو "ثُمَّ اِلَيَّ مَرْجِعُكُمْ فَاَحْكُمُ بَيْنَكُمْ" الخ (ان ڪان پوءِ مون ڏي اوهان جو موٽڻ آهي. پوءِ مان اوهان ۾ فيصلو ڪندس) ان مان مراد آهي ته پنهنجي

وقت تي پورو ٿيندو ۽ يقينًا ٿيندو.

## حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جو آسمانن تي حيات هجڻ ۽ آخر زماني ۾ نزول جو مسئلو

ذهن نشين ڪرڻ گهرجي ته دنيا ۾ صرف يهودين ۽ انهن جي اشاري ۽ حڪم تي هلندڙ قاديانين، مرتدن، دجالن ۽ ڪافرن جو عقيدو آهي ته حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام ڦاسيءَ تي چاڙهيو ويو، مري ويو ۽ دفن ڪيو ويو. نصارن جو چوڻ آهي ته ڦاسيءَ تي چاڙهي قتل ڪيو ويو هو مگر وري زنده ڪري آسمانن تي ڪنيو ويو. انهن ٻنهي ڌرين جي مقابليٰ ۾ مسلمانن جو عقيدو آهي ته الله تعالىٰ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام کي يهودين جي هٿن کان نجات ڏيڻ لاءِ زنده آسمان تي کڻايو اهو نه قتل ڪيو ويو ۽ نه ڦاسيءَ چاڙهيو ويو، اهو زنده آسمان تي موجود آهي. الله تعالىٰ کيس کائڻ، پيئڻ ننڊ ڪرڻ وغيره صفتن کان پاڪ ڪري ڇڏيو آهي. پاڻ انسان ٿي ڪري ملڪي صفتن سان موصوف آهي اڳ ۾ زمين تي رهڻ وارو هاڻي آسمان جو رهاڪو بنجي رهيو پيو آهي. قيامت جي قريب زمين تي لهي ايندو ۽ دنيا ۾ چاليهه (٤٠) سال رهي لڳ ڀڳ ٧٣ سالن جي عمر ۾ وفات ڪري مديني منوره ۾ حضور ﷺ جن سان گڏ سندن روضه اطهر ۾ دفن ڪيو ويندو (١) ان عقيدي تي ساري امت محمديه جو اجماع ۽ اتفاق آهي. قرآن ڪريم جي ڪيترين آيتن ۽ حديث جي متواتر روايتن ۽ امت جي اجماع سان ثابت ٿيل عقيدي جو منڪر ڪافر ۽ مرتد آهي ۽ ان مرتد کي ڪافر نه مڃڻ ۽ ڪافر نه سمجهڻ وارو خود به ڪافر آهي.

علامه ابن ڪثير آيت مبارڪه "وَاِنَّهٗ لَعِلْمٌ لِّلسَّاعَةِ" جي تفسير ۾ لکيو آهي ته قد تواترت الاحاديث عن رسول الله ﷺ انه اخبر بنزول عيسىٰ عليه السلام قبل يوم القيامة اماما عادلا وحكما مقسطا (٢) الخ يعني رسول الله صلي الله عليه وسلم جن جون متواتر حديثون آهن ته پاڻ عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن جي قيامت کان اڳ ۾ نازل ٿيڻ جو ٻڌايو اٿن ته اهو امام عادل ۽ انصاف ڪندڙ حاڪم ٿي ايندو. اهو عقيدو قطعي ۽ يقيني آهي. ان موضوع تي علماءِ ڪرام جدا جدا ۽ وڏا وڏا ڪتاب لکيا آهن جن جو قادياني ۽ يهودي ڪو به جواب ڏيئي نه سگهيا آهن، ۽ نه ڏئي سگهندا، مون مسڪين جي لائبريري (ڪتب خانه) ۾ به الحمد لله ڪيترا ڪتاب خاص

(١) تفسير نعيمي ص٥٦٩ ج٣ (٢) تفسير ابن ڪثير ص١٣٢- ١٣٣ ج٤

ان موضوع تي عربي ۽ اردو ٻوليءَ وغيره ۾ آهن. پر هتي صرف هڪ هيءَ ڳالهه ذهن نشين ڪجي جنهن تي غور واري نظر ڪرڻ سان جيڪڏهن ڪنهن کي عقل جو ذرو به هوندو ته ان عقيدي ۾ ڪو شڪ يا شبهو نه ڪندو. اهو هيءُ آهي ته : سورة آل عمران جي پارهين رڪوع ۾ الله تعالىٰ حضرت آدم، حضرت نوح، آل ابراهيم، آل عمران ۽ اڳين نبين سڀني عليهم الصلواة والسلام جو مختصر ذڪر هڪ آيت ۾ ڪيو ان کان پوءِ تقريبًا ٣ ٽن رڪوعن ۽ ٻاويهن آيتن ۾ حضرت عيسىٰ عليه السلام ۽ ان جي خاندان جو ايتري تفصيل ۽ تشريح سان ذڪر ڪيو ويو آهي جو خاتم الانبياءِ حضور سرور ڪائنات عليه الصلواة والسلام جن جي ذات جنهن تي هيءُ قرآن ڪريم نازل ٿيو آهي انهنجو به ائين تفصيل سان ذڪر نه آيو آهي. حضرت عيسىٰ عليه السلام جي نانيءَ جو ذڪر، ان جي ٻاس ٻاسڻ جو ذڪر، حضرت عيسىٰ جي والده جي ڄمڻ جو ذڪر، ان جي نالي مبارڪ جو ذڪر، ان جي تربيت جو ذڪر، ان جي لاءِ محراب ۾ اڻ مدائتن ۽ بغير حساب جي ميون جي اچڻ جو ذڪر، حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي والده جي پيٽ ۾ پهچڻ جو ذڪر، ولادت جو مفصل احوال، سندس ولادت کان پوءِ سندس والده کي کارائڻ لاءِ ڪجيءَ جي ٿڙ مان کجور جي ملڻ ۽ پاڻيءَ جي چشمي نڪرڻ جو ذڪر- پنهنجي خاندان ۾ بيبي صاحبه جو ٻچي کي کڻي اچڻ ۽ انهن طرفان طعنن ۽ مهڻن جي ملڻ جو ذڪر، ڄسنديئي حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي معجزانه طور ڳالهائڻ جو ذڪر، وڏو ٿي قوم کي توحيد جي دعوت ڏيڻ جو ذڪر، انهن جي مخالفت ڪرڻ ۽ حوارين جي مدد ڪرڻ، يهودين جي حملي کان بچائي زنده آسمان تي کڻڻ وغيره جو ذڪر، ان کان پوءِ متواتر حديثن ۾ سندس مزيد صفات، شڪل مبارڪ، صورت سڳوريءَ، هيئت، لباس وغيره جو پوري تفصيل سان ذڪر. هي اهڙيون حالتون آهن جو سڄي قرآن پاڪ ۾ ڪنهن به نبي ۽ رسول عليه الصلواة والسلام جو احوال اهڙي تفصيل سان نه بيان ڪيو ويو آهي. اهي ڳالهيون هر انسان کي غور ۽ فڪر جي دعوت ٿيون ڏين ته ائين ڇو ۽ ڇا جي ڪري ؟

مگر سوچڻ، سمجهڻ ۽ غور ڪرڻ سان واضح ٿئي ٿو ته حضرت خاتم الانبياءِ صلى الله عليه وسلم جن جڏهن ته آخري نبي ۽ رسول آهن ڪائنات پوءِ ٻيو ڪو به ۽ ڪنهن به قسم جو نبي اچڻ وارو نه آهي، ان جي ڪري پاڻ پنهنجي تعليمات ۾ ان جو وڏو اهتمام ڪرڻ فرمايائون ته قيامت تائين جيڪي جيڪي مرحلا امت کي پيش

اچڻا آهن انهن جي باري ۾ هدايتون ڏئي ڇڏيائون. ان جي هڪ طرف تہ پاڻ ان جو اهتمام ڪيائون تہ سندن ڪان پوءِ اتباع جا لائق ڪير هوندا. انهن جون اصولي طور تي صفتون بہ بيان ڪيائون، ڪيترن جا نالا بہ ٻڌايائون تہ هنن جي اتباع ڪجو، ۽ انهن جي مقابلي ۾ اهي گمراه ماڻهو بہ بيان ڪيائون جن ڪان امت جي دين ڪي خطرو هو، انهن گمراهن مان وڏو دجال آهي، جنهن جو فتنو وڏو سخت گمراهہ ڪندڙ هوندو. ان جون بہ اهڙيون صفتون حالات ۽ علامتون بيان ڪيائون جو ان جي اچڻ وقت مسلم امت کي ان جي گمراهہ هجڻ ۾ ڪو بہ شڪ ۽ شبهو نہ رهي. بعد ۾ اچڻ وارن ڀلارن ۾ سڀني کان وڏو حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام آهي، جنهن کي الله تعالىٰ نبوت ۽ رسالت سان نوازيو آهي ۽ دجال جي فتني وقت محمدي امت جي امداد لاءِ ان کي آسمان کان لاٿو ويندو جيڪو زنده آهي ۽ لهي اچي دجال کي ختم ڪندو. ضرورت هئي تہ ان جي صفتن ۽ حالات کي بہ اهڙو کليل بيان ڪيو وڃي جو سندس نزول کان پوءِ سندس سڃاڻڻ ۾ ڪنهن کي بہ شڪ ۽ شبهي جي گنجائش نہ رهي ۽ ان ۾ ٻيون بہ ڪيتريون مصلحتون ۽ حڪمتون آهن ١- هڪ تہ جيڪڏهن امت کي ان جي سڃاڻڻ ۾ مشڪل پيش آيو تہ ان جي نزول جو مقصد حاصل نہ ٿيندو. جيڪڏهن امت مسلمہ ان سان ساٿ نہ ڏيندي تہ اهو سندن مدد ڪيئن ڪندو ٢- ٻيو تہ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن جيتوڻيڪ ان وقت نبوت ۽ رسالت جي فرائض ادا ڪرڻ لاءِ مامور نہ هوندا ،بلڪ محمدي امت جي قيادت ۽ اڳواڻيءَ جي لاءِ رسول الله ﷺ جن جي خليفي جي حيثيت سان تشريف فرما ٿيندا پر ذاتي طور جيڪو نبوت ۽ رسالت جو منصب کين حاصل آهي ان کان معزول ۽ لٿل بہ نہ هوندا ،بلڪ انهن جو مثال ائين هوندو جيئن هڪ صوبي جي گورنر کي جيڪو پنهنجي صوبي جي گورنريءَ تي بہ برقرار هجي ضرورت وقت ٻئي صوبي ۾ ڪم ڪرڻ جي لاءِ موڪليو وڃي. خلاصو ڳالهہ جو تہ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام ۾ ان وقت بہ نبوت ۽ رسالت جون صفتون موجود هونديون ۽ جيئن اڳ ۾ ان جي نبوت جو انڪار ڪفر هو پوءِ بہ ڪفر هوندو. محمدي امت جيڪا پهريائين ان جي نبوت جو اقرار ڪري ٿي جيڪڏهن قيامت جي قريب نزول جي وقت ان کي نہ سڃاڻي انڪار ڪري تہ ڪافر ٿي پوي. ان جي ڪري ان جون علامتون ۽ صفتون واضح ڪرڻ جي زياده ضرورت هئي. ٣ٽيون تہ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي نزول جو واقعو تہ آخر زماني ۾ پيش ايندو پر جيڪڏهن ان جون

نشانيون ۽ صفتون مبهم ۽ روشن نہ هجن ها تہ ممکن هو جو ڀيو کو ماڻهو دعويٰ ڪري ويهي ها تہ مان مسيح بن مريم آهيان.پر هاڻي انهن نشانين جي ذريعي انهن ڪوڙن مدعين جي ترديد ڪري سگهجي ٿي جيئن هندستان ۾ مرزا قادياني؏ عليه اللعنة دعويٰ ڪئي تہ مان وعدو ڪيل مسيح آهيان مگر مسلم امت جي برک ۽ قرآن حديث جي ماهر عالمن انهن صفتن ۽ نشانين نہ ملڻ جي ڪري سندس دعويٰ ڪي رد ڪيو ۽ سندس ڪتابن جا رد لکيا ۽ دنياڪي واضح ڪري ٻڌايو تہ هي؏ ڪوڙو، مڪار، دجال،مرتد ۽ ڪافر آهي. الغرض تہ قرآن ڪريم جي هن مقام ۽ ٻين جاين تي ايتري تفصيل سان ذڪر ڪرڻ حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جي آخري زماني ۾ نازل ٿيڻ جو دليل آهي. جيڪو متواتر طريقن سان احاديث ۾ بہ آيل آهي ان موضوع تي علامه سيوطي؏ جو ڪتاب "نزول عيسيٰ بن مريم آخر الزمان" ڏسڻ جهڙو آهي، ڄاڻڻ گهرجي تہ حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام اسان جي نبي ڪريم صلي الله عليه وسلم جن جي شريعت تي عمل ڪرائيندو جيئن علامہ سيوطي عليه الرحمة لکيو آهي تہ انه يحكم في هذه الامة بشرع نبينا لابشرعه هو وقد نص علىٰ ذالك العلماء، ووردت به الاحاديث واتفق عليه الاجماع (١) يعني حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام هن امت ۾ اسان جي نبي عليه الصلواة والسلام جي شريعت مطابق حڪم ڪندو،پنهنجي؏ شريعت تي نہ ڪندو. ان ڳالهہ تي علماء جو اتفاق آهي ۽ ان موضوع تي حديثون بہ وارد آهن ۽ ان تي امت جو بہ اجماع آهي.هن حقيقت ڪي بيان ڪرڻ لاءِ حضور ﷺ جن جون متواتر حديثون آهن جن مان ڪجهہ هتي لکجن ٿيون.

## حديث ١

احمد، بزار ۽ طبراني، حضرت ثمره جي روايت سان حضور ﷺ جن کان آندو آهي ڀاڻ فرمايائون تہ "يَنْزِلُ عِيْسَىٰ ابْنُ مَرْيَمَ مُصَدِّقًا بِمُحَمَّدٍ عَلىٰ مِلَّتِهٖ فَيَقْتُلُ الدَّجَّالَ ثُمَّ اِنَّمَا هُوَ قِيَامُ السَّاعَةِ" يعني عيسيٰ بن مريم محمد (ﷺ) جن جي سندن ملت تي تصديق ڪندڙ ٿي لهندو پوءِ دجال ڪي قتل ڪندو ان کان پوءِ قيامت قائم ٿيندي.

## حديث ٢

طبراني؏ ڪبير ۾؏ بيهقي ڪتاب البعث ۾ جيد سند سان حضرت عبدالله بن معقل رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليه

(١) نزول عيسيٰ بن مريم ص٢٢

وسلم جن فرمايو "يَلْبَثُ الدَّجَالُ مَاشَاءَاللهُ ثُمَّ يَنْزِلُ عِيسَىٰ ابْنُ مَرْيَمَ مُصَدِّقًا بِمُحَمَّدٍ وَعَلَىٰ مِلَّتِهٖ إِمَامًا مَّهْدِيًّا وَحَكَمًا عَدْلاً فَيَقْتُلُ الدَّجَالَ" يعني جيترو وقت الله گهريو دجال (دنيا تي) رهندو ان کان پوءِ عيسىٰ بن مريم (حضرت) محمد (ﷺ) جن جي سنڌن ملت تي تصديق ڪندڙ امام، هدايت وارو، عادل ۽ حاڪم ٿي لهندو پوءِ دجال کي قتل ڪندو.

## حديث٣

ابن عساڪر حضرت ابوهريرة رضي الله عنه کان روايت آندي آهي تہ: "يهبط عيسىٰ ابن مريم فيصلي الصلوات ويجمع الجمع" يعني عيسىٰ ابن مريم لهندو پوءِ نمازون پڙهائيندو ۽ جمعن جون نمازون قائم ڪندو، هن روايت کي ذڪر ڪري علامہ سيوطيءَ عليه الرحمة لکيو آهي تہ: فهذا صريح من انه ينزل بشرعنا فان مجموع الصلوات الخمس وصلواة الجمة لم يکونوا في غير هذه الامة (١) يعني هيءَ روايت صراحت سان ٻڌائي ٿي تہ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام اسان جي (حبيب صلي الله عليه وسلم) جن جي شريعت سان هلندو ڇو تہ جماعت سان نمازون ۽ جمعي جي نماز هن امت کان سواءِ ٻين امتن ۾ نہ هيون.

## حديث ۴

ابن عساڪر حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي تہ رسول الله ﷺ جن فرمايو تہ "كَيْفَ تَهْلِكُ أُمَّةٌ أَنَا فِيْ أَوَّلِهَا وَعِيْسَىٰ ابْنُ مَرْيَمَ فِي آخِرِهَا وَالْمَهْدِيُّ مِنْ أَهْلِ بَيْتِيْ فِيْ وَسْطِهَا (٢) يعني اها امت ڪيئن هلاڪ ٿيندي جنهن جي اول ۾ مان آهيان ۽ آخر ۾ عيسىٰ ابن مريم ۽ وچ ۾ مهدي آهي جيڪو منهنجي اهل بيت مان هوندو.

فَاَمَّاالَّذِيْنَ كَفَرُوْ الاية :- هنن آيتن ۾ مسلمانن ۽ ڪافرن جي لاءِ فيصلو ٻڌايو ويو آهي تہ ڪافرن کي دنيا ۾ بہ سخت سزا ڏيندا سون، جو انهن تي جزيه مقرر ڪنداسين ۽ ڪين مسلمانن جي هٿان شڪست ڏيندي،دنيا ۾ ذليل ۽ خوار رکنداسين ۽ آخرت ۾ جهنم ۾ وجهي جلائيندا سين ۽ انهن لاءِ ڪو بہ ۽ ڪنهن قسم جو بہ مددگار نہ هوندو جو انهن کي پنهنجي سفارش ۽مال ملڪيت جي ذريعي اسان جي عذاب کان بچائي سگهي.

" وَاَمَّاالَّذِيْنَ آمَنُوْا" الاٰية ۽ ٻر جن ايمان آندو يعني جيڪي مؤمن پنهنجي

(١) نزول عيسيٰ ابن مريم ص٢٦ (٢) نزول عيسيٰ ابن مريم ص٢٦

طاقت آهر نيڪيون ڪن ٿا، الله تعالىٰ انهن کي انهن جو پورو اجر عطا ڪندو ۽ انهن لاءِ ڪنهن به قسم جي گهٽتائي نه ڪئي ويندي، "وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الظّٰلِمِيْنَ" الله ظالمن سان محبت نه رکندو آهي. ظالمن کي دنيا ۾ ڊر ملندي آهي پر آهستي آهستي انهن کي سخت سزا ڏني ويندي آهي "ذٰلِكَ نَتْلُوْهُ عَلَيْكَ مِنَ الْاٰيٰتِ وَالذِّكْرِ الْحَكِيْمِ" هتي "آيات" مان مراد قرآن پاڪ جون آيتون آهن يا حضور ﷺ جن جي نبوت جون نشانيون ۽ معجزا. ۽ ذڪر مان مراد قرآن ڪريم آهي ۽ حڪيم يا حڪم بمعنىٰ مضبوطيءَ مان ورتل آهي يا حڪمت مان. مقصد هيءُ آهي ته اهي مضبوط واقعا ۽ حڪمت واري قرآن جون آيتون اوهان کي اسين ٿا پڙهي ٻڌايون. اوهان نه ڪنهن ٻئي وٽ پڙهيا آهيو نه ڪنهن کان ٻڌيون اٿوَ. اهي اوهان جي نبوت جو دليل آهن ۽ ڪن جو چوڻ آهي ته هتي ذڪر مان مراد لوح محفوظ آهي جنهن مان الله تعالىٰ جا سڀ ڪتاب لاٿا ويا. هي قصا به اتاهين لاهي بيان ڪيا ويا آهن(١) ۽ ڪن فرمايو آهي ته: حڪيم حاڪم جي معنىٰ ۾ آهي جيڪو مبالغي جي صيغي سان ذڪر ڪيو ويو آهي. (٢)

اِنَّ مَثَلَ عِيْسٰى عِنْدَ اللّٰهِ كَمَثَلِ اٰدَمَ ؕ خَلَقَهٗ مِنْ تُرَابٍ ثُمَّ

بيشڪ مثال عيسىٰ جو الله وٽ مثال آدم (عليه السلام) جي آهي. پيدا ڪيائين ان کي مٽيءَ مان ان کان پوءِ

قَالَ لَهٗ كُنْ فَيَكُوْنُ ﴿۵۹﴾ اَلْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ فَلَا تَكُنْ مِّنَ

فرمايائين ان کي ٿيءُ ته پوءِ ٿي پيو. (هيءُ) حق آهي (اي ٻڌندڙ) تنهنجي رب جي طرفان پوءِ نه هج .

الْمُمْتَرِيْنَ ﴿۶۰﴾

شڪ ڪندڙن مان .

## تفسير

عيسائي حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي پيءُ کان سواءِ پيدا ٿيڻ کي سندس الله يا الله جي پٽ هجڻ جو دليل بنائيندا هئا. قرآن ڪريم انهن جي واضح ترديد ڪندي ٻڌايو ته جيڪڏهن عيسىٰ عليه السلام جي (معاذالله) خدا هجڻ جو اهوئي دليل آهي ته پوءِ آدم عليه الصلواة والسلام جي متعلق اوهان جو ڪهڙو

(١) البحر المحيط ص٤٧٦ جلد٢ (٢) النهر الماد ص٤٧٦ ج٢

خيال آهي؟ ان جو تہ نہ پيءُ هو نہ ماءُ ، جيڪڏهن اوهين ان ڪي انسان مڃيو ٿا تہ حضرت عيسىٰ عليه السلام کي (معاذالله) خدا يا خدا جو پٽ ڪيئن ٿا ناهيو؟ الله تعاليٰ جي ڪامل قدرت جي اڳيان آدم ۽ عيسىٰ عليهما السلام جي پيدائش برابر آهي. جيئن اها سندس قدرت جي جلوه گري هئي تيئن هيءُ بہ ان جي مشيت جي ڪرشمہ سازي آهي. جي الله تعاليٰ کي پنهنجو رب مڃڻ تي شڪر گذار آهن. عيسائين ۾ بہ ڪيترا اهڙا فرقا ٿي گذريا آهن، جيڪي حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام کي الله جل شانه جو ٻانهو يقين ڪندا هئا ۽ ان کي خدا ۽ يا خدا جو پٽ نہ سمجهندا هئا.

حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي حقيقت يهودين جي افتراء بازين،بهتان تراشين، ۽ نصارن جي مبالغه آرائين ۾ گم ٿي ويئي هئي. قرآن پاڪ اهي سڀ پردا هٽائي ان ۽ ان جي والده ماجده جي پاڪدامني، پاڪيزگي، ان جي عجيب۽ غريب پيدائش، ان جا حيران ڪندڙ معجزا بہ بيان ڪيا ۽ ان جو ٻانهو هجڻ بہ ثابت ڪيو ۽ ان تي تصديق جي مهر هڻندي فرمايو "اَلْحَقُّ مِنْ رَّبِّکَ" هيءُ اها سچي حقيقت آهي جيڪا الله تعاليٰ بيان فرمائي آهي. ان ۾ شڪ ۽ شبهي جي قطعًا ڪا بہ گنجائش نہ آهي" فَلَا تَكُنْ مِّنَ الْمُمْتَرِيْنَ" ۾ خطاب يا تہ هر پڙهندڙ، ٻڌندڙ سان آهي، يا خطاب تہ حضور ﷺ جن سان آهي. پر ان مان مراد سندن امت آهي، ڇو تہ سندن ذات عالي صفات تہ هر شڪ ۽ شبهي ڪرڻ کان پاڪ آهي.جيئن علامہ محمد بن احمد الانصاري عليه الرحمه لکيو آهي تہ" الخطاب للنبي صلى الله عليه وآله وسلم والمراد امته لانه صلي الله عليه وآله وسلم لم يكن شاكا في امر عيسىٰ عليه الصلواة والسلام (١)

## هن آيت مان هي فائدا حاصل ٿيا

## فائدو ١

تہ حضرت عيسىٰ عليہ الصلواة والسلام جي خلقت ۾ حضرت بيبي مريم رضي الله تعاليٰ عنها جو نطفو بہ شامل نہ آهي ڇو تہ پاڻ جبرئيل عليه الصلواة والسلام جي ڦوڪ سان پيدا ٿيو هو،ان جي ڪري ڪيس آدم عليه الصلواة والسلام سان تشبيهہ ڏني ويئي آهي، جيئن ان جي پيدائش "ڪن" جي امر سان ٿي هئي تيئن حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي. الله تعاليٰ جو فرمان آهي تہ "وَنَفَخْنَا فِيْهِ مِنْ رُّوْحِنَا" (۽ ڦوڪيوسون ان ۾ پنهنجو روح) فرق صرف ايترو آهي تہ آدم عليه الصلواة والسلام جي پيدائش ۾ ڪو واسطو نہ هو ۽ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي

(١) تفسير القرطبى ص١٠٣ جلد ٤

پيدائش ۾ حضرت بيبي مريم رضي الله تعالىٰ عنها واسطو هئي. ان ڪري ابن مريم صرف ان جي ڪري ٿا چون جو پاڻ سائڻ جي پاڪ پيٽ مان ٻاهر آيو هو.

## فائدو ٢

"اِنَّ مَثَلَ عِيسٰى عِنْدَاللهِ كَمَثَلِ آدَمَ "الخ آيت مان ثابت ٿيو ته قياس به شرعي حجت آهي ڇوته الله تعالىٰ فرمايو ته عيسىٰ عليه السلام جي پيدائش ائين آهي جيئن آدم عليه السلام جي. يعني جيئن الله تعالىٰ آدم عليه الصلواة والسلام کي ماءُ پيءُ کان سواءِ پيدا ڪيو تيئن عيسىٰ عليه الصلواة والسلام کي به پيءُ کان سواءِ وجود ڏنائين. هتي عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي پيدائش کي حضرت آدم عليه الصلواة والسلام جي پيدائش سان تمثيل ڏيڻ ۾ قياس جي لاءِ اشارو آهي (١)

فَمَنْ حَآجَّكَ فِيهِ مِنْ بَعْدِ مَا جَآءَكَ مِنَ الْعِلْمِ فَقُلْ تَعَالَوْا

پوءِ جيڪو جهيڙو ڪري توسان ان (باري) ۾ ان کان پوءِ جو آيو تو وٽ (يقيني) علم پوءِ فرماءِ ته

نَدْعُ اَبْنَآءَنَا وَاَبْنَآءَكُمْ وَنِسَآءَنَا وَنِسَآءَكُمْ وَاَنْفُسَنَا

اچو ته سڏيون پنهنجن پٽن ۽ اوهان جي پٽن کي ۽ پنهنجن زالن ۽ اوهان جي زالن کي ۽ پنهنجي سرن

وَاَنْفُسَكُمْ ۚ ثُمَّ نَبْتَهِلْ فَنَجْعَلْ لَّعْنَةَ اللهِ عَلَى الْكٰذِبِيْنَ ۝٦١

۽ اوهان جي سرن کي. ان کان پوءِ عاجزيءَ سان عرض ڪيون پوءِ موڪليون الله جي لعنت ڪوڙن تي.

اِنَّ هٰذَا لَهُوَ الْقَصَصُ الْحَقُّ ۚ وَمَا مِنْ اِلٰهٍ اِلَّا اللهُ ۚ وَاِنَّ اللهَ لَهُوَ

بيشڪ هيءُ البته اهو قصو سچو آهي ۽ نه آهي ڪو عبادت جو لائق سواءِ هڪ الله جيءَ بيشڪ الله،

الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ۝٦٢ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّ اللهَ عَلِيْمٌۢ بِالْمُفْسِدِيْنَ ۝٦٣

غالب حڪمت وارو آهي. پوءِ جيڪڏهن ڦرن پوءِ بيشڪ الله ڄاڻندڙ آهي فساد ڪندڙن کي.

## تفسير

مٿي ذڪر ڪيل بني نجران جي وفد کي جڏهن قرآن ڪريم سيني

(١) مظهري ص٥٨ ج٢

شڪوڪ ۽ شبهات جو تحقيقي جواب ڏنو ۽ اهڙا واضح ۽ روشن دليل پيش ڪيا جن ڪان پوءِ ڪنهن بہ حق جي طالب لاءِ انڪار جي گنجائش نہ رهي تہ انهن وري بہ نہ توحيد جي عقيدي جي دعوت قبول ڪئي ۽ نہ پنهنجي تثليث (ٽن خدا مڃڻ) واري عقيدي ڪان هٽيا. انهن معاندن ۽ سرڪشن تي حجت قائم ڪرڻ جي لاءِ اللہ تعالىٰ پنهنجي رسول مقبول صلي الله عليه وآله وسلم جن کي انهن سان مباهلي ڪرڻ جو حڪم ڏنو.

## "مباهلي جي معنىٰ"

ثم نبتهل الابتهال ڪان ورتل آهي، معنىٰ دعا ۾ مبالغو ڪرڻ ۽ اصل ۾ ابتهال لعنت ڪرڻ کي چيو ويندو آهي(١) ۽ اصطلاح ۾ ان جي تعريف هيءَ آهي تہ جيڪڏهن ٻن مذهبي ٽولن ۾ ڪنهن ڳالهہ جي حق ۽ باطل هجڻ تي جهيڙو ٿي پوي جيڪو دليلن سان ختم نہ ٿئي تہ پوءِ انهن کي هيءُ طريقو اختيار ڪرڻ گهرجي جو سيئي گڏجي الله تعالىٰ ڪان دعا گهرن تہ يااللہ! هن امر ۾ جيڪو باطل تي هجي ان تي تنهنجي لعنت ۽ قهر نازل ٿئي. پوءِ جيڪي ڪوڙا هوندا اهي ان جي سزا ڀوڳيندا ۽ ان ئي وقت سچي ۽ ڪوڙي جي چڱيءَ طرح تعيين ۽ مقررائي ٿي ويندي. انهيءَ دعا ڪرڻ کي مباهلو سڏيندا آهن. ڄاڻڻ گهرجي تہ الله تعالىٰ جڏهن هيءَ آيت نازل ڪئي تہ پياري حبيب ڪريم صلي الله عليه وسلم جن نجران جي نصارن کي مباهلي ڪرڻ جي لاءِ سڏيو. مسلم شريف ۾ حضرت سعد بن ابي وقاص رضي الله تعالىٰ عنه ڪان روايت آهي تہ: جڏهن هيءَ آيت (تَعَالَوْا نَدْعُ اَبْنَآءَنَا وَاَبْنَآءَكُمْ) نازل ٿي تہ رسول الله ﷺ جن علي، فاطمہ، حسن، حسين رضي الله تعالىٰ عنهم، کي سڏي هيءَ دعا گهري، "اَللّٰهُمَّ هٰٓؤُلَآءِ اَهْلِيْ" (٢) اي الله! هي منهنجو اهل آهن ۽ پاڻ جڏهن اهل ڪتاب کي هيءَ آيت پڙهي ٻڌايائون تہ انهن ٽن ڏينهن جي مهلت گهري تہ اسين ان معاملي ۾ غور ڪريون حضور ﷺ جن سندن اهو عرض منظور ڪيو تہ اهي پاڻ ۾ گڏجي صلاح، مشورو ڪرڻ لاءِ وينا ۽ انهن مان جنهن جو نالو عاقب هو ان عبدالمسيح ڪان پڇيو تہ هن ڳالهہ جي باري ۾ تنهن جو خيال ڇا آهي؟ ان چيو تہ: عيسائيو! اوهان ڄاڻو ٿا تہ حضرت محمد صلي الله عليه وسلم، جن الله جا سچا رسول آهن جيڪڏهن اوهان انهن سان مباهلو ڪندؤ تہ سڀ هلاڪ ٿي ويندؤ. جيڪڏهن پاڻ کي ۽ پنهنجي دين کي بچائڻو اٿوَ تہ

(١) زاد المسير ص٣٩٩ جلد١ (٢) زاد المسير ص٣٩٩ جلد١

واپس گهر موٽي هلو مباهلو نہ ڪيو. هيءُ اهوئي نبي تہ آهي جنهن جو ذڪر توراة ۾ لکيل آهي هيءُ پاڻ ۾ اها صلاح ڪري مقرر وقت تي حضور ﷺ جن جي خدمت ۾ حاضر ٿيا ۽ هوڏانهن حضور ﷺ جن پنهنجي هنج مبارڪ ۾ حضرت حسين، هٿ مبارڪ ۾ حضرت حسن ۽ حضرت فاطمہ ۽ حضرت علي کي پنهنجي پويان وٺي آيا. مشهور روايتن ۾ اهو ذڪر آهي مگر علامہ آلوسيءَ، علامہ شوڪانيءَ ۽ علامہ سيوطيءَ ابن عساڪر کان حضرت امام جعفر صادق رضي الله تعاليٰ عنه جي روايت آندي آهي تہ جڏهن مٿين آيت نازل ٿي هئي تہ حضور صلي الله عليه وسلم جن حضرت ابوبڪر ۽ ان جي اولاد، حضرت عمر ۽ ان جي اولاد، حضرت عثمان ۽ ان جي اولاد ،حضرت علي ۽ ان جي اولاد رضي الله عنهم کي وٺي ميدان ۾ آيا (١) ۽ پاڻ سان گڏ آيلن کي فرمايائون تہ: جيڪڏهن مان دعا گهران تہ اوهان آمين چئجو، نجران جي نصارن جي اڳواڻ جڏهن حضور ﷺ جن ۽ ساٿن آيل هستين کي ڏٺو تہ چوڻ لڳو يا معشر النصاريٰ اني لاريٰ وجوها لو سئلوا الله ان يزيل جبلا من مكانه لازاله (٢) يعني اي نصارن جي جماعت! مان اهڙا تہ (سهڻا ) منهن ڏسي رهيو آهيان جو جيڪڏهن الله کان سوال ڪن تہ "جبل کي پنهنجيءَ جاءِ تان هٽاءِ تہ انهن جي دعا سان هٽائي ڇڏيندو.

پوءِ گڏجي حضور ﷺ جن کي عرض ڪيائون تہ يا ابالقاسم! اسين مباهلو ڪو نہ ٿا ڪيون اوهان پنهنجي دين تي رهو، اسين پنهنجي دين تي حضور صلي الله عليه وسلم جن فرمايو تہ" جيڪڏهن مباهلو نہ ٿا ڪيو تہ مسلمان ٿيو ۽ مسلمان ٿيڻ کان پوءِ اوهان جا بہ مسلمانن وارا حقوق رهندا" تہ بہ انڪار ڪيائون، حضور ﷺ جن ڪين فرمايو تہ (جيڪڏهن اجان بہ مسلمان نہ ٿا ٿيو تہ) "پوءِ اوهان سان جنگ ڪنداسون" عرض ڪرڻ لڳا تہ اسان کي عربن سان جنگ ڪرڻ جي طاقت نہ آهي، ها جيڪڏهن اسان سان نہ لڙائي ڪندؤ، نہ ڊپ ڏيندؤ ۽ نہ اسان کي پنهنجي دين کان هٽائيندؤ تہ اوهان سان اهو وعدو ٿا ڪيون جو اوهان کي هر سال ٻہ هزار وڳا هڪ هزار رجب مهيني ۾ ۽ هڪ هزار صفر مهيني ۾ ۽ ٽيهہ (٣٠) زرهون عادي لوهہ جون ڏيندا رهنداسون، پوءِ پاڻ ﷺ انهن سان صلح ڪندي فرمايائون تہ"ان ذات جو قسم آهي جنهن جي هٿ ۾ منهنجو ساهہ آهي تہ نجران وارن کي هلاڪت ويجهي اچي چڪي هئي

---

(١) تفسير روح المعاني ص١٩٠ جلد١ جزء٣ المنار ص٣٢٢ جلد٣ وتفسير فتح القدير ص٣٤٨ جلد١ الدرالمنثور ص٢٣٣ جلد٢
(٢) تفسير ابوالسعود ص٤٦ جلد٢

۽ جيڪڏهن مباهلو ڪن ها تہ پاڻ پولا ۽ مرون ٿي وڃن ها ۽ سندن رهڻ واري وادي ڀري وڃي ها ۽ سندن وڻن تي ويٺل پکي بہ مري وڃن ها ۽هڪ سال ۾ پاڻ بہ سڀ هلاڪ ٿي وڃن ها. (١)

## سوال

اوهان سني چوندا آهيو تہ حضور ﷺ جن جون نياڻيون چار هيون جيڪڏهن واقعي چار هيون تہ باقي ٽي نياڻيون مباهلي لاءِ ڇو نہ آنديون ويون؟

## جواب

اهو سوال تاريخ جو علم نہ ڄاڻڻ وارا ڪندا آهن حقيقت هيءَ آهي تہ حضور ﷺ جن جون نياڻيون چار هيون مگر مباهلي لاءِ صرف هڪڙيءَ جو نڪرڻ ان جي ڪري هوجو ٽي نياڻيون ان کان اڳ ۾ وفات ڪري ويون هيون. رقيہ سائڻ سن٢ هجريءَ ۾ ۽ زينب سائڻ سن (٨) هجريءَ ۾ ۽ ام ڪلثوم سن٩ هجريءَ ۾ - ۽ مباهلي وارو واقعو سن ١٠ هجريءَ ۾ پيش ٿيو هو جڏهن موجود ئي نہ هيون تہ ڪٿان اچن. (٢)

هن آيت ۾ لفظ "اَبۡنَآءَنَا" مان ثابت ٿيو تہ حسن ۽ حسين حضور ﷺ جن جا ڄڻ پٽ آهن. جيئن هڪ روايت ۾ حضرت امام حسن عليه السلام جي لاءِ آيو آهي "اِنَّ ابۡنِيۡ هٰذَا سَيِّدٌ" بيشڪ منهنجو هيءُ پٽ سردار آهي. اهو ٻين کان سواءِ حضرت حسن ۽ حضرت حسين رضي الله عنهما سان مخصوص آهي ۽ حضور ﷺ جن جو نسب نفع ڏيندڙ آهي جيئن حضور ﷺ جن جو فرمان آهي تہ "كُلُّ سَبَبٍ وَنَسَبٍ يَنۡقَطِعُ يَوۡمَ الۡقِيَامَةِ اِلَّا نَسَبِيۡ وَسَبَبِيۡ (٣) منهنجي نسب ۽ سبب کان سواءِ سڀ واسطا ۽ نسب قيامت جي ڏينهن ڪٽجي ويندا. "اَبۡنَآءَنَا" مان مراد حسنين ڪريمين ۽ حضرت علي ڪرم الله وجهه آهي ڇو تہ عرف ۾ نياڻين جي مڙسن کي بہ پٽ سڏيو ويندو آهي.

"وَنِسَآءَنَا" مان مراد سيده خاتون جنت هئي، نساءَ عام عورت لاءِ ايندو آهي نياڻين لاءِ بہ اچي ٿو تہ گهر وارين لاءِ بہ- صرف گهروارين جي لاءِ ازواج جو لفظ ايندو آهي.

"وَاَنۡفُسَنَا" مان مراد حضور ﷺ جن پاڻ آهن.

## سوال

شيعا چون ٿا تہ جڏهن انفسنا مان مراد حضور ﷺ سان گڏ حضرت علي رضي

(١) ابو السعود ص٤٦ جزءُ ٢ (٢) ضياءُ القرآن ص٢٢٨- ٢٢٩ جلد١
(٣) تفسير قرطبي ص١٠٤ -١٠٥ جلد٤

الله تعالىٰ عنه بہ آهي تہ اهو حضور صلى الله عليه وسلم جن جو نفس مساوي ۽ مثل آهي ۽ جيئن حضور ﷺ جن ٻين نبين عليهم الصلواة والسلام جن کان افضل آهن تيئن حضرت علي رضي الله عنه بہ حضور صلى الله عليہ وسلم جن کان سواءِ ٻين نبين کان ٻلو ۽ حضور ﷺ جن جو ثاني ۽ برابر آهي ۽ اهوئي سندن جاءِ نشين ۽ خليفو ٿي سگهيو ٿي، ۽ اهو ان جو حق هو.

# جواب

انفسنا ۾ انفس نفس جو جمع آهي ۽ قرآن ڪريم جي ٻين آيتن ۾ نفس جو لفظ دين ۾ شريڪ ۽ قرابت دار لاءِ آيل آهي. جيئن هنن آيتن ۾ ذڪر ڪيل آهي.

## آيت ١

"تُخْرِجُوْنَ اَنْفُسَكُمْ مِّنْ دِيَارِكُمْ "(١)

## آيت ٢

" وَلَا تَلْمِزُوْٓا اَنْفُسَكُمْ " وَلَا تَنَابَزُوْا بِالْاَلْقَابِ(٢)

## آيت ٣

لَوْلَآ اِذْ سَمِعْتُمُوْهُ ظَنَّ الْمُؤْمِنُوْنَ وَالْمُؤْمِنٰتُ بِاَنْفُسِهِمْ خَيْرًا (٣)

## آيت ٤

"لَقَدْ جَآءَكُمْ رَسُوْلٌ مِّنْ اَنْفُسِكُمْ" (٤) اوهان وٽ رسول اوهان مان آيو آهي. اتي "انفسكم" مان مراد ڇا وٺندؤ؟ ڇا اهي سڀ حضور ﷺ جا ثاني برابر ۽ حضور جهڙا آهن نہ هرگز نہ تہ پوءِ حضرت علي رضي الله تعالىٰ عنه حضور صلي الله عليه وسلم جن جهڙو ڪيئن ٿي سگهندو؟ حضور صلى الله عليه وسلم جن خاتم النبيين، الله جا رسول، صاحب وحي ۽ صاحب ڪتاب آهن، ۽ حضرت علي نہ رسول، نہ نبي، نہ صاحب وحي ۽ نہ صاحب ڪتاب آهي. حضور صلى الله عليه وسلم جن متبوع ۽ حضرت علي تابع، حضور صلي الله عليه وسلم جن نبي، حضرت علي سندن امتي هڪجهڙائيءَ جو تہ سوال ئي نٿو پيدا ٿئي،مٿين دليلن مان ثابت ٿيو تہ حضرت علي رضي الله عنه نہ حضور صلى الله عليه وسلم جن جو ثاني، نہ برابر ۽ نہ انهن جهڙو آهي تہ سندس لاءِ "انفسنا" جي لفظ مان خلافت بلا فصل ڪٿان ثابت ٿيندي؟ حضرت علي "ابناءنا" ۾

(١) سوره البقره آيت ٨٤ (٢) سورة الحجرات آيت ١١
(٣) سورة النور آيت ١٢ (٤) سورة التوبہ آيت ١٢٨

داخل آهي. جنهن مان مراد اولاد ۽ اولاد جو اولاد آهي. خصوصًا حضرت علي رضي الله تعالىٰ عنه جي تہ پرورش بہ حضور ﷺ جن پنهنجن ٻچن وانگر ڪئي هئي: ان ڪي "ابناءنا" مان ڪڍي"انفسنا" ۾ داخل ڪرڻ ۽ان ڪي بلا فصل خلافت جي لاءِ دليل بنائڻ صحيح نہ آهي.

# سوال

هتي "اَنْفُسَنَا" مان مراد صرف حضور صلي الله عليه وسلم جن نہ آهن چو تہ مٿان بيٺو آهي "ندع" - سڏيون ۽ پنهنجو پاڻ ڪي سڏبو نہ آهي ان جي ڪري اتي مراد حضرت علي رضي الله عنه آهي؟.

# جواب

اهو بي علمي ۽ عرب جي لغت کان واقف نہ هجڻ جو دليل آهي، عرب جي ٻوليءَ ۾ پنهنجو پاڻ لاءِ اهڙا لفظ استعمال ٿيل آهن. ابو حيان اندلسيءَ لکيو آهي تہ عرب چوندا آهن" دعوت نفسي الىٰ كذا فلم تجبني"مون پنهنجي نفس کي هن ڳالهہ يا ڪم لاءِ سڏيو پر قبول نہ ڪيائين. (١) پر جيڪڏهن حضرت علي رضي الله عنه کي نفس رسول الله صلى الله عليه وسلم چونڊؤ تہ حسنين ڪريمين وري نفس علي آهن.پوءِ مقصد تہ پيءُ پٽ سڀ بلافصل خلافت جا حقدار هئا۽ اهو قول فاسد آهي تہ مٿين دعوىٰ بہ باطل آهي" تَقْتُلُوْنَ اَنْفُسَكُمْ " ۾ مراد قرابت دار آهن ۽ ان ۾ ويجهي يا پراهين قرابت جو شرط نہ آهي. ان لحاظ سان تہ حضرت ابوبڪر ۽ حضرت عمر رضي الله عنهما بہ رسول الله ﷺ جن جي قرابت ۽ قوم ۾ آهن پوءِ تہ انهن جي خلافت جو بہ انڪار نہ ڪيو،هن جاءِ تي هي فائدا حاصل ٿيا.

# فائدو١

حضور صلى الله عليه وسلم جن مباهلي ۾ زالن ۽ پٽن جو ذڪر ڪري حسنين ڪريمن ۽ٻين کي ان لاءِ تيار ڪيو هو تہ خبر پوي تہ ڪين الله تعالىٰ جو دين زالن، نياڻين،پٽن ۽ مٿن سيني کان وڌيڪ پيارو آهي ۽پاڻ حق تي آهن. تنهنجي ڪري ڪين ڪو بہ ۽ ڪنهن جو بہ خطرو نہ هو،۽ اهو چئلينج سندن نبوت جي صحت جو دليل هو.(٢)

(١) البحر المحيط ص٤٨١ جزءِ ثاني (٢) الخازن ص٢٤٣ جلد١

# فائدو ٢

حضور ﷺ جن جو حسنين كريمين كي وٺي اچڻ ان ڳالهہ جو دليل آهي تہ اهيءَ سنڌن پٽ آهن ۽ انهن كي سڏو سنئون حضور ﷺ جن جو پٽ چوڻ بہ جائز آهي (١)

علامہ ابو البركات نسفيءَ لكيو آهي تہ وانما ضم الابناء والنساء وان كانت المباهله مختصة به وبمن يكاذ به لان ذالک آكد في الدلالة علىٰ ثقته بحاله واستيقانه بصدقه حيث استجرء علىٰ تعريض اعزته وافلاذ كبده. (٢)

# سوال

حضور صلى الله عليه وسلم جن كان پوءِ مباهلو كرڻ جائز آهي يا نہ؟

# جواب

علماء كرام لكيو آهي تہ كنهن اهم مسئلي ۾ مخالف جيكڏهن دليل سان نہ ٿو مڃي تہ مباهلو كرڻ جائز آهي. ابن القيم ائين لكيو آهي حضرت عبدالله بن عباس رضي الله عنهما بہ مخالفن كي مباهلي جي دعوت ڏني هئي. (٣)

قُلْ يَآاَهْلَ الْكِتَابِ تَعَالَوْا اِلىٰ كَلِمَةٍ سَوَآءٍۢ بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ

فرماءِ اي اهل كتاب! اچو اهڙي كلمہ ڏانهن جو برابر آهي اسان ۽ اوهان جي وچ ۾ تہ

اَلَّا نَعْبُدَ اِلَّا اللّٰهَ وَلَا نُشْرِكَ بِهٖ شَيْـًٔا وَّ لَا يَتَّخِذَ بَعْضُنَا بَعْضًا

نہ عبادت كيون مگر الله جي ۽ نہ شريک كيون ان سان كا شيءِ ۽ نہ وٺي بعض اسان جو بعض كي

اَرْبَابًا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ ؕ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَقُوْلُوا اشْهَدُوْا بِاَنَّا مُسْلِمُوْنَ ﴿۶۴﴾

رب كري سواءِ الله جي. پوءِ جيكڏهن منهن مٽين پوءِ چئو تہ شاهدي ڏيو (اي اهل كتاب) تہ بيشک اسان آهيون مسلمان

يٰۤاَهْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تُحَآجُّوْنَ فِيْۤ اِبْرٰهِيْمَ وَمَاۤ اُنْزِلَتِ التَّوْرٰةُ

. اي اهل كتاب ڇو ٿا جهيڙو كيو ابراهيم (جي باري) ۾ حالانک نہ نازل كيو ويو توراة

(١) احكام القران للجصاص ص١٥ جلد٢ (٢) المدارک للنسفي ص١٦١ جلد١
(٣) تفسير القاسمي ص١١٦ جلد٢ وروح المعاني ص١٩٠ جزء٣

وَالۡاِنۡجِيۡلُ اِلَّا مِنۡۢ بَعۡدِهٖ ؕ اَفَلَا تَعۡقِلُوۡنَ ﴿۶۵﴾

۽ انجيل مگر ان کان پوءِ ڇا پوءِ نٿا سمجهو.

## تفسير

حضور پر نور صلي الله عليه وسلم جن جڏهن نجران جي وفد کي فرمايو "اَسۡلِمُوۡا" مسلمان ٿيو تہ چوڻ لڳا "اَسۡلَمۡنَا" اسين اسلام وارا آهيون. بلڪ هر مذهب وارا ڪنهن نہ ڪنهن رنگ ۾ متي وجي اقرار ڪن ٿا تہ وڏو خدا هڪ آهي. هن آيت ۾ بہ انهيءَ بنيادي عقيدي ڏانهن سڏيو ويو آهي جيڪو هڪ ۽ سڀني جي وچ ۾ برابر آهي. قرآن، توراة ۽ انجيل سڀ ان ۾ برابر آهن. پر شرط اهو آهي تہ اڳتي هلي پنهنجي تصرف ۽ تحريف سان ان جي حقيقت نہ مٽائي وجي ۽ ضرورت اها آهي تہ جيئن زبان سان موجد ۽ مسلمان ٿا سڏايو حقيقة ۽ عملا بہ پاڻ کي هڪ الله وحده لاشريڪ له جي سپرد ڪيو نہ ان کان سواءِ ڪنهن جي ٻانهپ ۽ بندگي ڪيو ۽ نہ ان جي خصوصي صفات ۾ ڪنهن کي شريڪ ڪيو ۽ نہ ڪنهن پيغمبر، پير، فقير يا عالم سان اهڙو معاملو رکو جو صرف رب قدير سان رکڻ گهرجي، مثلا ڪنهن کي ان جو پٽ يا پوٽو بنائڻ، يا شرعي نصوص کان نظر ڪٽي محض ڪنهن جي چوڻ تي ڪنهن شيءِ کي حلال يا حرام قرار ڏيڻ، جيئن فرمان آهي "اِتَّخَذُوۡۤا اَحۡبَارَهُمۡ وَرُهۡبَانَهُمۡ اَرۡبَابًا مِّنۡ دُوۡنِ اللّٰهِ" (١) (بنايائون پنهنجن عالمن ۽ پنهنجن راهبن کي رب هڪ الله کان سواءِ) اهي سيئي امور اسلام ۽ توحيد جي دعويٰ جي خلاف ۽ منافي آهن.

"فَقُوۡلُوا اشۡهَدُوۡا بِاَنَّا مُسۡلِمُوۡنَ" پوءِ چئو تہ شاهدي ڏيو هن ڳالهہ جي تہ يقينًا اسين مسلمان آهيون. هنن لفظن ۾ ديني اصول جي تعليم ڏنل آهي تہ حق جي واضح ٿيڻ کان پوءِ بہ جيڪڏهن ڪو نہ مڃي تہ حجت پوري ڪرڻ جي لاءِ پنهنجو مسلڪ بيان ڪري جدا ٿي وڃجي ۽ هيءَ آيت سڀوري اهو بنيادي عقيدو ۽ اساس آهي جيڪو حضور صلي الله عليه وسلم جن دنيا جي بادشاهن هرقل، مقوقس وغيرهما ڏانهن خطن ۾ لکي موڪليو هو. مفسر بيضاويءَ لکيو آهي تہ هن آيت ۾ الله تعالىٰ کهڙو نہ سهڻي نموني سمجهائيندي حجة قائم ڪئي آهي. اول حضرت عيسىٰ عليه

(١) سورة التوبه آيه ٣١

الصلواة والسلام جو احوال ۽ ان تي طاري ٿيندڙ حالتون جيڪي سندس الله هجڻ جي خلاف آهن بيان ڪيون ويون، ان ڪان پوءِ عيسائين جا شڪوڪ ۽ شبها ختم ڪندي ڪين مباهلي لاءِ سڏيو ويو پوءِ جڏهن مباهلو به نه ڪيائون ته وري انهن کي ٻڌايو ويو ته اهڙي ڪلمي ڏي اچو جيڪو سڀني لاءِ برابر آهي. حضرت موسيٰ، حضرت عيسيٰ،انجيل ۽ ٻيا ڪتاب به سيئي اهو بيان ڪندا آيا آهن. آخر ۾ جڏهن ڪا به ڳالهه انهن ڪان نه ٿي سگهي ته حڪم آيو ته انهن ڪان منهن ڦيرائي چئو ته اسين مسلمان آهيون اوهان مڃيو يا نه مڃيو (١) هن آيت مان اهو به واضح ٿيو ته انسانيت هن هلندڙ دور ۾ جيترو مختلف گروهن ۾ ورهائجي ويئي آهي ۽ جنهن جي ڪري دنيا جي وجود جو گلشن جهنم جهڙو بنجي ويو آهي ان جي اتحاد جو حقيقي ۽ مستحڪم بنياد توحيد جو عقيدو آهي جيڪو سڀني حقيقتن ڪان وڌيڪ واضح ۽ روشن ترين حقيقت آهي. محبوب عليه الصلواة والسلام جن به ان پليٽ فارم تي گڏ ٿيڻ لاءِ سڀني کي دعوت ڏني هئي، "وَلَا يَتَّخِذَ بَعْضُنَا بَعْضًا أَرْبَابًا مِّن دُونِ اللَّهِ "(۽ نه بنائين اسان مان هڪڙا ٻين کي رب هڪ الله ڪان سواءِ) هن مان مراد اهي نصاريٰ آهن جيڪي حضرت عيسيٰ ۽ بيبي مريم کي ته (معاذالله) خدا ڪري مڃيندا هئا پر پنهنجي مذهبي اڳواڻن کي به سجدا ڪندا هئا ۽ انهن جي حڪم کي حلال ۽ حرام جو مدار سمجهندا هئا، جيئن ڪمال الدين حسين الواعظ پنهنجي تفسير ۾ لکيو آهي ته: نصاريٰ پنهنجن احبارن کي سجدا ڪري چوندا هئا ته انهن جي گهڻي عبادت ۽ محنت جي ڪري الله انهن ۾ داخل ٿي ويو آهي ۽ يهودي الله تعاليٰ جي ڪتاب توراة جي مقابلي ۾ پنهنجي مذهبي پادرين جي حلال ۽ حرام ڪرڻ کي اهميت ڏيندا هئا. (٢)

## فائدو

هن آيت مان ثابت ٿيو ته ديني مسئلن، عبادتن، حرام حلال ڪرڻ وغيرهم ۾ صرف الله تعاليٰ جي معصوم نبي عليه الصلواة والسلام جو فرمان مڃبو. باقي سياسي يا قضاءِ جي معاملات ۾ انهن موضوعن جي لياقت ۽ استعداد رکڻ وارن جو قول به مڃڻو پوندو. ترمذي شريف ۾ عدي بن حاتم ڪان روايت آهي ته جڏهن هيءَ آيت نازل ٿي ته "مون عرض ڪيو ته مَا كُنَّا نَعْبُدُهُمْ يَا رَسُولَ اللَّهِ! اي الله جا رسول! اسين انهن (عالمن) جي عبادت ته ڪو نه ڪندا هياسين. پاڻ فرمايائون ته "چا ائين نه هو ته

(١) تفسير بيضاوي ڪامل ص٧٦ (٢) تفسير حسيني فارسي ص٩٤

اهي اوهان کي حلال ۽ حرام نه ڏيندا هئا پوءِ اوهان ان ڳالهه کي ونندا هيؤ؟" مون عرض ڪيو ته "هائو" پاڻ فرمايائون ته" اهوئي ته آهي" (١)

# سوال

هن آيت مان ثابت ٿيو ته ڪنهن به امام جي فقه تي نه هلجي ڇو ته اهي نه الله آهن نه الله تعالیٰ جا نبي آهن؟

# جواب

امامن مجتهدن جي فقه تي هلڻ هن آيت مبارڪ ۾ داخل نه آهي ڇو ته انهن جي فقه تي هلڻ جو مقصد اهو نه آهي ته اهو انهن جو حڪم آهي بلڪ انهن قرآن پاڪ ۽ حديثن کي سمجهي انهن مان اهي مسئلا ڪڍيا آهن. ان جي ڪري انهن جي تحقيق تي عمل ڪرڻ حقيقت ۾ قرآن ڪريم ۽ حضور ﷺ جن جي حديثن تي عمل آهي. ها جيڪڏهن انهن مجتهدن جي ڪا ڳالهه قرآن، حديث، اجماع امت جي خلاف آهي ته ان تي عمل نه ڪبو. انهن امامن سڀني جو خود به اهو حڪم آهي.

# فائدو

اهائي آيت آهي جيڪا حضور صلى الله عليه وسلم جن پنهنجي خط ۾ لکرائي حضرت دحية ڪلبيءَ رضی الله تعالیٰ عنه جي هٿان روم جي بادشاهه هرقل ڏانهن موڪلي هئي (٢) اهو خط هنن لفظن سان هو .

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ مِنْ مُحَمَّدٍ عَبْدِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ اِلٰى هِرَقْلَ عَظِيْمِ الرُّوْمِ سَلَامٌ عَلٰى مَنِ اتَّبَعَ الْهُدٰى. اَمَّا بَعْدُ فَاِنِّيْ اَدْعُوْكَ بِدِعَايَةِ الْاِسْلَامِ اَسْلِمْ تَسْلَمْ، يُؤْتِكَ اللّٰهُ اَجْرَكَ مَرَّتَيْنِ فَاِنْ تَوَلَّيْتَ فَاِنَّمَا عَلَيْكَ اِثْمُ الْيَرِيْسِيِّيْنَ "يَا اَهْلَ الْكِتَابِ تَعَالَوْا اِلٰى كَلِمَةٍ سَوَآءٍ بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ اَنْ لَّا نَعْبُدَ اِلَّا اللّٰهَ وَلَا نُشْرِكَ بِهٖ شَيْئًا وَّلَا يَتَّخِذَ بَعْضُنَا بَعْضًا اَرْبَابًا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ (٣)

يعني شروع ڪريان ٿو الله نهايت ئي مهربان، ٻاجهاري جي نالي سان. (هيءُ خط حضرت) محمد (صلی الله تعالیٰ عليه وسلم) الله جي ٻانهي ۽ ان جي رسول جي طرفان روم جي بادشاهه هرقل ڏانهن آهي، سلام ان تي آهي جيڪو هدايت جي

(١) روح المعاني ص١٩٤ جزءِ٣ (٢) البحر المحيط ص٤٨٥ جلد٢
(٣) معارف القرآن ص٨٣ جلد٢

واڻ تي هلي، ان کان پوءِ مان توکي اسلام جي سڏ لاءِ سڏيان ٿو. اسلام قبول ڪر تہ سلامت رهندين. الله توکي تنهنجو اجر ٻہ ڀيرا ڏيندو ۽ جيڪڏهن تو منهن مٽيو تہ توتي انهن هارين جو بہ وبال پوندو جيڪي تنهنجي حڪم هيٺان آهن . اي اهل ڪتاب هڪ اهڙي ڳالهہ تي اچي گڏ ٿيو جيڪا اسان ۽ اوهان جي وچ ۾ برابر آهي. اها هيءَ آهي تہ الله کان سواءِ ڪنهن جي عبادت نہ ڪيون ۽ ان سان ڪنهن بہ شيءِ کي شريڪ نہ بڻايون ۽ نہ ان کان سواءِ هڪ ٻئي کي رب بڻايون. علامه اسماعيل حقيءَ لکيو آهي تہ هرقل جڏهن خط پڙهيو تہ قاصد کان نبي پاڪ صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن جو احوال پڇي چيائين تہ: لَوْ كُنْتُ عِنْدَهٗ لَقَبَّلْتُ قَدَمَهٗ - يعني جيڪڏهن مان وٽن هجان ها تہ سندن قدمن (مبارڪن) کي چميون ڏيان ها. پر رياست ۽ حڪومت جي وڃڻ جي خطره کان ڊڄندي ايمان نہ آندائين.هڳرادب ڪرڻ جي ڪري دنيوي حڪومت ۾ ڪامياب رهيو. (١)

## هن آيت مان هي فائدا حاصل ٿيا.

## فائدو ١

ايماني احڪام سڀني لاءِ برابر آهن،ڪنهن کي ڪا خصوصيت ايمان جي لحاظ کان نہ آهي.

## فائدو ٢

اسلام کان سواءِ ٻئي ڪنهن بہ دين ۾ اهڙي برابري ۽ مساوات نہ آهي جيئن "سَوَآءٍۢ بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ" مان واضح آهي. عيسائين پنهنجي رسول کي معبود ۽ امت کي عابد بڻايو، انهن جي عالمن ۽ راهبن کي حلال ۽ حرام جي حڪمن جو مالڪ سمجهيو ويو جنهن جي لاءِ جيڪي گهرن حلال ڪن ۽ جيڪي گهرن حرام ڪن، بلڪ پادرين کي تہ اهڙا پاور هئا جو عيسائين جي گناهن کي بخش ڪري ڇڏين تہ بہ ممڪن هو. انهن وٽ ڪاري ۽ گوري،ولائتي ۽ ديسيءَ آقا ۽ غلام جو اجا تائين فرق آهي جو انگريزن جي گرجائن ۾ ديسي عيسائين کي عبادت ڪرڻ جو ڪو حق نہ آهي، مرڻ کان پوءِ بہ انهن وٽ فرق آهي، انگريزن جو قبرستان جدا اينگلو انڊين جو قبرستان جدا تہ چوهڙن چمارن جو جدا.

(١)روح البيان ص٤٧ جلد٢

"يَآ اَهْلَ الْكِتَابِ لِمَ تُحَآجُّوْنَ" الايه اي اهل كتاب ڇو ٿا جهيڙو ڪيو ابراهيم (عليه السلام) جي باري ۾ ابن اسحاق ۽ ابن جرير حضرت عبدالله بن عباس رضي الله تعالیٰ عنهما کان روايت آندي آهي تہ نصاریٰ ۽ يهودي رسول الله صلی الله تعالیٰ عليه وسلم جن وٽ گڏ ٿيا ۽ پاڻ ۾ بحث ڪرڻ لڳا، يهودين چيو تہ حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام يهودي هو ۽ نصارن چيو تہ نہ، اهو تہ نصراني هو. پوءِ اللّٰہتعالیٰ اها آيت نازل فرمائي ٻڌايو تہ ذرا ٻئي ڌريون سوچيو تہ سهي يهوديت توراة شريف جي نازل ٿيڻ کان پوءِ وجود ۾آئي ۽ عيسائيت انجيل سڳوري جي نازل ٿيڻ کان پوءِ ظاهر ٿي حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام تہ ٻنهين کان اول گذريو آهي. سندس زمانو حضرت موسیٰ عليه الصلواة والسلام کان هزار سال ۽ عيسیٰ عليه الصلواة والسلام کان ٻي هزار سال پهريان هو (١) پوءِ اهو يهودي يا عيسائي ڪيئن ٿو ٿي سگهي؟ جڏهن توراة ۽ انجيل اڃا نازل ئي نہ ٿيا هئا تہ حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام انهن جي پيروي ڪيئن ڪئي جو يهودي يا نصراني هو؟ پر هو ايترا تہ بيوقوف هئا جو ان سوليءَ ۽ ٿلهيءَ ڳالهہ کي بہ سمجهي نہ ٿي سگهيا. حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام ملت حنيفه تي عامل هو جنهن سان اسلام پوري طرح متفق آهي

**هن آيت مان حاصل ٿيندڙ فائدا**

## فائدو ١

الله تعالیٰ جي پيارن تي لڳايل الزامن جو جواب ڏيڻ ۽ دفاع ڪرڻ قرآن ڪريم جي سنت آهي. يهودين ۽ عيسائين حضرت ابراهيم تي الزام هنيو قرآن ڪريم انهن جو رد ڪيو يهودين حضرت سليمان عليه السلام تي الزام هنيو تہ اهو جادوگر هو، قرآن ڪريم انهن جو رد ڪندي ٻڌايو تہ "وَمَا كَفَرَ سُلَيْمَانُ" (سليمان ڪفر نہ ڪيو هو)

## فائدو ٢

تاريخ جو علم سٺو علم آهي ان جي ڄاڻ سان بہ ڪافي مسئلا حل ٿي ويندا آهن. ڏسو هن آيت ۾ يهودين ۽ عيسائين کي تاريخي لحاظ سان جواب ڏنو ويو تہ حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جو اچڻ تہ توراة ۽ انجيل جي نزول کان اڳ ۾ ٿيو آهي پوءِ اهو انهن جو تابع ڪيئن ٿي سگهندو.

---

(١) روح المعاني ص١٩٤ جزء٣

هَاَنْتُمْ هٰٓؤُلَاۤءِ حَاجَجْتُمْ فِيْمَا لَكُمْ بِهٖ عِلْمٌ فَلِمَ تُحَاۤجُّوْنَ

ٻڌو! اوهان اهي ماڻهو آهيو جو بحث ڪيُو انهن ڳالهين ۾ جو اوهان کي ان جو ڪجهه نه ڪجهه علم آهي. پوءِ ڇو ٿا بحث ڪيو

فِيْمَا لَيْسَ لَكُمْ بِهٖ عِلْمٌ ۭ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ وَاَنْتُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ ۝۶۶ مَا

ان ۾ جو نه آهي اوهان کي ان جو به ڪو علم. ۽ الله ڄاڻي ٿو ۽ اوهان نه ٿا ڄاڻو. نه هو

كَانَ اِبْرٰهِيْمُ يَهُوْدِيًّا وَّلَا نَصْرَانِيًّا وَّلٰكِنْ كَانَ حَنِيْفًا مُّسْلِمًا ۭ

ابراهيم يهودي ۽ نصارو ۽ پر هو حق تي هلندڙ باطل کان منهن مٽيندڙ فرمانبردار

وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۝۶۷ اِنَّ اَوْلَى النَّاسِ بِاِبْرٰهِيْمَ

۽ نه هو مشرڪن مان. بيشڪ وڌيڪ ويجها ماڻهن مان ابراهيم سان

لَلَّذِيْنَ اتَّبَعُوْهُ وَھٰذَا النَّبِىُّ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ۭ وَاللّٰهُ وَلِيُّ

البت اهي آهن جو تابع ٿيا ان جا ۽ هي نبي ۽ جن (هن نبي تي) ايمان آندو ۽ الله مددگار آهي

الْمُؤْمِنِيْنَ ۝۶۸

مؤمنن جو.

## تفسير

هنن آيتن ۾ يهودين ۽ نصارن ٻنهي ڌرين جي دعوائن کي رد ڪندي ٻڌايو ويو آهي ته حق تي رهڻ ۽ هجڻ جو دليل اهو نه آهي ته اوهان انهن الله جي پيارن سان تعلق، وابستگيءَ ۽ پيار جي صرف دعوىٰ ڪيو وڃا هجو پر ان جو دارومدار انهن جي سچيءَ پيرويءَ تي آهي. جنهن به انهن جي پيغام کي سچيءَ دل سان قبول ڪري پوري زندگي ان تي عمل ڪندو رهيو. اهوئي انهن کي ويجهو، انهن جو پيارو ۽ مقرب آهي. حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جي ويجهي هجڻ جو شرف به انهن کي مليو جُن سندس وقت ۾ سندس حڪم مڃي ان تي عمل ڪيو ۽ ٻيو هن نبيءَ مڪرم، محبوب معظم، صلى الله تعالىٰ عليه وسلم ۽ مٿس ايمان آڻڻ وارن کي نصيب ٿيو

آهي. حضور سرور ڪونين صلی الله تعالیٰ عليه وسلم جن پاڻ ابراهيمي دين کي قوت بخشي، نئين حياتي عطا ڪئي ۽ سندن سچن خادمن ۽ غلامن به ابراهيمي مشين کي سر بلند ڪرڻ جي لاءِ هر قرباني ڏني، ڏين ٿا ۽ ڏيندا رهندا. اي يهوديؤ! اي نصرانيو! اوهان جو الله تعالیٰ جي خليل سان ڪهڙو واسطو ۽ تعلق رهيو آهي؟. اوهان ته دنيا جي محبت ۽ اقتدار جي هوس ۾ ايترا قائل آهيو جو حق کي سڃاڻڻ جي باوجود قبول ڪرڻ جي لاءِ تيار نه آهيو. حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام (حنيفا مسلما) حق کي مڃيندڙ ناحق ڪان منهن مٽيندڙ ۽ الله تعالیٰ جي هر فرمان تي هلندڙ هو، نه اهو حضرت عزير عليه السلام کي الله تعالیٰ جو پٽ چوندو هو، نه حضرت عيسیٰ عليه السلام کي ان جو فرزند مڃيندو هو، نه صليب جو پوڄاري ۽ نه عرب جي مشرڪن وانگر پٿرن جي مورتن جي اڳيان سر جهڪائيندڙ هو، ان وٽ جيڪا خالص توحيد هئي ان سان اوهان جي غلط ۽ بيڄڙي عقيدي جو ڪو به تعلق نه آهي ۽ جڏهن اوهان کي ان جي ڪا خبر نه آهي ته ان جي باري ۾ بحث ڇو ٿا ڪريو؟ نه ڪندا ڪريو.

وَدَّتْ طَّآئِفَةٌ مِّنْ اَهْلِ الْكِتَابِ لَوْ يُضِلُّوْنَكُمْ ؕ وَمَا يُضِلُّوْنَ اِلَّآ

دل سان گهريو هڪ جماعت اهل ڪتاب مان ته (ڪنهن طريقي سان) گمراهه ڪن اوهان کي ۽ نه ٿا گمراهه ڪن مگر

اَنْفُسَهُمْ وَمَا يَشْعُرُوْنَ ﴿٦٩﴾ يٰۤاَهْلَ الْكِتَابِ لِمَ تَكْفُرُوْنَ بِاٰيَاتِ

پنهنجو پاڻ کي ۽ نه ٿا سمجهن، اي اهل ڪتاب ڇو ٿا انڪار ڪيو آيتن

اللّٰهِ وَاَنْتُمْ تَشْهَدُوْنَ ﴿٧٠﴾ يٰۤاَهْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تَلْبِسُوْنَ الْحَقَّ

الله جي جو. حالانڪ اوهان پاڻ شاهدي ٿا ڏيو. اي اهل ڪتاب ڇو ٿا ملايو حق کي

بِالْبَاطِلِ وَتَكْتُمُوْنَ الْحَقَّ وَاَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ﴿٧١﴾ ع

باطل سان ۽ لڪايو ٿا حق حالانڪ اوهان ڄاڻو ٿا.

٧ع ٨ ١٥

## تفسير

هنن ٽنهين آيتن مان پهرئين آيت ۾ يهودين ۽ نصارن جي دلي خواهش جو ذڪر آهي ته انهن کي ڪرڻ ته ائين ڪپي ها جو اهي الله تعالیٰ جي آخري ۽ محبوب

نبي صلي الله تعالىٰ عليہ وسلم تي ايمان آڻين ها پر ان جي بجاءِ صرف ضد ۽ عناد
جي ڪري سندن دلي تمنا ۽ خواهش اها رهي آهي تہ سڌيءَ واٽ تي هلڻ وارن کي بہ
گمراهہ ڪن. ايتري قدر بہ سوچيندا هئا تہ ڀيا ماڻهو جيڪڏهن يهودي يا نصاريٰ نہ ٿا
ٿين تہ گهٽ ۾ گهٽ مسلمان ٿيڻ کان تہ بچن ان جي ڪري مسلمانن کي اسلام کان
بدظن ۽ بد اعتقاد ڪرڻ لاءِ وڏا وس ڪندا هئا، انهن جي سامهون ڪيترن قسمن جا
شڪ، شبها ۽ نمونني نمونني جا الزام پيش ڪندا هئا. هن وقت بہ اسان جي يورپ ۽
يلاري،سنڌ سونهاريءَ جي يونيورسٽين ۽ ڪاليجن ۾ وڏي زور شور سان اسلام جي
خلاف ڪم ٿي رهيو آهي ۽ ڪيترن نوجوانن کي اسلام تي طرحين طرحين اعتراض
سيکاري انهن کي دين، شريعت،قرآن ڪريم، حضور صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن
جي محبت کان هٽائيندي الله جل شانہ جو منڪر بنايو وڃي ٿو.

هتي الله تعالىٰ ٻڌايو تہ اهي پنهنجن مقصدن ۾ ڪامياب نہ ويندا، البت
پنهنجن عمل نامن ۾ گناهن جو اضافو ڪندي بي خبريءَ ۾ پنهنجو پاڻ کي هلاڪت ۽
تباهيءَ جي کڏي ۾ اڇلائي رهيا آهن. "يَآ اَهۡلَ الۡكِتَابِ لِمَ تَكۡفُرُوۡنَ" الايہ هتي اهل
ڪتاب يهودين ۽ نصارن کي ڏوراپو ڏيندي فرمايو ويو آهي تہ عجب آهي جو اسلام
جي صداقت ۽ حقانيت جا ايترا روشن دليل اکين سان ڏسي بہ اوهان اسلام قبول نہ ٿا
ڪيو" يَآ اَهۡلَ الۡكِتَابِ لِمَ تَلۡبِسُوۡنَ الۡحَقَّ" الاٰيۃ ۾ تَلۡبِسُوۡنَ جمع جو صيغو لبس کان ورتل
آهي جنهن جي معنيٰ ڍڪڻ يا هڪ شيءِ کي ٻيءَ سان ملائڻ آهي، يعني حضور ﷺ جن
جون نشانيون ۽ ڪماليتون جيڪي اوهان وٽ موجود آسماني ڪتابن ۾ لکيل آهن
انهن کي لڪائي الله تعالىٰ جي حڪمن ۾ تحريف ڇو ٿا ڪيو؟ حالانڪ اوهان کي اها
خبر ۽ علم بہ آهي تہ ائين ڪرڻ وڏو گناهہ آهي.

وَقَالَتۡ طَّآئِفَةٌ مِّنۡ اَهۡلِ الۡكِتَابِ اٰمِنُوۡا بِالَّذِيۡٓ اُنۡزِلَ عَلَى الَّذِيۡنَ

۽ چيو هڪ جماعت اهل ڪتاب مان تہ ايمان آڻيو ان تي جو لاٿو ويو مومنن تي ڏينهن جي

اٰمَنُوۡا وَجۡهَ النَّهَارِ وَاكۡفُرُوۡٓا اٰخِرَهٗ لَعَلَّهُمۡ يَرۡجِعُوۡنَ ﴿٧٢﴾

پهرئين حصي ۾، ۽ انڪار ڪيو ان جي پوئين حصي ۾ من اهي ڦري وڃن

وَلَا تُؤْمِنُوْٓا اِلَّا لِمَنْ تَبِعَ دِيْنَكُمْ ۗ قُلْ اِنَّ الْهُدٰى هُدَى اللّٰهِ ۙ

۽ نہ مڃيو (ڪنھن جي ڳالھ) مگر ان جي جو تابع ٿيو اوهان جي دين جو. فرماءِ تہ بيشڪ الله جي هدايت ئي هدايت

اَنْ يُّؤْتٰٓى اَحَدٌ مِّثْلَ مَآ اُوْتِيْتُمْ اَوْ يُحَآجُّوْكُمْ

آهي (چون ٿا تہ هيءُ بہ نہ مڃيو) جو ڏنو وڃي ڪو بہ اهڙو (دين) جهڙو اوهان کي ڏنو ويو آهي يا بحث

عِنْدَ رَبِّكُمْ ۗ قُلْ اِنَّ الْفَضْلَ بِيَدِ اللّٰهِ ۚ يُؤْتِيْهِ مَنْ يَّشَآءُ ۗ وَاللّٰهُ

ڪن اوهان سان اوهان جي رب وٽ، فرماءِ بيشڪ ڀلائي الله جي ئي هٿ ۾ آهي. ڏئي ٿو اها جنهن کي گهري ۽ الله

وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ﴿٧٣﴾ يَّخْتَصُّ بِرَحْمَتِهٖ مَنْ يَّشَآءُ ۗ وَاللّٰهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِيْمِ ﴿٧٤﴾

وسعت وارو علم وارو آهي. خاص ٿو ڪري پنهنجيءَ رحمت سان جنهن کي گهري ۽ الله وڏي فضل وارو آهي.

## تفسير

"وَقَالَتْ طَّآئِفَةٌ" الايه يهودين جي مذهبي اڳواڻن کي جڏهن دليلن ڏيڻ جي ميدان ۾ وڏي شڪست ۽ هار ملي تہ ماڻهن کي الله جل شانه جي سچي دين کان ڦيرائڻ جي لاءِ هڪ تمام اونهي سازش تيار ڪيائون اها هيءَ تہ پنهنجا خاص ايجنٽ مسلمانن ۾ موڪلين جيڪي اتي وڃي ظاهري طرح مسلمان ٿين ۽ ڪجھ وقت گذرڻ کان پوءِ اسلام کان ڦري مرتد ٿيندي اها ڳالھ گهٽي هلائين تہ مسلمان ٿيڻ کان پوءِ اسان کي اسلام ۽ اسلام آڻيندڙ نبي (صلى الله تعالىٰ عليه وسلم) جن جي ذات عالي صفات کي ويجهو ويهي ڏسڻ جو موقعو مليو ۽ سندن اهڙا عيب ۽ ڪوتاهيون اسان جي اڳيان کلي بيٺيون آهن. جو انهن جي ان دين کي ڇڏي ڏيڻ تي مجبور ٿي پيا آهيون جنهن کي وڏي شوق ۽ گهڻيءَ محبت سان قبول ڪيو هوسون. ان سازش جو اثر اهو ٿيندو جو جيڪي ماڻهو زور شور سان اسلام ۾ داخل ٿي رهيا هئا اسلام کان في الحال رڪجي، اهو سوچڻ تي مجبور ٿي پوندا تہ جنهن دين کي ان جي مڃڻ وارا هڪ هڪ ٿي ڇڏيندا ٿا وڃن اهو سچو دين نہ آهي. يهودين جي اها سازش گهڻي خطرناڪ هئي ۽ نفسياتي طرح بہ ان جو تمام برو نتيجو نڪري ها پر سيني کي ڏسندڙ ۽ ڄاڻندڙ رب

العزة جل شانه انهن جي ان مكر ۽ فريب كان مسلمانن كي اڳ ۾ ئي آگاهه كري ڇڏيو، مسلمان هوشيار ٿي وياءِ يهودين جي اها خطرناڪ سازش ناڪام رهي، هن آيت ۾ ان جو بيان آهي.

"وَلَا تُؤْمِنُوٓا اِلَّا لِمَنْ تَبِعَ دِيْنَكُمْ" الايه - هن آيت مباركه جا جيكي جملا آهن انهن جي هك ٻئي سان تعلق جي باري ۾ مفسرن سڳورن وڏا بحث لكيا آهن، پر علامہ قرطبيءَ عليہ الرحمة هن كي تمام گهڻو آسان بنائي ڇڏيو آهي. لكيو اٿس تہ هن آيت ۾ "قُلْ اِنَّ الْهُدٰى هُدَى اللّٰهِ" جملو معترضہ آهي ۽ ٻين سيني جملن جو تعلق "لَا تُؤْمِنُوْ" سان آهي ۽ ان جو مفهوم هيئن آهي تہ "وَلَا تُؤْمِنُوا اِلَّا لِمَنْ تَبِعَ دِيْنَكُمْ قُلْ اِنَّ الْهُدٰى هُدَى اللّٰهِ اَنْ يُّؤْتٰٓى اَحَدٌ مِّثْلَ مَآ اُوْتِيْتُمْ اَوْ يُحَآجُّوْكُمْ" يعني يهودي اڳواڻن پنهنجن جن پوئلڳن كي ان سازش لاءِ تيار كري هي ٽيئي ڳالهيون وڏيءَ مهارت سان سندن ذهن نشين كيون هيون. ١- هك تہ پنهنجي دين جي تابعن كان سواءِ ٻئي كنهن جي كا بہ ڳالهہ نہ مڃيو. ٢- ٻيو تہ اهو يقين ركو تہ جن نعمتن سان الله تعالىٰ اوهان كي مالا مال كيو آهي اهي ٻئي كنهن كي بہ نہ ملنديون . ٣- ٽيون تہ بالكل مطمئن رهو ۽ يقين ڄاڻو تہ قيامت جي ڏينهن كير بہ اوهان تي حجت قائم كري اوهان كي شرمسار كري نہ سگهندو. اهي ڳالهيون انهن كي ذهن نشين كرڻ كان پوءِ كين مٿي ذكر كيل سازش كي پايہ تكميل تي پهچائڻ جو كم سونپيو ويندو هو سندن اهي مكر اهڙا هيا جو نفسيات جي علم جا ماهر انهن كي داد ڏيڻ كانسواءِ رهي نہ سگهندا. يهودين كي اهو بہ ڊپ هوندو هو ۽ اهو بيجا بہ نہ هو تہ كٿي ائين نہ ٿئي جو سندن موكليل ڄاڙتا مسلمانن ۾ وڃي انهن جا ساٿي نہ ٿي پون. جيئن اهي كيترا ڀيرا مشاهدو كري چكا هئا ان انديشي كي نظر ۾ ركندي انهن كي ايترو پكي كرڻ جي كوشش كندا هئا جو اهي كنهن بہ قيمت ۾ ڦري نہ وڃن. پهريائين تہ انهن جي مذهبي تعصب كي مضبوط كندا هئا ۽ انهن كي پنهنجي مڃڻ ۽ ٻئي جي نہ مڃڻ جو سبق پكو كرائيندا هئا ان كان پوءِ انهن كي قومي برتريءَ ۽ نسلي نخوت جي احساس ۾ ڦاسائيندا هئا تہ ساري مخلوق ۾ اوهان ئي الله تعالىٰ جا پيارا ۽ لاڏلا آهيو، جيكي الٰهي انعام اوهان تي ٿيا آهن اهي كنهن تي بہ كو نہ ٿيا آهن. پوءِ جڏهن اوهان سيني قومن كان افضل ۽ اعلىٰ آهيو تہ اوهان پاڻ كان گهٽ وارن جي دعوت كيئن تا قبول كيو؟ رهيو قيامت جي حساب جو خوف سو بہ انهن كي تسلي ڏيندي چيو ويو هو تہ قيامت ۾ بہ اوهان ئي سرخرو هوندؤ. ائين انهن كي ذهني ۽ روحاني نموني بہ اسلام جي خلاف تيار كيو ويو هو.

" قُلْ اِنَّ الْفَضْلَ " کان ٻڌايو ويو آهي تہ نبوت کنهن جي ذاتي ملڪيت يا جاگير نہ آهي هيءَ تہ الله تعالىٰ جو فضل آهي جنهن کي ان جو اهل سمجهي ٿو ان کي عطا ڪري ٿو. يهودين جي دعويٰ (تہ نبوت اسحاق عليه السلام جي اولاد لاءِ مخصوص آهي اسماعيل عليه الصلواة والسلام جي اولاد مان نبي نہ ايندو) غلط آهي.

## سوال

هن آيت مان ثابت ٿيو تہ نبوت الله تعالىٰ جو فضل آهي ۽ جڏهن الله تعالىٰ جو فضل ختم نہ ٿيندو تہ نبوت ختم ڪيئن ٿيندي؟ پوءِ اهو عقيدو تہ يهودين جو آهي تہ حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام کان پوءِ نبي نہ ايندو؟

## جواب

نبوت خدائي نعمت آهي جيڪا حضور عليه الصلواة والسلامُ جن کي عطا ٿي ۽ انهن تي ئي قائم ۽ دائم آهي ۽ سندن دين ڪامل آهي جنهن لاءِ ٻئي نبي جي اچڻ جي ڪا بہ ضرورت ناهي جيئن قرآن ڪريم ۾ آهي "اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ "اڄ مون اوهان لاءِ دين ڪامل ڪري ڇڏيو آهي. يهودين جو حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام کي خاتم النبيين سمجهڻ توراة جي حڪم جي خلاف آهي، ڇو تہ توراة ۾ حضور عليه الصلواة والسلام جي آمد جو ذڪر موجود آهي. مسلمانن جو حضور عليہ الصلواة والسلام جن کي خاتم النبيين مڃڻ قرآن ڪريم جي حڪم جي عين مطابق آهي. قرآن ڪريم ڪين خاتم النبيين جو لقب ڏنو آهي ٻئي ڪنهن کي بہ اهو لقب عطا نہ ٿيو آهي. هر شيءِ پنهنجي وقت ۾ نعمت آهي بي وقتي نعمت نہ آهي. مينهن ان وقت تائين نعمت آهي جيستائين پوڪ ڪچي آهي. پوڪ جي پچڻ کان پوءِ مينهن جو وسڻ عذاب ۽ سزا آهي دين جي پوڪ پچي ويئي "اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ" جو اعلان ٿي چڪو آهي هاڻي نئين نبوت جو اچڻ پوڪ کي تباهہ ۽ برباد ڪرڻ آهي.

## سوال

اهو ڪهڙو سبب آهي جو بني اسرائيل ۾ هزارين انبياءِ عليهم الصلواة والسلام آيا ۽ بني اسماعيل ۾ صرف هڪ حضور صلى الله عليه وسلم جن آيا؟

## جواب

ٻيا سڀ پيغمبر سڳورا تارن وانگر آهن ۽ حضور صلى الله عليه وسلم جن سج وانگر، تارا آسمانن تي هزارين هوندا آهن مگر سج هڪ هوندو آهي. هڪ ئي

ملڪ ۾ آفيسر تہ هزارين هوندا آهن مگر صدر يا وزير اعظم هڪ هوندو آهي، يهودي اهو راز سمجهي نہ سگهيا هئا.

وَمِنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ مَنْ اِنْ تَاْمَنْهُ بِقِنْطَارٍ يُّؤَدِّهٖٓ اِلَيْكَ ۚ

۽ اهل ڪتاب مان ڪو اهڙو ديانتدار بہ آهي جو جيڪڏهن امانت رکنديين ان وٽ ڍير (سون چانديءَ جو) تہ ادا ڪري ڏيندو اهو توکي

وَمِنْهُمْ مَّنْ اِنْ تَاْمَنْهُ بِدِيْنَارٍ لَّا يُؤَدِّهٖٓ اِلَيْكَ اِلَّا مَا دُمْتَ عَلَيْهِ قَآئِمًا ۭ

۽ انهن مان ڪي اهڙا آهن جو جيڪڏهن امانت رکنديين ان وٽ هڪ دينار تہ نہ ادا ڪندو ان کي توڏانهن مگر جيستائين بيٺو رهندين

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَالُوْا لَيْسَ عَلَيْنَا فِى الْاُمِّيّٖنَ سَبِيْلٌ ۚ وَيَقُوْلُوْنَ

ان تي اهو انجي ڪري آهي جو بيشڪ انهن چيو تہ ناهي اسان تي اڻ پڙهيلن ۾ ڪا وٽ پڪڙ ۽ چون ٿا

عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ وَهُمْ يَعْلَمُوْنَ ﴿۷۵﴾ بَلٰى مَنْ اَوْفٰى بِعَهْدِهٖ

الله تي ڪوڙ حالانڪ اهي ڄاڻن ٿا. هائو جنهن پورو ڪيو پنهنجو وعدو

وَاتَّقٰى فَاِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِيْنَ ﴿۷۶﴾

۽ پرهيزگار ٿيو پوءِ بيشڪ الله محبت ٿو رکي پرهيزگارن سان.

## تفسير

وَمِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ ڪان آيت جي پهرئين حصي ۾ ٻڌايو ويو آهي تہ اهل ڪتاب مان ڪي سٺا امانت دار ماڻهو بہ آهن، جيئن حضرت عبدالله بن سلام رضي الله تعالىٰ عنه جو ان وٽ هڪ قريشيءَ ٻارنهن سؤ (۱۲۰۰) سون جون اوقيون (هڪ اوقيه تقريبا پوڻا چار تولا ٿيندي). امانت رکيون هيون تہ ان ڪيس سيئي سنيالي ادا ڪري ڏنيون (۱)

## سوال

هن آيت ۾ بعضي ماڻهن جي امانت دار هجڻ تي مدح ڪئي وئي آهي جيڪڏهن ان بعض مان مراد اهل ڪتاب جا اهي ماڻهو آهن جيڪي ايمان آڻي چڪا

(۱) روح البيان ص۵۱ جزء ۳

هئا ته پوءِ ته نيڪ آهي پر جيڪڏهن خاص ايمان وارا مراد نه آهن مطلقا اهل ڪتاب مراد آهن جن ۾ اسلام نه آڻڻ وارا به شامل آهن ته پوءِ انهن جو سندن ڪفر جي حالت ۾ ڪيل عمل مقبول نه آهي، ۽ جڏهن غير مقبول آهي ته انهن جي مدح ڇو ڪئي وئي؟

## جواب

ڪنهن به شيءِ جو مقبول هجڻ هڪ شيءِ آهي ته ان تي عمل ڪندڙن جي مدح ڪرڻ ٻي شيءِ. مدح ڪرڻ مان اهو لازم نه آهي ته اهو الله تعاليٰ وٽ به مقبول آهي بلڪ ان مان مقصود اهو ٻڌائڻ آهي ته چڱي ڳالهه ڪٿي ڪافر ڪري ته به اها ڪنهن حد تائين چڱي آهي جنهن جو فائدو ان کي دنيا ۾ نيڪ نامي ۽ آخرت ۾ عذاب جي گهٽتائي آهي(١) هن عبارت مان ثابت ٿيو ته ابو لهب تي حضور صلي الله عليه وسلم جي ڄمڻ جي خوشي ڪرڻ جي ڪري عذاب جو هلڪو ٿيڻ به صحيح آهي ۽ اهو به واضح ٿيو ته اسلام تعصب ۽ تنگ نظريءَ کان ڪم نه وٺندو آهي.اهو کليءَ دل سان پنهنجي مخالف جي هنر جو به ان جي مرتبي موافق داد ڏيندو آهي.

"وَمِنۡهُمۡ مَنۡ" کان اڳتي وري انهن ماڻهن جو بيان آهي جيڪي امانت ۾ خيانت ڪندا آهن جيئن ڪعب بن اشرف وٽ هڪ قريشيءَ هڪ دينار امانت رکيو هو ته اهو به نه ڏنائين(٢) هتي الله تعاليٰ انهن جي مذمت ڪئي آهي.

"اِلَّا مَا دُمۡتَ عَلَيۡهِ قَآئِمًا" مگر جيستائين هوندين تون ان تي بيٺل يعني ان جي پويان تون رات ڏينهن لڳو رهندين تڏهن اهو هڪ دينار توکي ملندو پر پاڻهي ادا ڪو نه ڪندو.

## مسئلو

هن آيت مان ثابت ٿيو ته جيڪڏهن قرض ڏيندڙ مقروض جو پيڇو ڪندو رهي ۽ جيستائين قرض وصول نه ڪري ان کي ڇڏي ته اهو ان جو حق آهي امام ابو حنيفه رضي الله تعاليٰ عنه جو به اهو قول آهي ۽ ان هنن لفظن مان ئي دليل ورتو آهي (٣)

"ذَالِکَ بِاَنَّهُمۡ" الايه هتان کان يهودين جي ٻئي ڪوڙ جو بيان آهي ته اهي جڏهن پاڻ ۾ ڏيتي ليتي ڪندا هئا ته ڪجهه نه ڪجهه خدا وندي احڪام تي عمل ڪندا هئا پر اهل عرب خاص ڪري مسلمانن سان سندن برتاءُ عجيب قسم

(١) معارف القرآن ص٨٩ جلد٢ (٢) روح البيان ص٥١ جزءُ ٣ جلد٢
(٣) تفسير القرطبي ص١١٧ جلد٤

جو هوندو هو، انهن سان خريد وفروخت ڪرڻ ۾ ڏوڪو ڪندا ۽ وعدو ڪري ڦري ويندا هئا، امانت ۾ خيانت ڪرڻ کان باز نہ ايندا هئا، مقصد ... تہ مسلمانن سان ڏيتي ليتي ڪرڻ ۾ خداوندي احڪام تي بہ عمل نہ ڪندا هئا ۽ اخلاقي دائري کان صفا نڪري ويندا هئا، ۽ جيڪڏهن انهن کي ان خيانت، عهد جي ٽوڙڻ، بد معاملگيءَ تي ملامت ڪئي ويندي هئي تہ پشيمان ٿيڻ جي بجاءِ هيءُ جواب ڏيندا هئا تہ اسان کي اسان جي ڪتاب هنن بي علم عربن جي مال کائڻ جي اجازت ڏني آهي. الله تعالىٰ فرمايو تہ "اهو انهن جو بهتان آهي الله تعالىٰ انهن ماڻهن سان محبت ڪندو آهي جيڪي هر معاملي ۾ ديانتداري،وعدي وفائي ۽ سچ ڳالهائڻ جي اصول تي عمل ڪندڙ هوندا آهن، مسلمانن سان تہ سٺو ۽ صحيح معاملو رکندا آهن، پر غير مسلمن کي بہ پنهنجا هجن يا پراوا ڏوڪو نہ ڏيندا آهن.

## فائدو

"اَلْاُمِّيّٖنَ"امي جو جمع ام ڏي نسبت ڪيل آهي معنىٰ جيئن ماءُ جي پيٽ مان اڻ پڙهيل آيو هو تيئن ئي رهيو، باقي حضور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن کي جيڪو امي سڏيو ويو آهي سو ان جي ڪري جو پاڻ لکندا نہ هئا يا ام القرىٰ (مڪي مڪرمه) ڏي نسبت ڪيل آهي. (١)

اِنَّ الَّذِيْنَ يَشْتَرُوْنَ بِعَهْدِاللّٰهِ وَاَيْمَانِهِمْ ثَمَنًا قَلِيْلًا اُولٰٓئِكَ لَا

بيشڪ اهي ماڻهو جو خريد ٿا ڪن الله جي وعدي ۽ پنهنجن قسمن سان ملهہ ٿورو اهو ناهي

خَلَاقَ لَهُمْ فِى الْاٰخِرَةِ وَلَا يُكَلِّمُهُمُ اللّٰهُ وَلَا يَنْظُرُ اِلَيْهِمْ يَوْمَ الْقِيَامَةِ

ڪو حصو انهن جي لاءِ آخرت ۾ ۽ نہ ڳالهائيندوانهن سان الله ۽ نہ ڏسندو انهن ڏانهن قيامت جي ڏينهن

وَلَا يُزَكِّيْهِمْ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ﴿٧٧﴾

۽ نہ پاڪ ڪندو انهن کي ۽ انهن لاءِ عذاب دردناڪ آهي.

(١) التفسير الكبير ص١٠٢ جزء٨

## تفسير

هن آيت سڳوريءَ ۾ عهد پچڻ، وعدي برخلافيءَ ۽ ڪوڙن قسمن کڻڻ جون پنج سزائون بيان ڪيو ويون آهن ١- هڪ ته اهي آخرت جي نعمتن کان محروم ڪيا ويندا. ٢- ٻيو ته رحمٰن ۽ رحيم رب جل شانه انهن سان نه ڳالهائيندو. ٣- ٽيون ته اهي الله جي لطف ۽ رحمت جي نظر کان بلڪل محروم ڪيا ويندا. ۴- چوٿون ته اهي گناهن جي گند کان به پاڪ نه ڪيا ويندا. ۵- پنجون ته انهن سزائن کان سواءِ به ڪين دردناڪ عذاب ڪيو ويندو ۽ ڪنهن ڪي طاقت آهي جو انهن سزائن مان هڪڙي سزا به برداشت ڪري سگهي. قرآن ڪريم کي مڃڻ وارا مسلمان هن هيبت ۽ جلال واري آيت کان پوءِ به وعده وفائي نه ڪندا ته ڪڏهن ڪندا؟

## شان نزول

علامہ سيوطي عليه الرحمة ابن جرير کان ۽ ان ابن جريج کان آندو آهي ته اشعث بن قيس ۽ ٻئي هڪ شخص جو زمين جي باري ۾ فيصلو حضور صلى الله عليه وسلم جن وٽ آيو جڏهن ته جاهليت جي زماني کان وني اها زمين اشعث جي قبضي ۾ هئي،ان ڪري حضور صلى الله عليه وسلم جن ان شخص کي فرمايو ته”شاهد آڻ“ ان عرض ڪيو ته مون وٽ ڪو به اهڙو شاهد نه آهي جو اشعث تي شاهدي ڏئي، پاڻ ڪريمن صلى الله عليه وسلم جن فرمايو ته” پوءِ اشعث کان قسم وٺ“ اشعث قسم کڻڻ لاءِ تيار ٿيو ته الله تعالىٰ مٿين آيت نازل ڪئي ۽ جڏهن اشعث اها آيت ٻڌي ته قسم کڻڻ کان انڪار ڪندي عرض ڪيائين ته ” مان الله تعالىٰ ۽ اوهان کي شاهد ٿو ڪيان ته منهنجو مخالف سچو آهي“ اها حصي واري زمين ته ان کي ڏنائين پر پنهنجي طرفان ٻي به گهٽي وڌائي ڏنائينس (١) حضرت ابو امامه رضي الله تعالىٰ عنه روايت ڪئي آهي ته سيدنا رسول الله صلي الله عليه وسلم جن فرمايو: مَنِ اقْتَطَعَ حَقَّ امْرِءٍ مُسْلِمٍ بِيَمِيْنِهٖ اَوْجَبَ اللّٰهُ لَهُ النَّارَ وَحَرَّمَ عَلَيْهِ الْجَنَّةَ“ ”يعني جنهن قسم کڻي مسلمان مرد جو حق ڪاڍو ته الله ان لاءِ باهه کي واجب ڪندو ۽ ان تي جنت کي حرام ڪندو“ پوءِ هڪ مرد عرض ڪيو ته يا رسول الله! ڀلي اها ٿوري هجي؟ فرمايائون ته ”وان کان قضيبا من اراڪ“ ڪٽي ڪبر جي هڪ ڪاٺي هجي. (٢)

(١) الدر المنثور ص٢۴۵ جلد٢ جزءِ ٣ (٢) القرطبي ص١١٩- ١٣٠ جلد۴

# فائدو

هن آيت ۾ عهد جو لفظ آيو آهي عهد ان قول جو نالو آهي جيڪو ٻن ڌرين جي وچ ۾ ڳالهه ٻولهه سان طئي ٿيندو آهي ۽ ٻنهين کي ان تي پائبند رهڻ ضروري هوندو آهي ۽ وعدو صرف هڪ ڌر جي طرفان هوندو آهي. عهد خاص ۽ وعدو عام آهي.

وَاِنَّ مِنۡهُمۡ لَفَرِيۡقًا يَّلۡوٗنَ اَلۡسِنَتَهُمۡ بِالۡكِتٰبِ لِتَحۡسَبُوۡهُ مِنَ

۽ بيشڪ انهن مان هڪڙي جماعت اهڙي آهي جو پنهنجون زبانون مروڙي پڙهن ٿا (اللبجي) ڪتاب ۾ تانت سمجهوان کي

الۡكِتٰبِ وَمَا هُوَ مِنَ الۡكِتٰبِ ۚ وَيَقُوۡلُوۡنَ هُوَ مِنۡ عِنۡدِ اللّٰهِ وَمَا

(اصل) ڪتاب مان ۽ ناهي اهو (اصل) ڪتاب مان ۽ چون ٿا ته اهو الله وٽان آهي ۽ ناهي

هُوَ مِنۡ عِنۡدِ اللّٰهِ ۚ وَيَقُوۡلُوۡنَ عَلَى اللّٰهِ الۡكَذِبَ وَهُمۡ يَعۡلَمُوۡنَ ﴿٧٨﴾

اهو الله وٽان ۽ هٺن ٿا الله تي ڪوڙ ۽ اهي ڄاڻن ٿا (ته اهو ڪوڙ آهي)

## تفسير

هن آيت سڳوريءَ ۾ يهودين جي هڪ اهڙي جماعت جو يلوون سان ذڪر ڪيو ويو آهي جيڪي الله تعالىٰ جي ڪتاب تي ڪوڙ هڻندا هيا. يلوون جو لفظ ليٌ کان نڪتل آهي معنىٰ ڪنهن شيءِ کي جهڪائڻ ۽ مائل ڪرڻ. عربيءَ ۾ چيو ويندو آهي لوي بيده پنهنجو هٿ جهڪايائين. لوي براسه. پنهنجو مٿو جهڪايائين. مطلب ته ان جي اصلي ۽ فطري وضع ۾ تبديلي ڪيائين. ان جي ڪري هاڻي ان جو استعمال ڪلام جي الفاظ يا اعراب ۾ اهڙي ردو بدل ڪرڻ تي ٿيڻ لڳو آهي جنهن سان ان ڪلام جو اصلي مفهوم بدلجي وڃي يا انهن جي اهڙيءَ من گهڙت تشريح ڪرڻ جنهن جو ان ڪلام سان پري جو واسطو به نه هجي

عربي زبان ۾ ڪوڙ هڻڻ يا من گهڙت ڳالهين "ڦاهڻ کي لوي لسانه بڪذا چوندا آهن. يلوون جي هن آيت ۾ معنىٰ آهي ته ڪلمن کي مقصدن کان ڦيرائين

ٿا (١) يهودين جي ڪن عالمن جو شيوو هوندو هو تہ توراة جي جن آيتن ۾ نبي اڪرم صلى الله عليه وسلم جن جو پاڪ ذڪر هوندو هو يا تہ انهن کي اهڙي لب ۽ لهجي سان پڙهندا هئا جو مطلب ۽ مفهوم ڦري ويندو هو يا الفاظ ۽ اعراب ۾ رد وبدل ڪندا هئا. هن آيت ۾ انهن جي انهن غلط حرڪتن جو ذڪر آهي.

مَا كَانَ لِبَشَرٍ اَنْ يُّؤْتِيَهُ اللّٰهُ الْكِتٰبَ وَالْحُكْمَ وَالنُّبُوَّةَ ثُمَّ

نہ آهي (مناسب) ڪنهن انسان لاءِ جو ڏئي ان کي الله ڪتاب ۽ حڪومت ۽ نبوت ان کان پوءِ

يَقُوْلَ لِلنَّاسِ كُوْنُوْا عِبَادًا لِّيْ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلٰكِنْ كُوْنُوْا

چوي ماڻهن کي تہ هجو منهنجا ٻانها الله کان سواءِ ۾ پر (چوندن) تہ هجو الله وارا ان جي ڪري جو

رَبّٰنِيّٖنَ بِمَا كُنْتُمْ تُعَلِّمُوْنَ الْكِتٰبَ وَبِمَا كُنْتُمْ تَدْرُسُوْنَ ﴿٧٩﴾

پڙهائيندا ٿي رهيئو ڪتاب ۽ ان جي ڪري جو پاڻ بہ پڙهيو ٿي،

وَلَا يَاْمُرَكُمْ اَنْ تَتَّخِذُوا الْمَلٰٓئِكَةَ وَالنَّبِيّٖنَ اَرْبَابًا ؕ اَيَاْمُرُكُمْ

۽ نہ امر ڪندو اوهان کي تہ بڻايو فرشتن ۽ نبين کي پالڻهار. ( اوهان پاڻ سوچيو تہ) ڇا حڪم ڪندو اوهان کي

ع ٨ ٩ ١٦ بِالْكُفْرِ بَعْدَ اِذْ اَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ ﴿٨٠﴾

ڪفر جو ان کان پوءِ جو اوهان مسلمان آهيو.

## تفسير

يعني جنهن کي نبوت جهڙي انعام سان نوازيو ويندو آهي اهو ٻين کي پنهنجي پوڄا ۽ عبادت جو ڏس نہ ڏيندو آهي پر سيني کي چوندو آهي تہ الله وارا ٿي رهو.

ربانيين رباني جو جمع رب ڏي منسوب آهي. اهو لفظ رب جي لفظ ڏي نسبت ڪرڻ جي ڪري ربيٌّ هجڻ کپي ها پر گهٽو ڪري ان ۾ مبالغي جي معنىٰ لاءِ الف، نون وڌايو ويندو آهي، مثلاً جنهن جو ڪنڌ گهٽو ٿلهو هوندو آهي ان کي رقبانيٌّ چيو ويندو آهي هتي بہ معنىٰ کي وڌائڻ ۽ مبالغي جي لاءِ رباني آندو ويو آهي. جنهن

(١) القرطبي ص ١٢١ ج ٤

جي معنيٰ آهي انساني نوع جي صحيح تربيت ۽ اصلاح ڪرڻ وارو. هتي عيسائين کي ٻڌايو ويو آهي ته حضرت عيسيٰ عليه السلام ته الله تعاليٰ جو نبي هو، اهو ماڻهن کي ڪيئن چوندو ته مون کي الله يا الله جو پٽ ڪري مڃيو؟ انهيءَ ته اوهان کي خالص الله واري هجڻ جي دعوت ڏني هئي.

## شان نزول

ابن اسحاق، ابن جرير، ابن المنذر، ابن ابي حاتم ۽ دلائل النبوة ۾ بيهقي حضرت ابن عباس رضي الله تعاليٰ عنهما کان روايت آندي آهي ته جڏهن نجران جا نصاريٰ ۽ يهودين جا عالم رسول الله صلي الله عليه وسلم جن وٽ گڏ ٿيا ۽ پاڻ انهن کي اسلام جي دعوت ڏنائون ته چوڻ لڳا ته ڇا اوهان اهو ارادو ٿا رکو ته اوهان جي به ائين پوڄا ڪئي وڃي جيئن حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جي؟ پاڻ صلي الله عليه وسلم جن فرمايو ته الله کان پناهه ٿا گهرون هن ڳالهه کان جو پاڻ غيرالله جي عبادت ڪيون يا غيرالله جي عبادت جو امر ڪيون "نه الله مون کي ان لاءِ موڪليو آهي ۽ نه مون کي اهو امر ڪيو ويو آهي" پوءِ الله تعاليٰ مٿين آيت نازل ڪرڻ فرمائي ۽ عبد بن حميد امام حسن بصريءَ کان راويت آندي آهي ان فرمايو ته مون وٽ هيئن روايت پهتي آهي ته هڪ شخص رسول الله صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن جي خدمت ۾ عرض ڪيو ته يا رسول الله اوهان تي ائين سلام ٿا چئون جيئن هڪ ٻئي تي چوندا آهيون پوءِ اصل اوهان کي سجدو ڇو نه ڪيون؟ پاڻ فرمايائون ته "لَا وَلٰكِنْ اَكْرِمُوْا نَبِيَّكُمْ وَاعْرِفُوْا الْحَقَّ لِاَهْلِهٖ"(١) يعني سجدو نه ڪيو پر پنهنجي نبي جي عزت ڪيو ۽ هر هڪ ماڻهو جنهن شان جو لائق آهي ان جو اهو حق مڃيو. الله کان سواءِ ٻئي کي سجدو ڪرڻ جائز ٿي نه آهي . پوءِ هيءَ آيت نازل ٿي. ابن جرير، ابن ابي حاتم، ابن المنذر حضرت ابن عباس رضي الله تعاليٰ عنهما کان روايت آندي آهي ته ربانيين جي معنيٰ آهي فقهاء، علماء (فقه وارا عالم) ان ئي حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان ٻيءَ روايت ۾ آيو آهي ته ربانيين جي معنيٰ آهي حڪمت وارا، علم وارا، حلم وارا (٢) زمخشريءَ لکيو آهي ته رباني اهو آهي جيڪو الله جي دين ۽ اطاعت کي مضبوطيءَ سان وٺي (٣) حضرت امام محمد بن حنفيه رضي الله تعاليٰ عنه حضرت ابن عباس رضي الله تعاليٰ عنهما جي وفات تي فرمايو هو ته "اليوم مات ربانيُّ هذه الامة" اڄ هن

(١) فتح القدير ص٣٥٦ جلد١ (٢) ساڳيو حوالو (٣) الڪشاف ص٤٤٠ جلد١

امت جو رباني وفات ڪري ويو حضرت ابن عباس حضور عليه الصلواة والسلام جن کان به روايت ڪئي آهي پاڻ فرمايائون ته "مَا مِنْ مُؤْمِنٍ ذَكَرٍ وَّاُنْثىٰ حُرٍّ وَلَا مَمْلُوْكٍ اِلَّا وَلِلّٰهِ عَزَّ وَجَلَّ عَلَيْهِ حَقٌّ اَنْ يَّتَعَلَّمَ مِنَ الْقُرْآنِ وَيَتَفَقَّهَ فِيْ دِيْنِهٖ ثُمَّ تَلَا هٰذِهِ الْاٰيَةَ "وَلٰكِنْ كُوْنُوْا رَبَّانِيّٖنَ" الايه (١) يعني هر مؤمن مرد يا عورت آزاد يا ٻانهي تي الله تعاليٰ جو هيءُ حق آهي ته قرآن پڙهي ۽ دين ۾ فقه (ڄاڻ) رکي ان کان پوءِ هيءَ آيت تلاوت ڪيائون" ولڪن ڪونوا ربانيين" "ولا يامرڪم" الايه ۾ ٻڌايو ويو آهي ته نبي سڳورو اوهان کي غيرالله کي رب سمجهڻ لاءِ امر نه ڪندو، ڇا اوهان کي مسلمان ٿيڻ کان پوءِ ڪفر جو امر ڪندو- نه هرگز نه.

## فائدو ا

اهل حقيقت تي فرض آهي ته پنهنجي پوئلڳن ۽ مريدن کي رباني بنائي الله تعاليٰ جي اخلاق سان موصوف ڪن ڇو ته اهي قرآن ڪريم جي ظاهري تعليم ڏيندا آهن ته حقيقي درس به- ڪامل مرشد اهوئي آهي جيڪو مريد جي ظاهري، باطني اصلاح ڪري، صرف الفاظ سيکارڻ تي قناعت ۽ ڪفايت نه ڪري، علم وڻ آهي ۽ ان تي عمل ڪرڻ ان جو ميوو. رباني عالِم اهو آهي جيڪو علم ۽ عمل جي ذريعي رب العالمين جل شانه تائين پهچي،ان جي دل ۾ علم جو ٻج پوکيو وڃي ۽ ان جون شاخون ساري جسم ۾ اهڙيون هجن جو ان جي هر هڪ عضوي مان تقويٰ، پرهيزگاري ۽ دينداريءَ جا آثار ظاهر هجن، انهن کي ئي "اَلرَّاسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ" سڏيو ويو آهي ۽ اهڙن جي ئي حق ۾ آهي "اِنَّمَا يَخْشَى اللّٰهَ مِنْ عِبَادِهِ الْعُلَمٰٓؤُا (٢) بيشڪ الله کان ان جي ٻانهن مان علم وارا ڊڄن ٿا. مگر افسوس آهي جو هن هلندڙ دور ۾ بعضي ولايت جي دعويٰ ڪندڙ جاهل پير ۽ بدعمل عالم جن تي سندن نفساني خواهشون غالب آهن علماءِ ۽ صوفياء جون ڪجهه ڳالهيون ياد ڪري ماڻهن کي ڦاسائيندا ۽ تصوف ۽ علم کي ماڻهن جي شڪار ڪرڻ جو ڄار بنائي هميشه مريدن کي اهو سيکاريندا وتندا آهن ته پير کي هيئن نذرانو ڏيو هيئن خدمت ڪيو. اهو نه ٻڌائيندا آهن ته الله تعاليٰ جي عبادت هيئن ڪيو، معاملات صاف ۽ شريعت مطابق رکو،حرام ۽ ناجائز رسمون پاڻ مان ڪڍي ڇڏيو، اهڙن ڏوکيبازن کان پري رهڻ گهرجي،اولياءِ ڪرام انبياءِ عظام عليهم الصلواة والسلام جي فيوضات ۽ برڪات جا مظهر آهن. اهي ڪڏهن به شريعت

(١) القرطبي ص١٢٢ جلد٤ (٢) سورة الفاطر آيت ٢٨

جي خلاق نہ تعليم ڏيندا ۽ نہ تلقين كندا آهن.

## فائدو٢

نبوت جو مقام ولايت كان اعلىٰ ۽ بلند آهي انبياء سڳورا عليهم الصلواة السلام رب پاڪ جي توحيد ۾ اهڙا فنا هوندا آهن جو سندن بشري حالتون بہ فنا جي مقام كي پهتل هونديون آهن، اهي حقاني ۽ نوراني وجود آهن. اهي خلق كي خالق جل شانه كان سواءِ ٻئي ڏي كڏهن بہ نہ سڏيندا. اهي نفس اماره جي مكر كان هر لحاظ سان معصوم ۽ محفوظ آهن. انهن جي اڳيان كو حجاب آهي ئي كو نہ جيكو كين حق كان پري ركي

علامه ثناءالله پاني پتي عليه الرحمة ربانيين جي وضاحت ۾ مختلف اقوال آڻي لكيو آهي تہ: وحاصل الاقوال الرباني الكامل المكمل في العلم والعمل والاخلاص ومراتب القرب سمي بذالک لانهم يربون العلم ويقومون به ويربون المتعلمين بصغار العلوم قبل كبارها الخ (١) يعني سيني قولن جو خلاصو هيءُ آهي تہ رباني اهو آهي جيكو علم، عمل، اخلاص ۽ قرب جي مرتبن ۾ كامل مكمل هجي، انهن كي رباني ان كري ٿا چون جو اهي علم جي تربيت كندي انكي قائم ٿا ركن ۽ شاگردن كي وڏن علمن كان اڳ ۾ ننڍن علمن جي تعليم ڏيندا آهن.

## نبين سڳورن عليهم الصلواة والسلام جي معصوم هجڻ جو دليل

هن آيت ۾ اهو بہ دليل آهي تہ هر نبي سڳورو معصوم ۽ گناهن جي كرڻ ۽ سوچڻ كان بہ پاڪ هوندو آهي ڇو تہ جنهن كي الله تعالىٰ كتاب، حكمت، فيصلي جي قوت ڏئي پيغمبريءَ جي وڏي منصب تي فائز كندو آهي تہ اهو پيغام الٰهي صحيح پهچائي، ماڻهن كي الله تعالىٰ جي بندگي ۽ وفاداريءَ ڏي متوجه كري، ان جو اهو كم كڏهن بہ نہ هوندو تہ ماڻهن كي الله تعالىٰ جي خالص بندگيءَ كان هٽائي پنهنجو يا ٻيءَ مخلوق جو ٻانهو بنائي. پوءِ مطلب اهو ٿيندو تہ الله جل شانه جنهن كي نبوت جي منصب جو اهل سمجهي نبي بنايو هو اهو (معاذالله) في الواقع ان جو اهل نہ هو. دنيا جي حكومت رڳو كنهن كي كنهن ذميوار عهدي تي مامور

(١) تفسير مظهري ص٧٦ جلد٢

ڪندي آهي تہ پهريائين ہہ ڳالهيون سوچيون ونديون آهن ١- هڪ تہ اهو شخص ان حڪومت جي پاليسيءَ ڪي ۽ پنهنجي فرائض ڪي ادا ڪرڻ جي لياقت رکي ٿو يا نہ.
٢- ٻيو تہ حڪومت جي احڪام تي عمل ڪرائڻ ۽ رعيت ڪي وفاداريءَ جي واٽ تي هلائڻ جي ان مان توقع آهي يا نہ. ڪو بہ بادشاهہ يا ڪا بہ پارليامينٽ اهڙي ماڻهوءَ ڪي نائب السلطنت يا سفير مقرر نہ ڪندي جنهن جي نسبت حڪومت جي خلاف بغاوت ڦيلائڻ يا ان جي پاليسيءَ ۽ احڪام ڪان انحراف ڪرڻ جو تورو ئي تورو شڪ يا شبهو هوندو آهي. ها اهو ممڪن آهي تہ هڪ شخص جي قابليت يا وفاداريءَ جي جذبي جو اندازو حڪومت صحيح طور تي نہ ڪري سگهي هجي ۽ اڳتي هلي اهو مخالفت ظاهر ڪري پر الله جل شانہ جي لاءِ تہ ائين ٿي نہ ٿو سگهي، جيڪڏهن ڪنهن ٻانهي جي نسبت ان جو علم آهي تہ هيءُ وفادار ۽ اطاعت شعار ٻانهو آهي جيڪو منهنجي حڪم ڪان وار برابر بہ تجاوز نہ ڪندو تہ محال آهي جو اهو اڳتي هلي ان جي خلاف ثابت ٿئي ورنہ تہ الله تعالىٰ جي علم جي مخالفت ثابت ٿيندي" العياذبالله" ثابت ٿيو تہ انبياء عليهم الصلواة والسلام معصوم ۽ هر ننڍي ۽ وڏي گناهہ ڪان پاڪ آهن ۽ جڏهن ننڍي ۾ ننڍي گناهہ ڪان بہ پاڪ آهن تہ شرڪ ۽ الله تعالىٰ جي مقابلي ۾ بغاوت ڪرڻ جيڪي وڏا گناهہ آهن انهن جو امڪان ڪٿان ٿو باقي رهي.

وَاِذْ اَخَذَاللّٰهُ مِيْثَاقَ النَّبِيّٖنَ لَمَآ اٰتَيْتُكُمْ مِّنْ كِتٰبٍ وَّحِكْمَةٍ

۽ جڏهن ورتو الله عهد نبين ڪان تہ جيڪڏهن ڏيان اوهان ڪي ڪتاب ۽ حڪمت

ثُمَّ جَآءَكُمْ رَسُوْلٌ مُّصَدِّقٌ لِّمَا مَعَكُمْ لَتُؤْمِنُنَّ بِهٖ وَلَتَنْصُرُنَّهٗ ؕ

ان ڪان پوءِ اچي اوهان وٽ رسول تصديق ڪندڙ ان جي جو اوهان سان گڏ آهي تہ البت ضرور ايمان آڻيندؤ ان تي ۽ البت ضرور مدد

قَالَ ءَاَقْرَرْتُمْ وَاَخَذْتُمْ عَلٰى ذٰلِكُمْ اِصْرِىْ ؕ قَالُوْٓا اَقْرَرْنَا ؕ

ڪندؤ ان جي. فرمايائين تہ ڇا اقرار ڪيو ۽ ورتو ان تي منهنجو ڳرو ذمو چيائون تہ اقرار ڪيوسون

قَالَ فَاشْهَدُوْا وَاَنَا مَعَكُمْ مِّنَ الشّٰهِدِيْنَ ﴿٨١﴾ فَمَنْ تَوَلّٰى بَعْدَ

فرمايائين تہ پوءِ شاهد رهو ۽ مان بہ اوهان سان گڏ شاهدن مان آهيان، پوءِ جيڪو ڦري ويو ان ڪان پوءِ

ذَالِکَ فَاُولٰٓئِکَ هُمُ الْفَاسِقُوْنَ ﴿٨٢﴾

پوءِ اهيئي فاسق آهن.

## تفسير

هنن آيتن ۾ ان عهد جو ذڪر آهي جيڪو حضور صلی الله عليه وسلم جن جي لاءِ ٻين نبين عليهم السلام کان ورتو ويو هو. ڇاڻ گهرجي ته الله تعالىٰ پنهنجن ٻانهن کان ٽي (٣) عهد ورتا هئا. ١- هڪ جو ذڪر سورة اعراف ۾ "اَلَسْتُ بِرَبِّکُمْ" (١) جي هيٺان ڪيو ويو آهي، جنهن جو مقصد هيءُ هو ته سيئي ارواح الله تعالىٰ جي هستيءَ ۽ عام ربوبيت تي اعتقاد رکن ڇو ته مذهب جي ساري عمارت ان ئي سنگ بنياد تي رکيل آهي. جيستائين اهو اعتقاد نه هوندو ته مذهبي ميدان ۾ عقل ۽ فڪر جي رهنمائي ڪو به نفعو پهچائي نه سگهندي، ان جي وڌيڪ وضاحت پنهنجي مقام ۾ ايندي. ٢- ٻئي جو ذڪر "وَاِذْ اَخَذَاللّٰهُ مِيْثَاقَ الَّذِيْنَ اُوْتُوالْکِتَابَ لَتُبَيِّنُنَّهٗ لِلنَّاسِ وَلَا تَکْتُمُوْنَهٗ" الايه (٢) ۾ ڪيو ويو ۽ اهو عهد صرف اهل ڪتاب جي علماء کان ورتو ويو هو ته اهي حق نه لڪائين، بلڪ صاف ۽ واضح طور بيان ڪن.

٣- ٽئين جو ذڪر هن آيت "وَاِذْ اَخَذَاللّٰهُ مِيْثَاقَ النَّبِيّٖنَ لَمَا اٰتَيْتُکُمْ مِّنْ کِتَابٍ وَّحِکْمَةٍ" ۾ ڪيو ويو آهي. اهو ميثاق عالم ارواح ۾ ورتو ويو هو جنهن جو تفصيل هتي بيان ٿيل آهي. حضرت سيدنا علي ۽ ابن عباس رضي الله تعالىٰ عنهم کان روايت آهي ته الله تعالىٰ هر هڪ نبي سڳوري کان پڪو وعدو ورتو هو ته جيڪڏهن سندس موجودگيءَ ۾ سيدنا رسول الله صلى الله عليه وسلم جن تشريف فرما ٿين ته اهو سندن رسالت تي ايمان آڻي، سندن امت ۾ شامل ٿيڻ جو شرف حاصل ڪري ۽ هر نموني سان سندن دين جي مدد ۽ تائيد ڪري ۽ سيني نبين عليهم الصلواة والسلام پنهنجن امتين کان اهو عهد ورتو هو، امام ابو يعلىٰ حضرت جابر رضي الله تعالىٰ عنها کان راويت آندي آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "وَاللّٰهِ لَوْ کَانَ مُوْسٰى حَيًّا بَيْنَ اظْهُرِکُمْ مَا حَلَّ لَهٗ اِلَّا اَنْ يَّتَّبِعَنِيْ"(٣) يعني الله جو قسم آهي ته جيڪڏهن (حضرت) موسىٰ (عليه الصلواة والسلام) اوهان ۾ زنده هجي ها ته ان لاءِ به

(١) سورة الاعراف آيت ٢ء١٧٢ (٢) آلعمران آيت ء١٨٧ (٣) القرطبي ص١٢٥ ج ٤

منهنجي اتباع کان سواءِ ڪو رستو حلال نہ هجي ها. علامہ آلوسي عليه الرحمه لکيو آهي تہ ان معنيٰ واريون حديثون گهڻيون آهن،ٻررو اڳتي علامہ موصوف لکيو آهي تہ عارفن جو مذهب هيءُ آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن مطلق نبي، حقيقي رسول، مستقل شريعت آڻيندڙ آهن ۽ ٻيا سيئي سندن تابع آهن. (١)

معراج واري رات سيني نبين سڀني عليهم السلام بيت المقدس ۾ گڏ ٿي ڪائنات جي فخر حضور عليہ الصلواة والسلام جن جي امامت ۾ سندن شريعت جي مطابق نماز ادا ڪري ان بلند مرتبي عهد جي عملي توثيق ڪئي هئي. اها نماز موسوي يا عيسوي شريعت تي نہ پر محمدي شريعت جي مطابق هئي. ذهن نشين ڪرڻ گهرجي تہ امام الانبياءِ والمرسلين عليهم الصلواة والسلام جي شان جي عظمت ۽ قدر جي بزرگيءَ جو صحيح اندازو قيامت جي ڏينهن ٿيندو جڏهن ساري مخلوق الله جي خوف کان ڏڪندي رهندي ۽ حضورصلى الله عليه وسلم جن حمد جو جهنڊو هٿ ۾ ڪٽي مقام محمود تي فائز هوندا، اللهم صل عليٰ حبيبک وصفيک صاحب لواءِ الحمد والمقام المحمود وبارک وسلم

## فائدو

ان ميثاق جي ميجاڻ لاءِ صرف "بَلَىٰ" (هائو) نہ چورايو ويو جيئن ربوبيت جي اقرار وٺندي "اَلَسْتُ بِرَبِّكُمْ" جي جواب ۾ "بَلَىٰ" تي اکتفا ڪئي ويئي هئي،پر هن ميثاق جي اهميت ملحوظ رکندي "ااقررتم" فرمائي "اَقْرَرْنَا" سان اقرارڪرائي نبين سڀني عليهم الصلواة والسلام کي هڪ ٻئي تي شاهد بنايو ويو ۽متان "وَاَنَا مَعَكُمْ مِّنَ الشَّاهِدِيْنَ" فرمائي الله تعالىٰ پنهنجيءَ شاهديءَ سان ان کي وڌيڪ مضبوط ۽ محڪم بنايو. مفسر بغويءَ لکيو آهي تہ اهو عهد ان وقت ورتو ويو هو جڏهن الله تعالىٰ حضرت آدم عليہ السلام جي پٺيءَ مان ان جو اولاد ڪڍيو هو. انهن ۾ ٻيا انبيا ۽مرسل بہ تارن وانگر چمڪي رهيا هئا. (٢)

## فائدو

هن آيت سڀنيءَ ۾مذڪور آهي تہ انبياءِ ڪرام عليهم السلام کان جڏهن حضور ﷺ جن لاءِ وعدو ٿي ورتو ويو تہ ڪين ائين ٻڌايو ويو هو تہ اوهان سيني کي ڪتاب ۽حڪمت عطا ڪندس "ثُمَّ جَآءَكُمْ" تنهن کان پوءِ اوهان وٽ هيءَ شاندار

(١) روح المعاني ص ٢١٠ جزء ٣ (٢) تفسير مظهري ص٧٨ جلد٢

رسول صلى الله عليه وسلم تشريف فرما ٿيندو. "ثم" جي لفظ مان ثابت ٿيو ته حضور عليه الصلواة والسلام جن آخري نبي آهن جيڪي ٻين سڀني نبين جي اچڻ کان پوءِ تشريف فرما ٿيا ۽ اهو به ثابت ٿيو ته ختم نبوت جو عقيدو حق، سچ ۽ صحيح آهي پاڻ ٻين نبين عليهم الصلواة والسلام جا مصدق (تصديق ڪندڙ) آهن هئي ڪنهن جي اچڻ لاءِ مبشر نه آهن ان جي ڪري پاڻ کان پوءِ ڪنهن به نبي جي اچڻ جي بشارت نه ڏنائون.

## سوال

اوهان چئو ٿا ته هن آيت ۾ حضور عليه الصلواة والسلام جن جي لاءِ عهد ورتو ويو هو. هن ۾ سندن نالو مبارڪ آيل ته ڪو نه آهي ڪهڙي دليل سان" ثُمَّ جَاءَكُمْ رَسُولٌ" مان پاڻ صلى الله عليه وسلم جن مراد آهن؟

## جواب

قرآن پاڪ ۾ جتي به ڪنهن قيد ۽ قريني کان سواءِ رسول جو لفظ آيو آهي اتي پاڻ ئي مراد آهن هتي ٻيو ڪو به نبي مراد وٺڻ لاءِ ڪو قيد يا قرينو نه آهي تنهن ڪري پاڻ ئي مراد آهن (١) ۽ هتي ان اچڻ واري رسول جي صفت مصدق (اڳين ڪتابن جي تصديق ڪندڙ) آيل آهي ۽ اها صرف حضور عليه الصلواة والسلام جن ڪئي آهي انهيءَ جي ڪري به هتي پاڻ ئي مراد آهن.

## فائدو

حضور عليه الصلواة والسلام جن جو دنيا تي اچڻ، ڄمڻ ۽ نبوت جي ذڪر لاءِ محفل ميلاد منعقد ڪرڻ سهڻو ڪم آهي ڇو ته جيئن الله تعالىٰ انبياءِ ڪرام عليهم السلام جي اجتماع ۾ حضور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي آمد ۽ مصدق هجڻ جو ذڪر ڪيو هو تيئن ميلاد جي محفلن ۾ به سندن پيدا ٿيڻ، ڄمڻ، تشريف آوريءَ بعثت، ڪمالات ۽ معجزات وغيرها جو ذڪر ڪيو ويندو آهي. "فَمَنْ تَوَلّٰى" الايه : علامه رازي عليه الرحمة لکيو آهي ته هيءُ فرمان به تاڪيدي آهي ته جيڪو مٿئين عهد کان هٽندو، منهن موڙيندو ته اهو ڀلو ۽ بزرگ ڀانهو نه پر اهو فاسق هوندو ۽ فاسق

(١) تفسير مظهري ص٧٨ جلد٢

جي سزا، ظاهر آهي (١)

## سوال

الله تعالىٰ عليم ۽ خبير آهي ان کي چڱيءَ طرح خبر آهي تہ حضرت محمد مصطفىٰ صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن ڪنهن بہ نبي جي زمين تي موجود هجڻ جي دور ۾ تشريف فرما نہ ٿيندا تہ پوءِ نبين سڳورن عليهم الصلواة والسلام کان ايمان آڻڻ جي وعدي وٺڻ جو فائدو ڪهڙو؟

## جواب

ان جو فائدو هيءُ آهي تہ جڏهن الله تعالىٰ جي نبين عليهم الصلواة والسلام ان حڪم تي محبوب عليه الصلواة والسلام جي ذات عالي صفات تي ايمان آڻڻ قبول ڪيو تہ ان وقت کان وٺي ڪين ايمان آڻڻ جو درجو ملڻ شروع ٿي ويو. (٢)

## فائدو

علامہ تقي الدين سبڪي پنهنجي رساله التعظيم والمنه ۾ لکيو آهي تہ "فتكون نبوته" ورسالته عامة لجميع الخلق من زمن آدم الىٰ يوم القيمه وتكون الانبياء وامهم كلهم من امته ويكون قوله "بعثت الي الناس كافه" لا يختص به الناس من زمانه الىٰ يوم القيامة بل يتناول من قبلهم ايضا (٣) يعني سندن نبوت ۽ رسالت حضرت آدم عليه السلام کان وٺي قيامت تائين ساري مخلوق لاءِ آهي ۽ اڳيان انبياء ۽ سندن امتون بہ حضور صلي الله عليه وسلم جا امتي آهن ۽سندن فرمان تہ "مان سيني ماڻهن لاءِ نبي ڪري موڪليو ويو آهيان" اهو صرف سندن وقت کان وٺي قيامت تائين اچڻ وارن لاءِ نہ آهي پر ان ۾ سندن ظاهري دور کان اڳ ۾ اچڻ وارا بہ داخل آهن، مفتي محمد شفيع صاحب ديوبنديءَ لکيو اهي تہ سندن نبوت"عامہ ۽ شامله" آهي ۽ سندن شريعت ۾ اڳيون شريعتون داخل آهن. سندن نبوت جو زمانو ايترو وسيع آهي جو آدم عليه السلام جي نبوت کان بہ پهريائين شروع ٿئي ٿو. محشر ۾ شفاعت ڪبرىٰ جي لاءِ پيش قدمي ڪرڻ ۽ سيني انسانن جو سندن جهنڊي جي هيٺان گڏ ٿيڻ، معراج واريءَ رات بيت المقدس ۾ سيني نبين کي امامت ڪرائڻ حضور صلى الله عليه وسلم جن

(١) تفسير ڪبير ص١٢١ جزء٨ (٢) صاوي علي الجلالين ص١٥٦ جزء١
(٣) جواهر البحار ص٣٦٣ ج١

جي عام سرداريءَ ۽ عظميٰ امامت جي آثارن مان آهي (١)

هتي ٻہ سوال ڪيا ويندا آهن انهن ڪي جوابن سان گڏ لکيو وڃي ٿو.

## سوال١

هن آيت ۾ "جَاءَكُمْ" اوهان ڏي ايندو نبين سان خطاب ڇو آهي؟ حالانڪ نبي تہ امتين ڏي ايندا آهن؟

## جواب

نبين ڏي اچڻ مان مراد آهي تہ جيڪڏهن سندن زماني ۾ حضور صلى الله عليه وسلم جن اچن تہ مٿن ايمان بہ آڻين ۽ سندن دين جي مدد بہ ڪن.

## سوال٢

حضور صلى الله عليه وسلم جن انهن جي تصديق ڪندڙ ڪيئن آهن حالانڪ سندن شريعت تہ انهن جي شريعتن کي منسوخ ڪندڙ آهي؟

## جواب

ان مان مراد توحيد، نبوت ۽ شرعي اصولن جي تصديق ڪرڻ آهي. باقي فروعات ۽ تفصيلات ۾ اختلاف تصديق ڪرڻ جي خلاف نہ آهي.

---

اَفَغَيْرَ دِيْنِ اللّٰهِ يَبْغُوْنَ وَلَهٗٓ اَسْلَمَ مَنْ فِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ

ڇا پوءِ الله جي دين کان سواءِ (ٻيو دين) ٿا طلب ڪن ۽ ان لاءِ سر جهڪايو انهن جو آسمانن ۽ زمين ۾ آهن

طَوْعًا وَّكَرْهًا وَّاِلَيْهِ يُرْجَعُوْنَ ﴿٨٣﴾ قُلْ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَآ اُنْزِلَ عَلَيْنَا

خوشيءَ سان ۽ مجبوريءَ سان ۽ ان ڏانهن موٽايا ويندا. فرماءِ! اسان آندوسون الله تي ۽ ان تي جو نازل ڪيو ويو

وَمَآ اُنْزِلَ عَلٰٓى اِبْرٰهِيْمَ وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ

اسان تي ۽ ان تي جو نازل ڪيو ويو ابراهيم ۽ اسماعيل ۽ اسحاق ۽ يعقوب (عليهم السلام)

وَالْاَسْبَاطِ وَمَآ اُوْتِىَ مُوْسٰى وَعِيْسٰى وَالنَّبِيُّوْنَ مِنْ رَّبِّهِمْ ص

۽ ان جي اولاد تي ۽ ان تي جو ڏنو ويو موسىٰ ۽ عيسىٰ ۽ پيغمبر پنهنجي رب جي طرفان

---

(١) معارف القرآن ص٩٧ جلد٢

لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْهُمْ وَنَحْنُ لَهٗ مُسْلِمُوْنَ ﴿٨٤﴾

نه ٿا جدائي ڪيون ڪنهن هڪڙي ۾ انهن مان ۽ اسين ان جي لاءِ فرمانبردار آهيون.

## تفسير

هتي الله تعالىٰ پنهنجن ٻانهن کي احساس ڏياريندي ٻڌايو آهي ته جنهن زمين ۽ آسمان جي مالڪ جي حڪم جي اڳيان ڪائنات جي هر شيءِ خوشيءَ سان يا ناخوشيءَ سان سجدو ڪندڙ آهي ان جي هر تڪويني فرمان تي هر شيءِ شعوري يا غير شعوري طور عمل ڪري رهي آهي ۽ ان ڏانهن ئي هر شيءِ موٽائي ويندي ڇا ان قادر، قوي، الله جي دين کان سواءِ ڪنهن ٻئي دين ۽ ضابطہ حيات جا متلاشي آهيو؟ ڪيترو نه غلط ۽ نفس جي ڏوڪي جهڙي موذي مرض ۾ مبتلا آهيو.

## سوال

هتي ٻڌايو ويو آهي ته آسمانن ۽ زمين وارا سڀ الله تعالىٰ کي مڃيندڙ آهن حالانڪ ڪافر ته ڪو نه ٿا مڃين؟

## جواب

اهي به مرڻ وقت عذاب جا ملائڪ ۽ سڪرات جي سختي ڏسي ايمان آڻڻ جي ڪوشش ڪندا آهن پر اهو قبول نه آهي. صوفياءِ ڪرام نفعنا الله تعالىٰ بهم فرمايو آهي ته "طَوْعًا" خوشيءَ سان اسلام آڻڻ جو مقصد الله تعالىٰ جي امر جي فرمانبرداري ڪرڻ، نفساني انڌيرن جي مقابلي ۾ پاڻ پائڻ جي حجابن کان آزاد ٿيڻ آهي ۽ "كَرْهًا" ناخوشيءَ سان تابعداري اها آهي جنهن ۾ دنيا جا واسطا وسوسا ۽ تعلقات جا حجاب موجود هجن (١)

## فائدو

"دِيْنِ اللّٰهِ" مان مراد اسلام آهي ان کان سواءِ ٻيو ڪو به دين الله تعالىٰ وٽ مقبول نه آهي، شرڪ، يهوديت، مجوسيت ۽ عيسائيت وغيره ———— سڀ مردود آهن. اهڙي طرح مسلمان چوائيندڙن مان به جن اسلام جي ضروري عقيدن مان

(١) روح المعاني ص٢١۴ جلد١ جزءِ٣

ڪنهن هڪ جو انڪار ڪيو يا رسول الله صلي الله عليه وسلم جن ڪان منهن موڙي سندن گستاخي، بي ادبي ۽ تنقيص ڪيائين ته اهو اسلام جي خلاف ۽ ان ڪان خارج آهي. "قُلْ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ" (فرماءِ ته اسان الله تعاليٰ تي ايمان آندو آهي) محبوب مڪرم نور مجسم صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن جي پاڪ زبان سان ان عظيم حقيقت جو اعلان ڪرايو ٿو وڃي ته "الله جل شانه جو دين اسلام آهي سڀ انبياء ۽ مرسل سڳورا عليهم الصلواة والسلام ان جي دعوت ڏيندا رهيا ۽ مان به ان جوئي داعي ۽ مبلغ بڻجي آيو آهيان. ان جي ڪري اهي سيئي مقدس هستيون جن کي بارگاهه الهيءَ ڪان نبوت جو شرف بخشيو ويو ۽ انهن تي جيڪي ڪتاب نازل ڪيا ويا مان ۽ منهنجي مڃڻ وارا انهن سڀني جي صداقت کي تسليم ڪيون ٿا. اسان جو اهو طريقو نه آهي جو بعض کي مڃيون ۽ بعض کي نه هيءَ آهي محمدي دين جي اها وسعت ۽ همه گيري جيڪا حق ۽ سچ جي هر ڳالهه کي پنهنجي دامن ۾ رکيو ويٺي آهي جتي قومي، وطني، ۽ نسلي عصبيت جي ڪا گنجائش نه آهي. هن مضبوط،مستحڪم دين جو روح انهن سڀني تعصب وارن عنصرن ڪان پاڪ آهي. ان جو سڏيندڙ رحمة للعالمين آهي جيڪو سڀني جهانن کي فيض ڏيندڙ آهي.

وَمَنْ يَّبْتَغِ غَيْرَ الْاِسْلَامِ دِيْنًا فَلَنْ يُّقْبَلَ مِنْهُ ۚ وَهُوَ فِى الْاٰخِرَةِ

۽ جيڪو ڳولي ٿو اسلام ڪان سواءِ (ٻيو ڪو) دين پوءِ هرگز نه قبول ڪيو ويندو ان ڪان ۽ اهو آخرت ۾

مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ﴿٨٥﴾

نقصان وارن مان هوندو.

## تفسير

هن آيت ۾ ٻڌايو ويو آهي ته اسلام ڪانسواءِ ڪو به دين الله تعاليٰ وٽ قبول نه آهي. اسلام جي لفظي معنيٰ اطاعت ۽ فرمانبرداري آهي ۽ اصطلاح ۾ خاص ان دين جي اطاعت جو نالو اسلام آهي جيڪو الله تعاليٰ پنهنجن پيغمبرن عليهم الصلواة والسلام جي ذريعي ٻانهن جي هدايت لاءِ موڪليو آهي جنهن جا اصول سڀني شريعتن

۾ هڪ هئا، اسلام جو لفظ ڪڏهن ان عام مفهوم جي لاءِ ڪڏهن صرف خاتم الانبياءِ صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن جي آخري شريعت جي لاءِ استعمال ڪيو ويندو آهي. قرآن ڪريم ۾ اهي ٻئي اصطلاح موجود آهن، اڳين نبين عليهم السلام جو پاڻ ڪي مسلم ۽ پنهنجي امت کي امت مسلمه چوڻ ۽ اهڙيءَ طرح ان نالي جو خاتم النبيين صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن ۽ سندن امت جي لاءِ استعمال قرآني نصوص سان ثابت آهي جيئن الله تعاليٰ جو فرمان آهي "هُوَ سَمَّاكُمُ الْمُسْلِمِينَ مِنْ قَبْلُ وَفِي هَٰذَا"(١) (ان ئي اوهان جو نالو مسلمان رکيو آهي ۽ هن ۾) مقصد هيءُ آهي ته جيڪو به خداوندي دين ڪنهن نبي ۽ رسول عليه الصلواة والسلام جي ذريعي دنيا ۾ آيو ته ان کي اسلام سڏيو ويو آهي ۽ محمدي امت جي لاءِ ته خاص لقب طور به ذڪر ڪيل آهي ۽ هن آيت ۾ اسلام جو جيڪو به مفهوم ونو عام يا خاص ٻنهين جو نتيجو هڪڙو آهي ته حضور صلي الله عليه وسلم جن جي بعثت کان پوءِ صرف اهوئي دين اسلام چورائيندو جيڪو سندن ذريعي دنيا کي پهتو آهي اهوئي سيني جي لاءِ نجات جو مدار ۽ ڇوٽڪاري جو باعث آهي ان کان سواءِ جيترا به هن وقت دنيا تي دين هلي رهيا آهن سيني جو مثال کوٽن سکن وانگر آهي جيڪي نالي سان ته سکا سڏجن ٿا پر جڏهن بازار ۾ نه ٿا قبول ڪيا وڃن ته انهن جو سکو سڏجڻ نه سڏجڻ برابر آهي. هن آيت کولي کولي ٻڌايو آهي ته حضور صلى الله عليه وسلم جن جي آمد کان پوءِ ٻين دينن کي به سچو سمجهڻ، ڇوٽڪاري جو سبب مڃڻ ۽ ائين چوڻ ته ديرو حرم ڪعبه، ڪليسا سڀ برابر آهن ٻي ديني ۽ انتهائي گمراهي آهي. اڪبر بادشاه جهڙن اهي ڪوششون ڪري بدناميءَ کان سواءِ ڪجهه حاصل نه ڪيو. مگر افسوس ته اڄ ڪالهه به ان ذهن وارا ماڻهو موجود آهن الله تعاليٰ ان گمراه ڪندڙ سوچ کان بچائي.

ڪَيْفَ يَهْدِي اللَّهُ قَوْمًا كَفَرُوا بَعْدَ إِيمَانِهِمْ وَشَهِدُوا أَنَّ

ڪيئن هدايت ڪندو الله انهيءَ قوم کي جو ڪفر ڪيائون ايمان آڻڻ کان پوءِ ۽ شاهدي ڏنائون ته بيشڪ

الرَّسُولَ حَقٌّ وَجَاءَهُمُ الْبَيِّنَاتُ ۚ وَاللَّهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِمِينَ ﴿٨٦﴾

رسول سچو آهي ۽ آيون انهن وٽ کليل نشانيون ۽ الله نٿو هدايت ڪري ظالم قوم کي

(١) سورة حج ايت ٧٨

اُولٰٓئِکَ جَزَآؤُهُمْ اَنَّ عَلَيْهِمْ لَعْنَةَ اللّٰهِ وَالْمَلٰٓئِكَةِ وَالنَّاسِ

اهي سزا انهن جي (هيءَ آهي تہ) تحقيق انهن تي لعنت آهي الله جي ۽ ملائڪن جي ۽ سيني

اَجْمَعِيْنَ ﴿٨٧﴾ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا لَا يُخَفَّفُ عَنْهُمُ الْعَذَابُ وَلَا هُمْ

ماڻهن جي- هميشه رهندا ان ۾ نہ هلڪو ٿيندو انهن کان عذاب ۽ نہ مهلت ڏنا

يُنْظَرُوْنَ ﴿٨٨﴾ اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ وَاَصْلَحُوْا فَاِنَّ

ويندا مگر جن توبہ ڪئي ان کان پوءِ ۽ (پنهنجي) اصلاح ڪيائون پوءِ بيشڪ

اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿٨٩﴾

الله بخشيندڙ مهربان آهي.

## تفسير

جاڻڻ گهرجي تہ هي آيتون يهودين ۽ نصارن جي انهن عالمن جي باري ۾ نازل ٿيون جيڪي حضور عليہ الصلواة والسلام جن جي تشريف آوريءَ کان اڳ ۾ سندن آمد جون ماڻهن کي خوشخبريون ڏيندا هئا ۽ سندن طفيلي دعائون گهرندا هئا مگر جڏهن پاڻ تشريف فرما ٿيا تہ انهن صرف ان جي ڪري مخالفت ڪئي تہ پاڻ صلى الله عليه وسلم جن بني اسرائيلن جي بجاءِ بني اسماعيل مان آيا. (١) مقصد تہ جن بدنصيبن کي الله تعالىٰ جي نبي سان عداوت هوندي انهن کي توبہ جي توفيق نصيب نہ ٿيندي ها اهي گمراهہ جيڪي اڻ ڄاڻائيءَ جي ڪري حق جي قبول ڪرڻ جو انڪار ٿا ڪن تہ انهن کي هدايت نصيب ٿي سگهي ٿي، ڇو تہ جڏهن سندن اڳيان جهالت جو پردو هٽي ويو ۽ حقيقت جو روشن چهرو ڏسڻ ۾ آيو تہ اهي ان کي سچاڻي پرواني وانگر قربان ٿيڻ لڳندا پر جيڪي حق کي سڃاڻڻ ۽ پنهنجن مخصوص محفلن ۾ حضور صلى الله عليه وسلم جن جي رسالت کي تسليم ڪرڻ جي باوجود ٻاهر دشمنيءَ ۾ لڳا ٿا رهن انهن کي هدايت ٿيڻ جي توقع رکڻ اجائي آهي. اهي بدنصيب آهن جن

(١) روح المعاني ص٢١٧ جلد١ جزءِ ٣

فطرت سليمه کي بگاڙي ۽ پنهنجي خداداد صلاحيتن کي ميٽي ڇڏيو آهي. انهن تي قيامت ۾ الله جل شانه، ملائڪن ۽ماڻهن جي لعنت وسندي رهندي "إِلَّا الَّذِينَ تَابُوا" (مگر جن توبه ڪئي) کان پڌايو ويو آهي ته جيڪڏهن اهي ماڻهو انهن غلط حرڪتن کان تائب ٿي پنهنجي اصلاح ڪري، سچا ۽پڪا مومن ٿيندا ته الله بخشڻهار ۽مهربان کين بخشي ڇڏيندو.

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا بَعْدَ إِيمَانِهِمْ ثُمَّ ازْدَادُوا كُفْرًا لَّنْ تُقْبَلَ

بيشڪ جن ڪفر ڪيو ايمان آڻڻ کان پوءِ ان کان پوءِ ڪفر ۾ وڌيا هرگز نه قبول ڪئي ويندي

تَوْبَتُهُمْ وَأُولَٰئِكَ هُمُ الضَّالُّونَ ﴿٩٠﴾ إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا وَمَاتُوا

توبه انهن جي ۽ اهي ئي گمراهه آهن. بيشڪ جن ڪفر ڪيو ۽مري ويا ان حال ۾ جو

وَهُمْ كُفَّارٌ فَلَنْ يُقْبَلَ مِنْ أَحَدِهِمْ مِّلْءُ الْأَرْضِ ذَهَبًا وَلَوِ

اهي ڪافر آهن پوءِ هرگز نه قبول ڪيو ويندو کنهن هڪ جو به انهن مان زمين جي پرڻ جيترو سون جيتوڻيڪ

افْتَدَىٰ بِهِ ۗ أُولَٰئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ وَمَا لَهُمْ مِّنْ نَّاصِرِينَ ﴿٩١﴾ ع ٩ ١١ ١٧

فديو ڏنائين ان سان (جان ڇڏائڻ لاءِ) اهو انهن لاءِ دردناڪ عذاب آهي ۽ نه آهن انهن جا ڪي مددگار.

## تفسير

هنن آيتن ۾ وري به انهن جي لاءِ عذاب جو ذڪر ڪيو ويو آهي جيڪي ساري حياتي ڪفر ۽ گمراهيءَ جي رستي تي رهيا ۽ جيڪا مهلت کين موٽڻ ۽ اصلاح ڪرڻ جي لاءِ مليل هئي ان مان فائدو نه ورتائون تانجو موت جي هوائن سندن زندگيءَ جو ڏيئو وسائي ڇڏيو. انهن جي بخشش جي لاءِ ڪا به صورت ناهي. جيڪڏهن اهي پنهنجي جان ڇڏائڻ جي لاءِ ساري زمين کي پرڻ جيترو سون فديي طور ڏيڻ گهرن ته نه اهو قبول ڪيو ويندو ۽ نه انهن جي ڪو شفاعت ڪندو. ڇو ته شفاعت گنهگار مومن لاءِ آهي. ڪافر ۽ مشرڪ ته شفاعت جو لائق ۽ مستحق هوندو ئي نه آهي.

لَنۡ تَنَالُوا الۡبِرَّ حَتّٰى تُنۡفِقُوۡا مِمَّا تُحِبُّوۡنَ ۬ؕ وَمَا تُنۡفِقُوۡا مِنۡ

هرگز نہ پهچندؤ نيڪيءَ کي تانجو خرچ ڪيو (الله جي واٽ ۾) ان مان جو ٿا پياري رکو ۽ جيڪا بہ خرچ ٿا ڪيو ڪا

شَیۡءٍ فَاِنَّ اللّٰهَ بِهٖ عَلِیۡمٌ ﴿۹۲﴾

شيءِ پوءِ بيشڪ الله اها ڄاڻندڙ آهي.

## تفسير

هن آيت جي لفظ البر مان مراد ڀلائي آهي. دنيا ۾ تقويٰ ۽ اطاعت، ۽ آخرت ۾ جنت ۽ ان جون بيون نعمتون. المقصد تہ چڱي ڪم ۾ جيڪي بہ ڪپائيندئو ان جو اجر تہ ضرور ملندو، پر ڪامل خير جو جيڪو بلند درجو آهي اهو ان وقت حاصل ٿيندو جڏهن الله جل شانہ جي واٽ ۾ پنهنجون نهايت ئي محبوب ۽ مرغوب شيون خرچ ڪندئو. علامہ نسفيءَ لکيو آهي تہ والحاصل انہ لا وصول الي المطلوب الا باخراج المحبوب (١) يعني مطلوب کي تڏهن پهچبو جڏهن محبوب (مال) کي ٻاهر ڪڍبو. علامہ بيضاويءَ لکيو آهي تہ لن تبلغوا حقيقة البر الذي هو ڪمال الخير (٢) يعني پنهنجي محبوب ۽ پيارين شين کي الله جل جلالہ جي واٽ ۾ خرچ ڪرڻ کان سواءِ نيڪيءَ جي حقيقت تائين (جيڪا ڀلائيءَ ۽ احسان جي ڪمال جو درجو آهي) رسائي حاصل نہ ٿي سگهندي. "البر" مان مراد الله تعاليٰ جي رضا ۽ رحمت جو مستحق ٿيڻ آهي. پيارين شين ۾ مال، متاع، جسم، جان، جاه ۽ منصب سڀ داخل آهن انهن مان جيڪا بہ شيءِ وڏ ۾ وڏ پياري هجي اها قربان ڪرڻ سان اهو بلند مقام ملندو آهي.

بخاري ۽ مسلم ۾ حضرت انس رضي الله عنہ کان روايت آهي تہ جڏهن هيءَ آيت نازل ٿي تہ حضرت ابو طلحہ رضي الله عنہ حضور صلى الله تعاليٰ عليہ وسلم جن جي خدمت اقدس ۾ حاضر ٿي عرض ڪيو تہ يا رسول الله! مون کي سيني کان وڌيڪ محبوب بيرحاءِ نالي باغ آهي اهو رب جي رضا لاءِ جتي مناسب سمجهو اتي خرچ ڪيو. حضور صلى الله عليہ وسلم جن وڏيءَ خوشيءَ جو اظهار ڪندي فرمايو تہ"

(١) المدارڪ ص١٦٩ ج١ (٢) بيضاوي ص٨١

پنهنجن ويجهن مٽن کي خيرات ۾ ڏئي ڇڏ" پوءِ ابو طلحه اهو باغ پنهنجن مائٽن ۾ ورهائي ڇڏيو (١) "فَاِنَّ اللّٰهَ بِهٖ عَلِيۡمٌ" هنن لفظن سان نيت جي مخلص هجڻ ڏي متوجهه ڪيو ويو آهي. يعني الله تعالىٰ اوهان جي نيتن کي ڄاڻي ٿو. ڪو به عمل رياءِ جي نيت سان نه ڪيو جيڪڏهن ڏيکاءَ لاءِ ڪو به عمل ڪندئو ته اهو برباد ٿي ويندو.

## سوال

هن آيت ۾ الله تعالىٰ جي واٽ ۾ جنهن خرچ ڪرڻ جي ترغيب ڏياريل آهي ان مان مراد فرضي ۽ وجوبي صدقا آهن يا نفلي.

## جواب

بعضي مفسرن وٽ ان مان مراد وجوبي صدقا زڪواة وغيره آهن ۽ ڪن وٽ نفلي صدقا. مگر جمهور محققن وٽ ان جي مفهوم عام آهي جيڪا نفلي ۽وجوبي ٻنهي صدقن کي شامل آهي. اصحابن سڳورن رضي الله عنهم جون قربانيون ان جو واضح دليل آهن. آيت جو صحيح مفهوم هيءُ آهي ته الله تعالىٰ جي واٽ ۾ جيڪو صدقو ڪيو وڃي پوءِ اهو فرضي هجي يا نفلي ان جو مڪمل ثواب تڏهن ملندو جڏهن پنهنجي پياري ۽محبوب شيءِ ڏني ويندي.

## فائدو

آيت جي لفظ "مِمَّا" ۾ من تبعيض جي آڻي ٻڌايو ويو آهي ته سڀئي پياريون شيون الله جي واٽ ۾ خرچ ڪرڻ ضروري نه آهن بلڪ مقصد هيءُ آهي ته سڀني شين مان ڪجهه خرچ ڪيو. حضرت امام حسن بصريءَ جو فرمان آهي ته جيڪا به شيءِ انسان الله جي واٽ ۾ اخلاص سان خرچ ڪري ٿو ڪٽي ڪجور جو هڪ داڻو هجي ان سان به ان وڏي ثواب جو حقدار ٿيندو آهي جنهن جو هن آيت ۾ وعدو ڪيل آهي.

## فائدو

پياري ۽محبوب شيءِ خرچ ڪرڻ صرف ان جو نالو نه آهي ته ڪا وڏي قيمت واري شيءِ خرچ ڪئي وڃي. بلڪ جا به شيءِ جنهن جي پياري آهي ڀلي ڪيتري به ٿوري ۽ گهٽ قيمت واري هجي ان جي خرچ ڪرڻ سان، اهو "اَلۡبِرَّ" (نيڪيءَ) جو

(١) روح البيان ص٦٣ جلد٢ جزءِ ٤ فتح القدير ص ٣٦٠ جلد١

مستحق ٿيندو.

# سوال

هن آيت جي ظاهر مان ائين سمجهہ ۾ اچي ٿو تہ اهو ڪمال انهن مالدارن کي ملندو جيڪي پنهنجون محبوب شيون الله تعاليٰ جي واٽ ۾ خرچ ڪندا پلا مسڪين ۽ غريب اها نيڪي حاصل ڪري نہ سگهندا ڇا؟

# جواب

غور ڪجي ٿو تہ ائين ناهي بلڪ جيڪي، مسڪين ۽ فقراءِ پنهنجي محبوب ننڊ، قيمتي وقت الله تعاليٰ جي رضا ،عبادت، تقويٰ ۽ زهد ۾ خرچ ڪن ٿا اهي بہ ان نيڪيءَ جي ڪمال سان محظوظ ٿيندا محروم نہ رهندا (١)

# فائدو

مال جي محبوب هجڻ مان مراد آهي تہ پنهنجيءَ ضرورت ۽ محتاجيءَ جي باوجود الله جي واٽ ۾ خرچ ڪري. جيئن قرآن پاڪ ۾ بيءَ جاءِ تي آهي. وَيُطْعِمُوْنَ الطَّعَامَ عَلٰى حُبِّهٖ مِسْكِيْنًا (٢) الاية (۽ پنهنجي ضرورت هوندي مسڪين کي کاڌو کارائين ٿا ٽينءَ جاءِ تي آهي "وَيُؤْثِرُوْنَ عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ وَلَوْ كَانَ بِهِمْ خَصَاصَةٌ (٣) يعني ٻين کي پنهنجي پاڻ کان وڌيڪ اختيار ٿا ڪن جيتوڻيڪ کين بہ محتاجي آهي.

كُلُّ الطَّعَامِ كَانَ حِلًّا لِّبَنِىْٓ اِسْرَآءِيْلَ اِلَّا مَا حَرَّمَ اِسْرَآءِيْلُ

سڀ کاڌي جون شيون هيون حلال بني اسرائيل جي لاءِ مگر اهو جو حرام ڪيو اسرائيل

عَلٰى نَفْسِهٖ مِنْ قَبْلِ اَنْ تُنَزَّلَ التَّوْرٰىةُ ۭ قُلْ فَاْتُوْا بِالتَّوْرٰىةِ

پنهنجو پاڻتي ان کان اڳي جو نازل ڪيو ويو تورات. فرماءِ پوءِ آڻيو تورات پوءِ

فَاتْلُوْهَآ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ﴿٩٣﴾ فَمَنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ

پڙهو اهو جيڪڏهن آهيو سچا. پوءِ جنهن بهتان هنيو الله تي ڪوڙو

(١) روح المعاني ص٢ جلد٢ جزءِ ٤ (٢) سورة الدهر آيت٨
(٣) سورة الحشر آيت ٩

مِنْۢ بَعْدِ ذَالِكَ فَأُولَٰٓئِكَ هُمُ الظَّالِمُوْنَ ﴿٩٤﴾ قُلْ صَدَقَ اللّٰهُ

ان کان پوءِ اهي ظالم آهن چؤ تہ سچ فرمايو الله پوءِ

فَاتَّبِعُوْا مِلَّةَ اِبْرَاهِيْمَ حَنِيْفًا ؕ وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ﴿٩٥﴾

تابعداري ڪيو ابراهيم جي ملت جي حق تي هلندڙ باطل کان منهن موڙيندڙ ۽ نہ هو مشرڪن مان.



## تفسير

مٿين آيتن ۾ اهل ڪتاب سان بحث هلندو پيو اچي ڪٿي يهودين سان، ڪٿي نصارن سان تہ ڪٿي ٻنهين سان- هڪ بحث هيءَ آهي تہ جڏهن حضور صلي الله عليه وسلم جن بيان فرمايو تہ مان شرعي اصولن سيني ۽ فروعي ڳالهين گهڻين ۾ ابراهيمي طريقي تي آهيان تہ يهودين اعتراض ڪندي چيو تہ اوهان اٺ جو گوشت کائو ٿا ۽ ڏاچين جو کير پيئو ٿا حالانڪ حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام تي تہ اهي ٻئي حرام هئا. پوءِ ڪيئن ٿا چئو تہ ان جي طريقي تي آهيان؟ ” سيدنا رسول الله صلي الله عليه وسلم جن انهن کي فرمايو تہ ”نہ“ اهي ٻئي گوشت ۽ کير تہ حضرت ابراهيم (عليه الصلواة والسلام) تي حلال هئا. “ مگر يهودين ضد ڪندي چيو تہ اسين جيڪي بہ شيون حرام ٿا سمجهون اهي سيئي حضرت نوح ۽ حضرت ابراهيم عليهما السلام جي وقت کان حرام آهن تڏهن الله تعاليٰ مٿين آيت نازل ڪري، يهودين جي ڳالهہ کي غلط ثابت ڪيو، ۽ارشاد فرمايو تہ حضرت يعقوب عليه الصلواة والسلام جيڪي شيون (اٺ جو گوشت وغيره) پاڻ تي حرام ڪيون هيون سي خاص وجهہ جي ڪري حرام ڪيون هيون باقي ان کان سواءِ سڀ شيون بني اسرائيل جي لاءِ حلال هيون.

## سوال

حضرت يعقوب عليه الصلواة والسلام اٺ جو گوشت وغيره پاڻ تي ڇو حرام ڪيو هو؟

## جواب

اصل قصو هيءُ آهي تہ حضرت يعقوب عليه الصلواة والسلام کي عرق

النساءِ جو عارضو ٿي پيو هو ۽ پاڻ باس باسي هيائين ته جيڪڏهن الله تعالىٰ مون کي شفا ڏني ته سڀني کاڌن ۾ جيڪو کاڌو مون کي وڌيڪ پيارو ۽ پسند آهي اهو کائڻ ڇڏي ڏيندس جڏهن کيس شفا حاصل ٿي ته سڀني ۾ وڌيڪ سندس پسند اٺ جو گوشت هو اهو کائڻ ڇڏي ڏنائين (١) پر يهودين جڏهن اها ڳالهه تسليم نه ڪئي ۽ چيائون ته توراة ۾ لکيل آهي ته اٺ جو گوشت حضرت نوح ۽ حضرت ابراهيم عليهما السلام جي وقت کان وٺي حرام آهي ته الله تعالىٰ انهن کي چئلينج فرمايو "قُلْ فَأْتُوا بِالتَّوْرَاةِ فَاتْلُوهَا" يعني فرماءِ ته" توراة کڻي اچي پڙهو" ته سچ ۽ ڪوڙ ظاهر ٿي پوي ۽ اوهان کي ڏيکارجي ته اهوگوشت ابراهيمي دين ۾ حلال هو. پر انهن پنهنجي خواريءَ کي لڪائڻ لاءِ توراة نه آندو.

## فائدو

هن مان ثابت ٿيو ته رسول الله صلي الله عليه وسلم جن کي اڳين شريعتن، توراة، انجيل ۽ زبور جو علم به لدني طريقي سان عطا ٿيل هو.

## فائدو

اهو به ثابت ٿيو ته اڳين شريعتن ۾ حلال شين کي پاڻ تي حرام ڪرڻ جي باس به هوندي هئي مگر اسان جي محمدي شريعت ۾ حلال کي حرام نٿو ڪري سگهجي. پلا جيڪڏهن ڪو ماڻهو اهڙو قسم کڻي ويهي ته مان حلال شيءِ استعمال نه ڪندس ته قسم ٽوڙي ان جي ڪفارة ادا ڪري پر حلال شيءِ حلال ئي رهندي حرام نه ٿيندي.

## فائدو

"فَمَنِ افْتَرَىٰ عَلَى اللهِ الْكَذِبَ" (جنهن الله تعالىٰ تي ڪوڙ هنيو) هنن لفظن مان ثابت ٿيو ته الله جي نبي عليه الصلواة والسلام تي ڪوڙ هڻڻ حقيقت ۾ الله تعالىٰ تي ڪوڙ هڻڻ آهي، ڇو ته يهودين ته حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام تي ڪوڙ هنيو هو ته ان وٽ اٺ جو گوشت حرام هو پر الله جل شانه ٻڌايو ته انهن اهو بهتان الله تي هنيو. اڳتي ارشاد آهي ته "ملت ابراهيميءَ جي تابعداري ڪيو" محمدي دين جي اتباع ئي ابراهيمي ملت آهي. محمدي دين کان سواءِ ڪو به ڇوٽڪاري جو رستو ناهي جيئن حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام مشرڪن مان نه هو تيئن سچا مومن به

(١) ترمذي تفسير سورة الرعد ص

مشركن ۽ الله جل شانهٖ حبيب عليه الصلواة والسلام ۽ اصحابن، اهلبيتن ۽ امت جي صالحن ولين جي بي ادبن مان نہ هوندا. انهن بي ادبن کان هر لحاظ سان بيزار ۽ پري هوندا.

إِنَّ أَوَّلَ بَيْتٍ وُضِعَ لِلنَّاسِ لَلَّذِي بِبَكَّةَ مُبَارَكًا وَهُدًى

بيشڪ پهريون گهر جو رکيو ويو ماڻهن جي (عبادت) لاءِ اهوئي آهي جو مڪي ۾ آهي برڪت پريو ۽ هدايت آهي

لِّلْعَالَمِينَ ﴿٩٦﴾ فِيهِ آيَاتٌ بَيِّنَاتٌ مَّقَامُ إِبْرَاهِيمَ ۖ وَمَن دَخَلَهُ كَانَ

جهانن جي لاءِ، ان ۾ نشانيون چٽيون آهن (انهن مان هڪ) مقام ابراهيم آهي ۽ جيڪو داخل ٿيو ان ۾

آمِنًا ۗ وَلِلَّهِ عَلَى النَّاسِ حِجُّ الْبَيْتِ مَنِ اسْتَطَاعَ إِلَيْهِ سَبِيلًا ۚ

هوندو امن وارو ۽ الله جي لاءِ (فرض) آهي ماڻهن تي حج بيت (الله) جو جيڪو سگهه رکي ٿو ان ڏانهن واٽ وڃڻ جي

وَمَن كَفَرَ فَإِنَّ اللَّهَ غَنِيٌّ عَنِ الْعَالَمِينَ ﴿٩٧﴾

۽ جنهن انڪار ڪيو پوءِ بيشڪ الله بي نياز آهي جهانن کان.

## تفسير

"إِن اَول بَيتٍ" الايه هن آيت ۾ ساري دنيا جي جاين تانجو سيني مسجدن جي مقابلي ۾ ڪعبي جي شرف ۽ شاندار هجڻ جو ذڪر آهي ۽ اهو شرف ۽ پلاڻي ڪيترن وجهن سان آهي.

١- پهريون تہ ڪعبه شريف دنيا ۾ ٻين سيني جاين ۽ عبادت خانن کان اول عبادت جي جاءِ آهي. ان کان اول دنيا تي نہ ڪو عبادت خانو هو نہ ڪنهن جو دولت خانو حضرت عبدالله بن عمر، مجاهد، قتادة، سدي ۽ ڪيترن ٻين اصحابن ۽ تابعن رضي الله تعاليٰ عنهم جو بہ اهو چوڻ آهي (١) صحيح مسلم شريف حضرت ابو ذر رضي الله تعاليٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ مون رسول الله صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن کان پڇيو تہ زمين تي پهرين مسجد ڪهڙي رکي وئي؟ فرمايائون تہ "مسجد حرام" مون عرض ڪيو تہ ان کان پوءِ؟ فرمايائون تہ "مسجد اقصيٰ" عرض ڪيم تہ انهن

(١) القرطبي ص١٣٧ جلد٤

ٻنهي جي وچ ۾ ڪيترو وقت گذريو هو؟ فرمايائون ته "چاليهه سال" ان ڪان پوءِ ساري زمين تنهنجي لاءِ مسجد آهي جتي به نماز جو وقت پهچئي ته نماز پڙهه" سيدنا علي المرتضيٰ رضي الله تعاليٰ عنه جو فرمان آهي ته ڪعبه ڪان اڳ ۾ دنيا تي ٻيا گهر به هئا پر عبادت جي لاءِ پهريون گهر اهو رکيو ويو. مجاهد ڪان روايت آهي ته مسلمانن ۽ يهودين پاڻ ۾ هڪ ٻئي جي مٿان فخر ڪندي گفتگو ڪئي، يهودين چيو ته بيت المقدس نبين عليهم الصلواة والسلام جي هجرت جي جاءِ ۽ پاڪ سر زمين تي آهي ان جي ڪري ڪعبه شريف ڪان پلو آهي، مسلمانن چيو ته ڪعبه شريف پلو آهي. تڏهن الله تعاليٰ هيءَ آيت "إن اول بيتٍ" نازل ڪري ٻڌايو ته ڪعبه شريف دنيا جي سڀني عبادت گاهن ڪان اول آهي ۽ اهوئي بهتر آهي. قرآن پاڪ جي مفسر "مجاهد تابعي" فرمايو آهي ته بيت الله واري جاءِ زمين جي ٻين سڀني حصن ڪان ٻه هزار سال اڳ ۾ پيدا ڪئي وئي هئي ۽ ان جا بنياد هيٺئن ستينءَ زمين ۾ آهن. (١)

بيت المقدس جي باري ۾ بائيبل جي شاهدي موجود آهي ته ان کي حضرت سليمان عليه السلام حضرت موسيٰ عليه السلام ڪان ساڍا چار سؤ ورهه پوءِ تعمير ڪرايو هو، ۽ حضرت سليمان عليه السلام جي ئي دور ۾ اهل توحيد جو قبلو قرار ڏنو ويو ان جي برعڪس ساري عرب دنيا جي متواتر ۽ متفق عليه روايتن مان ثابت آهي ته ڪعبه شريف جي تعمير حضرت ابراهيم عليه السلام ڪئي ۽ اهو حضرت موسيٰ عليه السلام ڪان تقريبًا هزار ورهه اڳ ۾ هو. ان جي ڪري ڪعبه شريف جي اوليت غير مبهم ۽ غير مشڪوڪ آهي. بيهقيءَ شعب الايمان ۾ ۽ ازرقيءَ وهب بن منبه ڪان روايت آندي آهي ته جڏهن حضرت آدم عليه السلام بهشت مان نڪري زمين تي آيو ته اڪيلائي محسوس ڪندي الله تعاليٰ جي دربار ۾ دعا گهري هيائين ته "يا الله! مون کي ڪا عبادت ڪرڻ جي جاءِ ناهي ڏي" پوءِ الله تعاليٰ جبرئيل عليه السلام کي موڪليو جنهن بيت الله واريءَ ان جاءِ جي نشاندهي ڪئي ۽ حضرت آدم عليه السلام پنهنجي پاڪ هٿن سان بيت الله جو بنياد ناهي ان تي هڪ نوراني قبو رکيو جيڪو بيت المعمور کي اهڙو سڌو هو جو بالفرض جيڪڏهن بيت المعمور لهي پوي ته ان جي مٿان اچي بيهي پوءِ حضرت آدم ۽ ان جي اولاد جي عبادت ڪرڻ لاءِ اهوئي قبلو رهيو تانجو جڏهن حضرت نوح عليه الصلواة والسلام وارو طوفان آيو ته ڪعبه شريف جي

(١) القرطبي ص١٣٧ جلد٤

تعمير وارو سڀ سامان لڙهي ويو. طوفان جي پاڻيءَ لهڻ کان پوءِ بيت الله شريف واري جاءِ هڪ ڳاڙهي دڙي جي صورت ۾ رهي، تانجو جڏهن اتي سيدنا ابراهيم، سيدنا اسماعيل ۽ سيده هاجره سلام الله عليهما وعليها تشريف فرما ٿيا ته اهو زمين جو ٽڪرو وڏيڪ منور ۽ بابرڪت بڻيو. سيدنا حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جن جا پيارا هٿ مبارڪ هيءَ دعا گهرندي مٿي ٿيا: "ربنا اني اسكنت من ذريتي بواد غير زرع عند بيتك المحرم" (١) اي اسان جا پالڻهار! مون پنهنجو اولاد تنهنجي عزت واري گهر وٽ هڪ غيرآباد واديءَ ۾ رهايو آهي- ان کان پوءِ اهي ٽئي پياريون ۽ شان واريون هستيون بيت الله شريف جي تعمير ۾ مصروف رهيون ۽ ٽنهي (سيدنا ابراهيم، سيدنا اسماعيل عليهما الصلواة والسلام ۽ سيده هاجره عليها السلام) جا يادگار قائم رهيا ۽ بيت الله شريف جي تعمير کان پوءِ سيدنا ابراهيم عليه الصلواة والسلام الله جل جلاله جي حڪم سان ارواح کي حج جو اعلان ڪري ٻڌايو ۽ سندس اعلان تي جيءُ چوندڙن نيڪ بخت ۽ سعيد روحن کي ان بيت جي ديدار جي دولت نصيب ٿي.

# مڪه مڪرمه جو مختصر تاريخي احوال

اڄ کان تقريباً چار هزار (۴۰۰۰) سال پهريان سيدنا حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام ۽ سيدنا حضرت اسماعيل عليه الصلواة والسلام جن مڪي مڪرمه جي پاڪ ۽ پياري شهر جو بيت الله شريف جي تعمير سان گڏ بنياد رکيو هو. اتي ان وقت جا موجود ماڻهو پهريان صرف تنبن ۾ رهندا هئا ۽ ان طريقي سان حياتي گذارڻ تي راضي ۽ مطمئن هوندا هئا، پر جڏهن ڪائنات جي سردار، يتيمن جي يار، حضور، پرنور، شافع يوم النشور عليه افضل الصلواة واكمل التحيات

(١) سورة ابراهيم آيت ٣٧

جن جي ڏاڏن مان قصي بن ڪلاب شام کان آيو تہ پوءِ مڪي مڪرمہ ۾ جايون ٺهڻ شروع ٿيون ۽ شهر ترقي ڪرڻ شروع ڪئي، مڪہ مڪرمہ وادي ابراهيم عليه الصلواة والسلام ۾ سمنڊ جي سطح کان تقريبًا ساڍا ٽي سؤ فٽ (٣٥٠) جي بلنديءَ تي سمنڊ جي اوپر واري ڪناري کان انيتاليهن (٤٨) ميلن تي واقع آهي.هن وقت تقريبًا اٺن (٨) لکن ماڻهن جي آدمشماري آهي.هيءُ شهر مبارڪ اوپر کان اولهہ واري طرف تقريبا چار پنج ميل ۽ويڪر ۾ اٽڪل ہ ٽي ميل آهي، ڏکڻ ۽اتر کان ٻن پهاڙن جي وچ ۾ آهي جن ڪي اخشبان سڏيندا آهن ان جي ڪري ان ۾ گرمي زياده ۽ سردي گهٽ هوندي آهي.

## مڪه مڪرمه جا نالا

علماءِ تفسير مڪہ مڪرمہ جا نالا هيءُ بيان ڪيا آهن ١- مڪہ ٢- بڪه ٣- البلد الامين ٤- المامون ٥- ام رحم ٦- ام القريٰ ٧- الصلاح ٨- القادس ٩- المقدسه ١٠- الناسة ١١- الباسة ١٢- الخاطة ١٣- الراس ١٤- ڪوتاءِ ١٥- البينة (١)

## بيت الله جا نالا

الله تعاليٰ جي هن پياري گهر، مومنن جي مرڪز جا پيارا نالا هيءُ آهن.

١- الڪعبة (بلند جاءِ) جيئن الله تعاليٰ فرمايو آهي " جَعَلَ اللّٰهُ الْكَعْبَةَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ (٢) ان جو سبب هيءُ آهي جو اسم مسميٰ جي شرف ۽ بلنديءَ تي دلالت ڪندڙ آهي.هيءُ گهر ہ دنيا جي ٻين سڀني گهرن کان بلند، بالا ۽شاندار آهي ان جي ڪري ڪعبة سڏيو ويو آهي.

٢- اَلْبَيْتُ الْعَتِيْقُ- آڳاٽو گهر- جيئن الله تعاليٰ فرمايو آهي "وَلْيَطَّوَّفُوْا بِالْبَيْتِ الْعَتِيْقِ (٣) هيءُ گهر ہ سڀني گهرن کان اڳ ۾ بلڪ بعض جي قول مطابق آسمانن ۽ زمينن کان ہ اڳ ۾ آهي(٤)

مُبَارَكًا- برڪت وارو، هن شاندار گهر جون برڪتون ڪهڙيون بيان ڪجن هن ۾ هڪ نماز پڙهہ تہ هڪ لک (١٠٠٠٠٠) نماز جو ثواب ملي ٿو. جيئن ابن ماجه حضرت انس بن مالڪ رضي الله تعاليٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليه

(١) تفسير ابن ڪثير ص٣٨٣ جلد١ (٢)سورة المائده آيت ٩٧
(٣)سورة الحج آيت ٢٩ (٤)تفسير ڪبير ص١٤٨ جزءُ ٨

وسلم جن فرمايو آهي تہ " صَلٰوةُ الرَّجُلِ فِیْ بَیْتِہٖ بِصَلٰوةٍ وَصَلٰوتُہٗ فِیْ مَسْجِدِ الْقَبَائِلِ بِخَمْسٍ وَّعِشْرِیْنَ صَلٰوةً وَصَلٰوتُہٗ فِی الْمَسْجِدِ الَّذِیْ یُجْمَعُ فِیْہِ بِخَمْسِ مِأَةِ صَلٰوةٍ وَصَلٰوتُہٗ فِی الْمَسْجِدِ الْاَقْصٰی بِاَلْفِ صَلٰوةٍ وَصَلٰوتُہٗ فِیْ مَسْجِدِیْ بِخَمْسِیْنَ اَلْفَ صَلٰوةٍ وَصَلٰوتُہٗ فِی الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ بِمِأَئَةِ اَلْفِ صَلٰوةٍ (١) يعني پنهنجي گهر ۾ نماز پڙهندڙ کي هڪ نماز جو ۽ قبيلي جي مسجد ۾پنجويهن(٢٥) نمازن جو ۽ جمعي نماز ادا ڪرڻ واريءَ مسجد ۾ پنج سؤ (٥٠٠) نمازن جو ۽ مسجد اقصيٰ (بيت المقدس واريءَ مسجد) ۾هڪ هزار (١٠٠٠) نمازن جو ۽ منهنجي مسجد ۾پنجاهہ هزار ٥٠٠٠٠) نمازن جو ۽مسجد حرام ۾هڪ لک (١٠٠٠٠٠) نمازن جو ثواب آهي ۽علامہ ابن جوزيءَ ڪتاب فضائل مکہ ۾عدي بن حمراءِ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليه وسلم جن مکي جي بازار ۾ بيهي فرمايو "وَاللهِ اِنَّکِ لَخَیْرُ اَرْضِ اللهِ وَاَحَبُّ اَرْضِ اللهِ عَزَّ وَجَلَّ وَلَوْلَا اَنِّیْ اُخْرِجْتُ مِنْکِ مَاخَرَجْتُ"(٢) يعني الله جو قسم آهي تہ تون الله جي پلي زمين ۾الله وٽ وڌيڪ پياري زمين آهين ۽ جيڪڏهن مون کي تو مان ڪڍيو نہ وڃي ها تہ مان پاڻهي نہ نڪران ها.

"وَهُدًی لِّلْعَالَمِیْنَ" (۽ماڻهن لاءِ هدايت) چوتہ اهو سندن قبلو آهي ۽ ان ۾ الله تعالى جي قدرت جون عجيب نشانيون آهن جيڪي الله جل جلالہ تي ايمان آڻڻ جي لاءِ هدايت ڪنديون آهن "فِیْهِ آیَاتٌ بَیِّنٰتٌ" ان ۾ چٽيون نشانيون آهن.

هتي ڪعبہ شريف جون ٽي (٣) خاص فضيلتون بيان ڪيل آهن١- هڪ تہ ان ۾ قدرتي نشانيون آهن جن مان هڪ مقام ابراهيم آهي ٢- ٻيو تہ جيڪو ان ۾ داخل ٿيندو ان لاءِ امن آهي ۽ اهو محفوظ رهندو. ان کي ڪو بہ قتل ڪري نہ سگهندو. ٣- ٽيون تہ جنهن مسلمان کي ان تائين پهچڻ جي وسعت ۽ طاقت آهي ان تي ان جو حج ڪرڻ فرض آهي. پهرين ڳالهہ ( تہ ان ۾ قدرتي نشانيون آهن) جي وضاحت هيئن آهي تہ جڏهن کان بيت الله قائم آهي تہ مکي وارن کي مخالفن جي حملي کان محفوظ رکيو ويو آهي. ابرهہ ڪافر هاٿين جو لشڪر وٺي چڙهائي ڪئي تہ الله جل شانه،پنهنجي طرفان ابابيل پکي موڪلي انکي تباهہ ڪيو. جيئن سورة الفيل ۾ تفصيل سان بيان ٿيل آهي. بيت الله جي حرم جي حدن ۾ داخل ٿيڻ وارو انسان تہ محفوظ آهي پر انهن حدن ۾ رهڻ وارن جانورن کي بہ محفوظ هجڻ جو احساس آهي، بيت الله شريف ۾ جنهن پاسي بارش وسندي آهي تہ دنيا جو اهو پاسو ان سال وڌيڪ آباد ٿيندو آهي. حج جي موقعي تي جمرات (ٽنين) وٽ هر هڪ حاجي ست ست پٿريون

(١) تفسير مظهري ص٨٩ ج٢ (٢) تفسير مظهري ص٩٠ جلد٢

روزانو هٽي ٿو ۽ هر سال لکين حاجي گڏ ٿين ٿا جيڪڏهن اهي سيئي پٿريون اتي گڏ ٿيون پيون هجن ته وڏا ڍير ٿي وڃن ۽ ٿن سالن ۾ هڪ جبل بنجي وڃي پر مشاهدو ٻڌائي ٿو ته ٽنهين ڏينهن جي گذرڻ کان پوءِ به اتي پٿرين جو کو وڏو ڍير نه هوندو آهي. بس ٿوريون ٽڙيل پکڙيل نظر اينديون آهن. جنهن جو سبب حديث شريف ۾ حضور صلي الله عليه وسلم جن هيءُ بيان فرمايو آهي ته"اهي پٿريون ملائڪ کڻي وينداآهن ۽ صرف اهڙن ماڻهن جون پٿريون رهجي وڃن ٿيون جن جو حج ڪنهن وجه جي ڪري قبول ناهي" ۽ اهوئي سبب آهي جو اتي اتاهين پٿريون کڻي هٽڻ سٺو ناهي، ڇو ته اهي مقبول نه آهن. حضور صلي الله عليه وسلم جن جي ان ارشاد جي تصديق هر ڏسڻ واري اک ڪري رهي آهي.حالانڪ اتاهين پٿرين کڻڻ جو کو خاص اهتمام نه حکومت جي طرفان آهي نه عوام جي طرفان.

"مَقَامُ اِبْرَاهِيْمَ" انهن نشانين مان هڪ وڏي نشاني مقام ابراهيم آهي جنهن کي قرآن ڪريم مستقل طور جدا ذڪر ڪيو آهي. مقام ابراهيم اهو پٿر آهي جنهن تي بيهي حضرت ابراهيم عليه الصلوٰاة والسلام بيت الله جي تعمير ڪئي هئي، ۽ بعضي روايتن ۾ آهي ته بيت الله شريف جي تعمير سان گڏ اهو پٿر مٿي ٿيڻ وقت پاڻهي بلند ٿيندو ٿي ويو ۽ هيٺ ٿيڻ جي وقت پاڻهي هيٺ ٿيندو ٿي ويو. ان پٿر تي حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جي پيرن مبارڪن جو نشان اڄ تائين موجود آهي. ظاهر آهي ته هڪ بي حس ۽ بي شعور پٿر ۾ هيءُ پرورڻ ته ضرورت جي موافق هيٺ يا مٿي ٿيندو وڃي ۽ هيءُ تاثر ته ميڻ وانگر نرم ٿي پيرن مبارڪن جو پورو نقش پاڻ ۾ ڇڪي رکي اهي سڀ قدرت واري جي قدرت جون نشانيون آهن جيڪي بيت الله شريف جي پلائيءَ سان واسطو رکن ٿيون. اهو پٿر بيت الله جي هيٺان دروازي جي سامهون هو جڏهن قرآن ڪريم جو هيءُ حڪم نازل ٿيو "وَاتَّخِذُوْا مِنْ مَّقَامِ اِبْرَاهِيْمَ مُصَلًّى" ابراهيم جي بيهڻ واري پٿر وٽ نماز جي جاءِ بنايو ته طواف ڪندڙن جي آسانيءَ خاطر ان کي اتاهين کڻي بيت الله شريف جي سامهون ڪجهه مفاصلي تي ان وقت جي طواف ڪرڻ واري جاءِ کان ٻاهر زمزم شريف جي کوهه جي ويجهو نهايت محفوظ رکيو ويو آهي. بيت الله جي طواف کانپوءِ ٻه رڪعتون واجب الطواف ان کان پويان پڙهيون وينديون آهن.ٻي ڳالهه ته ان ۾ داخل ٿيڻ وارو امن ۾ ۽ محفوظ رهندو آهي. اهو امن ۾ رهڻ ٻه قسم آهي ١- هڪ تشريعي يعني الله تعالىٰ جي طرفان ماڻهن کي هيءُ حڪم آهي ته جيڪو شخص ان ۾ داخل ٿئي ان کي نه ستايو نه قتل ڪيو،

جيڪڏهن ڪو شخص ڪنهن کي قتل ڪري يا ٻيو ڪو گناهه ڪري حرم ۾ هليو وڃي ته ان کي به ان حرم ۾ سزا نه ڏيو بلڪ ان کي اتاهين نڪرڻ تي مجبور ڪرڻ جي ڪوشش ڪجي ۽ جڏهن حرم کان ٻاهر نڪري ته پوءِ ان کي سزا ڏني وڃي.

ٻيو تڪويني: يعني الله تعالیٰ هر قوم ۽ هر ملت وارن جي دلين ۾ بيت الله جي تعليم ۽ عزت پيدا ڪئي آهي ۽ اهي سڀئي عمومًا هزارن اختلافن جي باوجود ان عقيدي تي متفق آهن ته ان ۾ داخل هجڻ وارو جيتوڻيڪ مجرم يا دشمن هجي پر حرم جي احترام واري تقاضائي ذهن ۾ رکندي ان کي ڪجهه به نه ڪيو وڃي ۽ حرم کي عام جهيڙن کان پاڪ ۽ محفوظ رکيو وڃي. جاهليت جي دور وارا عرب ۽ انهن جا مختلف قبائل ڪٽي ڪيترن ئي عملي خرابين ۾ مبتلا هوندا هئا، پر بيت الله ۽ حرم شريف جي عظمت تان سڀئي جان قربان ڪندا هئا.

مڪي پاڪ کي فتح ڪرڻ لاءِ حضور صلی الله عليه وسلم جن کي حرم ۾ جنگ ڪرڻ جي لاءِ ٿورڙو وقت اجازت ملي هئي ۽ پوءِ هميشه لاءِ منع ڪئي وئي(١) ٽين خصوصيت هيءَ بيان ڪئي وئي آهي ته الله تعالیٰ ان گهر جو حج طاقت واري ماڻهوءَ تي فرض ڪيو آهي.

حج جي لغوي معنیٰ ارادو ڪرڻ ۽ شريعت ۾ احرام ٻڌي ڪعبي جي طواف، عرفات جي بيهڻ وغيره جو نالو حج آهي، ” وَمَنْ كَفَرَ فَاِنَّ اللّٰهَ غَنِيٌّ عَنِ الْعَالَمِيْنَ “ ۽ جنهن انڪار ڪيو ته پوءِ يقينًا الله سڀني، جهانن وارن کان بي نياز آهي. ان ۾ اهو ماڻهو ته اول داخل آهي جيڪو صراحتًا حج جي فرضيت جو انڪاري آهي ۽ ان جو اسلامي دائري کان خارج هجڻ به ظاهر آهي ڇو ته ”وَمَنْ كَفَرَ“ جو لفظ ان تي صراحتًا دلالت ڪري رهيو آهي پر جيڪو شخص عقيدتًا ته حج فرض سمجهي ٿو پر طاقت هوندي به حج ڪري نه ٿو ته اهو به هڪ لحاظ کان ان جو انڪاري آهي، جو نه مڃڻ وارن جي عمل ۾ مبتلا آهي ۽ جيئن ڪافر ۽ منڪر حج نه ٿو ڪري تيئن هيءُ به نه ٿو ڪري.

# نبوي حديثن مان بيت الله شريف جي حاضريءَ جون ٻلايون ۽ برڪتون

## حديث ١

بيهقيءَ حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي ته رسول الله

(١) الدر المنثور ص٢٧٢ جلد٢

صلى الله عليه وسلم جن فرمايو " مَنْ دَخَلَ الْبَيْتَ دَخَلَ فِيْ حَسَنَةٍ وَخَرَجَ مِنْ سَيِّئَةٍ مَغْفُوْرًا لَهٗ"يعني جيڪو بيت الله ۾ داخل ٿيو تہ اهو نيڪيءَ ۾ داخل ٿي برائيءَ کان نڪري بخشجي آيو.

## حديث ٢

بيهقيءَ شعب الايمان ۾ حضرت سلمان کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو " مَنْ مَاتَ فِيْ اَحَدِ الْحَرَمَيْنِ اسْتَوْجَبَ شَفَاعَتِيْ وَجَاءَ يَوْمَ الْقِيَامَةِ مِنَ الْاٰمِنِيْنَ " يعني جيڪو (مڪي مديني جي ٻنهين حرم مان) هڪ حرم ۾ مري ويو تہ ان لاءِ منهنجي شفاعت واجب آهي ۽ اهو قيامت جي ڏينهن امن وارن مان ٿي ايندو.

# نبوي حديثن ۾ حج نہ ڪندڙ لاءِ سزا جو بيان

## حديث ١

ترمذي، ابن جرير، ابن ابي حاتم، بيهقي شعب الايمان ۾ ۽ ابن مردويہ حضرت علي رضي الله تعاليٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن فرمايو " مَنْ مَّلَكَ زَادًا وَّرَاحِلَةً تُبَلِّغُهٗ اِلٰى بَيْتِ اللّٰهِ وَلَمْ يَحُجَّ بَيْتَ اللّٰهِ فَلَا عَلَيْهِ اَنْ يَّمُوْتَ يَهُوْدِيًّا اَوْ نَصْرَانِيًّا (١) يعني جيڪو اهڙي ٿمر ۽ سواريءَ جو مالڪ آهي جيڪا کيس بيت الله تائين پهچائي ۽ پوءِ بہ بيت الله جو حج نہ ڪري تہ ان تي ڪا بہ ميار نہ آهي، يهودي ٿي مري يا نصارو ٿي.

## حديث (٢)

ابن ابي شيبہ حضرت سعيد بن جبير کان روايت آندي آهي،ان فرمايو تہ جيڪڏهن منهنجو پاڙيسري طاقت هوندي بہ حج نہ ڪري ۽ مري پوي تہ مان ان جي جنازي جي نماز نہ پڙهندس. (٢)

قُلْ يٰۤاَهْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تَكْفُرُوْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ ۖ وَاللّٰهُ شَهِيْدٌ عَلٰى

فرماءِ تہ اي اهل ڪتاب! ڇو ٿا انڪار ڪيو الله جي آيتن جو. ۽ الله شاهد آهي ان تي جو

(١) الدر المنثور ص٢٧٥ جلد٢ (٢) الدر المنثور ص٢٧٧ جلد٢

مَا تَعْمَلُوْنَ ﴿٩٨﴾ قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ مَنْ اٰمَنَ

ڪيو ٿا فرماءِ اي اهل ڪتاب! ڇو ٿا روڪيو الله جي واٽ کان ان کي جو ايمان آندائين.

تَبْغُوْنَهَا عِوَجًا وَّاَنْتُمْ شُهَدَآءُ ۭ وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُوْنَ ﴿٩٩﴾

طلب ڪيو ٿا ان کي ڏنگو ۽ اوهان شاهد آهيو ۽ نه آهي الله بي خبر ان کان جو ڪيو ٿا.

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنْ تُطِيْعُوْا فَرِيْقًا مِّنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ

اي ايمان وارؤ! جيڪڏهن تابعداري ڪندؤ ٽولي جي انهن مان جو ڏنا ويا ڪتاب

يَرُدُّوْكُمْ بَعْدَ اِيْمَانِكُمْ كٰفِرِيْنَ ﴿١٠٠﴾ وَكَيْفَ تَكْفُرُوْنَ وَاَنْتُمْ

ته موٽائيندا اوهان کي پوءِ ايمان آڻڻ اوهان جي ڪافر ڪري ۽ ڪيئن ٿا ڪفر ڪيو ۽ اوهان اهي

تُتْلٰى عَلَيْكُمْ اٰيٰتُ اللّٰهِ وَفِيْكُمْ رَسُوْلُهٗ ۭ وَمَنْ

آهيو جو پڙهيون وڃن ٿيون اوهان تي آيتون الله جون ۽ اوهان ۾ ان جو رسول تشريف فرما آهي ۽ جيڪو

يَّعْتَصِمْ بِاللّٰهِ فَقَدْ هُدِيَ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ﴿١٠١﴾ ع

چنبڙندو الله جي (دين کي) پوءِ تحقيق هدايت ڪيو ويو سڌي واٽ ڏانهن.

ع ١٠ | ١

## تفسير

مٿان کان اهل ڪتاب جي فاسد عقيدن ۽ انهن جي شبهن تي گفتگو هلي رهي هئي، وچ ۾ بيت الله شريف ۽ حج جو ذڪر آيو، هتان وري الله تعالىٰ پنهنجي پياري حبيب عليه الصلواة والسلام کي فرمائي رهيو آهي ته اوهان انهن کي سمجهايو ته الله جي آيتن جو انڪار ڇو ٿا ڪيو؟ آيات الله مان مراد اهي عقلي ۽ نقلي دليل آهن جن سان اسلام جي حقانيت ۽ حضور رحمة للعالمين ﷺ جن جي صداقت روشن آهي. انهن ۾ حضور ﷺ جن جا معجزا، سندن عظيم اخلاق، اسلامي شريعت جي پاڪيزگي، برتري ۽ ان کان سواءِ تورات ۽ انجيل جا ڪليل بيان سڀ داخل آهن. هتي عجب ڪندي انهن

ڪان پڇيو ٿو وڃيءَ ڇا اوهان کي مناسب لڳي ٿو جو انهن سڀني ڳالهين هوندي انڪار ڪيو؟

"قُلْ يَآ اَهْلَ الْكِتَابِ لِمَ تَصُدُّوْنَ " الاية ڪان ڪين خبردار ڪيو ويو آهي تہ اوهان پاڻ تہ ايمان نہ ٿا آڻيو پر ٻين کي بہ ايمان کان روڪيندي اسلام لاءِ اهڙيون ڳالهيون ٿا ڪريو جيڪي سراسر غلط آهن.

"يَآ اَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنْ تُطِيْعُوْا" کان مومنن کي انهن جي ڳالهہ مڃڻ کان روڪيو ويو آهي. اصل واقعو هيءُ هو تہ مديني شريف ۾ رهندڙن ٻن قبيلن اوس ۽ خزرج ۾ گهڻي وقت کان دشمني هلندي ٿي آئي. هي ڪيترا ڀيرا هڪ ٻئي سان لڙايون بہ ڪري چڪا هئا جن ۾ انهن هڪ ٻئي کي وڏي بيدرديءَ سان ڪٺو هو. جڏهن رسول الله ﷺ جن مديني شريف جي سرزمين کي پنهنجن قدمن پاڪن سان نوازيو تہ سندن تعليم جي برڪت سان انهن جي پراڻي دشمني ياڀيءَ ۽ محبت سان بدلجي وئي. اهي اندروني ڦٽ جيڪي ڇنڻ جهڙا ئي نہ هئا حضور ﷺ جن جي شفقتن سان ميٽجي ختم ٿي ويا. هڪ ڏينهن شاس بن قيس يهوديءَ جو گذر هڪ اهڙيءَ مجلس کان ٿيو جنهن ۾ اوس ۽ خزرج قبيلي وارا هڪ ٻئي سان پيار ۽ محبت سان ويٺا هئا اهو يهودي هنن کي ان محبت ۽ پيار ۾ ڏسي سڙي ويو ان صلاح ڪري ٻئي يهوديءَ کي ان مجلس ۾ موڪليو جنهن اهڙا شعر پڙهڻ شروع ڪيا جن ۾ ٻنهي قبيلن جي پراڻين جنگين ۽ هڪ ٻئي سان ويڙهہ جو بيان هو ان جي اها چال ڪامياب ثابت ٿي ۽ اوس ۽ خزرج وارن هڪٻئي کي اهڙو گهٽ وڌ ڳالهائڻ شروع ڪيو جنهن وڏي وڃي جنگ جي صورت اختيار ڪئي ۽ تلوارون ۽ نيزا ڪڍي ٻئي قبيلا جنگ جو ميدان هموار ڪرڻ لڳا، جڏهن اها خبر حضور صلی الله عليه وسلم جن کي ملي تہ پاڻ ڪجهہ اصحابن سان گڏ اتي پهتا ۽ ٻنهين قبيلن جي قطارن جي وچ ۾ بيهي فرمايائون تہ" اوس ۽ خزرج"! اوهان کي ڇا ٿيو جو منهنجيءَ موجودگيءَ ۾ اوهان جاهليت جي رسم تازي ٿا ڪيو ۽ اها عداوت ۽ دشمني جنهن جي شعلن کي اسلام جي رحمت واري ڪڪرو سائي ڇڏيو هو ڇا اوهان ان کي وري پڙڪائڻ ٿا گهرو؟ اها شيطان ۽ اوهان جي دشمنن جي سازش آهي" بس حضور صلي الله عليه وسلم جن جو اهو فرمان ٻڌنديئي انهن جي اک کلي وئي ۽ هڪدم هٿيار ڦٽا ڪري جيڪي اکيون ڀهريائين غصي ۽ غضب جا ٽانڊا وسائي رهيون هيون انهن مان هاڻي هنجون وهڻ لڳيون ۽ اهي مسلمان ڊوڙي ڊوڙي

هڪ ٻئي کي ياڪر پائڻ لڳا، ان موقعي تي هيءَ آيت مبارڪ نازل ٿي(١) هن آيت ۾ اهائي ابدي حقيقت پيش ڪئي ويئي آهي، جنهن تي زماني جي ڦيرگهير تصديق جي مهر هنئي آهي. اوڻويهين صديءَ جي اڌ تي ئي نظر ڪيو ته برصغير جي اڌ پاڪستان ۽ هندستان ۾ مسلمانن تي ڇا ڇا گذريو. يورپ جي عيسائين مسلمان حاڪمن کي ڪيئن هڪ ٻئي جي خلاف ڀڙڪائي ۽اسلامي بادشاهيءَ جي سِرسِر کان جدا ڪري ڇڏي. مشرق وسطيٰ جي مسلمان حاڪمن ڪنهن جي اشاري تي خلافت عثمانيه جي خلاف بغاوت ڪري پنهنجو وقار وڃايو.

يَا اَيُّهَا الَّذِيْنَ آمَنُوا اتَّقُو اللّٰهَ حَقَّ تُقَاتِهٖ وَلَا تَمُوْتُنَّ اِلَّا وَاَنْتُمْ

اي ايمان وارؤ! ڊڄو الله کان جيئن ان کان ڊڄڻ جو حق آهي، ۽ نه مرو مگر ان حال ۾جو اوهان

مُّسْلِمُوْنَ ﴿١٠٢﴾ وَاعْتَصِمُوْا بِحَبْلِ اللّٰهِ جَمِيْعًا وَّلَا تَفَرَّقُوْا وَاذْكُرُوْا

مسلمان آهيو ۽ مضبوطيءَ سان ونو الله جي رسيءَ کي سڀئي ۽ نه جدا جدا ٿيو ۽ ياد ڪيو الله جي

نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ كُنْتُمْ اَعْدَاۗءً فَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوْبِكُمْ

نعمت جيڪا اوهان تي آهي جڏهن دشمن هيؤ پوءِ محبت پيدا ڪيائين اوهان جي دلين ۾ پوءِ ٿي

فَاَصْبَحْتُمْ بِنِعْمَتِهٖٓ اِخْوَانًا ۚ وَكُنْتُمْ عَلٰي شَفَا حُفْرَةٍ مِّنَ النَّارِ فَاَنْقَذَكُمْ

پيؤ ان جي نعمت سان ڀائر ۽ هُيؤ ڪناري باهه جي تي پوءِ ڇڏايائين اوهان کي

مِّنْهَا ۭ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيٰتِهٖ لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُوْنَ ﴿١٠٣﴾

ان کان. ائين ٿو کولي بيان ڪري الله اوهان لاءِ پنهنجون آيتون تانته هدايت وارا ٿيو.

## تفسير

هنن ٻن آيتن ۾ مسلمانن جي گڏيل قوت کي مضبوط ۽ ناقابل تسخير بنائڻ جا ٻه اصول ٻڌايا ويا آهن، ١-هڪ تقويٰ ٢-ٻيو پاڻ ۾ ٻڌي، اتفاق ۽ اتحاد پيدا ڪري اختلاف ۽ انتشار کان بچڻ

(١)فتح القدير ص٣٦٨ ج١

# پهريون اصول

تقويٰ يعني الله تعاليٰ جي ناپسند شين کان بچڻ جو مکمل اهڙو خيال رکڻ جو الله تعاليٰ جي حقن جي مطابق هجي- تقويٰ جو لفظ اصل عربي زبان ۾ کنهن شيءِ کان بچڻ، پرهيز ڪرڻ جي معنيٰ ۾ استعمال ٿيندو آهي ۽ اهو جتي ڊڄڻ جي معنيٰ ۾ ايندو آهي سو به ان لحاظ سان جو جن شين کان بچڻ جو حڪم ڪيو ويو آهي اهي ڊڄڻ جهڙيون شيون آهن، يا ان کان الله جل جلاله جي عذاب جو خطرو هوندو آهي. تقويٰ جا مختلف درجا آهن ١- هڪ ڪفر ۽ شرڪ کان بچڻ جيڪو گهٽ ۾ گهٽ درجو آهي ۽ ان معنيٰ سان هر مسلمان متقي آهي. ٢- ٻيو هر ان شيءِ کان بچڻ جيڪا الله جل شانه ۽ ان جي رسول مقبول ﷺ جن کي پسند ناهي تقويٰ جي ان درجي جون ڀلايون ۽ برڪتون قرآن ڪريم ۽ حديث پاڪ ۾ گهڻيون آيل آهن. ٣- ٽيون تقويٰ جو اعليٰ مقام ۽ خاص منصب جيڪو الله تعاليٰ جي نبين عليهم الصلواة والسلام ۽ انهن جي ڪامل نائبن ولين کي نصيب ٿيندو آهي جيڪي پنهنجي دل کي غيرالله کان آزاد ۽ الله تعاليٰ جي ياد ۽ رضا حاصل ڪرڻ سان آباد رکندا آهن. هن آيت ۾ "اِتَّقُوااللّٰهَ" کان پوءِ "حَقَّ تُقَاتِهٖ" آڻي ٻڌايو ويو ته تقويٰ جو اهو درجو حاصل ڪيو جيڪو تقويٰ جو حق آهي.

# تقويٰ جو حق ڇا آهي؟

ابن المبارڪ ڪتاب الزهد ۾ ابن ابي شيبه، ابن جرير وغيره سيدنا ابن مسعود رضي الله تعاليٰ عنه کان روايت آندي آهي ته "اِتَّقُوااللّٰهَ حَقَّ تُقَاتِهٖ" جي معنيٰ آهي ته الله تعاليٰ جي اطاعت ڪيو بي فرماني نه ڪيو. الله جو ذڪر ڪيو غفلت نه ڪيو، الله جو شڪر ڪيو بي شڪري نه ڪيو(١) قرآن پاڪ جي ٻيءَ آيت ۾ آهي: "اِتَّقُوااللّٰهَ مَااسْتَطَعْتُمْ" وس آهر الله کان ڊڄو، حضرت ابن عباس ۽ طائوس فرمايو آهي ته هي الفاظ "حَقَّ تُقَاتِهٖ" جو تفسير آهن. مطلب هيءُ آهي ته جنهن گناهن ۽ براين کان بچڻ ۾ پنهنجو پورو پورو وس هلائي زور لڳايو ته ان تقويٰ جو حق ادا ڪيو ۽ تقويٰ جي ڪوشش مرڻ تائين ڪرڻي آهي جنهن لاءِ آخر ۾ آيو ته "وَلَا تَمُوْتُنَّ اِلَّا وَاَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ" يعني اوهان جو موت (خدا جي فضل ۽ ڪرم سان) اسلام تي ٿئي.

# ٻيو اصول

اجتماعي قوت ۽ ٻڌيءَ واري طاقت جيڪو "وَاعْتَصِمُوْا بِحَبْلِ اللّٰهِ جَمِيْعًا" ۾

(١) الدر المنثور ص۲۸۲ جلد۲

نهايت ئي بليغ ۽ حڪيماڻي انداز ۾ بيان ڪيو ويو آهي. پهرئين تقويٰ جو ذڪر ڪري انسانن کي هڪ ٻئي سان رابطي رکڻ جو اڪسير ٻڌايو ويو ڇو ته جڏهن تقويٰ هوندي ته ڪير ڪنهن جو حق ضايع نه ڪندو ۽ ڪنهن کي اختلاف ڪرڻ جو موقعو ئي نه ملندو. ان کان پوءِ وري هڪ ٻئي سان ٻڌي، اتفاق ۽ اتحاد ڪرڻ جو حڪم ڏنو ويو آهي. حَبْلُ اللهِ "الله جي رسي" هن مان مراد قرآن پاڪ آهي. ابو سعيد کان روايت آهي ته سيدنا رسول الله صلي الله عليه وسلم جن فرمايو ته "كِتَابُ اللهِ حَبْلُ اللهِ الْمَمْدُوْدُ مِنَ السَّمَآءِ اِلَى الْاَرْضِ" (١) يعني الله جو ڪتاب (قرآن پاڪ) الله جي رسي آهي، جيڪا آسمانن کان زمين ڏانهن لڙڪايل آهي، عربي محاوري ۾ ڪڏهن حبل مان مراد عهد ۽ مطلقًا اها شيءِ جيڪا ذريعي يا وسيلي جو ڪم ڏئي هوندي آهي. قرآن ڪريم کي "حبل" رسيءَ جي لفظ سان ان جي ڪري ذڪر ڪيو ويو آهي جو اهوئي هڪڙو اهڙو تعلق آهي جو هڪ طرف الله سان ملائي ٿو ته ٻئي طرف الله وارن سان جوڙ ٻڌندي ٿو. قرآن پاڪ کي مضبوطيءَ سان وٺڻ جي ڪري ٽڙيل پکڙيل قوتون گڏ ٿينديون آهن.

ان کان پوءِ "وَلَا تَفَرَّقُوْا" چئي تاڪيد ڪيو ويو آهي ته پاڻ ۾ اختلاف پيدا نه ڪيو ڇو ته ان سان ڪمزور ٿي ويندئو.

## سوال

ڇا امت محمديه علىٰ نبيها الصلواة والسلام ۾ موجود اختلاف حنفي، مالڪي، شافعي، حنبلي وغيره به خراب آهن؟ ۽ ڇا هر قسم جو اختلاف ناپسند آهي؟

## جواب

خراب ۽ منع ڪيل اختلاف اهو آهي جيڪو نفساني خواهشن لالچ ۽ طمع تي ٻڌل هجي، پر جيڪو قرآن ڪريم ۽ ان جي لاءِ حضور صلى الله عليه وسلم جن جي طرفان ڪيل تفصيل ۽ تشريح کي قبول ڪندي پنهنجي فطري صلاحيتن ۽ دماغي قوت جي بناءِ تي فروعي مسئلن ۾ ڪيو وڃي اهو فطري آهي جنهن کان اسلام منع نه ڪئي آهي، اصحابن تابعن ۽ فقيهن جا اختلاف ان قسم جا هيا جنهن اختلاف کي رحمت قرار ڏنو ويو آهي. "وَاذْكُرُوْا نِعْمَتَ اللهِ عَلَيْكُمْ اِذْ كُنْتُمْ اَعْدَآءً فَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوْبِكُمْ" ۽ ياد

(١) ابن ڪثير ص٣٨٩ ج١

ڪيو الله جي احسانن جيڪا اوهان تي تي جڏهن اوهان هڪ ٻئي جا دشمن هيئو پوءِ اوهان جي دلين ۾ محبت پيدا ڪيائين. هنن لفظن سان ٻڌايو ويو ته اوهان جي اندر ۾ سوين ورهن کان هڪ ٻئي لاءِ جيڪو ڪينو ۽ عداوت هئي الله تعالىٰ اها اسلام ۽ نبي اڪرم صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي برڪت سان ختم ڪري ڇڏي ۽ اهو به واضح ٿيو ته سيني ماڻهن جون دليون الله تعالىٰ جي قدرتي هٿ ۾ آهن، اهو جيڪڏهن انهن ۾ هڪ ٻئي لاءِ محبت پيدا ڪري ته بالڪل ٿيندي ۽ ان جو اهو خاص انعام آهي جو ٻانهن جي دلين ۾ هڪ ٻئي جي لاءِ محبت پيدا ڪري ٿو.

آخر ۾ "كَذَٰلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ لَكُمْ آيَاتِهِ" کان ٻڌايو ويو ته اهو محبت ۽ پيار وارو انعام ان کي ملندو جيڪو الله تعالىٰ جي بيان ڪيل هدايتن تي عمل ڪندو.

وَلْتَكُنْ مِّنْكُمْ أُمَّةٌ يَدْعُونَ إِلَى الْخَيْرِ وَيَأْمُرُونَ بِالْمَعْرُوفِ

۽ گهرجي ته هجي اوهان مان هڪ جماعت جو سڏين چڱائيءَ ڏانهن ۽ امر ڪن نيڪيءَ جو

وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ ۚ وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿١٠٤﴾ وَلَا تَكُونُوا كَالَّذِينَ

۽ روڪين برائيءَ کان ۽ اهي ئي ڪامياب ٿيندڙ آهن ۽ نه هجو انهن وانگر جو

تَفَرَّقُوا وَاخْتَلَفُوا مِنْ بَعْدِ مَا جَاءَهُمُ الْبَيِّنَاتُ ۚ وَأُولَٰئِكَ

جدا جدا ٿيا ۽ اختلاف ڪيائون ان کان پوءِ جو آيا انهن وٽ روشن دليل ۽ اهي

لَهُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ﴿١٠٥﴾

انهن لاءِ آهي عذاب وڏو.

## تفسير

مٿي ٻڌايو ويو ته پاڻ ۾ تقويٰ جيئن تقويٰ جو حق آهي پيدا ڪيو ۽ ٻڌيءَ ۽ انفاق سان هڪ مضبوط ۽ مستحڪم قوت تي ميدان ۾ اچو ۽ هتي ٻڌايو ٿو وڃي ته صرف پاڻ متقي بنجي نه ويهو پر ٻين کي چڱائي چوڻ، برائين کان روڪڻ ۽ انهن جي

اصلاح جي ڪوشش ڪرڻ به اوهان جي ذميواري آهي.

امام احمد بن حنبل عليه الرحمة حضرت حذيفة بن اليمان رضي الله تعالىٰ عنه ڪان روايت آندي آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "وَالَّذِيْ نَفْسِيْ بِيَدِهٖ لَتَأْمُرُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ وَلَتَنْهَوُنَّ عَنِ الْمُنْكَرِ اَوْلَيُوْشِكَنَّ اللّٰهُ اَنْ يَّبْعَثَ عَلَيْكُمْ عِقَابًا مِّنْ عِنْدِهٖ ثُمَّ لَتَدْعُنَّهٗ فَلَا يَسْتَجِيْبُ لَكُمْ "(١) يعني ان ذات جو قسم آهي جنهن جي قدرتي هٿ ۾ منهنجو ساهه آهي ته اوهان ضرور نيڪيءَ جو امر ۽ برائيءَ ڪان روڪ ڪندا رهو ۽ جيڪڏهن نه ته ويجهي آهي هيءَ ڳالهه جو الله تعالىٰ (گنهگارن سان گڏ) اوهان تي به پاڻ وٽان عذاب موڪلي ڏيندو پوءِ اوهان ان ڪان دعا گهرندؤ ته به قبول نه ڪندو.

## هڪ غلطيءَ جو ازالو

هن وقت مسلمانن ۾ عام رواج آهي ته جيڪڏهن ڪو ماڻهون ڪنهن ڪي چڱائي چوندو آهي ته ٻيا وچ ۾ دخل ڏيندي ان کي روڪيندي چوندا آهن ته ميان! سڀ ڪنهن جي مرضي تون ڇو ٿو چڱائي چوين؟ مٿين حديث شريف تي غور ڪيو ته چڱائي چوڻ ۽ برائيءَ ڪان روڪڻ لاءِ ڪيڏو نه تاڪيد آهي.

## فائدو

قرآن پاڪ جي آيت ۽ حديث شريف مان ثابت ٿيو ته امت جي هر فرد تي نيڪيءَ جو امر ڪرڻ ۽ برائيءَ ڪان روڪڻ لازم آهي پر ٻين شرعي حڪمن وانگر هن ۾ به طاقت ۽ وسعت تي مدار آهي.

## چڱائيءَ چوڻ ۽ برائيءَ کان روڪڻ لاءِ ضروري ڳالهه

نيڪيءَ جو امر ۽ برائيءَ ڪان منع اهو ڪري جنهن کي صحيح نموني نيڪيءَ ۽ برائيءَ جي ڄاڻ ۽ سڃاڻ هجي، ائين نه ٿئي جو چڱي ڪم کي برو ۽ بري ڪم کي چڱو سمجهي پنهنجي شريعت ناهيو ويٺو هجي.

هن زماني ۾ ڪيترا جاهل وعظ ڪرڻ لاءِ هلندا وتندا آهن جن کي قرآن ڪريم ۽ حديث جي ڄاڻ بلڪل نه هوندي آهي. يا ڪيترا عام ماڻهو ڪنهن ٻڌي سڌي ڳالهه تي ضد ڪري ويهي رهندا آهن اهو به سراسر غلط آهي ضرورت ان ڳالهه جي آهي ته هن امت ۾ هر وقت اهڙي جماعت موجود هجي جيڪا علم، عمل، ظاهر، باطن

(١) تفسير ابن ڪثير ص٣٩٠ ج١

سيرت ۽ ڪردار ۾ حضور عليه الصلواة والسلام جن جي فيض جي ڪامل مظهر هجي ۽ اسلامي علمن جي مهارت سان گڏ سيرت جي پاڪيزگي، ڪردار جي پڪائي، ظاهر ۽ باطن ۾ هڪجهڙائي رکي ۽ اهو ڪم ايترو آسان به ناهي ان لاءِ مالي قرباني، ايماني فراست، قلبي بصيرت ۽ روحاني تربيت جي سخت ضرورت آهي تاريخ شاهد آهي ته جيستائين اهڙا فرد تيار ٿيندا رهيا ته علم ۽ عمل جي گلشن سدائين بهار رهي.

جيستائين مدرسن ۾ مخدوم محمد هاشم ٺٽوي، شاه فقير الله علوي شڪارپوري، مولانا محمد هاشم نواب شاهي، مخدوم علامه ابو الحسن ڏاهري، علامه ابو الحسن سندي، علامه عبدالواحد سيوستاني حضرت علامه قبله امير احمد شاه حسيني اميناٽوي، استاذي علامه مولانا الحاج محمد صاحب اڪتڙائي، مولانا محمد صالح ۽ مولانا محمد داؤد ٻگهيه مورائي، مولانا محمد عثمان ميمڻ مورائيءَ جي ڏاڏي مولانا محمد اسماعيل صاحب ۽ مولانا عبدالغفور همايونيءَ جهڙا عالم هيا ته چا چا نه علم جا گوهر نڪتا، ۽ درگاهن ۾ جيستائين سلطان اولاولياءِ محمد زمان لنواريءَ وارا، حضرت مولانا عبدالرحيم گرهوڙي، حضرت خواجه محمد يوسف ڪنياروي، حضرت سيد محمد شاه ذاڪري، حضرت سيد محمد راشد روزي ڌڻي، حضرت مولانا محمد قاسم مشوري، حضرت مخدوم محمد نوح هالائي، حضرت پير محمد عبدالغفار رحمت پوري لاڙڪاڻوي، حضرت مولانا غلام محمد ملڪاڻي، حضرت خواجه محمد اسماعيل پريالوي ۽ سيدي ومرشدي حضرت خواجه الهه بخش ڪنڊياروي مرشدي ۽مخدومي حضرت خواجه محمد طاهر الله آبادي (مدظله) جهڙا جوان هيا ۽ آهن ته چا چا نه صالح ۽متقي ٻانها وجود ۾ آيا ۽ ايندا رهن ٿا جن جي فيض سان ڪفر جا مرڪز اسلام جي نور سان روشن ٿيندا رهيا۽ ٿيندا رهن ٿا انهن جي همتن سان ئي حق جي قوت باطل جي قلعن کي مطيع ڪندي رهي آهي پر هاڻي ڪن درگاهن جي حالت ته چوڻ جهڙي ئي ناهي. شال الله تعالىٰ رحمة للعالمين صلى الله عليه وسلم جن جي صدقي رحم ۽ ڪرم ڪري سيني مسلمانن کي هدايت ڪرڻ فرمائي.

وَلَا تَكُونُوا – کان – الْبَيِّنٰتُ تائين هنن لفظن ۾ مسلمانن کي فرقي

بنديءَ ۽ اختلاف کان روڪيو ويو آهي جيئن يهودي ۽ نصاريٰ پنهنجي ديني اصول کي پويان اڇلائي ست سؤ ستاويهن(٧٢٧) فرقن ۾ ورهائجي تباهه ٿي ويا. (معاذالله) تئين اڄ مسلمان سڏائڻ وارا به حضور عليه الصلواة والسلام جن جي ذات ۽ سندن صحابن رضی الله تعالیٰ عنهم جي شخصيتن تي حملا ۽ انهن جي گستاخي ڪري ڪيترن فرقن ۾ ورهائجي ويا آهن، ۽ انهن اختلاف جي ڪري اسلام جي صحيح خدمت کي سخت ڌڪ رسيو آهي.

"وَاُولٰٓئِکَ لَهُمْ عَذَابٌ عَظِيْمٌ" ۽ انهن لاءِ وڏو عذاب آهي، هنن لفظن ۾ اسلام جي طاقت ٽوڙي مسلمانن کي ٽولن ۾ ورهائڻ وارن کي تنبيه ڪيل آهي ته اهي دنيوي سٽين مالن تي خوش نه ٿين، انهن لاءِ دنيا ۽ آخرت ۾ عذاب آهي. دنيا ۾ ته ان عذاب جو مشاهدو هر ڪو ڪري رهيو آهي جو الله جل جلاله کي نه مڃڻ وارا ملحد ۽ دهريا مسلمانن کي تباهه ڪري رهيا آهن ۽ مسلمان صفا بي وس ۽ بي حس لڳا پيا آهن.

هنن آيتن مان هي فائدا حاصل ٿيا.

## فائدو ١

"وَلْتَكُنْ مِّنْكُمْ اُمَّةٌ" مان ثابت ٿيو ته ديني ڳالهه ڪنڍڻ ۾ به پورو پورو دين جو عالم هجڻ فرض ڪفايه آهي فرض عين نه آهي. جيڪڏهن هر شهر مان صرف هڪ عالم ٿي پوي ته به ڪافي آهي.

## فائدو ٢

اهو به ثابت ٿيو ته ديني ڳالهه ۾ هڪ ڄڻي جو قول به قبول آهي جو ته اهو عالم ته هڪڙو هوندو پر ان جي ڳالهه عوام کي مڃڻي آهي.

## فائدو ٣

اهو به ثابت ٿيو ته دين جي عالم کي دين جي دعوت قوم ۽ عمل پنهنجي سان ڏيڻ لازمي آهي، "وَاُولٰٓئِکَ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ" هن مان ثابت ٿيو ته تبليغ ڪرڻ وارو عالم ڪامياب ۽ تبليغ ڪرڻ پلو جهاد آهي. تلوار جو جهاد به ان دين جي تبليغ کي آسان ڪرڻ جي لاءِ هوندو آهي. تلوار قرآن ڪريم جي لاءِ رستو صاف ۽

هموار ڪندي آهي ۽ قرآن تلوار ڪي غلط استعمال ٿيڻ کان روڪيندو آهي.

## سوال

جڏهن اختلاف ڪرڻ سٺو نہ آهي تہ پوءِ اصحابن رضي الله تعالىٰ عنهم جا پاڻ ۾ اختلاف ڇو ٿيا هئا؟

## جواب

برو اختلاف اهو آهي جنهن ۾ نفسانيت هجي حق طلبي نہ هجي جيئن يهودين ۽ نصارن ۾ هو يا عام مسلمانن ۾ آهي. باقي اصحابن ڪرامن جو اختلاف حق طلبيءَ لاءِ هو. جيڪڏهن ان ۾ ڪو اصحابي رضي الله تعالىٰ عنه صحيح نہ بہ هو تہ بہ ان تي ملامت نہ آهي ڇو تہ اها اجتهادي خطا آهي جنهن ۾ بہ مجتهد ڪي هڪ درجو ملندو آهي.

عبد بن حميد پنهنجي مسند ۾، دارمي، ابن ماجه، عبدريءَ الجمع بين الصحيحين ۾، ابن عساڪر ۽ حاڪم حضرت عمر بن خطاب رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو. "سَأَلْتُ رَبِّيْ عَنِ اخْتِلَافِ اَصْحَابِيْ مِنْ بَعْدِيْ فَاَوْحَى اللّٰهُ يَا مُحَمَّدُ! اِنَّ اَصْحَابَکَ عِنْدِيْ كَالنُّجُوْمِ بَعْضُهَا اَقْوَىٰ مِنْ بَعْضٍ وَفِيْ رِوَايَةٍ بَعْضُهَا اَضْوَءُ مِنْ بَعْضٍ وَلِكُلٍّ نُوْرٌ فَمَنْ اَخَذَ بِشَيْءٍ مِمَّا هُمْ عَلَيْهِ مِنِ اخْتِلَافِهِمْ فَهُوَ عِنْدِيْ عَلَىٰ هُدًى" يعني مون کان پوءِ منهنجي اصحابن جي اختلافن جي باري ۾ مون پنهنجي رب کان پڇيو الله تعالىٰ وحي موڪلي فرمايو تہ اي محمد (ﷺ)! تنهنجا اصحاب مون وٽ تارن وانگر، هڪڙا ٻين کان قوي آهن ۽ هڪ روايت ۾ آيو تہ هڪڙا ٻين کان وڌيڪ روشن آهن ۽ سڀني لاءِ نور آهي، پوءِ جنهن ماڻهوءَ بہ انهن واري اختلافي مسئلن ۾ انهن مان ڪنهن کي اڳواڻ ڪري ورتو تہ اهو مون وٽ هدايت تي آهي. علامہ ثناءُ الله پاني پتيءَ ٿورو اڳتي لکيو آهي تہ بيهقيءَ ۽ ابن سعد آندو آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن جي اصحابن جو اختلاف الله جي ٻانهن لاءِ رحمت آهي (١). علامہ قرطبيءَ لکيو آهي تہ رسول الله ﷺ جن فرمايو آهي "اِخْتِلَافُ اُمَّتِيْ رَحْمَةٌ" منهنجيءَ امت جو (تحقيقي ۽ علمي) اختلاف رحمت آهي. منع ڪيل اهو اختلاف آهي

---

(١) تفسير مظهري ص١١١ ج٢

جيڪو فساد جو سبب بڻجي.

يَوۡمَ تَبۡيَضُّ وُجُوۡهٌ وَّتَسۡوَدُّ وُجُوۡهٌ ۚ فَاَمَّا الَّذِيۡنَ اسۡوَدَّتۡ

ان ڏينهن اڇا ٿيندا ڪجهه منهن ۽ ڪارا ٿيندا ڪجهه منهن پوءِ پر اهي شخص جو ڪارا ٿيندا

وُجُوۡهُهُمۡ ۟ اَكَفَرۡتُمۡ بَعۡدَ اِيۡمَانِكُمۡ فَذُوۡقُوا الۡعَذَابَ بِمَا كُنۡتُمۡ

منهن انهن جا (چيو ويندن تہ) ڇا ڪفر ڪيُو؟ ايمان آڻڻ کان پوءِ- پوءِ چکو عذاب (جو مزو) انهيءَ سببان

تَكۡفُرُوۡنَ ﴿۱۰۶﴾ وَاَمَّا الَّذِيۡنَ ابۡيَضَّتۡ وُجُوۡهُهُمۡ فَفِىۡ رَحۡمَةِ اللّٰهِ ؕ

جو ڪفر ٿي ڪيُو ۽ پر اهي (شخص) جو اڇا ٿيا منهن انهن جا پوءِ الله جي رحمت ۾ رهندا

هُمۡ فِيۡهَا خٰلِدُوۡنَ ﴿۱۰۷﴾ تِلۡكَ اٰيٰتُ اللّٰهِ نَتۡلُوۡهَا عَلَيۡكَ بِالۡحَقِّ ؕ وَمَا

اهي ان ۾ هميشه هوندا. اهي آيتون الله جون آهن. پڙهون ٿا اهي اوهان جي اڳيان حق سان ۽ ناهي

اللّٰهُ يُرِيۡدُ ظُلۡمًا لِّلۡعٰلَمِيۡنَ ﴿۱۰۸﴾ وَلِلّٰهِ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى

الله جو (شان) جو ارادو ڪري ظلم جو جهانن لاءِ ۽ خاص الله جو آهي جيڪي آسمانن ۾ آهي ۽ جيڪي

الۡاَرۡضِ ؕ وَاِلَى اللّٰهِ تُرۡجَعُ الۡاُمُوۡرُ ﴿۱۰۹﴾ ع

زمين ۾ آهي ۽ الله ڏانهن موٽايا ويندا سڀ ڪم.

## تفسير

هنن آيتن ۾ ٻڌايو ويو آهي تہ قيامت جي ڏينهن هر مومن ۽ ڪافر جي سڃاڻپ انهن جي منهن جي ڪيفيت سان ٿيندي. ڪنهن کان پڇڻ جي ضرورت نہ پوندي جن جون دليون الله تعالىٰ ۽ ان جي حبيب عليه الصلواة والسلام جي محبت، عشق، اطاعت ۽ اتباع جي نور سان روشن هونديون انهن جا منهن بہ روشن، اڇا ۽ چمڪدار هوندا ۽ جن جي اندر ۾ برا عقيدا ۽ الله جل جلاله ۽ ان جي پياري حبيب رسول مقبول صلى الله تعالىٰ عليه وسلم ۽ اصحابن ۽ اهلبيتن ۽ ولين جي عداوت، بغض ۽ ڪينو هوندو

قيامت ۾ انهن جا سندن اندر وانگر منهن ٻه ڪارا هوندا. بعضي علماء فرمايو آهي جيڪا فرحت ۽ خوشيءَ جي ڪيفيت مومنن کي ڪاميابي ۽ چوڻڪاري ملڻ جي ڪري سندن منهن تي ظاهر هوندي ان کي منهن جو اڇو هجڻ سڏيو ويو آهي، ۽ جيڪا مايوسي ڪافرن ۽ فاسقن کي الله تعالىٰ جي رحمت کان محروم هجڻ جي ڪري نصيب ٿيندي ان جي اثر کي انهن جي منهن جو ڪارو هجڻ سڏيو ويو آهي. مفسرن لکيو آهي ته جڏهن قيامت جي ڏينهن مؤمن پنهنجا عملناما پڙهندا ۽ ان ۾ نيڪيون گهڻيون ڏسي خوش ٿيندا ته انهنجو منهن خوشيءَ ۾ چمڪندو ۽ ڪافر ۽ منافق جڏهن پنهنجن عملنامن ۾ برايون گهڻيون لکيل ڏسندا ته سندن منهن ڪارا ٿي ويندا. ڪن جو چوڻ آهي ته جڏهن قيامت جو ڏينهن ٿيندو ته الله تعالىٰ مؤمنن کان پڇندو ته اوهان جو رب ڪهڙو آهي؟ عرض ڪندا ته الله جل جلاله، اسان جو رب آهي. الله تعالىٰ فرمائيندو ته جيڪڏهن ان کي ڏسندؤ ته سڃاڻندئو؟ عرض ڪندا ته هائو. بلڪل سڃاڻنداسين پوءِ الله تعالىٰ جو ديدار ڪندا ۽ ڏسڻ سان سجدي ۾ ڪري پوندا ۽ انهن جا منهن برف وانگر اڇا ٿي چمڪندا. پر منافق ۽ ڪافر نه ڏسندا ۽ نه سجدو ڪري سگهندا، انهن جا منهن ڪارا ٿي ويندا (١) مقصد ته بي دينن جا ٽولا قيامت ۾ پري کان پڌرا هوندا.

## سوال

امام بخاريءَ حضرت سهل بن سعد رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي ته قال رسول الله صلى الله عليه وآله وسلم " اِنِّىْ فَرَطُكُمْ عَلَى الْحَوْضِ مَنْ مَرَّ عَلَىَّ شَرِبَ وَمَنْ شَرِبَ لَمْ يَظْمَا اَبَدًا- لَيَرِدَنَّ عَلَيَّ اَقْوَامٌ اَعْرِفُهُمْ وَيَعْرِفُوْنِيْ ثُمَّ يُحَالُ بَيْنِيْ وَبَيْنَهُمْ (وفي روايۃ ابي سعيد الخدري)" فاقول انهم مني فيقال انک لاتدري ما احدثوا بعدک فاقول سحقًا سحقًا لمن غير بعدي (٢) يعني رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو ته مان اوهان جو حوض (ڪوثر) تي اڳواڻ آهيان جيڪو مون وٽان لنگهندو اهو (ان حوض جو پاڻي) پيئندو ۽ جنهن پيتو اهو وري اصل اڃ محسوس نه ڪندو ۽ مون وٽ اهڙيون قومون اينديون جو مان انهن کي سڃاڻان ٿو ۽ اهي مون کي سڃاڻن ٿا ان کان پوءِ مون کان جدا ڪيا ويندا (حضرت ابو سعيد خدريءَ جي روايت ۾ آهي ته) پوءِ مان چوندس ته اهي مون مان آهن( چڏيو ته حوض ڪوثر مان پين) پوءِ مون کي چيو ويندو ته اوهان کي

(١) القرطبي ص١٦٦ جلد٤ (٢) القرطبي ص١٦٦ جلد٤

خبر نہ آهي تہ انهن اوهان کان پوءِ ڇا نئون کم کيو هو پوءِ مان چوندس تہ هلاڪت آ هلاڪت ان لاءِ جنهن مون کان پوءِ (دين ۾) ڦير ڦار ڪئي.

ڇا حضور صلی اللہ عليه وسلم جن انهن کي کو نہ سڃاڻندا جو فرمائيندا تہ اهي منهنجا آهن يا انهن جا منهن ڪارا نہ هوندا؟

## جواب

حضور صلی اللہ عليه وسلم جن انهن کي سڃاڻندا پر ائين چوڻ تہ اهي مون مان آهن انهن کي شرمسار ڪرڻ لاءِ هوندو جيئن قرآن پاڪ ۾ آهي تہ قيامت جي ڏينهن ڪافر کي چيو ويندو" ذُقۡ اِنَّكَ اَنۡتَ الۡعَزِيۡزُ الۡكَرِيۡمُ (١) (عذاب) چک بيشک تون عزت وارو، شان وارو آهين، ڇا اهو ڪافر عزت وارو هوندو؟ نہ هرگز نہ، پر ان کي شرمسار ڪرڻ لاءِ اللہ تعالیٰ ائين حکم ڪندو. ائين حضور صلی اللہ عليه وآله وسلم جن بہ حوض تي اچڻ واري لاءِ فرمائيندا تہ "اهي منهنجا آهن" جن منهنجي دين جي بي قدري ڪئي هئي" فَاَمَّا الَّذِيۡنَ اسۡوَدَّتۡ وُجُوۡهُهُمۡ " "اَكَفَرۡتُمۡ بَعۡدَ اِيۡمَانِكُمۡ " هنن لفظن سان اللہ تعالیٰ پاڻ خطاب ڪندو يا ان جا ملائڪ يا انبياءِ ڪرام يا سڀئي مسلمان هوندا. رهيو سوال تہ ڪنهن کي ائين چوندا. حضرت امام حسن بصري عليه الرحمة فرمايو آهي تہ منافقن کي چوندا جن زبان سان ايمان آڻي دل سان ايمان نہ آندو هو. سيدنا ابوبکر صديق رضي اللہ تعالیٰ عنه فرمايو تہ اهو مرتدن سان خطاب هوندو جيڪي مسلمان ٿي وري ڪافر ٿيا هوندا (٢) اهل ڪتاب يهودي ۽ نصاریٰ بہ پنهنجن نبين عليهم الصلواة والسلام تي ايمان آڻڻ جي دعویٰ ڪندڙ آهن. انهن نبين عليهم الصلواة والسلام حضور عليه الصلواة والسلام جن جي اچڻ لاءِ بشارتون ڏنيون هيون. جيڪي پهريان تہ اهي تسليم ڪيو ويٺا هئا پر جڏهن حضور عليه الصلواة والسلام جن آيا تہ انڪار ڪري ويهي رهيا انهن کي بہ ائين چيو ويندو. آخر ۾ انهن کي ملڻ واري سزا جو بيان آهي تہ انهيءَ بي ايمانيءَ ۽ ڪفرجي ڪري عذاب ۾ رهو.

" وَاَمَّا الَّذِيۡنَ ابۡيَضَّتۡ وُجُوۡهُهُمۡ فَفِىۡ رَحۡمَةِ اللّٰهِ"

ان رحمت مان مراد جنت آهي جو تہ جنت صرف عمل سان نہ ملندي

(١) سوره الدخان آيت ٤٩ (٢) تفسير قرطبي ص١٥٩ ج٤

پر عمل کان پوءِ الله تعالیٰ جي رحمت سان ملندي ۽جنت ئي اها جاءِ آهي جتي الله تعالیٰ هر قسم جي رحمت سان انتظام کيا آهن" هُمْ فِيهَا خٰلِدُوْنَ" يعني اها رحمت دنياوي نعمتن وانگر عارضي نہ هوندي بلک دائمي هوندي جنهن ۾ هميشہ هوندا نہ انهن تي موت ايندو نہ جنت فنا ٿيندي ۽ نہ ان مان ڪڍيا ويندا.

"تِلْکَ آيَاتُ اللّٰهِ نَتْلُوْهَا عَلَيْکَ بِالْحَقِّ" ۾ الله تعالیٰ پنهنجي حبيب عليه الصلواة والسلام جن کي خطاب ڪندي فرمايو آهي تہ اهي الله جل شانه جي پاڪ ڪلام جون آيتون اوهان جي اڳيان پڙهيون ٿيون وڃن جيڪي سراسر حق آهن انهن ۾ ڪو شبهو نہ آهي. آخر ۾ ٻڌايو ويو آهي تہ "وَمَا اللّٰهُ يُرِيْدُ ظُلْمًا لِّلْعٰلَمِيْنَ "(١) ۽ الله تعالیٰ پنهنجن پيدا ڪيلن جهانن سان ظلم ڪرڻ جو ارادو نہ ٿو ڪري يعني ظلم ڪندو تہ ناهي پر ظلم جو ارادو بہ نہ ڪندو آهي ۽ نہ ڪنهن جي اخلاص واري عمل جو ثواب گهٽائيندو آهي ۽ نہ ڪنهن ڪِي گناهہ جي قدر کان وڌيڪ سزا ڏيندو آهي ۽ جڏهن تہ ڪفر ڪرڻ وڏي ۾ وڏو گناهہ آهي تہ ان جي سزا بہ وڏي ۾ وڏي آهي يعني هميشہ جهنم ۾ رهائڻ، ان جو هر حڪم ٻانهن جي تربيت لاءِ هوندو آهي جيڪو معاملو ڪنهن سان آهي اهو عين حڪمت ۽ مصلحت جي موافق آهي.

"وَلِلّٰهِ مَا فِی السَّمٰوٰتِ وَمَا فِی الْاَرْضِ وَاِلَی اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُوْرُ" يعني جڏهن هر شيءِ الله جي پيدا ڪيل ۽ ان جي ملڪيت آهي ۽ سيئي ڪم آخر ۾ ان ڏانهن موٽايا ٿا وڃن تہ اهو ظلم ڇو ۽ ڇا لاءِ ڪندو.

هتي هي فائدا حاصل ٿيا

## فائدوا

الله تعالیٰ جي مقبول ٻانهن کي الله تعالیٰ جو اهڙو قرب حاصل هوندو آهي جو انهن جي ڪم کي الله تعالیٰ پاڻ ڏانهن نسبت ٿو ڪري جيئن "نَتْلُوْهَا" (اسين ٿا تلاوت ڪيون انهن کي) حالانڪ تلاوت تہ جبرئيل ٿي ڪئي ان ئي مجازي معنیٰ سان الله تعالیٰ جا مقبول ٻانها الله تعالیٰ جي ڪم کي پاڻ ڏي نسبت ڪندا آهن جيئن بيبي مريم رضي الله تعالیٰ عنها کي جبرئيل امين چيو "لِاَهَبَ لَکِ غُلَامًا زَکِيًّا"(١) ( مان تو وٽ

(١) سورة مريم آيت ١٩

ان لاءِ آيو آهيان تہ توکي پاڪ، صاف پٽ ڏيان) حالانڪ پٽ ڏيڻ وارو تہ الله تعالىٰ آهي. صلح حديبيہ جي وقت اصحابن سڳورن حضور صلى الله عليه وسلم جن جي بيعت ڪئي هئي تہ الله تعالىٰ فرمايو "اِنَّمَا يُبَايِعُوْنَ اللهَ" (١) اهي الله جي بيعت ٿا ڪن.

بدر جي جنگ ۾ حضور صلى الله عليه وآلہ وسلم جن ڪافرن کي پٿريون اڇلائي هنيون تہ الله تعالىٰ فرمايو "وَمَا رَمَيْتَ اِذْ رَمَيْتَ وَلٰكِنَّ اللهَ رَمٰى "(٢) اوهان جنهن وقت پٿريون اڇلائي هنيون تہ اهي اوهان نہ پر الله اڇلائي هنيون.

## فائدو ٢

نبي ڪريم صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن خالق ۽ مخلوق جي وچ ۾ واسطو ۽وڏو وسيلو آهن جيڪڏهن هيءُ وڏو واسطو وچ ۾ نہ هجي ها تہ اسان کي قرآن،ايمان ۽ عرفان جي هوا بہ نصيب نہ ٿئي ها حضور صلى الله عليه وسلم جن لاءِ آيو "نَتْلُوْا عَلَيْكَ"(اسين ٿا اوهان جي اڳيان تلاوت ڪريون) ۽ اسان لاءِ آيو "يَتْلُوا عَلَيْهِمْ" (نبي ڪريم صلى الله عليه وسلم جن) ٿا تلاوت ڪن انهن جي اڳيان.

## فائدو٣

"بِالْحَقِّ" مان ثابت ٿيو تہ قرآن ڪريم جون آيتون پاڻ بہ حق آهن ۽ انهن کي نازل ڪندڙ رب بہ حق آهي. آڻڻ وارو جبرئيل امين، وٺڻ وارو محبوب عليه الصلواة والسلام، پڙهڻ وارا، ۽ دنيا جي ڪنڊ ڪڙڇ ۾ پهچائڻ وارا اصحاب سيئي حق آهن. بلڪ قرآن جي لهڻ وارو زمانو ۽ جنهن جاءِ تي قرآن لٿو اهي بہ سڀ حق آهن. اعلىٰ حضرت مولانا شاه احمد رضا خان صاحب عليه الرحمة فرمايو آهي

نور آيا نور لايا نور پر نوراني رات
اسلئے رمضان کا سارا مهينہ نور هے
جس طرف کو اٹھ گئي عالم منور هو گئے
ميں تيری آنکھوں کے صدقہ ان ميں کتنا نور هے

جيئن سج جيڏانهن بہ توجهہ ڪندو آهي تہ رات مان ڏينهن ڪري ڇڏيندو آهي تيئن مصطفىٰ ڪريم صلى الله عليه وسلم جن بہ جيڏانهن توجهہ فرمائيندا آهن اوڏانهن ايمان، عرفان، تقوىٰ ۽ حقانيت جو سج اڀرندو ۽ ڏينهن ٿيندو آهي.

(١) سورة الفتح آيت ١٠ (٢) سورة الانفال آيت ١٧

# فائدو ۴

"لِلّٰہِ" ۾ لام تمليڪ جو يعني مالڪ بنائڻ جو آهي معنيٰ جيڪا شيءِ آسمانن ۽ زمينن ۾ آهي اها سڀ الله تعالىٰ جي حقيقي ۽ مخلوق جي عارضي ملڪيت آهي مخلوق ڪي انهن جو مالڪ سڏڻ مجازا آهي شرڪ ناهي. جيئن پيا انسان ڪيترن شين جا مالڪ سڏائين ٿا حالانڪ حقيقت ۾ اهي سڀ شيون الله تعالىٰ جي ملڪيت آهن حضور عليه الصلواة والسلام جن لاءِ به چوڻ ته محبوب اسان جو مالڪ آهي مجازا جائز آهي ڪفر نه آهي اعلىٰ حضرت عليه الرحمه فرمايو آهي.

مين تو مالڪ هي ڪهون گا ڪہ هو مالڪ ڪےحبيب
يعني محبوب اور محب مين نهين ميرا تيرا

علامہ قاضي عياض عليه الرحمة لکيو آهي تہ قال سهل من لم ير ولاية الرسول (ﷺ) عليه فى جميع الاحوال ويري نفسه فى ملكه صلى الله عليه وسلم لا يذوق حلاوة سنته يعني جنهن پنهنجي مٿان رسول الله صلى الله عليه وسلم جن جي والي هجڻ ۽پنهنجي وجود ڪي سندن ملڪيت ۾ نہ ڏٺو. اهو سندن سنت جو مٺاڻ نہ چکي سگهندو. علامه شهاب الدين خفاجي عليه الرحمه الشفا جي شرح ۾ هنن لفظن جي وضاحت ڪندي لکيو آهي تہ: اي يملكه حتىٰ كانه عبده صلى الله عليه وسلم (۱) يعني حضور صلى الله عليه وسلم جن ڪي پنهنجو ائين مالڪ آقا سمجهي جڻ پاڻ سندن خريد ڪيل ٻانهو آهي.

كُنْتُمْ خَيْرَ اُمَّةٍ اُخْرِجَتْ لِلنَّاسِ تَاْمُرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ وَتَنْهَوْنَ

آهيو اوهان پلي امت جو ظاهر ڪئي ويئي ماڻهن جي (ڀلائيءَ ۽ هدايت) لاءِ حڪم ٿا ڪيو نيڪيءَ جو ۽ روڪيو ٿا

عَنِ الْمُنْكَرِ وَتُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ ؕ وَلَوْ اٰمَنَ اَهْلُ الْكِتٰبِ لَكَانَ

برائيءَ کان ۽ ايمان ٿا آڻيو الله تي ۽ جيڪڏهن ايمان آڻين ها اهل ڪتاب تہ هجي ها

خَيْرًا لَّهُمْ ؕ مِنْهُمُ الْمُؤْمِنُوْنَ وَاَكْثَرُهُمُ الْفٰسِقُوْنَ ﴿۱۱۰﴾

ڀلو انهن جي لاءِ ڪي انهن مان ايمان وارا آهن ۽ گهڻا انهن مان فاسق آهن.

(۱) نسيم الرياض شرح شفا قاضي عياض ۳۴۷ جلد۳

# شان نزول

حضرت عکرمه کان روايت آهي ته هڪ ڀيري ڪجهه يهودين، حضرت عبدالله بن مسعود ، ابي بن ڪعب، معاذ بن جبل ۽حذيفه جي آزاد ڪيل غلام سالم ۽ ٻين انصارن رضي الله تعالىٰ عنهم کي چيو ته اوهان مسلمانن ۾ ڪهڙي خوبي ڏني؟ جو اسان کي ڇڏي انهن سان ملي ويا آهيو اصحابن جواب ۾ چيو ته مسلمانن جو دين پلو دين ۽ اهي امتن ۾ پلي امت ۽ انهن جو نبي عليه الصلواة والسلام ٻين نبين عليهم الصلواة کان پلو آهي. يهودين چيو ته: يهوديت سيني دينن کان پلو دين ۽ بني اسرائيل سيني ماڻهن کان پلا آهن. خود قرآن ڪريم ۾ آهي "وَاَنِّیۡ فَضَّلۡتُكُمۡ عَلَى الۡعٰلَمِيۡنَ"(١) ۽ بيشڪ مون اوهان کي جهانن تي فضيلت ڏني آهي.

تڏهن الله تعالىٰ يهودين جي رد ۽ انصارن جي تائيد ۾ هيءَ آيت نازل فرمائي[۲]

۽ حضرت ابن عباس رضي الله تعالىٰ عنهما کان روايت آهي ته جڏهن يهودين مان حضرت عبدالله بن سلام ،ثعلبه بن شيبه، اسيد بن عبيد ۽ ٻين ايمان آندو ته يهودين جي ڪن اڳواڻن ۽ڪافرن چيو ته اسان ۾ بڇڙا هي آهن جن پنهنجن وڏن جو دين ڇڏي محمدي دين قبول ڪيو آهي انهن جي رد ۾ هيءَ آيت نازل ٿي (٣) ۽ هن آيت ۾ اول ٻڌايو ويو آهي ته اي محمدي امتيئو! اوهان خير الامم جي جليل القدر لقب سان نوازيل آهيو جو جيتريون به امتون اڄ تائين وجود ۾ آيون آهن انهن سيني کان پلا آهيو. علامه ثناءالله پاني پتيءَ عليه الرحمة لکيو آهي ته ان ڳالهه تي اجماع آهي ته سيني امتن کان هيءَ امت پلي آهي ۽ انهن ۾ وري اصحاب سڀئورا رضي الله تعالىٰ عنهم سيني کان پلا آهن. (٤)

# نبوي حديثن مان هن امت جون پلايون

## حديث (١)

طبرانيءَ اوسط ۾ سهڻيءَ سند سان حضرت عمر بن خطاب رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت ڪئي آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "اَلۡجَنَّةُ حُرِمَتۡ

(١) سورة البقره آيت ٤٧ (٢) خازن ص٢٧ جلد١
(٣) ڪمالين شرح اردو جلالين ص٤٣٥ جلد١ (٤) مظهري ص١١٣ جلد٢

عَلَى الْاَنْبِيَاءِ حَتّٰى اَدْخُلَهَا وَحُرِّمَتْ عَلَى الْاُمَمِ حَتّٰى يَدْخُلَهَا اُمَّتِىْ" يعني جيستائين مان جنت ۾ داخل ٿيان تيستائين جنت ٻين نبين عليهم الصلواة والسلام تي حرام آهي ۽ جيستائين منهنجي امت جنت ۾ داخل ٿئي تيستائين جنت ٻين امتن تي حرام آهي.

## حديث (٢)

طبرانيءَ اوسط ۾ حضرت ابن عباس رضي الله تعالىٰ عنهما کان مرفوع روايت آندي آهي ته حضور صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو. "اَلْجَنَّةُ مُحَرَّمَةٌ عَلىٰ جَمِيْعِ الْاُمَمِ حَتّٰى اَدْخُلَهَا اَنَا وَاُمَّتِيْ اَلْاَوَّلُ فَالْاَوَّلُ" يعني بهشت سڀني امتن تي تيستائين حرام آهي جيستائين ان ۾ مان ۽ منهنجا امتي ڦيريون پوءِ ڦيريون ٿي داخل ٿيون.

## حديث (٣)

ترمذيءَ سهڻي سند ۽ حاکم صحيح سند سان روايت آندي آهي ته رسول الله صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو " اَهْلُ الْجَنَّةِ مِاَةٌ وَعِشْرُوْنَ صَفًا ثَمَانُوْنَ مِنْهَا مِنْ هٰذِهِ الامة وَالْبَاقُوْنَ مِنْ سَائِرِ الْاُمَمِ " يعني جنت وارا هڪ سؤ ويهه (١٢٠) صفون هوندا جن مان اسي (٨٠) هن امت مان هوندا ۽ باقي ٻين امتن مان. هنن حديثن لکڻ کان پوءِ علامه ثناءالله پاني پتيءَ لکيو آهي ته قلت رجال هذه الامة اكثر ارشادا واقوىٰ تاثيرا في الناس بالجذب الي الله تعالىٰ من رجال الامم السابقة وكان قطب ارشاد كمالات الولاية علي عليه السلام مابلغ احد من الامم السابقة درجة الاولياء الا بتوسط روحه رضي الله تعالىٰ عنه ثم كان بتلك المنصبة الائمة الكرام ابناؤه الى الحسن العسكري وعبدالقادر الجيلي ومن ثم "قال ووقتي قبل قلبي قد صفالي" وهو عليٰ ذالک المنصب الیٰ يوم القيٰمة ومن ثم قال (شعر) افلت شموس الاولين وشمسنا ابدا علي افق العليٰ لا تغرب(١) يعني مان چوان ٿو ته هن امت جا مرد ڪامل اڳين امتن کان ارشاد جي لحاظ سان گهڻا ۽ ماڻهن ۾ الله ڏانهن ڇڪڻ جي لحاظ سان وڌيڪ قوت وارا آهن ۽ ولايت جي ڪمالات جو قطب ارشاد (حضرت) علي عليه السلام آهي اڳين امتن مان ڪو به ولايت جي درجي کي حضرت عليءَ جي روح جي واسطي کان سواءِ نه پهتو هو. ان کان پوءِ سندس ان مرتبي تي سندن اولاد مان امام سڳورا پهتا تانجو حضرت امام

(١) تفسير مظهري ص١١٣ ۽ ١١٤ جلد٢

حسن عسڪري ۽ عبدالقادر جيلاني رحمة الله عليهما آيا ۽ ان جي ڪري ئي سيدنا عبدالقادر جيلاني عليه الرحمة فرمايو هو تہ" منهنجو وقت منهنجي دل جي طرفان مون لاءِ صاف ٿيو هو" ۽ اهو حضرت "عبدالقادر" ان منصب تي قيامت تائين آهي ۽ ان جي ڪري ئي فرمايو اٿس تہ"اڳين جا سج لهي ويا ۽ اسان جو سج هميشہ بلنديءَ جي چوٽين تي بيٺو آهي نہ لهندو. هڪ ڀيري حضرت عبدالقادر جيلانيءَ وعظ ڪندي حضرت خضر (عليه السلام) ڪي ڏٺو تہ اڏامندو پيو وڃي پاڻ ان ڪي سڏي فرمايائون تہ"قف يا اسرائيلي! واسمع ڪلام المحمدي- اي اسرائيلي بيهہ محمدي ولي جو ٻول ٻڌيو وڃ. اهي لفظ ٻڌي حضرت خضر (عليه السلام) گوڏا پيجي ويٺو ۽ سندس وعظ ٻڌائين(١)

## فائدو

علامہ ابن ڪثير لکيو آهي تہ وانما حازت هذه الامة قصب السبق الي الخيرات بنبيها محمد صلواة الله وسلامہ عليه فانہ اشرف خلق الله واڪرم الرسل على الله وبعثہ الله بشرع ڪامل عظيم لم يعطہ نبي قبلہ ولا رسول من الرسل (٢) يعني هيءَ امت ان مرتبي ڪي سندن نبي حضرت محمد صلواة الله وسلامہ عليه جن جي واسطي سان پهتي آهي. بيشڪ پاڻ الله جي خلق ۾ وڏي شرف وارا ۽ رسولن ۾ وڏيءَ عزت وارا آهن. ڪين الله تعالىٰ اهڙي ڪامل وڏي شريعت سان موڪليو آهي جيڪا اڳ ۾ ڪنهن بہ نبي ۽رسول ڪي عطا نہ ٿي هئي. ان ڪان سواءِ هن امت جي ڀلي هجڻ جا هي بہ اسباب آهن. ١- هڪ تہ انهن جي زندگيءَ جو مقصد گهڻو پاڪ ۽ نهايت بلند آهي. اهي ان لاءِ ئي زنده ۽ ان لاءِ ئي ڪوشش ڪندڙ آهن تہ حق ۽ سچ هميشہ مٿي هجي هدايت عامُ ۽ باطل ختم ۽ سهڻن اخلاقن ڪي مقبوليت حاصل ٿئي. دنيا جي طاقتور انسان ڪي ظالم ۽ مسڪين ۽ ڪمزور ڪي مظلوم ڪري ڇڏڻ واريون حيواني رسمون ۽رواج ميٽي ختم ڪري ڇڏين. سڀ ڪان وڏيڪ سچي ڳالهہ هيءَ آهي تہ الله تعالىٰ جي توحيد تي پاڻ بہ ايمان آڻين ٿا ۽ ٻين ڪي بہ چون ٿا نيڪيءَ جو امر ڪرڻ، برائي ڪان روڪڻ، الله تعالىٰ تي ايمان رکڻ واري ڳالهہ جيتوڻيڪ اڳين امتن ۾ بہ هئي پر جيڪو امر بالمعروف جو شان ۽ نهي عن المنڪر جو جلال ۽ الله تعالىٰ تي ايمان آڻڻ جو گهرو ڪمال هن امت ڪي عطا ٿيو آهي اهو ڪنهن ڪي بہ نہ مليو آهي. جنهن همت، خلوص ۽ قربانيءَ سان هنن اهو امانت جو بار ڪنيو آهي ائين ڪنهن بہ نہ ڪنيو آهي ان

(١) تنوير الايمان ص١۴ پ۴ (٢) ابن ڪثير ص٣٩١ جلد١

جي ڪري هيءَ امت ان ڳالهہ جي صحيح حقدار آهي تہ اقوام عالم ۾ انهن تي افضليت جو تاج رکيو وڃي. ۲- ٻيو تہ ٻين قومن ۾ امتن جي هدايت واري فيض کان محدود علائقو ۽ مخصوص قوم مقرر وقت تائين مستفيض ٿي سگهي . پر مصطفوي امت عليٰ نبيها الصلواة والسلام جي قوم جو ڪڪر بحر ۽بر، هيناهينءَ ۽ مٿاهين، ڪاري ۽ اڇي، ويجهي ۽پراهين هر خطي تي وسيو، وسي ٿو ۽ وسندو رهندو ۽ سيني اڃايلن جي اڃ لاهيندو اها اها سخاوت آهي جنهن کان اڳين دنيا متعارف نہ هئي.

## سوال

شيعا چوندا آهن تہ اصحاب ڪرام رضي الله تعاليٰ عنهم (معاذالله) غاصب ۽ ظالم هئا جبر ۽ تشدد انهن جو شيوو ۽معصومن جا مال ضبط ڪرڻ سندن دستور هو. حضور صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن جي پياري حضرت علي ۽ سندن پياريءَ نياڻيءَ فاطمه الزهراءِ رضي الله تعاليٰ عنها جو حق ڪائي ويا. (الله تعاليٰ اهڙي بهتان هڻڻ ۽ ان عقيدي رکڻ کان بچائي).

## جواب

انهن کي سمجهايو تہ قرآن ڪريم ۾محمدي امت عليٰ رسوله الصلواة والسلام جي جيڪا ڀلائي ۽ڀلائيءَ جا وجهہ بيان ڪيا ويا آهن انهن تي غور ڪيو ڇا هي امت غاصب ظالم ۽ لٽيري هجڻ جي ڪري ڀلي آهي؟ يا ظلم جو شڪار رهڻ، جرئت، شجاعت ۽ بهادريءَ کان ايترو خالي هجڻ جي ڪري جو انهن جي اڳيان قرآن ڪريم جون آيتون مٽايون ويون، بلڪ شيعن جي بقول پنهنجي طرفان آيتون ٺاهي قرآن ۾ وڌايون ويون، شرعي حڪمن ۾ تبديلي ڪئي ويئي پر تڏهن بہ ڀلارا ماٺ ۾ رهيا نہ امر بالمعروف ڪيائون نہ برائيءَ کان روڪيائون نہ لڙيا نہ وڙهيا نہ ڪڇيا ڇا ايڏا ڏيجهو ڀلاري امت ٿي سگهندا؟ ۽ جڏهن ٻئي ٿولا ڀلي امت ۾ نہ آهن تہ انهن کي الله تعاليٰ "خير امة" ڀلي امت ڪيئن سڏيو؟ ڇا الله تعاليٰ کي انهن جي باطن جي (معاذالله) خبر نہ هئي؟ يا انهن جي مستقبل جو علم نہ هو ۽ ناواقفي ۽ بي علميءَ جي حالت ۾ انهن کي اهو اعزاز ڏنائين جنهن جا اهي لائق ئي نہ هئا. يا (معاذالله) چئو تہ خدا تعاليٰ کي خبر تہ هئي پر هرو ڀرو انهن جي خوشامد ڪيائين ۽ جڏهن ائين نہ آهي ۽ يقيناً نہ آهي تہ پوءِ اهو پڪو

عقيدو رکڻو پوندو ته صحابه ڪرام جي خلاف جيڪو ڪجهه چيو ٿو وڃي سو نجو
ڪوڙ ۽ اسلام دشمنن جي وڏي سازش آهي. الغرض ته هن آيت ۾ حضور عليه الصلواة
والسلام جن جي امت جو شان ۽مرتبو بيان ڪيو ويو آهي. جيئن پاڻ سڀني نبين
جاسردار۽ انهن کان ڀلاآهن تيئن سندن امت به ٻن وجهن جي ڪري سڀني امتن کان
ڀلي آهي، خاص ڪري اصحاب سڳورا رضي الله تعالىٰ عنهم. ١- هڪ ته جڏهن هرڪو
سمجهدار ماڻهو پنهنجي محبوب ۽ پياري ڪي ٻچڙن ۽ ٻرن ماڻهن جي صحبت ۾ نه
ڇڏيندوآهي ۽ پنهنجي اولاد لاءِ به سٺو دوست، سٺو رشتو ۽ سٺي مائٽي تلاش
ڪندو آهي ته نبي اڪرم صلى الله عليه وسلم جن لاءِجيڪي الله تعالىٰ
گهر واريون ۽اصحاب منتخب ڪيا هئا سي ڪيئن
برا هوندا؟ يقينًا الله تعالىٰ پنهنجي حبيب عليه الصلواةوالسلام جن ڪي ساٿي ۽
گهر واريون به چونڊي،منتخب ڪري عطا فرمايون آهن "كُلًّا وَعَدَاللهُ الْحُسْنىٰ" (١)
چئي الله تعالىٰ حضور عليه الصلواة والسلام جن جي سڀني
صحابن ڪي جنتي بنايو ۽ "اَمْتَحَنَ اللهُ قُلُوْبَهُمْ لِلتَّقْوىٰ (٢) ( آزمايو الله سندن دلين ڪي
تقويٰ لاءِ) فرمائي انهن جو امتحان وٺي "وَاَلْزَمَهُمْ كَلِمَةَ التَّقْوىٰ" (۽ لازم ڪيائين انهن
ڪي تقويٰ جو ڪلمو) فرمائي انهن ڪي ڪاميابيءَجي ڊگري ڏئي ڇڏيائين ٢- ٻيو ته
"وَكَرَّهَ اِلَيْكُمُ الْكُفْرَ وَالْفُسُوْقَ وَالْعِصْيَانَ" (۽ ناپسند بنايائين اوهان ڏانهن ڪفر ۽
فسق ۽ گناهن ڪي) فرمائي الله تعالىٰ انهن ڪي ڪفر، فسق ۽ گناهن کان پاڪ قرارڏنو آهي.

## فائدو

ڪنهن ڳالهه جي لاءِ جيڪڏهن قرآن ۽ حديث مان دليل نه ملي ته ان لاءِ
مسلمانن جو اجماع به شرعي حجت آهي.امت جي علماءِ جي اتفاق سان ڪنهن مسئلي
لاءِ ڪو فيصلو ڏيڻ سان ان فيصلي ڪي مڃڻ لازم آهي جيئن علامه رازيءَ لکيو آهي ته
احتج اصحابنا بهذه الاية ان اجماع الامة حجة (٥) يعني هن آيت سان اسان جي علماءِ دليل
ورتو آهي ته امت جو اجماع حجت آهي.

## فائدو

هن سورة جي نائين(٩)رڪوع ۾ "وَاِذْ اَخَذَاللهُ مِيْثَاقَ النَّبِيّٖنَ" کان نبي ڪريم

(١) سورة الحديد آيت ١٠ (٢) سورة الحجرات آيت ٣ (٣) سورة الفتح آيت ٢٦
(۴)الحجرات آيت ٧ (٥) تفسير ڪبير ص١٧٨ جزءِ ٨

صلى الله عليه وسلم جن جي امامت ۽ جامعيت كبرىٰ جو بيان هو. ڏهين (١٠) رڪوع ۾ "اِنَّ اَوَّلَ بَيۡتٍ وُّضِعَ لِلنَّاسِ لَلَّذِيۡ بِبَكَّةَ" ڪان هن امت جي قبلي جي برتريءَ جو ذڪر آيو يارهين (١١) رڪوع ۾ "وَاعۡتَصِمُوۡا بِحَبۡلِ اللّٰهِ جَمِيۡعًا" ڪان هن امت جي ڪتاب ۽ شريعت جي مضبوطيءَ جو ذڪر آيو ۽ هاڻي هتي ٻارهين (١٢) رڪوع جي ابتدا ڪان هن امت جي خصوصي فضيلت ۽ عظمت بيان ڪئي ٿي وڃي.

"وَلَوۡ آمَنَ اَهۡلُ الۡكِتَابِ" الايه يهودي ۽ نصاريٰ چوندا هئا تہ جيڪڏهن اسان ايمان آڻينداسون تہ اسان جي اڳواڻي ۽ وڏائپ ختم ٿي ويندي هتي انهن کي خبردار ڪيو ويو آهي تہ سندن اهي انديشا غلط آهن. انهن جي عزت، برتري، بلندي ۽ ٻنهي جهانن جي سعادت تہ ان ۾ آهي جو اهي ايمان آڻي، حق قبول ڪري دنيا ۽ آخرت ۾ عزت ۽ وقار حاصل ڪن. پر ان روشن حقيقت کي ٿورن سڃاڻي ايمان آندو آهي. اڪثر بي فرمان رهيا آهن.

لَنۡ يَّضُرُّوۡكُمۡ اِلَّاۤ اَذًى ؕ وَاِنۡ يُّقَاتِلُوۡكُمۡ يُوَلُّوۡكُمُ الۡاَدۡبَارَ قف

اصل نہ نقصان ڏئي سگهندا اوهان کي سواءِ (زباني) ايذاءَ جي ۽ جيڪڏهن جنگ ڪندا اوهان سان تہ ڦيرائي ڏيندا اوهان کي پٺيون

ثُمَّ لَا يُنۡصَرُوۡنَ ﴿١١١﴾ ضُرِبَتۡ عَلَيۡهِمُ الذِّلَّةُ اَيۡنَ مَا ثُقِفُوۡۤا اِلَّا بِحَبۡلٍ

ان کان پوءِ نہ مدد ڪيا ويندا. هنئي وئي انهن تي ذلت (خواري) جتي بہ لڌا ويا مگر

مِّنَ اللّٰهِ وَحَبۡلٍ مِّنَ النَّاسِ وَبَآءُوۡ بِغَضَبٍ مِّنَ اللّٰهِ وَضُرِبَتۡ عَلَيۡهِمُ

الله جي عهد سان يا ماڻهن جي عهد سان ۽ حقدار ٿيا الله جي غضب جا ۽ هنئي وئي انهن تي محتاجي.

الۡمَسۡكَنَةُ ؕ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمۡ كَانُوۡا يَكۡفُرُوۡنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ

اهو ان جي ڪري جو بيشڪ اهي ڪفر ڪندا هئا آيتن جو

وَيَقۡتُلُوۡنَ الۡاَنۡۢبِيَآءَ بِغَيۡرِ حَقٍّ ؕ ذٰلِكَ بِمَا عَصَوۡا وَّكَانُوۡا يَعۡتَدُوۡنَ ﴿١١٢﴾ ق

۽ شهيد ڪندا هئا نبين کي ناحق اهو ان جي ڪري جو بي فرماني ڪيائيون ۽ حد کان لنگهندا هئا.

## تفسير

مديني پاڪ ۾ رهندڙ يهودي وڏي اثر رسوخ جا مالڪ هئا، انهن وٽ نہ دولت جي کوٽ هئي ۽ نہ جنگ جي سامان جي، انهن ۾ وڏا وڏا جنگي جوان بہ هئا جن خيبر جي پرانهين علائقي تائين مضبوط قلعا ٺاهي ڇڏيا هئا، سندن زندگيءَ جي وڏي آرزو اها هئي تہ اهي پرديسين ۽ مسڪينن مسلمانن کي ميٽي ختم ڪري ڇڏين. پر الله تعالىٰ هنن آيتن ۾ حضور اڪرم ﷺ جن ۽ سندن اصحابن رضي الله تعالىٰ عنهم کي تسلي ڏيندي ٻڌايو تہ يهودي ان طاقت ۽ قوت جي هوندي بہ اوهان تي غالب ٿي نہ سگهندا، وڌ ۾ وڌ اهي اهو ڪري سگهن ٿا جو اوهان کي زباني گندگار ڏئي اوهان جي دلين کي ڏک پهچائيندا ۽ جيڪڏهن ڪٽي دل جهلي جنگ لاءِ تيار ٿيا تہ بہ جنگ جي ميدان ۾ ايندئي پوئين پيرين ڀڄندا.

"ضُرِبَتۡ عَلَيۡهِمُ الذِّلَّةُ" کان ٻڌايو ويو تہ ذلت ۽ محتاجي انهن جو مقدر ٿي چڪو آهي، مگر ٻن رستن سان بچي سگهن ٿا، هڪ "حَبۡلٌ مِّنَ اللّٰهِ" يعني اسلام قبول ڪن يا ڪنهن مسلمان ملڪ جا پر امن شهري ٿي رهن. ٻيو "حبل من الناس" معنيٰ ٻين جي سهاري ۽ پشت پناهيءَ سان سڪون وٺي سگهن ٿا. جيئن هينئر اسرائيلي، آمريڪا جي سهاري هلي رهيا آهن.

" ذَالِكَ بِاَنَّهُمۡ كَانُوۡا يَكۡفُرُوۡنَ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ" کان ٻڌايو ويو آهي تہ اها سزا انهن کي هرو ڀرو نہ پر سندن ڪفر ڪرڻ ۽ الله تعالىٰ جي نبين عليهم الصلواة والسلام کي ناحق قتل ڪرڻ، گناه ڪرڻ ۽ حد کان لنگهڻ جي ڪري ملي آهي.

لَيۡسُوۡا سَوَآءً ؕ مِنۡ اَهۡلِ الۡكِتَابِ اُمَّةٌ قَآئِمَةٌ يَّتۡلُوۡنَ اٰيٰتِ اللّٰهِ

ناهن (سڀئي) برابر اهل ڪتاب مان هڪ جماعت (حق تي) قائم آهي تلاوت ٿا ڪن آيتون الله جون

اٰنَآءَ الَّيۡلِ وَهُمۡ يَسۡجُدُوۡنَ ﴿۱۱۳﴾ يُؤۡمِنُوۡنَ بِاللّٰهِ وَالۡيَوۡمِ الۡاٰخِرِ

رات جي وقتن ۾ ۽ اهي سجدا ٿا ڪن ايمان ٿا آڻين الله تي ۽ ڏينهن قيامت تي

وَيَاۡمُرُوۡنَ بِالۡمَعۡرُوۡفِ وَيَنۡهَوۡنَ عَنِ الۡمُنۡكَرِ وَيُسَارِعُوۡنَ فِى

۽ امر ٿا ڪن نيڪيءَ جو ۽ روڪين ٿا برائيءَ کان ۽ جلدي ٿا ڪن

الْخَيْرَاتِ ۭ وَاُولٰۗئِكَ مِنَ الصّٰلِحِيْنَ ﴿١١٤﴾ وَمَا يَفْعَلُوْا مِنْ خَيْرٍ

نيڪيءَ جي ڪمن ۾ ۽ اهي صالحن مان آهن ۽ جيڪي ڪن ٿا نيڪي

فَلَنْ يُّكْفَرُوْهُ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِالْمُتَّقِيْنَ ﴿١١٥﴾ اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَنْ

پوءِ اصل نه بي قدري ڪيا ويندا ان جي ۽ الله چاڻندڙ آهي پرهيزگارن جي. بيشڪ اهي شخص جو ڪفر ڪيائون هرگز نه

تُغْنِيَ عَنْهُمْ اَمْوَالُهُمْ وَلَآ اَوْلَادُھُمْ مِّنَ اللّٰهِ شَـيْـــًٔا ۭ وَاُولٰۗئِكَ

دفع ڪندا انهن کان انهن جا مال ۽ نه انهن جو اولاد الله جي عذاب کان ڪا شيءِ ۽ اهي

اَصْحٰبُ النَّارِ ۚ ھُمْ فِيْھَا خٰلِدُوْنَ ﴿١١٦﴾

جهنمي آهن. اهي ان ۾ هميشه هوندا.

## تفسير

ابن اسحاق، ابن جرير، ابن المنذر، ابن ابي حاتم، طبراني، ابن منده، ابو نعيم ڪتاب المعرفة ۾ بيهقي دلائل ۾ ۽ ابن عساڪر عبدالله بن عباس رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي ته جڏهن عبدالله بن سلام- ثعلبه بن سعيد، اسيد بن سعيد ۽ ٻين يهودين ڪي ڇڏي اسلام قبول ڪيو ته يهودين چيو ته اهي اسان مان برن ۾ برا آهن. جيڪڏهن ڀلارا هجن ها ته ابن ڏاڏن جي دين ڪي نه ڇڏين ها پوءِ الله تعالىٰ "ليسوا سواءً" آيت نازل فرمائي (١) ٻڌايو ته اهل ڪتاب سڀئي هڪ جهڙا نه آهن ايترن برن ۾ ڪجهه ڀلا ۽ انهن بدبختن ۾ ڪجهه نيڪ بخت به آهن جن ڪي الله تعالىٰ حق قبول ڪرڻ جي توفيق عطا ڪئي آهي ۽ اهي اسلام ۾ اچي سڌيءَ واٽ تي اهڙا ته مستقيم ٿي ويا آهن جو ڪين ان کان ڪا به طاقت هٽائي نه ٿي سگهي، اهي رات جي انڌيرن ۾ مٺي ننڊ ۽ نرم بسترا ڇڏي الله تعالىٰ جي بارگاهه ۾ بيهندا ۽ سندس سامهون نهايت عاجزي ۽ انڪساري اختيار ڪندا آهن. نماز ۾ الله تعالىٰ جي ڪلام ڪريم جي تلاوت ڪندا الله تعالىٰ ۽ قيامت جي ڏينهن کان ڊڄندا آهن ۽ جڏهن ڪنهن نيڪيءَ جي ڪم ڏانهن سڏيا ٿا وڃن ته ٻين کان وڌي اڳتي ٿي ڪم ڪندا آهن ۽ نه صرف ايترو ته پاڻ نيڪي

(١) فتح القدير ص٣٧٤ جلد١

کن ٿا پر ہين کي بہ سهڻا اخلاق سيکاري سڌي رستي تي آڻڻ ۽ انهن جي اصلاح جي ڪوشش ڪندا آهن.

"وَمَا يَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ" کان ہڌايو ويو آهي تہ انهن جي نيڪيءَ جي بي قدري نہ ڪئي ويندي پر انهن کي ٻيڻو اجر ڏنو ويندو، جيئن ٻي آيت ۾ آهي. "اولئِک يُؤْتَوْنَ اَجْرَهُمْ مَرَّتَيْنِ" (۱) اهي ٻيڻو اجر ڏنا ويندا، باقي جن ڪفر ڪيو انهن ڪي مال، اولاد ڀلي گهڻو هجي پر اهي ڪين فائدو نہ ڏيندا ۽ نہ الله تعالیٰ جي عذاب کان بچائي سگهندا.

## هنن آيتن مان هي فائدا حاصل ٿيا.

## فائدو۱

"اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا" مان ثابت ٿيو تہ ڪافرن کي انهن جا مال ۽ اولاد فائدو نہ ڏيندا پر ايمان وارن کي فائدو ڏيندا ڇو تہ انهن جو مال الله جي رضا لاءِ خرچ ٿيندو آهي ۽ انهن جو اولاد بہ گهڻو ڪري صالح ۽ نيک هوندو.

## فائدو۲

اصحاب عظام، علماءِ دين ۽اولياءِ ڪرام جي تعريف ڪرڻ الله جو پسند ڪيل طريقو آهي ڇو تہ اول پاڻ انهن جي تعريف ڪئي اٿس.

## فائدو۳

"لَيْسُوْا سَوَآءً" مان ثابت ٿيو تہ مومن ۽ ڪافر، متقي ۽ فاجر برابر نہ آهن ۽جڏهن اهي برابر ناهن تہ پوءِ نبي عليه الصلواة والسلام جن سان ٻيو ڪير ڪيئن برابر ٿي سگهندو؟ ڪيڏا نہ گستاخ آهن اهي جيڪي لکن ٿا تہ انبياءِ عليهم الصلواة والسلام امتيءَ کان علم ۾ وڌيک آهن باقي رهيو عمل سو ان ۾ گهڻا امتي نبيءَ سان برابر ٿي ويندا آهن، بلک وڌي ويندا آهن. (۲)

## فائدو ۴

تقيہ ڪري دين لڪائڻ بدترين گناهہ آهي الله تعالیٰ پنهنجن پيارن جي هيءَ سنت "يَاْمُرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ" (نيڪيءَ جو امر ٿا ڪن ۽

(۱)سورة القصص آيت ۵۴ (۲) تحذير الناس ص۷

برائيءَ کان روڪين ٿا) بيان ڪئي آهي.

## فائدو ٥

" اُولٰئِکَ مِنَ الصّٰلِحِیۡنَ " ۾ حضور صلی الله علیه وسلم جن جي پيارن اصحابن رضي الله عنهم کي صالح سڏيو ويو آهي ڪٿي"اُولٰئِکَ هُمُ الصّٰادِقُوۡنَ" آٿي سندن سچي هجڻ جو ذڪر ڪيوويو آهي تہ ڪٿي " اُولٰئِکَ هُمَ الۡمُؤۡمِنُوۡنَ حَقًا " چئي انهن کي پڪي مومن هجڻ جو سرٽيفڪيٽ ڏنو ويو آهي.

## فائدو ٦

"اٰنَاءَ الّیۡلِ" مان مراد رات جون گهڙيون آهن ۽ رات واري عبادت نفس تي ڀَري گذرندي آهي پر الله تعالیٰ وٽ ان جو وڏو اجر آهي. ابن ابي شيبہ، ابو داؤد ۽ بيهقيءَ السنن ۾ حضرت معاذ بن جبل رضي الله تعالیٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ هڪ رات حضور صلی الله علیه وسلم جن سومهاڻيءَ جي نماز کي ايتري دير ڪرائي جو گمان ڪندڙ گمان ڪيو تہ شايد سومهڻي پڙهي ڇڏي اٿن گهڻيءَ دير کان پوءِ پاڻ صلی الله علیه وسلم جن نڪتا، ۽ فرمايائون تہ" هيءَ نماز پڙهو ان سان اوهان کي ٻين امتن کان پلو ڪيو ويو آهي ۽ اها ڪنهن بہ اڳينءَ امت نہ پڙهي آهي (١)

مَثَلُ مَا یُنۡفِقُوۡنَ فِیۡ هٰذِهِ الۡحَیٰوةِ الدُّنۡیَا کَمَثَلِ رِیۡحٍ فِیۡهَا صِرٌّ

مثال تن جو جيڪي خرچ ٿا ڪن هن حياتيءَ دنيا واريءَ ۾ مثل هوا جي آهي جنهن ۾ سخت پارو آهي

اَصَابَتۡ حَرۡثَ قَوۡمٍ ظَلَمُوۡۤا اَنۡفُسَهُمۡ فَاَهۡلَکَتۡهُ ؕ وَمَا ظَلَمَهُمُ

جو پهتو پوک قوم جي کي جن ظلم ڪيو پنهنجن سرن تي پوءِ ان کي هلاڪ ڪيائين ۽ نہ ظلم ڪيائين انهن سان

اللّٰهُ وَلٰکِنۡ اَنۡفُسَهُمۡ یَظۡلِمُوۡنَ ﴿۱۱۷﴾

الله ۽ پر پنهنجن سرن تي پاڻ ظلم ٿا ڪن.

## تفسير

مڪي جي ڪافرن حضور عليه الصلواة والسلام جن سان دشمنيءَ جي

(١)الدر المنثور ص٢٩٧ جلد٢

ڪري بدر ۽ احد جي جنگ ۾ وڏا مال خرچ ڪيا هئا ۽ يهودي مذهب وارا وري پنهنجن مذهبي اڳواڻن کي غلط استعمال ڪرڻ لاءِ مال خرچ ڪندا هئا. هتي انهن جي مالن جي ضايع هجڻ ڪي، مثال سان سمجهايو ويو آهي (١) ته قران ڪريم جي حڪم "وَمَا يَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ فَلَنْ يُكْفَرُوهُ" مطابق مومنن جي ننڍي ۾ ننڍي نيڪي به انهن کي ڪم ڏيندي ان جي برخلاف ڪافر جيڪو به مال خرچ ڪندا پاڻ ان ڪي ڪيڏو به ثواب سمجهن پر آخرت ۾ ان جو ڪو قدر ۽ قيمت نه هوندي ڇو ته ايمان ۽ صحيح معرفت، عبادت ۽ خيرات جو روح آهن جيئن روح کان سواءِ جسم بيڪار آهي تيئن ايمان ۽ اخلاص کان سواءِ خير خيرات بيڪار آهي جنهن جو بدلو فاني ۽ ختم ٿيڻ وارو آهي، سٺي عمل جي لاءِ ابدي حفاظت ڪندڙ شيءِ ايمان ۽ يقين آهي. ان کان سواءِ عمل جو مثال ائين سمجهو جيئن ڪنهن ظالم قوم پوک ۽ باغ لڳايو هجي ۽ان جي حفاظت جو انتظام ڪرڻ کان سواءِ ان کي سرسبز ڏسي خوش ٿئي ۽ ان ۾ ڪئين اميدون رکي. پر مٿان اهڙي سخت سردي ۽ پارو اچي جو هڪدم ساري پوک ۽ باغ کي ختم ڪري ڇڏي ته ان کي صرف حسرت جا هٿ ملڻ نصيب ٿيندا نه ان جون اميدون پوريون ٿينديون ۽ نه محتاجيءَ جي وقت ان جي پيداوار مان فائدو وٺي سگهندو ۽ اها تباهي ۽ بربادي جڏهن ته سندس عملن جي سزا طور آندي وئي هوندي تنهن جي ڪري ان جو ڪيس آخرت ۾ ائين اجر به نه ملندو جيئن مومنن"اِنَّا لِلّٰهِ وَاِنَّا اِلَيْهِ رَاجِعُوْنَ" پڙهندڙن کي ملندو.

## فائدو!

هن آيت مان ثابت ٿيو ته عملن جي مقبوليت ۽ درستيءَ جو دارو مدار ايمان تي آهي، عملن جي مقبوليت جي لاءِ ايمان ائين ضروري آهي جيئن نماز لاءِ وضو. آخر ۾ ٻڌايو ويو ته انهن جي مالي قربانين کي قبول نه ڪرڻ انهن سان ظلم نه آهي، ڇو ته الله تعالىٰ ظلم ڪرڻ کان پاڪ آهي پر انهن پاڻ ايمان نه آڻي پاڻ تي پاڻهي ظلم ڪيو آهي نه ڪفر ڪن ها نه برباد ٿين ها.

## هڪ علمي نڪتو

هن آيت ۾" ريح" مفرد لفظ آندو ويو آهي ۽ ان جو جمع رياح آهي. قرآن ڪريم ۾ ريح مفرد لفظ گهڻو ڪري عذاب جي لاءِ موڪليل هوا کي سڏيو ويو آهي

(١) خازن ص٢٧۴ جلد١

جيئن فرمان آهي " رِيۡحٌ فِيۡهَا عَذَابٌ اَلِيۡمٌ " (هوا جو ان ۾ دردناڪ عذاب آهي) يا "وَلَئِنۡ اَرۡسَلۡنَا رِيۡحًا " ( جيڪڏهن موڪليندا سون هوا ڪي) يا " اِنَّا اَرۡسَلۡنَا عَلَيۡهِمۡ رِيۡحًا صَرۡصَرًا " وغيرها ۽ جتي الله تعاليٰ جي رحمت اچڻ جو بيان آهي اتي رياح جمع جو لفظ آيل آهي جيئن " يُرۡسِلُ الرِّيَاحَ مُبَشِّرَاتٍ " "وَاَرۡسَلۡنَا الرِّيَاحَ لَوَاقِحَ" "يُرۡسِلُ الرِّيَاحَ مُبَشِّرًا" (١)

يَآاَيُّهَاالَّذِيۡنَ آمَنُوۡا لَا تَتَّخِذُوۡا بِطَانَةً مِّنۡ دُوۡنِكُمۡ لَا يَاۡلُوۡنَكُمۡ

اي ايمان وارو! نہ ونو ڳجها دوست پنهنجن کان سواءِ (ٻين ڪي) نہ گهٽتائي ڪندا اوهان ڪي

خَبَالًاؕ وَدُّوۡا مَا عَنِتُّمۡۚ قَدۡ بَدَتِ الۡبَغۡضَآءُ مِنۡ اَفۡوَاهِهِمۡۚۖ وَمَا

نقصان پهچائڻ ۾ پسند ڪن ٿا ڪن اها شيءِ جو تڪليف ڏئي اوهان کي تحقيق ظاهر ٿي دشمني انهن جي واتن مان ۽ جيڪي

تُخۡفِيۡ صُدُوۡرُهُمۡ اَكۡبَرُؕ قَدۡ بَيَّنَّا لَكُمُ الۡاٰيٰتِ اِنۡ كُنۡتُمۡ

لڪائي ٿا رکن سينا انهن جا تمام وڏي (دشمني) آهي تحقيق بيان ڪيوسون اوهان لاءِ آيتون جيڪڏهن

تَعۡقِلُوۡنَ ﴿١١٨﴾

سمجهدار آهيو

## شان نزول

ابن جرير ۽ ابن اسحاق حضرت ابن عباس رضي الله تعاليٰ عنهما کان روايت آندي آهي تہ ڪي ڪي مسلمان يهودين سان پراڻن واسطن جي ڪري تعلقات قائم ڪيو ويٺا هئا الله تعاليٰ انهن کي منع ڪرڻ جي لاءِ هيءَ آيت نازل ڪئي، ۽ ڪن مفسرن لکيو آهي تہ ممڪن هو جو ڪي ڪي مسلمان بي توجهيءَ ۽ سادگيءَ جي ڪري پنهنجن مسلمانن جا راز ۽ ڳجهيون ڳالهيون منافقن سان ڪري وهن ها هن آيت ۾ انهن کي روڪيو ويو آهي (٢) هن آيت ۾ ٽن لفظن جي معنيٰ جي وضاحت ڪرڻ ضروري آهي. ١- هڪ "بِطَانَة" ڪپڙي جو اهو حصو جو اندران هوندو آهي ۽ جسم کي لڳندو آهي ان کي بطانہ الثوب چوندا آهن (٣) ۽ انهيءَ مناسبت سان ان دوست کي بہ

(١) مظهري ص١١٨ جلد٢ (٢) خازن ص٢٧٥ جلد١
(٣) روح المعانی ص٣٦ جلد٢

بطانہ سڏيو ويندو آهي جنهن تي ڪامل ڀروسو ۽ پورو پورو اعتماد هجي ۲- ٻيو "لا يالون" الا لو ڪان ورتل اهي ان جو ماضي ۽ مضارع الا يالو ٿيندو، الا في الامر معنيٰ قصر فيه- ڪنهن ڪم ۾ ڪوتاهي ڪرڻ ڪي الو چئبو آهي (۱) ٽيون ۳- خبالايقول فسادا (۲) يعني عملي، عقلي،جسماني خرابيءَ ۽ فساد ڪي خبال ۽ خبل چوندا آهن.

## تفسير

مديني منوره ۾مسلمان دشمنن جي ٻن ڌڙن ۾ ڦاٽل هئا،۱- هڪڙا يهودي ۲- ٻيا منافق- يهودين جا هڪ طرف حضور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن سان صلح جا معاهدا ڪيل هئا تہ ٻئي طرف مسلمانن جي دشمنن سان بہ مليل هوندا هئا، ۽ انهن ڪي مسلمانن تي چڙهائيءَ ڪرڻ لاءِ ڀڙڪائيندا رهندا هئا. منافقن جون زبانون ظاهري طرح تہ مسلمانن سان هيون پر انهن جون بہ دليون دين جي دشمنن سان هيون. هو مسلمانن ۾ رهي سندن راز جهڙيون ڳالهيون دشمنن کي ٻڌائيندا هئا، ۽ ائين ڪي سادا مسلمان بہ راز واريون ڳالهيون ظاهر ڪري ويهندا هئا، الله تعالىٰ هن آيت ۾ انهن کي هدايت ڪندي فرمايو آهي تہ اي مخلص مومنو! پنهنجن سچن مسلمانن کان سواءِ ڪنهن کي بہ رازدار نہ بڻايو نہ انهن سان صلاح مشورا ڪيو، اهي مخالف ڪنهن بہ قيمت تي اوهان کي نقصان پهچائڻ ۾ گهٽتائي نہ ڪندا،ا وهان جي ترقي انهن لاءِ ايذائيندڙ ۽ اوهان جي تڪليف انهن کي خوشي بخشيندڙ آهي. اوهان غور ڪري ڏٺو تہ ڪڏهن سندن منهن مان دشمنيءَ واريون ڳالهيون بي اختيار نڪري پونديون آهن جيڪا انهن جي اوهان سان هلڪي عداوت آهي پر جيڪي اوهان لاءِ انهن جي اندر ۾ باهيون آهن سي تمام وڏيون آهن، اهڙن ماڻهن سان دل جا راز سلڻ پنهنجي موت کي دعوت ڏيڻ جي برابر آهي. اسان اوهان کي سڀ ڪجهہ کولي ٻڌايو آهي جيڪڏهن عقل رکو ٿا تہ انهن کان پري رهو نہ تہ اهي اوهان کي تباهہ ۽ برباد ڪري ڇڏيندا.

## هن آيت مان هيءُ فائدا مليا

### فائدو ۱

الله تعالىٰ منع ڪئي آهي تہ يهودين، نصارن ۽ ڪافرن جي سيني قسمن

(۱) الڪشاف ص۴۵۸ جلد۱ (۲) قرطبي ص۱۸۰ جلد۴

سان دلي دوستي ۽رازداريءَ وارا تعلقات نہ رکو ۽ نہ انهن کي اهڙيون ذميداريون سونپيو. هڪ ڀيري حضرت ابو موسيٰ اشعريءَ رضي الله تعالىٰ عنه کجهہ حساب ڪتاب ناهي حضرت عمر رضي الله عنہ جي خدمت ۾ پيش ڪيو جيڪو ڪيس ڏاڍو وڻيو ۽ اتي ويٺي ئي حضرت عمر رضي الله تعالىٰ عنه جن ڏانهن ٻاهران هڪ خط آيو. پاڻ حضرت ابو موسيٰ اشعري رضي الله تعالىٰ عنه کي فرمايائون تہ: اوهان جو ڪاتب (لکڻ وارو همراهہ) ڪٿي آهي؟ تہ هيءُ خط ماڻهن کي پڙهي ٻڌائي؟ عرض ڪيائين تہ اهو مسجد ۾ نہ ايندو، حضرت عمر رضي الله تعالىٰ عنه پڇيو تہ ڇا ٿڙ وارو آهي؟ عرض ڪيائين تہ نہ نصارو آهي اهو ٻڌي حضرت عمر حضرت ابو موسيٰ اشعري رضي الله تعالىٰ عنهما کي تنبيہ ڪندي فرمايو تہ" جن کي الله پري رکيو آهي انهن کي ويجهو نہ آڻيو" جن کي الله تعالىٰ خوار ڪيو آهي انهن کي عزت نہ ڏيو جن کي الله تعالىٰ خيانت ڪندڙ سڏيو آهي انهن تي اعتماد نہ ڪريو" ان ئي امير المومنين حضرت عمر رضي الله تعالىٰ عنه جو فرمان آهي تہ يهودين ۽ نصارن کي نوڪرين ۾ نہ رکو، ڇو تہ اهي رشوت کي حلال ٿا سمجهن، پنهنجن دين ۽رعيتي ڪمن ۾انهن کي رکو جيڪي الله تعالىٰ کان ڊڄن ٿا. هڪ ڀيري ڪين عرض ڪيو ويو تہ حيره شهر ۾ هڪ نصارو آهي جنهن جا اکر ڏاڍا ڀلا آهن ان کي منشي ڪري نہ ٿا رکو؟ فرمايائون تہ" اها انهن سان اندروني دوستي آهي، جنهن کان الله تعالىٰ "لَا تَتَّخِذُوا بِطَانَةً مِّنْ دُوْنِكُمْ" چئي روڪيو آهي، انهن کي پنهنجي ڪاروبار، واپار وغيره ۾ بہ نوڪري ڏيڻ نہ گهرجي (١)

## افسوس موجوده دور

هن وقت تہ مسلمانن جي حالت چوڻ جهڙي ئي نہ آهي، انهن يهودين ۽ نصارن کي پنهنجا اڳواڻ ۽ امين بنائي رکيو آهي ۽ اهي جاهلن اميرن ۽ ملڪ جي واڳن سنڀالڻ وارن جا سردار لڳا وينا آهن.

مسلمان ملڪن جي زوال جي تاريخ پڙهو تہ ٻين سببن سان گڏ انهن جو اهو سبب بہ آهي تہ انهن غير مسلمانن کي پنهنجو راز دار بنايو هو. عثماني سلطنت جي زوال ۾ بہ ان ڳالهہ جو ڪافي عمل دخل هو.

## فائدو ٢

بي دين ۽ بد مذهبن مسلمانن سان بہ محبت رکڻ يا انهن کي

(١) القرطبي ص١٧٩ جلد٤

رازدار بنائڻ نقصان ڏيندڙ آهي علامہ ثناءُ الله پاني پتي عليه الرحمة لکيو آهي تہ وصيغة "من دونكم" يشتمل اهل الا هواءِ ايضا من الروافض والخوارج وغيرهم فلا يجوز مباطنتهم كما لا يجوز مباطنة الكفار (١)

يعني قرآن پاڪ جو لفظ "من دونكم" رافضين، خارجين ۽ پنهنجن خواهشن جي تابعدارن کي بہ شامل آهي انهن کي بہ اسلامي حکومتون راز واريون ڳالهيون نہ ٻڌائن جيئن ابن ابي حاتم ۽ طبرانيءَ جيد سند سان حضرت ابو امامه رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو تہ "هُمُ الْخَوَارِجُ" اهي (جن کي رازدار بنائڻ منع آهي) خارجي آهن. جيڪي حضرت علي رضي الله عنه سان بغض رکندا آهن.

هَاَنْتُمْ اُولَآءِ تُحِبُّوْنَهُمْ وَلَا يُحِبُّوْنَكُمْ وَتُؤْمِنُوْنَ بِالْكِتٰبِ

اوهين اهي آهيو جو محبت ٿا رکو انهن سان ۽ نہ ٿا محبت رکن اهي اوهان سان ۽ ايمان ٿا آڻيو ڪتابن

كُلِّهٖ ۚ وَاِذَا لَقُوْكُمْ قَالُوْٓا اٰمَنَّا ۚ وَاِذَا خَلَوْا عَضُّوْا عَلَيْكُمُ

سڀني تي ۽ جنهن وقت ملن ٿا اوهان سان تہ چون ٿا تہ ايمان آندوسون ۽ جڏهن اڪيلا ٿين ٿا تہ چڪين ٿا اوهان تي

الْاَنَامِلَ مِنَ الْغَيْظِ ۭ قُلْ مُوْتُوْا بِغَيْظِكُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌۢ

آڱريون ڪاوڙ جي ڪري فرماءِ تہ مري پئو پنهنجي ڪاوڙ جي ڪري بيشڪ الله ڄاڻندڙ آهي

بِذَاتِ الصُّدُوْرِ ﴿١١٩﴾

سينن وارين ڳالهين کي.

## تفسير

هٰ تنبيه لاءِ- انتم مبتدا ۽ اولاءِ ان جي خبر آهي (٢) هن آيت ۾ مسلمانن کي سندن پاڪيزه اخلاق ياد ڏيارينديس، سندن انساني احساسات جو اعتراف ڪندي، ڪين دشمنن جي ناپاڪ ارادن کان واقف ڪيو ويو آهي تہ اي مسلمانو! اوهان کي انهن سان محبت آهي پر هنن کي اوهان سان محبت ناهي اوهان الله تعالىٰ جي

(١) تفسير مظهري ص١١٨ ج٢ (٢) الکشاف ص٤٥٩ جلد١

سيني ڪتابن توراة، انجيل، زبور وغيره تي ايمان آڻي انهن کي مڃيو ٿا، انهن ڏانهن موڪليلن نبين عليهم الصلواة والسلام کي به سچو ڄاڻو ٿا. مناسب ائين هو ته اهي به اوهان جي نبي عليه الصلواة والسلام تي ايمان آڻي، ان تي نازل ٿيل ڪتاب، قرآن ڪريم کي مڃين ها پر هنن مشرڪن سان ساڻ ڏيئي اوهانجي خلاف انهن جي مدد ڪئي آهي ۽ جڏهن اوهان سان ملن ٿا ته چون ٿا ته اسين مومن ۽ اوهان جا ساٿي آهيون ۽ جڏهن اڪيلائيءَ ۾ وڃن ٿا ته اوهان تي ڪاوڙ ڪندي پنهنجن هٿن کي چڪ ٿا هڻن. اوهان جي عزت، ترقي ۽ بلنديءَ کي اصل ڪو نه ٿا سهن جڏهن اهي ڪفر ۾ پڪا آهن ته اوهان دين ۽ ايمان تي انهن کان وڌيڪ مضبوط ۽ پڪارهو ۽ انهن کي چئو ته پلي ساڙ ۾ مرو. اوهان جي ساڙ جي ڪري اسلام ۽ مسلمانن کي ڪجهه نه ٿيندو. (جنهن جو رب تنهن جو سڀ) الله تعالىٰ سينن جي رازن کي ڄاڻندڙ آهي. ان ڪان اوهان جي ڪا به شرارت لڪل نه آهي.

هن آيت مان هيءُ فائدا حاصل ٿيا.

## فائدو١

اصحابن سڳورن جو ايمان ڪامل هو جيئن الله تعالىٰ فرمايو آهي ته "تُؤْمِنُوْنَ بِالْكِتَابِ كُلِّهٖ" (اوهان سيني ڪتابن تي ايمان آڻيو ٿا) جيڪو انهن جي ايمان ۾ شڪ ڪري اهو قرآن ڪريم جي هن آيت جو منڪر آهي صحابن کي مومن ڪامل مڃڻ کان سواءِ قرآن ڪريم تي ايمان آڻڻ ناممڪن آهي ڇو ته اسان وٽ قرآن ڪريم صحابن جي ذريعي پهتو آهي.

## فائدو٢

ڪافر ڪٽي مائٽ هجي ته به انهن سان دلي محبت رکڻ حرام آهي ڇو ته ڪافرن کي مسلمانن سان محبت اصل نه هوندي آهي ۽ تجربو به شاهد آهي ته مسلمانن جو ڪافرن جي دوستيءَ تي اعتماد ڪرڻ پاڻ کي هلاڪ ڪرڻ جي برابر آهي.

## فائدو٣

ايمان ۾ قدرتي طور قوت هوندي آهي ۽ ڪفر ۾ بزدلي. ڪافر ڪفر کي لڪايو پيو هلندو، مگر مومن ايمان کي هرو ڀرو نه لڪائيندو ڏسو فرعون وارا جادوگر

ايمان آڻڻ شرط ڪيئن دلير تي چوڻ لڳا، "فَاقْضِ مَآ اَنْتَ قَاضٍ" (۱) جيڪي ڪرڻو اٿئي پلي ڪر.

## فائدو۴

تقيو ڪرڻ يعني دل ۾ هڪ ۽ زبان تي ٻي ڪافرن ۽ منافقن جو ڪم آهي جيئن هن آيت ۾ الله تعالیٰ ٻڌايو آهي تہ "وَاِذَا لَقُوْكُمْ" يعني جڏهن اهي منافق اوهان سان ملن ٿا تہ چون ٿا تہ اسان بہ ايمان آندو آهي حالانڪ اندر ۾ وڏا بي ايمان آهن.

## فائدو۵

هن آيت مان اهي سبق وٺن جيڪي اسلام کي نفرت وارو دين سڏيندا آهن. ڇا مسلمانن کي اجان بہ غلط سمجهندؤ؟ مسلمان تہ اها صاف دل قوم آهي جيڪا پنهنجي دشمن قومن لاءِ بہ دلين ۾ محبت۽ شفقت جا جذبا رکندي آهي.

اِنْ تَمْسَسْكُمْ حَسَنَةٌ تَسُؤْهُمْ وَاِنْ تُصِبْكُمْ سَيِّئَةٌ يَّفْرَحُوْا

جيڪڏهن پهچي ٿي اوهان کي ڀلائي تہ بري ٿي لڳي انهن کي ۽ جيڪڏهن پهچي ٿي اوهان کي تڪليف تہ خوش ٿا ٿين

بِهَا ۭ وَاِنْ تَصْبِرُوْا وَتَتَّقُوْا لَا يَضُرُّكُمْ كَيْدُھُمْ شَيْــــًٔـا ۭ اِنَّ اللّٰهَ بِمَا

ان تي ۽ جيڪڏهن صبر ڪندئو ۽ (الله کان) ڊڄندئو تہ نقصان ڏيندو اوهان کي مڪر انهن جو ڪجھ بہ بيشڪ الله ان جو

يَعْمَلُوْنَ مُحِيْطٌ ۝۱۲۰ۧ

جيڪي ڪن ٿا گهيرو ڪندڙ آهي.

## تفسير

هن آيت ۾ ڪافرن ۽ منافقن جي حالت بيان ڪئي ويئي آهي تہ اوهان سان انهن جي دشمني، بغض ۽ حسد ان حد تي پهتل آهي جو جيڪڏهن اوهان کي ڪا خوشي ٿي پهچي تہ انهن جي دلين تي ڏکن جا جبل ٽٽي ٿا پون. ۽ڪين سخت صدمو

(۱)سورة طٰهٰ آيت ۷۲

پهچي ٿو. اوهان جو هڪ ٻئي سان ملي ويھڻ اوهان کي جنگين ۾ فتح عطا ٿيڻ اوهان جو مالدار، تندرست ۽ عافيت سان هجڻ، انهن لاءِ هاجيڪار آهي. پر ياد رکو جيڪڏهن اوهان عبادت تي قائم رهيا، گناهن کان بچي ويا، مصيبتن ۾ صبر ڪندي گهبرائڻ کان محفوظ رهيا، پرهيزگاريءَ جي دامن نه ڇڏيوَ، اوهان جي دلين ۾ الله تعالیٰ جي خوف ۽ رسول الله صلى الله تعالیٰ عليه وسلم جن جي عشق ۽ محبت جا درياءَ موجون هڻندا رهيا ۽ اوهان جا عضوا سٺن عملن ۾ مشغول ۽ مصروف رهيا ته اسان جو اوهان سان وعدو آهي ته ڪافرن ۽ منافقن جون سازشون انهن جون چالبازيون ۽ا وهان جي خلاف تدبيرون ڪڏهن به اوهان جو وار ونگو ڪري نه سگهنديون بلڪ الٽو انهن کي تباهه ڪنديون ۽اوهان جي مقابلي ۾ سدائين نقصان ۾ ويندا. اهي جو ڪجهه به ڪندا پر اهي الله تعالیٰ جي قدرت جي گهيري کان ٻاهر نه آهن اهو کين دنيا ۽ آخرت ۾ سزا ڏيندو ۽ اوهان کي ڀلن ڪمن جا اجر ۽ ثواب عطا ڪندو.

## فائدو

هن آيت مان ثابت ٿيو ته مسلمانن جي خوشيءَ تي ڏک ڪرڻ ڪافرن جو ڪم آهي مسلمانن کي هڪ ٻئي جي قومي، ديني ۽ دنيوي خوشين ۾ شريڪ ٿيڻ گهرجي خصوصًا جيڪي خوشيون ديني يادگار ۽ اسلامي شعار آهن جيئن ميلاد ۽ معراج وغيره جون خوشيون هن هلندڙ دور ۾ ته اهي خوشيون ملهائڻ سني ۽ عاشق هجڻ جو دليل آهن.

۽ مسلمانن جي ڏک ۽ مصيبتن ۾ ڦاسڻ تي خوشيون ملهائڻ ڪافرن ۽ منافقن جو ڪم آهي، جيئن عاشوره جي ڏينهن خوشي ملهائڻ حضور عليه الصلواة والسلام جن جي اولاد جي دشمنن خارجين جو ڪم آهي. ۽ ان ڏينهن پٽڻ، ماتم ڪرڻ رافضين شيعن جو ڪم آهي اهي ظالم وري حضرت عمر رضي الله تعالیٰ عنه جي شهادت واري ڏينهن خوشيون ملهائيندا آهن.

## مسئلو

خوشيءَ جو يادگار ملهائڻ سنت آهي جيئن حضور عليه الصلواة والسلام جن عاشوري جي ڏينهن حضرت موسیٰ عليه الصلواة والسلام جن جي فرعون کان نجات حاصل ڪرڻ جي خوشي ملهائي هئي.

صبر ڪرڻ سان گڏ ۽ تقويٰ ۽ پرهيزگاري مسلمانن جي لاءِ مضبوط قلعو آهي جنهن جي برڪت سان مومن دنياوي مصيبتن کان به محفوظ رهندو آهي.

وَاِذْ غَدَوْتَ مِنْ اَهْلِكَ تُبَوِّئُ الْمُؤْمِنِيْنَ مَقَاعِدَ لِلْقِتَالِ ؕ وَاللّٰهُ

۽ (ياد ڪر اي محبوب!) جڏهن صبح جو روانو ٿئين پنهنجي گهر مان وهارين پيو مومنن کي جنگ وارن مورچن تي ۽ الله

سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ﴿١٢١﴾ اِذْ هَمَّتْ طَّآئِفَتٰنِ مِنْكُمْ اَنْ تَفْشَلَا ۙ وَاللّٰهُ

ٻڌندڙ ڄاڻندڙ آهي. جڏهن ارادو ڪيو ٻن جماعتن اوهان مان ته سست ٿين ۽ الله

وَلِيُّهُمَا ؕ وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ ﴿١٢٢﴾

مددگار آهي انهن ٻنهين جو ۽ الله تي پوءِ ڀلي توڪل ڪن ايمان وارا.

## تفسير

هنن آيتن ۾ الله تعالىٰ پنهنجي حبيب عليه الصلواة والسلام کي فرمايو آهي ته اي محبوب! اوهان مسلمانن کي احد جي جنگ وارو واقعو ياد ڏياريو جڏهن اوهان پنهنجي اهل يعني سيده عائشه رضي الله تعالىٰ عنها وٽان نڪري مسلمانن کي احد جبل جي پر ۾ جنگي مورچن تي وهاري رهيا هئا. ان وقت منافقن جي صلاح ڏيڻ جي ڪري مسلمانن مان خزرج ۽ اوس قبيلن جي ٻن جماعتن بنو سلمه ۽ بنو حارثه جي دل ۾ به سستي پيدا ٿي هئي پر الله تعالىٰ سندن اها سستي معاف ڪري ڪين اسلام تي ثابت قدم رکيو پاڻ ئي سندن ناصر ۽ مددگار آهي ۽ ان تي ئي مومنن کي توڪل رکڻ گهرجي.

## احد جي جنگ جو واقعو

ڄاڻڻ گهرجي ته جن جنگين ۾ رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن بذات خود شريڪ ٿيا هئا. ۽ انهن ۾ باقاعده ويڙهه به ٿي هئي. اهي هيءُ آهن ١- بدر ٢- احد ٣- بني قريظه ۴- بني مصطلق ۵- خيبر ٦- فتح مڪه ٧- غزوه حنين ٨- احزاب ٩- غزوه طائف. (١)

(١) تفسير نعيمي ص١٥٨ جلد۴

انهن سپني لڙائين ۾ پهرين بدر آهي جيڪا رمضان شريف جي ١٧ تاريخ جمعي جي ڏينهن سنہ ٢هجريءَ ۾ ٿي هئي. ٻي جنگ احد آهي جيڪا شوال سنہ٣ هجري ۾ ٿي هئي.ان جو تفصيلي قصو تہ سيرت ۽ اسلامي تاريخن جي وڏن ڪتابن ۾ لکيل آهي پر ڪجهہ هتي بہ لکجي ٿو تانتہ هن تفسير جا پڙهندڙ بالڪل بي خبر ۽ مايوس نہ رهن. اهو هيءُ آهي تہ مڪي جا قريشي ڪافر جڏهن بدر جي جنگ ۾ زبردست شڪست کائي پنهنجا ستر (٧٠) ڪافر جن ۾ چوويهہ (٢٤) ڄڻا ابو جهل، اميہ، عتبہ وغيره جهڙا سردار ۽ ليڊر بہ قتل ڪرائي ويا هئا تہ مڪي معظمہ ۾ پهچڻ ڪان پوءِ سڪون ۽چين سان نہ ويٺا بلڪ ابو سفيان ڪي واپاري قافلي مان بچيل منافعي جا هڪ هزار (١٠٠٠) اٺ ۽ ستر هزار (٧٠٠٠٠)چانديءَ ۽ سون جا مثقال مسلمانن جي مٿان ٻيهر حملي ڪرڻ ۽ بدر واري پلاٽد ونڻ لاءِ لشڪر ڪي تياريءَ ۾ خرچ ڪرڻ لاءِ ڏئي تيار ڪيو هيائون. عرب جو وڏو قابل مقرر عمرو بن عاص عرب جي علائقي ۾ گشت ڪري نوجوان ڪافرن ۽جنگي تجربي رکندڙن ڪي مقابلي لاءِ تيار ڪرڻ لڳو. بدر ۾ ڪنل ڪافرن جي ڏک ۽غم ۾ شعر ناهي عرب جي ڳائيندڙ عورتن ڪي ياد ڪرايا ويا جيڪي انهن سان گڏجي عربن ڪي اهي شعر ٻڌائي باهہ وانگر پڙڪائڻ لڳيون هيون. انهن عورتن ڪي منظم رکڻ جو انتظام ابو سفيان جي گهر واريءَ هند بنت عتبہ بن ربيعہ جي سپرد ڪيل هو. جنهن جي پيءُ عقبہ ڪي بدر جي جنگ ۾ اسد الله واسد رسولہ (الله ۽سندس رسول جي(صلى الله عليه وسلم ) جي شير) سيد الشهداءِ حضرت حمزه شهيد ڪيو هو. المقصد تہ ٿوري عرصي ۾ ڪافرن ٽن هزارن (٣٠٠٠) جوانن جو لشڪر تيار ڪري ورتو جن ۾ ست سو (٧٠٠) زرهون ڍڪيندڙ هئا ۽ سندن سواريءَ لاءِ ٽي هزار (٣٠٠٠) اٺ ۽ ٻہ سو (٢٠٠) گهوڙا هيا. ان لشڪر ۾ (٥٠٠) پنج سو عورتون هيون تانتہ اهي انهن نوجوانن ڪي جنگ ۾ وڙهڻ جي لاءِ باهہ وانگر پڙڪائين، حضرت عباس بن عبدالمطلب رضي الله تعاليٰ عنہ جيڪو ان وقت اڃا مڪي پاڪ ۾ هو تنهن خفيہ طريقي سان اها پوري تفصيلي رپورٽ مديني پهچائي ڇڏي. حضور عليہ الصلواة والسلام جن ان جي وڌيڪ تحقيق ڪرڻ جي لاءِ نهايت ئي همت ۽ عزم بالجزم واري صحابيءَ خباب بن منذر ڪي مقرر فرمايو. جنهن جاچ ڪري ڪجهہ وقت ڪانپوءِ ٻڌايو تہ ابو سفيان جي قيادت ۾ ڪافرن جو اهو لشڪر مڪي ڪان نڪري ذوالحليفہ جي مقام تي پهچي چڪو آهي. جيڪو مديني منوره ڪان پنجن يا ڇهن

ميلن جي فاصلي تي هن وقت بئر علي جي نالي سان مشهور آهي. حضور عليه الصلواة والسلام جن مجلس مشاورت سڏائي ۽ سندن ذات (صلی اللّٰہ عليه وسلم) ۽ وڏن وڏن اصحابن رضي الله تعالیٰ عنهم جي راءِ اها بيٺي ته مديني منوره کان ٻاهر نه نڪرجي اتيئي رهي دشمن جو دفاع ڪجي اهي جيڪڏهن هتي اچي وڙهندا ته به اسين محفوظ جاين ۾ هونداسين ڪامياب نه ٿيندا، پلا جيڪڏهن شهر کي گهيراءُ ڪري وهندا ته به نيٺ تنگ ٿي واپس هليا ويندا. منافقن جي سردار عبدالله بن ابي کي به پهريون پيرو مشوري لاءِ گهرائي پڇيو ويو ته ان به اهو مشورو ڏنو هو. پر سيدنا حمزه، سعد بن عباده، حضرت ابو سعيد خدريءَ جي والد مالڪ بن سنان ۽ گهڻن نوجوانن شهادت جي شوق کان بي تاب ٿي وڏي جذبي ۽ جوش جو اظهار ڪندي عرض ڪيو ته ميدان ۾ نڪري لڙائي ڪجي، انهن گهڻن نوجوانن جي مشوري ۽ صلاح کي حضور صلی اللّٰہ عليه وآله وسلم جن قبول ڪندي فرمايو ته "مون خواب ڏٺو آهي ته منهنجي اڱيان ڪجهه ڳئون ڪٺيون ويون آهن ۽ منهنجي تلوار پڇي پئي آهي پر وري پهريان کان به سٺي ٿي ويئي آهي ۽ منهن جي هٿ ۾ هڪ مضبوط زره آهي ۽ فرمايائون "حَسۡبُنَا اللّٰهُ ونعم الوڪيل اللهم بِڪ احول وبِڪ اصول" (اسان لاءِ الله ڪافي آهي ۽ اهو ڀلو ڪارساز آهي اي الله! توکان ئي طاقت وٺان ۽ تنهنجي سهاري ئي ڪاهه ڪيان).

## حضور عليه الصلواة والسلام جن جي تلوار

چاڻ گهرجي ته سندن تلوار مبارڪ جو نالو "ذوالفقار هو جيڪا پهريان منبه بن حجاج سهميءَ جي هئي ۽ بدر جي جنگ واري مال غنيمت ۾ هٿ آئي هئي. حضور صلی اللّٰہ عليه وسلم جن وٽ ئي رهندي هئي۽پاڻ اها خندق جي لڙائيءَ وقت سيدنا علي المرتضیٰ رضي الله تعالیٰ عنه کي ڏني هيائون ان ۾ مختلف جوڙ هيا ان جي ڪري ان کي ذوالفقار سڏيندا هئا، فقار فقره جو جمع آهي فقره جوڙ کي سڏيو ويندو آهي.

مدارج النبوة ۾ شيخ عبدالحق محدث دهلويءَ عليه الرحمة لکيو آهي ته ڪافرن جو لشڪر چوٿين (۴) تاريخ شوال سنه ٣ هجري ۾ احد شريف جي ڀئي پاسي واريءَ جي هيٺاهين حصي ۾ عنين نالي ميدان ۾ منزل انداز ٿيو هو احدمديني منوره کان ٽي ميل پري ڪاٻي طرف آهي، اهو سيني جبلن کان جدا آهي ان جي ڪري ان کي احد (اڪيلو) سڏيندا آهن. ان جبل جي لاءِ حضور صلی اللّٰہ تعالیٰ عليه

وسلم جن فرمايو آهي تہ "اُحُدُ جَبَلٌ يُّحِبُّنَا وَنُحِبُّهٗ (۱) احد اهڙو جبل آهي جو اهو اسان سان محبت ٿو رکي ۽ اسين ان سان محبت ٿا رکون) حضور عليه الصلواة والسلام جن جمع نماز تي خطبه ارشاد فرمائي صحابن کي ٻڌايو تہ "جيڪڏهن اوهان ثابت قدم رهندؤ تہ انشاءالله تعالیٰ فتح اوهان جي ٿيندي" ۽ وڃين نماز پڙهي پاڻ پنهنجي حجري مبارک ۾ ويا حضرت صديق اکبرؓ فاروق اعظم بہ هميشہ وانگر ساڻن گڏ هيا، انهن ٻنهي پيارن سندن مٿي مبارک تي دستار ٻڌي ۽پاڻ تلوار کلهي مبارک ۾ وجهي هٿ ۾ ڪجيءَ جي ٻڙڇي کڻي بدن اطهر تي بہ زرهون لڳائي چيلهہ تي چمڙي جو ڪمربند ٻڌي مجاهدانہ انداز سان ٻاهر تشريف فرما ٿيا. جڏهن اصحابن پلارن کين ان شان سان ڏٺو تہ حيران ٿي ويا ۽ حضرت سعد بن معاذ ۽ اسيد بن حضير رضي الله تعالیٰ عنهما ٻين جوانن جي نمائندگي ڪندي عرض ڪيو تہ سائين پهريان اسان واقعي عرض ڪيو هو تہ اڳتي وڌي هلي جنگ ڪيون پر هاڻي جيڪڏهن اوهان اتي ئي رهي ۽ دفاع جي ڪا صورت اختيار ڪيو تہ بہ ٺيک آهي، پاڻ مرڪندي فرمايائون تہ "الله جي نبي (عليه الصلواة والسلام) جو هيءُ شان نہ آهي جو جنگ جا هٿيار جسم اقدس تي ڍڪي ۽ جنگ ڪرڻ کان سواءِ ئي اهي بدن تان لاهي. هلو الله تعالیٰ تي توڪل آهي" هيءُ سورو ڪم جمعي جي ڏينهن جمعہ جي نماز کان پوءِ ٿيو هو.

## مسلمانن جو لشڪر

حضور صلي الله عليه وسلم جن اصحابن سڳورن مان هڪ هزار (۱۰۰۰) جوانن جانثارن جو لشڪر تيار ڪرڻ فرمايو جن مان عبدالله بن عمر، زيد بن اسامہ بن زيدؓ، زيد بن ارقم، براءَ بن عازب، ابو سعيد خدري، سمرة بن جندب رافع بن خديج وغيرهم عمر ۾ ننڍا هئا. پاڻ ڪريمن صلي الله عليه وسلم جن انهن کي واپس وڃڻ جو حڪم ڏنو هو پر ماڻهن عرض ڪيو تہ يا رسول الله رافع بن خديج عمر ۾ ڪڻي ننڍو آهي پر تير چٽڻ ۾ زبردست ڪامياب آهي، ان کي لشڪر ۾ شامل ڪيو وڃي پاڻ فرمايائون تہ " منظور آهي" سمره بن جندب عرض ڪيو تہ جڏهن رافع کي پرتي ڪيو ويو آهي تہ مون کي بہ پرتي ڪيو وڃي ڇو تہ مان ان کان طاقت ۾ وڌيک آهيان ان کي ڪشتيءَ ۾ ماري وجان ٿو. انهن ٻنهين کي ڪشتي ڪرائي وئي سمره ڪامياب رهيو

(۱) مدارج ص ۱۹۲ ج ۲

ته ان کي به پرتي کيو ويو اهو واقعو ڇنڇر جي رات پيش آيو. حضور عليه الصلواة والسلام جن ٽي جهنڊا ٺهرايا، مدارج النبوة جي روايت موجب مهاجرن جو جهنڊو سيدنا علي المرتضیٰ رضي الله تعالیٰ عنه ۽ روح المعاني جي روايت مطابق مصعب بن عمير رضي الله تعالیٰ عنه کي هٿ ۾ڏنو ويو ۽ انصارن مان اوس جو جهنڊو سعد بن عباده کي ۽ خزرج جو خباب بن منذر کي ڏنو ويو. عبدالله بن ام مکتوم کي مديني منوره جو خليفو بنائي مجاهد سيئي احد ڏانهن روانا ٿيا ميدان ۾پهچي لشکر جي ترتيب هن طرح ڏني ويئي جو عبدالله بن جبير کي پنجاهه (٥٠) سپاهين سان گڏ عينين جبل جي گهٽ تي مقرر کيو ويو جتان دشمن جي حملي جو خطرو هو ۽ انهن کي تاڪيد کيو ويو هو ته فتح ملي يا شڪست جيستائين اوهان کي نه سڏيون تيستائين هتان نه هٽجو" عڪاشه بن حصن اسديءَ کي لشکر جي سڄي پاسي کان ۽ابو سلمه بن عبدالاسد محروميءَ کي کابي پاسي کان، ابو عبيده بن جراح ۽ سعد بن ابي وقاص کي اڳئين طرف ۽ مقداد بن عمره کي پوئين طرف مقرر کيو ويو هو ان وقت حضور صلی الله عليه وسلم جن جي هٿ مبارڪ ۾ جيڪا تلوار هئي ان تي جيڪو شعر چٽيل هو.ان جي معنیٰ هيءَ آهي تهبزدليءَ ۾ شرم آهي ۽ بهادريءَ ۾ عزت آهي ۽ ماڻس بزدليءَ سان تقديرکان ڇٽي نٿو سگهي.

حضور صلی الله عليه وسلم جن فرمايو ته" ڪير آهي؟ جو هن تلوار کي وٺي ۽ ان جو حق ادا ڪري" حضرت ابو دجانه رضي الله تعالیٰ عنه اٿي عرض کيو ته يا رسول الله! ان جو حق ڇا آهي؟ فرمايائون ته" وڙهندي وڙهندي ڀيٽي ڪري ڇڏڻ" ان تلوار ورتي ۽ ان جي حق ادائيءَ لاءِ ڪافرن کي قتل ڪندي ابو سفيان جي گهري واريءَ هند تائين وڃي پهتو جيڪا عورتن سان گڏ دف وڄائي، بدر ۾ ڪٺل ڪافرن جي تڪليفن کي ياد ڏيارېندي، ڪافرن سپاهين کي جنگ تي باهه وانگر ڀڙڪائي رهي هئي، حضرت ابو دجانه ان تي به تلوار جو وار ٿي ڪيو پر ان دانهن ڪري ڇيو ته آءُ عورت آهيان ۽ اسلام ۾ ته عورتن جو قتل ڪرڻ جائز نه آهي.

## منافقن جي غداريءَ جي ڪري بعضي مسلمانن ۾ گهبراهٽ جو پيدا ٿيڻ

مٿي لکي آيا آهيون ته عبدالله بن ابي منافق جي صلاح هئي ته مديني

منوره کان ٻاهر نہ نکرجي، اتي ئي ويهي دفاع ڪجي پر ڪثرت راءِ سان جڏهن ان جي ڳالهہ نہ قبول ڪئي وئي تہ ان کي اهو غصو ذهن ۾ ويٺل هو ۽ عبدالله بن ابي سان جن يهودين جو معاهدو هو تہ اسين تنهنجي مخالفن سان لڙنداسون اهي بہ مڪي وارن سان لڙڻ جي لاءِ ميدان ۾ پهتا هئا مگر حضور انور صلى الله عليه وسلم جن جڏهن انهن جي مدد قبول نہ ڪئي ۽ اهي واپس هليا ويا تہ ان جي ڪري بہ منافقن ۾ سندن اڳواڻن کي وڏي ڪاوڙ آئي انهن پنهنجيءَ جماعت کي سڏي چيو تہ قريشن جو لشڪر تمام وڏو آهي انهن سان لڙائي ڪرڻ پاڻ کي پاڻهي مارڻو آهي اسان جي صلاح تہ شروع کان ئي جنگ لاءِ نڪرڻ جي نہ هئي. پر نوجوان جوشيلن اها ڳالهہ قبول نہ ڪئي تنهن جي ڪري موٽو تہ واپس هلون انهن جي چوڻ تي هڪ هزار (١٠٠٠) مان ٽي سؤ (٣٠٠) ماڻهو واپس ٿيا جيڪي سڀئي منافق هئا، انهن جي واپسيءَ کي ڏسي جڏهن باقي ست سؤ (٧٠٠) مجاهد بچيا تہ انصارن جي ٻن جماعتن ۾ بہ سستي پيدا ٿي هئي پر الله تعالىٰ پنهنجي خاص ڪرم سان انهن کي ثابت قدم رکيو ۽ سيني گڏجي جنگ ڪئي.

## جنگ جو ميدان ملهائڻ

ڪافرن مان سيني کان اول ابو عامر راهب جنهن کي ابو عامر فاسق بہ چوندا هئا، پنجاهہ ماڻهن جي جماعت سان گڏ اڳتي وڌي گهٽي بڪواس ڪري مسلمانن تي پٿر وسايا- مسلمانن طرفان بہ پٿرن جو جواب پٿرن سان ڏنو ويو ٿوري دير ۾ ئي اهو مسلمانن جي جوابي ڪارروائيءَ جو تاب سهي نہ سگهيو ۽ پنهنجي جماعت سان گڏ پوئتي هٽي ويو سندس پٽ حضرت حنظله صحابي هو ان حضور صلى الله عليه وسلم جن کان پنهنجي ڪافر پيءُ سان جنگ ڪرڻ جي موڪل گهري پر پاڻ کيس موڪل نہ ڏنائون. جڏهن ٻيو پيرو جنگ جو اعلان ٿيو تہ ڪافرن مان پهريان پهريان قريشين جي علمبردار طلحه بن طلحه ميدان ۾ اچي مقابلي لاءِ سڏيو، مسلمانن مان حضرت علي رضي الله عنه وجهي هڪ ئي وار سان ان کي ڌڪي، ڪيرائي سلامتيءَ سان موٽي اچي مسلمانن جي لشڪر ۾ ويٺو، اتي ويٺلن کيس چيو تہ طلحه کي صفا قتل ڪري ڇو نہ آئين؟ حضرت علي فرمايو تہ سخت زخمي ٿيل آهي ويندو مري پر ڌڪ لڳڻ کان پوءِ صفا اگهاڙو ٿي وڃي ڪريو مون کي ان حالت ۾ ان ڏانهن نهاريندي شرم آيو تنهنجي ڪري واپس موٽي آيو آهيان. ٿيو بہ ائين جو اهو ٿوريءَ دير کان پوءِ مري ويو.

ان کان پوءِ طلحه جي هڪ پٽ کي حضرت حمزه ۽ ٻئي کي حضرت سعد بن ابي وقاص قتل ڪري ڇڏيو. ڪافر واري تي پنهنجي جهنڊي کي ڪٽندا تي آيا ۽ ڪسندا تي ويا تانجو سندن جهنڊو علقمه حارثيءَ جي ڌيءُ عمره (نالي) ڪنيو حضرت حمزه رضي الله عنه ڪافرن جي اڳواڻ ابو شيبه کي ڌڪ سان ٻه اڌ بنايو مقابلي ۾ ڏهن ڪافرن گڏجي حضرت حمزه تي ٻه حملو ڪيو پر پاڻ جڏهن ستن(٧) ڄڻن کي قتل ڪيائين ته باقي ٽي(٣) ڄڻا ميدان ڇڏي ڀڄي ويا. مقابلو سخت ڏسي ڪافر مرد ته ڀڳا پر سندن ساڻ ۾ آيل عورتون به دانهون ۽ رڙيون ڪري لڪڻ لڳيون. هوڏانهن حضرت عبدالله بن جبير رضي الله عنه ۽ سندس پنجاهه (٥٠) ساٿين کي جو احد جي هڪ گهٽ تي مقرر ڪيو ويو هو اهي مسلمانن جي فتح ۽ ڪاميابي ڏسي پنهنجي اڳواڻ جي روڪڻ جي باوجود اهو گهٽ ڇڏي ٻين سان گڏ غنيمت جو مال هٽ ڪرڻ ۾ شروع ٿي ويا. حضرت عبدالله بن جبير رضي الله عنه سان ان گهٽ تي صرف ست (٧) ڄڻا وڃي رهيا. خالد بن وليد (جيڪو ان وقت اڃا مسلمان نه ٿيو هو) گهٽ کي خالي ڏسي اهڙو سخت حملو ڪيو جو اهي گهٽ تي بيٺل اٺ (٨) اصحابي ته شهيد ٿي ويا پر پوريءَ جنگ جو نقشو بدلجي ويو ۽ حضور عليه الصلواة والسلام جن سان صرف پندرهن (١٥) ڄڻا باقي رهيا. اٺ (٨) مهاجرن مان ۽ ست (٧) انصار مان. اٺ (٨) مهاجرهي هيا ١- حضرت ابوبڪر صديق ٢- حضرت عمر فاروق ٣- حضرت علي المرتضیٰ ٤- حضرت عبدالرحمن بن عوف ٥- حضرت سعد بن ابي وقاص ٦- حضرت زبير بن عوام ٧- حضرت طلحه بن عبدالله ٨- حضرت ابو عبيدة بن جراح- ۽ ست انصار هي هئا ١- حضرت خباب بن منذر ٢- حضرت ابو دجانه ٣- حضرت عاصم بن ثابت ٤- حضرت سهل بن حنيف ٥- حضرت اسيد بن حضير ٦- حضرت سعد بن معاذ ٧- حضرت حارث بن صمه رضي الله تعالیٰ عنهم- ان حملي جي دوران رسول الله صلی الله عليه وسلم جن جو منهن مبارڪ زخمي ۽ ڏند مبارڪ شهيد ٿي پيو. سندن چاچي حضرت حمزه رضي الله تعالیٰ عنه سميت ستر(٧٠) مسلمان شهيد ٿيا. جن جو ڪردار ۽ جان نثاري قيامت تائين اڄڻ وارن مسلمانن جي لاءِ مشعل راه ۽ شجاعت ۽ بهادريءَ جو لاجواب مثال آهي. هن جنگ جي لاءِ حضور صلی الله تعالیٰ عليه وسلم جن سنه٣هجري جي شوال مهيني جي ڏهين تاريخ ميدان ۾ تشريف فرما ٿياءِاهاجنگ يارهين يا تيرهين تاريخ شوال جي ٿي هئي (١)

(١) تفسير نعيمي ص١٥٨ جلد٤

وَلَقَدْ نَصَرَكُمُ اللّٰهُ بِبَدْرٍ وَّاَنْتُمْ اَذِلَّةٌ ۚ فَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ

۽ البته تحقيق مدد ڪئي اوهان جي الله بدر ۾ ۽ اوهان ڪمزور هئا پوءِ ڊڄو الله کان تانت اوهان

تَشْكُرُوْنَ ﴿١٢٣﴾ اِذْ تَقُوْلُ لِلْمُؤْمِنِيْنَ اَلَنْ يَّكْفِيَكُمْ اَنْ يُّمِدَّكُمْ

شڪرگذار رهو. جڏهن چوڻ لڳو هئين مؤمنن کي ته ڇا نه ٿي ڪافي ٿئي اوهان جي لاءِ هيءَ ڳالهه جو مدد ڪري اوهان جي

رَبُّكُمْ بِثَلٰثَةِ اٰلٰفٍ مِّنَ الْمَلٰٓئِكَةِ مُنْزَلِيْنَ ﴿١٢٤﴾ بَلٰٓى ۙ اِنْ تَصْبِرُوْا

رب اوهان جو ٽن هزارن ملائڪن (آسمان مان) لاٿلن سان هائو جيڪڏهن صبر ڪندو

وَتَتَّقُوْا وَيَاْتُوْكُمْ مِّنْ فَوْرِهِمْ هٰذَا يُمْدِدْكُمْ رَبُّكُمْ بِخَمْسَةِ

۽ پرهيز ڪندؤ ۽ ايندا اوهان وٽ هڪدم هتي ته مدد ڪندو اوهان جي رب اوهان جو پنجن

اٰلٰفٍ مِّنَ الْمَلٰٓئِكَةِ مُسَوِّمِيْنَ ﴿١٢٥﴾ وَمَا جَعَلَهُ اللّٰهُ اِلَّا بُشْرٰى

هزارن ملائڪن سان جي نشان رکندڙ (گهوڙن) وارا هوندا. ۽ نه بنايو ان کي الله مگر خوشخبري

لَكُمْ وَلِتَطْمَئِنَّ قُلُوْبُكُمْ بِهٖ ۗ وَمَا النَّصْرُ اِلَّا مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ الْعَزِيْزِ

اوهان جي لاءِ ۽ تانت قرار وٺن اوهان جون دليون ان سان ۽ ناهي مدد مگر الله غالب

الْحَكِيْمِ ﴿١٢٦﴾ لِيَقْطَعَ طَرَفًا مِّنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْٓا اَوْ يَكْبِتَهُمْ

حڪمت واري وٽان تانت هلاڪ ڪري هڪ جماعت ڪافرن مان يا ذليل ڪري انهن کي

فَيَنْقَلِبُوْا خَآئِبِيْنَ ﴿١٢٧﴾

پوءِ موٽن بي نصيب ٿي

## تفسير

هنن آيتن ۾ الله تعاليٰ مومنن کي پنهنجي مهرباني ياد ڏياريندي فرمايو تہ: اوهان اُحد جي جنگ ۾ تڪليف ڏسي دشمنن کان ڊڄي مايوس نہ ٿيو ڇوتہ بدر جي جنگ وقت اوهان ٿورا ۽ دشمن گهڻا هئا پر الله تعاليٰ جيئن اتي اوهان جي مدد ڪري اوهان کي عزت ۽ وقار عطا فرمايو، تيئن ٻين ميدانن ۾ بہ ڪري سگهي ٿو ۽ پنهنجي فضل ۽ ڪرم سان ڪندو.

## بدر جي جنگ جو مختصر احوال

بدر جي لفظ ۾ مفسرن جا ٻہ قول آهن. ١- هڪ تہ بدر هڪ ماڻهوءَ جو نالو هو جنهن جو مڪي مڪرمہ کان مديني منوره ڏانهن ويندڙ واٽ تي پاڻيءَ جو کوهہ هوندو هو. (١)

٢- ٻيو تہ بدر مديني منوره کان اتر ۽ اولهہ طرف ويهن ميلن جي فاصلي تي هڪ جاءِ جو نالو آهي (٢) جنهن کي ان وقت ان جي ڪري اهميت حاصل هئي جو اتي پاڻي گهڻو هوندو هو ۽ عرب جي وارياسن علائقن ۾ پاڻيءَ جو گهڻو هجڻ وڏي اهم شيءِ هئي. هيءَ جنگ سنہ ٢ هجريءَ رمضان المبارڪ جي سترهين (١٧) تاريخ جمعي جي ڏينهن لڳي هئي جيئن جالوت جي مقابلي ۾ حضرت طالوت جا ٽي سؤ تيرنهن (٣١٣) سپاهي هيا تيئن هن جنگ ۾ مسلمان بہ ٽي سؤ تيرهن (٣١٣) ڄڻا هئا. مسلمانن وٽ سواريءَ لاءِ صرف ٻہ گهوڙا ۽ ستر (٧٠) اٺ هيا. ڪافرن جو تعداد نون (٩) سون کان هڪ هزار (١٠٠٠) جي لڳ ڀڳ هو ۽ سيئي مسلح ۽ پلن گهوڙن تي سوار هئا انهن مان ڪوبہ پيادو نہ هو پر الله تعاليٰ پنهنجي محبوب نبي صلى الله عليہ وسلم ۽ ساٿن گڏ جهاد ڪرڻ وارن مؤمنن کي وڏي فتح عطا ڪئي جو سندن هٿان ستر (٧٠) ڪافر ڪسي ويا، جن ۾ يارهن ڄڻا تہ اهي هئا جن مڪي پاڪ جي دارالندوة (صلاح مشوري ڪرڻ جي لاءِ مقرر ٿيل جاءِ) ۾ ويهي حضور صلى الله عليہ وسلم جن کي شهيد ڪرڻ جو مشورو ڏنو هو. جيئن ابوجهل، عتبہ بن ربيعہ، شيبہ وغيرهم (٣)

(١) مدارڪ ص١٨١ ج ١ (٢) جامع البيان للطبري ص٤٩ جزءِ ٤

(٣) ڪمالين شرح اردو جلالين ص٤٤٩ ج١ ابن ڪثير ص٥٩٩ ج١

ان جنگ ۾ چوڏهن (١۴) مسلمان شهيد ٿيا هئا جن مان ڇهه (٦) مهاجر ۽ اٺ (٨) انصار هيا. حضور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جنگ کان اڳ ۾ هڪ ڏينهن جنگ جي ميدان کي ملاحظه فرمائيندي ٻڌايو هو ته صبحاڻي انشاءالله فلاڻو ڪافر هن جاءِ تي ۽ فلاڻو هن جاءِ تي ڪٺو پيو هوندو. (١) جنهن مان ثابت ٿيو ته الله تعاليٰ پنهنجي نبي مڪرم صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن کي "باي ارض تموت" (ته ڪير ڪهڙيءَ سرزمين تي مرندو) جو علم به عطا فرمايو هو. ان بدر واريءَ جنگ تي نگاهه وجهڻ سان بظاهر اهو ٿو معلوم ٿئي ته اها هڪ مقامي لڙائي هئي پر حقيقت ۾ ان جنگ دنيا جي تاريخ ۾ هڪ عظيم انقلاب پيدا ڪيو هو جنهن جي ذريعي الله تعالىٰ پنهنجي محبوب نبي صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن کي ۽ پنهنجي وحي ۽ پيغام کي عزت ۽ غلبو عطا ڪيو هو. احد جي جنگ کان پوءِ بدر جو ذڪر آڻي سمجهايو ويو آهي ته احد ۾ مليل تڪليفن تي صبر ۽ بدر ۾ حاصل ٿيل عزت، فتح ۽ امداد تي شڪر ڪري صبر ۽ شڪر ٻنهي جو اجر ۽ ثواب حاصل ڪيو.

"فَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ" هنن لفظن سان قرآن ڪريم پنهنجي دستور مطابق منافقن ۽ نه مڃڻ وارن جي عناد ۽ مخالفت جي تباهه ڪندڙن نتيجن کان محفوظ رهڻ جي لاءِ تقويٰ ۽ صبر جو درس ڏنو آهي ڇوته انهن ٻنهي شين ۾ ئي تنظيمي جدوجهد ۽ فتح مبين جو راز لڪل آهي الله تعاليٰ جي نعمت جو بهترين شڪر اهو آهي ته انسان برايون ڇڏي چڱا ڪم ڪري. هتي صرف تقويٰ جو ذڪر ان جي ڪري آندو ويو آهي جو اها هڪ جامع صفت آهي جنهن ۾ صبر به داخل آهي. تقويٰ سان گڏ شڪر ڪندي رسول الله صلى الله عليه وسلم جن سان گڏ رهندي، سندن دين جي مدد ڪرڻ وارا هميشه ڪامياب ۽ ڪامران رهندا.

"اِذْ تَقُوْلُ لِلْمُؤْمِنِيْنَ اَلَنْ يَّكْفِيَكُمْ اَنْ يُّمِدَّكُمْ رَبُّكُمْ بِثَلٰثَةِ اٰلٰفٍ مِّنَ الْمَلٰٓئِكَةِ مُنْزَلِيْنَ" جڏهن مؤمنن کي چوڻ لڳو هئين ته ڇا اوهان جي لاءِ ڪافي ناهي جو اوهان جو رب اوهان جي ٽن هزارن لاٿلن ملائڪن سان مدد ڪري؟

ابن ابي شيبه، ابن المنذر وغيرهما شعبيءَ کان روايت آندي آهي ته بدر جي جنگ واري ڏينهن مسلمانن کي اطلاع مليو ته ڪرز بن جابر محاربي وڏي لشڪر سان مشرڪن جي مدد لاءِ اچي رهيو آهي. جڏهن اها ڳالهه مسلمانن کي ڳري لڳي

(١) ڪمالين ص٤٤٩ ج١

تڏهن الله تعالىٰ مٿيان الفاظ نازل ڪري پنهنجي محبوب عليه الصلواة والسلام جن جي زبان پاڪ کان مسلمانن کي تسلي ڏياري تہ "مايوس نہ ٿيو جيڪڏهن مشرڪن جي لاءِ ڪرز بن جابر لشڪر وٺي ايندو تہ ڇا اوهان جي لاءِ اهو ڪافي ناهي جو رب العالمين جل شانه آسمان کان ٽي هزار ملائڪ لاهي اوهان جي مدد ڪري؟" پر جڏهن ڪرز کي مشرڪن جي شڪست کائي ڀڄڻ جي خبر پهتي تہ ان اچڻ جو ارادو ئي لاهي ڇڏيو. (١)

## ڇا ملائڪ بدر جي جنگ ۾ مؤمنن جي مدد لاءِ پهتا هئا؟

ان ۾ اختلاف آهي. مٿي ذڪر ڪيل شعبيءَ جي روايت جي پڇاڙيءَ ۾ آهي تہ ڪرز بن جابر نہ آيو ان جي ڪري ملائڪ بہ نہ آيا هئا، مگر علامه فخرالدين رازيءَ عليہ الرحمة لکيو آهي تہ تفسير ۽ سيرت وارن جو اجماع آهي تہ بدر جي جنگ واري ڏينهن ملائڪ لٿا ويا هئا جيڪي ڪافرن سان لڙيا بہ هئا. ۽ حضرت ابن عباس رضي الله عنهمافرمايو تہ: بدر کان سواءِ ٻيءَ ڪنهن بہ جنگ ۾ ملائڪ لڙيا نہ هئا صرف مسلمانن جيلشڪر جي تعداد کي گهڻو ڏيکارڻ جي لاءِ مسلمانن سان شامل ٿيندا هئا ۽ گهڻن محققن جو قول بہ اهو آهي. (٢)

علامہ ابن ڪثير عليہ الرحمة وٽ مختار قول اهو آهي تہ ملائڪ سڀئي ميدان ۾ قسط وار آيا هئا. پهريان هڪ هزار (١٠٠٠) پوءِ ٽي هزار (٣٠٠٠) پوءِ پنج هزار (٥٠٠٠) حالات ۽ ضرورت آهر وڌندا ٿي ويا. (٣)

"بَلَىٰٓ اِنْ تَصْبِرُوْا وَتَتَّقُوْا وَيَاْتُوْكُمْ مِّنْ فَوْرِهِمْ هٰذَا يُمْدِدْكُمْ رَبُّكُمْ بِخَمْسَةِ اٰلَافٍ مِّنَ الْمَلَآئِكَةِ مُسَوِّمِيْنَ" (هائو جيڪڏهن صبر ڪندؤ ۽ پرهيز ڪندؤ ۽ اوهان وٽ (دشمن) هينئر جو هينئر ايندا تہ رب اِوهان جي پنجن هزارن ملائڪن، نشان رکندڙن سان مدد ڪندو) اهي نشان ڪهڙا هئا؟ سيدنا ابن عباس رضي الله عنهما کان هڪ روايت ۾ آهي تہ "سيما الملائكة يوم بدر عمائم بيض" (٤) بدر جي جنگ واري ڏينهن ملائڪن جي نشاني اڇا پٽڪا هئا. (جن جا ترا پويان ڇڏيل هئا)

"وَمَا جَعَلَهُ اللّٰهُ اِلَّا بُشْرٰى لَكُمْ وَلِتَطْمَئِنَّ قُلُوْبُكُمْ بِهٖ وَمَا النَّصْرُ اِلَّا مِنْ

---

(١) تفسير المراغي ص٥٦ ج٢ جزءِ ٤
(٢) تفسير ڪبير ص٢١٣ جزءِ ٨
(٣) ابن ڪثير ص٦٠ ج١
(٤) تنوير الاذهان ص٢٧٤ ج١

عِنْدِاللهِ الْعَزِيْزِ الْحَكِيْمِ لِيَقْطَعَ طَرَفًا مِّنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا اَوْ يَكْبِتَهُمْ فَيَنْقَلِبُوْا خَآئِبِيْنَ" ۽ نہ بنايو ان کي الله مگر اوهان جي لاءِ بشارت ۽ تانت مطمئن ٿين ان سان قلب اوهان جا ۽ (حقيقت ۾) مدد تہ صرف الله غالب حڪمت واري وٽان ئي هوندي آهي. تانت هڪ ٽوليءَ کي ڪافرن مان هلاڪ ڪري يا انهن کي ذليل بنائي پوءِ بي نصيب ٿي موٽن.

هنن ٻنهي آيتن ۾ ٻڌايو ويو آهي تہ اهي سيئي غيبي ۽ غيرمعمولي عنايتون ظاهري اسباب جي صورت ۾ صرف ان لاءِ مهيا ڪيون ويون هيون تہ اوهان جي دلين مان ڊپ ۽ پريشاني دور ڪري اوهان کي سڪون ۽ اطمينان عطا ڪجي نہ تہ الله تعالىٰ جي مدد نہ انهن شين تي محدود ۽ بند آهي ۽ نہ دنيوي اسباب جي پائبند آهي. الله تعالىٰ ملائڪن جي موڪلڻ کان سواءِ ئي پنهنجيءَ قاهر قدرت سان اوهان جا ڪم ٺاهي تہ ٺاهي سگهي ٿو ۽ اوهان کان سواءِ ئي ڪافرن کي تباهہ ۽ برباد بنائي تہ بنائي سگهي ٿو. بلڪ هڪ ئي ملائڪ کان سيني جو ڪم وٺي تہ بہ وٺي سگهي ٿو. ملائڪن جي مدد بہ حقيقت ۾ ان قادر ۽ قدير جي قدرت ۽ گهرڻ سان آهي هي سڀ ان حڪيم جي حڪمت آهي جو جنهن موقعي تي جنهن قسم جي اسباب ۽ واسطن سان ڪم وٺڻ مناسب سمجهي ٿو وٺي ٿو سندس تڪويني رازن جو احاطو ناممڪن آهي ڪير بہ نٿو ڪري سگهي. ملائڪن جي موڪلڻ جو مقصد اهو بہ هو تہ ڪافرن جو زور ٽٽي. انهن جون ٻانهون ڪٽجن، وڏا وڏا ناميارا، پراڻا پاپي ڪافر ڪسي ذليل ۽ خوار ٿين، جيڪي انهن مان بچن اهي بہ بدنامي ۽ رسوائي ڪٽي موٽن ۽ ٿيو بہ ائين جيئن الله تعالىٰ جي قرآن ڪريم بيان فرمايو آهي.

لَيْسَ لَكَ مِنَ الْاَمْرِ شَيْءٌ اَوْ يَتُوْبَ عَلَيْهِمْ اَوْ يُعَذِّبَهُمْ

ناهي تنهنجو ان ڪم ۾ ڪو دخل يا (ٻاجهہ سان) موٽي انهن تي يا عذاب ڪري انهن کي

فَاِنَّهُمْ ظٰلِمُوْنَ ﴿١٢٨﴾ وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ

پوءِ بيشڪ اهي ظالم آهن ۽ الله جو ئي آهي جيڪو آسمانن ۾ آهي ۽ جيڪو زمين ۾ آهي

يَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَآءُ وَيُعَذِّبُ مَنْ يَّشَآءُ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿١٢٩﴾ ع

بخش ٿو ڪري جنهن کي گهري ۽ عذاب ٿو ڪري جنهن کي گهري ۽ الله بخشيندڙ مهربان آهي

ع ١٣ / ٩ / ٤

# تفسير

مفسرن هن آيت جي شان نزول ۾ ٽي قول لکيا آهن. ١- هڪ تہ جڏهن احد جي جنگ ۾ حضور صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جي پياري چاچي حضرت حمزه رضي الله تعالىٰ عنہ سميت ستر (٧٠) اصحابي رضي الله عنهم شهيد ٿيا هئا تہ ظالمن کافرن، اصحابن جا نڪ، ڪن ۽ عضوا ڪٽيا هئا. هنده نالي ڪافرياڻي عورت تہ حضرت حمزه رضيَ الله تعالىٰ عنہ جو هنياءُ ڪيرائي چباڙي ڪاڏو هو. حبيب ڪريم صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن کي بہ ان جنگ ۾ ايتري گهڻي تڪليف پهتي هئي جو سندن سامهون وارن هيٺين ٻن ڏندن مبارڪن مان سڄي پاسي وارو ڏند مبارڪ شهيد ٿي پيو ۽ مٿي مبارڪ تي رکيل لوهي ٽوپلو دشمن جي ڌڪ سان ڀڄي پيو هو جنهن جون ڪجھ لوهي ڪڙيون سندن ڳلن مبارڪن ۾ اندر لهي ويون هيون ۽ سندن پاڪ پيشاني زخمي ٿي پئي ۽ سڄو جسم اطهر رت سان ڀرجي ويو هو. پاڻ ان حالت ۾ جنگ جي حڪمت عملي اختيار ڪندي زمين جي مٿاهين حصي کان لهي هيٺ آيا ۽ ڪافرن ڪين مٿي نہ ڏسي اعلان ڪيو تہ "ان محمدا قد قتل" بيشڪ (حضرت) محمد (صلى الله عليہ وسلم جن) شهيد ڪيا ويا جو ميدان ۾ نظر ئي ڪونہ ٿا اچن. اهو اعلان ٻڌڻ سان ئي مسلمانن جو مجمع پريشانيءَ جو شڪار ٿي ويو. پاڻ ٿوريءَ دير کان پوءِ هيئن چوندي تہ "اها قوم ڪيئن ڪامياب ٿيندي جن پنهجي نبي صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جي منهن (پاڪ) کي ڦٽي وڌو آهي" جنگ ۾ وڙهندڙن ڪافرن مان ڪجھ ناميارن ڪافرن جا نالا وٺي انهن لاءِ بددعا جو ارادو فرمايائون. ظاهر آهي تہ ان بددعا ڪرڻ ۾ بہ پاڻ حق تي هئا پر الله تعاليٰ کي منظور هو تہ پاڻ شان ۽ عظيم منصب جي لحاظ سان اهڙي مقام تي پهتل آهن جو سندن دعا کي خالي موٽائڻ بہ غيرمناسب آهي پر جن جي لاءِ بددعا ڪرڻ جو ارادو ٿا ڪن انهن مان بہ ڪيترا عنقريب مسلمان ٿيڻ وارا آهن. اهي ظلم ڪن پر پاڻ پنهنجي ڪريمي شان کي ظاهر ڪندي برداشت ڪرڻ فرمائين ۽ جنهن ڳالھ جو ڪين حڪم مليل آهي مثلاً دين جي دعوت ڏيڻ، حق جو پيغام پهچائڻ، جهاد وغيره اهو ڪندا رهن باقي ٻيا سيئي معاملا حقيقي مالڪ ۽ خالق جي حوالي ڪري ڇڏين. جيئن سندس حڪمت جي تقاضا هوندي تيئن ڪندو. حضور صلى الله عليہ وسلم جن جي بددعا سان اهي دين

جا دشمن هلاڪ ٿين ان ڪان اهو وڏيڪ پلو نہ آهي جو انهن ئي دشمنن ڪي اسلام جو محافظ ۽ جان نثار بنايو وڃي؟ ۽ ٿيو بہ ائين جو اهي ڪافر ٿوري عرصي ڪان پوءِ سندن خدمت اقدس ۾ حاضر ٿي اسلام قبول ڪري محمدي دين جا جانباز سپاهي بڻيا. (١) پوءِ الله تعالىٰ جي مٿئين فرمان جو مطلب هي آهي تہ اي حبيب! انهن جو معاملو رب العزة جل شانہ جي حوالي آهي اهو انهن ڪي توبہ جي توفيق عطا ڪري يا عذاب طور هلاڪ ڪري، مرضيءَ وارو آهي.

٢- ٻيو قول هي آهي تہ جڏهن نبي ڪريم صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن احد جي جنگ ختم ٿيڻ ڪان پوءِ پنهنجي پياري چاچي حضرت حمزه رضي الله تعالىٰ عنہ جي لاش مبارڪ تي اچي بيٺا ۽ ڏٺائون تہ سندس پاڪ جسم مختلف نمونن سان ڪٽيل هو تہ ڪين سخت صدمو پهتو ۽ پاڻ فرمايائون تہ "اسين ان جي بدلي ۾ ڪافرن جي ٽيهن (٣٠) ڪٺلن جي جسمن ڪي ڪٽي سندن شڪليون مٽائي ڇڏينداسون تڏهن اها آيت نازل ٿي. (٢)

٣- ٽيون قول هي آهي تہ چوٿين سال هجريءَ جي صفر مهيني ۾ مڪي پاڪ ۽ عسفان جي وچ ۾ هذيل جي علائقي مان بير معونہ نالي مقام ڪان ڪجهہ ماڻهن حضور صلى الله عليہ وسلم جن جي خدمت ۾ اچي عرض ڪيو تہ اسين مسلمان ٿيا آهيون اسان ڪي قرآن ڪريم جي پڙهائڻ لاءِ ڪجهہ ماڻهو ڏيو. ان علائقي ۾ رعل، ذڪوان، بني لحيان، عصيہ، قبيلا بہ رهندا هئا. حضور صلى الله عليہ وسلم جن انهن جي پڙهائڻ لاءِ قرآن پاڪ جا ستر (٧٠) قاري تيار ڪري ۽ حضرت منذر بن عمرو رضي الله عنہ ڪي انهن جو امير بنائي روانو فرمايو. اهي جڏهن بير معونہ وٽ پهتا تہ مذڪوره قبيلن جي ماڻهن وعدي برخلافي ڪري سيني ڪي شهيد ڪري ڇڏيو صرف ڪعب بن زيد آخري پساهن ۾ هو. حضور صلى الله عليہ وسلم جن ڪي ان واقعي جو ڏاڍو ڏک پهتو ۽ پاڻ انهن قبيلن جي مٿان بددعا ٿي ڪيائون تہ اها آيت نازل ٿي. (٣)

## تنبيھ

آيت مبارڪ "لَيۡسَ لَكَ مِنَ الۡاَمۡرِ شَيۡءٌ" جو صحيح مطلب ۽ مفهوم هي

(١) ابن ڪثير ص٦٠٢ ج١ (٢) المراغي ص٥٣ ج٢ جزء ٤
(٣) نعيمي ص١٨١ جي بيضاوي ڪامل ص٨٩

آهي تہ اي حبيب! انهن جي لاءِ نفعو ۽ نقصان پيدا ڪرڻ اوهان جو ڪم ناهي سيڪجهہ ڪندڙ مان آهيان. مگر چڱائيءَ جي رستي ڏيکارڻ ۽ شفاعت ڪرڻ جي لحاظ سان پاڻ بہ نفعو ڏئي سگهن ٿا. ڇاڻ گهرجي تہ موجوده دور ۾ ڪي ڪي نالي جا مسلمان، حبيب ڪريم صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جي گستاخيءَ جا ٺيڪيدار، غيرمسلمانن جي امدادي پئسن تي پلجڻ وارا هن آيت کي ان ڳالهہ جو دليل بنائيندا آهن تہ نبي ڪريم صلى الله عليہ وسلم جن ڪوبہ نفعو ڏئي نہ ٿا سگهن. انهن جي نگاهہ ۾ شفاعت ڪا شيءِ ئي ناهي. افسوس پاڻ تہ گمراهہ آهن پر ٻين کي بہ گمراهہ ڪندا وتن ٿا. علامه احمدبن محمد صاوي مالڪي عليہ الرحمۃ هن آيت جو تفسير ڪندي لکيو آهي تہ "لَيْسَ لَكَ مِنَ الْاَمْرِ شَيْءٌ" اي لا تملک لهم نفعا فتصلحهم ولا ضرا فتهلکهم فنفي ذالک من حيث الايجاد والاعدام واما من حيث الدلالۃ والشفاعۃ فهو الدليل الشفيع المشفع جعل الله مفاتيح خزائنه بيده فمن زعم ان النبي كاٰحاد الناس لايملک شيئا اصلا ولا ينفع به لا ظاهرا ولا باطنا فهو کافر خاسر الدنيا والاخرة واستدلاله بهذه الايۃ ضلال مبين (١)

يعني مٿينءَ آيت جو مطلب آهي تہ اوهان انهن جي لاءِ نفعي ۽ نقصان جا بحيثيت پيدا ڪرڻ يا گم ڪرڻ جي مالڪ ناهيو، پر چڱائيءَ جي ڏس ڏيڻ ۽ شفاعت ڪرڻ جي لحاظ سان تہ پاڻ اهڙا رهبر، شفاعت ڪندڙ، شفاعت قبول پيل آهن جو الله تعالىٰ پنهنجن خزانن جون ڪنجيون ئي سندن هٿ ۾ ڏئي ڇڏيون آهن پوءِ جيڪو سمجهي ٿو تہ نبي ڪريم صلى الله عليہ وسلم جن عام ماڻهن وانگر آهن جو نہ ڪنهن شيءِ جا مالڪ آهن ۽ نہ سندن ذات سان ظاهري يا باطني نفعو حاصل ٿيندو آهي تہ اهو ڪافر، دنيا ۽ آخرت ۾ خساري ۽ نقصان وارو آهي ۽ ان جو هن آيت سان دليل وٺڻ کلي گمراهي آهي. مٿينءَ آيت مان تہ حبيب ڪريم صلى الله عليہ وسلم جن جي محبوبيت ۽ مقبول الدعاءِ هجڻ جا انوار نظر اچي رهيا آهن. علامہ علاؤالدين خازن لکيو آهي تہ الله تعالىٰ پنهنجي حبيب عليہ الصلواة والسلام جن کي انهن ڪافرن لاءِ دعا ڪرڻ ۽ لعنت ڪرڻ کان ان جي ڪري روڪيو هو جو الله تعالىٰ کي خبر هئي تہ انهن ڪافرن مان ڪي مسلمان ٿيڻ وارا آهن ۽ انهن مان ڪن کي مسلمان نيڪ صالح ٻچا ڄمندا. جيڪڏهن پاڻ بددعا ڪن ها تہ سندن مقبول الدعاءِ هجڻ جي ڪري اهي سڀ هلاڪ ٿي وڃن ها. (٢)

(١) الصاوي علي الجلالين ص١٦٧ ج١ (٢) تفسير خازن ص٢٨١ ج١

يَاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا لَا تَاۡكُلُوا الرِّبٰٓوا اَضۡعَافًا مُّضٰعَفَةً ۖ وَّاتَّقُوا اللّٰهَ

اي ايمان وارؤ! نہ کائو وياج ٻيڻو چوڻو ۽ ڊڄو الله کان

لَعَلَّكُمۡ تُفۡلِحُوۡنَ ۚ ﴿۱۳۰﴾ وَاتَّقُوا النَّارَ الَّتِىۡۤ اُعِدَّتۡ لِلۡكٰفِرِيۡنَ ۚ ﴿۱۳۱﴾

تانت اوهان ڪامياب ٿيو ۽ ڊڄو ان باھ کان جيڪا تيار ڪئي ويئي آهي ڪافرن جي لاءِ

وَاَطِيۡعُوا اللّٰهَ وَالرَّسُوۡلَ لَعَلَّكُمۡ تُرۡحَمُوۡنَ ۚ ﴿۱۳۲﴾

۽ فرمانبرداري ڪيو الله ۽ رسول جي تانت اوهان رحم ڪيا وڃو

## تفسير

هنن آيتن ۾ وياج ڪائڻ کان سختيءَ سان منع ڪئي وئي آهي. وياج جو تفصيل سان بحث تہ سورة بقره ۾ لکجي آيو آهي. هتي بہ ان جو ئي ذڪر آهي. مفسرن سڳورن لکيو آهي تہ اسلام کان اڳ جهالت واري دور ۽ خود اسلام جي ابتدائي وقت ۾ ماڻهو وياج تي مال ڪڻندا ۽ ڏيندا هئا ۽ ان جي مدت مقرر ڪري ڇڏيندا هئا ۽ جڏهن اها مدت پوري ٿيندي هئي ۽ قرض ڪڻندڙ وٽ پئسا نہ هوندا هئا تہ قرض ڏيندڙ چوندو هوس تہ وياج وڌاءِ تہ وري ٻيءَ مدت تائين رکانءِ. ائين ڪندي ڪندي وياج ٻيڻو چوڻو ٿي ويندو هو. الله تعالىٰ هيءَ آيت مبارڪ نازل فرمائي ان کي حرام ڪيو ۽ "اَضۡعَافًا مُّضٰعَفَةً" بہ ان جي ڪري فرمايو. ٻيڻو چوڻو ڪري نہ ڪائڻ جو مقصد اهو ناهي تہ ان کان گهٽ ڀلي ڪائو. وياج ٿورو هجي يا گهڻو، هرطرح حرام آهي. مسلم، نسائي، ابن ماجہ ۽ ابوداؤد روايت آندي آهي تہ سيدنا رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو: "لَعَنَ اللّٰهُ اٰكِلَ الرِّبٰوا وَمُوۡكِلَهٗ وَكَاتِبَهٗ وَشَاهِدَهٗ" وَقَالَ "هُمۡ سَوَاءٌ" (۱) يعني الله تعالىٰ وياج ڪائيندڙ، ان جي وڪالت ڪندڙ، ان جي لکندڙ ۽ ان ۾ شاهدي ڏيندڙن تي لعنت ڪئي آهي ۽ فرمايائون تہ "اهي سڀ (ان گناھ ۾) برابر آهن."

(۱) تنوير الاذهان ص۲۷۵ ج۱

سمجهڻ گهرجي ته وياج تمام خراب شيءِ آهي جنهن جي ڪري غريبن جون بددعائون ملنديون، مال مان برڪت نڪري ويندي ۽ وياج خور جو خير خيرات به قبول ناهي. هڪ روايت ۾ آهي ته "مالدار ماڻهو بهشت ۾ مسڪينن کان پنج سؤ سال پوءِ ويندا. (١) جڏهن حلال ذريعي ڪمايل ملڪيت رکڻ وارن جو هي حال هوندو ته وياج جهڙي قطعي ۽ يقيني حرام کائڻ وارن جو حال ڇا ٿيندو؟ مسلمان کي مسڪينيءَ ۽ محتاجيءَ هوندي به الله تعالىٰ تي توڪل ۽ ڀروسو ڪري وياج کان پري رهڻ گهرجي. الله جل شانه پنهنجي متوڪل ٻانهي کي بکيو نه ڇڏيندو، ڪرم ڪري ان جي لاءِ ڪو نه ڪو رستو ضرور ڪڍندو.

## فائدو

احد جي جنگ جو ذڪر ڪندي وچ ۾ وياج جي حرام هجڻ جو ذڪر آڻڻ ظاهر ۾ ته بي تعلق ۽ بي ربط نظر اچي ٿو، پر شايد هيءَ مناسبت هجي جو مٿي "اِذْ هَمَّتْ طَائِفَتَانِ مِنْكُمْ اَنْ تَفْشَلَا" (جڏهن ارادو ڪيو ٻن جماعتن اوهان مان ته سستي ڪن) ۾ جهاد جي وقت سستي، نامردي ۽ ڪمزوري ڏيکارڻ جو ذڪر ٿيو هو وياج کائڻ سان به ٻن وجهن جي ڪري ديني ڪمن ۾ سستي ۽ ڪاهلي پيدا ٿيندي آهي. ١- هڪ ته حرام مال کائڻ جي ڪري الله تعالىٰ جي عبادت ۽ اطاعت جي توفيق گهٽ نصيب ٿيندي آهي ۽ جهاد ته وڏي عبادت آهي جيڪو مسلمانن کي احد جي جنگ ۾ ڪرڻو هو سو انهن کي ڪيئن نصيب ٿئي ها. ٢- ٻيو ته وياج کائڻ انتهائي بخيلي ۽ ڪنجوسائپ جو سبب آهي ڇوته وياج خور سوچيندو آهي ته پنهنجو مال ته واپس وٺان پر ٻئي ماڻهوءَ جيڪو ان مان ٿورو گهڻو فائدو ورتو آهي ان کي به اهو مفت نه ڇڏيان ان کان ڪجهه نه ڪجهه ڪڍان. جيڪو ايترو ڪنجوس ۽ پئسن جو پوڄاري آهي جو الله تعالىٰ جي رضا خاطر ڪنهن سان ڪا همدردي نه ٿو ڪري سگهي ته اهو الله تعالىٰ جي واٽ ۾ جهاد ڪري جان جي قرباني ڪيئن ڏيندو؟ احد جي جنگ جنهن وقت لڳي هئي ان وقت مسلمانن جا اڃان وياج خورن يهودين ۽ نصارن سان ڏيتي، ليتي ۽ ڪاروبار گڏيل هئا ان جي ڪري ئي احد جي جنگ جو ذڪر ڪندي وچ ۾ وياج کائڻ کان منع ڪئي وئي آهي.

(١) روح البيان ص٩٤ جلد٢

"وَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ" ۾ ٻڌايو ويو آهي تہ اوهان جي ڀلائي، ڪاميابي ۽ ڪامراني وياج کائڻ ۾ نہ پر الله تعالىٰ کان ڊڄڻ ۾ آهي الله تعالىٰ کان ڊڄي وياج واري ظالمانہ نظام کي ختم ڪري حلال ۽ جائز روزي ڪمايو.

"وَاتَّقُوا النَّارَ الَّتِىٓ اُعِدَّتْ لِلْكَافِرِيْنَ" (۽ ان باھ کان ڊڄو جيڪا ڪافرن جي لاءِ تيار ڪئي وئي آهي) اوهان مومنن جو ان سان ڪوبہ واسطو ۽ تعلق ناهي پر جيڪڏهن وياج کائيندؤ تہ پوءِ اوهان بہ ان باھ ۾ وڌا ويندئو جيڪا خاص ڪافرن جي لاءِ ٻاري ۽ تيار ڪئي وئي آهي.

"وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُوْنَ" ۽ الله ۽ رسول جي اطاعت ڪيو تانت رحم ڪيا وڃو. هتي الله تعالىٰ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي اطاعت کي پنهنجي اطاعت سان گڏ بيان ڪري انهن ماڻهن جي خيال کي رد ڪيو آهي جيڪي رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي اطاعت کي شرڪ سمجهندا آهن. انهن بيوقوفن کي اطاعت ۽ عبادت ۾ فرق جي بہ خبر ناهي. رسول الله صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جي حڪم تي هلڻ جي لاءِ تہ خود خالق پاڻ حڪم فرمايو آهي. رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي اطاعت حقيقت ۾ الله تعالىٰ جي اطاعت آهي. احد جي جنگ ۾ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي مقرر ڪيل گهٽ کان مجاهد پري ٿي ويا هئا ان جي ڪري انهن کي آئينده جي لاءِ هوشيار ڪيو ٿو وڃي تہ مؤمنن کي هر وقت رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي فرمان جو خيال رکڻ گهرجي ان سان ئي ڪين ڪاميابي ۽ الله تعالىٰ جي تائيد ۽ رحمت حاصل ٿيندي.

## سوال

جيڪڏهن رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي اطاعت خود الله تعالىٰ ۽ ان جي نازل ڪيل ڪتاب قرآن ڪريم جي اطاعت آهي تہ پوءِ ٻنهي کي جدا ذڪر ڪرڻ جي ضرورت ڪهڙي ۽ جيڪڏهن ٻنهي ۾ فرق آهي تہ ڪهڙو؟؟

## جواب

قرآن ڪريم ۾ هڪ ڀيرو نہ پر بار بار الله تعالىٰ جي اطاعت سان گڏ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي اطاعت جو ذڪر انسان کي اسلام ۽ ايمان جي بنيادي اصولن ڏانهن متوجهہ ڪرڻ جي لاءِ آندو ويو آهي. جن مان هڪ الله تعالىٰ جي

وحدانيت ۽ سندس بندگيءَ ۽ اطاعت جو اقرار ته پيو سندس رسول مقبول صلى الله عليه وسلم جن جي تصديق ۽ اطاعت آهي ۽ اهو ان جي ڪري جو الله تعالىٰ دنيا تي رهندڙن جي هدايت ۽ رهنمائيءَ لاءِ هڪ نبي (ﷺ) ۽ هڪ ڪتاب موڪليا.

نبي مڪرم صلى الله عليه وسلم جن جي مٿان هي ڪم رکيو ويو ته پاڻ ماڻهن تائين قرآن ڪريم جون آيتون ان صورت، لب ۽ لهجي سان پهچائين جنهن ۾ اهي نازل ٿيون هيون. ماڻهن کي ظاهري ۽ باطني گندگين کان پاڪ، صاف بنائي ڪتاب جي مضمونن ۽ مقصدن جي بيان ڪرڻ ۽ تعليم ڏيڻ سان گڏ انهن کي حڪمت به پڙهائين. قرآن پاڪ جي صحيح مراد ۽ مفهوم سمجهائڻ سندن منصبي فرائض ۾ داخل هو. ڇو ته قرآن پاڪ جي پڌائڻ ۾ سندن اولين مخاطب عرب هيا جيڪي وڏا فصيح ۽ بليغ هئا. قرآن پاڪ جي لفظي معنىٰ ۽ مراد سمجهڻ انهن جي لاءِ رواجي ڳالهه هئي. سندن تعليم جو مقصد هيءَ هيو ته خداوندي وحي جي ذريعي قرآن ڪريم جي مجمل ۽ مبهم لفظن جو تفصيل ۽ تشريح ماڻهن تائين پهچائين جيڪا لفظن پڙهڻ سان نه پر الله تعالىٰ جي طرفان سندن قلب ۾ آئي ٿي جنهن ڏانهن "وَمَا يَنْطِقُ عَنِ الْهَوٰى اِنْ هُوَ اِلَّا وَحْيٌ يُّوْحٰى" ۾ اشارو ٿيل آهي. مثلاً قرآن پاڪ ۾ ڪيترين جاين تي آهي "اَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ" نماز قائم ڪيو. ڪٿي ڪٿي نماز جي معاملي ۾ رڪوع ۽ سجدي جو به حڪم ٿيل آهي. پر اهو به بالڪل مبهم آهي جنهن ۾ انهن جون ڪيفيتون واضح نه آهن. حبيب ڪريم صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن کي الله تعالىٰ جي امر سان جبريل امين نماز جي تفصيلي صورت عمل ڪري ڏيکاري. ۽ پاڻ به بعينه اهو نمونو قول ۽ عمل جي ذريعي امت تائين پهچايائون. "وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ" (۽ زڪواة ڏيو) ۾ زڪواة ادا ڪرڻ جو حڪم ته آيو، پر زڪواة جا مختلف نصاب، هر نصاب لاءِ زڪواة جو جدا مقدار ۽ ڪهڙي مال تي زڪواة آهي ڪهڙي تي ناهي ۽ نصاب جي مقدار مان ڪيترو حصو معاف آهي ۽ ڪيترو معاف ناهي، اهي سيئي تفصيل رسول الله صلى الله عليه وسلم جن بيان فرمائي، لڪائي متعدد صحابن رضي الله عنهم جي حوالي ڪيا هئا. يا مثلاً قرآن پاڪ ۾ رباني فرمان آهي ته "لَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ[1]" پاڻ ۾ هڪ ٻئي جا مال باطل طريقي سان نه کائو. ان جو تفصيل ته ماڻهن جا پاڻ ۾ معاملا مثلاً ڪنهن شيءِ جي وٺڻ، وڪڻڻ ۽ ڪرايي تي ڏيڻ ۾ ڪهڙيون صورتون جائز ۽ ڪهڙيون ناجائز آهن. اهڙيون پيون به ڪيتريون ڳالهيون رسول الله

(١) سورة النساء آيت ٢٩

صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن پنهنجو منصبي فرض ادا ڪندي رباني وحي جي مطابق امت کي سمجهايون جن جو تفصيل قرآن ڪريم ۾ ذڪر ڪيل ناهي. احتمال هو تہ پرويزين وانگر ڪو دين جو دشمن مسلمانن کي ڏوڪو ڏئي چوي ها تہ اهي وضاحتون جڏهن تہ الله تعالىٰ جي طرفان نہ آهن ان جي ڪري انهن تي عمل ڪرڻ ضروري ناهي. ان جي ڪري رب العزة جل مجده قرآن ڪريم ۾ باربار پنهنجي اطاعت سان گڏ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي اطاعت کي ذڪر ڪري سندن اطاعت کي لازم قرار ڏنو آهي ۽ نبوي سنت جي اطاعت کي ڪتي ڪتي حڪمت جي لفظ سان بہ بيان ڪيو ويو آهي. جيئن فرمان الهي آهي "يُعَلِّمُهُمُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ" (پڙهائي ٿو انهن کي ڪتاب ۽ حڪمت) حضوراڪرم، محبوب معظم، نور مجسم صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جي بعثت ۽ تشريف آوريءَ جو مقصد ئي قرآن ڪريم سمجهائڻ ۽ ان ۾ لڪل رازن کي ٻڌائڻ آهي. الله تعالىٰ جو فرمان آهي "لِتُبَيِّنَ لِلنَّاسِ مَا نُزِّلَ اِلَيْهِمْ" (تانت بيان ڪرين ماڻهن لاءِ جيڪو نازل ڪيو ويو انهن ڏانهن) (١) المقصد تہ اوهان جي نبوت واري منصب جي ذميداري آهي تہ ماڻهن کي قرآني آيتن جا مقصد، مطلب ۽ تشريحات ٻڌايو. هڪ هنڌ ارشاد آهي "مَا اٰتَاكُمُ الرَّسُوْلُ فَخُذُوْهُ وَمَا نَهٰكُمْ عَنْهُ فَانْتَهُوْا" (٢) (جيڪي اوهان کي رسول ڏي اهو (ان ڪان) وٺو ۽ جنهن ڪان اوهانکي روڪي تہ رڪجي پئو) هنن سيني آيتن ۾ انهن جو رد ڪيو ويو آهي جيڪي چوندا آهن تہ اسان جو رسول الله صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جي اطاعت ۽ سنت سان ڪهڙو تعلق؟ اسين تہ صرف الله تعالىٰ جي اطاعت ڪنداسون. مفتي محمد شفيع ديوبندي صاحب هن آيت جي تفسير ۾ لکيو آهي تہ:

رسول ڪريم پر غالباً يہ منکشف هوگيا تها کہ ڪسي زمانے مين ايسے لوگ پيدا هونگے جو رسول الله صلى الله عليہ وسلم کي تعليمات وتشريحات سے گلو خلاصي حاصل ڪرنے ڪيلئے يهي دعوىٰ ڪرينگے کہ همين ڪتاب الله ڪافي هے اس ليےايک حديث مين صراحۃ سے اس ڪا ذڪر فرمايا جس ڪو ترمذي، ابوداؤد، ابن ماجه، بيهقي اور امام احمد رحمۃ الله عليهم نے اپني اپني ڪتابون مين نقل فرمايا هے (٣)

(١) سورة النحل آيت ۴۴ (٢) سورة الحشر آيت ٧
(٣) معارف القرآن ص١٧٨ جلد ٢

وَسَارِعُوْٓا اِلٰى مَغْفِرَةٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَجَنَّةٍ عَرْضُهَا السَّمٰوٰتُ

۽ ڊوڙو بخشش ڏانهن پنهنجي رب جي طرفان ۽ بهشت ڏانهن جنهن جي ويڪر آسمانن

وَالْاَرْضُ ۙ اُعِدَّتْ لِلْمُتَّقِيْنَ ﴿١٣٣﴾ الَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ فِى السَّرَّآءِ

۽ زمين جيتري آهي. تيار ڪئي وئي آهي پرهيزگارن جي لاءِ جيڪي خرچ ٿا ڪن خوشيءَ ۾

وَالضَّرَّآءِ وَالْكٰظِمِيْنَ الْغَيْظَ وَالْعَافِيْنَ عَنِ النَّاسِ ۭ وَاللّٰهُ يُحِبُّ

۽ تڪليف ۾ ۽ ڪائيندڙ ڪاوڙ ڪي ۽ معاف ڪندڙ ماڻهن ڪي ۽ الله محبت ٿو رکي

الْمُحْسِنِيْنَ ﴿١٣٤﴾ ۚ وَالَّذِيْنَ اِذَا فَعَلُوْا فَاحِشَةً اَوْ ظَلَمُوْٓا اَنْفُسَھُمْ

احسان ڪندڙن سان ۽ اهي جو جڏهن ڪن ٿا برائي يا ظلم ٿا ڪن پنهنجن نفسن تي ته

ذَكَرُوا اللّٰهَ فَاسْتَغْفَرُوْا لِذُنُوْبِهِمْ ۠ وَمَنْ يَّغْفِرُ الذُّنُوْبَ اِلَّا اللّٰهُ ۠

ياد ٿا ڪن الله کي پوءِ بخشش ٿا گهرن پنهنجن گناهن جي ۽ ڪير ٿو بخشي گناه الله کان سواءِ

وَلَمْ يُصِرُّوْا عَلٰى مَا فَعَلُوْا وَھُمْ يَعْلَمُوْنَ ﴿١٣٥﴾ اُولٰۗىِٕكَ جَزَاۗؤُھُمْ

۽ نه ٿا هميشگي ڪن ان (گناه) تي جو ڪيائون ۽ اهي ڄاڻن ٿا. اهي بدلو انهن جو

مَّغْفِرَةٌ مِّنْ رَّبِّهِمْ وَجَنّٰتٌ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ

بخشش آهي سندن رب وٽان ۽ بهشت آهن جو وهن ٿيون هيٺان انهن جي نهرون هميشه رهندا

فِيْهَا ۭ وَنِعْمَ اَجْرُ الْعٰمِلِيْنَ ﴿١٣٦﴾

انهن ۾ ۽ ڀلو اجر آهي عمل ڪندڙن جو

## تفسير

"وَسَارِعُوْا" کان "لِلْمُتَّقِيْنَ" تائين- هتي الله تعالىٰ ايمان وارن ڀانهن کي حڪم فرمايو آهي ته انهن عملن ڪرڻ ۾ جلدي ڪيو جيڪي خداوندي وعدي مطابق اوهان کي سندس مغفرت ۽ جنت جو حقدار بنائين. اصحابن سڳورن ۽ تابعين ڀلارن کان ان مغفرت جون جيڪي مختلف مرادون منقول آهن تن سڀني جو مقصد صالح عمل ڪرڻ آهي. سيدنا عثمان رضي الله عنه جو فرمان آهي ته ان مان مراد اخلاص آهي. حضرت علي رضي الله عنه فرمايو ته فرضن جي ادائگي. حضرت ابن عباس رضي الله عنهما جو ارشاد آهي ته اسلام. حضرت انس بن مالڪ جو قول آهي ته نماز ۾ پهرين تڪبير. سعيد بن جبير فرمايو ته مطلق تابعداري. عڪرمه جو قول آهي ته توبه ڪرڻ. ابوالعاليه جو فرمان آهي ته هجرت ڪرڻ. ضحاڪ جو فرمان آهي ته جهاد ڪرڻ. يمان چيو ته پنج نمازون. مقاتل فرمايو ته صالح عمل. (١)

## سوال

هن آيت ۾ مغفرت ۽ جنت ڏانهن ٻين کان وڌڻ ۽ اڳرائي ڪرڻ جو حڪم ڪيو ويو آهي. حالانڪ ٻيءَ آيت ۾ آهي ته "لَاتَتَمَنَّوْا مَا فَضَّلَ اللّٰهُ بِهٖ بَعْضَكُمْ عَلٰى بَعْضٍ" (٢) ان جي تمنا نه ڪيو جنهن سان الله تعالىٰ اوهان مان هڪڙن کي ٻين تي فضيلت عطا ڪئي آهي. ٻنهي ۾ موافقت ڪيئن ٿيندي؟

## جواب

فضائل ٻه قسم آهن. ١- هڪڙا اختياري ٢- ٻيا غيراختياري. اختياري اهي آهن جن کي انسان پنهنجيءَ ڪوشش ۽ محنت سان حاصل ڪري سگهي ٿو ۽ انهن ۾ ئي مسابقت ۽ هڪ ٻئي کان اڳتي وڌڻ جي لاءِ هن آيت کان سواءِ ٻين آيتن ۾ به ارشاد ٿيل آهي جيئن هڪ آيت ۾ آهي: "فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرَاتِ" (٣) نيڪيءَ جي ڪمن ۾ هڪٻئي کان اڳرائي ڪيو. ٻيءَ آيت ۾ آهي "وَفِي ذَالِكَ فَلْيَتَنَافَسِ الْمُتَنَافِسُوْنَ" (۴) ۽ ان ۾ ڀلي رغبت ڪن رغبت ڪرڻ وارا.

---

(١) زادالمسير ص٤٦٠ جلد ١ (٢) سورة النساءِ آيت ٣٢
(٣) سورة البقره آيت ١٤٨ (۴) سورة المطففين آيت ٢٦

۽ غيراختياري اهي آهن جيڪي پنهنجي ڪوشش سان حاصل ٿي نه ٿا سگهن. جيئن ڪنهن جو حسين ۽ جميل هجڻ يا ڪنهن پلاري خاندان مان هجڻ وغيره. انهن ۾ اڳرائي يا هڪ ٻئي کان وڌڻ جي تمنا ڪرڻ کان (ان جي ڪري روڪيو ويو آهي جو اهي الله تعاليٰ پنهنجي حڪمت جي مطابق پنهنجيءَ مخلوق ۾ تقسيم ڪيا آهن. ڪنهن جي ڪوشش جو ان ۾ ڪوبه دخل ناهي. انهن جي لاءِ جدوجهد ڪرڻ سان حسد ۽ بغض جي باهه پڙڪڻ کان سواءِ ٻيو ڪوبه فائدو حاصل نه ٿيندو. جيڪڏهن ڪنهن انسان ۾ ڪا فطري ۽ طبيعي اهڙي ڪمزوري هجي، جنهن کي ختم ڪرڻ سندس وس کان ٻاهر آهي ته ان کي ڪپي ته ان ڪمزوريءَ تي راضي رهي ۽ ٻين جي ڪمال کي ڏسي پريشان نه ٿئي ڇوته جيڪڏهن پنهنجيءَ ڪوتاهيءَ تي افسوس ۽ ٻين جي ڪمال تي حسد ڪندو رهندو ته جيڪو ڪم ڪري سگهي ٿو ان کان به محروم رهجي ويندو.

## فائدو

هن آيت ۾ جنت کان اڳ ۾ مغفرت جو ذڪر آڻي ان ڳالهه ڏانهن اشارو ڪيو ويو آهي ته الله تعاليٰ جي فضل ۽ ان جي طرفان مغفرت عطا ٿيڻ کان سواءِ جنت جو ملڻ ناممڪن آهي اسان جا نيڪ عمل ڪيترا به هجن پر اهي جنت جي قيمت ٿي نه ٿا سگهن. الله تعاليٰ جنهن تي ڪرم ٿو ڪري ان کي نيڪ عمل نصيب ڪري، مغفرت سان نوازي، جنت ٿو عطا فرمائي.

"عَرۡضُهَا السَّمٰوٰتُ وَالۡاَرۡضُ" هتي "عرض" جي لفظ مان مراد يا ويڪر ۽ ڪشادگي آهي پوءِ مقصد هي ٿيندو ته جيڪڏهن ست ئي آسمان ۽ زمينون پاڻ ۾ ملائجن ته جيتري انهن جي ويڪر ۽ ڪشادگي ٿيندي جنت به ايتري ڪشادي ۽ ويڪري آهي. آسمانن ۽ زمين جي ويڪر جو ذڪر ان جي ڪري ڪيو ويو آهي جو انسان جي دماغ ۾ انهن جي ويڪر ۽ وسعت کان زياده ڪابه شيءِ ناهي. جڏهن جنت جي ويڪر ايتري آهي ته ان جي ڊيگهه ته تمام گهڻي هوندي. يا عرض مان مراد ثمن يعني ملهه ۽ قيمت آهي. پوءِ مقصد هي ٿيندو ته بالفرض جيڪڏهن جنت جي قيمت ڪئي وڃي ته ست ئي آسمان، زمينون ۽ انهن ۾ موجود ڪائنات ان جي قيمت ٿئي.(١)

(١) تفسير ڪبير ص٥ جزءُ ٩ ۽ روح المعاني ص٥۴٦ ج٢ جزءُ ۴

# هڪ عجيب سوال ۽ جواب

حضرت يعليٰ بن مرة رضي الله تعاليٰ عنہ کان روايت آهي. ان فرمايو تہ منهنجي رومي بادشاهہ هرقل جي طرفان رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن ڏانهن موڪليل قاصد تنوخيءَ سان حمص شهر ۾ ان وقت ملاقات ٿي جڏهن هو وڏيءَ عمر جو ٿي چڪو هو ۽ ڪيس (ٽيڪون ڏئي) ويهاريو ويندو هو. ان مون کي ٻڌايو تہ مان رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي خدمت عاليہ ۾ هرقل جو خط کڻي ويو هوس. پاڻ اهو وٺي ان شخص کي ڏنائون جيڪو سندن کاٻي پاسي ۾ ويٺو هو. مون پڇا ڪئي تہ اهو خط پڙهڻ وارو ڪير آهي؟ چيائون تہ معاويہ (رضي الله تعاليٰ عنہ) جڏهن ان اهو خط کولي پڙهيو تہ ان ۾ حضور صلى الله عليہ وسلم جن ڏانهن لکيل هو تہ اوهان خط لکي مون کي ان جنت ڏانهن سڏيو آهي جنهن جي ويڪر آسمانن ۽ زمينن جيتري آهي. (اها تہ ٿي جنت) پلا پوءِ جهنم جي باهہ ڪٿي هوندي؟ پاڻ اهو ٻڌي فرمايائون تہ ڏينهن ٿو اچي تہ رات ڪٿي هوندي آهي؟ اهڙو سوال حضرت عمر رضي الله عنہ کان بہ ڪيو ويو هو ۽ پاڻ بہ ساڳيوئي جواب ڏنو هيائون. (١)

مقصد تہ جيئن ڏينهن جي وجود سان رات جو غيرموجود هجڻ ثابت ناهي. ٿي سگهي ٿو تہ اها ڪنهن اهڙيءَ جاءِ تي هجي جيڪا اسين ڏسي نہ ٿا سگهون، تيئن جنت جي ايتري ويڪر جي ڪري جهنم جو موجود نہ هجڻ بہ ثابت نہ آهي. ٿي سگهي ٿو اهو بہ ڪنهن ٻئي پاسي هجي جيڪو اسان جي سمجهہ ۽ نگاهہ کان مٿي هجي.

"اُعِدَّتْ لِلْمُتَّقِيْنَ" پرهيزگارن جي لاءِ تيار ڪئي وئي آهي. هن مان ثابت ٿيو تہ جنت پيدا ڪيل ۽ ستين آسمان کان مٿان اهڙي نموني موجود آهي جو ستون آسمان ان جي لاءِ زمين وانگر فرش آهي. (٢)

"اَلَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ فِى السَّرَّآءِ وَالضَّرَّآءِ" اهي (پرهيزگار) خوشحاليءَ ۽ تنگدستيءَ ۾ خرچ ڪن ٿا. هتان کان تقويٰ وارن مومنن جون خاص صفتون بيان ڪيل آهن. ابتدائي آيتن ۾ انساني حقوق ۽ هڪ ٻئي سان سٺي سلوڪ رکڻ وارين صفتن جو ذڪر ۽ حقوق الله سان متعلق صفتن جو بيان آندو ويو آهي. ٻانهن جي حقوق وارين

(١) تفسير ابن جرير ص٦٠ جلد ٣ جزءُ ۴ (٢) معارف القرآن ص١٨٠ ج٢

صفتن کي اول آڻي ان ڳالھ ڏانهن اشارو ڪيو ويو تہ حقوق العباد جي بہ وڏي اهميت آهي. عالمي نظام جي درستي ۽ انساني معاشري جو اصلاح حقوق العباد جي ادا ڪرڻ سان صحيح رهندو آهي.

محققين جي پهرين صفت آهي هر حال ۾ الله تعاليٰ جي واٽ ۾ خرچ ڪرڻ. اها صفت اول ان جي ڪري آندي وئي آهي جو هن کان ٿورو پهريان وياج کان منع ڪرڻ وارو حڪم هو. جنهن ۾ ٻين جو مال ناحق کاڌو ٿو وڃي ۽ هتي صدقي ۽ خيرات جو ذڪر ڪيو ويو. جنهن ۾ ڪنهن ظاهري استحقاق ۽ عوض وٺڻ کان سواءِ مال ڏنو ٿو وڃي. الله تعاليٰ جا متقي ٻانها شاهوڪاريءَ توڙي غريبيءَ، اميريءَ توڙي مسڪينيءَ، تونگريءَ توڙي فقيريءَ، سک توڙي ڏک، سڪر توڙي ڏکر جي حالتن ۾ الله تعاليٰ جي راضي ڪرڻ جي لاءِ خرچ ڪندا آهن. غريب غريبيءَ جو بهانو نہ بنائيندا. ڇو تہ جيڪڏهن هزار روپين جو مالڪ هزار مان هڪ روپيہ خيرات ڏئي سگهي ٿو تہ هزار پائن ۽ پئسن جو مالڪ بہ هڪ پائي يا پئسو خيرات ڪري سگهي ٿو. الله تعاليٰ ٻنهي جي اخلاص ۽ صداقت کي ڏسي سندن خيراتون قبول ڪري اجر عطا ڪندو آهي.

غريبي حال ۾ خيرات ڪندڙ ٻانهو خيرات جو عادي هوندو تہ جيڪڏهن ڪيس خوشحالي ملي وئي تہ بہ خيرات ڪندو رهندو ۽ ان غريبي حال ۾ رهڻ جي باوجود رب العزت جل شانہ جي رضا جو طالب ٿئي ڪنهن جو حق غصب نہ ڪندو.

سيده عائشہ صديقہ رضي الله تعاليٰ عنها کان روايت آهي تہ ان وٽ هڪ ٻيري انگورن جو صرف هڪ داڻو هو تہ اهو بہ الله تعاليٰ جي واٽ ۾ خيرات ڪري ڇڏيو هيائين ۽ هڪ الله تعاليٰ جي ٻانهي وٽ صرف هڪ بصر هو تہ اهو بہ خيرات ۾ ڏئي ڇڏيو هيائين. (١)

## فائدو

هتي اهو بيان ڪرڻ تہ متقي ٻانها خوشحاليءَ توڙي تنگيءَ ۾خرچ ڪن ٿا پر اهو بيان نہ ڪرڻ تہ ڇاڻا خرچ ڪن. ان ۾ اهو نڪتو آهي تہ الله تعاليٰ جي واٽ ۾ صرف مال خرچ ڪرڻ سندن صفت نہ آهي پر وقت قربان ڪرڻ بہ ان ۾ داخل آهي جيڪڏهن ڪو ماڻهو ديني علم يا ٻين اسلامي خدمتن لاءِ وقت صرف ٿو ڪري تہ اهو

(١) روح المعاني ص٥٨ جلد ٢ جزءِ ۴

بہ انهن ۾ شامل آهي.

"وَالْكَاظِمِيْنَ الْغَيْظَ" ۽ ڪاوڙ ڪائيندڙ. هيءَ متقين جي ٻي صفت آهي يعني انهن الله تعالىٰ جي ٻانهن کي جيڪڏهن ڪو ظلم ڪرڻ ۽ اذيتن ڏيڻ سان پريشان ڪري ٿو تہ اهي ان جي بجاءِ جو ان کان انتقام يا بدلو وٺن ان سخت ڪاوڙ ۽ غصي کي ڪائي ٿا ڇڏين. محدث عبدالرزاق، ابن جرير ۽ ابن المنذر حضرت ابوهريره رضي الله تعالىٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ "مَنْ كَظَمَ غَيْظًا وَهُوَ يَقْدِرُ عَلَىٰ إِنْفَاذِهِ مَلَأَهُ اللّٰهُ أَمْنًا وَإِيْمَانًا" يعني جنهن ڪاوڙ هلائڻ تي طاقت رکڻ جي باوجود ڪاوڙ ڪائي ڇڏي تہ الله تعالىٰ ان کي امن ۽ ايمان سان ڀري ڇڏيندو.

امام احمد، ابوداٿود ۽ ٻين محدثن حضرت معاذ بن انس رضي الله تعالىٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "مَنْ كَظَمَ غَيْظًا وَهُوَ قَادِرٌ عَلَىٰ أَنْ يُنْفِذَهُ دَعَاهُ اللّٰهُ عَلَىٰ رُؤُسِ الْخَلَائِقِ حَتّٰى يُخَيِّرَهُ مِنْ أَيِّ الْحُوْرِ شَاءَ" يعني جنهن ڪاوڙ هلائڻ تي قدرت رکڻ جي باوجود ڪاوڙ ڪائي ڇڏي تہ الله تعالىٰ ان کي (قيامت جي ميدان ۾) ساريءَ مخلوقات جي روبرو اختيار ڏيندو تہ جهڙي حور پسند ڪري اها وٺي. (١)

"وَالْعَافِيْنَ عَنِ النَّاسِ" ۽ ماڻهن کي معاف ڪندڙ. هيءَ متقين جي ٽين صفت آهي يعني طاقت ۽ قوت جي هوندي دشمن کي سندس گناهہ ۽ تڪليف تي ايذاءُ ڏيڻ جي بجاءِ ان کي دل سان معاف ٿا ڪن.

"وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ" ۽ الله احسان ڪندڙن سان محبت ٿو رکي. هيءَ متقين جي چوٿين صفت ۽ پهرين ٽنهي صفتن کان بلند صفت آهي. جو انسان دشمن کان پلاند تہ نہ وٺي رهندو ان سان ڀلايون ۽ احسان ڪري. انهيءَ صفت وارن لاءِ خصوصي انعام هيءُ بہ آهي تہ الله تعالىٰ انهن سان محبت ٿو ڪري ۽ اهي الله جل شانہ جا محبوب ٻانها هوندا آهن.

## حضرت امام زين العابدين رضي الله تعالىٰ عنہ جن جو هڪ واقعو

محدث بيهقيءَ روايت آندي آهي تہ هڪ ڀيري حضرت امام زين

(١) الدرالمنثور ص٣١٦- ٣١٧ ج٢

العابدين علي بن حسين رضي الله عنهما کي سندن هک خريد کيل ٻانهيءَ وضو ڪرايو ۽ پاڻيءَ سان ڀريل کوُنرو کجهہ مٿي جهليو بيٺي هئي تہ اوچتو ان ٻانهيءَ کان اهو کوُنرو ڇڏائي حضرت امام صاحب جي منهن مبارک تي اهڙو سختيءَ سان لڳو جو سندن منهن مبارک ڦٽجي پيو. پاڻ اجان منهن مبارک مٿي ڪري ان ٻانهيءَ ڏانهن نهاريائون تہ ان هيءَ آيت پڙهندي عرض ڪيو تہ (قبلا) الله تعالیٰ فرمايو آهي: "وَالْكَاظِمِيْنَ الْغَيْظَ" (۽ ڪاوڙ ڪائيندڙ) سائينءَ فرمايو تہ "كَظَمْتُ غَيْظِيْ" (مون ڪاوڙ ڪائي ڇڏي) وري پڙهيائين "وَالْعَافِيْنَ عَنِ النَّاسِ" (۽ ماڻهن کي معاف ڪندڙ) سائينءَ فرمايو تہ "قَدْ عَفَا اللّٰهُ عَنْكِ" (الله تعالیٰ توکي معاف ڪري ڇڏيو) وري پڙهيائين "وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ" (۽ الله احسان ڪندڙن سان محبت ٿو ڪري.) پاڻ فرمايائون تہ "اِذْهَبِيْ فَاَنْتِ حُرَّةٌ" وڃ تون آزاد آهين.

"وَالَّذِيْنَ اِذَا فَعَلُوْا فَاحِشَةً اَوْ ظَلَمُوْٓا اَنْفُسَهُمْ ذَكَرُوا اللّٰهَ فَاسْتَغْفَرُوْا لِذُنُوْبِهِمْ وَمَنْ يَّغْفِرُ الذُّنُوْبَ اِلَّا اللّٰهُ وَلَمْ يُصِرُّوْا عَلٰى مَا فَعَلُوْا وَهُمْ يَعْلَمُوْنَ" ۽ اهي ٻانها جو جڏهن ڪري ٿا ويهن ڪا برائي يا ظلم ٿا ڪن پنهنجو پاڻ تي تہ (اتي جو اتي) الله کي ياد ڪري پنهنجن گناهن جي مغفرت طلب ڪن ٿا ۽ الله کان سواءِ ڪير ٿو گناهہ بخشي ۽ ان ڪيل گناهہ تي هميشگي نہ ٿا ڪن. ان حال ۾ جو اهي ڄاڻن ٿا. هتي "فاحشة" مان مراد اهو گناهہ آهي جنهن جو نقصان ٻين تائين پهچي ۽ "ظلموا" مان مراد اهو گناهہ آهي جنهن جو اثر صرف ان گناهہ ڪندڙ تي پوي. هيءَ انهن متقي ٻانهن جي پنجين صفت آهي جنهن ۾ ٻڌايو ويو آهي تہ انهن کان جيڪڏهن غلطيءَ سان ڪو گناهہ سرزد ٿي ويو تہ بہ ان تي هميشگي نہ ڪندا ۽ سوچيندا تہ اڄ تہ اسان هي گناهہ ڪيو پر صبحاڻي رب العزة جل شانه جي بارگاهہ ۾ ڪهڙو جواب ڏينداسون. اتي جو اتي پشيمان ٿي الله تعالیٰ کان بخشائيندا ۽ ان جي حضور ۾ نهايت عاجزيءَ سان مغفرت طلب ڪندا آهن.

## نبوي حديثن مان الله تعالیٰ کان مغفرت طلب ڪرڻ جون ڀلايون

### حديث ١

امام احمد ابودا ؤد، ترمذي ۽ ٻين محدثن حضرت ابوبکر صديق رضي

الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو "مَا مِنْ رَجُلٍ يُذْنِبُ ذَنْباً ثُمَّ يَقُوْمُ فَيَذْكُرُ ذَنْبَهٗ فَيَتَطَهَّرُ ثُمَّ يُصَلِّيْ رَكْعَتَيْنِ ثُمَّ يَسْتَغْفِرُ اللّٰهَ مِنْ ذَنْبِهٖ ذَالِكَ اِلَّا غَفَرَ اللّٰهُ لَهٗ ثُمَّ قَرَءَ هٰذِهِ الْاٰيَةَ "وَالَّذِيْنَ اِذَا فَعَلُوْا فَاحِشَةً اَوْ ظَلَمُوْا انْفُسَهُمْ ذَكَرُوا اللّٰهَ" (١) يعني ڪوبہ شخص گناھ ڪري ان کان پوءِ اٿي ان گناھ کي ياد ڪندي پاڪائي ڪري بہ رڪعتون نماز پڙهي ان گناھ جي معافي ٿو گهري تہ الله تعالیٰ ان کي اهو گناھ بخشي ٿو ڇڏي. (پوءِ پاڻ ان جي تائيد ۾ مٿين لکيل آيت پڙهيائون.

## حديث ٢

رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو تہ "الله تعالیٰ فرمايو آهي "يَا ابْنَ آدَمَ اِنَّکَ مَا دَعَوْتَنِيْ وَرَجَوْتَنِيْ غَفَرْتُ لَکَ مَا کَانَ مِنْکَ وَلَا اُبَالِيْ، ابْنَ آدَمَ اِنَّکَ اِنْ تَلْقِنِيْ بِقُرَابِ الْاَرْضِ خَطَايَا لَقِيْتُکَ بِقُرَابِهَا مَغْفِرَةً بَعْدَ اَنْ لَّا تُشْرِکَ بِيْ شَيْئًا ابْنَ آدَمَ اِنَّکَ اِنْ تُذْنِبْ حَتّٰى يَبْلُغَ ذَنْبُکَ عِنَانَ السَّمَآءِ ثُمَّ تَسْتَغْفِرْنِيْ اَغْفِرْ لَکَ (٢) يعني اي انسان!تون جيستائين مون کي سڏيندين ۽ مون ۾ اميد رکندين تہ توکان جيڪي بہ گناھ ٿيا هوندا مان توکي بخشيندو رهندس ۽ مون کي ڪنهن جي ڪا پرواھ نہ آهي. اي انسان! جيڪڏهن تون مون وٽ ساري زمين کي پرڻ جيترين خطائون ڪٺي ايندين تہ مان ايتريءَ مغفرت سان توکي نوازيندس. پر اهو ان کان پوءِ آهي جو مون سان ڪنهن بہ شيءِ کي شريڪ نہ ڪرين. اي انسان! جيڪڏهن تون ايترا گناھ ڪرين جو آسمان کي وڃي لڳن ان کان پوءِ بہ جيڪڏهن مون کان مغفرت طلب ڪندين تہ مان توکي بخشي ڇڏيندس. هڪ روايت ۾ آهي تہ الله تعالیٰ حضرت موسیٰ عليہ الصلواة والسلام ڏانهن وحي موڪليو تہ اهو ماڻهو ڪيڏو نہ بي حيا آهي جو منهنجي جنت ۾ عملن ڪان سواءِ لالچ ٿو رکي جيڪو منهنجي اطاعت ۾ بخيلي ٿو ڪري مان ان کي جنت ڏيڻ ۾ سخاوت ڪيئن ڪندس؟ الله تعالیٰ جي پياري ٻانهي ثابت بنانيءَ کان روايت آهي تہ جڏهن هيءَ آيت لٿي هئي تہ شيطان روئي ڏنو هو. (٣)

"اُولٰٓئِکَ جَزَاؤُهُمْ مَّغْفِرَةٌ مِّنْ رَّبِّهِمْ وَجَنّٰتٌ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خَالِدِيْنَ فِيْهَا وَنِعْمَ اَجْرُ الْعَامِلِيْنَ" يعني جن ٻانهن ۾ مٿي ذڪر ڪيل سهٽيون صفتون ۽ پياريون خصلتون هونديون، انهن کي آخرت ۾ بهشتي نعمتن سان نوازيو ويندو. ۽ اهي

(١) الدرالمنثور ص٣٢٧ جلد٢ جزءِ ۴ (٢) تنوير الاذهان ص٢٧٦ جلد١

(٣) روح البيان ص٩٧ جلد ٢ الدرالمنثور ص٣٢٦ جزءِ ۴

انهن ۾ هميشه هميشه لاءِ هونڊا.

راقم ضعيف عرض ٿو ڪري تہ اهڙا فرد دنيا ۾ ٿورا هوندا آهن پر اهي پنهنجي شهر، قوم ۽ ملڪ جي لاءِ هزارين برڪتن ۽ فخر جو باعث هوندا آهن بلڪ ائين چئجي تہ بہ صحيح رهندو تہ اهي پوريءَ انسانيت جي لاءِ خداوندي رحمت هوندا آهن. اهي ئي انهيءَ ڪرم نوازيءَ ۽ الهي احسان جا مستحق ۽ لائق آهن. سيني مسلمانن کي اخلاق جي ان بلند معيار تي پورو رهڻ گهرجي جڏهن اهي حضور رحمة للعالمين صلى الله عليہ وسلم جن جا غلام ۽ سچا امتي آهن تہ چونہ پنهنجي آقا صلى الله عليہ وسلم جي رحمت ۽ سهڻي اخلاق جا آئينا هجن.

قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِكُمْ سُنَنٌ فَسِيْرُوْا فِى الْاَرْضِ فَانْظُرُوْا كَيْفَ

تحقيق گذريا اوهان کان اڳ ۾ طريقا پوءِ گهمو زمين ۾ پوءِ ڏسو تہ ڪهڙي ٿي

كَانَ عَاقِبَةُ الْمُكَذِّبِيْنَ ﴿١٣٧﴾ هٰذَا بَيَانٌ لِّلنَّاسِ وَهُدًى وَّمَوْعِظَةٌ

پجاڙي ڪوڙو چوندڙن جي هيءُ بيان آهي ماڻهن جي لاءِ ۽ هدايت ۽ نصيحت آهي

لِّلْمُتَّقِيْنَ ﴿١٣٨﴾

پرهيزگارن جي لاءِ

## تفسير

"قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِكُمْ سُنَنٌ فَسِيْرُوْا فِى الْاَرْضِ فَانْظُرُوْا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُكَذِّبِيْنَ" هن آيت ۾ سنن جو لفظ سنة جو جمع آهي. سنت ان عام رستي ۽ زندگيءَ جي ان نموني جو نالو آهي جنهن تي هميشه پائبندي ڪئي وڃي. الله تعالىٰ هتي پنهنجن ٻانهن کي ارشاد فرمايو آهي تہ اوهان کان اڳ ۾ ڪيترئي قومون ۽ مذهب گذري چڪا آهن جن جا وڏا وڏا واقعا ۽ الله تعالىٰ جا انهن سان ٿيل فيصلا بہ اوهان

جي اڳيان روشن آهن ته جن ماڻهن الله تعالىٰ ۽ ان جي محبوب نبي عليه الصلواة والسلام کي نبوت جي اعلان ۾ سچو نه چونڊي، حرام خوريءَ، ظلم ۽ گناهن تي هميشگي ڪئي، انهن جو انجام ڪهڙو نه برو ٿيو؟ هميشه فتح ۽ عزت انهن جا قدم چميا جيڪي مٿي ذڪرڪيل صفتن جا مالڪ بڻيا. اوهان زمين ۾ گهمي ڏسو ۽ اتي رهندڙن روبرو ڏسندڙن کان پڇو ۽ ٻڌو ته ڇاٽا چون؟ ڄاڻ گهرجي ته انهن واقعن ۾ غور ڪرڻ سان احد جي جنگ ۾ وڙهڻ وارين ٻنهي ڌرين مسلمانن ۽ ڪافرن جي لاءِ به سبق آهي. ڪافر جيڪي الله تعالىٰ جي نبي جي عداوت ۾ حق کي ختم ڪرڻ جي ارادي سان نڪتا هئا اهي ان ٿورڙيءَ عارضيءَ ڪاميابيءَ تي مغرور نه ٿين ڇوته سندن پڇاڙي هلاڪت ۽ بربادي کان سواءِ ڪجهه به ناهي ۽ مسلمان ڪافرن جي سختين، وحشيانه ڪارروائين، ظلمن ۽ پنهنجي اوچتو پوئتي پوڻ کي ڏسي ملول ۽ مايوس نه ٿين. الله تعالىٰ جي سنت قديمه (پراڻو طريقو) ائين آهي ته اهو دشمن کي ڍر ڏيندو آهي پر جڏهن ان کي وٺندو ۽ پڪڙيندو آهي ته سندس وٺ پڪڙ تمام سخت ۽ ڏاڍي هوندي آهي.

"هَٰذَا بَيَانٌ لِّلنَّاسِ وَهُدًى وَمَوْعِظَةٌ لِّلْمُتَّقِينَ" هي ماڻهن جي (سمجهائڻ) جي لاءِ بيان ۽ پرهيزگارن جي لاءِ هدايت ۽ نصيحت آهي. ابن ابي شيبه ڪتاب المصاحف ۾ حضرت سعيد بن زبير کان روايت آندي آهي ته آل عمران سورة مان اول هيءَ آيت نازل ٿي هئي. (١) مقصد ته هيءُ بيان عام ماڻهن جي سمجهائڻ، انهن کان غفلت دور ڪرڻ، سندن ڪنن مان غفلت جي ڪپهه ڪڍڻ لاءِ ۽ الله تعالىٰ کان ڊڄندڙن ٻانهن لاءِ وڌيڪ هدايت ۽ نصيحت آهي جو انهن جو سندن وفات کان پوءِ به سهڻو ذڪر هلندو رهندو ۽ آخرت ۾ به ڪين وڏو اجر ۽ ثواب ملندو پر ڪافرن جو نه سهڻو ذڪر هلندو ۽ نه انهن کي اخروي نعمتون ملنديون.

(١) الدرالمنثور ص٣٢٩ جلد ٢ جزءِ ۴

وَلَا تَهِنُوا وَلَا تَحْزَنُوا وَاَنْتُمُ الْاَعْلَوْنَ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿١٣٩﴾

۽ نہ سست ٿيو ۽ نہ غم ڪيو ۽ اوهان ئي غالب آهيو جيڪڏهن آهيو مؤمن

اِنْ يَّمْسَسْكُمْ قَرْحٌ فَقَدْ مَسَّ الْقَوْمَ قَرْحٌ مِّثْلُهٗ ؕ وَتِلْكَ

جيڪڏهن پهتو اوهان کي زخم پوءِ تحقيق پهتو قوم کي زخم ان جهڙو ۽ اهي

الْاَيَّامُ نُدَاوِلُهَا بَيْنَ النَّاسِ ۚ وَلِيَعْلَمَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَيَتَّخِذَ

ڏينهن ڦيرايون ٿا انهن کي ماڻهن ۾ ۽ تانتہ جدا ڪري الله ايمان وارن کي ۽ وٺي

مِنْكُمْ شُهَدَآءَ ؕ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الظّٰلِمِيْنَ ﴿١٤٠﴾ لا وَلِيُمَحِّصَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ

اوهان مان شهيد ۽ الله نہ ٿو پسند ڪري ظالمن کي ۽ تانتہ نروار ڪري الله ايمان وارن

اٰمَنُوْا وَيَمْحَقَ الْكٰفِرِيْنَ ﴿١٤١﴾ اَمْ حَسِبْتُمْ اَنْ تَدْخُلُوا الْجَنَّةَ

کي ۽ مٽائي ڇڏي ڪافرن کي ڇا سمجهو ٿا تہ داخل ٿيندو• بهشت ۾

وَلَمَّا يَعْلَمِ اللّٰهُ الَّذِيْنَ جٰهَدُوْا مِنْكُمْ وَيَعْلَمَ الصّٰبِرِيْنَ ﴿١٤٢﴾

۽ اڃان نہ نروار ڪيو الله انهن کي جو جهاد ڪيائون اوهان مان ۽ نہ نروار ڪيائين صبرڪندڙن کي

وَلَقَدْ كُنْتُمْ تَمَنَّوْنَ الْمَوْتَ مِنْ قَبْلِ اَنْ تَلْقَوْهُ فَقَدْ رَاَيْتُمُوْهُ

۽ البت تحقيق خواهش ٿي ڪيَو موت جي ان کان اڳ ۾ جو ملاقات ڪيو ان سان پوءِ تحقيق ڏٺُوَ ان کي

ع ١٤/٤ ٥ وَاَنْتُمْ تَنْظُرُوْنَ ﴿١٤٣﴾ ع

۽ اوهان نهاريو پيا.

# تفسير

"وَلَا تَهِنُوا وَلَا تَحْزَنُوا وَاَنْتُمُ الْاَعْلَوْنَ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ" ۽ نہ سست ٿيو ۽ نہ ڏک ڪيو ۽ اوهان ئي بلند آهيو جيڪڏهن مؤمن آهيو. "لا تهنوا" وهن کان ورتل آهي عمل ۽ راءِ جي ڪمزوريءَ کي وهن سڏيو ويندو آهي. ولا تحزنوا حزن کان ورتل آهي ڪنهن نهايت ئي پياريءَ شيءِ کان محروم ٿيڻ جي ڪري جيڪو دل ۾ درد پيدا ٿيندو آهي ان کي حزن سڏبو آهي. هن آيت ۾ الله تعالىٰ مومنن کي تسلي ڏيندي دشمن سان جهاد ڪرڻ تي حرص ڏياريندي، ڪين سستيءَ ۽ ڪاهليءَ کان منع ڪندي ٻڌايو آهي تہ اوهان جيڪڏهن ڪامل مومن ۽ سچا ايمان رهندئو تہ دشمن کان ڪاميابيءَ ۽ مرادن ماڻڻ ۾ بلند رهندئو. علامہ شوڪانيءَ لکيو آهي تہ وقد صدق الله وعده فان النبي صلى الله عليه وآله وسلم بعد وقعة احد ظفر بعدوه في جميع وقعاته (١) يعني الله تعالىٰ پنهنجو وعدو سچو ڪيو ۽ نبي ڪريم صلى الله عليه وآله وسلم جن احد جي واقعي کان پوءِ سيني واقعن ۾ دشمنن تي ڪامياب رهيا (۽ بلنديءَ سندن قدم چميا)

"وَاَنْتُمُ الْاَعْلَوْنَ" ڪيڏو نہ وڏو اعزاز آهي جيئن الله تعالىٰ پنهنجي پياري ڪليم حضرت موسىٰ عليہ الصلواة والسلام لاءِ فرمايو هو "اِنَّکَ اَنْتَ الْاَعْلىٰ" (٢) (بيشڪ تون ئي مٿاهون آهين) تيئن مصطفيٰ ڪريم صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جي سچن امتين ۽ مخلص غلامن لاءِ فرمايائين "وَاَنْتُمُ الْاَعْلَوْنَ" (۽ اوهان مٿاهان آهيو.)

"اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ" مان ثابت ٿيو تہ ايماني قوت دنيا جي سيني مادي قوتن کان مضبوط آهي. جنهن قوم جي فردن جي دلين ۾ ايمان قوي ۽ يقين محڪم هوندو اهي ڪڏهن بہ شڪست نہ کائيندا. مادي وسائل بہ تڏهن ڪارگر ثابت ٿيندا آهن جڏهن سندن استعمال ڪندڙ پڪ ڄاڻندو تہ سندس محنت ڪامياب ٿيندي ضايع نہ ٿيندي. حضرت بلال ٻرندڙ ٽانڊن تي ليٽي، حضرت خباب ڦاسيءَ جي تختي تي مرڪندي، حضرت بيبي سميه سائڻ پنهنجو جسم مبارڪ تلوار سان ٽڪرا ڪرائيندي جيڪا فتح حاصل ڪئي، اها صرف سندن ايماني انوار ۽ يقيني قوت جي

(١) فتح القدير ص٥٨۴ ج١ (٢) سورة طٰهٰ آيت ۶٨

ڪاميابي هئي. هونءَ بہ جيستائين مسلم امت ان صفت سان موصوف رهي تہ ڪامرانيءَ ۽ بلنديءَ جا تمغا ماڻيندي رهي.
"اِنْ يَّمْسَسْكُمْ قَرْحٌ فَقَدْ مَسَّ الْقَوْمَ قَرْحٌ مِّثْلُهٗ" جيڪڏهن (احد ۾) اوهان کي زخم پهتو آهي تہ (بدر ۾ اوهان جي دشمن) قوم کي بہ اهڙو زخم پهتو هو. يعني جڏهن بدر ۾ زخم کائڻ وارا ڪافر ايتري شڪست، ذلت ۽ رسوائيءَ جي ملڻ کان پوءِ بہ سست نہ ٿيا پر اوهان کان پلاند وٺڻ جي لاءِ مڪي مڪرمہ کان ڪاهہ ڪري مديني منورہ جي قريب احد جي ميدان ۾ آيا تہ اوهان مسلمان مؤمن ٿي ڪري ڇوٽا ڪيباڻيو؟ بدر ۾ ڪنل ڪافر جهنمي ۽ اوهان جا مجاهد، احد جي ميدان ۾ سر جو سودو ڪري شهيد ٿيندڙ تہ جنتي آهن.
"وَتِلْكَ الْاَيَّامُ نُدَاوِلُهَا بَيْنَ النَّاسِ" ۽ هي (هار ۽ فتح جا) ڏينهن ڦيرائيندا ٿا رهون انهن کي ماڻهن ۾- ڪڏهن رنج آهي تہ ڪڏهن گنج ڪڏهن خوشي آهي تہ ڪڏهن غم، تنهن جي ڪري مايوس نہ ٿيو جيڪڏهن اوهان حق جي حمايت ۾ تڪليفون ڏسي جانيون قربان ڪيو ٿا تہ اجر ۽ ثواب بہ اوهان جي لاءِ آهي.
"وَلِيَعْلَمَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا" ۽ تانتہ نروار ڪري ايمان وارن کي يعني الله تعالىٰ اها مداولت (جنهن ۾ ڪڏهن ڪنهن کي فتح تہ ڪڏهن ڪنهن کي) ان لاءِ ڪندو آهي تہ جنهن ڳالهہ جو ڪيس اڳي ئي علم آهي ان کي ٻين جي اڳيان ظاهر ڪري تانتہ منافق ۽ مؤمن هڪ ٻئي کان جدا ٿين. هتي ليعلم ليميز جي معنىٰ ۾ آيل آهي. يا ليعلم کان پويان ۽ الله جي لفظ جي اڳيان اولياءَ جو لفظ محذوف آهي. معنىٰ تانتہ الله تعالىٰ جا دوست ڄاڻن تہ مومن ڪهڙا ۽ منافق ڪهڙا آهن. (١)
"وَيَتَّخِذَ مِنْكُمْ شُهَدَآءَ" ۽ تانتہ بڻائي اوهان مان شهيد- ابن جرير ۽ ابن المنذر حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان هن آيت جي متعلق روايت آندي آهي تہ مسلمان الله تعالىٰ کان دعا گهرندا هئا تہ مولا! اسان کي وري ڪو بدر جي ڏينهن جهڙو موقعو عطا فرماءِ. تانتہ ڪافرن سان وڙهي پلائي حاصل ڪيون ۽ شهادت جي سعادت ماڻيون پوءِ احد جي ڏينهن مشرڪن جي مقابلي ۾ آيا ۽ ڪيترا شهيد ٿيا.
(٢) الله تعالىٰ فرمايو تہ ڪافرن کي احد جي ميدان ۾ عارضي ڪاميابي ڏيڻ ۾ اها بہ حڪمت هئي جو اوهان مان ڪيترن پيارن کي شهادت جو اعلىٰ مقام ۽ منصب ملڻو هو.

(١) التفسير الڪبير ص١٦ جزء ٩ (٢) الدرالمنثور ص٣٣٢ ج٢ جزء ٤

# فائدو

علامہ رازيءَ عليہ الرحمة لکيو آهي تہ جيئن ڪرماءُ ڪريم جو ۽ ظرفاءُ ظريف جو جمع آهي تيئن شهداءُ شهيد جو جمع آهي. ڪافرن جي تلوارن سان ڪٺل کي شهيد يا ان جي ڪري سڏيو ويو آهي جو شهيد جي لفظ جي معنىٰ آهي حاضر ۽ شهيد جيئرا آهن جيئن الله تعالىٰ جو فرمان آهي "بَلْ اَحْيَاءٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ يُرْزَقُوْنَ" پوءِ اهي انهن زندگيءَ وارين حالتن ۽ ارواح سان جنت ۾ حاضر ٿين ٿا ۽ ٻيا ائين حاضر نہ ٿا ٿين. تنهن جي ڪري کين شهداءُ سڏيو ويو آهي. معنىٰ جنت ۾ حاضر ٿيندڙ. يا ان جي ڪري جو شهداءُ جي معنىٰ آهي مشهود لهم- جن جي جنتي هجڻ لاءِ شاهدي ڏنل آهي. شهيد جي جنتي هجڻ لاءِ الله تعالىٰ ۽ ملائڪن شاهدي ڏني آهي. يا ان جي ڪري جو اهي قيامت ۾ نبين ۽ صديقن سان گڏ شاهدي ڏيندا. (١) يا شهداءِ مان مراد امت جا اهي ڪامل فرد آهن جن جو عمل ۽ سيرت ڪردار ۽ گفتار هن دنيا ۾ اسلام جي حقانيت جو عادل شاهد آهي ۽ جن جو علم ۽ بصيرت قيامت جي ڏينهن ماڻهن جي عملن جو گواهہ هوندو. (٢)

"وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الظّٰلِمِيْنَ" (۽ الله ظالمن سان محبت نہ ٿو رکي) هتي ظالمن مان مراد جيڪڏهن اهي مشرڪ آهن جيڪي احد جي جنگ ۾ مسلمانن سان وڙهڻ آيا هئا تہ مطلب هي ٿيندو تہ انهن جي وقتي ۽ عارضي سوڀ ان جي ڪري نہ آهي تہ اهي الله تعالىٰ جا پيارا آهن بلڪ اهي ظالم آهن ۽ الله تعالىٰ ظالمن سان محبت نہ ٿو رکي. انهن جي ان عارضي فتح ۽ سوڀ جا اسباب ٻيا آهن جيئن مٿي ذڪر ٿيو يا اڳتي ذڪر ٿيندو ۽ جيڪڏهن ظالمن مان مراد اهي منافق آهن جيڪي احد جي جنگ وقت مسلمانن سان مديني منورهہ مان تہ گڏجي نڪتا هئا پر ان ارادي سان واٽ تان موٽيا هئا تہ مسلمان کين موٽندي ڏسي سست ٿين تہ پوءِ مقصد هي آهي تہ اهي منافق ظالم آهن ۽ الله تعالىٰ ظالمن کي پسند ئي نہ ٿو ڪري تڏهن انهن کي ايمان ۽ شهيد ٿيڻ جي مقام ڪان پري رکيائين ۽ انهن کي اهي نعمتون نصيب نہ ٿيون.

"وَلِيُمَحِّصَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَيَمْحَقَ الْكٰفِرِيْنَ" ۽ تانتہ الله تعالىٰ مومنن کي نروار ڪري ۽ ڪافرن کي مٽائي ڇڏي. مقصد تہ هار ۽ سوڀ مٽجندڙ شيون آهن.

(١) التفسير الڪبير ص١٧- ١٨ جزءُ ٩ (٢) ضياءُ القرآن ص٢٧٩ ج١

ڪڏهن ڪنهن ڪي تہ ڪڏهن ڪنهن ڪي ملن ٿيون. احد جي جنگ ۾ مسلمانن ڪي سڏاري، ڪين گناهن ڪان پاڪ ڪري، شهادت جي بلند مقام تي پهچائي، منافقن ڪي سندن مقدس جماعت ڪان جدا ڪري ۽ ڪافرن ۽ منافقن ڪي آهستي آهستي دنيا تان مٽائڻو هو ڇوتہ اهي پنهنجيءَ عارضيءَ سوڀ ڪي ڏسي مسرور ۽ مغررو ٿي ڪفر ۽ سرڪشيءَ ۾ گهڻو وڌڻ لڳندا ۽ الله تعالىٰ جي قهر ۽ غضب جا حقدار بڻجي تباھ ۽ برباد ٿيندا.

"اَمۡ حَسِبۡتُمۡ اَنۡ تَدۡخُلُوا الۡجَنَّةَ وَلَمَّا يَعۡلَمِ اللّٰهُ الَّذِيۡنَ جَاهَدُوۡا مِنۡكُمۡ وَيَعۡلَمَ الصّٰبِرِيۡنَ" ڇا اوهان سمجهو ٿا تہ (ائين ئي) بهشت ۾ داخل ٿيندؤ؟ ۽ اڃان الله تعالىٰ اوهان مان مجاهدن ڪي ۽ صابرن ڪي (ٻين ڪان) جدا ۽ ظاهر نہ ڪيو آهي. مطلب هي آهي تہ الله جل شانه اوهان ڪي جنت جي جن اعلىٰ مقامن ۽ بلند درجن تي پهچائڻ گهري ٿو ڇا اوهان ائين ٿا سمجهو تہ اهي اوهان ڪي امتحانن ڪان سواءِ آسانيءَ سان ملندا (نہ هرگز نہ) الله تعالىٰ اوهان ڪي آزمائي دنيا جي اڳيان ظاهر ۽ نروار ڪندو تہ ڪهڙا ۽ ڪيترا سندس راضي ڪرڻ جي لاءِ سندس واٽ ۾ سندس دين ۽ حق جي ڪلمي ڪي بلند ڪرڻ جي لاءِ جهاد ڪرڻ وارا ۽ جهاد ۾ ثابت قدم رهڻ وارا آهن. بلند درجات ۽ اعلىٰ مقامات تي اهي ئي پهچندا ۽ فائز ٿيندا جيڪي سندس حڪم تي هر قسم جون سختيون سهي، قربانيون ڏئي، صبر قبولي، ڪاميابي حاصل ڪندا ۽ مرادون ماڻيندا.

"وَلَقَدۡ كُنۡتُمۡ تَمَنَّوۡنَ الۡمَوۡتَ مِنۡ قَبۡلِ اَنۡ تَلۡقَوۡهُ فَقَدۡ رَاَيۡتُمُوۡهُ وَاَنۡتُمۡ تَنۡظُرُوۡنَ" هن آيت ۾ انهن نوجوانن جي خواهش ڪي بيان ڪيو ويو آهي جيڪي بدر جي جنگ ۾ حاضر نہ ٿيا هئا پر چوندا وتندا هئا تہ ڪو اهڙو موقعو ملي جو سيدنا رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن سان گڏجي جهاد ۾ جان قربان ڪري بدر جي جنگ ۾ شهيد ٿيلن وارو مرتبو ۽ مقام ماڻيون. حبيبن ڪريمن صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جي خدمت عاليہ ۾ هميشہ اهڙيون پرزور اپيلون ڪندا رهندا هئا. جڏهن احد جي جنگ جو موقعو آيو تہ اهي جذبات ۽ جوش برقرار رکي نہ سگهيا. الله تعالىٰ انهن جي لاءِ ان آيت ۾ ارشاد فرمايو تہ اوهان شهادت جي موت جا مشتاق ٿي ڪري پوئتي ڇو هٽي ويئو ۽ اها ملامت ڪين شهادت جي شوق رکڻ تي نہ پر سندن سستيءَ ۽ ڪاهليءَ تي ڪئي وئي آهي.

چاڻڻ گهرجي تہ دنيا جي محبت ۽ آخرت جي سعادت گڏ نہ ٿي سگهنديون. هڪڙي محبت وڌندي تہ ٻي گهٽ ٿيندي. اخروي سعادت قلب کي ماسوي الله کان خالي ڪري حقيقي مالڪ جي محبت سان پرڻ سان ملندي ۽ ذڪر ۾ ترقي ڪندي آهي. حضرت شبليءَ عليہ الرحمة کان پڇيو ويو تہ عارف بالله ڪير آهي؟ فرمايائين تہ جنهن جي زبان ذڪرالله سان ناطق (ٻوليندڙ) جنهن جو قلب الله تعالىٰ جي وعدي تي واثق (اعتبار ڪندڙ) ۽ جنهن جو روح سندس واٽ ۾ سابق (اڳرائي ڪندڙ) هجي. (١)

وَمَا مُحَمَّدٌ اِلَّا رَسُوۡلٌ ۚ قَدۡ خَلَتۡ مِنۡ قَبۡلِهِ الرُّسُلُ ؕ اَفَا۟ئِنۡ مَّاتَ

۽ ناهي محمد (ﷺ) مگر رسول تحقيق گذريا ان کان اڳ ۾ رسول ڇا پوءِ جيڪڏهن انتقال ڪري

اَوۡ قُتِلَ انۡقَلَبۡتُمۡ عَلٰۤى اَعۡقَابِكُمۡ ؕ وَمَنۡ يَّنۡقَلِبۡ عَلٰى عَقِبَيۡهِ فَلَنۡ

يا شهيد ڪيو وڃي تہ ڦري ويندؤ پوئين پيرين؟ ۽ جيڪو ڦرندو پوئين پيرين پوءِ اصل نہ

يَّضُرَّ اللّٰهَ شَيۡـــًٔا ؕ وَسَيَجۡزِى اللّٰهُ الشّٰكِرِيۡنَ ﴿١٤٤﴾ وَمَا كَانَ لِنَفۡسٍ اَنۡ

نقصان ڏئي سگهندو الله کي ڪجهہ بہ ۽ سگهوئي اجر ڏيندو الله شڪر ڪندڙن کي ۽ ناهي وس ڪنهن نفس جي جو

تَمُوۡتَ اِلَّا بِاِذۡنِ اللّٰهِ كِتٰبًا مُّؤَجَّلًا ؕ وَمَنۡ يُّرِدۡ ثَوَابَ الدُّنۡيَا نُؤۡتِهٖ

مري الله جي اذن کان سواءِ لکيل مقرر ٿيل ۽ جيڪو ارادو ڪندو دنيا ۾ ثواب جو تہ ڏينداسون ان کي

مِنۡهَا ۚ وَمَنۡ يُّرِدۡ ثَوَابَ الۡاٰخِرَةِ نُؤۡتِهٖ مِنۡهَا ؕ وَسَنَجۡزِى الشّٰكِرِيۡنَ ﴿١٤٥﴾

انهيءَ مان ۽ جيڪو ارادو ڪندو آخرت ۾ ثواب جو تہ ڏينداسون ان کي انهيءَ مان ۽ جلد بدلو ڏينداسون شڪر ڪندڙن کي

(١) روح البيان ص١٠٢ جلد ٢ جزءِ ۴

# تفسير

"وَمَا مُحَمَّدٌ اِلَّا رَسُوۡلٌ" (۽ محمد صلى الله عليه وسلم تہ هڪ رسول آهي) جلدڻ گهرجي تہ احد جي جنگ ۾ جڏهن ڪافرن جبل واري پوئين گهٽ کي خالي ڏسي اوچتو حملو ڪيو ۽ مسلمان ان اوچتي ڪارروائيءَ جي ڪري مايوس ۽ منتشر ٿي ويا ۽ ان حملي ۾ حضور عليہ الصلواة والسلام جن کي تڪليف پهتي تہ پاڻ جنگي حڪمت عملي اختيار ڪندي ڪجھہ اصحابن سڳورن رضي الله عنهم سان گڏ هڪ هيٺاهينءَ جاءِ تي لهي بيهي رهيا. جڏهن پاڻ ڪافرن کي ٻاهر نظر نہ آيا تہ شيطان پليد وڏو آواز ڪري دانهن ڪئي تہ محمد (صلى الله عليہ وسلم) شهيد ٿي ويو. اهو آواز ٻڌندي ئي مسلمان پريشان ۽ منتشر ٿي ويا. ڪي تلوارن مان هٿ ڪڍي بيهي رهيا تہ ڪي سوچڻ لڳا تہ ڪو اهڙو ماڻهو ڳولجي جنهن جي ذريعي ۽ واسطي سان جنگ ۾ آيل ڪافرن جي اڳواڻ ابوسفيان (جيڪو ان وقت اڃان اسلام سان مشرف نہ ٿيو هو) کان پناهہ ۽ امان طلب ڪجي انهن سوچون رکندڙ کي حضرت انس بن نضر صحابيءَ رضي الله تعالىٰ عنہ خطاب ڪندي فرمايو تہ جيڪڏهن (بالفرض) حضور آقاءِ نامدار صلى الله عليہ وسلم جن شهيد ٿي ويا آهن تہ ڪين محبوب نبي (عليہ الصلواة والسلام) بنائي موڪلڻ وارو الله جل شانہ تہ جيئرو آهي. سيدنا رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جهڙي مهربان کان پوءِ اوهان جو جيئڻ بہ ڪهڙي ڪم جو آهي؟ جنهن سچي ۽ حق واري دين جي لاءِ پاڻ شهيد ٿي ويا اوهان بہ سندن نقش قدم تي هلندي قربان ٿي ڏيکاريو تہ وڏي سعادت آهي. ائين چوڻ کان پوءِ اهو پرينءَ جو پروانو پاڻ جنگ جي ميدان ۾ لهي حق جي لاءِ لڙندي وڙهندي شهيد ٿي ويو. (١)

سيدنا رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن ان صورتحال کي مشاهدو فرمائيندي هڪ بلند دڙي تي بيهي اصحابن کي سڏيندي اعلان فرمايو تہ "اِلَيَّ عِبَادَاللهِ اَنَا رَسُوۡلُ اللهِ" اي الله جا ٻانها! مون ڏانهن اچو مان الله جو رسول موجود ۽ زندهہ آهيان. اصحابي سڳورا سندن سڏ کي سڃاڻي ڊوڙندي سندن حضور ۾ حاضر ٿيا ۽ پنهنجي آقا ۽ مولىٰ صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن سان گڏجي ڪافرن کي اهڙي نموني دفع

(١) الدرالمنثور ص٣٣٦ جلد ٢ جزءِ ۴

ڪيائون جو سندن لشڪر منتشر ٿي ويو. پوءِ پاڻ انهن منتشر مسلمانن کي فرمايائون تہ ڪيڏي ٿي ويئو؟ عرض ڪيائون تہ اوهان جي شهادت جي خبر ٻڌي اسان جون دليون پريشان ٿي پيون. ميدان مان نڪرڻ جي لاءِ سوچي رهيا هئاسين. انهن جي سمجهائڻ لاءِ الله تعالىٰ هي آيتون نازل ڪيون تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن الله جا رسول آهن الله ناهن. "قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ" هن کان اڳ ۾ آيل رسول بہ دنيا تان وقت گذاري ويا جيئن اهي وقت گذاري دنيا وارن کان الوداع ڪري ويا تيئن پاڻ بہ وقت گذاري ويندا. "اَفَائِنْ مَّاتَ اَوْ قُتِلَ انْقَلَبْتُمْ عَلَىٰٓ اَعْقَابِكُمْ" مقصد تہ جيڪڏهن پاڻ دين جي دعوت ڏيڻ لاءِ مقرر ڪيل وقت پورو ڪري الرفيق الاعلىٰ ڏانهن متوجهہ ٿيندا تہ اوهان اسلام مان هٿ ڪڍي، جهاد، دين جي خدمت ۽ حفاظت ڇڏي ڪنارو ڪري ويهندؤ. اوهان مان اها اميد تہ نہ ٿي رکي سگهجي.

## فائدو

محمد ﷺ جي لفظ جي معنىٰ ۽ مطلب:- مَحمد(ﷺ) الله تعالىٰ جي پياري نبي جو ذاتي نالو تحميد بروزن تفعيل ڪان ورتل آهي. جنهن جو مادو حمد آهي. تفعيل جي باب مان ڪڍڻ جي ڪري ان ۾ مبالغي ۽ استمرار جي معنىٰ آهي. محمد (ﷺ) جي لفظ جي معنىٰ آهي بار بار ساراهيل ۽ هميشہ تعريف ڪيل. جڏهن کان هي جهان وجود ۾ آيو تڏهن کان سندن ذات، صفات، احوال، اخلاق ۽ فيض جي تعريف ٿيندي آئي، ٿيندي رهي ٿي ۽ ٿيندي رهندي. سندن ثناءِ ۽ واکاڻ دنيا ۽ آخرت ۾، جنت ۾، مقام محمود تي بہ هلندي. سندن هي نالو مبارڪ قرآن ڪريم ۾ چئن جاين تي آيل آهي. ١- هڪ هن آيت ۾ ٢- ٻيو سورة الاحزاب آيت ٤٠ ۾ ٣- ٽيون سورة الفتح آيت ٢٩ ۾ ٤- چوٿون سورة محمد آيت ٢ ۾. هي نالو سندن ڏاڏي حضرت عبدالمطلب ۽ سندن والده سيده آمنہ ملائڪن جي بشارت سان سندن ولادت کان ستين ڏينهن پوءِ رکيو هو. (١) سندن ان نالي کي سندن چاچي ابوطالب ۽ سندن ثناخوان حضرت حسان رضي الله عنہ پنهنجن شعرن ۾ هن طرح بيان ڪيو هو

وشق لہ من اسمہ ليجلہ      فذو العرش محمود وهذا محمد (ﷺ) (٢)

يعني الله تعالىٰ سندن شان کي روشن ڪرڻ لاءِ سندن نالي کي پنهنجي نالي مان ڪڍيو پوءِ عرش جو مالڪ محمود ۽ هي محمد آهي

سندن ذات سان حمد جو تعلق ڪيترن لحاظن سان آهي. سندن نالو پاڪ محمد (صلی الله تعالىٰ عليہ وسلم) ۽ مٿن سورة الحمد نازل ٿي، قيامت ۾ حمد جو جهنڊو سندن

(١) روح المعاني ص٧٣ جلد ٢ ڪمالين شرح اردو جلالين ص٤٦١ جلد ١
(٢) التاريخ الصغير للبخاري ص٩ ڪمالين شرح اردو جلالين ص٤٦١ ج١

هٿ ۾ هوندو. سندن مقام، مقام محمود، سندن ئي طريقي سان کائڻ، پيئڻ، دعا گهرڻ، سفر تان موٽڻ وغيره جي سيني دعائن ۾ الله جي حمد ۽ تعريف جو ذڪر آهي. سندن ئي امت جو لقب حامدون (الله جو حمد ڪرڻ وارا) آهي. حقيقت هيءَ آهي ته جيئن حضور صلي الله عليه وسلم جن ذات جي لحاظ سان ساريءَ مخلوق کان افضل ۽ سيني رسولن عليهم السلام جا سردار آهن تيئن سندن نالو مبارڪ به سيني نالن جو سردار آهي. سندن هن نالي مبارڪ جون پلايون ته تمام گهڻيون آهن پر برڪت حاصل ڪرڻ جي لاءِ هتي ڪجهه لکجن ٿيون.

## حبيب ڪريم ﷺ جن جي ذاتي نالي محمد ﷺ جون پلايون ۽ برڪتون

١- هڪ ته ان ڪي مٺي مالڪ جي نالي الله (جل شانه) سان گهڻي مناسبت آهي الله جي لفظ ڳالهائڻ وقت چار حرف زبان تي اچن ٿا. ا ل ا ه. چارئي ٽٻڪي کان خالي ۽ هڪ حرف تي شد آهي ته محمد لفظ چوڻ سان به چار حرف زبان تي اچن ٿا. م ح م د چارئي ٽٻڪي کان خالي ۽ هڪ تي شد آهي. مگر الله لفظ جي وچ تي الف کڙو ٿيو بيٺو آهي جيڪو ٻڌائي رهيو آهي ته اهو سيني کان مٿي سپني جو حقيقي بادشاهه ۽ مالڪ آهي.

٢- ٻيو ته الله جي لفظ چوڻ سان ٻئي چپ هڪ ٻئي کان جدا ۽ پري تي وڃن ٿا ۽ محمد (ﷺ) جي لفظ چوڻ سان پاڻ ۾ ملن ٿا، چوته پاڻ ئي مخلوق کي خالق سان ملائيندڙ آهن. جيڪڏهن سندن واسطو نه هجي ها ته مخلوق کي خالق جي شان جي نه ڪا خبر هئي ۽ نه اهي فيض حاصل ڪري سگهن ها.

٣- ٽيون ته جيئن الله جو لفظ معنيٰ تي دلالت ڪرڻ ۾ ٻين لفظن جي ملائڻ جو محتاج نه آهي تيئن محمد جو لفظ به محتاج نه آهي. الله جي لفظ مان الف ڪڍي ڇڏيو ته لله رهندو. لام ڪيو ته لهٗ رهندو ۽ ٻيو لام ڪيو ته ﮦ رهندو. سيئي معنيٰ دار. اهڙيءَ طرح محمد جي لفظ مان ميم ڪيو ته حمد رهندو. حاءِ ڪيو ته مد رهندو معنيٰ ڇڪڻ. پاڻ مخلوق کي ڇڪي خالق سان ملائڻ وارا آهن. ٻيو ميم ڪيو ته دال رهندو معنيٰ رهبر.

٤- چوٿون ته دنيا ۾ هر ڪنهن ڄمڻ واري ٻار جو نالو پيءُ ماءُ ۽ لقب

قوم وارا ۽ خطاب حاڪم رکندا آهن. مگر حضور صلي الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جا نالا، خطاب ۽ القاب سڀ الله تعالىٰ پاڻ بيان فرمايا آهن.

٥- پنجون تہ ٻين جا نالا ڄمڻ کان پوءِ سوچيا ويندا. آهن پر حبيب صلي الله عليہ وسلم جن جو نالو سندن پيدا ٿيڻ کان اول ئي الله تعالىٰ عرش عظيم تي لکائي ڇڏيو هو.

٦- ڇهون تہ ڪوبہ شخص سندن نالو پاڪ وٺي ڪين برو چئي نہ سگهندو، ڇوتہ نالي پاڪ وٺڻ سان ئي سندن تعريف ڪري رهيو آهي تہ هاٿي برائي ڪهڙي بيان ڪندو. اهوئي سبب هو جو ڪافر ڪين محمد جي بجاءِ مذمم سڏي پوءِ گلا ڪندا هئا ۽ پاڻ ٻڌي فرمائيندا هئا تہ الله تعالىٰ اسان کي هنن جي بري ڇوڻ کان بچايو آهي. اهي مذمم کي ٿا برو چون ۽ مان تہ محمد (ﷺ) آهيان.

٧- ستون تہ هيءُ اسم گهڻو جامع آهي. آدم جي معنىٰ زمين جي منهن واريءَ مٽيءَ مان پيدا ٿيل. ابراهيم جي معنىٰ مهربان پيءُ، نوح جي معنىٰ خدا جي خوف ۾ روئڻ وارو، عيسىٰ جي معنىٰ گهڻو شريف. انهن سيني نالن ۾ هڪ صفت آيل آهي مگر محمد (ﷺ) جي لفظ ۾ سيئي صفتون اچن ٿيون، ڇوتہ سهٽين صفتن کان سواءِ ساراهيل ڪيئن ٿو ٿي سگهي؟ سندن اچڻ جي قريبي دور ۾ ستن (٧) شخصن پنهنجن پٽن تي اهو نالو ان اميد تي رکيو هو تہ من آخري نبي سندن پٽ ٿئي، پر ٿيو اهوئي جيڪي الله تعالىٰ گهريو.

٩- نائون: روايت ۾ آهي تہ جيڪو محبت سان پنهجي پٽ جو نالو محمد رکندو الله تعالىٰ ان کي عذاب نہ ڪندو.

١٠- ڏهون تہ جنهن بہ ڪاڏي جي دستر خوان تي محمد نالي ماڻهو ڪائڻ ۾ شريڪ هوندو ان ڪاڏي ۾ گهڻي برڪت پوندي.

١١- تہ جنهن جو نالو محمد هجي ان کي سڏڻ ۾ بہ ادب جو لحاظ رکجي. علامہ حقيءَ عليہ الرحمة لکيو آهي تہ هڪ ڀيري سلطان محمود غزنوي عليہ الرحمة پنهنجي پياري وزير اياز جي پٽ کي سڏ ڪنديٰ فرمايو تہ اياز جا پٽ! استنجاءِ لاءِ پاڻي کڻي آءُ. اياز ڪجهہ وقت کان پوءِ عرض ڪري پڇيو تہ بادشاهہ سلامت! مون کان ڪو قصور ٿيو يا منهنجي پٽ کان؟ جو ڪيس نالي وٺڻ جي بجاءِ اياز جا پٽ ڪري سڏيو هُيوَ؟ بادشاهہ فرمايو تہ تنهنجي پٽ جو نالو محمد آهي. ان ڏينهن مان بي وضو

هوس ۽ وضوءَ کان سواءِ مون اهو پاڪ نالو ڪڏهن بہ نہ ورتو آهي تڏهن ان کي ائين سڏ ڪيو هوم. علامہ موصوف هيءُ بہ لکيو آهي تہ بني اسرائيل مان هڪ شخص مري ويو ۽ ماڻهن ان کي ٻاهر ڪري ڦٽو ڪري ڇڏيو. الله تعالىٰ حضرت موسىٰ عليہ الصلواة والسلام کي وحي ڪندي حڪم فرمايو تہ منهنجي ان ٻانهي جي غسل، ڪفن،نماز جنازه ۽ دفن جو انتظام ڪر. ڇوتہ اهو جڏهن بہ توراة کولي دور ڪندي منهنجي محبوب عليہ الصلواة والسلام جي نالي کي پڙهندو هو تہ ان کي چمي اکين سان لڳائيندو هو. مون سندس سڀ گناهہ معاف ڪري ڇڏيا.

١٢- ٻارهون تہ جنهن شخص کي صرف نياڻيون هجن ۽ پٽ جو اولاد نہ ٿو ٿئي اهو پنهنجيءَ گهرواريءَ جي حامل ٿيڻ جي شروعات ۾ ان جي پيٽ تي آڱر رکي هي لفظ لکي من ڪان في هذا البطن فاسمہ محمد "جيڪو هن پيٽ ۾ آهي ان جو نالو محمد آهي" تہ انشاءَالله اهو پٽ ٿيندو. وڏي ڄمار ماڻيندو. اهو عمل مجرب آهي. پر حمل ٿيڻ جي چئن مهينن اندر چاليهن ڏينهن تائين ڪيو وڃي. (١)

# نبي ڪريم ﷺ جن جسماني، دنياوي، حقيقي حياتيءَ سان زنده آهن

قرآن ڪريم جي لفظ "اَفَائِنْ مَات" مان ڪي ماڻهو دليل وٺندي چون ٿا تہ حضرت حبيب ڪريم صلى الله عليہ وسلم جن پنهنجيءَ قبر پاڪ ۾ بہ جيئرا ناهن ڇوتہ هن لفظ "اَفَائِنْ مَّاتَ" ۽ ٻي آيت اِنَّکَ مَيِّتٌ وَاِنَّهُمْ مَيِّتُوْنَ" (بيشڪ تون وفات ڪندڙ آهين ۽ بيشڪ اهي بہ وفات ڪندڙ آهن) مان ثابت ٿي رهيو آهي تہ پاڻ ڪريم صلي الله تعالىٰ عليہ وسلم جن بہ وفات ڪري ويندا. هميشہ زندهہ رهڻ الله تعالىٰ جي صفت آهي. ٻيو ڪو هميشہ زندهہ نہ رهندو. ان جي ڪري نبي عليہ الصلواة والسلام جن کي زنده چوڻ شرڪ ۽ ڪفر آهي (معاذالله ثم معاذالله) الله تعالىٰ ان عقيدي کان بچائي آمين ثم آمين يارب العالمين- ڄاڻڻ گهرجي تہ مٿيون لکيل عقيدو بلڪل غلط ۽گمراهي آهي. قرآن ڪريم ۽ نبوي حديثن (علىٰ قائلها الصلواة والتسليمات) جي روشنيءَ ۾ ڏٺو ٿو وڃي تہ الله تعالىٰ پنهنجا مٿيان وفات ڪرائڻ وارا وعدا پورا ڪري توري وقت جي لاءِ سيني انبياءِ ڪرام عليهم الصلواة والسلام تي عموماً ۽ سيني

(١) تفسير نعيمي ص٢٤٢- ٢٤٣ جلد ۴

نبين جي سردار حبيب اڪرم صلي الله عليہ وسلم جن تي خصوصاً ٿوري وقت لاءِ موت جي حالت آڻي ان کان پوءِ انهن جا ارواح جسمن ڏانهن موٽائي ڪين جسماني، دنيوي، حقيقي، حياتي عطا ڪئي آهي. الله جل شانه تي تہ موت جي حالت اچڻ ئي محال ۽ ناممڪن آهي.انهيءَ جي ڪري انبياءِ ومرسلين عليهم الصلواة والسلام ڪي موت جي حالت طاري ٿيڻ کان پوءِ ساڳي جسماني، دنياوي،حقيقي حياتيءَ جو ملڻ ۽ ڪين زنده، جيئرو تسليم ڪرڻ نہ شرڪ ۽ ڪفرآهي نہ غلط ۽ گمراهي. سيني مفسرن، محدثن، محققن ۽ عام مسلمانن جو عقيدو اهو آهي تہ سمورا پيغمبر سڳورا خصوصاً اڙين جا آذار حضرت محمد مصطفىٰ مختار صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن دنياوي جسمانيءَ ۽ حقيقي حياتيءَ سان زنده آهن ٻڌن ۽ ڏسن ٿا. قرآن ڪريم جي آيتن مان سندن زندگي ثابت آهي. ڏسو!

# قرآن ڪريم مان ثبوت

## آيت ۱

الله تعالىٰ جو فرمان آهي "وَمَآ اَرۡسَلۡنَاکَ اِلَّا رَحۡمَةً لِّلۡعَالَمِيۡنَ" (۱)۽ نہ موڪليوسون اوهان کي مگر سيني جهانن لاءِ رحمت ڪري. علامہ آلوسيءَ بغداديءَ عليہ الرحمة هن آيت جي تفسير ۾ لکيو آهي تہ وکونه صلى الله عليہ وسلم رحمة للجميع باعتبار انه عليه الصلواة والسلام واسطة الفيض الالٰهي علي الممكنات على حسب القوابل (۲)

يعني رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن سيني جي لاءِ ان اعتبار سان رحمت آهن جو پاڻ ممڪنات تي انهن جي استعداد ۽ لياقت آهر فيض الاهيءَ سان واسطو ۽ ذريعو آهن. علامہ موصوف ٿورو اڳتي هلي لکيو آهي تہ والذي اختاره انه صلى الله عليہ وسلم انما بعث رحمة لكل فرد فرد من العالمين ملائكتهم وانسهم وجنهم (۳) يعني مون وٽ مختار قول اهو آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن سيني جهانن جي فرد فرد، ملائڪن، انسانن ۽ جنن لاءِ رحمت آهن. مقصد تہ سيني

(۱) سورة الانبياءِ آيت ۱۰۷ (۲) روح المعاني ص۱۰۵ جزءُ ۱۷
(۳) روح المعاني ص۱۰٦ جزءُ ۱۷

کي سندن واسطي سان وجود ۽ فيض الهي ملي ٿو. پاڻ ساري موجودات ۽ ممکنات لاءِ اصل الاصول آهن هرممکن ۽ موجود فرد سندن فرع آهي. جيئن وڻ جون شاخون ۽ ٽاريون ان جي پاڙن کان حياتي حاصل ڪن ٿيون تيئن موجودات ممکنات جو هو فرد پنهنجيءَ پنهنجيءَ لياقت آهر ڪائنن هر قسم جو فيض ۽ فائدو حاصل ڪري ٿو ۽ پاڻ جهانن جي ذري ذري ڏانهن متوجهہ رهن ٿا. بخاري شريف جي شارح علامہ قسطلانيءَ مواهب لدنيہ ۾ ۽ علامہ زرقانيءَ ان جي شرح ۾ لکيو آهي تہ فکل ما ظهر من رزق العالم فان الاسم الالهي لا يعطيه الا عن محمد صلى الله عليہ وسلم اي فکان من يوصلہ الي العالم کالوکيل في اعطائه لهم نيابۃ عنه (١) يعني جهان کي جيکو رزق ظاهر ٿي ملي ٿو الله تعالىٰ جو اسم ان کي حضرت محمد صلى الله عليہ وسلم جن جي پاڪ هٿ کان ڏياري ٿو پاڻ جهان ۾ الله تعالىٰ جي طرفان وکيل وانگر آهن. راقم الحروف عرض ٿو ڪري تہ مسلمانو! هي سڀ ڪجهہ تڏهن آهي جڏهن پاڻ صلى الله عليہ وسلم جن زنده ۽ جيئرا آهن. حضرت شاهہ ولي الله محدث دهلويءَ عليہ الرحمۃ لکيو آهي تہ (مديني منور ۾ مزار جي زيارت ڪرڻ وقت) مون رسول الله صلى الله عليہ وآله وسلم جن کي (سندن مزار ۾) قائم دائم ڏٺو. پاڻ جڏهن خلق ڏانهن متوجہ ٿين ٿا تہ نهايت ويجها هوندا آهن جيکو انسان پنهنجيءَ ڪوشش ۽ همت سان عرض ڪري ٿو تہ پاڻ فرياد رسي ڪندي ان تي اهڙيون برڪتون وسائن ٿا جو اهو سمجهي تہ ان تي نيون مهربانيون ٿي رهيون آهن جيئن ڪو شخص مظلومن محتاجن جي مدد ڪرڻ ۾ مصروف هوندو آهي. (٢) ۽ اهو سڀ ڪجهہ بہ تڏهن آهي جڏهن پاڻ عليہ الصلواة والسلام جن زنده آهن.

## آيت ٢

الله جل شانه جو فرمان آهي "وَلَا تَقُوْلُوْا لِمَنْ يُّقْتَلُ فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَمْوَاتٌ بَلْ اَحْيَاۤءٌ وَّلٰكِنْ لَّا تَشْعُرُوْنَ" (٣) ۽ انهن جي لاءِ جيڪي الله جي واٽ ۾ ڪُنا ٿا وڃن مئل نہ چئو بلڪ جيئرا آهن ۽ پر اوهان نہ ٿا سمجهو. هيءَ آيت ظاهر ۾ تہ شهيدن جي باري ۾ آهي پر حقيقت هيءَ آهي تہ الله تعالىٰ جا سيئي نبي عليهم الصلواة والسلام عموماً

(١) مواهب لدنيه مع شرح الزرقاني ص٢٦٠ جلد ٥ (٢) فيوض الحرمين ص٣٠
(٣) سورة البقره آيت ١٥٤

۽ حضور آقاءِ نامدار صلی اللہ تعالیٰ عليہ وسلم جن خصوصاً هن ۾ اول اول داخل آهن. محبوب عليہ الصلواۃ والسلام جي پاڪ ذات کي اللہ تعالیٰ "وَاللّٰهُ يَعْصِمُكَ مِنَ النَّاسِ" فرمائي ظاهري طرح ڪنهن جي هٿان قتل ٿيڻ کان تہ بچايو هو پر پاڻ جيڪو زهر ۾ مليل گوشت يهوديائيءَ جي دعوت ۾ کاڌو هيائون ۽ ان گوشت ٻڌايو هو تہ مون ۾ زهر مليل آهي. پڇاڙيءَ تائين ان جي اثر رهڻ جي ڪري اللہ تعالیٰ ڪين شهادت جي اعلیٰ مقام تي بہ پهچايو. علامہ جلال الدين سيوطيءَ عليہ الرحمۃ لکيو آهي تہ والانبياءُ اولیٰ بذالک فهم اجل واعظم وما من نبي الا وقد جمع مع النبوة وصف الرسالة فيدخلون فی عموم لفظ الاية (۱) يعني انبيا عليهم الصلواۃ والسلام شهيدن جي لاءِ ذڪر ڪيل حياتيءَ جا وڌيڪ حقدار آهن ڇوتہ اهي وڏي شان ۽ عظمت وارا آهن ۽ ڪوبہ نبي اهڙو نہ آهي جنهن کي نبوة سان گڏ شهادت جي صفت عطا ٿيل ناهي ان جي ڪري اهي بہ هن آيت جي لفظن جي عموم ۾ داخل آهن. مطلب تہ اهي بہ جيئرا آهن.

امام احمد، ابويعلیٰ طبرانيءَ، حاڪم، مستدرڪ ۾ ۽ بيهقيءَ دلائل النبوة ۾ حضرت ابن مسعود رضي اللہ عنہ کان هڪ روايت آندي آهي ان فرمايو تہ مان نو (۹) ڀيرا قسم کڻي ٿو چوان تہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ عليہ وسلم جن نبي هجڻ سان گڏ شهيد بہ آهن. (۲) ۽ ان جي ڪري زنده بہ آهن. ڇاڪاڻ گهرجي تہ جيئن قرآن پاڪ جي آيتن مان انبياءِ ڪرام عليهم الصلواۃ والسلام جو زنده هجڻ ثابت آهي تيئن حضور عليہ الصواۃ والسلام جن جي پاڪ حديثن مان بہ صاف صاف ثابت آهي. ڏسو

## حديث ۱

امام احمد، مسلم ۽ نسائي روايت آندي آهي تہ رسول اللہ صلی اللہ عليہ وسلم جن فرمايو تہ مان معراج واريءَ رات موسیٰ (عليہ الصلواۃ والسلام) کان لنگهيس "وَهُوَ قَائِمٌ يُصَلِّيْ فِيْ قَبْرِهٖ" (۳) تہ اهو بيٺو آهي پنهنجيءَ قبر (مبارڪ) ۾ نماز پڙهي رهيو آهي.

(۱) الحاوي للفتاویٰ ص۱۴۸ جلد۲ (۲) زرقاني شرح المواهب اللدنيه ص۳۳۲ جلد ۵
(۳) حوالو ساڳيو

## حديث ٢

محدث ابوداؤد حضرت اوس بن ابي اوس رضي الله تعالىٰ عنہ کان هڪ ڏگهي روايت آندي آهي جنهن ۾ حضور صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جو ارشاد مبارڪ آهي تہ "اِنَّ اللّٰهَ عَزَّ وَجَلَّ حَرَّمَ عَلَي الْاَرْضِ اَجْسَادَ الْاَنْبِيَآءِ" (١) يعني الله تعالىٰ زمين تي نبين عليهم الصلواة والسلام جي جسمن (پاڪن) کي کائڻ حرام ڪري ڇڏيو آهي. هن حديث جو شرح ڪندي خليل احمد سهارنپوريءَ لکيو آهي تہ فان الانبياء فی قبورهم احياءٌ (٢) بيشڪ انبياءِ عليهم الصلواة والسلام پنهنجن قبرن (مبارڪن) ۾ جيئرا آهن. علامہ شرف الحق عظيم آباديءَ هن ئي حديث جي شرح ۾ لکيو آهي تہ فان الانبياء فی قبورهم احياءٌ قال ابن حجر المكي وما افاده من ثبوت حياة الانبياءِ حياة بها يتعبدون ويصلون فی قبورهم مع استغناءِهم عن الطعام والشراب كالملائكة امر لامرية فيه (٣) يعني هيءَ ڳالهہ يقيني آهي تہ انبياءِ ڪرام عليهم السلام پنهنجن قبرن (پاڪن) ۾ جيئرا آهن. علامہ ابن حجر مڪي عليه الرحمة فرمايو آهي تہ هن حديث مان اهو فائدو مليو تہ انبياءِ ڪرام عليهم الصلواة والسلام جيٰ لاءِ اهڙي حياتي ثابت آهي جنهن سان الله تعالىٰ جي عبادت ڪن ٿا. پنهنجن قبرن ۾ نماز پڙهن ٿا ۽ ملائڪن وانگر کائڻ پيئڻ جي محتاجيءَ کان آزاد آهن. اهو اهڙو امر آهي جنهن ۾ ڪوبہ شڪ ناهي.

## حديث ٣

ابويعلىٰ ۽ بيهقيءَ حضرت انس رضي الله تعالىٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو: "اَلْاَنْبِيَاءُ اَحْيَاءٌ فِیْ قُبُوْرِهِمْ يُصَلُّوْنَ" نبي پنهنجن (پاڪ) قبرن ۾ جيئرا آهن نمازون پڙهندا آهن.

علامہ شوڪانيءَ انهن حديثن تي نگاهہ وجهندي لکيو آهي تہ والاحاديث فيها مشروعية الاكثار من الصلواة على النبى صلى الله عليه وسلم يوم الجمعة وانها تعرض عليه صلى الله عليہ وسلم وانه حي فی قبرهٖ يعني هنن حديثن مان جمعي جي ڏينهن نبي ڪريم صلى الله عليہ وسلم جن تي گهڻيءَ صلواة پڙهڻ جو جواز ملي رهيو

(١) ابوداؤد مع بذل المجهود ص١٦٠ جلد ٢ (٢) بذل المجهود ص١٦٠ جلد ٢
(٣) عون المعبود شرح ابي داؤد ص٤٠٥ جلد ١

آهي ۽ اهو بہ ثابت ٿي رهيو آهي تہ اها صلواة سندن جي خدمت عاليہ ۾ پيش ڪئي ٿي وڃي ۽ پاڻ صلى الله عليہ وسلم جن پنهنجيءَ قبر (پاڪ) ۾ زنده آهن.

## حديث ۴

ابن ماجہ جيد سند سان حضرت ابودرداء رضي الله تعالىٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن ڪيس فرمايو تہ "إِنَّ اللّٰهَ عَزَّوَجَلَّ حَرَّمَ عَلَى الْأَرْضِ أَنْ تَاكُلَ أَجْسَادَ الْأَنْبِيَآءِ" يعني يقيناً الله عزوجل زمين تي نبين (عليهم الصلواة والسلام) جي جسمن کي کائڻ حرام ڪري ڇڏيو آهي.

علامہ شوڪانيءَ هن حديث جي پويان لکيو آهي تہ وفي رواية للطبراني "لَيْسَ مِنْ عَبْدٍ يُصَلِّيْ عَلَيَّ إِلَّا بَلَغَنِيْ صَلَوَاتُهُ قُلْنَا وَبَعْدَ وَفَاتِکَ قَالَ وَبَعْدَ وَفَاتِيْ إِنَّ اللّٰهَ عَزَّوَجَلَّ حَرَّمَ عَلَى الْأَرْضِ أَنْ تَاكُلَ أَجْسَادَ الْأَنْبِيَاءِ" يعني طبرانيءَ جي هڪ روايت ۾ آهي تہ پاڻ ڪريمن صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو تہ ڪوبہ ٻانهو مون تي صلواة پڙهي ٿو تہ اها صلواة مون وٽ پهچي ٿي اسان (اصحابن) عرض ڪيو تہ اوهان جي وفات کان پوءِ (بہ پهچندي) فرمايائون تہ منهنجي وفات کان پوءِ (بہ پهچندي) يقيناً الله عزوجل زمين تي نبين جي جسمن کي کائڻ حرام ڪري ڇڏيو آهي (نہ کائيندي) ان کان پوءِ شوڪانيءَ صاحب لکيو آهي تہ تحقيق واريءَ جماعت جو اهو مذهب آهي تہ يقيناً رسول الله صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن وفات کان پوءِ بہ زنده آهن ۽ پاڻ پنهنجيءَ امت جي اطاعتن جي ڪري خوش ٿين ٿا ۽ يقيناً انبياءِ عليهم الصلواة والسلام (جا جسم) ڳرن نہ ٿا. (جهڙا هيا اهڙا ئي هوندا آهن) ۽ مطلق ادراڪ جيئن زيارت ڪرڻ جي لاءِ ايندڙن جو علم ۽ انهن جي ڳالهائڻ کي ٻڌڻ تہ ٻين مري ويلن جي لاءِ بہ ثابت آهي (انبياء عليهم الصلواة والسلام تہ بلند ۽ بالا آهن) حضرت عبدالله بن عباس کان صحيح، مرفوع روايت ۾ آهي تہ ڪوبہ مؤمن پنهنجي اهڙي مؤمن ڀاءُ يا شخص جي قبر کان لنگهي ٿو جنهن کي دنيا ۾ سڃاڻندو هو پوءِ ان تي سلام ٿو چوي تہ اهو قبر وارو ان کي سڃاڻي سلام جو جواب ٿو ڏي ۽ جيڪڏهن ڪنهن اهڙي ماڻهوءَ جي قبر کان ٿو لنگهي جيڪو ڪيس سڃاڻندو نہ هو ۽ سلام چوي ٿو تہ اهوبہ سلام جو جواب ڏيندو آهي ۽ صحيح حديث ۾ آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن بقيع ۾ دفن ڪيلن جي زيارت لاءِ ايندا هئا ۽ انهن تي سلام چوندا هئا ۽ الله جي ڪتاب ۾ شهيدن جي

حياتيءَ جو نص بيٺو آهي تہ اهي جيئرا آهن ۽ اها حياتي انهن جي جسم سان متعلق آهي تہ پوءِ نبين ۽ مرسلن عليهم الصلواة والسلام جو تہ مقام ئي مٿاهون آهي. ۽ ان حديث پاڪ مان جيڪا منذريءَ روايت ڪئي ۽ بيهقيءَ صحيح چئي ثابت آهي تہ انبياءِ پنهنجن قبرن ۾ زندھ آهن. (۱)

حضرت علامہ شيخ عبدالحق محدث دهلويءَ عليہ الرحمة لکيو آهي تہ وحياة انبياءِ متفق عليہ هست هيچکس رادروي خلافي نسبت حيات جسماني، دنياوي، حقيقي نہ حيات معنوي روحاني چنانکہ شهداءِ را است ودرين حديث کہ فرمود "اِنَّ اللّٰهَ حَرَّمَ عَلَى الْاَرْضِ اَجْسَادَ الْاَنْبِيَاءِ" اشارت است بدان، اگرچہ درين باب کہ عرض صلواة وحصول علم وادراک است حيات روحاني نيز کافي است وليکن مذهب همان است کہ گفتہ شد- مشکواة شريف باب فضل الجمعة جي ٽيئن فصل ۾ حضرت ابودرداءِ رضي الله عنہ واري روايت جو شرح کندي محدث موصوف لکيو آهي تہ: پس پيغمبر خدا زنده است بحقيقت حيات دنياوي تاانکہ روزي داده مي شود روزي حي (۲) يعني امت جي علماءِ جي گڏيل فيصلي سان جنهن ۾ کنهن کي بہ اختلاف، انڪار ۽ اعتراض ناهي انبياءِ ڪرام عليهم الصلواة والسلام جي (وفات کان پوءِ) حياتي ثابت آهي ۽ اها دنيوي جسماني حقيقي آهي شهيدن واري روحاني ۽ معنوي ناهي ۽ هن حديث ۾ (جو فرمايائون تہ الله تعاليٰ زمين تي نبين عليهم الصلواة والسلام جي جسم کي کائڻ حرام ڪري ڇڏيو آهي) بہ انهيءَ ڳالہ ڏانهن اشارو آهي توڙي جو درود پيش ڪرڻ، علم ۽ ادراڪ جي لاءِ روحاني حياتي بہ ڪافي آهي پر مذهب اهو آهي جيڪو مٿي لکجي آيو. پوءِ الله تعاليٰ جو پيغمبر عليہ الصلواة والسلام جسماني، دنياوي، حقيقي حياتيءَ سان زندھ آهي ايتري قدر جو جيئرن وانگر روزي ڏنو ٿو وڃي.

مولوي قطب الدين صاحب مشکواة شريف جي اردو شرح ۾ لکيو آهي تہ حديث جي پوئين حصي جو حاصل هي آهي تہ انبياءِ عليهم الصلواة والسلام پنهنجن مزارن ۾ جيئرا آهن ۽ اهو مسئلو متفق عليہ آهي. ان ۾ کنهن کي بہ اختلاف ناهي تہ انهن جي حياتي جسماني، حقيقي، دنياوي آهي. شهيدن واري معنوي ۽ روحاني ناهي. (۳)

اسلامي دنيا جي مڃيل، معروف ۽ مشهور مفسر، محدث، مؤرخ، سيرت نگار، ديني علم جي حافظ حضرت علامہ جلال الدين سيوطيءَ عليہ الرحمة ان موضوع تي لکيل خاص ڪتاب "انباءُ الازکياءِ فی حيواة الانبياءِ" جي شروعات ۾

(۱) نيل الاوطار ص۲۴۸ جلد ۲ جزءُ ۳ (۲) اشعة اللمعات ص۶۱۳ ج ۱
(۳) مظاهر حق ص۴۴۵ ج۲

لکيو آهي تہ: (فاقول) حياة النبي صلی الله عليہ وسلم في قبره هو وسائر الانبياءِ معلومة عندنا علما قطعيا لما قام عندنا من الادلة في ذالک وتواترت به الاخبار وقد الف البيهقي جزءً في حياة الانبياءِ في قبورهم (١) يعني مان چوان ٿو تہ اسان کي قطعي علم سان معلوم آهي تہ نبي ڪريم صلی الله عليہ وسلم جن ۽ ٻيا انبيا عليهم الصلوٰة والسلام پنهنجن مزارن ۾ جيئرا آهن ڇوتہ اسان وٽ ان جا دليل آهن ۽ متواتر حديثون آيل آهن. محدث بيهقيءَ تہ انبياءِ عليهم الصلوٰة والسلام جي سندن مزارن ۾ جيئري هجڻ جي موضوع تي هڪ ڪتاب ڇاهيو آهي.

علامہ علي قاري عليہ الرحمة لکيو آهي تہ فنبي الله حي دائما يرزق رزقا معنويا ٿوري اڳتي لکيو اٿس تہ ولا ينافيه ان يكون هناک رزق حسي ايضا وهو المتبادر (٢) ينهي عبارتن جو مطلب هي آهي تہ الله جو نبي هميشہ زندهہ آهي ۽ کيس معنوي رزق ڏنو ويندو آهي پر اهو ان جي خلاف ناهي جو کيس حسي رزق بہ ڏنو وڃي. سيرت جي مستند ۽ معتبر ڪتاب مواهب لدنيہ جي مصنف ۽ بخاري شريف جي شارح علامہ احمد قسطلانيءَ عليہ الرحمة لکيو آهي تہ ويلازم الادب والخشوع والتواضع غاض البصر في مقام الهيبة كما كان يفعل بين يديه في حياته اذ هو حي ويستحضر علمه بوقوفه بين يديه وسماعه لسلامه كما في حال حياته اذ لا فرق بين موته وحياته في مشاهدته لامته ومعرفته باحوالهم ونياتهم وعزائمهم وخواطرهم وذالک عنده جلي لاخفاءِ به باطلاع الله تعالیٰ له علیٰ ذالک (٣) يعني جڏهن زيارت ڪرڻ جي ارادي سان ڪو شخص دربار ۾ حاضر ٿئي تہ ادب، نياز ۽ نوڙت کي لازم ڪري وٺي جيئن دنيا ۾ سندن ظاهريءَ زندگيءَ وقت سندن هيبت جو مقام ذهن ۾ هوندو هو هينئر بہ اکيون بند ڪري اهائي هيبت ذهن نشين ڪري ويهي ڇوتہ پاڻ صلی الله عليہ وسلم جن زندهہ آهن ۽ اها ڳالهہ بہ دل ۾ حاضر رکي تہ پاڻ سندس ويهڻ جو علم رکن ٿا ۽ سلام کي ٻڌن ٿا جيئن دنيا ۾ رهندي ڄاڻندا ۽ ٻڌندا هئا امت جي احوال کي مشاهدي ڪرڻ، انهن جي حالات، نيتن، عزائم ۽ دل ۾ ڇپيکندڙن ڳالهين کي سڃاڻڻ جي لحاظ سان سندن وفات ۽ دنيا ۾ رهڻ واريءَ حياتيءَ ۾ ڪو فرق ناهي. الله تعالیٰ جي اطلاع سان هر شيءِ سندن اڳيان روشن آهي ان ۾ ڪا بہ ڳجهائي ناهي.

هڪ مقام تي لکيو اٿس تہ ولا شک ان حياة الانبياءِ عليهم السلام ثابتة معلومة مستمرة ونبينا صلی الله عليه وسلم افضلهم بالنصوص والاجماع فاذا كان كذالک فينبغي ويجب ان يكون حياته اكمل واتم من حياة سائرهم- ڪجهہ اڳتي

(١) الحاوي للفتاويٰ ص١٤٧ ج٢ (٢) مرقاة شرح مشکواة ص٢١٢ جلد ٢
(٣) مواهب لدنيہ مع شرح الزرقاني ص٣٠٥ ج٥

لکيو اٿس تہ فنبينا صلى الله تعالىٰ عليه وسلم حي في قبره يصلي ويعبد ربه (۱) يعني ان ۾ ڪو شڪ ناهي تہ انبياء عليهم الصلواة والسلام جي حياتي ثابت، معلوم، هميشہ واري آهي ۽ قرآن ۽ حديث جي نصوص ۽ اجماع سان ثابت آهي تہ اسان جو نبي صلي الله عليہ وسلم سڀني کان پلو آهي. پوءِ ضروري آهي تہ سندن حياتي بہ انهن کان اڪمل ۽ اتم هجي. اسان جو نبي صلى الله عليہ وسلم پنهنجي قبر پاڪ ۾ جيئرو آهي نماز پڙهندو ۽ پنهنجي رب جي عبادت ڪندو آهي. علامہ احمد طحطاوي حنفيءَ لکيو آهي تہ ومما هو مقرر عند المحققين انه صلى الله عليه وسلم حي يرزق ممتع بجميع الملاذ والعبادات غيرانه حجب عن ابصار القاصرين عن شريف المقامات (۲) يعني محققن عالمن وٽ هيءَ ڳالهہ ثابت آهي تہ حضور صلى الله عليہ وسلم جن زندهہ آهن. رزق ڏنا ويندا آهن. سڀني لذتن ۽ عبادتن مان فائدو وٺندڙ آهن مگر پاڻ اعليٰ مقامن تي نہ پهچي سگهندڙن قاصرن جي نگاهن کان پردي ۾ رکيا ويا آهن.

سنڌ جي معروف ولي ۽ برک عالم علامہ عبدالغفور همايونيءَ عليہ الرحمۃ لکيو آهي تہ آنحضرت صلى الله عليہ وسلم را بلکہ تمامي انبياءِ را حيات حقيقي دنيوي حاصل است (۳) يعني حضور صلى الله عليہ وسلم جن بلڪ سڀني نبين کي حقيقي دنيوي حياتي حاصل آهي. علامہ قاسم نانوتوي دارالعلوم ديوبند جي پهرئين بانيءَ هن موضوع تي لکيل خاص ڪتاب "آب حيات" جي شروع ۾ لکيو آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم هنوز قبر مين زندهہ هين اور مثل گوشہ نشينون اور چلہ ڪشون ڪے عزلت گزين هين (۴) مقصد تہ پاڻ زندهہ آهن ڪين زندهہ مڃڻ ئي جمهور مسلمانن جو عقيدو ۽ ايمان آهي.

علامہ صاويءَ "وما مُحَمَّدٌ اِلاَّ رَسولٌ" جي تفسير ۾ لکيو آهي تہ انهن لفظن جو مطلب آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن نہ الله آهن نہ معبود- اڳتي لکيو اٿس تہ فمن اعتقد ان النبي صلى الله عليه وسلم لا نفع به بعد الموت بل هو کاحاد الناس فهو الضال المضل (۵) يعني جنهن اهو عقيدو رکيو تہ رسول الله صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن سان سندن رحلت کان پوءِ نفعو نہ ملندو بلڪ پاڻ عام ماڻهن وانگر آهن اهي پاڻ گمراهہ ۽ ٻين کي گمراهہ ڪندڙ آهن.

(۱) زرقاني شرح المواهب ص۳۰۹ ج۸ (۲) طحطاوي ص۱۲
(۳) فتاويٰ همايوني ص۱۵ ج۲ (۴) آب حيات ص۷
(۵) صاوی صہ ۱۸۱ ج۱

"وَمَنْ يَّنْقَلِبْ عَلٰى عَقِبَيْهِ فَلَنْ يَّضُرَّ اللّٰهَ شَيْئًا" ۽ جيڪو (اسلام کان) پوئين پير هٽندو اهو الله کي ڪجهه به نقصان ڏئي نه سگهندو بلڪ پنهنجي بربادي ۽ نقصان ڪندو ڇوته الله تعالیٰ ڪنهن جو محتاج نه آهي. ضرورت اوهان کي آهي ته ديني خدمتون ڪندا رهو.

"وَسَيَجْزِي اللّٰهُ الشّٰكِرِيْنَ" ۽ الله شڪرگذارن کي (جلد انهن جي شڪرگذاريءَ جو) سهڻو بدلو عطا ڪندو. هتي شڪرگذارن مان مراد سندس طرفان عطا ڪيل دين تي شڪرڪندڙ ان جي لاءِ تڪليف ڏسندڙ، سختي سهندڙ، اذيتون برداشت ڪندڙ آهن.

## مسلمان! خبردار رهو!!

قادياني ۽ مرزائي ڪافرن قرآن ڪريم جي هن آيت ۾آيل لفظ "خلت" جي معنيٰ "مري ويا" ڪندي دعويٰ ڪئي آهي ته سيدنا محمد رسول الله صلی الله عليه وسلم جن کان اڳ ۾ آيل سڀ نبي مري ويا. (معاذالله) ان جي ڪري حضرت عيسیٰ عليه الصلواة والسلام جن به مئل آهن جيئرا ناهن. مگر اها مراد ۽ معنيٰ وٺڻ سراسر ڪوڙ، ظلم ۽ قرآن ڪريم جي تحريف آهي. هن آيت ۾ آيل لفظ "خلت" جو مادو خلو آهي ۽ خلو جي اصلي ۽ حقيقي معنيٰ جدا ٿي ويهڻ، هليو وڃڻ ۽ اڪيلو ٿي ويهڻ آهي. جيئن قرآن پاڪ ۾ هڪ جاءِ تي آهي "وَاِذَا خَلَوْا اِلٰى شَيٰطِيْنِهِمْ" (۱) ۽ جڏهن اڪيلا ٿي ويهن ٿا پنهنجن شيطانن سان. ٻيءِ جاءِ تي آهي "وَاِذَا خَلَا بَعْضُهُمْ اِلٰى بَعْضٍ" (۲) ۽ جڏهن اڪيلا ٿي ويهن ٿا هڪڙا انهن مان ٻين سان. ٽينءَ جاءِ تي آهي "اِذَا خَلَوْا عَضُّوْا عَلَيْكُمُ الْاَنَامِلَ مِنَ الْغَيْظِ" (۳) جڏهن اڪيلا ٿا ويهن ته اوهان تي ڪاوڙ جي ڪري آڱرين جي ڏوڏن کي چڪ ٿا هڻن. انهن ٽنهي آيتن مان مراد اها ٿي آهي جيڪا هميشه مسلمان بيان ڪندا آيا ۽ ڪندا رهن ٿا. آيت جو صحيح مفهوم هيءُ آهي ته "حضور صلی الله عليه وسلم جن کان اڳ ۾ جيڪي رسول عليهم الصلواة والسلام دنيا تي آيا هئا اهي پنهنجو مقرر ڪيل وقت دين جي دعوت ڏيئي امتن کان پورو ڪري (وفات سان يا حضرت عيسیٰ عليه الصلواة والسلام جن وانگر زنده آسمان تي کڄي وڃڻ سان) جدا ٿي ويا ۽ حضور عليه الصلواة والسلام جن به پنهنجو

(۱) سورة بقره آيت ۱۴ (۲) سورة بقره آيت ۷٦
(۳) سورة آل عمران آيت ۱۱۹

مقرر ٿيل وقت توحيد ۽ رسالت ۽ قيامت جي اصولي عقيدن سان گڏ دين جي ٻين حڪمن جي تبليغ ڪندي پورو ڪري جڏهن الرفيق الاعلیٰ ڏي سندن متوجهه ٿيڻ جو وقت آيو ته اوهان ڪان جدا ٿي ويندا پوءِ جيئن اڳين امتن تي سندن پيغمبرن جي آندل دين تي مضبوطيءَ سان رهڻ لازم هو اوهان تي به محمدي دين تي محڪم رهڻ ضروري ۽ فرض آهي. حضرت عيسیٰ عليہ الصلواة والسلام جي مري وڃڻ جو هن آيت ۾ ڪوبه ذڪر نه آهي.

"وَمَا كَانَ لِنَفْسٍ اَنْ تَمُوْتَ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ كِتَابًا مُّؤَجَّلًا" ۽ ڪنهن به نفس جو وس ناهي جو الله جي اذن ڪان سواءِ مري (موت جو وقت) لکيل مقرر آهي. ظاهر ۾ ڪيترا به مرڻ جا اسباب نظر اچن پر ڪوبه شخص الله جي حڪم ڪان سواءِ مقرر ٿيل مدت ڪان اڳي نه مرندو جنهن طريقي سان به جنهن جو موت اچڻو هوندو بيماريءَ يا قتل يا ڪنهن ٻئي نموني سان ته ايندو الله تعالیٰ تي توڪل ڪندڙن ٻانهن کي موت ڪان ڀڄڻ يا گهٻرائڻ نه گهرجي ۽ نه ڪنهن جي موت جو ٻڌي مايوس ۽ بزدل ٿيڻ گهرجي. موت جڏهن ۽ جتي اچڻو هوندو ضرور ايندو.

# توڪل جو ثمرو

علامہ ابن ڪثير عليہ الرحمۃ لکيو آهي ته جڏهن مسلمانن جو لشڪر دجلہ درياءَ تي ٻيڙيءَ ۽ پل نه هجڻ جي ڪري اچي بيهي رهيو ۽ دشمن ٻئي پاسي بيٺل نظر اچي رهيا هئا ته حضرت حجر بن عدي رضي الله تعالیٰ عنہ مسلمانن مجاهدن کي خطاب ڪندي فرمايو ته "موت جڏهن اچڻو هوندو ضرور ايندو. دجلہ مان گهڙي ڇو نه ٿا لنگهي هن طرف هلو. ائين چوندي پهريائين پاڻ پنهنجو گهوڙو درياءَ ۾ لاٿائين ۽ ٻين به ڪيس ڏسي گهوڙا لاٿا. سيني جا گهوڙا پاڻيءَ جي مٿان هلندي ڏسي دشمن ڀڄڻ لڳا ۽ چوڻ لڳا ته هي ته جن آهن، ماڻهو ناهن. ائين ڇٽي ميدان خالي ڪري ويا. (١)

"وَمَنْ يُّرِدْ ثَوَابَ الدُّنْيَا نُؤْتِهٖ مِنْهَا وَمَنْ يُّرِدْ ثَوَابَ الْاٰخِرَةِ نُؤْتِهٖ مِنْهَا وَسَنَجْزِي الشّٰكِرِيْنَ" ۽ جيڪو دنيا جي ثواب جو ارادو رکندو ته ان کي ان مان ئي ڏينداسون ۽ جيڪو آخرت جي ثواب جو ارادو ڪندو ته ان کي ان مان ڏينداسون ۽ جلدي شڪر ڪندڙن کي سهڻو بدلو ڏينداسون. علامہ اسماعيل حقي عليہ الرحمۃ لکيو آهي ته

(١) تفسير ابن ڪثير ص٦١۴ ج١

والاية وان وردت في الجهاد خاصة لكنها عامة في جميع الاعمال (١) يعني هيءَ آيت توڙي جو خصوصي طرح جهاد جي باري ۾ لٿل آهي پر اهو حڪم سڀني نيڪ عملن کي شامل آهي. المطلب ته ڪنهن به چڱي عمل ڪرڻ وقت ان جي ڪندڙ جي نيت تي مدار آهي جيڪڏهن ان نيڪ عمل مان دنيا جي وهوا، تعريف ۽ پيا مقصد گهرندو ته الله تعالىٰ ان کي اهي ڏيندو ۽ جيڪڏهن آخرت ۾ ثواب، درجات جي بلندي ۽ مٿاهون مقام طلب ڪندو ته رب العزة جل شانهٗ اهي ڏيندس. جيئن بغويءَ حضرت انس بن مالڪ رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي رسول الله صلي الله عليه وسلم جن فرمايو "مَنْ كَانَتْ نِيَّتُهٗ طَلَبَ الْاٰخِرَةِ جَعَلَ اللّٰهُ غِنَاهُ فِيْ قَلْبِهٖ وَجمع له شمله وآتته الدنيا رَاغِمَةً وَمَنْ كَانَتْ نِيَّتُهٗ طَلَبَ الدُّنْيَا جَعَلَ اللّٰهُ الْفَقْرَ بَيْنَ عَيْنَيْهِ وَشَتَّتَ عَلَيْهِ شَمْلَهٗ وَلَا يَاتِيْه مِنْهَا اِلَّا مَا كُتِبَ لَهٗ (٢) يعني جنهن جي نيڪ عمل مان نيت آخرت جي طلب آهي ته الله تعالىٰ ان جي دل کي غني بنائيندو ۽ ان جي لاءِ ٽڙيلن ڪمن کي گڏ ڪندو ۽ ان ڏانهن دنيا ايندي ۽ جنهن جي نيڪ عمل مان نيت دنيا جي طلب هوندي ته الله تعالىٰ مسڪيني سندس اکين جي اڳيان رکندو ۽ ان جي گڏ ٿيل ڪمن کي ٽوڙيندو ۽ ان وٽ ايندو ته صرف اهو جيڪو سندس حق ۾ لکيل هوندو. اڳتي الله تعالىٰ فرمايو ته جيڪي ماڻهو ان ديني دولت ملڻ تي شڪرگذار رهندا. انهن کي سهڻو بدلو ڏينداسون.

وَكَاَيِّنْ مِّنْ نَّبِيٍّ قٰتَلَ مَعَهٗ رِبِّيُّوْنَ كَثِيْرٌ فَمَا وَهَنُوْا لِمَآ

۽ ڪيترا نبي جنگ ڪئي انهن سان گڏ الله وارن گهڻن پوءِ نه همت هاريائون ان تڪليف جي ڪري جو

اَصَابَهُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَمَا ضَعُفُوْا وَمَا اسْتَكَانُوْا ۭ وَاللّٰهُ

پهتي انهن کي الله جي واٽ ۾ ۽ نه ڪمزور ٿيا ۽ نه سست ٿيا ۽ الله

يُحِبُّ الصّٰبِرِيْنَ ﴿١٤٦﴾ وَمَا كَانَ قَوْلَهُمْ اِلَّآ اَنْ قَالُوْا رَبَّنَا

محبت رکي ٿو صبر ڪندڙن سان ۽ نه هو چوڻ انهن جو مگر هيءُ جو چيائون ته اي اسان جا پالڻهار!

(١) روح البيان ص١٠٥ ج٢ (٢) مظهري ص١٤٣ ج٢

اغْفِرْلَنَا ذُنُوْبَنَا وَاِسْرَافَنَا فِيْٓ اَمْرِنَا وَثَبِّتْ اَقْدَامَنَا وَانْصُرْنَا

بخش ڪر اسان کي گناهہ اسان جا ۽ زيادتي اسان جي اسان جي ڪم ۾ ۽ ثابت رک قدم اسان جا ۽ مدد ڪر

عَلَى الْقَوْمِ الْكٰفِرِيْنَ ﴿١٣٧﴾ فَاٰتٰىهُمُ اللّٰهُ ثَوَابَ الدُّنْيَا وَحُسْنَ

اسان جي قوم ڪافرن جيءَ تي پوءِ ڏنو انهن کي الله ثواب دنيا جو ۽ سهڻو

ثَوَابِ الْاٰخِرَةِ ۭ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ﴿١٣٨﴾ ع

ثواب آخرت جو ۽ الله محبت ٿو رکي احسان ڪندڙن سان

## تفسير

"وَكَاَيِّنْ مِّنْ نَّبِيٍّ" کان وٺي "وَاللّٰهُ يُحِبُّ الصّٰبِرِيْنَ" تائين- هن آيت ۾ "ڪاين" جو لفظ خبريہ جيُ معنيٰ ۾ آهي جيڪو اصل ۾ اي هو ان تي تشبيه جو ڪاف آڻي تنوين کي نون جي شڪل ۾ لکيو ويو آهي ڪاين ۾ مشهور لغت ڪائن بہ آهي. ربيون جي ر تي زبر، زبر ۽ پيش ٽئي اچي سگهن ٿا. رِبِّيُّوْنَ جي معنيٰ ربانيون- الله وارا (١) ۽ علامہ قرطبيءَ لکيو آهي تہ والربيون الجماعات الكثيرة (٢) معنيٰ گهڻيون جماعتون. هن آيت ۾ انهن مسلمانن کي خبردار ۽ هوشيار ڪيو ويو آهي جن احد جي جنگ ۾ حضور عليہ الصلواة والسلام جن جي شهادت جو افواهہ ٻڌي سستي ۽ مايوسي ڏيکاري هئي. الله تعالىٰ انهن کي سمجهايو آهي تہ اوهان کان اڳ ۾ ڪيترن نبين عليهم الصلواة والسلام سان سندن مڃڻ وارن الله جي پيارن گهڻن گڏجي جهاد ڪيو هو. جنهن ۾ ڪين بيشمار تڪليفون ۽ سخت اذيتون پهتيون هيون پر ايذائن، مشڪلاتن ۽ تڪليفن جي باوجود بہ نہ انهن جي ارادن ۾ سستي پيدا ٿي نہ همت هاريائون ۽ نہ ڪمزوري ڏيکاريائون. ان تڪليف برداشت ڪرڻ جي ڪري اهي الله جا محبوب بڻيا ڇوتہ الله تعالىٰ صبر ڪندڙن سان محبت رکندو آهي. اوهان جو نبي مڪرم صلى الله عليہ وسلم انهن نبين کان پلو ۽ اوهان امتي جي حيثيت ۾ انهن

(١) تفسير الڪشاف ص٤٦٩ ج١ (٢) القرطبي ص٢٣١ ج٤

امتن کان پلا آهيو تہ اوهان تہ وڌيڪ چست ٿي ميدان ملهايو ۽ صبر ۽ استقلال جو ثبوت ڏيندي بزدليءَ کان بچو.

"وَمَا كَانَ قَوْلَهُمْ" کان "وَانْصُرْنَا عَلَى الْقَوْمِ الْكَافِرِيْنَ" تائين- هيءَ آيت دعائيہ جملي تي مشتمل هجڻ سان گڏ هڪ عملي هدايت نامون بہ آهي جنهن جا سيئي الفاظ معنيٰ دار، دلڪش ۽ تاثير رکندڙ آهن. شروعات ۾ انهن ڪمن کان مغفرت طلب ڪئي ٿي وڃي جيڪي جنگ ۾ هار کائڻ جو سبب بنجندا آهن. يعني گناهہ ۽ زيادتيون. جڏهن ڪابہ قوم گناهن ۽ زيادتين ۾ مبتلا هوندي آهي ۽ دشمن ان تي حملو ڪندو آهي تہ رباني تائيد انهن جي مدد نہ ڪندي آهي ۽ اها قوم الله تعالىٰ جي لطف ۽ ڪرم کان محروم هوندي آهي. گهڻا وقت دشمن سان جنگ ڪرڻ ۾ جهڙي تياري ڪرڻ گهرجي ان ۾ بہ انهن کان ڪوتاهي لشڪر ڪي فوجي ۽ جنگي تربيت ڏيڻ ۾ خامي رهجي ويندي آهي. هٿيارن ۽ بارود پوري نہ هجڻ جي ڪري جنگي جوان پريشانيءَ جو شڪار ٿيندا آهن. انهن جي ثابت قدم رهڻ جي بہ دعا گهري وئي آهي. "ثَبِّتْ اَقْدَامَنَا" تہ اي پالڻهار! اسان کي استقامت سان ثابت قدمي نصيب ڪر ۽ ڪافر قوم تي مدد ۽ فتح عطا ڪرڻ فرماءِ. تنهنجي تائيد ۽ مدد سان ئي فتح حاصل ٿيندي آهي.

"فَاٰتَاهُمُ اللّٰهُ" کان "وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ" تائين- هنن جملن ۾ٻڌايو ويو آهي تہ الله تعالىٰ انهن دعائون گهرندڙن مجاهدن کي دنيا ۾ مدد، غنيمت، عزت، فتح، ڪاميابي، دٻدٻو، رعب، وقار ۽ سڀئي يادگار عطا فرمايا ۽ آخرت ۾ عذاب جي بجاءِ جنت ۽ پنهنجي ديدار جهڙي بي مثال نعمت سان نوازيو ۽ الله انهن سان محبت ٿو رکي. الله تعالىٰ جي محبت رکڻ مان مراد سندس پاڪ ذات جو پاڻهي سان راضي رهڻ ۽ ان کي ڀلائيون نصيب ڪرڻ آهي. اهائي هر سعادت جي لاءِ شروعاتي شيءِ آهي انهن پاڻهن جڏهن "رَبَّنَا اغْفِرْ لَنَا ذُنُوْبَنَا وَاِسْرَافَنَا فِيْٓ اَمْرِنَا" سان عرض ڪري پنهنجي گنهگار هجڻ جو اعتراف ڪيو تہ رب العالمين جل شانہ "وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ" فرمائي ڪين محسنين جي لقب سان نوازيندي ٻڌايو تہ پاڻها! تون گناهہ ۽ عاجزيءَ جو اعتراف ڪندو ايندين تہ منهنجي طرفان احسان ۽ محبت جا تمغا ماڻي موٽندين.

يَآاَيُّهَا الَّذِيْنَ آمَنُوْٓا اِنْ تُطِيْعُوا الَّذِيْنَ كَفَرُوْا يَرُدُّوْكُمْ عَلٰٓى

اي ايمان وارؤ! جيڪڏهن ڳالهہ مڃيندؤ ڪافرن جي تہ موٽائيندا اوهان کي

اَعْقَابِكُمْ فَتَنْقَلِبُوْا خَاسِرِيْنَ ﴿١٤٩﴾ بَلِ اللّٰهُ مَوْلٰكُمْ ۚ وَهُوَ خَيْرُ

پوئين پيرين. پوءِ ٿي پوندؤ نقصان وارا. بلڪ الله مددگار اوهان جو آهي اهو ڀلو

النّٰصِرِيْنَ ﴿١٥٠﴾ سَنُلْقِىْ فِىْ قُلُوْبِ الَّذِيْنَ كَفَرُوا الرُّعْبَ بِمَآ

مدد ڪندڙ آهي. سگهوئي وجهنداسون ڪافرن جي دلين ۾ هيبت انهيءَ سببان جو

اَشْرَكُوْا بِاللّٰهِ مَالَمْ يُنَزِّلْ بِهٖ سُلْطٰنًا ۚ وَمَاْوٰىهُمُ النَّارُ ۖ وَبِئْسَ

شريڪ ڪيائون الله سان اها شيءِ جو نہ لاٿائين ان جو ڪو دليل ۽ جاءِ انهن جي دوزخ آهي ۽ بڇڙي آهي

مَثْوَى الظّٰلِمِيْنَ ﴿١٥١﴾

جاءِ ظالمن جي

## تفسير

سيدنا حضرت علي المرتضىٰ رضي الله تعالىٰ عنہ فرمايو آهي تہ احد جي جنگ ۾ پريشانيءَ جي حالت وقت منافقن جي ٽولي مؤمنن کي چيو تہ "ارجعوا الىٰ اخوانكم وادخلوا في دينهم" (١) پنهنجن ڪافرن ڀائرن ڏي موٽي انهن جي دين ۾ داخل ٿيو. الله تعالىٰ انهن جي ان مڪر ۽ فريب واري گفتگوءَ کان مومنن کي خبردار ڪندي هي آيت لاهي فرمايو تہ اي مؤمنو! جيڪڏهن ڪافرن جو چوڻ مڃيندؤ تہ اهي اوهان کي وري بہ ڪافر بنائيندا ۽ پوءِ اهڙي خساري ۽ نقصان ۾ ويندؤ جنهن جو مثال ملڻ مشڪل هوندو. اوهان احد جي جنگ ۾ جيڪا سستي ۽ پريشاني ڏيکاري ان جي

(١) مظهري ص١٤٥ جلد٢

هوندي بہ مومن آهيو اوهان جو الله تعالیٰ ۽ ان جي پياري رسول مقبول صلي الله عليه وسلم جن سان ايمان وارو تعلق قائم آهي ان جي ڪري مايوس نہ ٿيو.

"بَلِ اللّٰهُ مَوْلٰـكُمْ وَهُوَ خَيْرُ النّٰصِرِيْنَ" بلڪ الله اوهان جو مددگار آهي ۽ اهو مدد ڪندڙن ۾ سڀني کان ڀلو آهي. اوهان کي ان جو حڪم مڃي ان جي ئي مدد تي ڀروسو ڪرڻ کپي. حقيقت هيءَ آهي تہ جنهن جو مددگار الله آهي ان کي ٻئي ڪنهن جي مدد جي ضرورت يا محتاجي نہ آهي.

"سَنُلْقِيْ فِيْ قُلُوْبِ الَّذِيْنَ" کان "وَبِئْسَ مَثْوَى الظّٰلِمِيْنَ" تائين- آيت ۾ ٻڌايو ويو آهي تہ الله تعالیٰ ڪافرن جي دلين ۾ اوهان جو ڊپ، هيبت ۽ خوف پيدا ڪري سندن شرڪ ۽ ڪفر جي سببان ڪين ذلت ۽ رسوائيءَ ۾ رکندو ۽ ان سان گڏ انهن جي لاءِ آخرت جو عذاب جهنم جي ٻرندڙ باهہ بہ تيار آهي. سديءَ کان روايت آهي تہ ابوسفيان ۽ سندس مشرڪن ساٿين کي احد جي جنگ کان موٽندي رستي ۾ خيال آيو تہ اسان تہ ڏاڍي غلطي ڪئي جڏهن ڪيترن مسلمانن کي شهيد ۽ ڪيترن کي زخمي ڪيو هوسون تہ ڇونہ مديني منوره تي چڙهائي ڪري باقي رهيل مسلمانن کي بہ ختم ڪري پوءِ موٽجي ها. اڃان ان سوچ ويچار ۾ هيائي تہ الله تعالیٰ پنهنجي طرفان سندن دل ۾ هيبت ۽ مسلمانن جو اهڙو ڊپ پيدا ڪيو جو تڪڙا تڪڙا مڪي پاڪ ڏانهن روانا ٿيا ۽ رستي ۾ هڪ واڻهڙوءَ بدويءَ کي ڪجهہ لالچ ڏئي چيائون تہ جيڪڏهن رستي ۾ (حضرت) محمد (صلي الله عليہ وسلم جن) سان ملاقات ٿيئي تہ ڪين اسان جي وڏي طاقت ۽ گهڻي لشڪر گڏ ٿيڻ جو ٻڌائي ڇڏجانءِ (تہ ڊپ ۾ رهن ۽ اسان جي پويان نہ پون) پر الله تعالیٰ سندن سموري حالت پنهنجي حبيب عليہ الصلواة والسلام جن کي ٻڌائي ۽ حضور عليہ الصلواة والسلام جن پاڻ سان پنهنجن زخمي ٿيلن اصحابن رضي الله عنهم کي وني حمراءِ الاسد (مديني منوره کان ۸ ميل پري) تائين انهن جي پويان پيا، پر ڪافر مديني طيبہ تي حملي ڪرڻ جي بجاءِ واپسيءَ ۾ پنهنجي سلامتي سمجهي وڃي مڪي مڪرمہ ۾ پهتا. الله تعالیٰ ان جي باري ۾ هيءَ آيت نازل ڪئي. (۱) ۽ ارشاد فرمايو تہ "اهو اسان جي طرفان اوهان تي احسان آهي" ياد رکڻ گهرجي تہ ڪافر ڪيترو بہ زور ڏيکاري پر ڪمزور، مخلوق جو پوڄاري آهي ان جي ڪري سندس دل ڪمزور هوندي. جهڙو عابد اهڙو معبود. جيئن الله تعالیٰ فرمايو آهي

(۱) جامع البيان للطبري ص۸۱ جلد۳ جزءِ ۴

"ضَعُفَ الطَّالِبُ وَالْمَطْلُوْبُ" (١) يعني طالب (پوڄا ڪندڙ) ۽ مطلوب (پوڄا ڪيل) ٻئي ڪمزور آهن. هونءَ بہ اصل طاقت الله تعالىٰ جي مدد ۽ تائيد سان ملندي آهي جنهن کان مشرڪ يقيناً محروم آهن.

## دشمن جي دلين تي رعب وجهڻ حضور ﷺ جن جو خصوصي شان آهي

صحيح مسلم ۾ حضرت ابوهريره رضي الله عنہ کان روايت آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "نُصِرْتُ بِالرُّعْبِ عَلَى الْعَدُوِّ" مان دشمن تي رعب وجهڻ سان مدد ڪيو ويو آهيان. امام احمد حضرت ابوامامہ رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو تہ "نُصِرْتُ بِالرُّعْبِ مَسِيْرَةَ شَهْرٍ يُقْذَفُ فِيْ قُلُوْبِ اَعْدَائِيْ" (٢) مان رعب سان مدد ڪيو ويو آهيان جو مهيني جي پنڌ تي (پري ڪان) منهنجي دشمنن جي دلين ۾ وڌو ويندو آهي.

وَلَقَدْ صَدَقَكُمُ اللّٰهُ وَعْدَهٗٓ اِذْ تَحُسُّوْنَهُمْ بِاِذْنِهٖ ۚ حَتّٰٓى اِذَا

۽ البتہ تحقيق سچو ڪيو الله اوهان سان وعدو پنهنجو جڏهن ڪهر پيا انهن کي ان جي اذن سان تانجو جڏهن

فَشِلْتُمْ وَتَنَازَعْتُمْ فِى الْاَمْرِ وَعَصَيْتُمْ مِّنْۢ بَعْدِ مَآ اَرٰىكُمْ مَّا

سست ٿيئو ۽ جهيڙو ڪيو حڪم ۾ ۽ نافرماني ڪيو ان کان پوءِ جو ڏيکاريائين اوهان کي اها ڳالهہ جو

تُحِبُّوْنَ ۭ مِنْكُمْ مَّنْ يُّرِيْدُ الدُّنْيَا وَمِنْكُمْ مَّنْ يُّرِيْدُ الْاٰخِرَةَ ۚ ثُمَّ

پسند ٿا ڪيو اوهان مان ڪي اهي آهن جو ارادو ٿا ڪن دنيا جو ۽ اوهان مان اهي آهن جو ارادو ٿا ڪن آخرت جو تنهن کان پوءِ

صَرَفَكُمْ عَنْهُمْ لِيَبْتَلِيَكُمْ ۚ وَلَقَدْ عَفَا عَنْكُمْ ۭ وَاللّٰهُ ذُوْ فَضْلٍ

ڦيرايائين اوهان کي انهن کان تانتہ آزمائي اوهان کي ۽ البتہ تحقيق معاف ڪري ڇڏيائين اوهان کان ۽ الله ٻلائي ڪندڙ آهي

(١) سورة حج آيت ٧٣ (٢) روح المعاني ص٨٨ جلد ٢ جزءِ ٤

عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ ﴿١٥٢﴾ اِذْ تُصْعِدُوْنَ وَلَا تَلْوٗنَ عَلٰٓى اَحَدٍ

مومنن تي جڏهن چڙهندا ٿي ويٺو ۽ نه ٿي پوئتي نهاريو ڪنهن هڪ ڏي

وَّالرَّسُوْلُ يَدْعُوْكُمْ فِيْٓ اُخْرٰىكُمْ فَاَثَابَكُمْ غَمًّاۢ بِغَمٍّ لِّكَيْلَا

۽ رسول (ﷺ) سڏي پيو اوهان کي پويان اوهان جي پوءِ پهچايائين اوهان کي ڏک سان گڏ ڏک تانته نه

تَحْزَنُوْا عَلٰى مَا فَاتَكُمْ وَلَا مَآ اَصَابَكُمْ ۭ وَاللّٰهُ خَبِيْرٌۢ

ڏک ڪيو ان تي جو هٿن مان ويو اوهان کان ۽ نه ان جو جو پهتو اوهان کي ۽ الله خبر رکندڙ آهي

بِمَا تَعْمَلُوْنَ ﴿١٥٣﴾

ان جي جو ڪيو ٿا

## تفسير

امام بخاري عليه الرحمة حضرت براءِ بن عازب رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي ته احد جي جنگ ۾ جڏهن مشرڪن سان اسان جو مقابلو ٿيو ته سيدنا رسول الله صلى الله عليه وسلم جن تير هٽندڙن جوانن جي هڪ ٽولي کي حضرت عبدالله بن جبير رضي الله عنه جي ڪمان هيٺ جبل جي هڪ گهٽ تي مقرر ڪندي فرمايو ته "جنگ ۾ سوڀ ملي يا هار اوهان ڪنهن به صورت ۾ هن گهٽ کي نه ڇڏجو" جڏهن جنگ شروع ٿي ۽ مسلمانن، مجاهدن ڪافرن کي ڀڄڻ تي اهڙو مجبور ڪيو جو انهن جون عورتون حوصلا وڃائي جبل ۾ هيڏي هوڏي ڀڄڻ ۽ لڪڻ لڳيون ۽ مسلمانن جي زبان تي غنيمت غنيمت جو لفظ آيو ته گهٽ تي بيٺل جوانن جي ٽولي به اهو لفظ ٻڌي غنيمت جي مال گڏ ڪرڻ جي لاءِ سوچيو. سندن ڪمان سنڀالڻ واري امير حضرت عبدالله بن جبير رضي الله تعالىٰ عنه کين روڪيندي حضور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جو ارشاد مبارڪ ياد ڏياريو. پر اهي فتح جي خوشيءَ ۾ ان ڏانهن متوجهه نه ٿيا ۽

گهٽ ڇڏي ويا. حضرت عبدالله بن جبير رضي الله عنہ سان صرف ڏھہ ڄڻا ان گهٽ تي رهيا. هوڏانهن ڪافرن گهٽ تي ٿورا ماڻهو ڏسي گهٽ کي خالي محسوس ڪري موقعي شناسيءَ کان ڪم وٺي اهڙو سخت حملو ڪيو جو ان حملي ۾ ستر (٧٠) مسلمان شهيد ٿي ويا ۽ ٻيا منتشر ٿي هيڏي هوڏي هلڻ لڳا. ابوسفيان اها حالت ڏسي هڪ مٿاهين دڙي تي بيهي پنهنجن ساٿين کان ٽي ڀيرا سڏ ڪري پڇيو تہ "افي القوم محمد؟" (ﷺ) ڇا (اجان) محمد (ﷺ) قوم ۾ (جيئرو) آهي؟ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن صحابن رضي الله عنهم کي فرمايو تہ "لا تجيبوه" ڪوبہ جواب نہ ڏيوس. خاموشي محسوس ڪندي وري ٽي ڀيرا پڇيائين تہ "افى القوم ابن ابي قحافه؟" ڇا اجان ابن ابي قحافہ (حضرت ابوبڪر صديق جو ڪنيو) قوم ۾ جيئرو آهي؟ حضور عليہ الصلواة والسلام جن وري بہ صحابن کي فرمايو تہ "ڪوبہ جواب نہ ڏيو." وري ٽئين ڀيري پڇيائين تہ افي القوم عمر (بن الخطاب)؟ ڇا (اجان) قوم ۾ عمر بن خطاب (جيئرو) آهي؟ حضور صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن وري بہ صحابن کي منع ڪندي فرمايو تہ "ڪوبہ جواب نہ ڏيوس" ان کان پوءِ ابوسفيان پنهنجن ساٿين کي چيو تہ هي ٽئي (اسلام جو داعي، حضور صلى الله عليہ وسلم ۽ سندس وفادار مجاهد ۽ غازي حضرت ابوبڪر ۽ حضرت عمر رضي الله عنهما تہ (معاذالله) قتل ٿي ويا حضرت عمر رضي الله عنہ انهن لفظن ٻڌڻ تي بي اختيار بنجي ابوسفيان کي للڪاري فرمايو تہ "اي الله جا دشمن! ڪوڙ ٿو هڻين! الله تعالىٰ انهن ٽنهي (هستين) کي تنهنجي ذليل ۽ خوار ڪرڻ جي لاءِ سلامت رکيو آهي." ابوسفيان پنهنجي باطل معبود هبل کي ياد ڪندي ٻہ ڀيرا چيو "اعل هبل!" هبل بلند رهہ. ان لفظ کي ٻڌي حضور صلى الله عليہ وسلم جن صحابہ ڪرام کي فرمايو تہ "جواب ڏيوس" عرض ڪيائون تہ "ڇا چئونس؟" فرمايائون تہ "چئو الله اعلىٰ واجل" رب بلند ۽ وڏي شان وارو آهي. ابوسفيان چيو تہ اسان جو عزيٰ آهي ۽ اوهان جو عزيٰ ناهي. حضور صلى الله عليہ وسلم جن صحابن کي فرمايو تہ جواب ڏيوس" عرض ڪيائون تہ ڇا چئون؟ فرمايائون تہ "چئوس الله اسان جو مولىٰ آهي ۽ اوهان جو ڪوبہ مولىٰ نہ آهي." امام بخاري ۽ امام مسلم عليهما الرحمة حضرت سعد بن ابي وقاص رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي تہ مون احد جي جنگ واري ڏينهن رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي سڄي ۽ کٻي پاسي کان ٻہ مرد اڇي لباس سان ڏٺا جيڪي مون اڳ ۾ ڪڏهن بہ نہ ڏٺا

هئا ۽ اهي سندن طرفان سختيءَ سان لڙي رهيا هئا. يعني اهي جبرئيل ۽ ميڪائيل (عليهما السلام) هئا. (١)

انهيءَ واقعي جي متعلق الله تعاليٰ هنن آيتن ۾ مسلمانن کي ارشاد فرمايو آهي تہ مسلمانو! احد جي جنگ واري ڏينهن بہ الله تعاليٰ اوهان سان فتح ڏيڻ ۽ مدد ڪرڻ وارو وعدو پورو ڪيو هو جو پهريان اوهان انهن ڪافرن کي الله تعاليٰ جي اذن ۽ امر سان ڪهڻ تي هيا ۽ اهي ڀڄڻ تي پر اوهان رسول صلى الله تعاليٰ عليہ وسلم جن جي طرفان مقرر ڪيل گهٽ تي بيهڻ کي ڇڏي پاڻ ۾ اختلاف ڪيو.

"مِنْ بَعْدِ مَآ اَرٰاكُمْ مَّا تُحِبُّوْنَ" ان کان پوءِ جو جيڪا (فتح) اوهان پسند ٿي ڪئي اها بہ اوهان کي الله تعاليٰ اکين سان پئي ڏيکاري.

"مِنْكُمْ مَّنْ يُّرِيْدُ الدُّنْيَا وَمِنْكُمْ مَّنْ يُّرِيْدُ الْاٰخِرَةَ" اوهان مان ڪن دنيا جو ارادو ٿي ڪيو ۽ ڪن آخرت جو. مختلف سوچون هيون ۽ ان دنيوي سوچ رکڻ واري جي غلطيءَ جي ڪري "ثُمَّ صَرَفَكُمْ عَنْهُمْ لِيَبْتَلِيَكُمْ" اکين اڳيان آيل فتح وارو نظام اهڙو بدلجي ويو جو دشمن گهٽ خالي ڏسي حملو ڪيو ۽ اوهان آزمائش ۾ اچي تڪليف ڏٺي.

"وَلَقَدْ عَفَا عَنْكُمْ وَاللهُ ذُوْفَضْلٍ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ" هتي گهٽ کان هٽڻ وارن ۽ حضور صلى الله تعاليٰ عليہ وسلم جن جي شهادت جو ٻڌي پريشانيءَ جي عالم ۾ ميدان ڇڏڻ وارن سان خطاب آهي. الله تعاليٰ کي خبر هئي تہ اندر جا پليد، انهن پيارن تي اعتراض ڪندا تنهن جي ڪري "ولقد" تاڪيد جو لام ۽ تحقيق جي قد سان پڪي ۽ يقيني ڳالهہ بنائي انهن جي ان (اجتهادي) خطا جي معاف ڪرڻ جو اعلان فرمايائين تہ "الله تعاليٰ اوهان کي معاف ڪري ڇڏيو" اوهان نہ دنيا ۾ گنهگار ليکيا ويندؤ نہ آخرت ۾. ۽ جڏهن مالڪ معاف ڪري قرآن ڪريم ۾ پنهنجي حبيب عليہ الصلواة والسلام جي پاڪ زبان فيض ترجمان سان اعلان ڪرايو تہ ٻين کي ڪهڙو حق آهي جو انهن جي شان جي توهين ڪري پنهنجا ٻئي جهان برباد ڪن ٿا.

"اِذْ تُصْعِدُوْنَ" کان "اُخْرٰاكُمْ" تائين- هتي ٻڌايو ويو آهي تہ حبيب ڪريم صلى الله عليہ وسلم جن جي شهادت جو ٻڌي اوهان جبل تي اهڙا تہ تڪڙا چڙهندا، ڀڄندا ٿي ويئو جو ڪنهن ڏانهن توجهہ ئي ڪونہ ٿي ڪيَوَ ۽ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن اوهان جي ان حالت کي ڏسي اوهان کي سڏڻ شروع ڪيو هو تہ "اِلَيَّ عِبَادَاللهِ

(١) تفسير القرطبي ص٢٣٤ جلد ۴

اِلَيَّ عِبَادَاللّٰهِ" الله جا ٻانها مون ڏانهن اچو. الله جا ٻانها مون ڏانهن اچو.

"فَاَثَابَكُمْ غَمًّا بِغَمٍّ" پوءِ اوهان کي ڏک ۾ ڏک پهتا. هڪ ڏک ته اوهان کان غنيمت جو مال ويو ٻيو ڏک ته اوهان مان ڪيترن اوهان جي عزيزن قريبن جون جائيون قربان ٿيون. يا پهرئين غم مان مراد جنگ جي ميدان جون تڪليفون ۽ ٻئي مان مراد حضور صلي الله عليه وسلم جن جي شهادت جي خبر ٻڌڻ آهي.

"لِكَيْلَا تَحْزَنُوْا عَلٰى مَافَاتَكُمْ وَلَا مَآ اَصَابَكُمْ" لِكَيْلَا ۾ لام جاره ڪنهن سان متعلق آهي ان ۾ گهڻا قول آهن پر مختار قول اهو آهي ته ان لام جو تعلق "وَلَقَدْ عَفَا" سان آهي يعني اوهان جي معافيءَ جو اعلان ان جي ڪري ڪيو ويو آهي ته هٿن مان ويل غنيمت جي مال ۽ جنگ ۾ پهچڻ واريءَ تڪليف تي ڏک نه ڪيو. اهو معافيءَ جو اعلان اوهان جي انهن زخمن لاءِ مرهم جو ڪم ڏيندو.

"وَاللّٰهُ خَبِيْرٌۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ" ۽ الله جيڪي به ڪيو ٿا ان کان خبردار آهي. مقصد ته اوهان جو ڪوبه عمل دل جو هجي يا عضون جو الله تعالىٰ کان لڪل نه آهي.

## فائدو

"وَلَقَدْ عَفَا عَنْكُمْ" مان اهل السنت والجماعت جو اهو عقيدو ثابت ٿيو ته اصحابي پيارا رضي الله عنهم اجمعين جيتوڻيڪ معصوم ناهن پر سندن متعلق ٻين مسلمانن کي جائز ناهي جو طعن ۽ طنز ڪن. جڏهن الله تعالىٰ ۽ ان جي حبيب صلى الله تعالىٰ عليه وسلم ڪين اجتهادي غلطين ۽ لغزشن تي پڪڙڻ جي بجاءِ معاف ڪرڻ جو اعلان ڪيو ته ٻيو ڪير آهي جو ڪين نفرت جي نگاهه سان ڏسي. قرآن ڪريم ۽ حديث شريف جي علوم ۾ مهارت رکندڙ، چوٽيءَ جي محقق عالمن صحابن سڳورن رضي الله عنهم جي ادب، احترام ۽ تعظيم جو سخت تاڪيد لکيو آهي. عقائد نسفيه ۾ علامه نسفيءَ ۽ ان جي شرح ۾ محقق تفتازانيءَ عليهما الرحمة لکيو آهي ته ويکف عن ذکرالصحابة الا بخير (١) يعني ڪو مسلمان صحابن جو ذڪر سندن چڱاين بيان ڪرڻ کان سواءِ نه ڪري.

شرح المواقف جي صاحب عقيده واسطيه ۾ لکيو آهي ته ويجب تعظيم الصحابة کلهم والکف عن القدح فيهم يعني سيني اصحابن جي تعظيم ڪرڻ ۽ انهن تي طعن ڪرڻ کان بند رهڻ واجب آهي.

(١) شرح العقائد النسفية ص

علامہ ابن تيميہ عقيده واسطيہ ۾ لکيو آهي تہ سنت جماعت وارن جو عقيدو هي آهي تہ صحابہ ڪرام جا جيڪي پاڻ ۾ اختلاف، جنگيون ۽ جهيڙا ٿيا هئا انهن ڪي تاريخن ۾ پڙهي انهن تي ڪنهن بہ قسم جو نہ اعتراض ڪجي ۽ نہ انهن ڪي برو چئجي ڇو تہ تحقيق ڪرڻ سان ثابت ٿو ٿئي تہ انهن جي عيبن ۽ گناهن ڪي بيان ڪندڙ ڪيتريون تاريخي روايتون جڙتو ۽ ڪوڙيون آهن ۽ ڪيترين ڪي اڳي، پوءِ گهٽ ۽ وڌ ڪري لکيو ويو آهي. ۽ ڪي ڪي روايتون صحيح بہ آهن پر اجتهادي خطا هجڻ جي ڪري انهن ۾ بہ سندن عذر قبول آهي يلا جي اهو عذر نہ بہ قبول ڪيو وجي تہ بہ الله تعالیٰ جي قانون "اِنَّ الحَسَنٰتِ يذهبنَ السَيِّاٰتِ" (بيشڪ چڱايون براين ڪي ختم ڪري ڇڏين) موجب اصحابن جون چڱايون ۽ قربانيون ايتريون تہ آهن جو انهن جي اڳيان سندن گناهن ۽ غلطين جو ڪو وزن ناهي. الله تعالیٰ جي عفو ۽ ڪرم جا بہ جيترا اهي حقدار آهن بيا ناهن. انهن جي اعمال تي مواخذه ڪري ڪين پنهجي طعن ۽ تنقيد جو نشان بنائڻ جو بئي ڪنهن ڪي ڪو حق ناهي. (١)

ثُمَّ اَنْزَلَ عَلَيْكُمْ مِّنْۢ بَعْدِ الْغَمِّ اَمَنَةً نُّعَاسًا يَّغْشٰى طَآئِفَةً

تنهن کان پوءِ لاٿائين اوهان تي غم کان پوءِ امن اوجهراڻي ڍڪي پئي هڪ جماعت کي

مِّنْكُمْ ۙ وَطَآئِفَةٌ قَدْ اَهَمَّتْهُمْ اَنْفُسُهُمْ يَظُنُّوْنَ بِاللّٰهِ غَيْرَ الْحَقِّ

اوهان مان ۽ هڪ جماعت (اهڙي آهي) جو تحقيق فکر ۾ وڌائين انهن کي جانين انهن جي گمان پيا ڪن الله جي باري ۾ ناحق

ظَنَّ الْجَاهِلِيَّةِ ۭ يَقُوْلُوْنَ هَلْ لَّنَا مِنَ الْاَمْرِ مِنْ شَيْءٍ ۭ قُلْ اِنَّ

جاهليت وارو گمان چون پيا تہ ڇا اسان لاءِ امر مان ڪا شيءِ آهي فرماءِ تہ بيشڪ

الْاَمْرَ كُلَّهٗ لِلّٰهِ ۭ يُخْفُوْنَ فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ مَّا لَا يُبْدُوْنَ لَكَ ۭ يَقُوْلُوْنَ

امر سڀ الله جي لاءِ آهي لڪائين پيا پنهنجي اندر ۾ اهو جو نہ ٿا ظاهر ڪن تو لاءِ چون ٿا تہ

(١) معارف القرآن ص٢١٠ جلد٢

لَوْ كَانَ لَنَا مِنَ الْاَمْرِ شَیْءٌ مَّا قُتِلْنَا هٰهُنَا ؕ قُلْ لَّوْ كُنْتُمْ فِیْ

جيكڏهن هجي ها اسان جي هٿ ۾ امر مان ڪا شيءِ ته نه ڪُنا وڃون ها هتي فرماءِ ته جيڪڏهن هجو ها

بُيُوْتِكُمْ لَبَرَزَ الَّذِيْنَ كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقَتْلُ اِلٰى مَضَاجِعِهِمْ ۚ

پنهنجن گهرن ۾ ته به البت ٻاهر نڪرن ها اهي جو لکيو ويو انهن تي ڪسڻ پنهنجن ڪرڻ وارين جاين ڏانهن

وَلِيَبْتَلِيَ اللّٰهُ مَا فِیْ صُدُوْرِكُمْ وَلِيُمَحِّصَ مَا فِیْ قُلُوْبِكُمْ ؕ

۽ تانته آزمائي الله ان ڪي جو اوهان جي سينن ۾ آهي ۽ صاف ڪري جيڪو اوهان جي دلين ۾ آهي

وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ بِذَاتِ الصُّدُوْرِ ﴿١٥٤﴾

۽ الله ڄاڻندڙ آهي سينن وارين ڳالهين کي

## تفسير

ڄاڻڻ گهرجي ته احد جي جنگ ۾ انتشار ۽ پريشانيءَ جي حالت پيش اچڻ جي ڪري حضور صلی الله عليہ وسلم جن سان گڏ اچڻ وارا ورهائجي به ٽولا ٿي ويا هئا. هڪڙا اهي جن تي ان خوف، هراس، ڊپ ۽ خطري جي حالت ۾ به اهڙي بيخوفي، سڪون ۽ اطمينان جي حالت طاري ٿي جو وڃي وڃي ننڊ جون اوجهراٽيون ڪائڻ لڳا. حضرت ابوطلحہ رضي الله تعالیٰ عنہ کان روايت آهي ته غشينا نعاس ونحن في مصافنا يوم احد قال فجعل سيفي يسقط من يدي واخذه ويسقط واخذه (١) يعني احد جي جنگ واري ڏينهن اجان صفن ۾ ئي بيٺا هياسين ته اسان کي اهڙي انداز ۾ اوجهراٽيون آيون جو منهنجي هٿ مان تلوار ڪريو پوي ڪٽان ته وري ڪريو پئي.

آيت جي پهرئين حصي "ثُمَّ اَنْزَلَ عَلَيْكُمْ" کان "مِنْكُمْ" تائين الله تعالیٰ ان فضل، رحمت، مهربانيءَ ۽ ڀلائيءَ جو بيان ڪندي فرمايو آهي ته "ان حالت ۾ جو

(١) تفسير ابن ڪثير ص٣٢٦ جلد ١

مجاهدن ۾ انتشار جو عالم هو، ڪوبہ نظم ۽ ضبط برقرار نہ هو، شهيدن ڀلارن جا لاش رت ۽ مٽيءَ ۾ پريا پيا هئا جيڪي اسلام جا سپاهي زندهہ هيا . اهي بہ دشمنن جي ڏکن کانءَ آيل زخمن جي ڪري چور لڳبا پيا هئا خاص ڪري محبوب مڪرم، نور مجسم، صلي الله تعاليٰ عليہ وسلم جن جي شهيد ٿيڻ جي افواهہ تہ انهن جا رهيا سهيا هوش، حواس بہ ختم ڪري ڇڏيا هئا. عين ان وقت انهن تي اوجهراٽيءَ جو طاري ٿيڻ سندن لاءِ سجاڳيءَ جو سڏ ۽ سندن ٿڪاوٽ ۽ سستي لاهڻ جي لاءِ قدرتي ڪارروائي هئي. جنهن جي ذريعي کين تنبيهہ ڪئي وئي هئي تہ هاڻي خوف، هراس، تشويش ۽ پريشانيءَ جو وقت گذري ويو پرامن ۽ مطمئن ٿي جنگي فرض پورو ڪيو. ٿيو بہ ائين جو ان کان پوءِ فوراً اصحابي سڳورا حضور صلي الله عليہ وسلم جن جي چوڌاري گڏ ٿي ويا ۽ سندن هڪ مضبوط محاذ قائم ٿيندي ڏسي ڪافر ڀڄندي نظر آيا. ٢- ٻيا اهي هئا جن جو آيت جي هن حصي "وَطَائِفَةٌ" کان "اِنَّ الْاَمْرَ كُلَّهٗ لِلّٰهِ" تائين بيان ڪندي ٻڌايو ويو آهي تہ انهن جي حالت پريشانيءَ واري، منهن لٿل هئا. سمهڻ تہ نهيو، پر ڪنهن قسم جو ڪوبہ انهن کي قرار نہ هو ۽ الله تعاليٰ جي شان ۾ غلط گمان ۽ ناحق واريون سوچون ڪندي چوڻ لڳا تہ ڇا اسان جي بہ ڪا ڳالهہ هلي يا ڪو امر مڃيو ويو؟ امر مان مراد صلاح ۽ مشورو آهي. يعني اسان جي مشوري کي بالڪل نہ مڃيو ويو. اسان اٽندي ئي چيو هو تہ مدينہ منوره ۾ رهي دشمنن جو دفاع ڪيون. ميدان ۾ نہ هلون، پر هنن نہ مڃيو هاڻي وٺن مزو. (اهي منافقن جا اهي فرد هئا جيڪي احد جي جنگ ۾ اچي تہ ويا هئا پر اتي اچڻ کان پوءِ اهي راڳ ڪرڻ لڳا هئا) الله تعاليٰ فرمايو تہ اي حبيب! فرماءِ "امر سڀ الله جو آهي" هتي اسان جي اچڻ ۾ بہ ان جي ارادي، مشيت ۽ گهر جو دخل آهي. اهو غلط گمان نہ ڪيو تہ الله تعاليٰ اسان جي مدد نہ ڪندو ان جي اذن سان يقيناً اڳي يا پوءِ فتح، ظفر، مدد ۽ ڪاميابي اسان جا قدم چمندي.

"يُخْفُوْنَ" کان "هٰهُنَا" تائين انهن جو ذڪر ٿي رهيو آهي جن کي نہ حضور صلي الله عليہ وسلم جن جي سلامتيءَ جو فڪر هو نہ ڪاميابيءَ جي سوچ. اهي منافق ڀڪن، مخلصن، مومنن کان پري، پاڻ ۾ ويهي اهي سور روئندا هئا تہ شروعات ۾ ئي اسان جي مشوري ۽ راءِ کي رد ڪري ڇڏن، جوشيلن، نوجوانن، ناتجربيڪارن جي چوڻ تي مديني منوره کان ٻاهر نڪري ڪيتري تڪليف ڏني ائٿون جيڪڏهن اسان جي صلاح سان ڪم ٿئي ها يا اسان جي هٿ وس ڪا ڳالهہ هجي ها تہ ايتري قدر نقصان نہ ڏسجي ها.

## سوال

"مَا قُتِلْنَا هٰهُنَا" اسين هتي نہ ڪسون ها. اهي چوڻ وارا منافق تہ ڪٿا ئي ڪونہ هئا پوءِ انهن ائين ڇو ٿي چيو تہ "اسين هتي نہ ڪسون ها"

## جواب

احد جي جنگ ۾ گهڻا شهيد انصار ٿيا هئا ۽ اهي نسبي لحاظ سان هنن جا مائٽ هيا تڏهن انهن جي شهيد ٿيڻ کي هنن پنهنجو ڪسڻ ٿي سمجهيو.

## فائدو

اهي لفظ ڪهڙي منافق چيا ۽ ڪٿي چيا هئا؟ حضرت زبير رضي الله عنہ کان روايت آهي تہ جڏهن اسان تي اوجهراٽي غالب ٿي ۽ اسان مان هرهڪ ڪنڌ هيٺ ڪيو پيو هو تہ عين ان وقت معتب بن قشير منافق کان (جيڪو شايد ڪنهن مصلحت خاطر مسلمانن سان گڏ رهجي ويو هو) مون ٻڌو جيڪو پڙڪي وانگر ڳالهائي ائين چئي رهيو هو. (١)

"قُلْ لَّوْ كُنْتُمْ فِيْ بُيُوْتِكُمْ لَبَرَزَ الَّذِيْنَ كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقَتْلُ اِلٰى مَضَاجِعِهِمْ" هن جو مقصد تہ مسلمانن کي اهي طعنا هڻڻ يا حسرت ۽ افسوس جي اظهارسان ڪجهہ نہ ٿيندو. الله تعالىٰ جنهن جو موت جنهن نموني، جنهن جي هٿان ۽ جتي لکيو آهي اهو ئي ٿيندو. هيءُ تہ الله تعالىٰ جي واٽ ۾ قربان ٿي شهادت جي منزل ماڻي جنت ۾ پهتا آهن انهن جي لاءِ ائين چئو يا سوچيو ڇوٿا؟

"وَلِيَبْتَلِيَ اللّٰهُ مَافِيْ صُدُوْرِكُمْ وَلِيُمَحِّصَ مَا فِيْ قُلُوْبِكُمْ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ بِذَاتِ الصُّدُوْرِ" مطلب تہ الله تعالىٰ تہ هونئن بہ دلين جا راز ۽ سينن ۾ مخفي ٿيل معاملا ڄاڻندڙ آهي پر سندس پاڪ ۽ بي مثل ذات جو ارادو آهي تہ اوهان سيني کي هڪ آزمائش ۾ آڻي انهن رازن کي ظاهر ڪري. تانتہ ان آزمائش ۽ امتحان ذريعي سچا ۽ ڪوڙا ظاهر ٿين. سچا ڪاميابي حاصل ڪن ۽ آئينده جي لاءِ سندن دليون وسوسن، وهمن ۽ ڪمزورين کان پاڪ ۽ صاف هجن ۽ منافقن جي اندرين خباثت ۽ پليدي ڪلي سڄيءَ دنيا جي سامهون اچي.

(١) تفسير ابن ڪثير ص٦٢٧ ج١

اِنَّ الَّذِيْنَ تَوَلَّوْا مِنْكُمْ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعٰنِ ۙ اِنَّمَا اسْتَزَلَّهُمُ

بيشڪ اهي (ماڻهو) جو پٺي ڏئي هليا ويا اوهان مان جنهن ڏينهن وڙهيون ٻہ جماعتون تحقيق ٿيڙيو انهن کي

الشَّيْطٰنُ بِبَعْضِ مَا كَسَبُوْا ۚ وَلَقَدْ عَفَا اللّٰهُ عَنْهُمْ ۗ

شيطان (سندن) بعضي گناهن جي ڪري جو ڪيائون ۽ البت تحقيق معاف ڪيو الله انهن کي

اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ حَلِيْمٌ ﴿١٥٥﴾

بيشڪ الله بخشيندڙ بردبار آهي

ع ١٧

## تفسير

سمجهڻ گهرجي تہ الله تعالىٰ کي اها خبر ۽ علم هو تہ هن آيت جي مضمون جا منڪر حضور صلي الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جي وقت کان وٺي قيامت تائين دنيا ۾ ايندا رهندا يعني کي بدبخت ماڻهو احد جي جنگ واري واقعي کي بهانو بنائي صحابہ ڪرام تي طعن، طنز ۽ انهن کان تبرا ڪندا ان جي ڪري هن آيت جي شروعات ۾ "اِنَّ" وچ ۾ "اِنَّمَا" ۽ آخر ۾ "وَلَقَدْ" تاڪيدي الفاظ آندا ويا آهن. آيت جو مطلب هي آهي تہ احد جي جنگ واري ڏينهن جڏهن مسلمانن ۽ مشرڪن جي ٻن ٽولن جو مقابلو ٿيو هو تہ اوهان مسلمانن مان ڪي ڪي منهن ڦيرائي مديني شريف وڃي پهتا هئا سو اها غلطي انهن عمداً نہ ڪئي هئي پر شيطان انهن کي ترڪائي وڌو هو ۽ اهي ان لغزش جا مرتڪب ان غلطيءَ جي ڪري ٿيا هئا جيڪا انهن حضور صلى الله عليہ وسلم جن جي طرفان مقرر ڪيل احد جبل جي گهٽ ڇڏڻ جي ڪري ڪئي هئي پر مٿن ڪريم رب جو ڪرم تہ ڏسو جو قرآن ڪريم ۾ پيو پيرو ڪين معاف ڪرڻ جو اعلان ڪري رهيو آهي. بيشڪ الله بخشيندڙ، بردباري ۽ درگذر ڪرڻ وارو آهي.

# حضرت عثمان رضي الله عنہ تي اعتراض ۽ ان جو جواب

تاريخي روايتن مان معلوم ٿئي ٿو تہ حضرت عثمان رضي الله عنہ بہ احد جي جنگ مان نڪري وڃڻ وارن ۾ شامل هو؟

## جواب

١هواعتراض سيدنا عثمان رضي الله عنہ ۽ سندس محبت وارن ڪان‌ان وقت بہ ڪيو ويو هو مگر پاڻ ۽ سندس محبت وارن اعتراض ڪندڙن کي جيڪو جواب ڏنو هو سو تمام سهڻو ۽ مخالفن کي مات ڪرائيندڙ هو. ان جي متعلق علامہ محمد بن احمد انصاريءَ عليہ الرحمة پنهنجي تفسير ۾ بہ واقعا آندا آهن جيڪي هتي لکجن ٿا. پڙهي قلب کي قرار ۽ سيني کي سرور بخشيو.

## واقعو ١

فقيهہ ابوالليث سمرقنديءَ لکيو آهي تہ هڪ ڀيري حضرت عبدالرحمان بن عوف ۽ حضرت عثمان بن عفان رضي الله عنهما جي پاڻ ۾ تلخ ڪلامي ٿي. حضرت عبدالرحمان حضرت عثمان رضي الله عنهما کي چيو تہ تون مون کي گهٽ ٿو سمجهين حالانڪ مان بدر جي جنگ ۾ موجود هوس تون نہ هئين ۽ مون حديبيہ واري صلح وقت وڻ جي هيٺان رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن جي بيعت ڪئي ۽ تون ان شرف‌سان مشرف نہ ٿيو هئين ۽ تون انهن مان آهين جيڪي احد جي جنگ ۾ پٺي ڏئي مديني منوره ڏانهن هليا ويا هئا. حضرت عثمان رضي الله عنہ کيس ٽنهي اعتراضن جو جواب ڏيندي فرمايو تہ تنهنجو پهريون چوڻ تہ تون بدر جي جنگ ۾ نہ هئين ان جو سبب هي هو جو رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن مون کي پنهنجيءَ نياڻيءَ رقيہ منهنجي گهرواري (جيڪا ان وقت بيمار هئي) جي سنڀال، دوا وغيرهہ جي لاءِ مديني ۾ رهڻ جو حڪم فرمايو هو ۽ سندن حڪم جي تعميل جي ڪري، پاڻ مون کي بدر جي مجاهدن ۾ شامل فرمائيندي، هٿ آيل غنيمت مان حصو ڏياريو هيائون. (پوءِ اهو گناهہ نہ پر سندن امر جي ادائيگي هئي) تنهنجو ٻيو چوڻ تہ صلح حديبيہ واري بيعت ۾ نہ هئين سو ان وقت پاڻ مون کي مڪي مڪرمہ ڏانهن مڪي وارن جي سمجهائڻ لاءِ موڪليو هيائون (۽ ان وقت مڪي پاڪ ۾ وڃڻ سر جي سودي کان گهٽ نہ هو) ان بيعت ۾ حضور صلی الله عليہ وسلم جن منهنجي پاران پنهنجو پاڪ هٿ وڏائي فرمايو

هو تہ "هيءَ عثمان جي بيعت آهي." (ايترو کين مون تي اعتماد هو) تہ ڇا سندن هٿ مبارڪ منهنجي بيعت لاءِ منهنجي هٿن کان ڀلا ناهن؟ (يقيناً ڀلا آهن) رهيو احد جي جنگ وارو معاملو سو الله تعالىٰ ان جي معاف ڪرڻ جو قرآن ڪريم ۾ بہ پيرا اعلان ڪيو آهي ۽ مان بہ انهن مان آهيان جن کي معاف ڪيو ويو آهي. ان جواب سان حضرت عثمان حضرت عبدالرحمٰن رضي الله عنهما کي ڳالهين ۾ ماري ويو.

## واقعو ٢

امام المحدثين حضرت محمد بن اسماعيل بخاريءَ عليہ الرحمة روايت آندي آهي تہ هڪ شخص حضرت عبدالله بن عمر رضي الله عنهما کان اهي ساڳيا سوال ڪيا هئا پر حضرت عبدالله بن عمر رضي الله عنهما ساڳيا مٿيان جواب ڏيئي ان کي ماٺ ڪرائي ڇڏي. (١)

## فائدو

اصحابن سڳورن رضي الله عنهم کان جيڪي بہ غلطيون سرزد ٿيون هيون اهي عمداً، ڄاڻي واڻي نہ پر اجتهادي خطا يا غلط فهميءَ تي ٻڌل هيون جيئن قرآن پاڪ جي لفظ "اسْتَزَلَّهُمُ الشَّيْطَانُ" (ترڪايائين انهن کي) مان معلوم ٿي رهيو آهي جيئن حضرت آدم ۽ حضرت حوا جن لاءِ "فَأَزَلَّهُمَا الشَّيْطَانُ" آيو آهي تيئن صحابن لاءِ "إِنَّمَا اسْتَزَلَّهُمَا الشَّيْطَانُ" آيو آهي جيئن انهن کي بخشش جو اعلان قرآن ڪريم ڪيو آهي تيئن هنن کي بہ معاف ڪرڻ جو اعلان قرآن ڪريم ڪيو آهي. نہ حضرت آدم عليہ السلام ۽ حضرت حوا رضي الله عنها کي برو چئبو نہ صحابن سڳورن کي.

## فائدو

علامہ رازيءَ عليہ الرحمة لکيو آهي تہ حضور صلي الله عليہ وسلم جن سان گڏ بيهڻ وارا چوڏهن (١٤) ڄڻا هئا. ست مهاجر: ١- ابوبڪر، ٢- علي ٣- عبدالرحمٰن بن عوف ٤- سعد بن ابي وقاص ٥- طلحہ بن عبيدالله ٦- ابوعبيدة بن الجراح ٦- زبيربن عوام. ست انصار: ١- خباب بن منذر ٢- ابودجانہ ٣- عاصم بن ثابت ٤- حرث بن صمہ ٥- سهل بن حنيف ٦- اسيد بن حضير ٧- سعد بن معاذ رضي الله عنهم

(١) تفسير القرطبي ص٢٤٤- ٢٤٥ ج٤

ابن عيينه رضي الله عنه روايت كئي آهي ته ٽيهه (٣٠) مجاهد اهڙا هيا جن مان هرهڪ حضور صلی الله عليہ وسلم جن جي خدمت ۾ گوڏا پيجي ويهي عرض ڪندوٽي ويوته "وجهي لوجهڪ الفداءِ" منهنجي ذات تنهنجي پاڪ ذات تان قربان. "ونفسي لنفسڪ الفداءِ" ۽ منهنجي جان تنهنجي پاڪ جان تان قربان آهي. (ﷺ) (١)

## تنبيه

هتي هن روايت مطابق هنن چوڏهن نالن ۾ حضرت عمر بن خطاب رضي الله عنہ جو ذڪر نہ آهي پر ٻين روايتن مان ثابت آهي تہ حضرت عمر رضي الله عنہ بہ ميدان نہ ڇڏيو هو بلڪ جيئن اڳ ۾ لکي آيا آهيون تہ ابوسفيان جي اعلان "اعل هبل" هبل بنلد رهہ. يا سندس چوڻ تہ حضور صلی الله عليہ وسلم جن ۽ حضرت ابوبڪر ۽ حضرت عمر رضي الله عنهم شهيد ٿي ويا وغيرهہ جا ابوسفيان کي للڪاري جواب حضرت عمر رضي الله عنہ ڏنا هئا. جيڪي سندس موجود هجڻ جا صريح دليل آهن.

يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَكُوْنُوْا كَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَقَالُوْا

اي ايمان وارؤ! نہ هجو انهن وانگر جو ڪفر ڪيائون ۽ چيائون

لِاِخْوَانِهِمْ اِذَا ضَرَبُوْا فِى الْاَرْضِ اَوْ كَانُوْا غُزًّى لَّوْ كَانُوْا

پنهنجن ڀائرن کي جڏهن سفر ڪيائون زمين ۾ يا ٻٽيا مجاهد تہ جيڪڏهن هجن ها

عِنْدَنَا مَا مَاتُوْا وَمَا قُتِلُوْا ۚ لِيَجْعَلَ اللّٰهُ ذٰلِكَ حَسْرَةً فِىْ

اسان وٽ تہ نہ مرن ها ۽ نہ ڪٺا وڃن ها تانتہ ڪري الله ان کي افسوس انهن جي دلين ۾

قُلُوْبِهِمْ ؕ وَاللّٰهُ يُحْيٖ وَيُمِيْتُ ؕ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ ﴿١٥٦﴾ وَلَئِنْ

۽ الله جياري ٿو ۽ ماري ٿو ۽ الله جيڪي ڪيو ٿا ڏسندڙ آهي ۽ البت جيڪڏهن

(١) تفسير ڪبير ص٥١ جزءُ ٩

قُتِلْتُمْ فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَوْ مُتُّمْ لَمَغْفِرَةٌ مِّنَ اللّٰهِ وَرَحْمَةٌ خَيْرٌ

ڪنا ويئو الله جي واٽ ۾ يا مري ويئو تہ البت بخشش الله وٽان ۽ مهرباني ڀلي آهي

مِّمَّا يَجْمَعُوْنَ ﴿١٥٧﴾ وَلَئِنْ مُّتُّمْ اَوْ قُتِلْتُمْ لَاِلَى اللّٰهِ تُحْشَرُوْنَ ﴿١٥٨﴾

ان کان جو گڏ ڪن ٿا ۽ البت جيڪڏهن مري ويئو يا ڪنا ويئو تہ البتہ الله ڏانهن اٿاريا ويندئو.

## تفسير

"يٰاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا" الاية- هن آيت ۾ ايمان وارن کي سڌي سمجهايو ويو آهي تہ اوهان انهن ڪافرن، منافقن وانگر واهيات خيالات کي دل ۾ اصل نہ آڻيو تہ اوهان جا نسبي يا ديني يا نسبتي ڀائر جيڪڏهن سفر تي يا مجاهد ٿي جهاد تي نہ نڪرن ها ۽ نہ لڙن ها تہ نہ مرن ها. جاڻڻ گهرجي تہ منافق ظاهر ۾ تہ پاڻ کي مسلمان چورائي، مسلمانن سان ڀائپيءَ جي دعويٰ ڪندا هئا پر پنهنجيءَ بزدليءَ ۽ نامرديءَ کي ڍاڪڻ جو نالو ڏيئي ۽ مسلمانن جي جهاد جي جذبي ۽ قربانيءَ جي شوق کي چريائپ سڏيندا هئا. جڏهن ڪو مسلمان جهاد جي ميدان ۾ شهادت حاصل ڪندو هو تہ روئڻ وارو نمونو ڪري خيرخواهيءَ جي انداز ۾ چوندا هئا تہ افسوس جيڪڏهن اسان جا اهي ڀائر اسان وٽ گهرن ۾ هجن ها تہ نہ مرن ها، نہ ڪسن ها ۽ نہ سندن ٻچا يتيم ۽ گهرواريون بيوه بڻجن ها. انهن جي انهن ڳالهين تي ڌيان ڏيڻ کان منع ڪندي حڪم ڪيو ويو آهي تہ جياري ۽ ماري الله ٿو. پر اهي غلط خيال سندن دلين ۾ ان جي ڪري ٿو آڻي تہ اهي سدائين ان حسرت ۾ رهن پر جنهن جو پڪو عقيدو ۽ ايمان اهو آهي تہ الله مارڻ ۽ جيارڻ وارو آهي. موت ۽ حياتي سندس تقدير ۽ قضا سان آهي ان لاءِ اها ڳالهہ ڪڏهن بہ حسرت ۽ افسوس جو سبب نہ بڻجندي. ڪڏهن ڪڏهن هزارن دشمنن جي مقابلي ۾ وڙهڻ وارو غازي سلامتيءَ سان موٽي ايندو آهي تہ ڪڏهن گهر ۾ رهيل صحت ۽ عافيت وارو اوچتو وفات ڪري ويندو آهي. تڏهن تہ حضرت خالد بن وليد رضي الله عنہ وفات جي وقت فرمايو هو تہ منهنجي ساري جسم تي هڪ گرانٽ جيتري جاءِ بہ تيرن ۽ تلوارن سان ڪيل زخمن جي نشانن کان خالي ناهي پر حياتي

هئي تہ ڪجهہ نہ ٿيو پر جڏهن پوري ٿي تہ اڄ گهر ۾ ستي دنيا تان رحلت ڪري رهيو آهيان. "فلا نامت اعين الجبناءِ" (١) پوءِ شال سستن جون اکيون ننڊ نہ ڪن (ڪليل رهن.)

"وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ" ۽ جيڪي ڪيو ٿا الله ان کي ڏسندڙ آهي تہ منافق ۽ ڪافر ڪهڙي رستي تي وڃي رهيا آهن ۽ مسلمان انهن سان مشابهت ڪرڻ ۽ انهن جي پيرويءَ ۾ ڪيستائين پهتا آهن.

"وَلَئِنْ قُتِلْتُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَوْ مُتُّمْ لَمَغْفِرَةٌ مِّنَ اللّٰهِ وَرَحْمَةٌ خَيْرٌ مِّمَّا يَجْمَعُوْنَ" مطلب تہ اي مسلمانو! جيڪڏهن اوهان جهاد ۾ شهيد ڪيا ويئو يا ٻيا ديني ڪم، مثلاً عبادت، ديني علم پڙهائڻ، حج ڪرڻ يا ڪنهن مسڪين ۽ مظلوم جي مدد ڪرڻ لاءِ نڪتؤ ۽ رستي ۾ مري پيؤ تہ ان جو بدلو اوهان جي لاءِ الله تعالیٰ وٽان رحمت ۽ مغفرت آهي ۽ اهي ٻئي نعمتون ظاهري دنيوي نفعن ۽ حياتيءَ جي خوشين کان ڀليون آهن جن جي حاصل ڪرڻ لاءِ ڪافر ڪوشش ۾ آهن.

"وَلَئِنْ مُتُّمْ اَوْ قُتِلْتُمْ لَاِلَى اللّٰهِ تُحْشَرُوْنَ" مقصد تہ جيڪڏهن جهاد ۾ نہ ٿا نڪرو پر نيت تہ هي جهان ڇڏيندؤ پوءِ گهر ويٺي مري ويئو يا ڪنهن جي هٿان مارجي پيئو تہ بہ ان الله پاڪ ڏانهن اٿاريا ويندئو جيڪو عظيم الشان، وسيع رحمت وارو، وڏا احسان ڪندڙ ۽ سچو معبود آهي. ڄاڻڻ گهرجي تہ هنن آيتن جي ترتيب عجيب آهي. پهريان آيو "لَمَغْفِرَةٌ مِّنَ اللّٰهِ" اهو برائين کان درگذر ڪرڻ آهي ۽ اهو ان ٻانهي لاءِ آهي جيڪو مالڪ مٿي جي عبادت سندس عذاب جي خوف کان ٿو ڪري. ٻئي نمبر تي آيو "وَرَحْمَةٌ" ۽ اهو ثواب عطا ڪرڻ سان گڏ فضل ڪرڻ آهي. اها عنايت ان ٻانهي سان وابستہ آهي جيڪو ثواب حاصل ڪرڻ جي لاءِ عبادت ڪندو آهي. ٽئين نمبر تي ۽ آخر ۾ آيو "لَاِلَى اللّٰهِ تُحْشَرُوْنَ" اهو انهن لاءِ آهي جيڪي پاڻ کي الله جو خالص ٻانهو سمجهي سندس الوهيت ۽ ربوبيت جي اڳيان جهڪي سندس عبادت ٿا ڪن ۽ اهو مقامات ۾ اعلیٰ مقام آهي.

## ۾ عجيب ڳالهيون

(١)

هڪ ڀيري حضرت عيسیٰ عليہ الصلوٰة والسلام ماڻهن جي اهڙيءَ

(١) تفسير عثماني ص٩١ مطبوعہ سعودي عرب

جماعت کان وچي لنگھيو جن جا بدن ضعيف ۽ منهن زرد (ڦکا) ٿي ويا هئا. منجهن الله تعالىٰ جي عبادت جا آثار نمايان نظر اچي رهيا هئا. پڇيائين تہ هن عبادت سان ڇاٽا طلب ڪيو؟ عرض ڪيائون تہ الله تعالىٰ جي عذاب کان ڊڄون ٿا. فرمايائين تہ "تي سگھي ٿو تہ عبادت بہ ان جي عذاب کان نہ بچائيوَ." (اخلاص نہ هجڻ جي ڪري) تنهن کان پوءِ ٻيءَ جماعت وٽان لنگھيو پڇيائين تہ اوهان عبادت ڇوٽا ڪيو؟ عرض ڪيائون تہ جنت ۽ رحمت جي طلب لاءِ. فرمايائين تہ "تي سگھي ٿو تہ (اخلاص نہ هجڻ جي ڪري) اوهان کي جنت ۽ رحمت نہ عطا ڪري." وري ٽينءَ جماعت کان لنگھيو ۽ انهن کان ساڳيو سوال ڪيائين. عرض ڪيائون تہ "اسين الله جي عبادت ان جي ڪري ٿا ڪيون جو اهو اسان جو الله آهي ۽ اسين ان جا ٻانها آهيون" حضرت عيسىٰ عليہ الصلواة والسلام فرمايو تہ سچا ٻانها، حقيقي عبادت ڪندڙ اوهان آهيو.

(٢)

هڪ ديندار عورت مردن جي هڪ جماعت کان سوال ڪيو تہ اوهان جي نظر ۾ سخاوت ڇا آهي؟ چيائون تہ: الله تعالىٰ جي واٽ ۾ مال خرچ ڪرڻ. عورت فرمايو تہ اها تہ دنيادارن ۽ عوام جي سخاوت آهي الله تعالىٰ جي خاص ٻانهن جي سخاوت ڪهڙي آهي؟ چيائون تہ مالڪ مٺي جي عبادت ۾ محنت ڪرڻ. پڇيائين تہ ان مان ثواب جي اميد رکو ٿا؟ چيائون تہ هائو. فرمايائين تہ هڪ ڏئي ڏهہ ٿا وٺو. اها سخاوت ڪٿي آهي؟ پڇيائون تہ پلا تون ٻڌاءِ تہ سخاوت ڇا آهي؟ فرمايائين تہ الله تعالىٰ جي رضا لاءِ چڱا عمل ڪرڻ، نہ جنت جي لالچ نہ جهنم جو ڊپ نہ ثواب جي طمع نہ عذاب جو خوف ۽ اهو مقام تجريد، تفريد ۽ وجود جي حقيقت کي پهچڻ کان سواءِ ممڪن ناهي. پوءِ مؤمن تي لازم آهي تہ دنيا کان منهن موڙي الله تعالىٰ ڏانهن اهڙو متوجهہ رهي جو سندس اڳيان حجاب هٽي وڃن ۽ واصل الى الله بنجي وڃي ۽ انسان جڏهن جهاد ڏانهن متوجهہ ٿيندو تہ سندس دل دنيا کان حقيقي منهن موڙي آخرت ڏي متوجهہ ٿيندي ۽ ان حال ۾ مرڻ سان دشمن کان آزاد ٿي محبوب سان ميلو ڪندو ۽ جيڪڏهن موت جي ڊپ کان گھر ۾ ويهي حريص بنجي دنيا گڏ ڪندو تہ حقيقي معشوق کان محروم ۽ پريشانيءَ جي حالت ۾ رهندو. (١) هڪ سنڌي شاعر جو ٻول

(١) تنوير الاذهان ص٢٨٧ جلد١

ڏاڍو ڀاڃهارو آهي.

نہ هيبت جهنم سندي نار جي
نہ جنت جي خواهش نہ انهار جي
تمنا نہ دولت سندي ڪا اٿم
نہ شاهيءَ جي خواهش نہ دربار جي
گهران ڪين دارين مان ڪي ٻيو
رڳي آرزو آهي ديدار جي

فَبِمَا رَحْمَةٍ مِّنَ اللّٰهِ لِنْتَ لَهُمْ ۚ وَلَوْ كُنْتَ فَظًّا غَلِيْظَ الْقَلْبِ

پوءِ (صرف) الله جي رحمت جي ڪري نرم ٿئين انهن لاءِ ۽ جيڪڏهن هجين ها تيز طبع سخت دل

لَانْفَضُّوْا مِنْ حَوْلِكَ ۠ فَاعْفُ عَنْهُمْ وَاسْتَغْفِرْ لَهُمْ وَشَاوِرْهُمْ

تہ ٽڙي پکڙي وڃن ها ڇوڌاري تو ڪان. پوءِ معاف ڪر انهن کي ۽ بخشش گهر انهن جي لاءِ ۽ مشورو ڪندو ڪر انهن سان

فِي الْاَمْرِ ۚ فَاِذَا عَزَمْتَ فَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَوَكِّلِيْنَ ﴿١٥٩﴾

ڪم ڪار ۾ پوءِ جڏهن پڪو ارادو ڪيئي تہ پوءِ توڪل ڪر الله تي يقيناً الله پسند ٿو ڪري توڪل ڪندڙن کي

## تفسير

"فَبِمَا رَحْمَةٍ مِّنَ اللّٰهِ لِنْتَ لَهُمْ وَلَوْ كُنْتَ فَظًّا غَلِيْظَ الْقَلْبِ لَانْفَضُّوْا مِنْ حَوْلِكَ" مفسرن ڀلارن لکيو آهي تہ احد جي جنگ مان نڪري وڃڻ وارا مسلمان جن جي ڪري سوڀ جي بجاءِ هار ملي جڏهن محبوب آقا عليہ الصلواة والسلام جن جي خدمت ۾ پيش پيا تہ پاڻ انهن تي ملامت، تنبيهہ ۽ مٿن ڪاوڙ ڪرڻ جي بجاءِ انهن سان لطف، محبت ۽ سهڻي اخلاق سان پيش آيا ۽ انهن جي دلجوئي فرمايائون ڇو تہ صحابہ ڪرام حضور عليہ الصلواة والسلام جن جا عاشق ۽ ڪين پنهنجيءَ جان ۽ مال کان وڌيڪ عزيز سمجهڻ وارا هئا پر انهن کان هڪ لغزش ٿي جو وئي تہ الله تعاليٰ انهن کي معاف ڪرڻ

۽ سندن لاءِ مغفرت جي طلب ڪرڻ جو پنهنجي حبيب عليہ الصلواة والسلام کي هڪ عجيب انداز سان حڪم ڪندي فرمايو تہ "فَبِمَا رَحْمَةٍ" (پوءِ صرف الله جي رحمت جي ڪري) يعني اوهان ۾ ايترو وسيع حوصلو، عام مهرباني، بي پايان عفو، بي حساب بردباري ۽ سيئي ڪمال واريون صفتون الله جي رحمت آهي ۽ اها صرف صحابن لاءِ نہ پر خود اوهان جي ذات عالي صفات صلى الله عليہ وسلم تي بہ آهي جو الله تعالىٰ اوهان کي انهن صفتن سان موصوف بنايو آهي ۽ جيڪڏهن اوهان تيز طبع، بداخلاق، پٿردل هجو ها تہ اهي قصور ڪرڻ وارا، شرم کان يا سزا جي خوف کان پڇي پري هليا وڃن ها. نرم طبيعت، خوش اخلاقي، عفو، لطف ۽ مهربانيءَ جي سهڻين صفتن جي نہ هجڻ جي ڪري خلق جي اصلاح جو ڪم جيڪو اوهان جي سپرد ڪيو ويو آهي پايہ تڪميل کي نہ پهچي ها.

## فائدو

ان مٿي لکيل بيان مان هڪ هي فائدو بہ حاصل ٿيو تہ جيڪو ماڻهو ارشاد، هدايت، الله تعالىٰ ڏانهن دعوت ۽ خلق جي اصلاح جي ڪم ڪرڻ جو ارادو رکي ان لاءِ ضروري آهي تہ پاڻ ۾ هي صفتون پيدا ڪري الله تعالىٰ هن آيت ۾ پنهنجي محبوب عليہ السلام کي ٻڌايو تہ جيڪڏهن اوهان تيز مزاج، بدخلق ۽ پٿر دل هجو ها تہ ماڻهو اوهان کان ڇوڙاري پري ڀڄي وڃن ها. جنهن مان ثابت ٿيو تہ مرشد ۽ مبلغ جي لاءِ تيز طبيعت ۽ سخت ڪلامي زهر ۽ سندس ڪم کي ناڪام بنائڻ واري شيءِ آهي. علامہ آلوسيءَ بغداديءَ عليہ الرحمة لکيو آهي تہ هن آيت جي مفهوم سان ٻہ ڳالهيون ثابت ٿيون. ١- هڪ حضور عليہ الصلواة والسلام جن جي شجاعت ۽ بهادري، ڇوتہ ڪاوڙ کائڻ وڏي بهادري آهي. ٢- ٻيو سندن نرمي ۽ رحمدلي جيڪا ڪاملن کي اعلىٰ ڪمال تي پهچائيندي آهي. (١)

ڄاڻڻ گهرجي تہ حضور صلى الله عليہ وسلم جن صرف ان وقت وارن تي نرم ۽ مهربان نہ هئا پر قيامت تائين اچڻ وارن مسلمانن تي خصوصاً ۽ سيني جهانن تي عموماً مشفق ۽ مهربان آهن جيئن قرآن ڪريم ۾ هڪ جاءِ تي ارشاد آهي: "وَمَا اَرْسَلْنَاکَ اِلاَّ رَحْمَةً لِّلْعَالَمِيْنَ"(٢) اسان اوهان کي سيني جهانن لاءِ رحمت ڪري موڪليو

(١) روح المعاني ص١٠٦ جلد ٢ جزء٤ (٢) سورة الانبياء آيت ١٠٧

آهي. پاڻ مٺي ۽ نرم مزاج، سٺي طبيعت، ۽ عظيم اخلاق جا صاحب آهن.

"فَاعْفُ عَنْهُمْ وَاسْتَغْفِرْ لَهُمْ" الله تعالىٰ هنن لفظن ۾ نهايت عجيب ۽ غريب انداز سان صحابه ڪرام جي لاءِ سفارش ڪندي فرمايو ته: اي حبيب! (صلى الله تعالىٰ عليڪ وسلم) تون پنهنجا حقوق ته معاف ڪرين پر جيڪي منهنجا حقوق ضايع ڪيا اٿن انهن لاءِ به مون کان سندن مغفرت طلب ڪري بخشائي ڇڏين. تانت اهي اوهان جي نوراني منهن مبارڪ ۾ خوشي محسوس ڪري، مايوسيءَ کان نڪري يقين ۽ محبت جي ميدان ۾ مرڪن. سبحان الله! ڇا اصحابن سڳورن جو شان آ ۽ ڪيڏو نه سندن بلند مقام آ.

## فائدو

هن آيت مان بالڪل واضح ٿيو ته الله تعالىٰ حضور صلي الله عليه وسلم جن جي دعا کي اسان جي گناهن بخشڻ، ڏک ۽ درد دور ڪرڻ جي لاءِ وسيلو بنايو آهي. حضور عليه الصلواة والسلام جن کي وسيلو سمجهڻ ۽ سندن حضور ۾ شفاعت جي لاءِ التجا ڪرڻ شرڪ نه پر عين اسلام ۽ قرآن پاڪ جي تعليم جي مطابق آهي.

"وَشَاوِرْهُمْ فِي الْأَمْرِ" ۽ انهن سان ڪم ڪار ۾ مشورو ڪندو ڪر. اهو ان لاءِ ته انهن جون دليون خوش ٿينديون ۽ جنهن ڪم جي پاڻ به صلاح ڏيندا اهو وڌيڪ دل لائي ڪندا. علامه قرطبيءَ لکيو آهي ته هي ٽئي امر نهايت ئي بليغ ترتيب سان آيل آهن. پهريان محبوب عليه الصلواة والسلام جن کي حڪم هو ته اوهان معاف ڪيونِ جڏهن پاڻ معاف ڪيائونِ ته رب فرمايو ته مون کان به معافي وٺي ڏيونِ. جڏهن مالڪ ۽ محبوب عليه الصلواة والسلام ٻنهي کان معافي ملي وين ته هاڻي اهي صلاح ۽ مشوري وٺڻ جا لائق ۽ اهل بنجي ويا. حڪم ٿيو ته هاڻي صلاح مشورو به وٺونِ. مفسر موصوف لکيو آهي ته اهو مشوري جو حڪم جنگين جي طريقه ڪار، دشمن جي مقابلي ڪرڻ جي باري ۾ سندن دلين کي خوش ڪرڻ ۽ سندن قدرن کي بلند ڪرڻ جي لاءِ هو نه ته جنهن ذات عالي صفات صلى الله عليه وسلم جن وٽ الله تعالىٰ جو وحي ايندڙ هو ان کي ڪنهن سان مشوري ڪرڻ جي ڪا ضرورت ڪانه هئي. (١)

(١) تفسير القرطبي ص٢٤٩- ٢٥٠ جلد٤

# فائدو

## حضور ﷺ جن جي نالي واري کي مشوري ۾ ويهاريو

حضرت علي بن ابي طالب رضي الله عنہ کان روايت آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو: "مَا مِنْ قَوْمٍ كَانَتْ لَهُمْ مَشُورَةٌ فَحَضَرَ مَعَهُمْ مَنِ اسْمُهُ اَحْمَدُ اَوْ مُحَمَّدٌ فَاَدْخَلُوْهُ فِىْ مَشُورَتِهِمْ اِلَّا خُيِّرَ لَهُمْ" (۱) يعني کنهن بہ قوم جو کو پاڻ ۾ مشورو رکيل آهي پوءِ انهن سان گڏ اهو بہ آيو جنهن جو نالو احمد يا محمد آهي ۽ ان کي ان مشوري ۾ شامل کيائون تہ انهن جي لاءِ ان ۾ ڀلائي آهي.

حضور صلى الله عليہ وسلم جن پنهنجن پيارن اصحابن سان صلاح مشورو ڪندا هئا پاڻ بدر جي جنگ وقت جڏهن صحابن سان صلاح ڪئي هيائون تہ انهن عرض ڪيو هو تہ يارسول الله! هيءَ جنگ تہ زمين تي ٿيندي پر اوهان جي سمنڊ ۾ لهڻ جو حڪم فرمايو تہ بہ اسين حاضر آهيون. اسين اوهان کي ائين نہ چونداسين جيئن حضرت موسیٰ عليہ الصلواة والسلام کي سندس امتي سڏائيندڙن چيو هو تہ "اِذْهَبْ اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَا" تون ۽ تنهنجو رب وڃي وڙهو. اسان مسلمانن جو اوهان کي عرض آهي تہ اسين اوهان سان هر حال ۾ گڏ ۽ اوهان جي سڄي، کٻي، اڳيان، پويان کسڻ ۽ قربان ٿيڻ جي لاءِ تيار آهيون. ام المؤمنين سيده عائشہ رضي الله عنها تي بهتان لڳڻ وقت جيتوڻيک ڪين خبر هئي تہ سائڻ پاک آهي جيئن پاڻ فرمائيندا رهيا تہ "وَاَيْمُ اللهِ مَا عَلِمْتُ عَلٰى اَهْلِىْ مِنْ سُوْءٍ وَاللهِ مَا عَلِمْتُ عَلٰى اَهْلِىْ اِلَّا خَيْرًا" (۲) الله جو قسم آهي تہ مون پنهنجي اهل مان ڪا برائي نہ ڏٺي آهي ۽ الله جو قسم آهي تہ مون انهن ۾ صرف ڀلائي ڏٺي آهي. پر تنهن هوندي بہ صحابن سڀورن حضرت عمر، حضرت عثمان، حضرت علي، حضرت اسامہ وغيرهم سان صلاح ۽ مشورو ڪندا رهيا.

## رسول الله ﷺ جن جي مخصوص مشيرن ۽ صلاحڪارن جو ذڪر

### حديث ۱

قرآن ڪريم جي لفظ "وَشَاوِرْهُمْ فِى الْاَمْرِ" جي تفسير ۾ محدث حاڪم

(۱) تفسير قرطبي ص۲۵۰ ج۴ (۲) تفسير ابن ڪثير ص۶۳۰ جلد ۱

پنهنجي صحيح سند سان حضرت عبدالله بن عباس رضي الله عنها کان روايت آندي آهي تہ الله تعالىٰ جي پاڪ ذات پنهنجي حبيب ڪريم ﷺ جن سان مشوري ڪرڻ جو حڪم فرمايو هو اهي ابوبڪر ۽ عمر (رضي الله عنهما) آهن. ان ئي حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان ٻيءَ روايت ۾ آهي تہ اهي لفظ ابوبڪر ۽ عمر جي باري ۾ لٿا هئا جيڪي ٻئي رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن جا مددگار، وزير ۽ مسلمانن جا پيئر هئا (ڇوتہ حضور صلى الله عليہ وسلم جن جي ٻن گهروارين، مؤمنن جي مائرن جا پيئر هئا) (۱)

## حديث ۲

امام احمد روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن حضرت ابوبڪر ۽ حضرت عمر کي مخاطب ٿي فرمايو تہ "لَوِ اجْتَمَعْتُمَا فِيْ مَشُوْرَةٍ مَا خَالَفْتُكُمَا "(۲) جيڪڏهن اوهان ٻئي گڏجي ڪوبہ مشورو ڏيندؤ تہ مان (ان ۾) اوهان جي مخالفت نہ ڪندس. (بلڪ مان بہ اوهان سان گڏ آهيان ڇوتہ اوهان ٻنهي جو گڏيل مشورو ۽ راءِ صحيح هوندا آهن)

# صلاح ۽ مشورو ڪرڻ سهڻو ڪم آهي

صلاح ۽ مشوري وٺڻ ۾ ڀلائي ۽ برڪت آهي پر جنهن کان مشورو ورتو وڃي اهو نيڪ نيتيءَ، خلوص، سچائيءَ ۽ ايمانداريءَ سان صلاح ڏي. اها ان جي شرعي ذميداري آهي. دل ۾ هڪ، زبان تي ٻي نہ آڻي.

# صلاح مشورو ڪرڻ لاءِ نبوي ارشادات

## حديث ۱

ابن ماجہ حضرت ابوهريره رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ نبي ڪريم صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "اَلْمُسْتَشَارُ مُؤْتَمَنٌ" (۳) جنهن کان صلاح ورتي وڃي اهو امانت رکيل آهي. سوچي، سمجهي، غور ڪري دل سان سهڻي صلاح ڏي.

(۱)ابن ڪثير ص ٦٣٠ جلد۱ (۲) روح المعاني ص۱۰۷ جلد ۲ جزء ۴
(۳) ابن ڪثير ص٦٣٠ جلد۱

## حديث ٢

بغويءَ پنهنجيءَ سند سان مومنن جي ماءُ سيده عائشہ رضي الله عنها کان روايت آندي آهي سائڻ فرمايو تہ "مَا رَأَيْتُ رَجُلًا اَكْثَرَ اِسْتِشَارَةً لِلرِّجَالِ مِنْ رَسُوْلِ اللهِ صَلَّي اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ" (١) مون کنهن بہ مرد کي مردن جي لاءِ مشوره وٺڻ ۾ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن کان وڌيک نہ ڏٺو.

## حديث٣

حضرت جابر رضي الله عنہ کان روايت آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو "اِذَا اسْتَشَارَ اَحَدُكُمْ اَخَاهُ فَلْيُشِرْ عَلَيْهِ" (٢) جڏهن اوهان مان کو پنهنجي (مسلمان) ڀاءُ کان صلاح وٺي تہ اهو ان کي (سهڻي) صلاح ڏي.

ڪمال علم ۽ عقل جي هوندي حضور عليہ الصلواة والسلام جن کي مشوري وٺڻ ۽ صلاح ڪرڻ ۾ ڪهڙي حڪمت هئي؟ حضرت امام حسن بصري عليہ الرحمة جو فرمان آهي تہ الله تعالىٰ کي خبر هئي تہ نبي اڪرم صلي الله عليہ وسلم جن کنهن جي بہ مشوري جا محتاج نہ آهن پر اهو حڪم ڪين ان جي ڪري فرمايو هيائين تہ سندن امتي سندن سنت تي عمل ڪن. هڪ قول هيءُ آهي تہ مشوري ڪرڻ سان انهن جو عقل، علم ۽ سمجهہ ڏسڻي هئي تہ ڪيتري آهي. ڪن جو چوڻ هو تہ عرب جا سردار پنهنجي مشوري کان سواءِ هر ڪم کي سٺو نہ سمجهندا هئا انهن جي دلين کي خوش ڪري ڪائڻ ديني اهم ڪم وٺڻ لاءِ ساڻن مشوري ڪرڻ جو حڪم لٿو هو. حضرت علي رضي الله عنہ جو فرمان آهي تہ صلاح وٺڻ عين هدايت آهي جنهن پنهنجيءَ راءِ تي مغرور ٿي کنهن کان صلاح نہ ورتي اهو خوف ۽ خطري ۾ آهي. حضرت آدم عليہ السلام وفات وقت جيڪا پنهنجي پٽ حضرت شيث عليہ السلام کي وصيت ڪئي هئي اها هيءَ هئي تہ جيڪو بہ ڪم ڪيو مشوري سان ڪجو چوتہ جيڪڏهن ڪڻڪ جي داڻي کائڻ وقت مان بہ ملائڪن سان مشورو ڪيان ها تہ مالڪ جي ميار هيٺان نہ اچان ها. (٣) دانائن، متصوفن بزرگن جو چوڻ آهي تہ صلاح مشوري ڪرڻ مان وڏو فائدو هي آهي تہ صلاح وٺندڙ پين کي پاڻ کان وڌيک سمجهدار ۽ داناءُ

(١) تفسير مظهري ص٥٣ جلد ٢ (٢) تفسير ابن ڪثير ص٦٣٠ جلد ١
(٣) تفسير خازن ص٢٩٦ جلد ١

سمجهي، پاڻ کي حقير، گهٽ محسوس ڪندي وڏيڪ سوچ ۽ فڪر پيدا ڪرڻ جي ڪوشش ڪندو ۽ اها ڳالهہ ئي ٻانهي کي الله تعالیٰ جي دربار ۾ محبوب ۽ پيارو بنائيندي آهي.

"فَإِذَا عَزَمْتَ فَتَوَكَّلْ عَلَى اللهِ إِنَّ اللهَ يُحِبُّ الْمُتَوَكِّلِيْنَ" عَزَمْتَ عزم ڪان ورتل آهي. عزم جي لغوي معنیٰ آهی عقد القلب علی الشيء (١) ڪنهن شيء لاءِ دل جو پڪو ارادو رکڻ. سيدنا علي رضي الله عنہ ڪان روايت آهي تہ رَسُوْلُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ جن ڪان پڇيو ويو تہ عزم ڇا آهي؟ پاڻ فرمايائون تہ "مشاورة اهل الراي ثم اتباعهم" (٢) سمجهہ وارن سان صلاح ڪري انهن جي ڳالهہ تي هلڻ. مقصد تہ صلاح مشوري ڪرڻ سان گڏ الله تعالیٰ تي ڀروسو ۽ توڪل ڪر ڇوتہ هر ڪم جي اصل ۽ حقيقت ڄاڻڻ وارو الله تعالیٰ آهي ان کي ئي علم آهي تہ هن ڪم ۾ ڀلائي آهي يا نہ؟ ان تي ڀروسو ڪرڻ وارن جا ٻيڙا ئي پار آهن. سيد ڀٽائيءَ عليہ الرحمۃ فرمايو آهي تہ:

سڀئي سبحان جي ڪر حوالي ڪم.

# فائدو

هن آيت ۾ پهريان مشوري ڪرڻ ان ڪان پوءِ توڪل جو ذڪر ڪري ثابت ڪيو ويو آهي تہ دنيوي ذريعا ۽ اسباب اختيار ڪرڻ توڪل جي خلاف ناهن انهن اسبابن جي اختيار ڪرڻ جي باوجود اصل نگاهہ ۽ ڀروسو الله تعالیٰ تي رکڻو آهي ڇوتہ اصل ڪارساز اهوئي آهي.

إِنْ يَّنْصُرْكُمُ اللهُ فَلَا غَالِبَ لَكُمْ وَإِنْ يَّخْذُلْكُمْ فَمَنْ ذَا الَّذِىْ

جيڪڏهن مدد ڪندو اوهان جي الله تہ پوءِ ناهي ڪو بہ غلبو ڪندڙ اوهان تي ۽ جيڪڏهن خوار ڪندو اوهان کي تہ پوءِ ڪير

يَنْصُرُكُمْ مِّنْ بَعْدِهٖ وَعَلَى اللهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ ﴿١٦٠﴾ وَمَا

آهي اهو جو مدد ڪندو اوهان جي ان ڪان پوءِ ۽ الله تي پوءِ ڀلي ڀروسو ڪن ايمان وارا ۽ ناهي

(١) زادالمسير ص٤٨٩ ج١ (٢) تفسير ابن ڪثير ص٦٣٠ جلد ١

كَانَ لِنَبِيٍّ اَنْ يَّغُلَّ وَمَنْ يَّغْلُلْ يَاْتِ بِمَا غَلَّ

(شان) کنهن بہ نبي جو (هيءَ ڳالهہ) جو خيانت کري ۽ جيڪو خيانت کندو تہ آڻيندو اها شيءِ جيڪي خيانت ڪئي هوندائين

يَوْمَ الْقِيَامَةِ ثُمَّ تُوَفّٰى كُلُّ نَفْسٍ مَّا كَسَبَتْ وَهُمْ

قيامت جي ڏينهن ان کان پوءِ پورو بدلو ڏنو ويندو هر هڪ نفس جيڪي بہ ڪمايو هوندائين ۽ اهي

لَا يُظْلَمُوْنَ ﴿١٦١﴾ اَفَمَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَ اللّٰهِ كَمَنْۢ بَآءَ بِسَخَطٍ مِّنَ اللّٰهِ

ظلم نہ ڪيا ويندا ڇا پوءِ جيڪو تابعدار ٿيو الله جي رضا جو ان وانگر آهي جو موٽيو الله جي ڪاوڙ سان

وَمَاْوٰىهُ جَهَنَّمُ ؕ وَبِئْسَ الْمَصِيْرُ ﴿١٦٢﴾ هُمْ دَرَجٰتٌ عِنْدَ اللّٰهِ ؕ

۽ جاءِ ان جي جهنم آهي ۽ اها بري آ موٽڻ جي جاءِ اهي (مختلف) درجن وارا آهن الله وٽ

وَاللّٰهُ بَصِيْرٌۢ بِمَا يَعْمَلُوْنَ ﴿١٦٣﴾

۽ الله ڏسندڙ آهي جيڪي ڪن ٿا

## تفسير

"اِنْ يَّنْصُرْكُمُ اللّٰهُ" الاية- هن آيت کان اڳ ۾ الله تعالىٰ پنهجي محبوب عليہ الصلواة والسلام جن کي فرمايو تہ الله تعالىٰ تي ئي توکل ۽ ڀروسو ڪيو. هتي مؤمنن کي ٻڌايو ٿو وڃي تہ ڪنهن جي بہ ڪجهہ چوڻ، طعنن هڻڻ جي ڪري پريشان نہ ٿيو جيڪڏهن الله تعالىٰ اوهان جي مدد ڪندو جيئن بدر ۾ ڪئي هيائين تہ پوءِ ڪير بہ اوهان تي غالب ٿي نہ سگهندو. ڇوتہ الله تعالىٰ قوي، غالب ۽ وڏي طاقت وارو مالڪ آهي ۽ جيڪڏهن اهو اوهان کي مدد نہ ڏيندو جيئن ٿوري وقت جي لاءِ احد جي جنگ ۾ نہ ڪيائين تہ ان کان سواءِ ڪير اوهان جي مدد ڪندو يا ڪري سگهندو؟

مؤمنن جو اهوئي مددگار آهي ان تي ئي مؤمن توڪل ڪن. ڇو تہ هر شيءِ ان جي هٿ ۾ آهي. ان جي حڪم ڪي ڪير بہ رد نٿو ڪري سگهي. توڪل علي الله مومن جو مضبوط، مستحڪم ۽ لڪل هٿيار آهي جنهن جي سهاري ڪيترا ملڪ فتح ڪندو رهندو آهي.

## الله تعالىٰ تي توڪل ڪرڻ جون برڪتون ۽ ڀلايون

جيئن قرآن ڪريم ۾ ڪيترين جاين تي توڪل جو ذڪر آيو آهي تيئن حضرت حبيب ڪريم، رؤوف، رحيم صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن پنهنجي ارشادات عاليہ ۾ بہ توڪل جون برڪتون ۽ ڀلايون بيان فرمايون آهن جن مان ڪجهہ هتي لکڻ جي سعادت حاصل ڪري رهيو آهيان. ولله الحمد

## ارشاد ١

امام احمد، بخاريءَ ۽ مسلم حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان مرفوعاً روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "يَدْخُلَ سَبْعُوْنَ اَلْفاً مِّنْ اُمَّتِيْ اَلْجَنَّةَ بِغَيْرِ حِسَابٍ قِيْلَ يَا رَسُوْلَ اللّٰهِمَنْ هُمْ؟ قَالَ هُمُ الَّذِيْنَ لَا يَكْتَوُوْنَ وَلَا يَسْتَرْقُوْنَ وَلَا يَتَطَيَّرُوْنَ وَعَلىٰ رَبِّهِمْ يَتَوَكَّلُوْنَ فَقَالَ عُكَاشَةُ بْنُ مُحْصَنٍ اُدْعُ اللّٰهَ اَنْ يَّجْعَلَنِيْ مِنْهُمْ قَالَ اَنْتَ مِنْهُمْ ثُمَّ قَامَ آخَرُ فَقَالَ يَا رَسُوْلَ اللّٰهِ! اُدْعُ اللّٰهَ اَنْ يَّجْعَلَنِيْ مِنْهُمْ فَقَالَ سَبَقَكَ بِهَا عُكَاشَةُ" يعني منهنجي امت مان ستر (٧٠) هزار ماڻهو حساب کان سواءِ جنت ۾ داخل ٿيندا. عرض ڪيو ويو تہ يارسول الله! اهي ڪير هوندا؟ فرمايائون تہ اهي اهي آهن جو نہ ڪارا داغ ڪڍائيندا ۽ نہ منتر پڙهندا ۽ نہ فارون وجهائيندا ۽ پنهنجي رب تي توڪل ڪندا. (حضرت) عڪاشہ بن محصن عرض ڪيو تہ يارسول الله! الله تعالىٰ کان دعا گهرو تہ مون کي بہ انهن مان بنائي. پاڻ صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو تہ تون انهن مان آهين. ان کان پوءِ ٻئي اٿي عرض ڪيو تہ يارسول الله! مون لاءِ بہ الله تعالىٰ کان دعا گهرو تہ مون کي بہ انهن ۾ شامل ڪري. فرمايائون تہ عڪاشہ توکان ان ۾ اڳرائي ڪري ويو.

## ارشاد ٢

امام احمد، ترمذيءَ نسائي ۽ ابن ماجہ حضرت عمر بن الخطاب رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "لَوْ اَنَّكُمْ

تَتَوَكَّلُوْنَ عَلَى اللّٰهِ حَقَّ تَوَكُّلِهٖ لَرَزَقَكُمْ كَمَا يُرْزَقُ الطَّيْرَ تَغْدُوْ خِمَاصًا وَتَرُوْحُ بِطَانًا" (١)
يعني جيكڏهن اوهان الله تعالىٰ تي توكل كيو ها جيئن ان تي توكل كرڻ جو حق آهي تہ اوهان كي ائين رزق ڏئي ها جيئن پكين كي ڏيندو آهي (پكي) صبح جو خالي پيٽ سان نكرندا آهن شام جو پيٽ ڀري موٽندا آهن.

"وَمَا كَانَ لِنَبِيٍّ اَنْ يَّغُلَّ وَمَنْ يَّغْلُلْ يَاْتِ بِمَا غَلَّ يَوْمَ الْقِيَامَةِ ثُمَّ تُوَفّٰى كُلُّ نَفْسٍ مَّا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ" هن آيت جي تفسير ۾ مفسرن لکيو آهي تہ بدر جي جنگ ختم ٿيڻ كان پوءِ جڏهن اتاهين هٿ آيل غنيمت جو مال مجاهدن ۾ ورهائڻ شروع كيو ويو تہ هك چادر كٽل هئي. منافقن چيو تہ اها چادر رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن لكائي خيانت كئي هوندي. (معاذالله) انهن جي رد ۾ الله تعالىٰ هيءَ آيت نازل كري فرمايو تہ كنهن بہ نبي عليہ الصلواة والسلام جي شان جي لائق ناهي جو خيانت كري چادر يا غنيمت جي ٻئي مال مان كنهن بہ شيءِ سان جيكڏهن كو خيانت كندو تہ اها شيءِ قيامت جي ڏينهن پنيءَ تي كڻي الله تعالىٰ جي بارگاهہ ۾ پيش ٿيندو ۽ ان كي پنهنجي كئي كمائيءَ جي پوري پوري سزا ڏني ويندي. ها كنهن سان ظلم نہ كيو ويندو. ڇوتہ الله تعالىٰ ظلم كرڻ كان پاك آهي."
امانت ۾ خيانت كرڻ جي اهڙيءَ سخت سزا جي ڄاڻ هوندي الله تعالىٰ جو پيارو ۽ هر گناهہ كان پاك ۽ معصوم نبي عليہ الصلواة والسلام خيانت جهڙي گناهہ كي كيئن ويجهو ويندو؟ جيئن حضور صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن پنهنجيءَ خوش خلقيءَ، نرم طبيعت، مهربانيءَ ۽ كرم نوازيءَ سان مؤمنن جا قصور معاف كندي سندن لاءِ الله تعالىٰ كان بہ مغفرت طلب كندا ٿا رهن تيئن انهن كي بہ سندن شان جي عظمت، پاكدامنيءَ ۽ معصوميت جو خيال ركندي سندن متعلق واهيات وهمن ۽ غلط خيالن كان سخت پرهيز كرڻ گهرجي.

# امانت ۾ خيانت كندڙ جي سزا جو بيان

## حديث ١

ابومالك اشجعيءَ كان روايت آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "اَعْظَمُ الْغُلُوْلِ عِنْدَاللّٰهِ ذِرَاعٌ مِّنَ الْاَرْضِ تَجِدُوْنَ الرَّجُلَيْنِ جَارَيْنِ فِي الْاَرْضِ اَوْ فِى الدَّارِ فَيَقْطَعُ اَحَدُهُمَا مِنْ حَظِّ صَاحِبِهٖ ذِرَاعًا فَاِذَا قَطَعَهٗ طُوِّقَهٗ مِنْ سَبْعِ اَرَضِيْنَ يَوْمَ

(١) تفسير المراغي ص١١۴ جلد ٢ جزءِ ۴

القِيَامَةِ" (۱) يعني الله تعالیٰ وٽ وڏي خيانت زمين جو اهو هڪ هٽ آهي جو اوهان ۾ ڪن شخصن کي زمين يا جاءِ ۾ هڪٻئي جو پاڙيسري ٿا ڏسو پوءِ انهن مان هڪڙو ٻئي جي حصي مان اهو هڪ هٽ جي ماپ جيترو ٽڪرو قبضو ڪري ڪٽي ٿو وجي تہ اهو ان کي قيامت جي ڏينهن ستن ئي زمينن مان طوق ڪري وڌو ويندو.

## حديث ۲

حضور پرنور عليہ الصلواة والسلام جن فرمايو آهي تہ "اَلَا لَا اَعرِفَنَّ اَحَدَكُمْ يَاْتِيْ بِبَعِيْرٍ لَّهٗ رُغَاءٌ وَبِبَقَرٍ لَّهٗ خُوَارٌ وَبِشَاةٍ لَّهٗ ثُغَاءٌ فَيُنَادِيْ يَا مُحَمَّدُ يَا مُحَمَّدُ فَاَقُوْلُ لَاۤ اَمْلِكُ لَكَ مِنَ اللّٰهِ شَيْئًا قَدْ بَلَغْتُكَ" (۲) يعني خبردار! مان اوهان کي ان حال ۾ اصل نہ سڃاڻندس جو اوهان مان هڪڙو گوڙين ڏيڻ وارو اٺ ۽ رنڀڻ وارو ڍڳو ۽ ٻيڪن واري ٻڪري ڪنيو ايندو پوءِ سڏي (شفاعت ڪرڻ جي لاءِ) عرض ڪندو يا محمد يا محمد! (صلی الله عليہ وسلم) مان ان کي چوندس تہ مان تولاءِ ڪا شيءِ بہ نہ ٿو ڪري سگهان. مون توکي حق جو پيغام پهچايو هو (تہ خيانت نہ ڪجانءِ هاڻي پلي سزا کاءِ تہ پتو پوئي)اهو ان کي تنبيه ڪرڻ لاءِ فرمائيندا هئا نہ تہ سندن شفاعت حق آهي ان جو انڪار ڪرڻ گمراهي آهي.

"اَفَمَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَ اللّٰهِ كَمَنْۢ بَاۤءَ بِسَخَطٍ مِّنَ اللّٰهِ وَمَاْوٰهُ جَهَنَّمُ وَبِئْسَ الْمَصِيْرُ" مطلب تہ الله تعالیٰ جو محبوب نبي عليہ الصلواة والسلام جيڪو الله تعالیٰ جي ذات کي راضي ڪندڙ سندس رضا جو تابع آهي سو امانت ۾ خيانت ڪري انهن وانگر ڪيئن ٿيندو؟ جيڪي طمع ۽ لالچ ۾ اچي ڪريل ڪم ڪري خداوند قدوس جي قهر ۽ غضب جي هيٺان ايندا آهن اهي الله تعالیٰ جي نبي عليہ الصلواة والسلام سان ڪڏهن بہ برابر ٿي نہ سگهندا. نبي ڪريم عليہ التسليمات والتڪريمات جن جنت جي نهايت ئي اعلیٰ مقامات ۾ تشريف فرما ٿيندا ۽ امانت ۾ خيانت ڪندڙ جهنم جي نهايت ئي بڇڙيءَ ۽ بريءَ جاءِ ۾ هوندا.

"هُمْ دَرَجٰتٌ عِنْدَ اللّٰهِ وَاللّٰهُ بَصِيْرٌۢ بِمَا يَعْمَلُوْنَ" يعني الله تعالیٰ جي علم ۾ سيني جا مختلف طبقا ۽ مقام آهن جيئن اعمال مختلف اٿن تيئن سندن عملن جو بدلو ثواب يا عذاب بہ مختلف هوندو. الله تعالیٰ انهن جي عملن کي ڏسي ٿو اهوئي کين سندن عملن جي جزا يا سزا ڏيندو. ان جي ڪري عقلمند کي گهرجي تہ درجن جي تڪميل ۽ حالات کي سينگارڻ جي ڪوشش ڪندو رهي.

(۱) ابن ڪثير ص ٦٣١ جلد ۱ ابوداؤد ص ۳۱ ج ۴ (۲) تنوير الاذهان ص ۲۹۰ جلد ۱

چاڻ گهرجي ته جنت ۾ وڃڻ وارن جا چار قسم هوندا. ١- انبياء ۽ مرسل (عليهم الصلواة والسلام) ٢- صديق سڳورا ٣- اولياء پلارا ۴- الله جي وحدانيت جي ڄاڻ رکڻ وارا علماء - انهن سيني جو شان، مرتبو عدن نالي بهشت ۾ الله تعالىٰ جي ديدار ڪرڻ وقت ظاهر ٿيندو. اهي اتي ڇئن مقامن تي فائز هوندا. ١- هڪڙا (نور جي) منبرن جا مالڪ هوندا. يعني نبين ۽ مرسلن عليهم الصلواة والسلام جي جماعت- جيڪي نهايت بلند مقام جا صاحب آهن. ٢- ٻيا الله تعالىٰ جي عرش سان وابسته هوندا. يعني صديق سڳورا- جيڪي قول، عمل ۽ حال ۾ انبياءِ عظام عليهم الصلواة والسلام جا سچا تابع رهيا. ٣- ٽيان قدرتي ڪرسيءَ سان وابسته هوندا. يعني علماء بالله جيڪي نظر، برهان ۽ عقل سان الله وحده لاشريک له جي وحدانيت ثابت ڪري منڪرن کي مجرائيندا هئا. ۴- چوٿان اهي ايمان وارا ٻانها جيڪي ٻين کان الله تعالىٰ جي توحيد جو بيان ٻڌي الله تعالىٰ کي هڪ ڪري مڃيندا هئا. مختلف عملن جي ڪري انهن جا درجا به مختلف هوندا. ڪي عمر جي لحاظ سان، جو پيريءَ ۾ سهڻا عمل ڪيا هيائون، ڪي زماني جي لحاظ سان، جو رمضان شريف يا جمعي جي ڏينهن يا قدر جي رات يا ذوالحج جي ڏهن تاريخن ۾ يا عاشوره جي ڏينهن ۾ چڱا عمل ڪيا هوندائون، ڪي وري مڪان ۽ جاءِ جي لحاظ سان، جو بيت الله شريف واريءَ مسجد ۾ يا نبوي مسجد يا بيت المقدس جي مسجد اقصىٰ يا ٻين ديني مرڪزن ۾ صالح عمل ڪيا هوندائون ڪي وري حالات جي لحاظ سان جو نماز باجماعت پڙهي هونداٿون وغيره وغيره. اهي سيئي مختلف درجن وارا آهن. (١)

لَقَدْ مَنَّ اللّٰهُ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ اِذْ بَعَثَ فِيْهِمْ رَسُوْلًا مِّنْ

البته تحقيق ٿورو ڪيو الله ايمان وارن تي جو موڪليائين انهن ۾ شاندار رسول

اَنْفُسِهِمْ يَتْلُوْا عَلَيْهِمْ اٰيَاتِهٖ وَيُزَكِّيْهِمْ وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتٰبَ

انهن مان پڙهي ٿو انهن تي آيتون ان جون ۽ پاڪ ٿو ڪري انهن کي ۽ پڙهائي ٿو انهن کي ڪتاب

وَالْحِكْمَةَ ۚ وَاِنْ كَانُوْا مِنْ قَبْلُ لَفِيْ ضَلٰلٍ مُّبِيْنٍ ﴿١٦٤﴾

۽ حڪمت توڙي جو هئا (ان کان) اڳ ۾ البت کليءَ گمراهيءَ ۾

النصف

(١) تنوير الاذهان ص٢۴٠- ٢٩١

# تفسير

"لَقَدْ" (البت تحقيق) چاڻ گهرجي تہ جنهن مضمون جا انڪاري موجود هجن يا موجود ٿيڻ وارا هجن ان کي تاڪيدي الفاظ سان پڪو ڪري بيان ڪيو ويندو آهي. جڏهن تہ حضور صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جي بعثت (موڪلڻ) کي احسان سمجهڻ جا منڪر ان وقت بہ هيا ۽ قيامت تائين هوندا بلڪ ظاهري طرح زبان سان ڪلمي پڙهڻ وارن مان بہ ڪن پليلن جي اها سوچ هوندي ان جي ڪري هن آيت جي تحقيق ۽ تاڪيد وارن لفظن لَ ۽ قد سان ابتدا ڪئي وئي. "مَنَّ اللّٰهُ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ" (ٿورو ڪيو الله مؤمنن تي) "مَنَّ" ماضيءَ جو صيغو مَنَّ کان ورتل آهي جنهن جي لغوي معنيٰ ڪنڻ ۽ اصطلاحي معنائون گهڻيون آهن. ١- آسمان کان لٿل غيبي رزق "وَاَنْزَلْنَا عَلَيْكُمُ الْمَنَّ وَالسَّلْوٰى" ٢- ڪنهن کي ان تي ڪيل احسان ٻڌائڻ "يَمُنُّوْنَ عَلَيْكَ اَنْ اَسْلَمُوْا" ٣- ڪنهن تي احسان ڪري طعنو هڻڻ "لَاتُبْطِلُوْا صَدَقَاتِكُمْ بِالْمَنِّ وَالْاَذٰى" ٤- ڪنهن کي عيوضي ونڻ کان سواءِ نعمت ڏيڻ "فَامْنُنْ اَوْ اَمْسِكْ بِغَيْرِ حِسَابٍ" هتي "لَقَدْ مَنَّ اللّٰهُ" ۾ من جو لفظ ان پوئينءَ معنيٰ سان آيل آهي. چاڻ گهرجي تہ دنيا جون ٻيون نعمتون فاني آهن ۽ حضور صلى الله عليہ وسلم جن ۽ سندن ذريعي مليل ايمان جي نعمت باقي آهن. بلڪ ٻيون نعمتون جيئن بارش وسڻ، روزي ملڻ وغيرهہ سندن ئي صدقي ۽ طفيلي آهن. چاڻ گهرجي تہ انسان صرف هڏن، گوشت ۽ ڪل جو نالو ناهي پر سندس حقيقت اهو روح آهي جيڪو سندس جسم سان تعلق رکي ٿو جيستائين روح بدن ۾ آهي تہ انسان انسان آهي ۽ سندس انسانيت وارا حقوق بہ قائم آهن ڪيترو بہ ضعيف چونہ هجي پر ڪنهن کي خوشيءَ سان پنهنجي جائداد، مال، ملڪيت ۽ حقوق سلب ڪرڻ نہ ڏيندو مگر جڏهن هي روح سندس جسم کان جدا ٿي ويو پوءِ اهو پلي ڪيڏو بہ پرڏر، پهلوان، ڏهيسر مڙس هجي ۽ سندس جسماني عضون جي هيئت اصلي بہ قائم هجي پر اهو ڪابہ شيءِ سنڀالي نہ سگهندو سندس هر شيءِ ٻين جي حوالي وصيت ۽ ورثي طور ٿي ويندي. الله تعالىٰ انسان جي ان روح جي صحيح تربيت ڪرڻ ۽ ان کي حقيقي معنيٰ ۾ انسان بنائڻ لاءِ دنيا تي انبياءِ ڪرام عليهم الصلواة والسلام موڪليا تانتہ ان کان اهڙا پلا ۽ فائدي وارا ڪم صادر ٿين جيڪي سندس وجود ۾

اچڻ جو مقصد آهن ۽ اهو زهريلن نانگن ۽ ڦاڙيندڙن جانورن وانگر ٻين کي ايذائيندو نہ ڦري. بلڪ آخرت جي سوچ رکي رب العالمين کي راضي ڪندو رهي. حضور سرور ڪائنات صلي الله عليہ وسلم جن جيئن امامت ۽ سرداريءَ ۾ سيني نبين عليهم الصلواة والسلام کان مٿي آهن تيئن انسان کي صحيح انسان بڻائڻ ۾ بہ سيني کان بلند مقام تي فائز آهن پاڻ مڪي پاڪ واريءَ زندگيءَ ۾ صرف سٺا سٺا فرد تيار ڪري انهن جو اهڙو عجيب معاشرو وجود ۾ آندائون جو انهن جو مقام ملائڪن کان مٿي ۽ اهڙو عجيب هو جو زمين ۽ آسمان انهن کان اڳي اهڙا انسان نہ ڏٺا هئا. انهن ۾ هرهڪ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جو معجزو نظر اچي رهيو هو. انهن سان گڏ پاڻ قيامت تائين اچڻ وارن انسانن جي لاءِ بہ تعليم، طريقي، ايمان ۽ عرفان جهڙيون لازوال نعمتون بيان فرمايون اٿن جو انهن تي عمل ڪندڙ بہ بلند مرتبن کي ماڻي سگهي ٿو ۽ اهي ڳالهيون آهن تہ سيني انسانن جي لاءِ پر ان مان صحيح ۽ ڪامل فائدو صرف مؤمن حاصل ڪن ٿا ان جي ڪري هي احسان بہ خاص انهن تي ڳڻيو ويو آهي. جيئن قرآن ڪريم لٿو تہ سيني کي سمجهائڻ جي لاءِ پر ان مان فائدو جڏهن تہ صرف متقين وٺن ٿا تہ ان جي تعريف ۾ "هُدًى لِّلْمُتَّقِيْنِ" نازل ڪيو ويو آهي.

"اِذْ بَعَثَ" جو موڪليائين "اذ" بہ قسم آهي ١- هڪ ظرفيہ ٢- ٻي تعليليہ هتي جيڪڏهن ظرفيہ چوندؤ تہ مطلب هي ٿيندو تہ ٻانهن تي الله تعالىٰ جا اول بہ ڪروڙين احسان آهن مگر وڏو احسان ان وقت ٿيو جڏهن رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن انهن ۾ موڪليا ويا ۽ جيڪڏهن اذ تعليليہ چوندؤ تہ پوءِ مطلب هي ٿيندو تہ مؤمنن تي خصوصي احسان ان جي ڪري ٿيو انهن ۾ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن موڪليا ويا. ڇاڪاڻ گهرجي تہ عدم مان وجود ۾ آڻڻ کي خلق (پيدا ڪرڻ) ۽ جيڪو پهريان موجود هجي ان کي ڪنهن ڪم يا پيغام سان موڪلڻ کي بعثت سڏيو ويندو آهي. جڏهن تہ نبي ڪريم صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن پيدائش ۾ سيني کان اول ۽ دنيا تي تشريف آوريءَ ۾ پوءِ آهن ۽ ٻيا ماڻهو پنهنجي ڪم سان ۽ حضور صلى الله عليہ وسلم جن الله تعالىٰ جي ڪم سان ۽ ٻيا عالم ارواح کان ۽ حضور صلى الله عليہ وسلم جن عالم قدس کان آيا ان جي ڪري الله تعالىٰ سندن باري ۾ هتي خلق جي بجاءِ بعث آندو.

"فِيُهِمْ" جو لفظ بعث جو ظرف آهي "هم" جمع مذڪر غائب جو ضمير آهي ان جي مرجع "المؤمنين" آهي. حضور صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن ظاهر ۾ تہ مڪي وارن ۾ آيا پر حقيقت ۾ سندن آمد سيني مؤمنن ۾ ٿي. جيئن سج هوندو چوٿين آسمان تي آهي پر چمڪائيندو سڄي جهان کي آهي. تيئن هي "سراج منير" آيو تہ

مکي ۽ مديني ۾ پر چمڪيو هر مؤمن جي دل ۽ سيني ۾- ۽ ان ئي نقطي کي (تہ حضور صلی الله عليہ وسلم جن سيني ۾ موڪليا ويا مقصد هي آهي تہ سيني ۾ موجود آهن) صوفياءِ ڪرام ذهن ۾ رکي وجد ۾ ايندي چوندا آهن

سنا ہے رهتے هين آقا فقط مدينے مين
غلط ہے رهتے هين وه عاشقون کے سينے مين

"رَسُوْلاً" (پيغمبر کي) رسول فعول جي وزن تي رسالت مان ورتل صفت مشبہ جو صيغو آهي. رسالت جي معنيٰ پيغام ڏئي موڪلڻ. رسول ۾ تنوين تعظيم جي آهي. يعني وڏي شان وارو رسول "رسولاً" جي پويان اهو بيان نہ ڪيو ويو آهي تہ ڪنهن ڏانهن رسول ڪري موڪليا ويا آهن جنهن مان ثابت ٿيو تہ سندن رسالت ڪنهن قوم، وقت، جاءِ يا علائقي وغيره سان مقيد نہ آهي پاڻ هر وقت، هر ملڪ هر قوم لاءِ رسول بلڪ رسولن ۽ نبين عليهم الصلواة والسلام جا بہ رسول آهن. سندن عظمت ۽ عزت هر طرح ظاهر آهي. گنهگار چون ٿا تہ اسان جو رسول، نيڪوڪار چون ٿا تہ اسان جو، پکي چون ٿا تہ اسان جو رسول، جانور چون ٿا تہ اسان جو، ملائڪ چون ٿا تہ اسان جو رسول، جن چون ٿا تہ اسان جو، مخلوق چوي ٿي تہ اسان جو رسول، خالق فرمايو تہ منهنجو رسول، صلی الله عليہ وسلم-

اعليٰ حضرت مولٰ شاه احمد رضا خان بريلوي عليہ الرحمة فرمايو آهي

بلبل نے گل اس کو کها، قمري نے سر وجانفزا
حيرت نے جهنجهلا کر کها يہ بهي نهين وه بهي نهين

"مِنْ اَنْفُسِهِمْ" انهن مان- من حرف جار انفسهم مجرور سان گڏ ڪائناً يا ثابتاً مقدر سان متعلق ٿي "رسولاً" کان حال يا صفت ٿيندي. اَنْفُسِ نفس جو جمع آهي ۽ اهو ذات، روح، دل ۽ جان جي معنيٰ ۾ ايندو آهي. قرآن ڪريم ۾ آيو آهي "تَعْلَمُ مَا فِيْ نَفْسِيْ وَلَآ اَعْلَمُ مَا فِيْ نَفْسِكَ" (۱) هتي نفسڪ ۾ نفس ذات جي معنيٰ ۾ آيل آهي ۽ "نفسي" جي لفظ جي معنيٰ جان آهي. "من انفسهم" جي معنيٰ انهن جي ذاتين يا انهن جي جانين مان- جيئن هرهڪ جان پنهنجي جسم جي هرهڪ عضوي کي حياتي ۽ فيض ڏيندي آهي پر اکين کان لڪل آهي تيئن حضور صلی الله عليہ وسلم جن بہ هر مؤمن کي فيض ڏيندا آهن ۽ سندس ظاهري نگاهن کان لڪل آهن. الله تعالیٰ ٻيءَ آيت ۾ فرمايو آهي "عَزِيْزٌ عَلَيْهِ مَا عَنِتُّمْ" اوهان کي تڪليف ڏيڻ واري شيءِ ان تي ڳري آهي. ثابت ٿيو تہ پاڻ پنهنجيءَ امت جي حالات کان باخبر آهن. جيڪڏهن پاڻ ڪريم ﷺ جن امت جي حالات کان بي خبر هجن ها تہ اها تڪليف مٿن ڳري نہ رهي ها.

(۱) سورة المائدة آيت ۱۱٦

بعضي مفسرن "انفس" جي لفظ مان مراد جماعت ۽ قبيلو ۽ "هم" مان عرب وارا ورتا آهن. مقصد تہ اللہ تعالیٰ حضور صلی اللہ علیہ وسلم جن کي عرب وارن ۾ انهن جي خاندان مان موڪليو جنهن جي زبان ۽ حالات کان سيئي بخوبي واقف آهن ۽ انهن مان بعثت جي صدقي عرب وارن کي عزت ۽ عظمت ملي. پر ان تفسير تي هي لازم ٿيندو تہ هن کان پويان عليهم، يعلمهم، ويزکيهم، وغيره سڀ ضمير بہ عرب وارن ڏي ورن. پوءِ تہ حضور صلی اللہ تعالیٰ عليہ وسلم جن صرف عرب وارن جا نبي ٿيا ويندا حالانڪ پاڻ سڀني جهانن جي لاءِ نبي آهن. ان جي ڪري مٿيون لکيل تفسير وڌيڪ مناسب رهندو. قرآن پاڪ ۾ من انفسهم "هم غائب جي ضمير سان ۽ ڪيترين جاين تي "ڪم" خطاب جي ضمير سان بہ آيل آهي. مگر ان مان اهو ثابت ڪرڻ تہ حضور ﷺ جن عام انسانن جهڙا آهن صحيح ناهي جيئن سون ۽ چاندي نڪرن تہ مٽيءَ مان ٿا پر مٽيءَ جهڙا ناهن تيئن حضور صلی اللہ عليہ وسلم جن بہ آيا تہ عربن مان پر انهن جهڙا ناهن.

"يَتۡلُوا عَلَيۡهِمۡ آيَاتِهٖ" (تلاوت ٿو ڪري انهن تي ان جون آيتون) هن تلاوت مان مراد عام تلاوت آهي. واسطي کان سواءِ جيئن پاڻ ان وقت وارن کي قرآن ڪريم پڙهي ٻڌايائون يا واسطي سان جيئن سندن امت جا حافظ ۽ عالم ٻڌائن پيا.

"وَيُزَكِّيهِمۡ" ۽ پاڪ صاف ٿو ڪري انهن کي- هي جملو "يَتۡلُوا عَلَيۡهِمۡ" تي عطف ۽ رسولاً جي لفظ جو ٽيون حال يا صفت آهي ۽ يزڪي تزڪيہ جي لفظ کان ورتل آهي. معنيٰ پاڪ ۽ صاف ڪرڻ، اڪثر ڪري جسماني ۽ ظاهري پاڪائيءَ کي طهارت ۽ دلي ۽ روحاني پاڪائيءَ کي تزڪيہ سڏيو ويندو آهي يعني رسول اللہ صلی اللہ عليہ وسلم جن پنهنجن مڄڻ وارن کي برن عقيدن، خراب رسمن، بڇڙن عملن وغيرھ کان پاڪ ۽ صاف ڪندا آهن ۽ پاڪائي ۽ صفائي سندن نوري نگاهن سان حاصل ٿيندي آهي نيڪ عمل ٻج ۽ حضور ﷺ جن جي نگاھ انلاءِ رحمت جو پاڻي آهي جيئن پاڻيءَ کان سواءِ ٻج نہ ڄمندو پر ضايع ٿي ويندو تيئن محبوب آقا عليہ الصلواة والسلام جن جي نگاھ کان سواءِ ڪوبہ ماڻهو متقي ۽ ولي بنجي نہ سگهندو.

"وَيُعَلِّمُهُمُ الۡكِتَابَ وَالۡحِكۡمَةَ" ۽ پڙهائي ٿو انهن کي ڪتاب ۽ حڪمت- الڪتاب مان مراد تہ قرآن ڪريم آهي پر حڪمت مان مراد ڇا آهي ان جي متعلق علامہ طبريءَ لکيو آهي تہ يعني بالحكمة السنة التى سنها اللہ جل ثناءہ للمؤمنين علىٰ لسان رسول اللہ صلى اللہ عليه وسلم وبيانه لهم (١) يعني حڪمت مان مراد اها سنت آهي جيڪا اللہ جل ثناءہ مؤمنن جي لاءِ پنهنجي رسول صلی اللہ عليہ وسلم جي زبان ۽ بيان

(١) جامع البيان ص١٠٨ جلد ٢ جزءِ ٤

سان مقرر ڪئي آهي. ان ۾ حضور عليہ الصلواة والسلام جن جون حديثون ۽ سيني پاڪ وارا علوم بہ داخل آهن ڇوتہ قرآن ڪريم سان گڏ نبوي حديث عليٰ قائلها الصلواة والسلام جي بہ سخت ضرورت آهي جنهن سان قرآن ڪريم جي صحيح مفهوم ذهن نشين ٿيندي آهي.

"وَاِنْ كَانُوْا مِنْ قَبْلُ لَفِىْ ضَلٰلٍ مُّبِيْنٍ" توڙي جو هئا (ان ڪان) اڳ ۾ کليءَ گمراهيءَ ۾- ان جي تفسير ۾ علامہ طبريءَ لکيو آهي تہ اي في عمياء من الجاهلية لا يعرفون حسنة ولا يستغيثون من سيئة صم عن الحق عمي عن الهدي (١) يعني جاهليت جي اهڙي انڌ ۾ هيا جو نہ ڀيا نيڪي سڃاڻن ۽ نہ ڀيا برائيءَ ڪان بچڻ جي لاءِ دانهن ڪن. حق جي ٻڌڻ ڪان ٻوڙا ۽ هدايت جي ڏسڻ ڪان انڌا هيا.

آيت جو خلاصو هي آهي تہ حبيب ڪريم عليہ الصلواة والسلام جن جي آمد عظميٰ نعمت آهي جو پاڻ اڻ پڙهيل ۽ کليل گمراهيءَ ۾ پيل قوم کي قرآن پاڪ پڙهي ٻڌايائون ۽ سندن قلبن کي الله تعاليٰ جي ذڪر ۽ پياريءَ حديث جي فيض ۽ نور سان روشن ڪيائون ۽ انهن کي پنهنجيءَ محبت، قلبي توجهہ ۽ تصرف سان الله تعاليٰ ڏي ويجهو بنائي قرآن ڪريم جي لفظن جي مخصوص مراد جيڪا متبادر ۽ بامحاوره قرينن جي متعين ڪرڻ سان سمجهہ ۾ نہ ٿي آئي ڪين ڪولي سمجهايائون. ان سان گڏ حڪمت جي تعليم ڏيندي اونهيون اونهيون ڳالهيون لڪل راز، اسرار، لطائف ۽ شريعت جون عميق علتون صراحتاً يا اشارتاً انهن کي ذهن نشين ڪندي ايزدي توفيق ۽ رباني مدد سان جاهلن کي علم ۽ عمل جي انهن اعليٰ مرتبن تي فائز بنايائون جو اهي سندن تعليم، تربيت ۽ نوراني نظر جي صدقي پوري دنيا جا هادي، رهبر ۽ رهنما بڻيا. ايمان وارن کي ان بي بها نعمت جو قدر ڪندي الله تعاليٰ جو شڪرگذار ٿي آقاءِ نامدار ﷺ جي آمد تي عيد ميلاد ملهائڻ ۽ سندن شان ڳائڻ گهرجي.

اَوَلَمَّآ اَصَابَتْكُمْ مُّصِيْبَةٌ قَدْ اَصَبْتُمْ مِّثْلَيْهَا ۙ قُلْتُمْ اَنّٰى هٰذَا ۭ

ڇا جڏهن پهتي اوهان کي ڪا مصيبت جو تحقيق پهچايو بيڻي ان ڪان تہ چئو ٿا تہ ڪٿان آئي آهي هيءَ

قُلْ هُوَ مِنْ عِنْدِ اَنْفُسِكُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ﴿١٦٥﴾ وَمَا

فرماءِ تہ اها اوهان جي نفسن کان آهي بيشڪ الله هر شيءِ تي قادر آهي ۽ جيڪا (تڪليف)

اَصَابَكُمْ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعٰنِ فَبِاِذْنِ اللّٰهِ وَلِيَعْلَمَ الْمُؤْمِنِيْنَ ﴿١٦٦﴾ ۙ

پهتي اوهان کي ان ڏينهن جو وڙهيون بہ جماعتون پوءِ الله جي اذن سان (پهتي هئي) ۽ تانتہ نروار ڪري ايمان وارن کي

(١) جامع البيان جلد ٢ جزء ٤

وَلِيَعْلَمَ الَّذِينَ نَافَقُوا ۖ وَقِيلَ لَهُمْ تَعَالَوْا قَاتِلُوا فِي سَبِيلِ

۽ تانت نروار كري انهن كي جو منافق ٿيا ۽ چيو ويو انهن كي ته اچو جنگ كيو الله جي واٽ ۾

اللَّهِ أَوِ ادْفَعُوا ۖ قَالُوا لَوْ نَعْلَمُ قِتَالًا لَّاتَّبَعْنَاكُمْ ۗ هُمْ لِلْكُفْرِ

يا دشمن كي دفع كيو چيائون ته جيكڏهن ڄاڻون ها جنگ كرڻ ته البت تابعداري كيون ها اوهان جي. اهي كفر كي

يَوْمَئِذٍ أَقْرَبُ مِنْهُمْ لِلْإِيمَانِ ۚ يَقُولُونَ بِأَفْوَاهِهِم مَّا لَيْسَ فِي

انهيءَ ڏينهن وڌيك ويجها آهن انهن كان ايمان ڏانهن چون ٿا پنهنجن واتن سان جيكو ناهي

قُلُوبِهِمْ ۗ وَاللَّهُ أَعْلَمُ بِمَا يَكْتُمُونَ ﴿١٦٧﴾ الَّذِينَ قَالُوا لِإِخْوَانِهِمْ

سندن دلين ۾ ۽ الله وڌيك ڄاڻندڙ آهي جيكي لكائين ٿا اهي جو چيائون پنهنجن ڀائرن لاءِ

وَقَعَدُوا لَوْ أَطَاعُونَا مَا قُتِلُوا ۗ قُلْ فَادْرَءُوا عَنْ أَنفُسِكُمُ

۽ ويهي رهيا ته جيكڏهن مڃين ها اسان كي ته نه كُٺا وڃن ها فرماءِ ته پوءِ ٽارجو پاڻ كان

الْمَوْتَ إِن كُنتُمْ صَادِقِينَ ﴿١٦٨﴾

موت جيكڏهن آهيو سچا

## تفسير

شروعات كان ئي احد جي جنگ جو قصو هلندو ٿي آيو وچ ۾ جنگ جي ميدان مان نكري ويندڙن جي لاءِ الله تعالىٰ جي طرفان معافيءَ جو اعلان بيان ٿيو ۽ ان جي مناسبت سان ئي رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي بعثت واريءَ نعمت سندن تلاوت، تعليم، تزكيه جي ذريعي مؤمنن تي ٿيل مهربانيءَ جو بيان ٿيو. هاڻي وري احد جي جنگ واري واقعي ڏانهن موٽ ٿي آهي. احد جي ميدان ۾ كن مسلمانن عجب كندي چيو هو ته جڏهن اسين حق تي آهيون، الله تعالىٰ جي واٽ ۾ جهاد كرڻ جي لاءِ نكتا آهيون ۽ الله تعالىٰ جو رسول مقبول صلي الله عليه وسلم به اسان ۾

موجود آهي تہ انهن مشرڪن ۽ ڪافرن جي هٿان اسان کي هار ڪيئن ملي؟ انهن جي سمجهائڻ لاءِ الله تعاليٰ فرمايو تہ:

"اَوَلَمَّا اَصَابَتْكُمْ مُّصِيْبَةٌ قَدْ اَصَبْتُمْ مِّثْلَيْهَا قُلْتُمْ اَنّٰى هٰذَا" يعني ائين ڇوڻ وقت اهو سوچيو ٿا تہ جيڪا تڪليف اتفاقاً اوهان کي پهتي آهي ان کان ٻيڻي تہ اوهان اڳ ۾ انهن ڪافرن کي پهچائي چڪا آهيو. احد جي جنگ ۾ اوهان جا صرف ستر (٧٠) مجاهد شهيد ٿيا پر ڪافرن جا بدر جي جنگ ۾ ستر (٧٠) ڪسي ويا ۽ ستر (٧٠) قيدي بڻيا. جڻ تہ اهي بہ قتل ٿيل هيا ڇوتہ اوهان جي هٿ وس هيا جيڪڏهن قتل ڪيون ها تہ بہ ممڪن هو.

"قُلْ هُوَ مِنْ عِنْدِ اَنْفُسِكُمْ" يعني انهن کي فرمايو تہ اها تڪليف جيڪا اوهان ڏٺي سا بہ اوهان جي ئي پيرن ترڪڻ جي ڪري ٻن وجهن سان اوهان کي پهتي هئي. ١- هڪ تہ اوهان نبي مڪرم صلى الله تعاليٰ عليہ وسلم جن جي مقرر ڪيل گهٽ کي ڇڏيو. ٢- ٻيو تہ مديني منوره ۾ محبوب عليہ الصلواة والسلام جن جي پهرين راءِ مبارڪ هئي تہ اتي ئي رهي دفاعي ڪارروائي ڪجي ٻاهر نہ هلجي پر اوهان پاڻ آزيون نيازيون ڪندي شهادت جو شوق ڏيکاريو هو تہ پوءِ هاڻي ائين ڇوٿا چئو؟

"اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ" يعني جيڪڏهن الله تعاليٰ ۽ سندس پياري حبيب عليہ الصلواة والسلام جي اطاعت ڪندؤ تہ اوهان جي مدد ڪندو ۽ جيڪڏهن بي فرماني ڪندؤ تہ اوهان کي ان جي سزا ڏيندو ڇوتہ اهو هر شيءِ تي قادر آهي.

"وَمَا اَصَابَكُمْ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعٰنِ فَبِاِذْنِ اللّٰهِ وَلِيَعْلَمَ الْمُؤْمِنِيْنَ" يعني اوهان سان جو ڪجهہ ٿيو آهي الله تعاليٰ جي اذن ۽ گهرڻ سان ٿيو آهي جنهن ۾ ڪيترين حڪمتون آهن. انهن مان هڪ هيءَ بہ آهي تہ الله تعاليٰ مخلص مومنن ۽ منافقن کي اهڙو ظاهر ڪري جو هرڪو ڏسي ۽ سمجهي سگهي تہ هي مومن ۽ هي منافق آهن نہ تہ هونءَ تہ الله تعاليٰ هر وقت هر شيءِ کي ڏسي رهيو آهي.

"وَلِيَعْلَمَ الَّذِيْنَ نَافَقُوْا وَقِيْلَ لَهُمْ تَعَالَوْا قَاتِلُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَوِ ادْفَعُوْا" مطلب تہ اهي منافق بہ کلي سامهون اچن جن کي مسلمانن چيو هو تہ اچو ميدان ۾ لهي وڙهو يا ٻيٺي ٻيٺي دشمن کي رڳي دفع ڪيو تہ انهن جواب ۾ هيئن چيو هو.

"قَالُوْا لَوْ نَعْلَمُ قِتَالًا لَّاتَّبَعْنٰكُمْ" يعني جيڪڏهن اسين جنگ جي فن کان واقف هجون ها يا اسان کي اهو علم هجي ها تہ ڪا لڙائي ٿيندي تہ اسين تيار ٿي اچون ها ۽ ٻيو تہ اهو جهاد نہ پر پاڻ کي هلاڪ ڪرڻو آهي ان جي ڪري اوهان جو اتباع نہ ٿا ڪيون.

هُمْ لِلْكُفْرِ يَوْمَئِذٍ اَقْرَبُ مِنْهُمْ لِلْاِيْمَانِ يعني هن واقعي کان اڳ ۾ اهي مومنن سان اهڙي نموني مليل جليل هئا جو ڪيترا ماڻهو کين پڪو مومن سمجهندا هئا پر ان ڏينهن جنگ ۾ حصي نہ وٺڻ سان سندن مڪر ۽ منافقي کلي پئي ۽ سيني ڏٺو تہ هي مومن نہ پر منافق آهن "يَقُوْلُوْنَ بِاَفْوَاهِهِمْ مَّا لَيْسَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ" يعني دل ۾ هڪڙي زبان تي ٻي اٿن وات سان اهو ڪجهہ چون ٿا جيڪو دل ۾ نہ اٿن ۽ اهائي منافقن جي نشاني آهي ۽مومن جي خصوصي صفت هيءَ آهي تہ جيڪا ڳالهہ زبان سان ڪندو دل ۾ بہ اهائي هوندي اٿس زبان سان اقرار ۽ دل سان تصديق ڪندو آهي "وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا يَكْتُمُوْنَ" يعني اوهان انهن جي منافقيءَ واري مڪر کي نشانين سان ڄاڻو ٿا پر جيڪڏهن سندن منافقي نشانين سان ظاهر نہ بہ ٿئي ها تہ بہ الله تعالىٰ سندن دلين ۾ لڪل ڳجهہ ۽ راز ڄاڻي ٿو اهو سندن منافقي کي ظاهر ڪري رهيو آهي.

"اَلَّذِيْنَ قَالُوْا لِاِخْوَانِهِمْ وَقَعَدُوْا لَوْ اَطَاعُوْنَا مَا قُتِلُوْا" يعني جيڪي الله تعالىٰ جا پيارا احدجي جنگ ۾ شهيد ٿيا هئا منافق انهن کي نسب ۽ پاڙي جي لحاظ سان پنهنجو ڀاءُ سڏي چوندا هئا تہ اسان انهن کي سمجهايو ۽ جهليو هو تہ جنگ ۾ نہ وڃو پر نہ مڙيا جيڪڏهن اسان جي چوڻ تي هلن ها تہ ڇو ڪسن ها؟ الله تعالىٰ سندن ان قول کي رد ڪندي ارشاد فرمايو: "قُلْ فَادْرَءُوْا عَنْ اَنْفُسِكُمُ الْمَوْتَ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ" يعني اوهان جي تدبير، صلاح ۽ مشوري سان ٻيا بچي وڃن ها تہ ڀوءِ پاڻ کان موت کي ٽارجو ۽ ڏسون تہ اوهان نہ مرو- اوهان صرف جهاد کي جهان ڇڏڻ جو سبب نہ سمجهو موت جا ڪئين ٻيا اسباب بہ آهن. ڪيترا ماڻهو گهر ۾ ويٺي بہ مري ويندا آهن.

**هڪ عجيب واقعو** هڪ ڀيري حضرت سليمان عليه الصلواة والسلام جن جي خدمت ۾ هڪ هندستاني شخص ويٺو هو تہ اوچتو حضرت ملڪ الموت انساني صورت ۾ اتي پهتو ۽ ان هندستانيءَ شخص ڏي تکيءَ نظر سان نهاري مجلس مان نڪري ويو ان شخص ڏڄندي حضرت سليمان عليه الصلواة والسلام جن کان پڇيو تہ قبلا! اهو ڪير هو؟ پاڻ فرمايائون تہ "ملڪ الموت" نالو ٻڌڻ سان وڏيڪ ڏڄي عرض ڪيائين تہ مهرباني ڪري واءَ کي حڪم ڪيو تہ مون کي هنيئر جو هنيئر هندستان پهچائي. سيدنا سليمان عليه الصلواة والسلام جي حڪم سان واءُ ان کي ان مهل ڪٽي هندستان جي هڪ ٽڪر تي لاٿو تہ ملڪ الموت ان جو روح قبضو ڪيو ۽ موٽي سيدنا سليمان عليه الصلواة والسلام جي خدمت ۾ اچي عرض ڪيائين تہ الله تعالىٰ حڪم ڪيو تہ اوهان وٽ ويٺل هندستاني شخص جو هاڻي جو هاڻي هندستان جي فلاڻيءَ سرزمين واري

ٺڪر تي ساهه قبض ڪر، مون ان کي تکيءَ نظر سان ڏٺو ڏيڇاريو، اوهان واءَ جي ذريعي ڪيس اتي پڇايو ۽ مون الله تعاليٰ جي حڪم سان سندس ساهه اتي قبض ڪيو(١) مفسرن سڳورن لکيو آهي تہ: روي انه مات يوم قالوا ما قالوا سبعون منافقا(٢) يعني جنهن ڏينهن منافقن ائين چيو هو ان ڏينهن (گهر ويٺي) سندن ستر (٧٠) منافق مري ويا هئا.

وَلَا تَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ قُتِلُوْا فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَمْوَاتًا ؕ بَلْ اَحْيَآءٌ

۽ هرگز نہ سمجهہ انهن کي جو ڪُٺا ويا الله جي واٽ ۾ مئل بلڪ جيئرا آهن

عِنْدَ رَبِّهِمْ يُرْزَقُوْنَ ﴿١٦٩﴾ فَرِحِيْنَ بِمَآ اٰتَاهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ۙ

پنهنجي رب وٽ رزق ڏنا ٿا وڃن خوشيون ڪندڙ آهن، انهن نعمتن تي جو ڏنيون انهن کي الله پنهنجي فضل سان

وَيَسْتَبْشِرُوْنَ بِالَّذِيْنَ لَمْ يَلْحَقُوْا بِهِمْ مِّنْ خَلْفِهِمْ ۙ اَلَّا خَوْفٌ

۽ خوش ٿا ٿين انهن بابت جو نہ مليا انهن سان انهن ڪان پوءِ هن لاءِ تہ ناهي ڪو خوف

عَلَيْهِمْ وَلَا يَحْزَنُوْنَ ﴿١٧٠﴾ يَسْتَبْشِرُوْنَ بِنِعْمَةٍ مِّنَ اللّٰهِ وَفَضْلٍ ۙ

انهن تي ۽ نہ اهي ڏک ڪندا- خوش ٿا ٿين الله جي نعمت ۽ ڀلائيءَ تي

وَّاَنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيْعُ اَجْرَ الْمُؤْمِنِيْنَ ﴿١٧١﴾ ۚ اَلَّذِيْنَ اسْتَجَابُوْا لِلّٰهِ

۽ بيشڪ الله نہ ٿو ضايع ڪري اجر ايمان وارن جو. اهي جو حڪم مڃيائون الله جو

وَالرَّسُوْلِ مِنْۢ بَعْدِ مَآ اَصَابَهُمُ الْقَرْحُ ۛؕ لِلَّذِيْنَ اَحْسَنُوْا مِنْهُمْ

۽ رسول جو ان ڪان پوءِ جو پهتو انهن کي زخم انهن لاءِ جو نيڪ ٿيا انهن مان

وَاتَّقَوْا اَجْرٌ عَظِيْمٌ ﴿١٧٢﴾ ۚ اَلَّذِيْنَ قَالَ لَهُمُ النَّاسُ اِنَّ النَّاسَ قَدْ

۽ پرهيزگار ٿيا اجر وڏو آهي اهي شخص جو چيو انهن کي ماڻهن تہ بيشڪ ماڻهو تحقيق گڏ ٿيا

(١) تنوير الايمان ص٤٩ ج١ پ٤ ابي السعود ص١٠٢ جلد١ جزء٢
(٢) تفسيرابي السعود ص١١١ جلد١ جزء ٢

وقف لازم ٨ع١٧

جَمَعُوا لَكُمْ فَاخْشَوْهُمْ فَزَادَهُمْ إِيمَانًا ۖ وَقَالُوا حَسْبُنَا اللَّهُ

اوهان لاءِ پوءِ ڊڄو انهن کان پوءِ وڌايائين انهن کي (ان ڳالهہ) ايمان ۾ چيائون تہ ڪافي آهي اسان جي لاءِ الله

وَنِعْمَ الْوَكِيلُ ﴿١٧٣﴾ فَانْقَلَبُوا بِنِعْمَةٍ مِّنَ اللَّهِ وَفَضْلٍ لَّمْ يَمْسَسْهُمْ

۽ اهو ڀلو ڪارساز آهي پوءِ موٽيا (اُئين چوڻ سان) الله جي نعمت ۽ ڀلائيءَ سان نہ پهتي انهن کي ڪا

سُوٓءٌ ۙ وَّاتَّبَعُوا رِضْوَانَ اللَّهِ ۗ وَاللَّهُ ذُو فَضْلٍ عَظِيمٍ ﴿١٧٤﴾ إِنَّمَا

بہ تڪليف ۽ تابعداري ڪيائون الله جي رضامندي جيءَ الله وڏي فضل وارو آهي بيشڪ

ذَٰلِكُمُ الشَّيْطَانُ يُخَوِّفُ أَوْلِيَاءَهُ ۖ فَلَا تَخَافُوهُمْ وَخَافُونِ إِنْ

اهو شيطان آهي جيڪو ڊيڄاري ٿو پنهنجن دوستن کي پوءِ نہ ڊڄو انهن کان ۽ ڊڄو مون کان جيڪڏهن

كُنْتُمْ مُّؤْمِنِينَ ﴿١٧٥﴾

آهيو ايمان وارا.

## تفسير

هنن آيتن جي نازل ٿيڻ جي باري ۾ ٽي روايتون آهن. ١- هڪ تہ اهي بدر جي جنگ ۾ شهيد ڪيلن چوڏهن(١۴) اصحابن جي باري ۾ نازل ٿيون. جن مان ڇهہ (٦) مهاجر ۽ اٺ (٨) انصار هئا (١)٢ ٻي- تہ اهي آيتون احد جي جنگ ۾ شهيد ٿيلن ستر (٧٠) ڄڻن جي باري ۾ نازل ٿيون جن مان چار مهاجر حضرت حمزه بن عبدالمطلب، مصعب بن عمير، عثمان بن شهاب، عبدالله بن جحش ۽ ڇاهٺ (٦٦) انصار هئا. (٢) جيئن حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان روايت آهي تہ رسول الله صلي الله عليه وسلم جن فرمايو تہ اوهان جي ڀائرن احد جي جنگ ۾ شهيد ٿيلن جا ارواح الله تعالىٰ سهڻن پکين ۾ وڌا آهن جيڪي بهشتي نهرن تي گهمي، اتي جي

(١) تفسير خازن ص٣٠١ ج١ (٢) تفسير نعيمي ص٣٣٨ جلد۴

ميون مان ڪائي، عرش جي ڇانو ۾ لٽڪيلن سونن قنديلن ۾ اچي رهن ٿا ۽ جڏهن ڪين ڪائڻ، پيئڻ ۽ رهڻ جون اهڙيون سهوليتون ۽ سک مليا تہ چوڻ لڳا: هاءِ، جيڪڏهن اسان جا پوئتي رهيل جيئرا ڀائر بہ هنن لذتن جي ڄاڻ رکن ها تہ اهي بہ الله تعالىٰ جي واٽ ۾ شهادت قبول ڪري، شهيد ٿي اچن ها پر انهن کي اها ڳالهہ ٻڌائي ڪير؟ الله تعالىٰ فرمايو تہ" اوهان جي خواهش انهن تائين مان ٿو پهچايان" تڏهن هي آيتون نازل ٿيون. ترمذي بروايت حسن ۽ حاڪم بروايت صحيح حضرت جابر بن عبدالله رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي ان فرمايو تہ: مون کي رسول الله صلي الله عليه وسلم جن سان ملاقات جو شرف حاصل ٿيو پاڻ فرمايائون تہ "ڇا جي ڪري توکي پڳل دل سان ٿو ڏسان؟" عرض ڪيم تہ يا رسول الله! (ﷺ) منهنجو پيءُ شهيد ٿي عيال ۽ قرض ڇڏي ويو آهي. (ان جي ڪري پريشان آهيان) پاڻ فرمايائون تہ"مان توکي خوشخبري نہ ڏيان تہ الله تعالىٰ تنهنجي پيءُ کي ملاقات جو شرف ڪيئن بخشيو آهي؟" عرض ڪيم تہ هائو( بيان فرمايو) فرمايائون تہ"الله تعالىٰ ڪنهن سان بہ ڪلام فرمايو آهي تہ پردي جي پويان مگر تنهنجي پيءُ سان روبرو ڳالهائيندي ڪيس فرمايائين تہ"اي منهنجا ٻانها ڪا دل جي خواهش ٻڌاءِ (تہ عطا ڪيانءِ) عرض ڪيائين تہ: وري جيئرو ڪر تہ تنهنجي واٽ ۾ وري ڪسي اچان الله تعالىٰ فرمايس تہ "اهو فيصلو اڳ ۾ ئي ڪري چڪو آهيان تہ مون وٽ اچڻ کان پوءِ ٻانها موٽايا نہ ويندا" عرض ڪيائين تہ اي رب! پلا منهنجن پوين کي اها حقيقت پهچاءِ. تڏهن الله تعالىٰ هي آيتون نازل ڪرڻ فرمايون." (١)

٣- ٽين تہ هي آيتون انهن ستر (٧٠) اصحابن رضي الله عنهم جي باري ۾ نازل ٿيون جيڪي احد جي جنگ کان چار مهينا پوءِ صفر مهيني سنہ۴ هہ ۾ بير معونہ نالي جاءِ تي شهيد ڪيا ويا هئا. انهن مان مشهور صحابي هي هيا. منذر بن عمرو، حارث بن صمه، حرام بن ملحان، عروه بن اسماءِ، نافع بن يزيد ۽ حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنه جن جو آزاد ڪيل غلام عامر بن فهيره جنهن جي لاش کي آسمان تي کڻايو ويو، جيئن بخاري شريف وغيره ۾ موجود آهي.

انهن جو مختصر قصو هيئن آهي تہ مکي مڪرمہ ۽ عسفان شهر جي وچ تي هزيل نالي هڪ علائقو آهي، جتي نجد جا ڪجهہ ماڻهو انهن ڀلارن کي قرآن

(١) روح المعاني ص١٢١ جلد٢ جزءِ ۴

پڙهائڻ جي بهاني سان ونڻ لاءِ آيا. حضور عليه الصلواة والسلام جن فرمايو ته:نجدين تي ڪو اعتبار ناهي قرآن پڙهائڻ جي لاءِ وڃڻ وارن جي جان جو خطرو آهي؛ پر ابو براءِ عامر بن مالڪ بن جعفر عرض ڪيو ته منهنجي ذميداري آهي، تڏهن حضور عليه الصلواة والسلام جن صحابن کي موڪليو پر انهن نجدين نياڳن بير معونه وٽ ڪعب بن زيد کان سواءِ سڀني کي شهيد ڪري ڇڏيو. انهن جي باري ۾ هي آيتون نازل ٿيون(۱) جن ۾ الله تعاليٰ فرمايو ته:

”وَلَا تَحۡسَبَنَّ الَّذِيۡنَ قُتِلُوۡا فِيۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ اَمۡوَاتًا بَلۡ اَحۡيَآءٌ عِنۡدَ رَبِّهِمۡ يُرۡزَقُوۡنَ“ يعني جيڪي دنيا جا سڀ آسرا لاهي رب العالمين جي واٽ ۾ جانيون ڏئي ڪسي قربان ٿيا آهن انهن کي مئل ته نه چئو پر دل ۾ سمجهو، به نه. اهي پنهنجي پالڻهار وٽ جيئرا آهن ڪين رزق ڏنو ويندو آهي.

## شهيدن جي حياتي ڪهڙي آهي؟

شهيد ڪيئن جيئرا آهن ان جي متعلق ڪجهه سورة بقره جي آيت ۱۵۴ جي تفسير ۾ لکي آيا آهيون ۽ ڪجهه هتي به لکجي ٿو. سنڌي زبان ۾ تفسير لکندڙ نورنگ زاده صاحب تفسير خازن جي حوالي سان لکيو آهي ته: شهيد ارواح ۽ اجسام ٻنهي سان جيئرا آهن انهن جا بدن، قبرن ۾ سلامت آهن ڳرن نه ٿا سندن ارواح سندن جسمن ۾ آهن. آيت مبارڪ جو سياق به اها شاهدي ڏي ٿو ته اهي روح ۽ بدن ٻنهي سان گڏ جيئرا آهن حديثن ۾ جو آيو آهي ته انهن جا ارواح سائي رنگ جي پکين ۾ آهن. (جيئن هاڻي حضرت ابن عباس رضي الله عنهما جي روايت لکي آيا آهيون) انهن جو مطلب آهي ته الله تعاليٰ انهن کي ڇوٽ ڇڏي ٿو ڏي جهڙي شڪل پسند ڪن ان ۾ اچي سگهن ٿا ۽ جتي وڻين وڃي سگهن ٿا. ان جي ڪري مختلف حديثن ۾سندن مختلف نمونا بيان ڪيا ويا آهن بعضي حديثن ۾ آهي ته شهيدن جا ارواح آسمان ۽ زمين جي وچ تي ڪڪرن ۾ گهمن ٿا مختلف تفسيرن ۽ تاريخن ۾ هيءَ روايت لکيل آهي ته جڏهن حضرت معاويه رضي الله تعاليٰ عنه شام جي ملڪ کان مصر ڏانهن متي پاڻيءَ جي نهرٽي ڪوٽائي جيڪا گهڻي پنڌ تائين پهچائڻي هئي ته ان نهر جي سامهون انهن شهيدن جون پاڪ قبرون ٿي آيون جيڪي فاروقي خلافت جي دور ۾ شام جي ملڪ ۾ جهاد ڪندي شهيد ٿيا هئا. جڏهن اها ڳالهه حضرت معاويه رضي

(۱) تفسير نعيمي ص۳٦۹ جلد۴

الله تعاليٰ عنه کي ٻڌائي وئي تہ پاڻ فرمايائون تہ هنن شهيدن جي مائٽن کي اطلاع ڏيو
تہ هرکو پنهنجي مائٽ جي جسم کي کڻرائي کٽي وڃي ۽ ٻئي هنڌ دفن ڪرائي،
پوءِ سوين شهيدن جا جسم جن تي ڏهن (۱۰) سالن کان بہ وڌيڪ عرصو گذري ويو هو.
جڏهن ٻاهر آندا ويا تہ سندن جسم اهڙائي تازا ۽ سهڻا رکيا هئا. جڻ تہ هاڻي دفن
ڪيا ويا آهن. جسمن پاڪن کي ٻاهر ڪڍڻ جي لاءِ قبرون کوٽيندي کوٽڻ واري جي
کوڏر کنهن شهيد جي پاڪ هٿ کي لڳي ويئي تہ ان مان ائين تازو رت وهڻ لڳو
جيئن دنيا ۾ جيئري انسان مان وهي. اها حالت ڏسي سڀ عجب ۾ پيا ۽ سمجهيائون
تہ آيت مان مراد اها آهي تہ شهيد ارواح ۽ اجسام ٻنهي سان جيئرا آهن (۱) سيد قطب
لکيو آهي تہ: هولاءِ الشهداءِ احياءٌ لهم کل خصائص الاحياءِ (۲) يعني هي شهيد
جيئرا آهن ۽ انهن لاءِ جيئرن وارين سڀ خصوصيتون ثابت آهن. علامہ احمد مالکي
عليه الرحمه لکيو آهي تہ وَهٰذِهِ الْحَيٰوةِ لَيْسَتْ كَحَيَاةِ الدُّنْيَا بَلْ هِيَ اَعْلىٰ وَاَجَلُّ لِاَنَّهُمْ
يَسْرَحُوْنَ حَيْثُ شَآءَتْ اَرْوَاحُهُمْ (۳) يعني شهيدن جي حياتي دنيا جي حياتيءَ وانگر
ناهي پر ان کان اعليٰ ۽ وڏي شان واري آهي. ڇو تہ شهيدن جا ارواح جتي گهرن تہ
گهمي سگهن ٿا قرطبيءَ عليه الرحمه لکيو آهي تہ: ان الارض لا تاکل الانبياءِ والشهداءِ
والعلماءِ والمؤذنين المحتسبين وحملة القرآن (۴) يعني ڌرتي نبين عليهم الصلواة
والسلام، شهيدن، عالمن ثواب خاطر بانگ ڏيندڙن ۽ قرآن جي خدمت ڪندڙ حافظن
(جي جسمن) کي نہ کائيندي آهي: ابن منده حضرت طلحہ بن عبدالله رضي الله عنه
کان روايت آندي آهي تہ منهن جو (غابه) جهنگل ۾ مال هو مان ان مال جي ارادي سان
اتي ويس تہ اتي رات پئجي ويئي. اتي هڪ قبر (مبارڪ) وٽ اچي رهي پيس تہ قبر
مان اهڙي سهڻي قرأت سان قرآن ٻڌم جو ان کان وڌيڪ سهڻو ڪڏهن بہ نہ ٻڌو هوم.
موٽي رسول الله صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن جي خدمت ۾ اچي اهو واقعو ذکر
ڪيم پاڻ فرمايائون تہ اهو (قبر ۾ دفن ٿيل الله تعاليٰ جي واٽ ۾ شهادت ماڻيندڙ)
عبدالله هو ڇا توکي ڄاڻ ناهي؟ تہ الله تعاليٰ انهن (شهيدن) جا ارواح قبض ڪري زبرجد
۽ ياقوت جي قنديلن ۾ جنت جي وچ تي لٽڪائي ڇڏيا آهن جڏهن رات ٿيندي آهي تہ
اهي ارواح (پنهنجن جسمن ڏانهن) موٽايا ويندا آهن ۽ سڄي رات انهن سان هوندا آهن
تانجو فجر ايرندي آهي پوءِ ساڳيءَ جاءِ (جنت جي وچ ۾ ٽنگيلن قنديلن) ڏانهن موٽايا

(۱) تفسير تنوير الايمان ص۵۱- ۵۲ پ۴ خازن ص۳۰۳ جلد۱ (۲) في ظلال القرآن
ص۵۱۷ جلد۱ الکبير ص۹۳ جزء۹ (۳) صاوي ص۱۷۸ جزء ۱ (۴) القرطبي
ص۲۷۰ جلد۴

ويندا آهن“ هن قول مان ثابت ٿيو تہ شهيد دنيا جي ڇڏڻ کان پوءِ بہ درجا ۽ عبادت جو ثواب ڪمائي رهيا آهن ۽ شهيد قبر ۾ نہ ڳرندا آهن ۽ نہ انهن کي زمين کائيندي آهي ۽ هيءُ سندن ان حياتيءَ جي آثار مان هڪ اثر آهي.

بغويءَ عبيد بن عمير رضي الله تعاليٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ جڏهن رسول الله صلي الله عليه وسلم جن احد کان موٽندي (احد جي جنگ ۾ شهيد ٿيل حضرت) مصعب بن عمير رضي الله تعاليٰ عنه جي جسم وٽان لنگهيا تہ ان کي شهيد ٿيل ڏسي سندس حق ۾ دعا ڪندي قرآن پاڪ جا هي الفاظ پڙهيائون ”مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ رِجَالٌ صَدَقُوْا مَا عَاهَدُوا اللّٰهَ عَلَيْهِ“ (مومنن مان ڪي اهڙا مرد آهن جو الله تعاليٰ سان ڪيل عهد سچو ڪري ڏيکاريائون) ان کان پوءِ فرمايائون تہ ”اَشْهَدُ اَنَّ هٰٓؤُلَآءِ شُهَدَاءُ عِنْدَاللّٰهِ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ اَلَا فَاتُوْهُمْ وَزُوْرُوْهُمْ وَسَلِّمُوْا عَلَيْهِمْ فَوَالَّذِيْ نَفْسِيْ بِيَدِهٖ لَا يُسَلِّمُ عَلَيْهِمْ اَحَدٌ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ اِلَّا رَدُّوْا عَلَيْهِ“ مان شاهدي ٿو ڏيان تہ يقينًا هي الله تعاليٰ وٽ قيامت جي ڏينهن شهيد آهن خبردار: پوءِ انهن جي زيارت ڪيو ۽ مٿن سلام پڙهو ڇو تہ ان پاڪ ذات جو قسم آهي جنهن جي قدرتي هٿ ۾ منهنجو ساهہ آهي تہ قيامت تائين ڪو بہ انهن تي سلام پڙهندو تہ ان کي سلام جي موٽ ڏيندا.

حاڪم ۽ بيهقي ٻنهي حضرت ابو هريرة رضي الله تعاليٰ عنه کان ۽ بيهقيءَ حضرت ابو درداء رضي الله تعاليٰ عنه کان ۽ ابن مردويہ خباب بن ارت رضي الله تعاليٰ عنه کان بہ ساڳي روايت آندي آهي پر ان ۾ ايترو وڌيڪ آهي تہ رسول الله صلي الله عليه وسلم جن حضرت مصعب بن عمير رضي الله عنه شهيد کي مخاطب ٿيندي فرمايو ”لَقَدْ رَاَيْتُکَ بِمَکَّةَ وَمَا بِهَا اَرَقُّ حُلَّةً وَّلَا اَحْسَنُ لُمَّةً مِنْکَ“ يعني (هينئر تہ تون رب العالمين جي راضي ڪرڻ جي لاءِ رت ۾ ٻريل شهيد ٿيو پيو آهين پر اڳ ۾ ايترو تہ نازڪ هئين جو) مڪي ۾ توکان وڌيڪ نرم وڳو پائيندڙ ۽ وارن جي سهڻي چوٽيءَ وارو مون ڪو نہ ڏٺو هو (١)

## سوال

## ڇا شهيد جي درجي کي غير شهيد حاصل ڪري سگهي ٿو؟

## جواب

علامه پاني پتيءَ عليه الرحمة هن سوال جي جواب ۾ لکيو آهي تہ هائو: انهن شهيدن جي درجي کي ٻيا بہ پهچي سگهن ٿا. ڇو تہ ما ورد في فضل الشهداء لا يقتضي نفي الحڪم عمن عداهم (٢) يعني شهيدن جي لاءِ وارد ٿيل

(١) تفسير مظهري ص ١٦٢ جلد ١ (٢) حوالو ساڳيو

فضائل ۾ پلاين ۾ انهن کي ٻين لاءِ ثابت هجڻ جي نفي ڪيل ناهي.

## فائدو

هن آيت مان ثابت ٿيو ته: شهيدن جي حياتي قطعي، يقيني آهي ان جو انڪار ڪندڙ ڪافر آهي. الله تعالىٰ شهيدن جي حياتيءَ ڪي بيان ڪندي سورة البقره جي آيت ۱۵۴ ۾ ٻڌايو ته انهن کي مئل نه چئو. اهي جيئرا آهن ۽ هتي فرمايائين ته (شهيدن کي مئل چئو ته نه پر) مئل سمجهو به نه. اهي جيئرا آهن سندن کي رزق ڏنو ٿو وڃي ۽ پويان شهيد ٿي اچڻ وارن جي لاءِ خوشيون ٿا ملهائن، جيڪو سندن حياتيءَ جو وڏيڪ ثبوت آهي. اهلِ سنت جو مذهب هي آهي ته شهيدن جي حياتي جسماني جاوداني آهي(۱) علامه احمد مالڪي لکيو آهي ته: شهيدن جا جسم قبرن ۾ آهن پر سندن ارواح جو تعلق ساڻن اهڙو ته مضبوط آهي جو قبرن ۾ هوندي به ڳرن نه ٿا ۽ سندن ارواح برزخ کان اعلىٰ آسمانن بلڪ جنت ڏانهن وڃن ۽ سير ڪن ٿا ۽ساون پکين جو جيڪو ذڪر حديثن ۾ آيل آهي اهي انهن ارواحن لاءِ سواريون آهن جيڪا نعمت انهن ارواحن کي ملي ٿي اها انهن جي جسمن کي به ملي ٿي اڳتي لکي اٿس ته: جيئن الله تعالىٰ جا اولياءَ ڪرام جاءِ تي ويٺا هوندا آهن مگر انهن جا ارواح مختلف جاين جا سير ڪندا وتندا آهن. (۲)

" فَرِحِيْنَ بِمَا آتَاهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ " فرحين فرح کان ورتل جمع جو صيغو يرزقون جي ضمير يا احياء کان حال آهي. فرح ان خوشيءَ کي سڏيو ويندو آهي جيڪا رنج ۽ ڏک کان آزاد هجي فخر ۽ تڪبر واري فرح منع آهي. جيئن الله تعالىٰ جو فرمان آهي: لَا تَفْرَحْ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْفَرِحِيْنَ " فرح (خوشي) نه ڪر بيشڪ الله خوشي ڪندڙن سان محبت نه ٿو رکي ۽ الله تعالىٰ جي دربار مان مليل نعمت تي شڪراني طور فرح ۽ خوشي ڪرڻ سهڻي ۽ پلي ڳالهه آهي. جيئن الله تعالىٰ جو فرمان آهي " قُلْ بِفَضْلِ اللّٰهِ وَبِرَحْمَتِهٖ فَبِذٰلِكَ فَلْيَفْرَحُوْا " فرماءِ ته الله جي فضل ۽ ان جي رحمت تي پلي ته فرحتون ڪن ۽ جڏهن ته شهيدن کي شهادت، جنت جون نعمتون مالڪ مٺي جي رضا جي ڪري ئي نصيب ٿيون آهن صرف سندن بهادريءَ جي ڪري نه -

(۱) روح البيان ص ۱۲۴ جلد۲ (۲) صاوي على الجلالين ص ۱۷۹ جزء ۱

تنهنجي ڪري فرمايائين "مِنۡ فَضۡلِهٖ"
علامہ اسماعيل حقي عليه الرحمه هنن لفظن جي تفسير ۾ لکيو آهي تہ: وهو شرف الشهادة والفوز بالحياة الا بدية والزلفي من الله تعالىٰ والتمتع بالنعيم المخلدعا جلا(١) يعني شهادت، ابدي حياتي ماڻڻ، رباني قرب ۽ هميشہ واري نعمت تڪڙي حاصل ڪرڻ الله تعالىٰ جو فضل آهي. وَيَسۡتَبۡشِرُوۡنَ بِالَّذِيۡنَ لَمۡ يَلۡحَقُوۡا بِهِمۡ مِّنۡ خَلۡفِهِمۡ اَلَّا خَوۡفٌ عَلَيۡهِمۡ وَلَا هُمۡ يَحۡزَنُوۡنَ" ۽ خوشيون ٿا ڪن انهن جي باري ۾ جيڪي نہ مليا آهن انهن سان سندن پويان تہ ناهي ڪو خوف انهن تي ۽ نہ اهي غمگين ٿيندا. مقصد تہ اهي شهيد ڪين مليل نعمتن تي تہ فرحتون ڪندڙ آهن پر قيامت تائين اچڻ وارن انهن مومنن پائرن لاءِ بہ خوشيون ڪن ٿا، جيڪي جهاد ڪري رهيا آهن ۽ ان جهاد ۾ ئي شهادت حاصل ڪري ساڻن شريڪ ٿيڻ وارا آهن. نہ انهن ڪي ڪو خوف آهي نہ غم.
"يَسۡتَبۡشِرُوۡنَ بِنِعۡمَةٍ مِّنَ اللّٰهِ وَفَضۡلٍ وَّاَنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيۡعُ اَجۡرَ الۡمُؤۡمِنِيۡنَ" - مطلب تہ جيئن الله تعالىٰ مجاهدن، غازين ۽ شهيدن تي مهربان آهي جو انهن جي قرباني ضايع نہ ٿو ڪري، تيئن ايمان وارن جي هر هڪ سٺي عمل جو اجر ۽ ثواب بہ ضايع نہ ٿو ڪري. جيڪو جيڪا پوک پوڪيندو اهائي لڻندو. جيئن قرآن پاڪ شهيدن جي شان ڪي کولي کولي بيان ڪيو آهي تيئن حضور صلى الله عليه وسلم جن پنهنجي احاديث پاڪ ۾ بہ شهيدن جو شان بيان ڪيو آهي. جن مان ڪجهہ هتي لکجن ٿيون.

## شهادت ۽ شهيدن جو شان نبوي حديثن مان

## حديث (١)

مسلم شريف حضرت انس رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "مَا مِنۡ نَّفۡسٍ تَمُوۡتُ لَهَا عِنۡدَاللّٰهِ خَيۡرٌ يُسِرُّهَا اَنۡ تَرۡجِعَ اِلَى الدُّنۡيَا اِلَّا الشَّهِيۡدَ فَاِنَّهٗ يُسِرُّهٗ اَنۡ يَرۡجِعَ اِلَى الدُّنۡيَا فَيُقۡتَلُ مَرَّةً اُخۡرٰى مِمَّا يَرٰى مِنۡ فَضۡلِ الشَّهَادَةِ" يعني ڪو بہ شخص جنهن جي الله وٽ ڪا نيڪي آهي مرندو آهي تہ ان کي دنيا ڏي موٽڻ پسند نہ هوندو آهي مگر شهيد جو ان کي اها ڳالهہ وڻندي آهي تہ اهو دنيا ڏي موٽي ۽ (الله تعالىٰ جي واٽ ۾) ٻيو ڀيرو قتل ڪيو وڃي، ڇو تہ اهو شهادتجي ڀلائي ڏسي ٿو.

(١) روح البيان ص ١٢٤ جلد ٢ (٢) ساڳيو حوالو

## حديث (٢)

امام احمد پنهنجي مسند ۾ حضرت ابن عباس رَضِيَ اللهُ عَنْهُمَا کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله عليه وسلم جن فرمايو "الشهداء علي بارق نهر بباب الجنة فيه قبة خضراء يخرج اليهم رزقهم من الجنة بكرة وعشية" يعني شهيد جنت جي دروازي تي چمڪارا ڪندڙ نهر تي هوندا آهن جنهن ۾ هڪ سائو قبو آهي جنهن مان شهيدن جي لاءِ صبح ۽ شام رزق نڪرندو آهي (١)

## شهيد تي ملائڪن جي پرن جي ڇانو

جڏهن حضرت جابر رضي الله عنه جي والد حضرت عبدالله انصاري رضي الله عنهما جي احد جي جنگ ۾ شهادت ٿي ۽ حضرت جابر پنهنجي شهيد پيءُ جي منهن مبارڪ کي ڏسي روئي رهيو هو تہ ٻيا اصحابي سڳورا رضي الله عنهم کيس تسلي ڏيندي روڪي رهيا هئا. پر اڃان حضور صلی الله عليه وسلم جن کيس نہ روڪيو هو نيٺ پاڻ بہ کيس روئڻ کان روڪي فرمايائون تہ" نہ روءُ" جيستائين تنهنجي والد جو جسم شهادت واري جاءِ کان نہ کنيو ويو هو تيستائين ملائڪ مٿس پنهنجن پرن سان ڇانو ڪيو بيٺا هئا؟ ان روايت کان پوءِ علامہ ابن ڪثير عليه الرحمة لکيو آهي تہ: نبوي حديثن عليٰ قائلها الصلواة والسلام جي روشنيءَ ۾ ڏسجي ٿو تہ ٻين مؤمنن جا ارواح بہ جنت جا سير ڪن ٿا پر شهيد انهن کان ائين بلند آهن جيئن زمين وارن کان تارا- شهيد خود بخود اڏامن ٿا ۽ جنت ۾ جتي وڻين وڃن ٿا، هر هڪ شهيد کي هڪ ڪتاب ڏنو ٿو وڃي جنهن ۾ لکيل آهي تہ تنهنجو پوئتي رهيل فلاڻو مائٽ فلاڻي ڏينهن ۽ فلاڻو فلاڻي ڏينهن ايندو. اها لکت ڏسي اهو شهيد ائين خوش ٿو ٿئي جيئن دنيا ۾ ڪنهن جو گم ٿيل مائٽ موٽي اچي تہ خوش ٿئي(٢)

## هڪ عظيم ۽ عجيب واقعو

حضرت امام احمد بن حنبل عليه الرحمة جو فرمان آهي تہ مون بيت الله شريف جو طواف ڪندي قاسم بن عثمان نالي هڪ شخص کي ڏٺو جيڪو دعا گهري عرض ڪري رهيو هو تہ اي منهن جا ڌڻي! تون محتاجن جا عرض قبول ڪندو آهين پر منهن جو عرض قبول نہ فرمائي. حضرت امام احمد حنبل عليه الرحمة فرمايس تہ تنهنجي ڪهڙي حاجت الله تعالیٰ پوري نہ ڪئي آهي جو ائين عرض ڪري رهيو آهين؟

(١) ابن ڪثير ص ٦٣٩ کان ٦٤٠ جلد ١ (٢) حوالو ساڳيو

چيائين تہ مان رومي ڪافرن سان مقابلي ڪرڻ واري مسلمانن جي لشڪر جو سپاهي هوس. اتي اوچتو مان ۽ ڇهہ ڄڻا ٻيا ڪافرن جي ڪنٽرول ۾ اچي وياسين ۽ انهن اسان ستن ڄڻن کي ئي شهيد ڪرڻ جو فيصلو ڪيو، مون الله تعالىٰ کان پنهنجن ڪيل گناهن جي مغفرت لاءِ دعائون ڪندي آسمان ڏانهن نهاري ڏٺم تہ ستن ئي آسمانن جا دروازا کليل ۽ هر هڪ دروازي تي هڪ جنتي حور بيٺل هئي. جڏهن ڪافرن منهنجي ساٿين کي ڪهڻ جي شروعات ڪئي ڏٺم تہ هر هڪ غازيءَ کي شهيد ٿيڻ کان پوءِ آسمان جي دروازي تي بيٺل حور پاڪر ۾ وجهيو ڪنيو ٿي ويئي جڏهن منهنجو وارو آيو تہ منهنجي ڇڏائڻ لاءِ ڪنهن سفارش ڪئي ۽ جڏهن مون کي ڇڏي ڏنائون تہ ستين حور جيڪا منهنجي انتظار ۾ بيٺل هئي تنهن مون کي مخاطب ٿي چيو تہ اي بي نصيب! توکي هن نعمت کان ڪنهن محروم ڪيو؟ (ائين چئي اها تہ هلي ويئي) پر مون کي خبر ناهي تہ هاڻي ڪهڙي حال ۾ مرندس. اها نعمت ملندي يا نہ هينئر الله تعالىٰ کي اهوئي عرض ڪري رهيو آهيان(١)

"يَسْتَبْشِرُوْنَ بِنِعْمَةٍ مِّنَ اللهِ وَفَضْلٍ وَّاَنَّ اللهَ لَايُضِيْعُ اَجْرَ الْمُؤْمِنِيْنَ" يعني اهي شهيد ٿيل ٻانها الله تعالىٰ جي نعمت ۽ مهربانيءَ تي خوشيون ڪن ٿا پر اها بہ خوشي اٿن تہ الله تعالىٰ ايمان وارن جو اجر ضايع نہ ڪندو آهي سيني کي سندن عملن جو پورو پورو بدلو تہ ڏيندو آهي پر وڌائي ڏي تہ بہ اهو ڪريم آهي ان جي خزانن ۾ ڪا ڪوٽ ناهي.

"اَلَّذِيْنَ اسْتَجَابُوْا لِلهِ وَالرَّسُوْلِ مِنْۢ بَعْدِ مَآ اَصَابَهُمُ الْقَرْحُ لِلَّذِيْنَ اَحْسَنُوْا مِنْهُمْ وَاتَّقَوْا اَجْرٌ عَظِيْمٌ" هن آيت جي شان نزول جي متعلق وڏيڪ صحيح روايت هيءَ آهي تہ جڏهن شوال مهيني جي پندرهينءَ تاريخ ڇنڇر جي ڏينهن احد واري جنگ ختم ٿي ابو سفيان ۽ سندس ساٿي مڪي پاڪ ڏانهن موٽي روحاءَ نالي هڪ مقام وٽ پهتا تہ اوچتو خيال آين تہ اسان تہ وڏي غلطي ڪئي جو ڪٽيل ميدان ائين ڇڏي هليا آيا آهيون نہ مسلمانن مان ڪي ماڻهو قيدي بڻاياسون نہ انهن جا نامور غازي شهيد ڪياسون ۽ نہ انهن جي عورتن کي ٻانهيون بڻايوسون اڃا اها سوچ ڪندي وري مديني منوره تي حملي ڪرڻ جي لاءِ تيار ٿي رهيا هئا تہ اها خبر نبي ڪريم صلى الله عليه وسلم جن وٽ پهتي ۽ پاڻ ١٦ شوال آچر جي ڏينهن اعلان ڪرايائون تہ ابو سفيان ۽ سندس ساٿين سان مقابلو ڪرڻ جي لاءِ تيار ٿيو پر صرف اهي هلن جيڪي ڪالهہ احد جي جنگ ۾ گڏ هئا انهن کان سواءِ ٻيو ڪير بہ نہ هلي ۽ نہ ڪنهن کي اجازت آهي. اهو اعلان ٻڌنديئي اهي زخمي ٿيل اصحابي رضي الله عنهم نڪرڻ لاءِ تيار ٿيا ڪن زخمن ۽ ڦٽن جي مرهم پٽي ڪرائي هئي تہ ڪي اهڙا هئا جن اڃان مرهم پٽي بہ نہ ڪرائي هئي. مگر الله ۽ ان جي رسول صلى الله عليه وسلم جن جو حڪم ٻڌنديئي جيءُ جيءُ

چوندي ان نموني سان نڪتا جو هڪ زخمي ٻئي کي ڪجهه پنڌ کلهي تي کڻي تي هليو ته ڪجهه پنڌ وري انهيءَ لهي پنهنجي ساٿيءَ کي ڪلهي تي کڻي کنيو کي ته سخت ڪمزوريءَ جي ڪري هڪ ٻئي تي ٽيڪون ڏئي ٿي هليا. ان سفر ۾ حضور صلى الله عليه وسلم جن جا ستر (٧٠) صحابي رضي الله تعالىٰ عنهم ساٿي هيا جن مان ڪجهه هي آهن. حضرت ابوبڪر،حضرت عمر، حضرت عثمان، حضرت علي، حضرت طلحه، حضرت زبير، حضرت سعد، حضرت سعيد، حضرت عبدالرحمن بن عوف، حضرت ابو عبيده بن جراح، حضرت عبدالله بن مسعود، حضرت حذيفه بن اليمان رضي الله تعالىٰ عنهم. احد جي جنگ ۾ شريڪ ٿيندڙن مان کي اهڙا اصحابي به هيا جن کي حضور صلي الله عليه وسلم جن پاڻ هن سفر ۾ شريڪ ٿيڻ کان روڪيو هو، جيئن حضرت جابر بن عبدالله رضي الله عنهماان کي پاڻ هن سفر ۾ هلڻ کان روڪيندي فرمايائون ته "ڪالهه تنهنجو والد (حضرت عبدالله رضي الله عنه) شهيد ٿيو آهي تنهنجون ست يتيم ڀينرون آهن تون اتي رهي انهن کي سنڀال" پوءِ اهو قافلو ان حالت ۾ صبح جو مديني منوره کان روانو ٿيو ۽ شام جو حمراء الاسد نالي هڪ مقام تي پهتو جيڪو گهڻن مفسرن جي قول مطابق مديني شريف کان اٺ (٨) ميل پري هو. هوڏانهن قدرتي معاملو هيئن ٿيو جو مسلمانن جي هن مختصر مگر جهاد جي جذبي سان سرشار لشڪر کي ابو سفيان جي پراڻي دوست معبد بن ابي معبد ڏٺو هو (جيڪو اجان مسلمان نه ٿيو هو) ۽ ان کي مسلمانن جي هن قربانيءَ واري جذبي تي حيرت ٿي. (اهو تيز سواريءَ تي سوار هجڻ جي ڪري مسلمانن جي لشڪر کان اڳ ۾ روحاء واري مقام وٽ پهچي ويو ۽ ڏنائين ته ابو سفيان مديني منوره تي حملي ڪرڻ جي سوچ ۾ فڪر ۾ رڌل آهي ابو سفيان پاڻهي پڇيس ته مسلمانن جي ڪا خبر چار؟ ابو معبد چيس ته" هائو. اهي اوهان سان وڙهڻ جي لاءِ مديني مان نڪري حمراء الاسد مقام وٽ پهچي ويا آهن ۽ اهڙي نموني سان اچي رهيا آهن جو مون ان نموني سان اڳي ڪو به لشڪر نه ڏٺو آهي. جيڪڏهن اوهان جو انهن سان مقابلو ٿيو ته اوهان مان ڪو به بچي نه سگهندو.اهو ٻڌي صفوان بن اميه ابو سفيان کي چيو ته هلو ته مڪي پاڪ ڏانهن موٽي هلون. نه ته اسان جو خير ناهي، ٻين سڀني به صفوان سان اتفاق ڪيو ۽ سڀئي مڪي پاڪ ڏانهن موٽي ويا.(١) هوڏانهن حضور صلى الله عليه وسلم جن ۽ اصحابى

(١) نعيمي ص ٣٧٨ جلد۴ القرطبي ص٢٧٧ جلد۴
تفسير ابن ڪثير ص٦۴٥ جلد١

سچورا سومر، اگارو، اربع بلک تفسير صاويءَ جي قول مطابق جمعي جي ڏينهن تائين اتي حمراء الاسد ۾ رهي پيا. جڏهن کو بہ ڪافر جنگ لاءِ ميدان ۾ نہ آيو تہ حضور صلی الله عليه وسلم جن ۽ سندن ساٿي الله تعالىٰ جي بارگاهہ مان صبر ۽ اجر جا ڏاج وٺي نهايت شان، شوکت، خيريت، عافيت ۽ سلامتيءَ سان موٽي مديني منوره ۾ پهتا ان موقعي تي هيءَ آيت نازل ٿي. (١)

جنهن ۾ انهن جي مدح ڪندي ٻڌايو ويو تہ اي حبيب! (صلی الله عليک وسلم) اوهان جي اصحابن مان جن سخت زخمي هجڻ جي باوجود الله ۽ اوهان جي حڪم کي قبول ڪندي احسان ۽ تقويٰ اختيار ڪئي انهن لاءِ وڏو ثواب آهي.

## فائدو

اَحۡسَنُوۡا احسان کان ورتل آهي ۽ اتقوا تقویٰ کان. هر قسم جي نيک عملن کي احسان ۽ هر قسم جي گناهن کان بچڻ کي تقويٰ سڏيو ويندو آهي. هتي احد جي غازين لاءِ اهي ٻئي لفظ آڻي ٻڌايو ويو آهي تہ اهي وڏا نيکو ڪار ۽ پرهيزگار هئا.

## فائدو

علامہ ابن ڪثير عليه الرحمۃ ابن هشام جي حوالي سان لکيو آهي تہ رسول الله صلی الله تعالیٰ عليه وسلم جن انهن ڏينهن ۾ مديني منوره جو والي ۽ عهديدار حضرت عبدالله بن ام مکتوم رضی الله تعالیٰ عنه کي بنائي ويا هئا. جنهن انهن ڏينهن ۾ سارو ڪم سنڀاليندي نبوي مسجد ۾ نمازون قائم ڪرايون هيون. (٢)

## فائدو

"لِلَّذِيۡنَ اَحۡسَنُوۡا مِنۡهُمۡ وَاتَّقَوۡا" ۾ منهم جي لفظ واري من بيانيہ آهي تبعيض جي ناهي، مقصد تہ جيڪي بہ حضور عليه الصلوٰة والسلام جن سان گڏ هئا اهي نيکو ڪار ۽ متقي هئا ۽ انهن سڀني لاءِ الله تعالیٰ وٽ بهشتي نعمتون آهن.

"اَلَّذِيۡنَ قَالَ لَهُمُ النَّاسُ اِنَّ النَّاسَ قَدۡ جَمَعُوۡا لَکُمۡ فَاخۡشَوۡهُمۡ فَزَادَهُمۡ اِيۡمَانًا وَّقَالُوۡا حَسۡبُنَا اللّٰهُ وَنِعۡمَ الۡوَکِيۡلُ" جاڻ گهرجي تہ احد جي جنگ ختم ٿيڻ وقت ابو سفيان مديني منوره کان مڪي پاڪ ڏانهن موٽندي حضور صلی الله عليه وسلم جن کي مخاطب ٿي چيو هو تہ اي محمد (صلي الله عليه وسلم) ايندڙ سال وري بدر صغريٰ نالي مقام تي اسان ۽ اوهان جو مقابلو ٿيندو، تيار رهجو، حضور صلي الله عليه وسلم

(١) حوالا ساڳيا (٢) حوالو ساڳيو

جن حضرت عمر رضي الله عنہ کي فرمايو تہ" جواب ڏيوس تہ هائو ضرور انشاءالله تعاليٰ" جڏهن نئون سال هجري ٿيو تہ ابو سفيان هڪ وڏو لشڪر وٺي مکي پاڪ کان نڪتو ۽ بدر صغري نالي مقام ڏي ويندي جڏهن مر الظهران نالي جاءِ يا عسفان نالي منزل وٽ پهتو تہ قدرتي طور سندس ۽ سندس ساٿين جي دلين ۾ مسلمانن جي اهڙي هيبت پيدا ٿي جو اڳتي هلڻ جي همت ئي نہ ٿين اجان ان کشمکش ۾ هئا تہ نعيم بن مسعود اشجعي عمره کان واپس ٿيندي ملي وين (جنهن ايمان نہ آندو هو بعد ۾ خندق جي جنگ وقت اسلام قبول کيو هئائين) ابو سفيان کانئس پڇيو تہ نعيم! کيڏانهن ٿو وڃين؟ چيائين تہ پنهنجي ڳوٺ. ابو سفيان پڇيس تہ مديني بہ ويندين؟ چيائين تہ "هائو! اتاهين تہ لنگهندس" ابو سفيان چيس تہ اسان جو جيڪڏهن هڪ ڪم ڪندين تہ توکي ڏهہ (١٠) اٺ انعام ۾ ڏينداسين. نعيم پڇيس تہ " ڪهڙو؟ ابو سفيان چيو تہ اسان گذريل سال (حضرت) محمد (صلى الله عليه وسلم )سان بدر صغرىٰ نالي مقام تي جنگ ڪرڻ جو وعدو ڪيو هو ۽ ان ئي ارادي سان اچ نڪتا بہ آهيون، پر هينئر سوچيو اٿئون تہ هيءَ وقت جنگ جي لاءِ مناسب ناهي ملڪ ۾ برساتن نہ پوڻ جي ڪري ڏڪار آهي جڏهن برساتون پونديون اٺ چري سگها ٿيندا ۽ اسين بہ ڪير پي طاقتور ٿينداسين تہ جنگ ڪري وٺنداسون پر جيڪڏهن هينئر ٿا موٽون ۽ مسلمان ميدان ۾ پهچي ويا تہ اسان جي تہ عزت ئي مٽيءَ ۾ ملي ويندي ۽ مسلمانن جا حوصلا بلند ٿيندا، ان جي ڪري توکي ٿا چئون تہ جڏهن مديني پهچين تہ مسلمانن کي ڊيڄاريندي چئجان تہ ابو سفيان وڏو لشڪر وٺي اوهان کي هميشہ ختم ڪرڻ جي لاءِ بدر صغرىٰ مقام تي پهچي ويو آهي ان جي ڪري اوهان متان وڃو. نہ تہ جيئرا نہ موٽندؤ. الغرض تہ جيئن بہ ٿي سگهي مسلمانن کي مديني منوره مان نڪرڻ نہ ڏجانءِ تانت اهي ميدان ۾ نہ پهچن ۽ اسين پنهنجو نڪرڻ مشهور ڪري ٿا چڏيون ۽ هلايون ٿا تہ اسين تہ مکي مان نڪري آيا هئاسين پر جڏهن خبر پئي تہ مسلمان نہ آيا تہ اسان جو اتي پهچڻ بي فائدو ٿيندو، ان جي ڪري مرالظهران مقام کان موٽي آيا آهيون نعيم بن مسعود چيو تہ هيءَ ڪهڙي وڏي ڳالهہ آهي؟ سڀ ڪجهہ ٿي ويندو. ابوسفيان مطمئن ٿي مکي پاڪ ڏانهن موٽيو ۽ موٽندي رستي ۾ کيس عبدالقيس قبيلي وارن جو واپاري وفد مليو جيڪو

واپار جي لاءِ مديني منوره ڏانهن وڃي رهيو هو ابو سفيان انهن کي بہ اهو سمجهايو ۽ ڪين عرب جي مشهور عڪاظہ نالي ميلي ۾ بہ ٽي اٺ ڏينھ جو وعدو ڪيو نعيم جڏهن مديني ۾ پهتو ۽ مسلمانن کي جنگ جي تياريءَ ۾ مصروف ڏٺائين تہ هڪ هڪ مسلمان سان ڳجهي ملاقات ڪري ڪين جنگ جي خطرناڪ نتيجن ڪان ڊيڄاريندي ٻڌايائين تہ مان ابو سفيان سان اهڙو زبردست لشڪر ڏسي آيو آهيان جو اوهان کي هڪدم ختم ڪري ڇڏيندو. جڏهن اهي احد جي جنگ وقت اوهان کي گهر ۾ اچي ايترو نقصان ڏئي ويا تہ پاڻ فيصلو ڪيو تہ بدر صغريٰ ۾ ڇا نہ ڪندا مسلمانن اها خبر ٻڌي ڊڄڻ جي بجاءِ الله تعالىٰ تي ڀروسو ڪندي چيو "حَسْبُنَا اللّٰهُ وَنِعْمَ الْوَكِيْلُ" اسان جي لاءِ الله ڪافي آهي ۽ اهو ڀلو ڪارساز آهي ڪافرن سان گڏ سڀ آهن اسان سان گڏ رب آهي. حضور صلى الله عليه وسلم جن پندرهن سؤ (١٥٠٠) مجاهدن جو لشڪر وٺي بدر صغريٰ نالي مقرر ڪيل ميدان ۾ پهتا ۽ ڏٺائون تہ ميدان صاف هو. اهو مقام مڪي ۽ مديني کي ملائڻ واري رستي تي آهي جتي عربن جو بني ڪنانہ نالي قبيلو رهندو هو ۽ اتي اٺ ڏينهن عربن جو ساليانو ميلو بہ لڳندو هو. اتي عرب جا سيئي قبيلا گڏ ٿيندا هئا، اتفاق سان حضور صلى الله عليه وسلم جن ۽ ساٿن گڏ اصحابن ڀلارن جي اچڻ وقت بہ اهو ميلو شروع هو مسلمانن وٽ جيڪو نقدي يا ٻيو مال هو ان کي واپار ۾ هلائي زبردست تجارت ڪري گهڻو ڪجهہ ڪمايائون ۽ ميلي ۾ اسلام جي دعوت بہ ڏنائون جنهن جي ذريعي ڪيترا قبيلا مسلمان ٿيا. اٺ ڏينهن رهڻ ڪان پوءِ مسلمان خوشيون ۽ فرحتون ڪندا ديني، دنيوي نعمتون ڪمائي ٻين کي بہ دين جي دولت سان مالا مال ڪري موٽيا. هوڏي ابو سفيان ۽ سندس واپس موٽڻ وارا ساٿي ان ميلي جي ڪري بہ گهڻو بدنام ۽ خوار ٿيا ڇو تہ سيني ميلي وارن کي خبر پئجي وئي تہ مسلمان آيا پر مڪي وارا نہ آيا خود مڪي ۾ رهڻ وارن ان لشڪر جو نالو جيش السويق (ستون کائڻ وارو لشڪر) رکيو جيڪي کائي پي موٽي آيا. ان موقعي تي هيءَ آيت نازل ٿي (١) جنهن ۾ ايمان وارن جي اطاعت، اتباع ۽ الله تعالىٰ تي توڪل جو ذڪر ڪيو ويو آهي تہ اهي ڪنهن جي ڊيڄارڻ سان ڊڄن نہ ٿا پر الله تي پورو پورو ڀروسو ڪن ٿا.

(١) تفسير نعيمي ص٣٨٥ جلد٤

"فَانْقَلَبُوْا بِنِعْمَةٍ مِّنَ اللهِ وَفَضْلٍ لَّمْ يَمْسَسْهُمْ سُوْءٌ وَّاتَّبَعُوْا رِضْوَانَ اللهِ وَاللهُ ذُوْ فَضْلٍ عَظِيْمٍ" مقصد تہ حضور صلي الله عليه وسلم جن ۽ سندن ساٿي ديني ۽ دنيوي نعمتن سان جهوليون ڀري رب العزة جل شانه ۽ ان جي پياري رسول صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن کي راضي ۽ خوش ڪري تجارتي نفعا ڪمائي ڪيترن ماڻهن کي مومن بنائي موٽيا پر ڪين ايندي ويندي ڪا بہ تڪليف نہ آئي جنگ لاءِ مقرر ڪيل ميدان ۾ رهڻ جي سهولت سان گڏ جنگ بہ ڪا نہ ٿي انهن سيني ڀلاين سان گڏ مٿن اها بہ مهرباني ٿي جو سندن هر حال ۽ هر ڪم ڪان الله تعالىٰ راضي رهيو الله تعالىٰ وڏي فضل وارو آهي جو هوڏانهن ڪافرن جي دلين ۾ ڏپ پيدا ڪيائين تہ هيڏانهن مسلمانن ۾ همت ۽ جرات وڌائي، ڪين ٻنهي جهانن جون ڀلايون نصيب ڪيائين. "اِنَّمَا ذَالِكُمُ الشَّيْطَانُ يُخَوِّفُ اَوْلِيَاءَهُ فَلَا تَخَافُوْهُمْ وَخَافُوْنِ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ" يعني شيطان پنهنجن دوستن، منافقن ۽ ڪافرن کي ڏيڄاريندو آهي اوهان ڇا لاءِ ڏڄندؤ. اوهان تہ صرف مون الله تعالىٰ کان ئي ڏڄو. جيڪڏهن مومن آهيو تہ مومن صرف الله تعالىٰ کان ئي ڏڄندو آهي.

## "حَسْبُنَا اللهُ وَنِعْمَ الْوَكِيْلُ" پڙهڻ جا فائدا

دعا جي هن پياري جملي پڙهڻ جون برڪتون ۽ ڀلايون تمام گهڻيون آهن جن مان ڪجهہ هتي لکجن ٿيون.

## حديث (١)

بخاري، نسائي، ابن ابي حاتم ۽ دلائل النبوة ۾ بيهقي حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي تہ جڏهن حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام کي باه ۾ اڇلايو ويو هو تہ "حَسْبُنَا اللهُ وَنِعْمَ الْوَكِيْلُ" چيو هيائين ۽ جڏهن حضور صلى الله عليه وسلم جن کي دشمنن جي گڏ ٿيڻ جو ٻڌايو ويو تہ پاڻ بہ "حَسْبُنَا اللهُ وَنِعْمَ الْوَكِيْلُ" پڙهيو هيائون.

## حديث (٢)

ابن مردويه حضرت ابو هريرة رضي الله عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو "اِذَا وَقَعْتُمْ فِى الْاَمْرِ الْعَظِيْمِ فَقُوْلُوْا" حَسْبُنَا اللهُ وَنِعْمَ الْوَكِيْلُ" جڏهن ڪنهن وڏي ڪم ۾ ڦٿجي وڃو تہ پوءِ "حَسْبُنَا اللهُ وَنِعْمَ

اَلْوَكِيْلُ" چوندا ڪيو.

## حديث (٣)

ابو نعيم شداد بن اوس رضي الله عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليه وسلم جن فرمايو" حَسْبِيَ اللّٰهُ وَنِعْمَ الْوَكِيْلِ اَمَانُ كُلِّ خَائِفٍ" يعني حسبي الله ونعم الوكيل پڙهڻ هر خوف واري جي لاءِ امن جو سبب آهي(١)

وَلَا يَحْزُنْكَ الَّذِيْنَ يُسَارِعُوْنَ فِي الْكُفْرِ ۚ اِنَّهُمْ لَنْ يَّضُرُّوا اللّٰهَ

۽ نہ غم ۾ وجهن توکي اهي جو ڊڪ ڊوڙ ٿا ڪن ڪفر ۾ بيشڪ اهي هرگز نہ نقصان ڏيندا الله کي

شَيْـًٔا ۗ يُرِيْدُ اللّٰهُ اَلَّا يَجْعَلَ لَهُمْ حَظًّا فِي الْاٰخِرَةِ ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ

ڪجهہ بہ- ارادو ٿو ڪري الله تہ نہ ڪري انهن لاءِ ڪو ڀاڱو آخرت ۾ ۽ انهن جي لاءِ وڏو

عَظِيْمٌ ﴿١٧٦﴾ اِنَّ الَّذِيْنَ اشْتَرَوُا الْكُفْرَ بِالْاِيْمَانِ لَنْ يَّضُرُّوا اللّٰهَ

عذاب آهي بيشڪ جن خريد ڪيو ڪفر ايمان جي بدلي هرگز نہ نقصان ڏيندا اهي الله کي ڪجهہ

شَيْـًٔا ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ﴿١٧٧﴾ وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا اَنَّمَا

بہ ۽ انهن لاءِ دردناڪ عذاب آهي ۽ هرگز نہ سمجهن ڪافر تہ تحقيق جيڪا

نُمْلِيْ لَهُمْ خَيْرٌ لِّاَنْفُسِهِمْ ۗ اِنَّمَا نُمْلِيْ لَهُمْ لِيَزْدَادُوْٓا اِثْمًا ۚ

مهلت ٿا ڏيون انهن کي ڀلي آهي انهن جي سرن لاءِ تحقيق مهلت ٿا ڏيون انهن کي تانت وڌن گناهن ۾

وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّهِيْنٌ ﴿١٧٨﴾

۽ انهن لاءِ خوار ڪندڙ عذاب آهي.

## تفسير

احد جي جنگ ۾ مسلمانن کي پهتل تڪليف ڏسي ڪيترن منافقن جو

(١) الدر المنثور ص٣٩٠ جلد٢ جزءِ ۴

ڪفر جي لاءِ ڪليل اعلان ڪرڻ، اسلام جو ظاهري نقاب جيڪو سندن اندر واري شرڪ ۽ ڪفر ڪي ڍڪيو بيٺو هو لاهي ڇڏڻ، دين جي دعوت ڏيڻ ۽ حق سمجهائڻ جي باوجود ڪافرن جو ڪفر تي پڪو رهڻ اهڙيون ڳالهيون هيون جن جي ڪري نبي ڪريم، رؤف، رحيم صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن غمگين رهندا هئا الله تعالىٰ هنن آيتن ۾ ڪين تسلي ڏيندي فرمايو ته" وَلَا يَحْزُنكَ الَّذِينَ يُسَارِعُونَ فِي الْكُفْرِ إِنَّهُمْ لَن يَضُرُّوا اللَّهَ شَيْئًا" اوهان ڪي انهن ڪافرن جو ڪفر جي لاءِ ڀڄڻ، ڊڪڻ ۽ ڊوڙڻ غمگين نه بنائي. (اهي ڪيترو به ڀڄن ڊڪن پر الله تعالىٰ کي ڪو به نقصان ڏيئي نه سگهندا. اوهان ته رحمت وارا نبي، مهربان ۽ شفيق آهيو، اوهان انهن کي حق ۽ سچ سمجهائڻ وارو فرض ادا ڪيو پر جيڪڏهن اهي پنهنجي ڪفر، عناد ۽ سرڪشيءَ تي قائم آهن ته اوهان ڪو غم نه ڪيو.

"يُرِيدُ اللَّهُ أَلَّا يَجْعَلَ لَهُمْ حَظًّا فِي الْآخِرَةِ وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ "مقصد ته الله تعالىٰ جي مرضي نه آهي ته انهن کي آخرت جي ابدي ۽ سرمدي نعمتن مان حصو ملي. ڇو ته انهن سندس محبوب عليه الصلواة والسلام جي بي قدري ڪندي ان کي گهڻو ايذايو آهي ڇاڪاڻ ته حق جو انڪار ڪيو اٿن سڌي واٽ ڇڏي ڪفر ۽ شرڪ، منافقي ۽ بڇڙائي پسند ڪئي اٿن اهي ايمان جي نور جا لائق ئي ناهن الله تعالىٰ انهن جي لاءِ آخرت ۾ ڪو به حصو نه رکيو آهي انهن جي لاءِ وڏو عذاب آهي.

"إِنَّ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الْكُفْرَ بِالْإِيمَانِ لَن يَضُرُّوا اللَّهَ شَيْئًا وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ" مطلب ته انهن کي ايمان جي دولت ملي هئي پر احد جي جنگ ۾ مسلمانن کي پهتل تڪليف ڏسي ڪافر ٿي ويا ايمان وڪڻي ڪفر خريد ڪيائون ان جي ڪري انهن جي لاءِ دردناڪ عذاب آهي، ڇو ته انهن ايماني فطرت مٽائي آهي، انهيءَ حڪم ۾ يهودي، نصاريٰ،مشرڪ ۽ منافق سڀ شامل آهن.

"وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا أَنَّمَا نُمْلِي لَهُمْ خَيْرٌ لِّأَنفُسِهِمْ إِنَّمَا نُمْلِي لَهُمْ لِيَزْدَادُوا إِثْمًا وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّهِينٌ "يعني ڪافرن کي الله تعالىٰ مال ۽ اسباب گهڻا ڏيڻ سان گڏ جيڪا مهلت ۽ ڍر ڏني هئي اها ڏسي مغرور هئا ۽ سمجهندا هئا ته جيڪڏهن اسين غلط هجون ها ته اسان کي ايتري دولت، دٻدٻو ۽ وڏيون عمريون ڪيئن ملن ها. الله تعالىٰ سندن غلط فيصلي جي ترديد ڪندي فرمايو ته: ڪافر ان مهلت ۽ ڍر کي پنهنجي لاءِ ڀلو اصل نه سمجهن اها مهلت ته صرف ان جي ڪري ملي اٿن ته ان ۾

گناهه وڌائيندا وڃن، جيئن مرن تيئن خوارڪندڙ عذاب ۾ داخل ٿيندا وڃن. مسلمان سڏائڻ وارا بي دين، جيڪي پنهنجو مال، متاع، دنيوي عزت ۽ ترقي ڏسي الله تعالىٰ جي بي فرماني ڪندا آهن انهن ڪي بہ الله تعالىٰ جي ان دير ۽ مهلت ڪي ڏسي مغرور ٿيڻ نہ گهرجي.

مَا كَانَ اللّٰهُ لِيَذَرَ الْمُؤْمِنِيْنَ عَلٰى مَآ اَنْتُمْ عَلَيْهِ حَتّٰى يَمِيْزَ

نہ آهي الله (جي شان جي لائق) تانت ڇڏي ڏي مومنن ڪي ان (حال) تي جو اوهان ان تي آهيو تانجو جدا

الْخَبِيْثَ مِنَ الطَّيِّبِ ۗ وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُطْلِعَكُمْ عَلَى الْغَيْبِ

ڪري پليد ڪي پاڪ کان ۽ نہ آهي الله (جو شان) تانت خبر ڏي اوهان ڪي غيب جي

وَلٰكِنَّ اللّٰهَ يَجْتَبِىْ مِنْ رُّسُلِهٖ مَنْ يَّشَآءُ ۖ فَاٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ ۚ

۽ پر الله برگزيدو بنائي ٿو پنهنجن رسولن مان جنهن ڪي گهري پوءِ ايمان آڻيو الله تي ۽ ان جي رسولن تي

وَاِنْ تُؤْمِنُوْا وَتَتَّقُوْا فَلَكُمْ اَجْرٌ عَظِيْمٌ ﴿١٧٩﴾

۽ جيڪڏهن ايمان آڻيندؤ ۽ پرهيزگار ٿيندؤ تہ پوءِ اوهان لاءِ ثواب وڏو آهي.

## تفسير

اسلام جي شروعات واري دور ۾ ڪيترا ماڻهو زبان سان اسلام جو اقرار ڪري مسلمانن ۾ داخل ٿيندا هئا ۽ مسلمان انهن سان ياڻرن وارو سلوڪ رکندا هئا پر اهي هر نازڪ مرحلي تي مسلمانن جي دلين ۾ خوف، هراس ۽ اندروني انتشار پيدا ڪرڻ ۽ سندن رازن کي ظاهر ڪرڻ سان ڪين انتهائي اذيتون ۽ تڪليفون ڏيندا هئا، مسلمانن ۾ گهڻي وقت تائين انهن جو ملي جلي رهڻ نهايت نامناسب هو، انهن جي متعلق الله تعالىٰ هن آيت ۾ فرمايو تہ "مَا كَانَ اللّٰهُ لِيَذَرَ الْمُؤْمِنِيْنَ عَلٰى مَآ اَنْتُمْ عَلَيْهِ حَتّٰى يَمِيْزَ الْخَبِيْثَ مِنَ الطَّيِّبِ" يعني جيئن مهلت ڏيڻ ڪافرن جي حق ۾ مقبوليت جو دليل ناهي تيئن مخلص مسلمانن کي مصيبتن ۽ ناخوشگوار واقعن جو پيش اچڻ انهن تي الله تعالىٰ جي غضب جو دليل ناهي.

اصل ڳالهہ هيئن آهي تہ الله تعالىٰ مسلمانن کي ائين منجهيل حالت ۾ ڇڏڻ نہ ٿو گهري، جيئن هن وقت تائين رهيا آهن جو ڪيترا منافق ڏوڪي طور ڪلمو پڙهي انهن ۾ مليل ٿا رهن جن جي ظاهر حال تي منافق جو لفظ ڳالهائڻ ئي ڀشڪل هو تنهنجي ڪري مناسب هو تہ اهڙا واقعا ۽ حالات سامهون آندا وڃن جن سان سچا ۽ ڪوڙا، پليد ۽ پاڪ هڪ ٻئي کان جدا ٿي بيهن. "وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُطْلِعَكُمْ عَلَي الْغَيْبِ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ يَجْتَبِىْ مِنْ رُّسُلِهٖ مَنْ يَّشَآءُ" ۽ ناهي الله (جو شان) تانت (اي عام انسانو!) اوهان کي غيب جي خبر ڏي ۽ پر الله چوندي ٿو پنهنجن رسولن مان جنهن کي گهري.

محدث ابن الجوزي عليه الرحمة" هن آيت جي شان نزول جي باري ۾ پنج قول لکيا آهن ١- هڪ تہ حضرت ابن عباس رضي الله عنهما فرمايو آهي تہ (مڪي پاڪ ۾ رهندڙ) قريشين حضور صلى الله عليه وسلم جن جي خدمت ۾ عرض ڪيو تہ: اوهان جو خيال آهي تہ جنهن اوهان جي تابعداري ڪئي اهو جنتي ۽ جنهن مخالفت ڪئي اهو جهنمي آهي تہ ڀلا ٻڌايو تہ اوهان تي ڪير ڪير ايمان آڻيندا ۽ ڪير نہ آڻيندا؟ انهنجي متعلق هيءَ آيت نازل ٿي.

٢- ٻيو ابو العاليہ سڳوري فرمايو آهي تہ: مومنن حضور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن کي عرض ڪيو هو تہ اسان کي ڪا اهڙي نشاني سمجهايو جنهن سان مؤمن ۽ منافق ۾ فرق ڪجي. انهن کي سمجهائڻ لاءِ هيءَ آيت نازل ٿي تہ هر ڪنهن جو مقام اهو ناهي جو اهو راز واريون ڳالهيون ڄاڻي اهو تہ الله تعالىٰ جو پنهنجن نبين عليهم الصلواة والسلام تي ڪرم آهي جيڪو انهن کي اهو علم عطاڪندو آهي.

٣- ٽيون سديءَ فرمايو آهي تہ جڏهن حضور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جو فرمان "عُرِضَتْ عَلَيَّ اُمَّتِىْ وَاُعْلِمْتُ مَنْ يُّؤْمِنُ بِيْ وَمَنْ يَّكْفُرُ" (منهنجي اڳيان منهنجي امت پيش ڪئي ويئي ۽ مون کي اهو علم ڏنو ويو آهي تہ ڪير مون تي ايمان آڻيندو ۽ ڪير نہ آڻيندو) منافقن ٻڌو تہ چٽرون ۽ چرچا ڪري چوڻ لڳا تہ اسين ساڻس گڏ آهيون تہ بہ ڪو نہ ٿا سڃاڻن سو اها خبر ڪين ڪيئن پوندي. انهن جي باري ۾ اها آيت نازل ٿي.

۴- چوٿون غفره جي آزاد ڪيل ٻانهي عمر جو قول آهي تہ يهودين حضور صلى الله عليه وسلم جن کان پڇيو هو تہ انهن جو حال ڪهڙو ٿيو جيڪي اوهان

تي ڪتاب نازل ٿيڻ کان اڳ ۾ مري ويا؟ انهن جي جواب ۾ هيءَ نازل ٿي.

۵- پنجون ابو سليمان دمشقيءَ جو قول آهي تہ منافق دعوىٰ ڪندا هئا تہ اسان جو ايمان بہ بين پڪن مسلمانن جهڙو آهي، الله تعالىٰ مسلمانن کي احد جي جنگ ۾ تڪليف ڏئي منافقن جي کوٽ کي ظاهر ڪري ماڻهن جي اڳيان آندو ۽ هيءَ آيت نازل فرمائي (۱) ۽ سمجهايو تہ الله تعالىٰ جي اڳيان آسان هو جو سڀني مسلمانن کي امتحان ۽ آزمائش کان سواءِ ئي منافقن جا نالا ۽ ڪم ٻڌائي ها پر سندس قدرتي حڪمت ۽ مصلحت جي تقاضا اها هئي تہ هر ڪنهن کي غيب جي ڳالهين ۽ رازن کان واقف نہ ڪري ها پنهنجن پيغمبرن عليهم الصلواة والسلام (۽ انهن جي واسطي سان سندن سچن تابعدارن، ڪاملن ولين) مان جنهن کي گهري ٿو تہ غيبي ڳالهيون ٻڌائي ٿو.

## الله تعالىٰ جي عطا سان انبياء عليهم الصلواة والسلام ۽ ڪامل ولي غيب جون ڳالهيون ڄاڻندا آهن.

ڄاڻڻ گهرجي تہ غيب اها شيءِ آهي جيڪا پنجن حواسن ۱- اک ۲- نڪ ۳- ڪن ۴- زبان ۵- ۽ هٿ سان محسوس نہ ٿئي. (۲) جيئن وحي، ملائڪ، قيامت، جنت، دوزخ ۽ خود مالڪ مٺي جي پاڪ ذات بابرڪات (۳) ۽ اهو بہ قسم آهي ۱- هڪ جنهن تي ڪو دليل قائم هجي ۲- ٻيو اهو جنهن تي ڪو بہ دليل قائم نہ هجي (۴) قرآن پاڪ ۽ حديثن مان ثابت آهي تہ ۽ الله تعالىٰ انهن غيبي شين جو علم پنهنجن پيارن نبين عليهم السلام ۽ انهن جي واسطي سان ولين کي بہ عطا ڪندو آهي. سني عالمن قرآن پاڪ ۽ حديثن مان ڪيترا دليل آڻي ان موضوع تي قلم هلايو آهي ۽ راقم بہ رب جي فضل ۽ ڪرم سان بہ چار دليل پيش ڪرڻ جي سعادت حاصل ڪري رهيو آهي.

### قرآن ڪريم مان دلائل

### دليل (۱)

الله تعالىٰ جو فرمان آهي "وَعَلَّمَ آدَمَ الْاَسْمَآءَ كُلَّهَا" ۽ آدم کي سڀئي نالا سيکاريائين (۵) هن آيت جي تفسير ۾ مفسرن لکيو آهي تہ الله تعالىٰ حضرت آدم عليه السلام کي جيڪي ٿيو ۽ جيڪو ٿيندو، معقولات، محسوسات، خيالات ۽

(۱) زاد المسير ص۵۰۹-۵۱۰ جلد ۱ (۲) تفسير بيضاوي ڪامل ص۸ (۳) ضياءُ القرآن ص۳۰ ج۱ (۴) روح البيان ص۳۲ ج۱ (۵) سورة البقره آيت ۳۱

وهمن ۾ اچڻ وارين شين جا نالا سيکارياءِ انهن شين جي ذاتين، خاصن ۽ معرفتن جو الهام ڪيو، علم جا اصول، ڪاريگرين جا قانون، اوزارن جا تفصيل ۽ انهن جي استعمال ڪرڻ جي ڪيفيت سمجهائي هئي. انهن مان ڪيتريون شيون تہ اڃان ظاهري وجود ۾ ئي نہ آيون هيون. (۱)

## دليل (۲)

"يَعْلَمُ مَا بَيْنَ اَيْدِيْهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ" ڄاڻي ٿو جيڪو سندن اڳيان ۽ سندن پويان آهي. هنن لفظن جي متعلق علامه حقيءَ لکيو آهي تہ يعلم محمد (ﷺ) ما بين ايديهم من الامور الاوليات قبل الخلائق وما خلفهم من احوال القيامة وفزع الخلق وغضب الرب (۲) يعني "حضور صلي الله عليه وسلم جن مخلوقات کان اڳيان پهرين امرن ۽ قيامت جي احوالن، خلق جي ڏپ ۽ رب جي غضب وغيره سندن پويان اچڻ وارين حالتن کي بہ ڄاڻن ٿا" علامه خازن هن آيت جي تفسير ۾ آندو آهي تہ: ماڻهو غيب جي علم مان ڪنهن شيءِ جو بہ گهيرو ڪري نہ ٿا سگهن مگر جيڪي پاڻ گهري ٿو ان جي پنهنجن رسولن عليهم الصلواة والسلام کي خبر ڏي ٿو (۳)

## دليل (۳)

"وَمَا مِنْ غَآئِبَةٍ فِي السَّمَآءِ وَالْاَرْضِ اِلَّا فِيْ كِتَابٍ مُّبِيْنٍ (۴) ۽ آسمان ۽ زمين ۾ ڪو بہ غيب نہ آهي مگر اهو بيان ڪندڙ ڪتاب ۾ آهي. مفسرن لکيو آهي تہ ان ڪتاب مان مراد لوح محفوظ آهي ان ۾ سڀ ڪجهہ لکيل آهي ۽ الله تعالیٰ جي فضل سان جن کي لوح محفوظ جي ڏسڻ وارو مقام حاصل آهي اهي اهي غيبي ڳالهيون ڄاڻندڙ آهن (۵).

# نبوي حديثن مان دلائل

## دليل (۱)

بخاري باب بدءِ الخلق ۾ حضرت عمر بن خطاب رضي الله تعالیٰ عنه

(۱) تفسير ابو السعود ص۸۴ ج۱ مدارک ص۱۳ ج۱ روح البيان ص۱۰۰ ج۱
(۲) روح البيان ص۴۰۳ ج۱ (۳) تفسير خازن ص۱۰۰ ج۱
(۴) سورة النمل آيت عـ۷۵ (۵) خزائن العرفان سنڌي ص۴۶۱

ڪان روايت آهي تہ: حضور صلی الله عليه وسلم جن اسان ۾ هڪ جاءِ تي ويهي مخلوق جي ابتداءِ ڪان بيان فرمايائون تانجو جنتي جنت ۾ ۽ جهنمي جهنم ۾ پنهنجن منزلن ۾ داخل ٿيا. جنهن ياد ڪيو ان کي ياد رهيو ۽ جنهن وساريو ان ڪان وسري ويو (١) علامہ علي قاري عليه الرحمه هن حديث جي شرح ۾ لکيو آهي تہ: پاڻ هڪ مجلس ۾ ابتداءِ ڪان انتها تائين معاش سوڌو مخلوقات جا سيئي احوال ٻڌايائون ۽ اهو سڀ ڪجهہ آسانيءَ سان هڪ مجلس ۾ ٻڌائڻ سندن وڏو معجزو آهي (٢) حضرت عمرو بن اخطب رضي الله تعالیٰ عنه ڪان روايت آهي تہ: حضور صلی الله عليه وسلم جن اسان کي فجر جي نماز پڙهائي منبر تي چڙهي خطاب فرمايو تانجو ظهر جي نماز جو وقت ٿيو پوءِ لهي ظهر جي نماز پڙهائي وري منبر تي چڙهي خطاب ڪيائون تانجو وچين نماز جو وقت آيو پوءِ منبر تان لهي وچين نماز پڙهائي وري منبر تي چڙهيا تانجو سج لهي ويو ۽ جيڪو قيامت تائين ٿيندو اهو سڀ اسان کي ٻڌايائون پوءِ اسان مان وڌيڪ علم وارو (انهن ڳالهين کي) وڌيڪ ياد ڪندڙ آهي (٣)

## دليل (٣)

مسلم شريف ۾ حضرت ثوبان رضي الله تعالیٰ عنه ڪان روايت آهي تہ رسول الله صلي الله عليه وسلم جن فرمايو: اِنَّ اللّٰهَ زَوَي لِيَ الْاَرْضَ فَرَءَيْتُ مَشَارِقَهَا وَمَغَارِبَهَا" (۴) يعني الله تعالیٰ زمين کي گڏ ڪري مون لاءِ ويجهو بنايو پوءِ مون ان جا اوڀر ۽ اولهہ ڏٺا. علامہ علي قاري عليه الرحمۃ هن حديث جي شرح ۾ لکيو آهي تہ: هن حديث مان حاصل اهو آهي تہ الله تعالیٰ سندن اڳيان زمين کي ويڙهي گڏ ڪري اهڙي نموني آندو ڄڻ هٿ جي تري سندن نظر جي آئيني ۾ نظر اچي رهي آهي. (٥)

## دليل (٣)

امام احمد ۽ ترمذيءَ هڪ ڊگهي روايت ۾ حضرت معاذ بن جبل رضي الله عنه ڪان روايت آندي آهي ان ۾ چيو تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "فَتَجَلّٰى لِيْ كُلُّ شَيْءٍ وَعَرِفْتُ" (٦) پوءِ مون لاءِ هر شيءِ روشن ٿي ۽ سڃاتيم.

(١) مشڪواة ص٥٠٦ (٢) مرقاة ص٣٢٧ جلد٥ (٣) مشڪواة ص٥٤٣
(۴) مشڪواة ص٥١٢ (٥) مشڪواة ص٧٢ (٦) مرقاة ص٣٦١ ج٥

## دليل (۴)

حضرت انس رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آهي تہ بدر جي جنگ ۾ حضور صلی الله عليه وسلم جن کافرن جي ڪسڻ وارين جاين کي مقرر ڪندي فرمايو تہ: هيءَ فلاڻي جي ڪسڻ جي جاءِ آهي پاڻ هٿ رکندا فرمائيندا ٿي ويا تہ هتي، هتي، صحابيءَ فرمايو تہ پوءِ رسول الله صلی الله عليه وسلم جن جي مقرر ڪيل جاءِ کان ڪو هڪ بہ نہ ٽڙيو (جتي پاڻ فرمايو هيائون اتيئي ڪرندا ويا)

هنن آيتن ۽ حديثن کان سواءِ ٻيا بہ ڪيترائي دلائل آهن جن مان ثابت آهي تہ الله تعالىٰ پنهنجن پيارن نبين عليهم السلام ۽ ولين کي غيب جو علم عطا ڪندو آهي پر اختصار کي نظر ۾ رکندي صرف هنن دليلن تي اڪتفا ڪجي ٿي.

وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ يَبْخَلُوْنَ بِمَآ اٰتَاهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ هُوَ

۽ هرگز نہ سمجهن اهي شخص جو بخيلي ٿا ڪن ان سان جو ڏنو انهن کي الله پنهنجي فضل سان تہ اهو

خَيْرًا لَّهُمْ ۭ بَلْ هُوَ شَرٌّ لَّهُمْ ۭ سَيُطَوَّقُوْنَ مَا بَخِلُوْا بِهٖ يَوْمَ

ڀلو آهي انهن لاءِ بلڪ اهو برو آهي انهن جي لاءِ جلد ئي ڳٽ بنائي وڌا ويندا اهو (مال) جو بخيلي ڪيائون ان سان

الْقِيَامَةِ ۭ وَلِلّٰهِ مِيْرَاثُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ

قيامت جي ڏينهن ۽ الله جي لاءِ آهي ورثو آسمان ۽ زمين جوءِ الله جيڪي ڪيو ٿا (ان جي)

خَبِيْرٌ ﴿۱۸۰﴾ لَقَدْ سَمِعَ اللّٰهُ قَوْلَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ فَقِيْرٌ وَّنَحْنُ

خبر رکندڙ آهي البتہ تحقيق ٻڌو الله چوڻ انهن جو جو چيائون تہ بيشڪ الله محتاج آهي ۽ اسين

اَغْنِيَآءُ ۘ سَنَكْتُبُ مَا قَالُوْا وَقَتْلَهُمُ الْاَنْۢبِيَآءَ بِغَيْرِ حَقٍّ ۙ وَّنَقُوْلُ

شاهوڪار آهيون جلدي لکنداسون جيڪو چيائون ۽ قتل ڪرڻ انهن جي طرفان نبين کي ناحق ۽ چونداسون

ذُوْقُوْا عَذَابَ الْحَرِيْقِ ﴿۱۸۱﴾ ذٰلِكَ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيْكُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ

تہ چکو عذاب ساڙيندڙ باهہ جو اهو ان جي ڪري آهي جو اڳ ۾ موڪليو هٿن اوهان جي ۽ بيشڪ الله

لَيۡسَ بِظَلَّامٍ لِّلۡعَبِيۡدِ ﴿١٨٢﴾

ناهي ظلم ڪندڙ ٻانهن سان.

## تفسير

هن سورة جو ابتدائي گهڻو حصو يهودين ۽ نصارن جي متعلق هو ۽ وچ ۾ خاص مناسبت جي ڪري احد جي جنگ جو ڪجهہ تفصيلي ذڪر آڻي ۽ مناسب لحاظ سان پورو ڪندي وري يهودين ۽ منافقن جي حالات ڪي بيان ڪيو ٿو وڃي، ڇو تہ گهڻا منافق بہ انهن مان ئي هيا. مٿي آيل آيت ۾ ٻڌايو ويو هو تہ پليد ڪي پاڪ ڪان جدا ڪيو ويندو ۽ اها خبر جيئن جاني، بدني جهاد سان معلوم ٿئي ٿي تيئن مالي قربانيءَ سان بہ پوي ٿي جڏهن منافق جاني جهاد سان گڏ مالي جهاد ڪان بہ پڇن ٿا تہ انهن کي تنبيه ڪرڻ جي لاءِ هيءَ آيت نازل ڪئي ويئي "وَلَا يَحۡسَبَنَّ الَّذِيۡنَ يَبۡخَلُوۡنَ بِمَا آتَاهُمُ اللّٰهُ مِنۡ فَضۡلِهٖ هُوَ خَيۡرًا لَّهُمۡ بَلۡ هُوَ شَرٌّ لَّهُمۡ" يعني جيڪي شخص الله تعالىٰ جي ڏنل فضل ۾ بخيلي ٿا ڪن. ائين نہ سمجهن تہ اهو سندن لاءِ ڀلو آهي بلڪ اهو انهن لاءِ برو آهي. سَيُطَوَّقُوۡنَ مَا بَخِلُوۡا بِهٖ يَوۡمَ الۡقِيٰمَةِ" جنهن مال جي حق ڏيڻ ۾ بخيلي ڪئي اٿن ان سان ڳچيءَ ۾ قيامت جي ڏينهن طوق پارايا ويندا. مقصد تہ اهو انهن جي لاءِ نہ ڀلو آهي نہ ان ڪي ڀلو سمجهڻ گهرجي جيڪو بہ شخص بخل ۽ حرص وغيره جهڙيون بريون خصلتون پاڻ ۾ پيدا ڪندو ۽ ان مان الله تعالىٰ جي حقن ڪي ادا نہ ڪندو ان جي لاءِ اها سزا آهي جو سندس گڏ ڪيل مال جهنم جي باهہ ۾ گرم ڪري طوق بنائي سندن ڳچيءَ ۾ وڌو ويندو. (الله تعالىٰ پناهہ ۾ رکي) قرآن ڪريم جي هنن لفظن تي اهي مسلمان توجهہ ڏين ۽ غور ڪن جيڪي الله تعالىٰ جو مقرر ڪيل فرض زڪواة ادا نہ ڪندا آهن زڪواة ادا ڪرڻ ضروري آهي. رسول الله صلى الله عليه وسلم جن زڪواة ادا نہ ڪندڙ جي لاءِ سخت سزائن جو بيان ڪيو آهي. سندن ارشادات مان ڪجهہ ارشاد هتي لکجن ٿا.

# زكواة نہ ڏيندڙن جي سزا جو بيان

## حديث(١)

امام بخاريءَ حضرت ابو هريرة رضي الله تعالىٰ عنه كان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو: مَنْ آتَاهُ اللّٰهُ مَالًا فَلَمْ يُؤَدِّ زَكَاتَهٗ مُثِّلَ لَهٗ شُجَاعٌ اَقْرَعُ لَهٗ زَبِيْبَتَانِ يُطَوَّقُهٗ يَوْمَ الْقِيَامَةِ يَاْخُذُ بِلَهْزَمَتَيْهِ ثُمَّ يَقُوْلُ اَنَا مَالُكَ اَنَا كَنْزُكَ ثُمَّ تَلَاهٰذِهِ الْاٰيَةَ (١) يعني جنهن كي الله تعالىٰ مال ڏنو ۽ ان جي زكواة ادا نہ كيائين تہ (اهو مال) هڪ گنجي نانگ جي شكل ۾ بنايو ويندو. جنهن كي ٻہ ڏند هونداءِاهو ان كي ڳچيءَ ۾ ڳٽ كري پارايو ويندو پوءِ اهو ان جي ٻنهي ڄاڙين كي وٺي ڏنگيندو ۽ چوندس تہ مان تنهنجو مال آهيان مان تنهنجو خزانو آهيان. ان كان پوءِ هيءَ آيت پڙهيائون.

## حديث(٢)

سعيد بن منصور ۽ شعب الايمان ۾ بيهقيءَ حضرت ابو درداء رضي الله عنه كان روايت آندي آهي تہ: رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو: قيامت جي ڏينهن مال جي باري ۾ الله تعالىٰ جي اطاعت كندڙ كي (پلصراط تي) آندو ويندو ۽ اهو مال سندس اڳيان هوندو. جڏهن بہ پلصراط تي لوڏو كائيندو تہ اهو مال چوندس تہ "هليو هل" تو الله تعالىٰ جو حق مون مان ادا كيو هو ان كان پوءِوري ان شخص كي پلصراط تي آندو ويندو جنهن مال جي معاملي ۾ الله تعالىٰ جي اطاعت نہ كئي هوندي ۽ اهو مال كلهن تي هوندس، جڏهن بہ پلصراط تان كسكندو ۽ (كرڻ جي قريب هوندو) تہ اهو مال چوندس. ويل پوئي مون مان الله تعالىٰ جو حق ڇو نہ ادا كيئي؟ پوءِ اهو ان حال ۾ هلندي پنهنجي لاءِ ويل ۽ هلاكت كي سڏ كندو. (٢)

## حديث (٣)

ترمذي شريف روايت كئي آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو" لَا يَدْخُلُ الْجَنَّةَ خَبٌّ وَلَا مَنَّانٌ وَلَا بَخِيْلٌ(٣) يعني ٺڳي كندڙ ۽ خيرات ڏيئي

(١) الدر المنثور ص٣٩۴ ج٢ (٢) حوالو ساڳيو
(٣) تنوير الايمان ص٥٨ پ۴

احسان ڪندڙ ۽ (زڪواة ادا نہ ڪندڙ) بخيل جنت ۾ داخل نہ ٿيندا.

## فائدو

پروڙڻ گھرجي تہ جنهن وٽ ديني علم جو ذخيرو آهي پر اهو نہ ڪنهن ڪي پڙهائي ٿو ۽ نہ ڪنهن کي پڙهائي ٿو اهو بہ هڪ قسم جو بخيل ۽ هن مذمت ۾ شامل آهي حضرت امام غزاليءَ عليه الرحمة فرمايو آهي تہ الله تعالىٰ جن ٻانهن کي خزانا ڏيندو آهي اهي ان مال ۾ خزانچيءَ جي حيثيت رکن ٿا. جن جو ڪم اهي خزانا تقسيم ڪرڻ ۽ ورهائڻ آهي جيڪڏهن اهي انهن خزانن کي الله تعالىٰ جي مسڪينن ۽ محتاج ٻانهن ۾ ورهائيندا تہ ان عهدي تي برقرار رهندا ۽ جيڪڏهن نہ ورهائيندا تہ آهستي آهستي ان عهدي تان هٽايا ويندا يا تہ سجا ٿي ويندا يا مري اهڙا ملڪيت ٻين جي حوالي ڪري ويندا (١)

"وَلِلّٰهِ مِيْرَاثُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ" يعني آسمان ۽ زمينون ۽ جو ڪجھ انهن ۾ آهي اهو الله تعالىٰ جي ملڪيت آهي. جنهن کي عطا ڪري جو ڪجھ عطا ڪري جنهن کان ڪسي جو ڪجھ ڪسي ڪير بہ ان کي مجبور ڪري، روڪي نہ ٿو سگهي" وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرٌ" ۽ جيڪي ڪيو ٿا الله ان جي پوري پوري خبر رکندڙ آهي.
جيڪي بخيل پنهنجي مال مان الله تعالىٰ جو حق زڪواة وغيره ادا نہ ٿا ڪن انهن جي بخل ۽ ڪنجوسائپ جي بہ سڀ ڪيس خبر آهي.
"لَقَدْ سَمِعَ اللّٰهُ قَوْلَ الَّذِيْنَ قَالُوْۤا اِنَّ اللّٰهَ فَقِيْرٌ وَّنَحْنُ اَغْنِيَآءُ" يقينًا الله تعالىٰ انهن جو قول ٻڌو جن چيو تہ الله محتاج آهي ۽ اسين شاهوڪار آهيون.

هڪ ڀيري حضور صلى الله عليه وسلم جن جو پيارو سهرو، غار وارو يار ۽ ساٿي حضرت ابوبڪر صديق رضي الله تعالىٰ عنه هڪ اهڙي جاءِ کان اچي لنگهيو. جتي يهودين جي ڪچهري لڳي پيئي هئي ۽ انهن ۾ فنحاص نالي هڪ يهودي مذهبي اڳواڻ بہ موجود هو. حضرت ابوبڪر صديق رضي الله تعالىٰ عنه ان کي اسلام جي دعوت ڏيندي فرمايو تہ:اي فنحاص! الله تعالىٰ جو خوف رک، مسلمان ٿيءُ چو تہ توکي توراة جي مطالعي مان معلوم آهي تہ (حضرت) محمد (مصطفىٰ صلى الله عليه وسلم جن) الله تعالىٰ جا سچا رسول آهن. فنحاص مڃڻ جي بجاءِ متڪبرانہ انداز ۾ جواب

(١) تنويرالايمان ص٥٨ جلد۴

ڏيندي چيو تہ مون کي اوهان جي الله تعاليٰ جي ڪا پرواهہ ناهي اهو تہ محتاج آهي جيڪو ٻانهن کي فرمائي ٿو تہ" مَنْ ذَالَّذِيْ يُقْرِضُ اللهَ قَرْضًا حَسَنًا " (ڪير آهي جيڪو الله تعاليٰ کي سهڻو قرض ڏيندو) قرض اهي گهرندا آهن جيڪي پين جا محتاج، تنگدست ۽ فقير هوندا آهن. پين کي وياج کان جهلي ٿو ۽ پاڻ فرمايو اٿس تہ" جيڪو منهن جي نالي تي ڏيندو مان ان کي ڏهوڻو ڏيندس وغيره وغيره. حضرت ابوبڪر صديق رضي الله تعاليٰ عنه ان جي انهن گستاخيءَ وارن لفظن کي ٻڌي سندس منهن تي سخت زور سان چماٽ هڻي فرمايو تہ جيڪڏهن اسان مسلمانن ۽ اوهان يهودين جو ناهہ وارو معاهدو نہ هجي ها تہ توکي اج قتل ڪري ڇڏيان ها فنحاص روئندي حضور صلى الله عليه وسلم جن وٽ دانهن ڪڻي آيو پاڻ صلى الله عليه وسلم جن حضرت ابوبڪر کان پڇيو تہ حضرت ابوبڪر فنحاص جا مٿيان گستاخيءَ وارا جملا ٻڌائي عرض ڪيو تہ مون ان گستاخيءَ جي ڪري ڪيس ڏک هنيو آهي. فنحاص ڦري ويو ۽ چوڻ لڳو تہ مون ائين نہ چيو آهي الله تعاليٰ حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنه جي تصديق ۽ تائيد ڪندي هي الفاظ نازل فرمايا تہ (اهي ڪيئن ٿا انڪار ڪن) الله تعاليٰ پاڻ سندن اهو چوڻ (تہ الله محتاج آهي ۽ اسين شاهوڪار آهيون) ٻڌو آهي. (۱)

" سَنَكْتُبُ مَا قَالُوْا وَقَتْلَهُمُ الْاَنْبِيَاءَ بِغَيْرِ حَقٍّ وَّنَقُوْلُ ذُوْقُوْا عَذَابَ الْحَرِيْقِ "-

مقصد تہ جيئن انهن جو چوڻ تہ الله فقير ۽ اسين شاهوڪار آهيون. الله تعاليٰ جي شان ۾ توهين ۽ تنقيص آهي تيئن سندن طرفان نبين عليهم الصلواة والسلام کي ناحق قتل (شهيد) ڪرڻ بہ انبياءِ ڪرام عليهم الصلواة والسلام جي بي حرمتي ۽ گستاخي آهي ۽ جڏهن سندن سڀ اعمال قيامت جي ڏينهن کلي سامهون ايندا تہ الله تعاليٰ کين فرمائيندو تہ باهہ جو عذاب چکو جيڪو اوهان جي عملن جي ڪري اوهان کي ملي رهيو آهي. جهڙي ڪرڻي تهڙي ڀرڻي "ذَالِكَ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيْكُمْ وَاَنَّ اللهَ لَيْسَ بِظَلَّامٍ لِّلْعَبِيْدِ" اها سزا اوهان جي هٿن سان اڳيان موڪليل عملن جي آهي ۽ الله ٻانهن لاءِ ظلم ڪندڙ ناهي. الله تعاليٰ ظلم ڪرڻ کان پاڪ آهي.

## ضروري وضاحت

جاڻڻ گهرجي تہ ڪيترا جاهل ماڻهو ڪا تڪليف ڏسي چوندا آهن تہ الله تعاليٰ ظلم ڪري ڇڏيو (معاذالله) اهڙا جملا چوڻ سخت گناهہ آهن الله تعاليٰ هن آيت

روح المعاني ص۱۴۰ جلد۲

۾ ڇڏايو آهي تہ مان ظلم کان پاڪ آهيان.

هتي ظلام جو لفظ آٽي خبردار ڪيو ويو آهي تہ وڏي مهربان، رحمٰن ۽ رحيم رب ڏانهن ٿوري ۾ ٿوري ظلم جي نسبت ڪرڻ بہ ڇڻ ان کي ظلام قرار ڏيڻ آهيءِ الله تعالىٰ هر قسم جي ظلم کان پاڪ،عدل ڪندڙ، ڏوهيءَ کي سزا ۽ نيڪو ڪار کي بهشت جا بلند مقام عطا ڪندڙ آهي.

اَلَّذِيۡنَ قَالُوۡۤا اِنَّ اللّٰهَ عَهِدَ اِلَيۡنَاۤ اَلَّا نُؤۡمِنَ لِرَسُوۡلٍ حَتّٰى يَاۡتِيَنَا

اهي (ماڻهو) جو چيائون تہ بيشڪ الله وعدو ڏنو آهي اسان کي تہ نہ ايمان آڻيون ڪنهن بہ رسول تي تانجو آڻي اسان

بِقُرۡبَانٍ تَاۡكُلُهُ النَّارُ‌ ؕ قُلۡ قَدۡ جَآءَكُمۡ رُسُلٌ مِّنۡ قَبۡلِىۡ بِالۡبَيِّنٰتِ

وٽ اهڙي قرباني جو کائي وڃي ان کي باهہ فرماءِ تہ! تحقيق آيا اوهان وٽ رسول مون کان اڳ چٽن دليلن

وَبِالَّذِىۡ قُلۡتُمۡ فَلِمَ قَتَلۡتُمُوۡهُمۡ اِنۡ كُنۡتُمۡ صٰدِقِيۡنَ ﴿۱۸۳﴾ فَاِنۡ

۽ ان (دليل) سان جو چيَو پوءِ ڇو تہ شهيد ڪيو انهن کي جيڪڏهن آهيو سچا پوءِ جيڪڏهن

كَذَّبُوۡكَ فَقَدۡ كُذِّبَ رُسُلٌ مِّنۡ قَبۡلِكَ جَآءُوۡ بِالۡبَيِّنٰتِ وَالزُّبُرِ

ڪوڙو ٺا ڇون توکي پوءِ تحقيق ڪوڙا سڏيا ويا رسول توکان اڳ آيا چٽن دليلن ۽ صحيفن

وَالۡكِتٰبِ الۡمُنِيۡرِ ﴿۱۸۴﴾

۽ روشن ڪتاب سان

## تفسير

مفسرن سڀني لکيو آهي تہ اڳين نبين عليهم الصلواة والسلام مان ڪن ڪن جي امتن لاءِ هيءُ حڪم هو تہ جيڪڏهن قرباني يا ڪا شيءِ الله تعالىٰ جي نالي ڪندا هئا يا ڪافرن سان جهاد ڪري انهن وٽان ڪو لٽ جو مال آڻيندا هئا تہ ان جي مقبوليت جي نشاني هيءُ هوندي هئي جو ان کي کليءَ طرح ميدان ۾ رکندا هئا ۽ آسمان کان باهہ اچي ان کي ساڙيندي هئي ۽ جي آسمان کان باهہ نہ ايندي هئي تہ سمجهيو ويندو هو تہ اها قرباني

قبول نہ پئي حضور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جڏهن الله تعالىٰ جو قرآن يهودين کي پڙهي ٻڌائيندي فرمايو تہ مون تي ۽ قرآن پاڪ تي ايمان آڻيو تہ اهي بهانو تلاش ڪندي چوڻ لڳا تہ اسان کان الله تعالىٰ عهد ورتو آهي تہ صرف ۽ صرف ان رسول تي ايمان آڻيون جيڪو اهڙي قرباني پيش ڪري، جڏهن تہ اوهان وٽ اها قرباني ناهي تہ اوهان تي ايمان نہ آڻينداسون. الله تعالىٰ انهن جي رد لاءِ هي آيتون نازل ڪري فرمايو تہ:

"اَلَّذِيْنَ قَالُوْا اِنَّ اللّٰهَ عَهِدَ اِلَيْنَا اَلَّا نُؤْمِنَ لِرَسُوْلٍ حَتّٰى يَاْتِيَنَا بِقُرْبَانٍ تَاْكُلُهُ النَّارُ" يعني (الله تعالىٰ انهن جو قول بہ ٻڌو آهي) جيڪي چون ٿا تہ اسان کان الله عهد ورتو آهي تہ ڪنهن بہ رسول تي تيستائين ايمان نہ آڻيون جيستائين اهڙي قرباني پيش نہ ڪري جنهن کي باهہ ساڙي ڇڏي. حالانڪ اهڙي قسم جو حڪم هر هڪ نبيءَ لاءِ نہ اڳي هو نہ هاڻي آهي. الله تعالىٰ هر هڪ نبي کي ان جي اچڻ واري دور ۽ حالات جي موافق معجزا عطا فرمايا هئا.

" قُلْ قَدْ جَآءَكُمْ رُسُلٌ مِّنْ قَبْلِيْ بِالْبَيِّنٰتِ وَبِالَّذِيْ قُلْتُمْ فَلِمَ قَتَلْتُمُوْهُمْ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ" يعني اي حبيب! (صلي الله عليک وسلم) اوهان انهن کي فرمايو تہ: ڀلا جيڪڏهن اوهان ان ڳالهہ ۾ سچا آهيو تہ پوءِ جيڪي پيغمبر سڀ‌ڳورا عليهم الصلواة والسلام اها باهہ واري ڳالهہ ۽ ٻيا معجزا بہ کڻي اوهان وٽ آيا هئا انهن کي ڇو نہ مڃيُوَ؟ بلڪ انهن کي رهندو شهيد ڪري ڇڏيُوَ. اوهان جي وڏن جا اهي غلط ڪم ۽ اوهان جو ان تي راضي رهڻ ان ڳالهہ جو دليل آهي تہ اوهان صرف هٺ، تڪبر ۽ حسد جي ڪري ايمان نہ ٿا آڻيو ۽ اوهان جي اندر وارو ڪينو اوهان کي ايمان آڻڻ کان روڪيو ويٺو آهي.

" فَاِنْ كَذَّبُوْكَ فَقَدْ كُذِّبَ رُسُلٌ مِّنْ قَبْلِكَ جَآءُوْا بِالْبَيِّنٰتِ وَالزُّبُرِ وَالْكِتٰبِ الْمُنِيْرِ "مقصد تہ ( اي حبيب! صلى الله عليک وسلم ) اوهان انهن مردودن جي ايمان نہ آڻڻ ۽ تصديق نہ ڪرڻ جي ڪري مغموم، ملول ۽ مايوس نہ ٿيو اوهان کان اڳ ۾ حضرت نوح،حضرت ابراهيم، حضرت هود، حضرت موسىٰ، حضرت عيسىٰ عليهم الصلواة والسلام جهڙا ڪيترا انبياء دنيا تي معجزا، صحيفا ۽ روشن ڪتاب کڻي آيا هئا، پر انهن کي بہ ڪوڙو چيو ويو هو اها انهن بي دينن ۽ سرڪشن جي پراڻي عادت آهي جنهن سان پاڻ کي تباهہ ۽ برباد ڪري رهيا آهن. اهي ان ڪردار سان نہ اڳين پيغمبرن جي شان، مرتبي ۽ مان کي گهٽائي سگهيا نہ اوهان جي منصب کي هيٺ ڪري سگهندا.

كُلُّ نَفْسٍ ذَآئِقَةُ الْمَوْتِ ؕ وَاِنَّمَا تُوَفَّوْنَ اُجُوْرَكُمْ يَوْمَ

هر جاندار موت چکندڙ آهي ۽ تحقيق پورو بدلو ڏنا ويندؤ پنهنجن اجرن جو قيامت جي ڏينهن پوءِ

الْقِيٰمَةِ ؕ فَمَنْ زُحْزِحَ عَنِ النَّارِ وَاُدْخِلَ الْجَنَّةَ فَقَدْ فَازَ ؕ

جيڪو پري ڪيو ويو باهه کان ۽ داخل ڪيو ويو بهشت ۾ پوءِ تحقيق ڪامياب ٿيو ۽ ناهي

وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا اِلَّا مَتَاعُ الْغُرُوْرِ ﴿١٨٥﴾ لَتُبْلَوُنَّ فِيْٓ اَمْوَالِكُمْ

حياتي دنيا جي مگر ڏوکي جو سامان البت ضرور آزمايا ويندؤ پنهنجن مالن

وَاَنْفُسِكُمْ قف وَلَتَسْمَعُنَّ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ

۽پنهنجن سرن ۾ ۽ البت ضرور ٻڌندؤ انهن کان جو ڏنا ويا ڪتاب اوهان کان اڳ ۾

وَمِنَ الَّذِيْنَ اَشْرَكُوْٓا اَذًى كَثِيْرًا ؕ وَاِنْ تَصْبِرُوْا وَتَتَّقُوْا فَاِنَّ

۽ انهن کان جو شرڪ ڪيائون ايذاءُ ڪندڙ ڳالهيون گهڻيون ۽جيڪڏهن صبر ڪندؤ ۽ پرهيزگاري ڪندؤ

ذٰلِكَ مِنْ عَزْمِ الْاُمُوْرِ ﴿١٨٦﴾

تہ پوءِ بيشڪ اها (ڳالهہ) پڪن امرن مان آهي

## تفسير

هن آيت ۾ الله تعاليٰ ۽ پياري حبيب صلی الله تعاليٰ عليه وسلم جن جي نہ مڃڻ وارن يهودين ۽ نصارن ۽ سيني منڪرن کي تنبيه ڪندي ٻڌايو ويو آهي تہ "كُلُّ نَفْسٍ ذَآئِقَةُ الْمَوْتِ" هر نفس موت چکندو. اوهان ان ڪفر ۽ عناد تي مغرور نہ ٿيو خبر تڏهن پونديو جڏهن موت کان پوءِ ان بد عمليءَ جي سزا ڪائيندئو.

"وَاِنَّمَا تُوَفَّوْنَ اُجُوْرَكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ" ۽ قيامت جي ڏينهن پنهنجن عملن جو پورو پورو حساب ڏنا ويندؤ. هن ۾ انهن مسلمانن کي بہ تسلي ڏني ويئي آهي جيڪي اسلام قبول ڪرڻ کان پوءِ پنهنجن ۽ پراون جي ظلم جو نشان بڻيا هئا تہ مايوس نہ ٿيو اهو

ڏينهن جلد اچڻ وارو آهي جنهن ۾ اوهان کي انهن تڪليفن جو پورو حساب ڏنو ويندو.

حضرت امام جعفر صادق پنهنجي والد امام محمد باقر کان ان پنهنجي والد امام زين العابدين کان ان پنهنجي والد حضرت امام حسين کان ان پنهنجي والد حضرت علي رضي الله عنهم کان روايت آندي آهي ته: جڏهن نبي ڪريم صلى الله عليه وسلم جن دنيا تان (ظاهري) رحلت ڪئي ته ڪو اچڻ وارو سندن اهلبيت سان تعزيت ڪرڻ لاءِ آيو ۽ هي آواز ڪيائين ته: اَلسَّلَامُ عَلَيْكُمْ اَهْلَ الْبَيْتِ وَرَحْمَةُ اللهِ وَبَرَكَاتُهُ كُلُّ نَفْسٍ ذَآئِقَةُ الْمَوْتِ وَاِنَّمَا تُوَفَّوْنَ اُجُوْرَكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ان فى الله عزاء من كل مصيبة وخلفا من كل هالک ودركا من كل فائت فبا لله فثقوا واياه فارجوا فان المصاب من حرم الثواب والسلام عليكم ورحمة الله وبركاته يعني اي اهل بيتو! اوهان تي سلام ۽ الله جي رحمت ۽ ان جون برڪتون آهن. هر هڪ نفس موت چکندو ۽ اوهان کي قيامت جي ڏينهن ثواب عطا ڪيو ويندو. الله تعالىٰ جي محبت ۾ هر مصيبت جي تعزيت هر هلاڪ ٿيندڙ جو عوض ۽ هر گم ٿيندڙ لاءِ پهچڻ واري شيءِ آهي. پوءِ الله تي ڀروسو ڪيو ۽ ان ۾ اميد رکو (در حقيقت) مصيبت ۾ ڦاٿل اهو آهي جيڪو ثواب کان محروم ٿيو ۽ اوهان تي سلام ۽ الله تعالى جي رحمت ۽ ان جون برڪتون آهن حضرت علي رضي الله عنه فرمايو ته: خبر اٿوَ ته اهو ڪير آهي؟ هي خضر عليه السلام آهي(١) "فَمَنْ زُحْزِحَ عَنِ النَّارِ وَاُدْخِلَ الْجَنَّةَ فَقَدْ فَازَ" پوءِ جيڪو باهه کان پري ڪيو ويو ۽ جنت ۾ داخل ڪيو ويو پوءِ يقينًا ڪامياب ٿيو. ڇو ته جنت جو ملڻ الله تعالىٰ جي وڏي نعمت آهي؟

ابن ابي حاتم حضرت ابو هريره رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي ته: رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو" موضع سوط في الجنة خير من الدنيا وما فيها -الحديث (٢) يعني جنت ۾ هڪ لڪڻ جي رکڻ جيتري جاءِ سڄيءَ دنيا ۽ جيڪي ان ۾ آهي تنهن کان ڀلي آهي.

امام احمد عبدالله بن عمرو بن العاص رضي الله عنه کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو" مَنْ اَحَبَّ اَنْ يُّزَحْزَحَ عَنِ النَّارِ وَيُدْخَلَ الْجَنَّةَ فَلْتُدْرِكْهُ مَنِيَّتُهٗ وَهُوَ يُؤْمِنُ بِاللهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَلْيَاتِ اِلَى النَّاسِ مَا يُحِبُّ اَنْ يُّؤْتٰى اِلَيْهِ (٣) يعني جيڪو (هي ڳالهه) پسند ٿو ڪري ته باهه کان بچائي جنت ۾ داخل

(١) تفسير ابن ڪثير ص٦٥٢ جلد١ (٢) الدر المنثور ص٣٩٩ ج٢ (٣) ساڳيو حوالو

ڪيو وڃي ان کي گهرجي تہ سندس موت ان حالت ۾ اچي جو ان جو الله تعالىٰ ۽ قيامت تي ايمان هجي ۽ (هيءَ ڳالهہ بہ پسند ڪري) تہ ٻين ماڻهن ڏي بہ اهو ڪجهہ اچي جيڪو پاڻ وٽ اچڻ پسند ٿو ڪري. "وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا اِلَّا مَتَاعُ الْغُرُوْرِ" يعني دنيوي، فاني، غير باقي، عارضي خوشيون، بهاريون ۽ ظاهري سينگار سڀ ڌوڪي ۾ وجهڻ واريون شيون آهن جن جي مزن، لذتن ۽ چسڪن تي مست ۽ مفتون ٿي ڪيترا نادان ۽ نالائق ماڻهو آخرت جي سفر کي وساري وهندا آهن مگر سندن اصل ڪاميابي هيءَ آهي تہ دنيوي حياتيءَ ۾ اخروي سفر جي لاءِ سوچين ۽ اهي ڪم ڪن جيڪي عذاب کان بچائي جنت ۾ پهچائين. آخرت جي عذاب ۽ پڇاڻي کان غافل ٿي دنيادار ماڻهو سمجهي ٿو تہ مون وٽ مال ،متاع،گهر ٻار،ٻنيون، ونيون، جايون،جڳهيون،نوڪر چاڪر سڀ ڪجهہ آهي ڇا جو فڪر ڪيان. پر حقيقت هيئن آهي تہ اهي عارضي ۽ ٿوري وقت لاءِ سندس آهن مرڻ کان پوءِ ڪا بہ شيءِ سندس نہ رهندي ۽ سڄو نظارو ڄڻ تہ هڪ خواب ڏنو هيائين.جيئن هڪسنڌي صالح ٻانهي فرمايو آهي تہ:

گلابي جي ڏسين ٿو گل ڳاڙها، حقيقت ۾ اٽئي سي نانگ ڪارا
جنين چسڪن ڪيو توکي چريو آ، اٽئي قاتل ڪٽا سي زهر وارا.

## فائدو

قرآن پاڪ جي فرمان" فَمَنْ زُحْزِحَ عَنِ النَّارِ وَاُدْخِلَ الْجَنَّةَ فَقَدْ فَازَ" (جيڪو باهہ کان پري ڪيو ويو ۽ جنت ۾ داخل ڪيو ويو اهو يقيناً ڪامياب ٿيو) ۾ انهن بي دينن،گمراهن صوفي هجڻ جي دعويٰ ڪندڙن، ملحدن، دين جي منڪرن جو رد آهي جيڪي چوندا آهن تہ اسان کي نہ بهشت جي طمع نہ دوزخ جو ڊپ آهي. قرآن پاڪ تہ دوزخ کان پري رهڻ ۽ جنت جي ملڻ کي ڪاميابي قرار ڏنو آهي. ها جيڪڏهن الله تعالىٰ جي ڪنهن متقي، ڪامل، ولي يا پلاري کان ڪو اهڙو ٻول نڪتو آهي تہ ان جي مراد انهن جاهلن واري نہ سمجهو انهن جو مقصد آهي تہ جنت ۽ دوزخ اصل شيون نہ آهن مؤمن جو اصلي مقصد رب جي رضا ۽ آخرت ۾ ان جو ديدار آهي پر اهو ديدار بہ جنت ۾ ئي ٿيندو ان جي ڪري اها بہ پلي آهي. اڄ جا جاهل اها معنىٰ ۽ مفهوم ذهن ۾ نہ ٽا رکن تنهن جي ڪري عبادت کان عاري هوندا آهن.

" لَتُبْلَوُنَّ فِيْٓ اَمْوَالِكُمْ وَاَنْفُسِكُمْ وَلَتَسْمَعُنَّ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ

قَبۡلِكُمۡ وَمِنَ الَّذِيۡنَ اَشۡرَكُوۡۤا اَذًى كَثِيۡرًا "يعني اوهان پنهنجن مالن ۽ جانين ۾ ضرور آزمايا ويندؤ ۽ انهن کان جيکي اوهان کان اڳ ۾ ڪتاب ڏنا ويا ۽ انهن کان جو مشرڪ بڻيا ضرور ايذائڻ واريون گهڻيون ڳالهيون ٻڌندؤ.

## شان نزول

حضرت اسامه بن زيد رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آهي ته مان هڪ ڀيري حضور صلي الله عليه وسلم جن سان سندن سواريءَ واري گڏهه تي پيلهه چڙهيل هوس. پاڻ حضرت سعد بن عباده رضي الله تعالىٰ عنه کان طبع پرسيءَ جي لاءِ سندس قبيلي بني حارث بن خزرج جي گهرن ڏانهن روانا ٿيا ۽ واٽ ويندي هڪ اهڙي جاءِ کان لنگهيا جتي مسلمان، يهودي، نصاريٰ ۽ مشرڪ گڏ ويٺا هئا. ان مجلس ۾ عبدالله بن ابي بن سلول منافق به موجود هو. (اجان ان جو پٽ مسلمان نه ٿيو هو ڇو ته ان جي مسلمان ٿيڻ کان پوءِ عبدالله جي زبان بند هوندي هئي اهو ڪيس حضور صلى الله عليه وسلم جن جي گستاخي يا بي ادبي ڪرڻ نه ڏيندو هو) حضور صلى الله عليه وسلم جن ان اجتماع کي موزون سمجهي ان ۾ موجود غير مسلمانن کي اسلام جي دعوت ڏني ۽ سندن سواريءَ واري گڏهه جي پيرن ۾ غبار ۽ ڌوڙ اڏامندي ڏسي عبدالله بن ابي پنهنجي نڪ تي ڪپڙو رکي حضور صلى الله عليه وسلم جن کي چيو ته: اوهان جون هي ڳالهيون جيڪڏهن حق هونديون ته سڻيون آهن پر اسان کي اسان جي ڪچهرين ۾ اچي نه ايذائيندا ڪيو، ها جيڪو اوهان وٽ هلي اچي ان کي ڀلي پنهنجي دين جي دعوت ڏيو. حضرت عبدالله بن رواحه جيڪو ان اجتماع ۾ موجود هو ان عرض ڪيو ته: يا رسول الله! اوهان ضرور تبليغ ڪيو اسان کي اوهان جون ڳالهيون گهڻيون پياريون ٿيون لڳن. ان تي مسلمانن ۽ ڪافرن ۾ جهيڙي جو امڪان ٿي پيو پر حضور صلى الله عليه وسلم جن ان جهيڙي کي پنهنجي تدبر، حلم ۽ عقلمنديءَ سان دفع رفع ڪري حضرت سعد بن عباده وٽ پهتا ۽ کين سمورو احوال ٻڌايائون حضرت سعد عرض ڪيو ته يا رسول الله! مديني منوره وارا عبدالله بن ابي کي پنهنجو سردار بنائي ڪيس سرداريءَ جي پڳ ٻڌرائڻ وارا هئا، پر اوهان جي تشريف آوريءَ جي ڪري ان کي اهو موقعو نه ملي سگهيو ان ساڙ ۾ ڦوائين ڪري.

ان جي متعلق هيءَ آيت نازل ٿي. (١) الله تعالىٰ مسلمانن کي متنبه ڪندي

(١) تفسير ابن ڪثير ص۶۵۴ جلد١ روح المعاني ص١۴٨ جلد٢

فرمايو ته: مديني جي غير مسلم آبادي مشرکن ۽ اهل ڪتاب کان سٺي سلوڪ جي توقع نه رکو اوهان سيني قربانين ڏيڻ سان گڏ انهن کان دل ڏکوئيندڙ، جگر ڦٽيندڙ ڳالهيون به ٻڌندؤ.

"وَاِنۡ تَصۡبِرُوۡا وَتَتَّقُوۡا فَاِنَّ ذٰلِكَ مِنۡ عَزۡمِ الۡاُمُوۡرِ" يعني انهن جي طرفان ڏنل گارين ۽ گند جو علاج صبر، پرهيزگاري ۽ مستقل مزاجي آهي جيڪا اوهان جي همت، اولوالعزم هجڻ، عظمت ۽ رفعت جي نشاني آهي.

وَاِذۡ اَخَذَ اللّٰهُ مِيۡثَاقَ الَّذِيۡنَ اُوۡتُوا الۡكِتٰبَ لَتُبَيِّنُنَّهٗ لِلنَّاسِ وَلَا

۽ (ياد ڪر) جڏهن ورتو الله وعدو انهن کان جو ڏنا ويا ڪتاب ته البت ضرور بيان ڪندؤ ان کي ماڻهن جي لاءِ ۽ نه

تَكۡتُمُوۡنَهٗ فَنَبَذُوۡهُ وَرَآءَ ظُهُوۡرِهِمۡ وَاشۡتَرَوۡا بِهٖ ثَمَنًا قَلِيۡلًا

لڪائيندؤ ان کي پوءِ اڇلايائون ان کي پويان پٺين پنهنجي ۽ خريد ڪيائون ان جي عوض ملهه ٿورو

فَبِئۡسَ مَا يَشۡتَرُوۡنَ ﴿۱۸۷﴾ لَا تَحۡسَبَنَّ الَّذِيۡنَ يَفۡرَحُوۡنَ بِمَاۤ اَتَوۡا

پوءِ بڇڙو آهي جيڪو خريد ڪن ٿا هرگز نه سمجهه انهن کي جو خوش ٿا ٿين ان تي جو ڪيائون

وَّيُحِبُّوۡنَ اَنۡ يُّحۡمَدُوۡا بِمَا لَمۡ يَفۡعَلُوۡا فَلَا تَحۡسَبَنَّهُمۡ بِمَفَازَةٍ مِّنَ

۽ پسند ٿا ڪن ته تعريف ڪيا وڃن ان ڪم تي جو نه ڪيائون پوءِ هرگز نه سمجهه انهن کي ڇٽل

الۡعَذَابِ وَلَهُمۡ عَذَابٌ اَلِيۡمٌ ﴿۱۸۸﴾ وَلِلّٰهِ مُلۡكُ السَّمٰوٰتِ وَالۡاَرۡضِ

عذاب کان ۽ انهن لاءِ دردناڪ عذاب آهي ۽ الله جي لاءِ آهي بادشاهي آسمانن ۽ زمين جي

وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَىۡءٍ قَدِيۡرٌ ﴿۱۸۹﴾

۽ الله هر شيءِ تي قادر آهي.

## تفسير

وَاِذۡ اَخَذَ اللّٰهُ کان فَبِئۡسَ مَا يَشۡتَرُوۡنَ تائين آيت سڳوريءَ ۾ علماءِ اهل

ڪتاب جي ان وعدي برخلافيءَ جو ذڪر آهي جيڪو الله تعالىٰ انهن ڪان پنهنجن پيارن پيغمبرن عليهم الصلواة والسلام جي ذريعي ۽ واسطي سان ورتو هو تہ جڏهن حضور صلى الله عليه وسلم جن توراة ۽ انجيل ۾ سندن متعلق لکيل صفتن سان موصوف ٿي جمن تہ اوهان پاڻ مٿن ايمان آڻجو ۽ ٻين کي بہ سندن سهڻا اوصاف ٻڌائي اسلام ڏانهن راغب بنائجو حسد ڪري سندن توراة ۽ انجيل ۾ لکيل صفتون نہ لڪائجو پر انهن لکيل صفتن ڏسڻ ۽ سڃاڻڻ جي باوجود بہ نہ پاڻ ايمان آنديو ۽ نہ ٻين کي ايمان جي ترغيب ڏنائون. ان وعدي کي اڇلائي، پٺي ڏيئي ويهي رهيا ۽ ان جي بدلي ۾ دنيوي، ٿورڙي، فاني ۽ عارضيءَ لالچ کي ترجيح ڏيندي لفظيءَ معنوي تحريف ڪري تباهہ ٿي ويا. جيئن اهي مال جي ظاهر ڪرڻ ۽ خرچ ڪرڻ ۾ ڪنجوس هئا تيئن حضور صلى الله عليه وسلم اخلاق، سهڻين صفتن ۽ اعلىٰ اوصاف کي بيان ڪرڻ ۽ ماڻهن تائين پهچائڻ ڪنجوس رهيا مگر ياد رکن تہ جيڪو مال وغيره انهن جاهلن، اڻ پڙهيلن کي خوش ڪندي ورتائون اهو کين لاءِ گهڻو بروءِ نقصان ڏيندڙ آهي.

## مسلمان علماء متوجه ٿين

هن آيت ۾ مسلمانن عالمن کي بہ خبردار ڪيو ويو آهي تہ اهي بہ دنيوي لالچ ۾ اچي ڪري حق نہ لڪائين ڇو تہ حق لڪائڻ وڏو گناهہ آهي جيئن هيٺ بيان ڪجي ٿو.

## نبوي حديث علىٰ قائلها الصلواة والسلام

مختلف روايتن ۾ حضور صلى الله عليه وسلم جن جو هي ارشاد آيل آهي پاڻ فرمايائون تہ "مَنْ سُئِلَ عَنْ عِلْمٍ فَكَتَمَهُ اُلْجِمَ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ بِلِجَامٍ مِّنْ نَّارٍ" (١) يعني جنهن ڪان ڪا علمي ڳالهہ پڇي وئي ۽ ان لڪائي تہ قيامت جي ڏينهن ڪيس (وات ۾) جهنم جي باهہ جو لغام ڏنو ويندو.

## حضرت امام حسن بصري عليه الرحمة جو فرمان

هڪ ڀيري مشهور ظالم حجاج بن يوسف حضرت امام حسن بصري ڏانهن قاصد موڪلي فرمايو تہ: ماڻهو مون کي اوهان جي متعلق ڇا ٻڌائي رهيا آهن؟ حضرت حسن بصريءَ عليه الرحمة ان کي چورائي موڪليو تہ: جيڪو تو وٽ پهتو آهي

(١) تفسير ابن ڪثير ص٥٥٦ ج١

اهو سڀ مون نہ ڇيو آهي ۽ جيڪو مون ڇيو آهي اهو سڀ تو وٽ نہ پهتو آهي. حجاج چورائي موڪليو تہ اوهان فرمايو ٿا تہ منافقي اڳ ۾ لڪل هئي هاڻي پڌرو ٿي، تلوار کڻي ميدان ۾ آئي آهي (حجاج ڏي اشارو هو) حضرت حسن بصريءَ فرمايو تہ هائو! حجاج ڇيو تہ توکي اهڙيون ڳالهيون ڪرڻ تي ڪنهن آندو آهي؟ اسين تہ ان کي سٺو ڪو نہ ٿا سمجهون حضرت حسن بصريءَ عليه الرحمة فرمايو تہ "الله تعالىٰ علم وارن کان وعدو ورتو هو تہ حق ضرور بيان ڪندؤ لڪائيندؤ نہ" ان جي ڪري ائين ڇيو اٿم"

## "حضرت فضيل بن عياض (عليه الرحمة) جو فرمان"

الله تعالىٰ جي هن ڪمال واري ٻانهي فرمايو آهي تہ: جيڪڏهن علم وارا پنهنجي عزت پاڻ بچائيندي، دين جو حرص رکندي، ديني علم جو احترام ڪندي، ان کي سنڀاريندي مناسب مقام ڏين ها تہ وڏا وڏا سرڪش بہ سندن اڳيان ڪنڌ جهڪائي سندن مطيع ۽ تابعدار رهن ها اسلام ۽ اهل اسلام جي عزت ان ديني علم ۾ آهي پر انهن پاڻ کي ذليل بنايو دنيا ملڻ جي ڪري دين جي پچائي نہ ڪيائون پنهنجو علم دنيوي لالچ جي ڪري دنيا دارن جي حوالي ڪيائون ان جي ڪري ذلت ۽ خواري نصيب ٿين. (۱)

## قرآن ڪريم کي پٺي ڏيئي ويهڻ حرام آهي

مٿي ذڪر ڪيل آيت جي جملي "فَنَبَذُوْهُ وَرَآءَ ظُهُوْرِهِمْ" (پوءِ ان کي پنهنجي پٺين جي پويان اڇلايائون) مان اشارة ثابت ٿيو تہ ظاهري طرح قرآن پاڪ کي پٺي ڏيئي وهڻ بہ منع ۽ بي ادبي آهي بيهقيءَ شعب الايمان ۾ عبيده مليڪيءَ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "يَا اَهْلَ الْقُرْآنِ لَا تَتَوَسَّدُوا الْقُرْآنَ وَاتْلُوْهُ حَقَّ تِلَاوَتِهٖ مِنْ آنَاءَ اللَّيْلِ وَالنَّهَارِ وَاَفْشُوْهُ وَغَنُّوْهُ وَتَدَبَّرُوْا مَا فِيْهِ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ وَلَا تَعْجَلُوْا ثَوَابَهٗ فَاِنَّ لَهٗ ثَوَابًا يعني اي قرآن پڙهڻ وارؤ! قرآن تي (وهاڻن وانگر) ٽيڪ نہ ڏيو ۽ ان جي تلاوت ائين ڪيو جيئن ان جي تلاوت جو حق آهي ۽ ان جي اشاعت ڪيو ۽ ان کي سٺي آواز سان پڙهو ۽ ان ۾ جو ڪجهہ آهي ان تي غور ڪيو تانت ڪامياب رهو ۽ ان جو ثواب (دنيا ۾ ئي) تڪڙو نہ گهرو (آخرت ۾) ان جو ثواب (وڏو) آهي. هن حديث جو شرح ڪندي علامه زڪريا ڪانڌلويءَ لکيو آهي تہ هن

(۲) تنويرالاذهان ص۳۰۲ جلد ۱

حديث ۾ جو آيو آهي ته ؟ قرآن کي وهاڻو نه بنايو" ان مان به مطلب نکرن ٿا ١- هڪ ته قرآن ڪريم تي ٽيڪ ڏيڻ بي ادبي آهي. علامه ابن حجر عليه الرحمة لکيو آهي ته قرآن پاڪ تي ٽيڪ ڏيڻ، ان ڏانهن پير ڊگها ڪرڻ، (جيئن سعودي عرب ۾ حرمين شريفين ۾ رکيل قرآن ڪريم جي الماڙين ڏانهن پير ڊگها ڪن ٿا بلڪ مون گنهگار هڪ شخص کي نبوي حرم ۾ قرآن ڪريم سان پير کي کنهندي ڏٺو کيس منع به ڪيم پر ضد تي قائم رهيو غلطي تسليم نه ڪيائين) پٺي ڏيئي وهڻ لتاڙڻ وغيره سڀ حرام آهي.

٢- ٻيو ته ان مان مراد غفلت ڪرڻ آهي جيئن قرآن ڪريم صرف خريد ڪري گهر ۾ رکيو وڃي ۽ تلاوت نه ڪيو وڃي ۽ نه ان جي مطلب ۽ مفهوم سمجهڻ جي ڪوشش ڪئي وڃي (١)

علامه رشيد رضا صاحب لکيو آهي ته جيڪي علماء بادشاهن اميرن ۽ شاهوڪارن جي بنگلن ۽ اوطاقن تي وينا آهن ۽ لالچ ۽ طمع جي ڪري حق ۽ سچ نه ٿا چون حقيقت ۾ اهي به قرآن ڪريم کي پويان اڇلائڻ ۽ ٿوري ملهه تي وڪڻڻ وارا آهن. علامه جلال الدين سيوطيءَ عليه الرحمه هن موضوع تي هڪ خاص ڪتاب"الاساطين في عدم المجيءَ الى السلاطين" لکيو آهي جنهن ۾ حضور صلى الله عليه وسلم جن جون هي حديثون ۽ الله تعالىٰ جي صالحن ٻانهن جا ارشاد آندا اٿس

## حديث (١)

عقيليءَ پنهنجي مصنف ۾، حسن بن سفيان مسند ۾، حاڪم تاريخ ۾، ابو نعيم الحلية ۾ ۽ ديلميءَ مسند الفردوس ۾ حضرت انس رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي ته اَلْعُلَمَآءُ اُمَنَآءُ الرُّسُلِ عَلٰى عِبَادِاللهِ مَالَمْ يُخَالِطُوا السُّلْطَانَ فَاِذَا فَعَلُوْا ذَالِکَ فَقَدْ خَانُوا الرُّسُلَ فَاحْذَرُوْهُمْ وَاعْتَزِلُوْهُمْ" يعني علماء الله تعالىٰ جي رسولن (عليهم الصلواة والسلام جا سندن ٻانهن تي (تيستائين) امين آهن جيستائين (پنهنجي وقت جي بادشاهه سان ميل جول نه ڪندا پر جيڪڏهن ميل جول رکيائون ته پوءِ (سمجهو ته) رسولن (عليهم الصلواة والسلام) سان خيانت ڪيائون پوءِ انهن کان ڊڄي پاسو ڪيو.

(١) فضائل القرآن ص٣٨ تبليغي نصاب سان گڏ

## حديث(۲)

ابن ماجه ۽ ابن عساڪر حضرت عبدالله بن عباس رضي الله عنهما ڪان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "اِنَّ اُنَاسًا مِّنْ اُمَّتِيْ يَتَفَقَّهُوْنَ فِي الدِّيْنِ وَيَقْرءُوْنَ الْقُرْاٰنَ وَيَقُوْلُوْنَ نَاْتِي الْاُمَرَآءِ فَنُصِيْبُ مِنْ دُنْيَاهُمْ وَنَعْتَزِلُهُمْ بِدِيْنِنَا وَلَا يَكُوْنُ ذَالِکَ کَمَا لَا يُقْتَنَي مِنَ الْقَتَادِ اِلَّا الشَّوْکُ کَذَالِکَ لَا يُجْتَنَيْ مِنْ قُرْبِهِمْ اِلَّا الْخَطَايَا" يعني بلاشڪ منهنجي امت مان ڪي اهڙا ماڻهو هوندا جيڪي ديني مسئلن ۾ ڄاڻ رکندا ۽ قرآن پڙهندا ۽ چوندا تہ اسين اميرن وٽ (ان جي لاءِ )اچون ٿا تہ انهن ڪان دنيوي فائدو وٺون ۽ ديني لحاظ سان پري رهون ۽ اهو ٿي نہ سگهندو جيئن ڪنڊن واري گاهہ مان صرف ڪنڊا ملندا آهن تيئن انهن (اميرن) جي ويجهائيءَ مان صرف گناهہ ملندا.

## حديث(۳)

محدث حاڪم تاريخ ۾ ۽ ابو الشيخ حضرت معاذ بن جبل رضي الله تعالىٰ عنه ڪان روايت آندي آهي تہ "اِذَا قَرَءَ الرَّجُلُ الْقُرْاٰنَ وَتَفَقَّهَ فِي الدِّيْنِ ثُمَّ اَتٰى بَابَ السُّلْطَانِ تَمَلُّقًا اِلَيْهِ وَطَمَعًا لِّمَا فِي يَدِهٖ خَاضَ بِقَدْرِ خُطَاهُ فِي نَارِ جَهَنَّمَ" يعني جڏهن ڪنهن مرد قرآن پڙهيو ۽ ديني مسئلن ۾ ڄاڻ وارو بڻيو ان ڪان پوءِ چاپلوسي ڪرڻ ۽ بادشاهہ جي هٿان ڪجهہ وٺڻ جي طمع خاطر ان جي دروازي تي آيو تہ جيتري قدر وکون پري آيو هوندو انهن آهر جهنم جي باهہ ۾ اونهو ويندو.

## حديث(۴)

حاڪم تاريخ ۾ ۽ ديلميءَ حضرت معاذبن جبل رضي الله تعالىٰ عنه ڪان روايت آندي آهي تہ "مَا مِنْ عَالِمٍ اَتَي صَاحِبَ سُلْطَانٍ طَوْعًا اِلَّاکَانَ شَرِيْکَهٗ فِيْ کُلِّ لَوْنٍ يُعَذَّبُ بِهٖ فِيْ نَارِ جَهَنَّمَ" يعني جيڪو بہ عالم بادشاهہ جي ساٿيءَ وٽ خوشيءَ سان ايندو تہ جنهن بہ عذاب جي قسم سان اهو بادشاهہ جو ساٿي جهنم ۾ عذاب ڪيو ويندو تہ اهو (عالم) بہ ان جو شريڪ هوندو (۱)

" فَبِئْسَ مَا يَشْتَرُوْنَ" پوءِ بڇڙو آهي جيڪو خريد ڪن ٿا." لَا تَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ ڪان وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ " تائين

(۱) تفسير المنار ص۲۸۵ ج۴

## شان نزول

علامه ابن ڪثير حضرت ابو سعيد خدريءَ رضي الله تعالىٰ عنه ڪان روايت آندي آهي ته جيڪي منافق رسول الله صلى الله عليه وسلم جن سان گڏجي جنگ تي نه ويندا هئا پر خوش ٿي چوندا هئا ته بچي وياسين جو نه وياسين ۽ جڏهن حضور ﷺ جن واپس ايندا هئا ته ڪوڙا عذر ۽ بهانا ناهي حضور صلى الله عليه وسلم جن کي مطمئن ڪرڻ جي ڪوشش ڪندي دل ۾ خواهش رکندا هئا ته سندن به ائين تعريف ڪئي وڃي جيئن جنگي جوانن ۽ مجاهدن جي. انهن جي باري ۾ هيءَ آيت نازل ٿي (١) يا ان آيت ۾ يهودين جي انهن عالمن جو ذڪر آهي جيڪي غلط مسئلا ٻڌائي رشوتون ڪائي محبوب عليه الصلواة والسلام جون توراة ۾ لکيل صفتون ۽ نشانيون عمدًا مٽائي ۽ پنهنجن انهن ڪڌن ڪرتوتن تي خوش ٿيندا هئا ته اسين ايڏا چالاڪ ۽ چالباز آهيون جو اسان کي ڪير به پڪڙي نه ٿو سگهي ۽ اها اميد رکندا ۽ ان کي پسند ڪندا هئا ته ماڻهو سندن تعريف ڪن ته وڏا عالم، ديندار، حق تي هلڻ وارا ۽ هوشيار آهن. الله تعالىٰ انهن جي لاءِ فرمايو ته "فَلَا تَحۡسَبَنَّهُمۡ بِمَفَازَةٍ مِّنَ الۡعَذَابِ" انهن کي عذاب کان ڇٽل هرگز نه سمجهو اهي انهن منافقيءَ وارن عملن جي سزا ضرور چکندا انهن لاءِ دردناڪ عذاب آهي.

## تنبيه

هن آيت ۾ ذڪر ته صرف انهن منافقن جو آهي پر سبق سيني مسلمانن جي لاءِ آهي، ديني خدمتون نه ڪرڻ، هروڀرو پنهنجي تعريف ڪرائڻ ۽پاڻ پڏائڻ اهڙيون بريون شيون آهن جيڪو به انهن ۾ ڦاسندو ان جو اهوئي حال ٿيندو جيڪو قرآن ڪريم بيان فرمايو آهي. هن وقت ڪيترن صالحن، بزرگن، پيرنءِ ناميارن عالمن جا پٽ ۽ پوٽا به ان چڪر ۾ آهن پاڻ ڪو به صالح عمل ڪرڻ جي لاءِ تيار ناهن ڪين جيڪو مريدن ۽ معتقدن جو نهيل حلقو ملي ويو آهي انهن کي وڏن جون ڳالهيون ٻڌايو، ڦاسايو، ڦريو لٽيوتباهه ڪيو وڃنا آهن.

قرآن ڪريم جي فرمان جي روشنيءَ ۾ رياءِ، فخر ۽ ڏيکاءَ لاءِ پنهنجي تعريف ڪرائڻ حرام ۽ تعريف ڪرائيندڙ بيوقوف آهي.

(١) تفسير ابن ڪثير ص٦٥٦ج١

# اصحابن سڳورن ۾ آخرت جي سوچ ۽ فکر

محدث ابن مردويه روايت آندي آهي تہ: هڪ ڀيري حضرت ثابت بن قيس انصاريءَ رضي الله تعالىٰ عنه رسول الله صلى الله عليه وسلم جن جي خدمت ۾ عرض ڪيو تہ يا رسول الله! مون کي ڊپ ٿو ٿئي تہ متان هلاڪ ٿي وڃان، حضور عليه الصلواة والسلام جن فرمايو تہ"ڇو" عرض ڪيائين تہ ٽن وجهن جي ڪري ١- هڪ تہ الله تعالىٰ منع فرمائي ٿو تہ جيڪو ڪم ڪنهن ڪيو ناهي ان تي تعريف ڪرائڻ جي خواهش نہ رکي. ۽ مان اها خواهش رکان ٿو ٢- ٻيو تہ پنهنجي پاڻ کي ڀلو ۽ سٺو سمجهڻ منع آهي ۽ مان پنهنجي حسن کي پسند ٿو ڪيان.٣- ٽيون تہ اوهان جي آواز کان آواز مٿي ڪرڻ منع آهي ۽ منهن جو قدرتي ۽ پيدائشي طرح آوازا وڏو آهي.

پاڻ (ڪيس تسلي ڏيندي) فرمايائون تہ"اَمَا تَرْضٰى اَنْ تَعِيْشَ حَمِيْدًا وَّتُقْتَلَ شَهِيْدًا وَّتَدْخُلَ الْجَنَّةَ" ڇا تون راضي ناهين جو زندگي ساراهيل گذارين ۽ (الله جي واٽ ۾) شهيد ڪيو وڃين ۽ جنت ۾ داخل ٿين؟ عرض ڪيائين تہ هائو، راويءَ جو بيان آهي تہ پوءِ حضرت ثابت بن قيس زندگي سهڻي گذاري ۽ مسليمہ ڪذاب سان جنگ ۾ شهيد ڪيو ويو (١)

"وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ" يعني آسمان ۽ زمين ۽ جو ڪجهہ انهن ۾ آهي سڀ الله جي بادشاهي ۽ ان جي ملڪيت آهي ۽ الله تعالىٰ هر شيءِ تي قادر ۽ مضبوط ڪنٽرول رکندڙ آهي مٿي ذڪر ڪيل ماڻهن جي عذاب ڪرڻ کان بہ ڪير ڪيس روڪي نہ ٿو سگهي ۽ نہ سختيءَ سان ڪو ڪيس جهليندو. پاڻ مطلق شهنشاهہ آهي ڪو بہ مجرم نہ ان جي بادشاهيءَ کان بچي سگهندو نہ سندس سلطنت کان ٻاهر وڃي سگهندو سندس قوت، قدرت ۽ اختيار هر جاءِ تي جاري آهي.

اِنَّ فِيْ خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَاخْتِلَافِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ

بيشڪ پيدا ڪرڻ آسمانن ۽ زمين جي ۾ ۽ ڦرڻ رات ۽ ڏينهن جي ۾

لَاٰيٰتٍ لِّاُولِي الْاَلْبَابِ ﴿١٩٠﴾ الَّذِيْنَ يَذْكُرُوْنَ اللّٰهَ قِيٰمًا وَّقُعُوْدًا

البت نشانيون آهن سمجهدارن جي لاءِ جيڪي ياد ٿا ڪن الله کي بيٺي ۽ ويٺي

(١) الدر المنثور ص٤٠٦ جلد٢

وَّعَلٰى جُنُوْبِهِمْ وَيَتَفَكَّرُوْنَ فِىْ خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۚ رَبَّنَا

۽ پنهنجن پاسن تي ۽ فکر ڪن ٿا پيدا ڪرڻ آسمانن ۽ زمين جي ۾ ته اي اسان جا رب!

مَا خَلَقْتَ هٰذَا بَاطِلًا ۚ سُبْحٰنَكَ فَقِنَا عَذَابَ النَّارِ ﴿١٩١﴾ رَبَّنَآ

نه پيدا ڪيئي هن کي اجايو پاڪائي تنهنجي پوءِ بچاءِ اسان کي عذاب باهه جي کان اي اسان جا رب!

اِنَّكَ مَنْ تُدْخِلِ النَّارَ فَقَدْ اَخْزَيْتَهٗ ۭ وَمَا لِلظّٰلِمِيْنَ مِنْ

بيشڪ تو جنهن کي به داخل ڪيئي باهه ۾ پوءِ تحقيق خوار ڪيئي ان کي ۽ ناهن ظالمن جا ڪي

اَنْصَارٍ ﴿١٩٢﴾ رَبَّنَآ اِنَّنَا سَمِعْنَا مُنَادِيًا يُّنَادِيْ لِلْاِيْمَانِ اَنْ اٰمِنُوْا

مددگار اي اسان جا رب! بيشڪ اسان ٻڌوسون سڏيندڙ کان جو سڏي پيو ايمان آڻڻ جي لاءِ ته ايمان آڻيو

بِرَبِّكُمْ فَاٰمَنَّا ڰ رَبَّنَا فَاغْفِرْ لَنَا ذُنُوْبَنَا وَكَفِّرْ عَنَّا سَيِّاٰتِنَا

پنهنجي رب تي پوءِ ايمان آندوسون اي اسان جا رب. پوءِ بخش ڪر اسان کي گناهه اسان جا ۽ ميٽي ڇڏ اسان کان برايون اسان جون

وَتَوَفَّنَا مَعَ الْاَبْرَارِ ﴿١٩٣﴾ رَبَّنَا وَاٰتِنَا مَا وَعَدْتَّنَا عَلٰى رُسُلِكَ وَلَا

۽ وفات ڪر اسان کي نيڪن سان گڏ اي اسان جا رب! ۽ ڏي اسان کي جيڪو وعدو ڪيو هئي اسان سان پنهنجن رسولن جي هٿان ۽ نه

تُخْزِنَا يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ۭ اِنَّكَ لَا تُخْلِفُ الْمِيْعَادَ ﴿١٩٤﴾ فَاسْتَجَابَ

خوار ڪر اسان کي قيامت جي ڏينهن بيشڪ تون نه ٿو مخالفت ڪرين وعدي جي پوءِ قبول ڪيائين

لَهُمْ رَبُّهُمْ اَنِّىْ لَآ اُضِيْعُ عَمَلَ عَامِلٍ مِّنْكُمْ مِّنْ ذَكَرٍ اَوْ

انهن جي لاءِ رب سندن (دعا) ته بيشڪ مان نه ٿو ضايع ڪيان عمل ڪنهن به عمل ڪندڙ جو اوهان مان مرد هجي يا

اُنْثٰى ۚ بَعْضُكُمْ مِّنْۢ بَعْضٍ ۚ فَالَّذِيْنَ هَاجَرُوْا وَاُخْرِجُوْا مِنْ

عورت هڪ ٻئي مان آهيو پوءِ اهي شخص جو هجرت ڪيائون ۽ ڪڍيا ويا

دِيَارِهِمْ وَاُوْذُوْا فِىْ سَبِيْلِىْ وَقٰتَلُوْا وَقُتِلُوْا لَاُكَفِّرَنَّ عَنْهُمْ

گهرن پنهنجن مان ۽ ايذايا ويا منهنجيءَ واٽ ۾ ۽ وڙهيا ۽ ڪٺا ويا البت ضرور ميٽي ڇڏيندس انهن ڪان

سَيِّاٰتِهِمْ وَلَاُدْخِلَنَّهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ ثَوَابًا مِّنْ

برايون انهن جون ۽ البت ضرور داخل ڪندس انهن کي بهشتن ۾ جو وهن ٿيون هيٺان انهن جي نهرون ثواب هوندو

عِنْدِاللّٰهِ وَاللّٰهُ عِنْدَهٗ حُسْنُ الثَّوَابِ ﴿١٩٥﴾

الله وٽان ۽ الله وٽ سهڻو ثواب آهي.

## تفسير

" اِنَّ فِيْ خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَاخْتِلَافِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ لَاٰيٰتٍ لِّاُولِي الْاَلْبَابِ" يعني آسمانن جي بلنديءَ ۽ وسعت، زمين جي هيٺ هجڻ ۽ ڪثافت، آسماني تارن،سيارن، زمين تي موجود جبلن، سمندن، ميدانن وڻن، سلن، پوڪن، ميون، حيوانن، ڪاٺين، مختلف شين جي مختلف رنگن، ذائقن، خوشبوين،خواصن، راتين ۽ ڏينهن جي ڦير ڦار، ننڍي وڏي ۽ ڪڏهن برابر ٿيڻ ۾ انهن شخصن جي لاءِ جن جا عقل پورا، صاف ۽ حقيقتن کي سمجهڻ وارا آهن الله تعالىٰ جي قدرت جون اهڙيون وڏيون نشانيون آهن جو انهن تي غور ڪرڻ وارو بنا دير جي الله تعالىٰ ۽ ان جي رسول عليه الصلواة والسلام تي ايمان آڻيندو. سندس قدرت جا نظارا عجيب آهن. اوهان هڪ وڻ جي پن کي هٿ ۾ کڻو، ان جي تيار ٿيڻ ۾ غور ڪيو ته اوهان کي ان جي وچ ۾ انسان جي نبض وانگر هڪ ٿلهي تند نظر ايندي جنهن مان ننهي پاسن ڏانهن تمام سنهيون سنهيون تندون ٽڙيل ۽ پکڙيل نظر ايندون جن کي ڏسي حيرت تي لڳي ته ڪتان ٿيون نڪرن ۽ ڪيڏانهن ٿيون وڃن اهو پڻ الله تعالىٰ جي قدرت ۽ ڪاريگريءَ جو ڪمال آهي اهو ته هڪ ٽاريءَ سان ۽ اها هڪ ڏار سان ۽ اهو هڪ ٽڙ سان ۽ اهو پاڙن سان واسطو رکي ٿو، جيڪي زمين مان پاڻي چڪي ٽڙ ۾ آڻين ٿيون ۽ اتاهين سيني ڏارن، ٽارين ۽ پنن ۾ پاڻي پهچي ٿو. ان هڪ پن ۾ غور ڪرڻ سان ئي انساني عقل حيرت ۾ اچي ٿو. آسماني تارن ۾ نظر ڪيو ته ڪي ننڍا،ڪي وڏا، ڪي اوپر ته ڪي اولهه، ڪي ايرڻ جي تيارين ۾ ته ڪي لهڻ جي،ڪي وچونءَ جي شڪل ۾ ته ڪي شينهن جي صورت ۾ نظر اچن ٿا اهڙي طرح حيوانات، جمادات، نباتات جا هزارين قسم آهن جيڪي عقل وارن لاءِ الله تعالىٰ جي وجود، وحدانيت ۽ هيڪڙائيءَ جو دليل ۽ حجت آهن.

" اَلَّذِيْنَ يَذْكُرُوْنَ اللهَ قِيَامًا وَّقُعُوْدًا وَّعَلٰى جُنُوْبِهِمْ " علامه رشيد رضا صاحب هن آيت جي تفسير ۾ لکيو آهي تہ: والذكر في الاية علىٰ عمومه لا يخص بالصلواة والمراد به ذكر القلوب وهو احضار الله تعالىٰ في النفس وتذكر حكمه وفضله ونعمه فى حال القيام والقعود والاضطجاع وهذه الحالات لا يخلوا العبد عنها وتكون فيها السموات والارض معه لا يتفارقان والايات الالهية لا تظهر من السموات والارض الا لاهل الذكر (١) يعني هن آيت ۾ جنهن ذکر جو بيان آهي اهو ذکر عام آهي صرف نماز سان مخصوص ناهي ۽ ان مان مراد دلين جو ذکر آهي ۽ اهو الله تعالىٰ کي پنهنجي وجود ۾ حاضر سمجهڻ ۽ سندس حکمتن، فضل ۽ نعمتن کي بيهڻ،وهڻ ۽ليٽڻ جي حالت ۾ ياد ڪرڻ آهي ۽ کو بہ ٻانهو ان ٽنهي حالتن کان خالي ناهي انهن ۾ آسمان ۽ زمين ان سان گڏ آهن ان کان جدا نہ ٿا ٿين ۽ آسمانن ۽ زمين مان قدرتي نشانيون بہ صرف ذکر وارن جي لاءِ ظاهر ٿينديون آهن.

علامه ثناء الله پاني پتيءَ عليه الرحمة لکيو آهي تہ المراد بها عند عامة المفسرين المداومة علي الذكر في عموم الاحوال- يعني عام مفسرن وٽ هن آيت ۾ بيان ٿيل ذکر مان مراد ان تي هر حال ۾ هميشگي ڪرڻ آهي. ابن ابي شيبه ۽ طبرانيءَ حضرت معاذ رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو " مَنْ اَحَبَّ اَنْ يَّرْتَعَ فِيْ رِيَاضِ الْجَنَّةِ فَلْيُكْثِرْ ذِكْرَ اللهِ " يعني جنهن کي محبت آهي تہ جنت جي باغن مان کائي اهو الله جو ذکر گهڻو ڪري (٢)

"وَيَتَفَكَّرُوْنَ فِيْ خَلْقِ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ " ۽ آسمانن ۽ زمين جي پيدا ڪرڻ ۾ فکر ٿا ڪن. ڪائنات جي مظهرن ۾ غور ۽ تدبر ڪرڻ پلي شيءِ آهي. مفسر بيضاويءَ لکيو آهي تہ وهو افضل العبادات (٣) يعني فکر عبادت ۾ پلي عبادت آهي. جيئن هنن حديثن ۾ آهن.

## حديث (ا)

ابن حبان الضعفاءِ ۾، بيهقيءَ شعب الايمان ۾، عاصم بن ضمرة کان روايت آندي آهي تہ حضرت علي رضي الله تعالىٰ عنه پنهنجي فرزند حضرت امام حسن رضي الله تعالىٰ عنہ کي فرمايو تہ مون رسول الله صلى الله عليه وسلم جن کان

(١) المنار ص٢٩٨ ج٢ (٢) المظهري ص١٨٧ج٢
(٣) تفسير بيضاوي كامل ص١٠٠

ٻڌو پاڻ فرمايائون تہ " لَا مَالَ اَعْوَزَ مِنَ الْعَقْلِ وَلَا فَقْرَ اَشَدَّ مِنَ الْجَهْلِ وَلَا عَقْلَ كَالتَّدْبِيْرِ وَلَا وَرَعَ كَحُسْنِ الْخُلُقِ وَلَا عِبَادَةَ كَالتَّفَكُّرِ (١) يعني عقل کان وڌيڪ ڪو مال ناهي ۽ جاهل هجڻ کان وڌيڪ ڪا سچائي ناهي ۽ تدبير کان وڌيڪ ڪا دانائي ناهي ۽ سهڻي اخلاق کان وڌيڪ ڪا پرهيزگاري ناهي ۽ فڪر کان وڌيڪ ڪا عبادت ناهي .

## حديث (٢)

ابو الشيخ، ابن حبان ۽ ثعلبيءَ حضرت ابو هريرة رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو " بَيْنَمَا رَجُلٌ مُسْتَلْقٍ عَلٰى فِرَاشِهٖ اِذْ رَفَعَ رَأْسَهٗ فَنَظَرَ اِلَى السَّمَآءِ وَالنُّجُوْمِ فَقَالَ اَشْهَدُ اَنَّ لَكَ رَبًّا وَّخَالِقًا اَللّٰهُمَّ اغْفِرْلِيْ فَنَظَرَ اللّٰهُ اِلَيْهِ فَغَفَرَ لَهٗ " (٢) يعني ڪو مرد پنهنجي بستري تي ليٽيل هئو مٿي ڪٽي آسمان ۽ تارن ڏانهن نهاري پوءِ چوي ٿو تہ مان شاهدي ٿو ڏيان تہ بيشڪ تون رب ۽ خالق آهين اي الله! مون کي بخش ڪر تہ الله ان ڏانهن نگاهہ (ڪرم) ڪري ان کي بخشي ٿو ڇڏي. ڪائنات جي مظهرن ۾ غور ۽ تدبر ڪرڻ تمام پلي عبادت آهي جيئن مٿين روايتن مان ثابت ٿيو پر اڄ جا مسلمان ان طرف متوجہ ناهن. ساري ڪائنات ۾ مؤمن ۽ غير مؤمن جي نظر ڦري ٿي پر سندن تحقيق ۾ هڪ بنيادي فرق هي آهي تہ مؤمن جڏهن ڪائنات جي ننڍيءَ يا وڏيءَ شيءِ کي ڏسي ٿو تہ ان جي حيران ڪندڙ تاثيرات ۽ عجيب مضمرات ۾ بيهي نہ ٿو رهي پر سندس نگاهہ مخلوقات کان وڌي خالق ڏانهن ويندي آهي ۽ غير مؤمن ان مشاهدات جي رونق ۽ چمڪ ۾ ڦاسي بيهي ٿو رهي. انهن جي ناهيندڙ جي عظمت، جلالت، علم، قدرت، مشيت ۽ حڪمت ڏانهن نہ ٿو وڃي اهو انهن شين جي مسخر ۽ هٿ ۾ وجهڻ مان مادي ترقيءَ کي تہ ڪمال جي معراج تي پهچائي ٿو پر سندس يقين جو ڏيو روشن نہ ٿو ٿئي، ان جي دل جي دنيا اڄان بہ انڌيري ۾ آهي ڪهڙو نہ پلو ٿئي جو مسلمان طالب علم قرآن پاڪ جي هن آيت مان سائنس ۽ طبيعيات جي علوم جو مطالعو ڪن تانت جيئن سندن محنتن سان ملت جو ظاهر روشن ٿئي ٿو تيئن سندن باطن بہ سوين سجن وانگر چمڪندڙ بنجي وڃي.

## پيارن ولين جا فڪر جي لاءِ فرمان

١- حضرت حسن بصري عليه الرحمة جو فرمان آهي تہ الله تعالىٰ جي

(١) الفتح السماوي في تخريج احاديث البيضاوي ص۴٧٣ جلد١
(٢) تفسير مظهري ص١٨٧ جلد٢

مخلوق ۾ هڪ گهڙي فڪر ڪرڻ سڄي رات بيهي عبادت ڪرڻ کان وڌيڪ آهي.

۲- حضرت فضيل بن عياض عليه الرحمة جو فرمان آهي فڪر هڪ آئينو آهي جيڪو توکي تنهنجون ڀلايون ۽ برايون ڏيکاري ٿو.

۳- حضرت سفيان بن عيينه عليه الرحمة جو فرمان آهي فڪر هڪ نور آهي جيڪو تنهنجي دل ۾ داخل ٿئي ٿو

## سيدنا عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جو فرمان

ان ماڻهو لاءِ بشارت آهي جنهنجي گفتگو نصيحت، ماٺ ڪرڻ فڪر ۽ نگاهه عبرت آهي.

## حضرت لقمان عليه الرضوان جا فرمان

### فرمان [۱]

الله تعالىٰ جي هن مقبول ۽ پياري ٻانهي فرمايو ته گهڻي گوشه نشيني فڪر جي لاءِ وڌيڪ موقعو مهيا ڪندڙ ۽ جنتي دروازن ڏانهن ويندڙ واٽن جو دليل آهي.

### فرمان(۲)

اي ضعيف انسان!! جتي به هجين الله تعالىٰ کان ڊڄ، زمين ۾ پاڻ کي ضعيف سمجهه مسجدن ۾ گهر وانگر گهڻو وقت ويهندو ڪر، اکين کي روئڻ، جسم کي صبر ۽ قلب کي فڪر سيکار، صبحاڻي جي رزق جي ڳڻتي نه ڪر(۱)

### فائدو

الله تعالىٰ جي مخلوقات ۾ فڪر ڪرڻ سٺي شيءِ آهي ڇو ته فڪر ۽ تفڪر جي معنىٰ غور ڪرڻ ۽ ڪنهن شيءِ جي حقيقت تائين پهچڻ جي ڪوشش ڪرڻ آهي. جيڪو مخلوق ۾ ئي ممڪن آهي. خالق جي ذات ۾ فڪر ڪرڻ کان منع آيل آهي، ڇو ته خالق جي حقيقت تائين پهچڻ ناممڪن آهي ابو الشيخ ڪتاب العظمة ۾ حضرت ابن عباس رضي الله عنه کان روايت آندي آهي ته: تَفَكَّرُوْا فِيْ كُلِّ شَيْءٍ وَلَا تَفَكَّرُوْا فِي ذَاتِ اللهِ تَعَالىٰ فَاِنَّ بَيْنَ السَّمَاءِ السَّابِعَةِ اِلَي كُرْسِيِّهٖ سَبْعَةُ اٰلَافِ نُوْرٍ وَهُوَ فَوْقَ ذَالِكَ (۲) يعني هر شيءِ ۾ فڪر هلايو ۽ الله جي ذات ۾ فڪر نه هلايو ڇو ته ستين آسمان ۽ سندس ڪرسيءَ جي وچ ۾ ست(۷) هزار نور آهن ۽ پاڻ انهن کان مٿي آهي الله تعالىٰ

(۱) تنوير الاذهان ص۳۰۴ جلد۱ (۲) تفسير مظهري ص۱۸۸ ج۲

جي ذات ۽ صفات جو ادراڪ انسان جي عقل کان گهڻو بلند آهي. "رَبَّنَا مَا خَلَقْتَ هٰذَا بَاطِلًا سُبْحَانَكَ فَقِنَا عَذَابَ النَّارِ" يعني عقلمند ٻانها ذڪر ۽ فڪر ڪرڻ وارا حقيقي مالڪ ۽ خالق ڏي متوجهه ٿي چون ٿا ته هي عظيم الشان ڪارخانو بي فائدو ۽ اجايو پيدا ڪيل ناهي جنهن جو ڪو مقصد ئي نه هجي يقينًا ان عجيب ۽ غريب حڪمت وارن انتظامن جو سلسلو ڪنهن وڏي نتيجي تي پهچندو. سندن ذهن دنيوي موجوده زندگيءَ کان اخروي حالات ڏي وڏي ويو ۽ ايزدي بارگاهه ۾ عرض ڪرڻ لڳا ته: اي رب! اسان کي باهه جي عذاب کان بچاءِ.

**فائدو:** ذڪر، فڪر ۽ آخرت ۾ باهه جي عذاب کان بچاءِ واريءَ دعا جي وچ ۾ "سبحانڪ" آڻي تسبيح ۽ پاڪائي بيان ڪري اشارو ڪيو ويو آهي ته جيڪڏهن ڪو احمق، نادان تنهنجي ڪامل قدرت جا اهڙا صاف ۽ چٽا نشان ڏسي به ايمان نه آڻي ۽ تنهنجي شان کي نه سڃاڻي يا تنهنجي شان کي گهٽائڻ جي ڪوشش ڪري ۽ جهان جي ڪارخانن کي اجايو سمجهي ته تنهنجي بي نياز بارگاهه سندس سيني اجاين سوچن ۽ خيالن کان پاڪ آهي. حضرت عطاءِ بن ابي رباح تابعي کان روايت آهي ته مون ام المؤمنين عائشه رضي الله عنها کان پڇيو ته مون کي رسول الله صلى الله عليه وسلم جن جي زندگيءَ جو ڪو عجيب واقعو ٻڌاءِ. سائڻ فرمايو ته سندن زندگيءَ جو ڪهڙو واقعو عجيب نه هو؟ هڪ رات پاڻ مون وٽ تشريف فرما ٿيا ۽ مون سان گڏ ليٽيا ان کان پوءِ فرمايائون ته: مون کي ڇڏ ته مان پنهنجي رب جي عبادت ڪريان. پاڻ اٿي وضو ڪري بيهي نماز پڙهڻ لڳا ۽ ايتري قدر رنا جو سندن اکين مان وهندڙ هنجون سندن سيني تي وهي هليون. تنهن کان پوءِ رڪوع ڪري رنائون، سجدو ڪري رنائون، مٿو مبارڪ مٿي ڪڍي رنائون ۽ ائين ئي رهيا تانجو (حضرت) بلال (بانگو) کين فجر جي نماز جو اطلاع ڏيڻ آيو ۽ کين روئندو ڏسي عرض ڪيائين ته يا رسول الله! اوهان کي ڪهڙي شيءِ روئاري رهي آهي؟ حالانڪ الله تعالىٰ اوهان کي گناهن کان پاڪ رکيو آهي. پاڻ فرمايائون ته "وَيْلٌ لِّمَنْ قَرَءَهَا وَلَمْ يَتَفَكَّرْ فِيهَا (۱) ويل آهي ان لاءِ جو انهن آيتن کي پڙهي ۽ ان ۾ فڪر نه ڪري.

ڄاڻڻ گهرجي ته هتي الله تعالىٰ جي ذڪر جي ٽن مرتبن ڏانهن اشارو آهي ۱- هڪ زباني ۲-ٻيو قلبي ۳- ٽيون: روحاني معرفت. زباني ذڪر قلبي ذڪر ڏانهن پهچائيندو آهي جنهن سان الله تعالىٰ جي قدرت جي نظارن ۾ فڪر جي قوت پيدا ٿيندي

(۱) الدر المنثور ص۴۰۹ جلد۲

آهي ۽ قلبي ذڪر سان روحاني معرفت جو مقام ملندو آهي جنهن سان حقائق الاشياءِ(شين جون حقيقتون) سڄاڻپ ۾ اينديون ۽ الله تعالىٰ جي مخلوق ۾ سندس حڪمت جو مشاهدو ٿيندو آهي ۽ ٻانهو چوندو آهي تہ: اي اسان جا پالڻهار! تو هي سڀ جهان اجايا پيدا نہ ڪيا آهن-مؤمن کي گهرجي تہ زباني ذڪر جي ذريعي قلبي ذڪر جو مقام حاصل ڪري روحاني معرفت جا مزا ماڻيندي جهل جي ظلمت ۽ انڌيري کان نجات وٺي، يقين ۽ معرفت جي منصب تي پهچي بي نور قلب کي منور بنائي. هن آيت مان اهو بہ ثابت ٿئي ٿو تہ ذڪر جا آداب لحاظ ۾ رکندي جنهن بہ وضع تي ويٺي،ويٺي ۽ ليٽي ذڪر ڪيو وڃي تہ جائز آهي ۽ هيءُ هر ڪنهن جي مقام تي منحصر آهي ڪن مريدن کي ڪامل مرشد وڏي آواز سان ذڪر ڪرڻ جو حڪم ڪندو آهي تانتہ سندس دل مان مضبوط بيٺل غلط خيال نڪري وڃن ان جي ڪري چوندا آهن تہ الذكر بجهر الصوت جائز بل مستحب اذا لم يكن عن رياءِ (۱) يعني جيڪڏهن ماڻهن کي ڏيکارڻ جي نيت ناهي تہ وڏي آواز سان ذڪر ڪرڻ جائز بلڪ مستحب آهي. تانتہ ماڻهن کي دين جي اظهار ۾ شوق ۽ ٻڌندڙ کي ذڪر جي برڪت نصيب ٿئي ۽ جڏهن ٻڌندڙ بہ ذڪر وارن سان موافقت ڪندي ذڪر ۾ شريڪ ٿيندو تہ ان جي لاءِ بہ وڏي آواز سان ذڪر ڪندڙن وانگر قيامت جي ڏينهن هر شيءِ سائي هجي يا سڪل شاهدي ڏيندي ۽ ڪيترن الله تعالىٰ جي پيارن آهستي ذڪر کي پسند ڪيو آهي چو تہ ان ۾ رياءَ جو امڪان ناهي خصوصًا نقشبندي حضرات دامت برڪاتهم وفيوضاتهم تہ دل جي ذڪر ڪرائڻ سان ڪروڙن کي ڪريم رب جي قرب وارو بنائيندا آهن جيئن منهنجي مرشد حضرت خواجه سهڻا سائين عليه الرحمة ۽ حضرت سجڻ سائين مدظلہ العالي جن وٽ درگاھ الله آباد شريف متصل ڪنڊيارو ضلع نوشهروفيروز سنڌ ۾ ڏنو ويو آهي.

## هڪ سهڻي دعا

حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان روايت آهي تہ هڪ رات ڪجهہ وقت گذرڻ کان پوءِ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن ٻاهر تشريف فرما ٿيا ۽ هي آيتون "اِنَّ فِيْ خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ" کان پڇاڙيءَ تائين پڙهي پوءِ هيءُ دعا فرمايائون "اَللّٰهُمَّ اجْعَلْ فِيْ قَلْبِيْ نُوْرًا وَفِيْ سَمْعِيْ نُوْرًا وَفِيْ بَصَرِيْ نُوْرًا وَعَنْ يَمِيْنِيْ نُوْرًا وَعَنْ

(۱) تنوير الاذهان ص۳۰٦ جلد۱

شِمَالِيْ نُوْرًا وَمِنْ بَيْنِ يَدَيَّ نُوْرًا وَّمِنْ خَلْفِيْ نُوْرًا وَّمِنْ فَوْقِيْ نُوْرًا وَّمِنْ تَحْتِيْ نُوْرًا وَاَعْظِمْ لِيْ نُوْرًا يَوْمَ الْقِيٰمَةِ" اي الله منهنجي قلب ۾ نور پيدا ڪر ۽منهنجي ڪنن ۾ نور ۽اکين ۾ نور ۽سڄي نور ۽ کٻي نور ۽اڳيان نور ۽پويان نور ۽مٿان نور ۽ هيٺان نور پيدا ڪر ۽قيامت جي ڏينهن مون لاءِ نور کي وڏو ڪر- ابن مردويه هڪ غريب سند سان حضرت ابو هريرة رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي ته: رسول الله صلى الله عليه وسلم جن هر رات آلعمران جون آخري ڏهه آيتون تلاوت ڪندا هئا. (١)

" رَبَّنَآ اِنَّكَ مَنْ تُدْخِلِ النَّارَ فَقَدْ اَخْزَيْتَهٗ وَمَا لِلظّٰلِمِيْنَ مِنْ اَنْصَارٍ" اي اسان جا پالڻهار يقينًا جنهن کي تو باهه ۾ وڌو ان کي خوار ڪري ڇڏيئي ۽ ظالمن جاڪي به مددگار ناهن.

المقصد ته جيڪو شخص جيترو وقت باهه ۾ هوندو اهو اوترو ئي خوار ٿيندو ڪافر جڏهن ته هميشه باهه ۾ رهندا ته انهن جي خواري به هميشه واري ۽ دائمي هوندي ۽ جن آيتن ۾ مؤمنن کان خواريءَ جي نفيءَ جو بيان آهي ان مان مراد به هميشه واري خواري آهي جنهن کان مؤمن الله تعالىٰ جي فضل ۽ ڪرم سان محفوظ هوندا ۽ قيامت ۾ جڏهن هن ساري ڪائنات (جيڪا اسرارن، حڪمتن ۽ الله تعالىٰ جي قدرت تي دلالت ڪندڙ دلائل سان ڀريل آهي) کي پيدا ڪندڙ الله تعالىٰ جي پڪڙ جي ڪري ظالم، ڪافر جهنم ۾ ويندا ته سندن ڪو به مددگار نه هوندو. پر جن گنهگارن مومنن کي ابتداء يا آخر ۾ ڇڏڻ ۽ معاف ڪرڻ الله تعالىٰ کي منظور هوندو انهن لاءِ شفاعت ڪندڙن کي موڪل ملندي ته پلي شفاعت ڪري انهن کي ڇڏائين. اها شفاعت هن آيت جي خلاف ناهي بلڪ ڪيترين قرآني آيتن ۽ نبوي حديثن سان ثابت آهي، مفسرصابونيءَ لکيو آهي ته: والمراد به من ينصره بالمدافعة والقهر فليس في الاية دلالة على نفي الشفاعه لان نفي النصرة لا يستلزم نفي الشفاعة (٢) يعني هن آيت مان مراد آهي تہ ظالمن جي زور ۽ زبردستيءَ سان مدد ڪندڙ نه هوندو۽آيت ۾ شفاعت جي نفي ڪرڻ تي ڪا به دلالت ناهي ڇو ته مدد جي نفي ڪرڻ شفاعت جي نفي ڪرڻ کي لازم نه ٿي ڪري وٺي.

"رَبَّنَآ اِنَّنَا سَمِعْنَا مُنَادِيًا يُّنَادِيْ لِلْاِيْمَانِ اَنْ اٰمِنُوْا بِرَبِّكُمْ فَاٰمَنَّا رَبَّنَا

(١) تفسير ابن ڪثير ص٦٦١ ج١
(٢) تنوير الاذهان ص ٣٠٦ جلد١ ۽ تفسير عثماني ص٩٧ حاشيه ٣ مطبوعه سعودي عرب

فَاغۡفِرۡلَنَا ذُنُوۡبَنَا وَكَفِّرۡعَنَّا سَيِّاٰتِنَا وَتَوَفَّنَا مَعَ الۡاَبۡرَارِ " اي اسان جا پالڻهار! بيشڪ اسان ٻڌوسون هڪ سڏيندڙ کان جيڪو ايمان لاءِ سڏي رهيو آهي تہ پنهنجي پالڻهار تي ايمان آڻيو پوءِ ايمان آندوسون پوءِ اسان کي اسان جا گناهہ بخش ڪر ۽ اسان کان اسان جون برايون ميٽي ڇڏي ۽ اسان کي نيڪوڪارن سان گڏ وفات ڪراءِ - هتي سڏيندڙ مان مراد نبي ڪريم صلى الله عليه وسلم جن آهن، جن ساريءَ دنيا کي ايمان لاءِ سڏيو. علامہ حقي عليہ الرحمۃ لکيو آهي تہ: المراد بہ الرسول عليه السلام فانه ينادى ويدعوا الى الايمان حقيقة قال تعالىٰ "اُدۡعُ اِلٰى سَبِيۡلِ رَبِّكَ" (١) يعني مناديءَ مان مراد رسول الله عليه الصلواة والسلام جن آهن يقينًا حقيقت ۾ ايمان ڏي سڏيندڙ ۽ دعوت ڏيندڙ پاڻ ئي آهن الله تعالىٰ فرمايو "پنهنجي رب ڏانهن سڏ" علامہ رشيد رضا صاحب لکيو آهي" المنادي للايمان هو الرسول وذكره بوصف المنادي تفخيما لشان هذاالنداءِ" (٢) يعني ايمان لاءِ سڏيندڙ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن آهن ۽ ڪين مناديءَ جي صفت سان ذڪر ڪرڻ مان مقصد نداءَ جي شان کي وڏو ڪري پيش ڪرڻو آهي مقصد تہ جنهن سڏ لاءِ حضور پرنور صلى الله عليه وسلم جن جهڙي ذات عالي صفات مقرر ڪيل هجي اهو ڪيڏو نہ اهميت وارو هوندو.

يا مناديءَ مان مراد قرآن ڪريم آهي جنهن جو آواز اڄ تائين گهر گهر ۾ پهچي الله تعالىٰ جي توحيد، حضور عليه الصلواة والسلام جن جي رسالت، نبوت ۽ قيامت جي اهم عقيدي ڏانهن سڏي رهيو آهي. فَاٰمَنَّا- هن مان مراد سڏ ٻڌي ايمان آڻڻ آهي پوءِ اهو روبرو ٻڌي جيئن صحابن سڳورن ٻڌو يا واسطي سان ٻڌي جيئن قيامت تائين اچڻ وارا ٻڌندا آيا ۽ ايندا. رَبَّنَا فَاغۡفِرۡلَنَا الخ - اغفرلنا جي اڳيان ف جو آيل حرف ٻڌائي رهيو آهي تہ هيءَ دعا بہ اڳئين دعا سان مليل آهي ايمان آڻڻ ان جو سبب آهي ۽ ايمان مان مراد صرف زباني اقرار نہ پر اقرار سان گڏ دل سان تصديق ڪرڻ ۽ عمل ڪرڻ آهي. ان جي ڪري صرف زباني داڙن کان ڊڄندي گناهن جي معافي گهرڻ لڳا بعضي مفسرن فرمايو تہ ذنوب مان مراد وڏا گناهہ ۽ سَيِّاٰتِ مان مراد ننڍا گناهہ آهن ۽ ڪي بزرگ فرمائن ٿا تہ ذنوب مان مراد الله تعالىٰ جا حقوق ۽ سَيِّاٰتِ مان مراد ٻانهن جا حقوق آهن. وَتَوَفَّنَا مَعَ الۡاَبۡرَارِ- يعني اي مولا ڪريم! اسان کي پنهنجن نيڪن، صالحن، پيارن ٻانهن جي صحبت ۾، انهن جي پاڙي ۾، انهن جي ٽولي ۾ ڳٽي انهن وانگر ڪامل ايمان سان وفات ڪرائجان جيئن مرڻ وقت بہ انهن جي سهڻين صفتن

(١) روح البيان ص١۴٨ جلد٢ (٢) المنار ص٣٠٢ جلد۴

سان موصوف هجون جيڪي تو الله تعاليٰ جي ديدار ۽ ملڻ جا مشتاق آهن.

## هڪ عجيب واقعو

نقل آهي ته هڪ لوهار باهه ۾ گرم ٽيل لوهه کي هٿ ۾ وٺي جهليندو هو، پر ان کي ڪجهه به نه ٿيندو هو. ان جو سبب پڇڻ تي چيائين ته: مان هڪ عورت تي عاشق ٿي پيو هوس ۽ مون ان کي پاڻ ڏي ڇڪيندي مال ۽ ملڪيت ڏيڻ جي به وڏي ڪوشش ڪئي پر ان جواب ڏيندي چيو ته: مون کي پنهنجو مڙس آهي جنهن مان طبعي تقاضا پوري ڪندي آهيان ۽ مال جي به محتاج ناهيان. جڏهن سندس مڙس وفات ڪري ويو ته مون ڪيس شاديءَ جو پيغام موڪليو پر پاڻ انڪار ڪندي چورايائين ته مان پنهنجن ٻچن کي پريشان ۽ ذليل ڪرڻ نه ٿي گهران. الله تعاليٰ جي قدرت ڪجهه وقت گذرڻ کان پوءِ ان کي ڪجهه پئسن جي ضرورت پئي ۽ مون ڏانهن پئسن لاءِ ماڻهو موڪليائين. مون ڪانئس ساڳيو مطالبو ڪيو، هوءَ مجبورا آئي ته سهي پر جيئن جو هڪ جاءِ ۾ مون سان گڏ داخل ٿي رهي هئي ته ڏڪڻ لڳي، پڇڻ تي جواب ڏنائين ته الله تعاليٰ سميع ۽ بصير ٻڌندڙ ۽ ڏسندڙ آهي ان کان ڊڄان ٿي مون به الله تعاليٰ کان ڊڄي ڪيس ڇڏي ڏنو ۽ گهربل پئسا به ڏنا مانس. پئسن واري حاجت پوريءَ ٿيڻ سان گڏ عزت ۽ آبروءَ جي محفوظ هجڻ تي خوش ٿيندي مون کي دعا ڪيائين ته ”اَنۡجَاکَ اللّٰهُ مِنَ النَّارِ“ الله تعاليٰ توکي باهه کان ڇڏائي. ان کان پوءِ مون کي دنيا جي باهه ته ڪا نه ٿي ساڙي پر اميد اٿم ته آخرت واري باهه به نه ساڙيندي. (۱)

## گناهن کان مغفرت طلب ڪرڻ سان مشڪل حل ٿين ٿا.

حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان روايت آهي ته رسول الله صلي الله عليه وسلم جن فرمايو ”مَنۡ لَزِمَ الۡاِسۡتِغۡفَارَ جَعَلَ اللّٰهُ لَهٗ مِنۡ كُلِّ هَمٍّ فَرَجًا وَّمِنۡ كُلِّ ضَيۡقٍ مَّخۡرَجًا وَّرَزَقَهُ اللّٰهُ مِنۡ حَيۡثُ لَا يَحۡتَسِبُ“ (۲) يعني جنهن الله تعاليٰ کان گناهن جي معافي گهرڻ کي لازم ڪري ورتو ته الله تعاليٰ ان کي هر مشڪل کان آزادي ۽ هر تنگيءَ کان بچڻ جي جاءِ ڪري ڏيندو ۽ کيس اتاهين رزق عطا ڪندو جتان خيال به نه هوندس.

”رَبَّنَا وَاٰتِنَا مَا وَعَدۡتَّنَا عَلٰى رُسُلِکَ“ اي اسان جا پالڻهار! اسان کي اهي نعمتون عطا ڪر جن جي عطا ڪرڻ جو اسان سان پنهنجن پيغمبرن عليهم الصلواة

(۱) روح البيان ص۱۴۹ ج۲

والسلام جي ذريعي وعدو ڪرڻ فرمايو هئي. يقينًا تون وعدي برخلافي نہ ڪندو آهين بلڪ تنهنجي پاڪ ذات لاءِ تہ اهو احتمال ۽ وهم بہ نٿو ڪري سگهجي. ها هي احتمال آهي جو مبادا اسين ڪا غلطي ڪري تنهنجي وعدن مان فائدو وٺڻ کان محروم نہ ٿي وڃون انهيءَ جي ڪري تو ڪريم ۽ رحيم رب جي بارگاهہ ۾ با ادب ٻانهپ وارو عرض آهي تہ اسان کي صالح عمل تي استقامت عطا ڪرڻ فرماءِ. جنهن جي تنهنجي وعدن مان فائديمند ٿيڻ لاءِ ضرورت آهي. سبحان الله ثم سبحان الله.

الله تعالىٰ جي پيارن ٻانهن جي دل جڏهن غور، فڪر، لاڳيتي عبادت ۽ ذڪر سان روشن ٿي چمڪڻ لڳي تہ پنهنجي مالڪ کان اهڙيون پياريون دعائون گهريائون جن جي هر هڪ جملي ۾ معناڻ جا مڻ رکيل آهن"ما وعدتنا" مان مراد هڪ دنيا جي اڳواٽي آهي (جنهن جو نالو خلافت راشده رکيو ويو) جيئن الله تعالىٰ جو فرمان آهي "وَعَدَاللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مِنْكُمْ وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ لَيَسْتَخْلِفَنَّهُمْ فِى الْاَرْضِ" الاية (۱) الله تعالىٰ اوهان مان ايمان وارن ۽ صالح عمل ڪندڙن سان وعدو ڪيو آهي تہ انهن کي زمين ۾ خلافت ضرور عطا ڪندو.

ٻيو آخرت ۾ جنت جي سعادت عطا ڪرڻ آهي جيئن رباني فرمان آهي "وَعَدَاللّٰهُ الْمُؤْمِنِيْنَ وَالْمُؤْمِنَاتِ جَنّٰتٍ" (۲) الله تعالىٰ مومنن ۽ مومنياڻين سان جنتن جو وعدو ڪيو آهي.

"وَلَا تُخْزِنَا يَوْمَ الْقِيٰمَةِ" ۽ اسان کي قيامت جي ڏينهن خوار نہ ڪر. علامہ رازيءَ لکيو آهي تہ ان خواريءَ مان مراد روحاني عذاب آهي جيڪو جسماني عذاب کان بہ سخت آهي (۳) جسماني عذاب کان بچاءِ تہ"فَقِنَا عَذَابَ النَّارِ" ۾ ذڪر ڪيو ويو۽ روحاني عذاب الله تعالىٰ جي رضا (جيڪا ڪمال عرفان سان حاصل ٿي هئي) کان محرومي آهي. (۴) اِنَّكَ لَا تُخْلِفُ الْمِيْعَادَ" بيشڪ تون وعدي برخلافي نہ ڪندو آهين هي الله تعالىٰ جي ثنا آهي جنهن سان دعا پوري ڪئي وئي آهي ۽ ان ڳالهہ ۾ ڪنهن بہ قسم جو ڪو بہ شڪ نہ رکڻ گهرجي تہ وعدو تڏهن پورو ٿيندو جڏهن ايمان ۽ صالح عمل هوندا.

" فَاسْتَجَابَ لَهُمْ رَبُّهُمْ اَنِّيْ لَآ اُضِيْعُ عَمَلَ عَامِلٍ مِّنْكُمْ مِّنْ ذَكَرٍ اَوْ اُنْثٰى"

(۱)سورة النور آيت ۵۵ (۲) سورة التوبہ آيت۷۲
(۳) تفسير ڪبير ص۱۴۸ جزءِ ۹ (۴) المنار ص۳۰۴ جلد۴

پوءِ سندس رب سندن (دعا) قبول ڪندي(فرمايو تہ) يقينًا مان اوهان مان ڪنهن بہ عمل ڪندڙ جو (پوءِ اهو) مرد هجي يا عورت عمل ضايع نہ ٿو ڪيان يعني ايمان ذڪر، فڪر الله تعالىٰ جي تقديس، تنزيهہ، آخرت جي حياتي ۽ رسولن عليهم الصلواة والسلام جي تصديق، انهن تي ايمان آڻڻ ۾ اخلاص ۽ اهو شعور رکڻ تہ پانهنجا پاڻ ضعيف ۽ الله تعالىٰ جي شڪراني ڪرڻ ۾ قصور ڪندڙ، سندس مغفرت ۽ فضل جا محتاج ۽ جيڪي وعدو ڪيو اٿس ان احسان جا خواهشمند آهن الله تعالىٰ سندن دل مان ادب ۽ نياز سان نڪتل دعائون قبول ڪندي انهن دعائن جي تصوير بيان فرمائيندي ٻڌايو تہ "يقين ڪيو تہ مان اوهان مان ڪنهن بہ صالح عمل ڪندڙ جو چاهي مرد هجي يا عورت هجي ڪو بہ عمل ضايع نہ ٿو ڪيان. ان ۾ اها بہ حڪمت آهي جو ٻانهن ڪي سمجهڻ گهرجي تہ سهڻا عمل ڪرڻ لازم آهن جهنم کان نجات ۽ جنت جو عطا ٿيڻ بہ سهڻن عملن سان وابستہ آهي ۽ ان ۾ مرد ۽ عورتون برابر آهن مرد پنهنجيءَ قوت ۽ رئيس هجڻ تي مغرور ٿي اهو خيال نہ ڪري تہ صرف اهوئي الله تعالىٰ جو مقرب ۽ وڏيڪ پيارو ٻانهو آهي جيڪڏهن عورت ديندار ٿي سهڻا عمل ڪندي تہ اها بہ الله تعالىٰ جي بارگاهہ جي مقرب بنجي سگهي ٿي.

"بَعۡضُكُمۡ مِّنۢ بَعۡضٍ" هڪ ٻئي مان آهيو. هنن لفظن سان ٻڌايو ويو آهي تہ مرد عورتن مان ٿا ڄمن ۽ عورتون بہ مردن جي ذريعي ٿيون وجود ۾ اچن بشريت ۾ ٻئي برابر آهن ان ڪري صرف عملن تي مدار رکي ٿي. علامہ ابن ڪثير لکيو آهي تہ مومنن جي ماءُ سيده ام سلمة رضي الله عنها حضور صلى الله عليه وسلم جن جي خدمت ۾ عرض ڪيو تہ: يا رسول الله! (صلى الله عليک وسلم) قرآن ڪريم ۾ عورتن جي هجرت جو ذڪر ئي ناهي جو ٻڌون. تڏهن الله تعالىٰ اهي الفاظ نازل فرمائي ٻڌايو تہ انهن جا عمل بہ ضايع نہ ڪندس"

## "مسلمان عورتون خبردار رهن"

الله تعالىٰ هن آيت ۾ عورت جي عمل جوقدر ڪرڻ ۽ ان ڪي ضايع نہ ڪرڻ بيان فرمايو آهي ۽ حقيقت ۾ اسلام ئي عورت کي صحيح مقام ڏنو آهي الله تعالىٰ جي دربار مان ثواب ۽ عذاب، عزت ۽ ذلت نيڪ ۽ صالح عمل تي ملي ٿي ۽ ان ۾ مرد ۽ عورت برابر آهن. اسلام کان اڳ ۾ عورتن کي چوپائي مال وانگر صرف نفساني خواهش پوري ڪرڻ جي لاءِ رکيو ويندو هو ۽ مرد صرف مرد هجڻ جي ڪري

عورت کان مٿي سمجهيو ويندو عمل کٽي کهڙا بہ ڪري ۽ جديد دور وارن تہ عورت
کي مذهبي ۽ ديني ذميوارين کان مکمل آزادي ڏئي سندس ٻئي جهان برباد ڪري
ڇڏيا آهن"فَالَّذِيْنَ هَاجَرُوْا وَاُخْرِجُوْا مِنْ دِيَارِهِمْ " (پوءِ جن هجرت ڪئي ۽ پنهنجن گهرن
مان ڪڍيا ويا.) هتي هجرت کان پوءِ گهرن مان ڪڍڻ جو ذڪر اجمال کان پوءِ
تفصيل آهي يعني شرڪ جي مرڪزن کان بچي ايماني مرڪز ۾ اچڻ جي لاءِ مٽن،
مائٽن، دوستن، پاڙن، قربدارن ۽ پاڙيسرين کي ڇڏيائون "وَاُوْذُوْا فِيْ سَبِيْلِيْ" ۽ انهن جو
ہيو ڪو بہ گناهہ ناهي صرف منهنجي مٿان ايمان آڻڻ جي ڪري منهنجي واٽ ۾ ايذايا
ويا" وَقَاتَلُوْا وَقُتِلُوْا " ۽ لڙيا ۽ شهيد ڪيا ويا. ڪن کي قتل ڪيائون تہ ڪن جي هٿان
پاڻ رب العالمين جي رضا لاءِ ڪٺا ويا.

" لَاُكَفِّرَنَّ عَنْهُمْ سَيِّاٰتِهِمْ " ضرور انهن کان سندن برايون ميٽيندس - مقصد
تہ جڏهن ڪنهن بہ عمل ڪندڙ جو ڪو ننڍڙو عمل بہ ضايع نہ ٿو ڪيان تہ اهي ديندار،
مجاهد، الله تعاليٰ جا پيارا جن جي هٿان ايمان آڻڻ جي ڪري ڪافرن اهي ظلم ۽
تڪليفن جا جبل ٽوڙيا جو ڪين پنهنجن اباڻن گهرن ۾ رهڻ ئي ناممڪن ٿي پيو
شرڪ، ڪفر ۽ گناهن کان پري رهڻ سان گڏ دارالڪفر ۽ اتي رهندڙن مٽن،
مائٽن،اهل،عيال، مال ۽متاع کي الوداع ڪري دارالاسلام ڏانهن نڪري آيا انهن جو
ڪو عمل تہ ضايع نہ ڪندس پر سندن اڳ ۾ ڪيل گناهہ اهڙي نموني ميٽي ڇڏيندس
جڻ ڪيائي نہ هيائون" وَلَاُدْخِلَنَّهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ" ۽ ضرور انهن کي
اهڙن بهشتن ۾ داخل ڪندس جن جي هيٺان نهرون ٿيون وهن. اهي کير، ماکيءَ،
شرابًا طهورًا ۽ گندي نہ ٿيندڙ پاڻي جون هونديون ۽ انهن بهشتن ۾ ہيون بہ اهڙيون
نعمتون هونديون جيکي اڳ ۾نہ اکين ڏٺيون، نہ ڪنن ٻڌيون ۽ نہ ڪنهن انسان جي
دل تي آيون هونديون "ثَوَابًا مِّنْ عِنْدِاللّٰهِ" اهو ثواب الله تعاليٰ وٽان هوندو.

ڄاڻڻ گهرجي تہ ثواب تہ هوندو ئي الله تعاليٰ وٽان آهي پر هتي ڪولي ان
جي ڪري آندو ويو آهي تہ ٻڌندڙن کي معلوم هجي تہ اهو ثواب تمام وڏو هوندو. لان
العظيم الڪريم لا يعطي الا جزيلا ڪثيرا (۱) ڇو تہ وڏو ڪريم جو ڪجهہ عطا ڪندو
اهو بہ وڏو ۽ گهڻو هوندو آهي "وَاللّٰهُ عِنْدَهٗ حُسْنُ الثَّوَابِ" ۽ الله وٽ سهڻو ثواب آهي.
يعني الله وٽ سهڻيعمل جو سهڻو بدلو آهي هيءُ جملو مٿين لفظن "ثوابا من عندالله

(۱) تفسير ابن ڪثير ص۶۶۴ جلد۱

جو تاڪيد آهي. مطلب تہ اهو ثواب خدا وندي فضل ۽ الٰهي ڪرم آهي جيڪو مالڪ منٽي جي ارادي ۽ اختيار سان سندس پيارن کي ملندو آهي.

## ٻہ عجيب واقعا

## (۱)

مشهور ۽ معروف محدث امام بخاريءَ جي استاد حضرت عبدالله بن مبارڪ عليه الرحمة جڏهن وفات ٿي ڪئي تہ سڪرات جي حالت ۾ اکيون کولي (جنت ڏي ڏسندي ان ڏانهن اشارو ڪندي) فرمايائين تہ " لِمِثْلِ هٰذَا فَلْيَعْمَلِ الْعَامِلُوْنَ " هن جهڙيءَ (نعمت) لاءِ ٻلي تہ عمل ڪندڙ عمل ڪن

## (۲)

هڪ صالح ٻانهي وٽ جڏهن ملڪ الموت سندس روح قبض ڪرڻ لاءِ آيو تہ انکي ڏسي فرمايائين " مَرْحَبًا " الله جو قسم آهي تہ مان پنجاهہ (۵۰) سالن کان تنهنجي لاءِ تياري ڪندي تنهنجي انتظار ۾ آهيان . (۱)

## فائدو

حضرت امام جعفر صادق رضى الله تعالیٰ عنه کان روايت آهي تہ جنهن کي ڪا مشڪل هجي اهو دعا ۾ پنج ڀيرا " رَبَّنَا " جو لفظ چوي تہ الله تعالیٰ ان کي مشڪل کان ڇوٽڪارو عطا ڪندو ۽ حضرت امام حسن بصريءَ عليه الرحمة فرمايو تہ هنن آيتن ۾ دعا جي لفظن ۾ ربنا جو لفظ پنج ڀيرا آيو آهي تنهنجي ڪري جيڪو شخص چاهي تہ منهنجي دعا مقبول ٿئي تہ اهو پنهنجيءَ دعا ۾ ربنا جو لفظ پنج ڀيرا چوي (۲)

لَا يَغُرَّنَّكَ تَقَلُّبُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا فِى الْبِلَادِ ﴿١٩٦﴾ مَتَاعٌ قَلِيْلٌ ثُمَّ

تہ ڌوکي ۾ وجهي توکي ڦرڻ ڪافرن جو شهرن ۾ فائدو ٿورو آهي تنهن کان پوءِ

مَاْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ وَبِئْسَ الْمِهَادُ ﴿١٩٧﴾ لٰكِنِ الَّذِيْنَ اتَّقَوْا رَبَّهُمْ

جاءِ سندن دوزخ آهي ۽ بڇڙو ٺڪاڻو آهي اهو. پر اهي شخص جو ڊڄن ٿا رب پنهنجي کان

(۱) تنوير الاذهان ص۳۰۹ جلد۱ (۲) الڪشاف ص۴۹۰ جلد۱

لَهُمْ جَنّٰتٌ تَجْرِیْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِیْنَ فِیْهَا نُزُلًا مِّنْ

انهن لاءِ بهشت آهن جو وهن ٿيون هيٺان انهن جي نهرون هميشہ رهندا انهن ۾ مهماني ٿي

عِنْدِ اللّٰهِ ؕ وَمَا عِنْدَ اللّٰهِ خَیْرٌ لِّلْاَبْرَارِ ﴿۱۹۸﴾ وَاِنَّ مِنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ لَمَنْ الثلاثة

الله وٽان ۽ جيڪو بہ الله وٽ آهي ڀلو آهي نيڪن لاءِ ۽ بيشڪ ڪتاب وارن مان (ڪي اهي آهن) جو

یُّؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَمَاۤ اُنْزِلَ اِلَیْكُمْ وَمَاۤ اُنْزِلَ اِلَیْهِمْ خٰشِعِیْنَ لِلّٰهِ ۙ لَا

البت ايمان ٿا آڻين الله تي ۽ ان تي جو لاٿو ويو اوهان ڏانهن ۽ ان تي جو لاٿو ويو انهن ڏانهن عاجزي ڪندڙ الله جي لاءِ نہ ٿا

یَشْتَرُوْنَ بِاٰیٰتِ اللّٰهِ ثَمَنًا قَلِیْلًا ؕ اُولٰٓئِكَ لَهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ

خريد ڪن عوض آيتن الله جي ملهہ ٿورو اهي انهن جي لاءِ آهي ثواب انهن جو

رَبِّهِمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ سَرِیْعُ الْحِسَابِ ﴿۱۹۹﴾ یٰۤاَیُّهَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوا اصْبِرُوْا

رب انهن جي وٽ بيشڪ الله تکڙو آهي حساب وٺڻ جو اي ايمان وارؤ! صبر ڪيو

وَصَابِرُوْا وَرَابِطُوْا ۟ وَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ﴿۲۰۰﴾ ع ۲۰ ۱۱

۽ مضبوط رهو ۽ مقابلي ۾ ڳنڍيا پيا هجو ۽ ڊڄو الله کان تانت اوهان ڪاميابي ماڻيو

## تفسير

لَا یَغُرَّنَّكَ تَقَلُّبُ الَّذِیْنَ كَفَرُوْا فِی الْبِلَادِ- بعضي مؤمن مشرڪن ۽ ڪافرن ڪي خوشحاليءَ، عيش ۽ عشرت ۾ گهمندي ڏسي چوندا هئا تہ الله تعاليٰ جا دشمن ڀون ۾ ۽ اسين بک ۽ تڪليف ۾- تڏهن الله تعاليٰ هيءَ آيت نازل ڪري فرمايو تہ ڪافرن جو عيش، عشرت، شان، شوڪت، ڏنڌو ۽ تجارت ڏسي ڌوکي ۾ نہ پئو تہ انهن تي الله تعاليٰ راضي آهي اها ترقي، ڌوم ڌام، ۽ وڏي طاقت سڀ عارضي ۽ فاني آهن راقم عرض ٿو ڪري تہ اڳئين وقت وارن وانگر هن موجوده دور ۾ بہ ڪي ماڻهو چوندا آهن تہ ڪافر سپر پاور ۽ اسين مسلمان انهن جي ڪنٽرول ۽ قبضي ۾ ڇو آهيون؟ انهن لاءِ بہ اهائي نصيحت

آهي تہ "مَتَاعٌ قَلِيْلٌ" (اهو سڀ ڪجهہ) ٿورو سامان آهي ۽ اهو جنتي نعمتن جي مقابلي ۾ ڪا اهميت نہ ٿو رکي. رسول الله صلي الله عليه وسلم جن فرمايو آهي تہ:

"مَاالدُّنْيَا فِي الْاٰخِرَةِ اِلَّا مِثْلَ مَا يَجْعَلُ اَحَدُكُمْ اِصْبَعَهٗ فِي الْيَمِّ فَلْيَنْظُرْ بِمَ يَرْجِعُ" (١) يعني دنيا آخرت جي مقابلي ۾ ائين آهي جيئن اوهان مان ڪو هڪ پنهنجي آڱر سمنڊ ۾ وجهي (مٿي ڪڍي) پوءِ ڏسي تہ ڇا ٿو موٽي (ڪجهہ بہ نہ هوندو) تيئن دنيا آخرت جي مقابلي ۾ ڪجهہ بہ ناهي.

"ثُمَّ مَاْوٰهُمْ جَهَنَّمُ وَبِئْسَ الْمِهَادُ" ان کان پوءِ سندن جاءِ جهنم آهي ۽ اها (رهڻ جي لاءِ) نهايت ئي بري جاءِ آهي. ان ۾ هميشه پيا سڙندا. پوءِ جيڪا دنيوي ۽ ٿوري نعمت وڏي نقصان ۽ عذاب جو سبب بڻجي ان کي نعمت ئي نہ سمجهڻ گهرجي.

"لٰكِنِ الَّذِيْنَ اتَّقَوْا رَبَّهُمْ لَهُمْ جَنّٰتٌ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا نُزُلًا مِّنْ عِنْدِاللّٰهِ"- مقصد تہ رب العزة جل شانہ کان ڊڄڻ وارا، ان جي امر کي ادا ڪندڙ نهي جي مخالفت کان بچندڙ الله تعالىٰ جا مهمان آهن ۽ جنت انهن لاءِ مهمان خانو آهي "وَمَا عِنْدَاللّٰهِ خَيْرٌ لِّلْاَبْرَارِ" ۽ جيڪو الله وٽ آهي نيڪن جي لاءِ ڀلو آهي. حضرت عمر بن خطاب رضي الله تعالىٰ عنه فرمايو آهي تہ: مان هڪ ڀيري حضور عليه الصلواة والسلام جن جي خدمت ۾ حاضر ٿيس تہ پاڻ هڪ اهڙي تڏي تي سُتل هئا جنهن تي ڪا بہ شيءِ وڇايل نہ هئي سندن مٿي مبارڪ جي هيٺان چمڙي مان نهيل وهاڻو رکيل هو. مون سندن جسم پاڪ تي تڏي جا نشان ڏسي روئي ڏنو پاڻ فرمايائون تہ"ڇو ٿو روئين؟ عرض ڪيم تہ ڪسريٰ (ايران جو بادشاهہ) ۽ قيصر (روم جو بادشاهہ) نعمتن ۾ ۽ اوهان الله جا رسول ٿي ڪري بہ خالي تڏي تي ٿا ننڊ ڪريو؟ پاڻ فرمايائون تہ ڇا تون ان تي راضي ناهين جو انهن لاءِ دنيا ۽ اسان جي لاءِ آخرت هجي؟ اهي (ڪافر) اهڙي قوم آهن جن کي سندن چڱاين جو بدلو دنيا ۾ ئي ملي ويو ۽ اسين اهڙي قوم آهيون جن جون چڱايون آخرت جي لاءِ رکيون ويون آهن (٢)

## ابرار سڏڻ جو سبب

هن آيت ۾ الله تعالىٰ فرمايو" جيڪو الله وٽ آهي اهو ابرار جي لاءِ ڀلو آهي" الله تعالىٰ جي انهن ٻانهن کي ابرار سڏڻ جو وجه هي آهي امام بخاريءَ الادب المفرد ۾، عبد بن حميد ۽ ابن ابي حاتم ۽ ابن مردويہ حضرت عبدالله بن عمر کان

(١) تنوير الاذهان ص٣٠٩ ج١ (٢) ساڳيو حوالو

روايت آندي آهي تہ "اهي ابرار ان جي ڪري سڏيا ويا جو انهن پنهنجن پيئرن ۽ پٽن سان چڱائي ڪئي هئي جيئن تنهنجي والدين جو توتي حق آهي تيئن تنهنجي اولاد جو بہ توتي حق آهي. (١)

"وَاِنَّ مِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ لَمَنْ يُّؤْمِنُ بِاللهِ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِمْ خَاشِعِيْنَ لِلّٰهِ لَا يَشْتَرُوْنَ بِاٰيَاتِ اللهِ ثَمَنًا قَلِيْلًا اُولٰٓئِكَ لَهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ اِنَّ اللهَ سَرِيْعُ الْحِسَابِ" ۽ بيشڪ اهل ڪتاب مان اهي (ماڻهو) بہ آهن جيڪي الله تعالىٰ تي ۽ جيڪو اوهان ڏانهن ۽ انهن ڏانهن لاٿو ويو آهي ان تي ايمان آڻين ٿا الله جي لاءِ عاجزي ڪندڙ آهن الله جي آيتن جي عوض ٿورو ملهہ نہ ٿا وٺن انهن جي لاءِ سندن رب وٽ سندن اجر آهي بيشڪ الله حساب ڪرڻ ۾ تڪڙو آهي.

هن ڪان اڳ ۾ عام متقين جو بيان هو ۽ هتي اهل ڪتاب مان انهن متقين جو بيان ڪيو ٿو وڃي جن الله تعالىٰ ۽ قرآن پاڪ تي ايمان آڻي توراة ۽ انجيل ۾ ذڪر ڪيل الله تعالىٰ جي رسول، مقبول صلي الله عليه وسلم جن کي بہ مڃيو. اهي انهن دنيا جي پوڄاري عالمن وانگر ناهن جن دنيوي، عارضي ۽ ٿوري فائدي جي لاءِ الله تعالىٰ جي آيتن کي لڪايو يا مٽايو. بلڪ الله تعالىٰ جي اڳيان عاجزيءَ ۽ اخلاص سان سجدي ۾ ڪري پيا. الله تعالىٰ جي نازل ڪيل ڪتابن کي سندن اصلي صورت ۾ تسليم ڪيائون نہ حضور صلي الله عليه وسلم جن جي شان ۾ ذڪر ڪيل بشارتون لڪايائون ۽ نہ بيان ڪيل حڪمن ۾ تبديلي آنڌائون اهل ڪتاب جي انهن متقين ۽ نيڪن جي لاءِ الله تعالىٰ وٽ اجر ۽ ثواب آهي بلڪ ٻين کان ٻيڻو درجو ۽ اجر آهي هن کان اڳ ۾ اهل ڪتاب جي علماءِ جا عيب ۽ نقص بيان ڪيا ويا هئا، جنهن مان اهو وهم ٿي پيدا ٿيو تہ شايد سيئي اهڙا آهن هتي وضاحت ڪري بيان ڪيو ويو آهي تہ سيئي اهڙا نہ آهن انهن مان ڪي ڪمال جا صاحب ۽ حق جا پوڄاري بہ آهن جن جي طبيعت سالم، فطرت نيڪ ۽ دل پاڪ آهي. جيئن حضرت عبدالله بن سلام رضي الله تعالىٰ عنه وغيره "يَآاَيُّهَاالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا اصْبِرُوْ وَصَابِرُوْا وَرَابِطُوْا وَاتَّقُوااللهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ" اي ايمان وارؤ! صبر ڪيو ۽ (دشمن جي مقابلي ۾) ثابت قدم رهو ۽ (دين جي خدمت لاءِ) مضبوطيءَ سان ٻيهو ۽ (هميشه) الله ڪان ڊڄندا رهو تانت اوهان ڪاميابي ماڻيو. سمجهڻ گهرجي تہ هيءَ هن سورة جي آخري آيت آهي جنهن ۾

(١) الدر المنثور ص٤١٥ جلد٢

مسلمانن کي هڪ نهايت جامع، مانع نصيحت ڪئي وئي آهي. جيڪا چڻ تہ سڄي سورة جو نتيجو آهي. هن آيت ۾ نهايت مختصر لفظن ۾ بيان ڪيو ويو آهي تہ چار ڪم ڪيو جن ۾ اوهان جي دنيوي ۽ اخروي ڪاميابيءَ جو راز سمايل آهي۱- هڪ صبر- يعني اطاعت جي لاءِ سختيون سهڻ، گناهن کان انهن جي ڪشش جي باوجود پري رهڻ، نفس کي شرعي احڪام جو پابند بنائڻ، بيماريءَ، مسڪينيءَ ۽ ڏڪار وغيره کي برداشت ڪرڻ حضرت امام حسن بصريؒ عليه الرحمة فرمايو تہ هن آيت ۾ الله تعالىٰ امر ڪيو آهي تہ جيڪو دين مون پسند ڪري اوهان کي ڏنو آهي ان کي ڏک، سک، خوشيءَ، غميءَ، تنگيءَ ۽ خوشحاليءَ ۾ نہ ڇڏيو. ۽ ان تي قائم رهندي مرو تہ ڪامياب ٿيو ۲- ٻيو مصابرة جنهن مان صابروا امر جو صيغو ورتل آهي. يعني دشمن جي مسلسل حملن ۾ سندس سامهون لوهي ديوار بنجي سينو سپر ٿي وڃو ۽ مضبوطي ۽ ثابت قدمي ڏيکاريو. پنهنجن مٽن، مائٽن، پاڙيسرين، شهر وارن ۽ قوم جي ايذائن، ۽ گندن الفاظن تي تحمل ڪيو.

۳- ٽيون مرابطه يا رباط جنهن مان رابطوا امر جو صيغو ورتل آهي.معنىٰ تہ غازي ۽ مجاهد ٿي پنهنجا هٿيار ۽ سواريون دشمن سان مقابلي ڪرڻ جي لاءِ تيار رکو. دشمن ڪٿان بہ ۽ ڪڏهن بہ للڪاري تہ بنا دير جي جهاد شروع ڪري ڏيو. حديث شريف ۾ آهي تہ: دشمن سان جنگ جي لاءِ هڪ ڏينهن تيار رهڻ دنياءِ جو ڪجهہ ان ۾ آهي الله تعالىٰ جي رستي ۾ قربان ڪرڻ کان بہ ڀلو آهي(۱) ڪن بزرگن جو فرمان آهي تہ عبادت تي هميشگي ڪرڻ ۽ ثابت رهڻ کي مرابطه چئبو آهي. ابن ابي حاتم، مسلم ۽ نسائي حضرت ابو هريره رضي اللهتعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو "اَلَا اُخْبِرُكُمْ بِمَا يَمْحُوا اللّٰهُ بِهِ الْخَطَايَا وَيَرْفَعُ بِهِ الدَّرَجَاتِ اِسْبَاغُ الْوُضُوءِ عَلَى الْمَكَارِهِ وَكَثْرَةُ الْخُطَا اِلَى الْمَسَاجِدِ وَانْتِظَارُ الصَّلٰوةِ بَعْدَ الصَّلٰوةِ فَذَالِكُمُ الرِّبَاطُ، فَذَالِكُمُ الرِّبَاطُ، فَذَالِكُمُ الرِّبَاطُ" (۲) ڇا مان اوهان کي اهي ڪم نہ ٻڌايان جن سان الله تعالىٰ خطائون ميٽي ۽ درجا بلند ٿو ڪري. سختين ۾ وضو ڪامل ڪرڻ ۽ مسجدن ڏي گهڻا پنڌ ڪرڻ ۽ هڪ نماز کان پوءِ ٻيءَ نماز جي انتظار ۾ وهڻ، اهوئي رباط آهي، اهوئي رباط آهي، اهوئي رباط آهي. (جنهن جو ذڪر قرآن ڪريم رابطوا جي لفظ سان ڪيو آهي. ان ئي حضرت ابو

(۱) تنويرالايمان ص۷۱ پ۴ ابن ڪثير ص۶۶۸ جلد۱ (۲) ابن ڪثير ص۶۶۷ جلد۱

هريره رضي الله عنه کان بي روايت ۾ آهي تہ: هيءَ آيت انهن ماڻهن جي باري ۾ لٿي آهي جيڪي مسجدن کي آباد ٿا ڪن ۽ نمازون وقت تي ٿا پڙهن ۽ انهن کان پوءِ ويهي الله جو ذڪر ٿا ڪن (١)

# جهاد جي لاءِ تيار رهڻ جو ثواب

## حديث (١)

ابن حبان ۽ بيهقيءَ حضرت ابو هريرة رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليه وسلم جن فرمايو "مَوْقِفُ سَاعَةٍ فِیْ سَبِيْلِ اللّٰهِ خَيْرٌ مِنْ قِيَامِ لَيْلَةِ الْقَدْرِ عِنْدَ الْحَجَرِ الْاَسْوَدِ (٢) يعني الله جي واٽ ۾ (جهاد ڪرڻ جي لاءِ) هڪ گهڙي بيهڻ حجر اسود وٽ ليلة القدر جي بيهڻ کان بہ ڀلي آهي.

## حديث (٢)

امام احمد حضرت فضالہ بن عبيد کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليه وسلم جن فرمايو "كُلُّ مَيِّتٍ يُخْتَمُ عَلٰي عَمَلِهٖ اِلَّا الَّذِيْ مَاتَ مُرَابِطًا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَاِنَّهٗ يَنْمُوْا لَهٗ اِلٰي يَوْمِ الْقِيَامَةِ وَيَامَنُ فِتْنَةَ الْقَبْرِ (٣) يعني (مرڻ کان پوءِ) هر ميت جي عمل تي مهر هنئي ويندي آهي (تہ هن کان پوءِ هن جو ڪو عمل نہ ايندو) مگر جيڪو الله جي واٽ ۾ جهاد لاءِ تيار رهندي مري ويو ان جو عمل ان لاءِ قيامت تائين وڌندو رهندو ۽ اهو قبر جي فتني کان (بہ) امن ۾ هوندو.

۴- چوٿون الله تعالىٰ کان ڊڄڻ يعني هر ڪم ۽ هر حال ۾ جيئن حضور صلي الله عليه وسلم جن حضرت معاذ بن جبل رضي الله تعالىٰ عنه کي يمن ڏانهن موڪليندي فرمايو هو تہ "اِتَّقِ اللّٰهَ حَيْثُمَا كُنْتَ وَاتَّبِعِ السَّيِّئَةَ الْحَسَنَةَ تَمْحُهَا وَخَالِقِ النَّاسَ بِخُلُقٍ حُسْنٍ" (۴) يعني جتي بہ هجين تہ الله تعالىٰ کان ڊڄندو رهہ ۽ گناهہ (تي وجئي تہ ان) کان پويان نيڪي ڪر تہ ان کي ميٽي ڇڏي ۽ ماڻهن سان سهڻي اخلاق سان پيش ايندو ڪر.

## هڪ عجيب ڳالهہ

حضرت ابراهيم بن ادهم جي ڳالهہ ٿا ڪن تہ پاڻ بيت الله شريف ڏانهن

---

(١) الدر المنثور ص۴١٧ جلد٢ (٢) ساڳيو حوالو

(٣)ابن ڪثير ص٦٦٨ جلد١ (۴)ابن ڪثير ص٦٦٨ جلد١

پيادل وجي رهيا هئا ته هڪ بدوي ڏاچيءَ تي سوار ڪين مليو جنهن ڪانئن پڇيو ته ڪاڏي ٿا وڃو؟ پاڻ فرمايائون ته" بيت الله شريف ڏانهن" ان عرض ڪيو ته پيادل ڪيئن پهچندؤ؟ فرمايائون ته مون وٽ گهڻيون سواريون آهن. پڇيائين ته ڪهڙيون؟ فرمايائون ته مون تي جڏهن ڪا مصيبت ايندي آهي ته صبر منهنجي سواري آهي ۽ جڏهن ڪا نعمت نصيب ٿيندي آهي ته شڪر منهنجي سواري آهي ۽ جڏهن قدرتي قضا ايندي آهي رب جي رضا تي راضي رهڻ منهنجي سواري آهي ۽ جڏهن مون ڪي نفس ڪنهن ڪم ڏانهن ڇڪيندو آهي ته سمجهندو آهيان ته منهنجي گذريل عمر ڪان بچيل عمر ٿوري آهي. بدويءَ ٻڌي عرض ڪيو ته واقعي اوهان سوار آهيو ۽ مان پيادل آهيان اوهان پلي الله جي رحمت جي ٿڌڪار ۾ سير ڪندا وڃو. هن ڳالهه لکڻ ڪان پوءِ علامه اسماعيل حقيءَ عليه الرحمة لکيو آهي ته مؤمن ڪي سچي عمر مجاهدو ڪرڻ لازم آهي تانت نفس جي براين ۽ بداخلاقي ڪان آزاد ٿي پاڻ ۾ صبر وغيره جهڙيون سهڻيون صفتون پيدا ڪري. روايت ۾ آهي ته هڪ صالح شخص عبادت ۾ مجاهدو ڪندو هر رات ۾ قرآن پاڪ ختم ڪندو هو ڪنهن چيس ته پاڻ ڪي گهڻي تڪليف ٿو ڏين؟ فرمايائين ته دنيا جي پوري حياتي ننڍي ۽ قيامت جو هڪ ڏينهن وڏو آهي. جيڪڏهن ڪو شخص ساريءَ دنيا جي حياتيءَ جيتري عمر ڏنو وڃي ته به ان تي حق آهي ته ايڏي وڏي ڏينهن جي اچڻ لاءِ الله تعالىٰ جي عبادت ڪندو رهي. (٢) مقصد ته الله تعالىٰ هن سورة جي آخر ۾ عجيب اسرار، حڪمتون ۽ سهڻا اخلاق بيان ڪندي سورة پوري ڪئي آهي. الحمد لله، مون هن سورة جو تفسير ١٥-١-١٤١٥هه جمعي جي ڏينهن صبح جو لکي پورو ڪيو.

وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ اَوَّلًا وَآخِرًا وَعَلٰى نَبِيِّهٖ وَحَبِيْبِهِ الصَّلٰوةُ وَالسَّلَامُ بَاطِنًا وَظَاهِرًا وَعَلٰى آلِهٖ وَاَصْحَابِهِ الَّذِيْنَ جَعَلَهُمُ اللّٰهُ اَهْلَهَا طَيِّبًا وَطَاهِرًا

**الراقم محمد ادريس الداهري الطاهري البخشي النقشبندي**
**العلوي الشاذلي عفي عنه وعن والديه وعن اساتذته**

(١) مسند امام احمد بن حنبل ص٢٣٦ جلد ٥ (٢) تنوير الاذهان ص ٣١٣ جلد١

# سورة النساءِ جو تعارف

هن سورة جي تعارف ۾ اٺ (٨) ڳالهيون قابل غور آهن:

١- نالو- نالي جي معنيٰ ۽ انهيءَ نالي رکڻ جو وجه - هن سورة جو نالو النساءِ آهي. جنهن جي لفظي معنيٰ آهي عورتون- انهيءَ نالي رکڻ جو سبب هي آهي جو هن سورة ۾ عورتن جي متعلق مسئلا نڪاح، وارث بنجڻ ۽ ورثي ۾ سندن حصن وغيرها جا احڪام گهڻا ذڪر ڪيل آهن. (١)

٢- ٻيو رڪوع آيتون وغيره- هن سورة ۾ چوويهه (٢۴) رڪوع ۽ اڪثر قارين جي فيصلي مطابق هڪ سؤ ڇاهتر (١٧٦) آيتون (٢)، ٽي هزار ۽ پنجٽيهه (٣٠٣٥) ڪلما، سورهن هزار ۽ ٽيهه (١٦٠٣٠) حرف آهن. (٣) هيءَ سورة قرآن ڪريم جي سورتن ۾ البقره کان پوءِ وڏي سورة آهي.

٣- ٽيون ڪٿي نازل ٿي- علامه آلوسي بغداديءَ، قرطبيءَ، مظهريءَ ۽ مراغيءَ جي لکڻ مطابق صحيح قول اهو آهي ته هيءَ سورة مديني منوره ۾ لٿي هئي. بيهقيءَ دلائل النبوة ۾حضرت ابن عباس کان، ابن المنذر ۽ امام بخاريءَ حضرت قتاده کان روايتون آنديون آهن ته هيءَ سورة مدني آهي. امام بخاريءَ حضرت ام المومنين عائشه رضي الله عنها کان جيڪا روايت آندي آهي ان مان به ثابت ٿئي ٿو ته هيءَ سورة مديني منوره ۾نازل ٿي هئي. (۴)

## سوال

هن سورة ۾ لفظ "يَآاَيُّهَا النَّاسُ" آيو آهي جيڪو مڪي وارن سان خطاب ۾ استعمال ڪيو ويندو آهي جنهن مان ثابت ٿو ٿئي ته هيءَ سورة مڪي آهي. پوءِ مدني ڪيئن ٿا چئو؟

## جواب

اهو دليل معتبر ناهي. ڇوته "يَآاَيُّهَا النَّاسُ" لفظ سورة البقره ۾ به به

(١) حقاني ص١٦٣ المنار ص٣٢٢ جلد۴ (٢) تفسير ڪبير ص١٥٧ جزءِ ٩
(٣) الخازن ص٣١٩ جلد ۴١ روح المعاني ص١٧٨ جلد ٢ ضياءِ القرآن ص٣١١ جلد١
(۴) روح المعاني ص١٧٨ جلد ٢ القرطبي ص١ جلد٥ المظهري ص٢٠۴ جلد ٢ المراغي ص١٧٣ جلد١ جزءِ ۴

پيرا آيل آهي حالانڪ سيني جو اتفاق آهي تہ سورة البقره مدني آهي.

ابن الضريس ڪتاب الفضائل ۾، النحاس ڪتاب الناسخ ۾، ۽ ابن مردويه حضرت عبدالله بن الزبير ۽ حضرت زيد بن ثابت رضي الله عنهما کان روايتون آنديون آهن تہ هيءَ سورة مدني آهي. (١)

۴- چوٿون هن سورة جو آلعمران سان تعلق ۽ ربط- ٻنهي سورتن جو پاڻ ۾ ربط ۽ تعلق پنجن (۵) وجهن سان آهي.

١- هڪ تہ آلعمران ۾ ٻن عورتن بيبي حنه ۽ عمران جي نياڻيءَ مريم سائڻ جو ذڪر هو. جنهن جي ڪري سندس نالو آلعمران رکيو ويو ۽ هن سورة ۾ عام عورتن جي لاءِ حڪمن جو بيان آهي.

٢- ٻيو تہ آلعمران ۾ احد جي جنگ جو گهڻو بيان هو ۽ هن ۾ "فَمَا لَكُمْ فِى الْمُنٰفِقِيْنَ فِئَتَيْنِ" کان ان جو ڪجهہ حصو بيان ٿيل آهي.

٣- ٽيون تہ آلعمران ۾ احد جي جنگ کان پوءِ ٿيڻ وارين جنگين، بدر صغريٰ وغيره جو "اَلَّذِيْنَ اسْتَجَابُوْا لِلّٰهِ وَالرَّسُوْلِ" سان اجمالي، مختصر ذڪر ڪيل هو ۽ هن سورة ۾ "وَلَا تَهِنُوْا فِى ابْتِغَآءِ الْقَوْمِ" سان رهيل بيان آندو ويو آهي.

۴- چوٿون تہ آلعمران "وَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ" آٿي تقويٰ جي ذڪر سان پوري ڪئي وئي ۽ هيءَ سورة "يٰاَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوْا رَبَّكُمْ" آٿي تقويٰ جي ذڪر سان شروع ڪئي وئي آهي. پهرينءَ سورة ۾ تقويٰ جي محل مخالفن جا معاملا هئا جيئن غنيمت جي مال ۾ خيانت ڪرڻ وغيره ۽ هن ۾ تقويٰ جي محل مخالفن کان سواءِ پنهنجا هڪ ٻئي سان معاملا آهن جيئن يتيمن، مڙن، مائٽن ۽ گهروارين وغيره جا حقوق (٢)

۵- پنجون تہ جيئن آلعمران ۾ يهودين، نصارن ۽ منافقن سان علمي بحث ۽ جنگ جو ذڪر آهي تيئن هن سورة ۾ بہ آهي.

۵- پنجون- هن سورة جي نزول جي شروعات، جو وقت - مفسرن جي تحقيق مطابق هن سورة جي نزول جي ابتداءِ سنه ٣ هجريءَ ۾ احد جي جنگ کان پوءِ

(١) فتح القدير ص٤١٦ ج١
(٢) نعيمي ص٥٠١ جلد٤ روح المعاني ص١٧٨ جلد ٢ المراغي ص١٧٣ جلد٢ ڪمالين شرح اردو جلالين ص٥١٣ ج١ معارف القرآن ص٢٧٧ جلد٢

تڏهن ٿي جڏهن احد ۾ شهيد ٿيل ستر (٧٠) مسلمانن جي يتيمن جي سنڀال ۽ ورثي ورهائڻ واري مسئلي اهميت اختيار ڪئي هئي. خوف واري نماز سنہ ۴ هہ ۾ ذات الرقاع نالي جنگ جي دوران ادا ڪئي وئي ۽ تيمم جي اجازت سنہ ۵ هہ ۾ بني مصطلق سان جنگ وقت ڏني وئي. انهن واقعن جي سالن مان معلوم ٿو ٿئي تہ هن سورة جو نزول احد جي جنگ کان پوءِ ٿيو ۽ پنجين سن هجريءَ جي اوائل تائين جاري رهيو. (١)

٦- ڇهون هن سورة جا مضمون - هيءَ سورة غالباً اٺن (٨) مضمونن تي مشتمل آهي ١- ڪليل ۽ لڪل هر حال ۾ الله تعاليٰ کان ڊڄڻ ٢- مخاطبن ڪي ذهن نشين ڪرڻ تہ سڀئي هڪ وجود مان آهن. ٣- قرابت، مٽيءَ ۽ مائٽيءَ جا احڪام ۴- نڪاح ۽ ورثي جا احڪام ۵- جهاد جا احڪام ٦- اهل ڪتاب سان علمي ۽ تحقيقي گفتگو ٧- منافقن جي حالتن جون خبرون ٨- آخري آيتن ۾ يهودين ۽ نصارن کي سمجهاڻيون. (٢) مقصد تہ هيءَ سورة نهايت اهم ۽ وڏن موضوعن تي مشتمل آهي. هن ۾ گهرو زندگيءَ ڏي زياده متوجه ڪيو ويو آهي ڇوتہ انسان جو گهرئي ان جو بنياد آهي گهر ۾ ئي ايندڙ وقت کي اڏڻ وارا پاليا وڃن ٿا گهر ئي اهو مدرسو آهي جتي سٺا يا برا اخلاق ۽ ڪردار ٻچن جي دل تي اثر انداز ٿيندا آهن ڪڏهن ڪڏهن گهرن ۾ يتيم ٻار بہ هوندا جن جي ملڪيت کي سنڀاليندڙ بهانا ڳاهي هضم ڪرڻ جي ڪوشش ڪندا آهن. هن سورة ۾ انهن جي حقوق جو هرلحاظ سان خيال رکڻ بہ سجهايو ويو آهي. ڪيترن ملڪن ۾ عورتن کي ظلم جو نشان بنائي سندن ملڪيت جا حقوق غصب ڪيا ويندا هئا. هن سورة ۾ انهن جي حقوق، والدين، اولاد، ڀائرن ۽ مڙس جي ملڪيت ۾ وارث هجڻ جو بہ اعلان ڪيو ويو آهي نڪاح ڪرڻ کان پوءِ زال ۽ مڙس جا هڪ ٻئي تي حقوق عائد ٿين ٿا انهن ۾ واقع ٿيندڙ غلطين جي اصلاح ڪئي وئي آهي جيڪڏهن ڪو مڙس گهر ۾ هڪ کان وڌيڪ زالون رکڻ گهري تہ انهن ۾ عدل ۽ انصاف قائم رکڻ جهڙا اهم قيود ۽ شرط بيان ڪيا ويا آهن. مڙس کي زال سان سهڻو سلوڪ رکڻ ان جي برداشت ڪرڻ جهڙين مناسب غلطين تي صبر ڪرڻ جو بہ ارشاد ٿيل آهي عورت کي انهن سيني حقن عطا ڪرڻ سان گڏ گهر سنڀالڻ ۽ اڳواٽي ڪرڻ جا حق مڙس جي حوالي ڪيا ويا آهن ۽ اهائي حقيقتن جي نگهباني ۽ هر ڳالهہ ۾ درميانہ روي قرآن ڪريم جي

(١) في ظلال القرآن ص۵۵۴ جلد١ (٢) المراغي ص١٧۵ جلد ٢ جزءِ ٣

ڪلام الله هجڻ جو دليل آهي. جنهن ۾ نہ افراط آهي نہ تفريط- مالي حقوق ۾ صحيح ۽ انصاف واري تقسيم، جنهن ۾ معمولي ڪوتاهي بہ ياءُ ڪي ياءُ ڪان جدا ڪري ڇڏيندي آهي ان تقسيم جو بہ هن سورة ۾ ڪي قدر تفصيلي بيان ڪيل آهي. مسلمانن ڪي پنهنجن حقن حاصل ڪرڻ ۽ ظالمن ڪي دفع ڪرڻ جي لاءِ جهاد جي موڪل ڏيندي، سندن حوصلہ افزائي ڪندي منافقن جي مختلف ٽولن مان هرهڪ ٽولي سان ان جي حال موافق رويي اختيار ڪرڻ جي هدايت ڪئي وئي آهي. انفرادي طرح ڪردار جي تعمير ڏانهن توجه ڏياريندي انهن بي عمل قومن جي پويان لڳڻ کان روڪيو ويو آهي جيڪي حق جي بلنديءَ لاءِ ڪنهن بہ قسم جي جاني ۽ مالي قرباني ڏيڻ لاءِ تيار نہ هوندي صرف پاڻ ڪي ئي خداوندي انعامن جو حقدار سمجهن ٿيون. مصطفوي امت (عليٰ نبيها الصلواة والسلام) کي سمجهائيندي صاف صاف ٻڌايو ويو آهي تہ هن دنيوي حياتيءَ ۾ بہ ڪاميابي ان جي ٿيندي، جيڪو سهڻي ۽ مسلسل عمل سان پنهنجي برتري ثابت ڪندو خيالي پلائن پچائڻ ۽ هوا تي قلعن اڏڻ سان ڪجھ بہ حاصل نہ ٿيندو. اهو بہ روشن ڪيو ويو آهي تہ هڪ ٻئي سان تعلقات جو دارومدار احسان ۽ مهربانيءَ تي آهي جيڪو جيترو وڌيڪ مٿ ۽ قريب هجي ان سان اوتري مهرباني ۽ احسان ڪرڻ گهرجي ۽ هڪ آيت ۾ الله تعاليٰ پنهنجيءَ پاڪ ذات جو قسم کڻندي ٻڌايو آهي تہ رسول الله صلی الله تعاليٰ عليہ وسلم جن جي اطاعت ۽ سندن حاڪميت کي تسليم نہ ڪرڻ وارو مومن ٿي نہ ٿو سگهي.

## هن سورة جون ڀلايون

هن سورة جا فضائل حضور صلی الله عليہ وسلم جن ۽ اصحابن ۽ تابعن بيان فرمايا آهن جن مان ڪجھ هتي لکجن ٿا.

## نبوي حديثن مان هن سورة جون ڀلايون ۽ برڪتون

حديث ١

امام احمد، حاڪم، ابن الضريس فضائل القرآن ۾ ۽ بيهقيءَ شعب الايمان ۾ ام المومنين سيده عائشہ رضي الله تعاليٰ عنها کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو "مَنْ اَخَذَ السَّبْعَ فَهُوَ حِبْرٌ" (١) يعني جنهن ست (وڏيون) سورتون بقره کان توبہ تائين حاصل ڪيون اهو وڏو عالم آهي انهن ستن ۾ سورة النساءِ بہ داخل آهي.

(١) الدر المنثور ص٤٢٢ ج٢

## حديث ۲

بيهقيءَ شعب الايمان ۾ حضرت واثلہ بن الاسقع رضي اللهُ تعالىٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن فرمايو "اُعْطِيْتُ مَكَانَ التَّوْرَاةِ السَّبْعَ الطُّوَلَ وَالْمِئِيْنَ" (۱) يعني (حضرت موسىٰ عليہ الصلواة والسلام تي نازل ڪيل) توراة جي عوض مون کي ست وڏيون ۽ سؤ آيتن واريون سورتون (البقره کان التوبه تائين) ڏنيون ويون آهن مقصد تہ سورة النساءِ بہ انهن ۾ شامل آهي ان جي ڪري اها بہ وڏي شان واري آهي جيڪا ڪين ڏني وئي آهي.

## حديث ۳

حضرت ابن عباس رضي الله تعالىٰ عنهما کان روايت آهي تہ جڏهن سورة النساءِ نازل ٿي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "لَا حَبْسَ" (۲) ناهي ڪا رڪاوٽ. هن حبس جي لفظ جي وضاحت ڪندي علامہ ابن الاثير لکيو آهي تہ اراد انه لا يوقف مال ولا يزوي عن وارثه الخ (۳) يعني جاهليت جي دور ۾ جيڪڏهن ڪو ماڻهو مري ويندو هو تہ ان جو ورثو نہ ورهائيندا هئا ۽ ان جي زالن کي بہ شاديءَ ڪرڻ کان بہ روڪيندا هئا پر اسلام هن سورة لهڻ جي ڪري اهي سڀ رڪاوٽون ختم ڪري ڇڏيون.

## پيارن اصحابن جو پيارو ارشاد

حضرت عبدالله بن مسعود ۽ حضرت ابن عباس رضي الله عنهم کان روايت آهي تہ: سورة النساءِ ۾ هيٺ لکيل آيتون اهڙيون آهن جو جيڪڏهن اسان کي ساري دنيا ۽ جيڪو منجهس آهي انهن جي بدلي ۾ ڏنو وڃي تہ بہ اسين خوش نہ ٿينداسين ۽ اهي هن امت جي لاءِ هر ان شيءِ کان پليون آهن جن تي سج لٿو يا ايريو آهي. ۱- هڪ "اِنَّ اللّٰهَ لَا يَظْلِمُ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ" آيت ۴۰- ۲- ٻي "اِنْ تَجْتَنِبُوْا كَبَآئِرَ مَا تُنْهَوْنَ عَنْهُ" آيت ۳۱- ۳- "اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ" آيت ۴۸- ۴- چوٿين "وَلَوْ اَنَّهُمْ اِذْ ظَّلَمُوْٓا اَنْفُسَهُمْ" آيت ۶۴- ۵- پنجين "وَاِنْ تَكُ حَسَنَةً يُّضٰعِفْهَا" آيت ۴۰- ۶- ڇهين "وَمَنْ يَّعْمَلْ سُوْٓءًا اَوْ يَظْلِمْ نَفْسَهٗ" آيت ۱۱۰- ۷- ستين "يُرِيْدُ اللّٰهُ لِيُبَيِّنَ لَكُمْ وَيَهْدِيَكُمْ سُنَنَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ" آيت ۲۶- ۸- اٺين "وَاللّٰهُ يُرِيْدُ اَنْ يَّتُوْبَ عَلَيْكُمْ وَيُرِيْدُ الَّذِيْنَ يَتَّبِعُوْنَ الشَّهَوٰتِ اَنْ تَمِيْلُوْا مَيْلًا عَظِيْمًا" آيت ۲۷- ۹- نائين "يُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ يُّخَفِّفَ عَنْكُمْ وَخُلِقَ الْاِنْسَانُ ضَعِيْفًا" آيت ۲۸- (۴)

(۱) الدر المنثور ص۴۲۲ ج۲ (۲) ابن ڪثير ص۴۲۸ ج۱
(۳) النهاية لابن الاثير ص۳۲۹ ج۱ (۴) تفسير ابن ڪثير ص۴۴۸ ج۱

سُوْرَةُ النِّسَآءِ مَدَنِيَّةٌ وَهِيَ مِائَةٌ وَّ سِتٌّ وَّسَبْعُوْنَ آيَةً وَّاَرْبَعٌ وَّعِشْرُوْنَ رُكُوْعًا

سورة نساءِ مدني آهي ۽ اها هڪ سؤ ڇاهتر (١٧٦) آيتون ۽ چوويھ (٢٤) رڪوع آهي

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

الله جي نالي سان (شروع ڪيان ٿو جو) وڏو مهربان، هميشہ رحم ڪندڙ آهي

يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوْا رَبَّكُمُ الَّذِیْ خَلَقَكُمْ مِّنْ نَّفْسٍ وَّاحِدَةٍ

اي انسانؤ! ڊڄو پنهنجي پالڻهار کان جنهن پيدا ڪيو اوهان کي هڪ جان مان

وَّخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالًا كَثِيْرًا وَّنِسَآءً ۚ وَاتَّقُوا

۽ پيدا ڪيائين ان مان ان جي جوڙ کي ۽ پکيڙيائين انهن ٻنهي مان مردن گهڻن ۽ عورتن کي ۽ ڊڄو

اللّٰهَ الَّذِیْ تَسَآءَلُوْنَ بِهٖ وَالْاَرْحَامَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلَيْكُمْ رَقِيْبًا ①

الله کان جو هڪ ٻئي کان سوال ٿا ڪيو ان (جي واسطي) سان (۽ ڊڄو) مائٽين ڇنڻ کان بيشڪ الله آهي اوهان تي نگهبان

وَاٰتُوا الْيَتٰمٰۤى اَمْوَالَهُمْ وَلَا تَتَبَدَّلُوا الْخَبِيْثَ بِالطَّيِّبِ ۠ وَلَا

۽ ڏيو يتيمن کي مال انهن جا ۽ نہ مٽائي وٺو پليد پاڪ جي عوض ۽ نہ

تَاْكُلُوْۤا اَمْوَالَهُمْ اِلٰۤى اَمْوَالِكُمْ ؕ اِنَّهٗ كَانَ حُوْبًا كَبِيْرًا ② وَاِنْ

کائو مال انهن جا گڏائي مالن پنهنجن سان بيشڪ اهو آهي ظلم وڏو ۽ جيڪڏهن

خِفْتُمْ اَلَّا تُقْسِطُوْا فِی الْيَتٰمٰى فَانْكِحُوْا مَا طَابَ لَكُمْ مِّنَ

ڊڄو ٿا تہ نہ انصاف ڪري سگهندؤ يتيمن (جي معاملي) ۾ تہ پوءِ نڪاح ڪيو انهن سان جو وڻيون اوهان کي

النِّسَآءِ مَثۡنٰى وَثُلٰثَ وَرُبٰعَ ۚ فَاِنۡ خِفۡتُمۡ اَلَّا تَعۡدِلُوۡا فَوَاحِدَةً اَوۡ

عورتن مان ٻہ ٻہ ۽ ٽي ٽي ۽ چار چار پوءِ جيڪڏهن ڊڄو ٿا جو نہ عدل ڪري سگهندؤ تہ پوءِ هڪڙي يا

مَا مَلَكَتۡ اَيۡمَانُكُمۡ ؕ ذٰلِكَ اَدۡنٰۤى اَلَّا تَعُوۡلُوۡا ﴿۳﴾ وَاٰتُوا

اها (ٻانهي) جو مالڪ ٿيا آهيو ان جا اهو ويجهو آهي هن (ڳالهہ کي) جو نہ ظلم ڪيو ۽ ڏيو

النِّسَآءَ صَدُقٰتِهِنَّ نِحۡلَةً ؕ فَاِنۡ طِبۡنَ لَكُمۡ عَنۡ شَىۡءٍ مِّنۡهُ نَفۡسًا

عورتن کي مهر انهن جا خوشيءَ سان پوءِ جيڪڏهن خوشيءَ سان ڇڏين اوهان کي ڪا شيءِ ان مان پاڻهي

فَكُلُوۡهُ هَنِيۡٓـئًا مَّرِيۡٓـئًا ﴿۴﴾

تہ پوءِ کائو ان کي پاڪ بي ضرر (سمجهي)

# تفسير

ڄاڻڻ گهرجي تہ زندگيءَ جي خوشين سان معاشرو تڏهن لطف حاصل ڪندو آهي. جڏهن هر خاندان جي فردن ۾ محبت ۽ پيار موجود هوندو. مٺي مائٽي ڳنڍڻ، هڪ ٻئي سان احسان، رواداري ۽ سهڻو سلوڪ رکڻ ان محبت ۽ پيار لاءِ نهايت ئي اهم آهن ان جي متعلق هن سورة ۾ واضح احڪام ۽ هدايتون ڏنيون ويون آهن. فرمان ايزدي آهي "يَاۤاَيُّهَا النَّاسُ!" اي سيئي انسانؤ! هتي الناس ۾ سڀ انسان مرد ۽ عورتون جيڪي ان جي نازل ٿيڻ وقت موجود هئا ٽن وجهن جي ڪري داخل آهن ١- تہ الناس ۾ الف، لام استغراقي (سيني کي ميڙي وٺڻ لاءِ) آهي. ٢- تہ اڳتي "خَلَقَكُمۡ مِّنۡ نَّفۡسٍ وَّاحِدَةٍ" بيٺو آهي. يعني اوهان کي هڪ وجود مان پيدا ڪيائين ۽ ظاهر آهي تہ هڪ وجود مان مرد ۽ عورتون سڀ پيدا ٿيل آهن ٣- تہ "اِتَّقُوۡا" ۾ تقوىٰ اختيار ڪرڻ جو حڪم صرف مردن لاءِ نہ پر عورتن لاءِ بہ آهي. (١) "اِتَّقُوۡا" يعني ڊڄو ۽ تقوىٰ

(١) تفسير ڪبير ص١٥٨ جزءُ ٩

اختيار ڪيو. ان ۾ تقوىٰ جو حڪم ڪافرن ۽ مومنن ٻنهي کي شامل آهي ڪافرن لاءِ تقوىٰ ايمان آڻڻ آهي ۽ مومنن لاءِ تقوىٰ نيڪ عمل آهن. "رَبَّكُمُ" پنهنجي پالڻهار کان - هتي تقوىٰ اختيار ڪرڻ جي حڪم کان پوءِ الله تعاليٰ جي سهڻن نالن مان "رب" جو لفظ تقوىٰ جي حڪمت ۽ علت بيان ڪرڻ جي لاءِ آندو ويو آهي. يعني جنهن پالڻهار اوهان کي پاليو ۽ جنهن جي ربوبيت جو ظهور پنهنجيءَ زندگيءَ جي هر لمحي ۾ مشاهدو ڪري رهيا آهيو ان کان ڊڄو. اهڙي مهربان پالڻهار جي مخالفت ۽ ان جي احڪام سان سرڪشي ڪرڻ نهايت خطرناڪ آهي. "اَلَّذِيْ خَلَقَكُمْ مِّنْ نَّفْسٍ وَّاحِدَةٍ" هتي "نَفْسٍ وَّاحِدَةٍ" مان مراد حضرت آدم عليہ السلام آهي ۽ پيدا ڪندڙ هڪ الله تعاليٰ آهي جنهن سڀئي انسان هڪ حضرت آدم عليہ السلام مان پيدا ڪيا آهن ۽ جڏهن سڀئي هڪ اصل مان آهن تہ هڪ ٻئي سان همدردي بہ ڪن ۽ پنهنجي خلقڻهار کي راضي بہ ڪن ڇوتہ ان جي مهربانيءَ سان ئي انسانن جي بقا آهي "وَّخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا" يعني ان هڪ وجود مان ئي سندس جوڙ بہ پيدا ڪيائين. ان جوڙ مان مراد حضرت بيبي حوا رضي الله عنها آهي جيڪا حضرت آدم عليہ السلام جي کٻيءَ پاسريءَ مان پيدا ڪئي وئي هئي. جيئن بخاري ۽ مسلم حضرت ابوهريره رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو: "اِسْتَوْصُوْا بِالنِّسَآءِ خَيْرًا فَاِنَّهَا خُلِقَتْ مِنْ ضِلَعِ آدَمَ" الحديث - يعني عورتن سان چڱائي ڪرڻ جي وصيت وٺو. ڇوتہ انهن مان پهرين عورت (حضرت) آدم (عليہ السلام) جي پاسريءَ مان پيدا ڪئي وئي آهي. محدث ابوالشيخ حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي تہ بيبي حوا رضي الله عنها حضرت آدم عليہ السلام جي کٻيءَ پاسريءَ مان پيدا ڪئي وئي هئي. ڪيترن ٻين محدثن، ابن ابي شيبه، عبد بن حميد، ابن جرير، ابن المنذر ۽ ابن ابي حاتم، قرآن ڪريم جي مفسر مجاهد کان روايت آندي آهي تہ جڏهن حوا سائڻ حضرت آدم عليہ السلام مان پيدا ڪئي وئي هئي تہ اهو ننڊ ۾ هو. (١)

رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي انهن حديثن ۽ اصحابن ۽ تابعين جي فرمانن مان ثابت ٿيو تہ "نَفْسٍ وَّاحِدَةٍ" مان مراد حضرت آدم عليہ السلام ۽ "زَوْجَهَا" مان مراد بيبي حوا آهي پوءِ جيڪي مفسر انهن نبوي حديثن ۽ آثار صحابہ جي خلاف ٿا لکن انهن جي ڳالهہ توجهہ جي لائق ناهي.

(١) تفسير مظهري ص٢٠۴ ج٢

# سوال

حضرت بي بي حوا سائڻ کي حضرت آدم عليہ السلام جي پاسريءَ مان پيدا ڪرڻ ۾ ڪهڙي حڪمت هئي؟ ڇا اها حضرت آدم عليہ السلام وانگر مٽيءَ مان پيدا نہ ٿي سگهي ها؟

# جواب

ان جي اصل حڪمت تہ الله تعاليٰ ڄاڻي ٿو پر بظاهر جيڪا سمجھہ ۾ اچي ٿي سا هيءَ آهي تہ ان سان الله تعاليٰ پنهنجي قدرت جو ڪمال ظاهر ٿي ڪيو تہ جيڪو رب مٽيءَ مان انسان ناهي سگهي ٿو اهو دنيا ۾ چٽڻ واري مروج نظام ڪان سواءِ بہ هڪ انسان جي جسماني حصي مان ٻئي انسان کي ٻاهر ڪڍي سگهي ٿو.

"وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالاً كَثِيْرًا وَّنِسَآءً" يعني الله تعاليٰ انهن ٻنهي آدم ۽ حوا عليهما السلام مان ڪيترا مرد ۽ عورتون پيدا ڪري دنيا ۾ پکيڙي ڇڏيا جو هڪ اصل هجڻ جي باوجود انهن جا رنگ روپ، مزاج، عادتون، غذا، لباس، ٻوليون ۽ معيشت جا نمونا جدا جدا آهن پوءِ جنهن مالڪ انهن سڀني کي هڪ وجود مان پيدا ڪيو آهي اهو مرڻ ڪان پوءِ بہ انهن سڀني کي جيئرو ڪري اٿاري محشر جي ميدان ۾ گڏ ڪري سگهي ٿو. "وَاتَّقُوا اللهَ الَّذِيْ تَسَآءَلُوْنَ بِهٖ وَالْاَرْحَامَ" يعني جنهن الله تعاليٰ جي نالي جي صدقي هڪ ٻئي ڪان حاجتون گهرو ٿا ان ڪان ڊڄو ۽ مٽي مائٽي ڇنڻ ڪان بہ ڊڄو ۽ بچاءُ ڪيو. ڇو تہ شرعي عذر ڪان سواءِ مائٽي مٽي ڇنڻ سخت گناهہ آهي.

## نبوي حديثن ۾ مائٽي ڇنڻ جي گناهہ جو بيان

### حديث ١

بخاريءَ ۽ مسلم حضرت انس رضي الله تعاليٰ عنہ ڪان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو "مَنْ اَحَبَّ اَنْ يُّبْسَطَ لَهٗ فِيْ رِزْقِهٖ وَيُنْسَا لَهٗ فِيْ اَثَرِهٖ فَلْيَصِلْ رِحْمَهٗ" يعني جيڪو شخص هيءَ ڳالهہ پسند ڪري تہ ان جو رزق ڪشادو ڪيو وڃي ۽ ان جي عمر وڌائي وڃي تہ اهو پنهنجي مائٽي ڳنڍيندو رهي.

## حديث ٢

امام بخاري ۽ امام مسلم حضرت عائشہ رضي الله عنها کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو "اَلرَّحْمُ مُعَلَّقَةٌ بِالْعَرْشِ تَقُوْلُ مَنْ وَصَلَنِيْ وَصَلَهُ اللّٰهُ وَمَنْ قَطَعَنِيْ قَطَعَهُ اللّٰهُ" يعني جنهن مون کي ڳنڍيو ان کي الله ڳنڍيندو ۽ جنهن مون کي ڇني ڇڏيو ان کي الله ڇني ڇڏيندو.

## حديث ٣

امام بخاريءَ ۽ مسلم حضرت جبير بن مطعم رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو "لَايَدْخُلُ الْجَنَّةَ قَاطِعٌ" (١) يعني (مٽي) ڇنندڙ جنت ۾ داخل نہ ٿيندو.

## سوال

اوهان مٽي لکي آيا آهيو تہ شرعي عذر کان سواءِ مائٽي ڇنڻ گناهہ آهي ڀلا اهو شرعي عذر ڪهڙو آهي؟ جنهن جي ڪري مائٽي ڇنڻ جائز آهي

## جواب

الله تعالىٰ ۽ ان جي حبيب عليہ الصلواة والسلام جي گستاخن، صحابن، امامن، اهلبيتن، اوليائن جي دشمنن ۽ بي دينن کان مٽي مائٽي ڇنڻ نہ صرف جائز بلڪ ضروري آهي. قرآن ڪريم ۽ نبوي حديثن ۾ ان جو تفصيل موجود آهي جن جو تفصيل گهٽي ڏيگهہ کان بچڻ جي ڪري ڪونہ ٿو لکجي. "اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلَيْكُمْ رَقِيْبًا" يعني اوهان ڪهڙيءَ بہ حالت ۾ هجو الله تعالىٰ اوهان تي نگهبان ۽ اوهان جي دلي ارادن کان باخبر آهي جيڪڏهن رسمي طورڪو دين جو ڪم ڪيو ٿا دلي محبت ۽ جذبي سان نہ ٿا ڪيو تہ اهو قبول ناهي.

## فائدو

هيءَ آيت "يٰاَيُّهَا النَّاسُ" کان "عَلَيْكُمْ رَقِيْبًا" تائين نڪاح جي خطبي ۾ پڙهڻ سنت آهي ڇوتہ رسول الله صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن پاڻ اها نڪاح جي خطبي ۾ پڙهندا هئا. (٢)

(١) مشڪواة ص۴١٩ (٢) معارف القرآن ص٢٧٧ ج٢

"وَآتُوا الْيَتٰمٰى اَمْوَالَهُمْ" ۽ يتيمن کي سندن مال ڏيو- مفسرن لکيو آهي تہ غطفان قبيلي جي هڪ ماڻهوءَ جي هٿ ۾ سندس يتيم ڀائٽي جي گهڻي ملڪيت هئي جڏهن اهو وڏو عاقل ۽ بالغ ٿيو ۽ چاچي کان پنهنجي ملڪيت جي گهر ڪيائين تہ چاچي ڪيس اها ڏيڻ کان انڪار ڪيو. جڏهن اهو فيصلو ڪٽي حضور صلي الله تعالیٰ عليه وسلم جن جي خدمت ۾ آيا تہ الله تعالیٰ هيءَ آيت نازل فرمائي ۽ چاچي اها ٻڌي ملڪيت ڀائٽيي جي حوالي ڪري حضور صلی الله تعالیٰ عليہ وسلم جن جون دعائون حاصل ڪيون. (١) يَتٰمٰى يتيم جو جمع آهي جنهن جي لفظي معنیٰ آهي اڪيلو، منفرد. جيڪو موتي سپ ۾ اڪيلو هوندو آهي ان کي بہ دريتيم سڏيو ويندو آهي. ۽ اصطلاح ۾ يتيم ان کي چئبو آهي جنهن جو پيءُ مري ويو هجي (٢) ۽ شرعي عرف ۾ اهو تيستائين يتيم آهي جيستائين بالغ نہ ٿئي. بالغ ٿيڻ کان پوءِ ان کي يتيم نہ ٿو چئي سگهجي. جيئن ابودا ؤد سهڻي سند سان حضرت علي رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو: "لَا يُتْمَ بَعْدَ الْاِحْتِلَامِ" (٣) يعني بالغ ٿيڻ کان پوءِ يتيمي ناهي. المقصد تہ يتيمن ٻارن جي ملڪيت جيڪا کين ورثي يا هبہ طور ملي آهي سندن سنڀالڻ واري وارث کي حفاظت ۾ رکڻي آهي. پوءِ اهو سنڀالڻ وارو سندن پيءُ جي طرفان مقرر ڪيل آهي يا حڪومت مقرر ڪيو آهي. اهو ان مال مان انهن يتيمن جو صرف خرچ ڪڍي سگهي ٿو باقي رهيل ملڪيت انهن جي آهي جيڪا انهن جي وڏي ٿيڻ تي انهن جي حوالي ڪرڻي آهي مگر اهو بہ تڏهن جڏهن اهي پنهنجي ملڪيت کي سنڀالڻ جي لائق ٿين، ان کي ضايع ۽ برباد نہ ڪن. جيئن اڳتي آيت٥ ۾ ان جو بيان اچي رهيو آهي. "وَلَا تَتَبَدَّلُوا الْخَبِيْثَ بِالطَّيِّبِ" يعني يتيم جو مال جيڪو اوهان لاءِ ڪائڻ حرام ۽ پليد آهي اهو پنهنجي حلال ۽ پاڪ مال سان نہ مٽايو. بعضي ماڻهو يتيمن جي مال جو تعداد تہ پورو رکندا هئا پر ڀلي شيءِ پاڻ کڻندا ۽ ان جي جاءِ تي سادي يا خراب شيءِ يتيمن لاءِ رکندا هئا. ابن جرير ۽ ابن ابي حاتم سديءَ کان روايت آندي آهي تہ يتيمن جي مال مان سگهي ٻڪري پاڻ جهليندا هئا ۽ ڏٻري انهن لاءِ رکندا هئا ۽ سٺا ۽ صحيح درهم پاڻ کڻندا هئا تہ کوٽا انهن لاءِ رکندا هئا. انهن جي متعلق هي الفاظ نازل ٿيا. (۴) اها بہ

(١) مظهري ص٢٠٦ جلد ٢
(٢) بيضاوي ڪامل ص١٠٢
(٣) مشڪواة ص٢٨۴
(۴) الدر المنثور ص٤٢٦ ج٢

هڪڙي قسم جي خيانت هئي جنهن ڪان روڪيو ويو "وَلَا تَاكُلُوْٓا اَمْوَالَهُمْ اِلٰٓى اَمْوَالِكُمْ" ۾ يتيم جي مال کي ناجائز طريقي سان کائڻ کان روڪيو ويو آهي. پوءِ اهو پنهنجي مال سان ملائي کائي يا جدا ڪري کائي. عام طور هوندو ائين آهي تہ يتيمن جو مال پنهنجي مال سان ملائي رکندا آهن پاڻ بہ ان مان کائيندا آهن تہ يتيمن کي بہ کارائيندا آهن جنهن جو نہ حساب نہ ڪتاب هوندو آهي ۽ ان ۾ ڪيترا دينددار ماڻهو بہ ڏوڪو کائي ويندا آهن جيڪي ان کي گناهہ نہ سمجهندا آهن. ان جي ڪري انهن جي مال کي پنهنجي مال سان ملائي کائڻ کان خصوصي طرح روڪي خبردار ڪيو ويو آهي تہ ياتہ يتيمن جو مال بالڪل جدا رکو يا جيڪڏهن گڏي ٿا رکو تہ حساب ڪتاب رکو جنهن سان يقين ٿئي تہ يتيم جو مال اوهان جي ذاتيٰ خرچ ۾ نہ آيو آهي. هن جو وڌيڪ تفصيل ۽ تشريح سورة بقره سڀوريءَ جي آيت ٢٢٠ ۾ گذري چڪو آهي.

## فائدو

آيت جي لفظ "لا تاڪلوا" ۾ کائڻ کان روڪڻ جو مطلب اهو ناهي تہ انهن جو مال صرف کائڻ جائزناهي پر پيئڻ يا بدن تي ڍڪڻ جائز آهي پر محاوري طور چيو ويندو آهي تہ فلاڻي جي ملڪيت فلاڻو کائي ويو. ان جي لحاظ سان کائڻ کان منع ڪئي وئي آهي نہ تہ ڪنهن بہ نموني سان يتيم جي مال کي کپائڻ حرام آهي. "اِنَّهٗ كَانَ حُوْبًا كَبِيْرًا" حوب معنيٰ وڏو گناهہ (١) يعني يتيم جي مال ۾ ڪنهن بہ قسم جو ناجائز تصرف ڪرڻ حفاظت ۾ ڪمي ڪرڻ سان، يا پلي شيءِ ڪٽي ان جي جاءِ تي گهٽ شيءِ رکڻ سان يا پنهنجي مال سان ملائي هضم ڪرڻ سان وڏو گناهہ آهي. جيئن اڳتي هن سورة جي آيت ١٠ ۾ اچي رهيو آهي.

"فَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا تُقْسِطُوْا فِي الْيَتٰمٰى فَانْكِحُوْا مَا طَابَ لَكُمْ مِّنَ النِّسَاۗءِ مَثْنٰى وَثُلٰثَ وَرُبٰعَ" هتي يتيم نياڻين جي حقوق جي حفاظت لاءِ ارشاد فرمائيندي انهن جي وارثن کي خبردار ڪيو ويو آهي تہ جيڪڏهن اوهان انهن يتيم نياڻين سان انصاف نہ ٿا ڪري سگهو يا خوف اٿو تہ انصاف ڪري نہ سگهندؤ تہ ٻين ڌارين عورتن مان ٻن يا ٽن يا چئن سان بہ نڪاح ڪري سگهو ٿا.

(١) روح المعاني ص١٨٩ جلد٢ جزءِ ٤

## هن آيت جو شان نزول

اسلام کان اڳي جاهليت جي دور ۾ جن ماڻهن جي سنڀال ۽ ورثي ۾ يتيم ڇوڪريون هونديون هيون ۽ نڪاح جي لحاظ سان انهن لاءِ حلال هونديون هيون ته انهن مان ڪن سان حسن ۽ سونهن جي ڪري ته ڪن سان سندن ورثي ۾ آيل مـال، ملڪيت جي ڪري نڪاح ڪري وهندا هئا پر نـه انهن کي صحيح مهر ڏيندا هئا ۽ نه انهن سان صحيح سلوڪ رکندا هئا. انهن جي باري ۾ هيءَ آيت لٿي هئي. (١) جنهن ۾ الله تعالىٰ فرمايو ته انهن يتيم ڇوڪرين جي بجاءِ ٻين عـورتـن مـان جن ڪي پسند ڪيو تا چئن تائين شادي ڪري سگهو ٿا "فَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا تَعْدِلُوا فَوَاحِدَةً أَوْ مَا مَلَكَتْ أَيْمَانُكُمْ ذَالِكَ أَدْنَىٰ أَلَّا تَعُولُوا" يعني انهن گهڻين شادين جي اجازت بـه تڏهن آهي جڏهن انهن سان عدل ڪري سگهو پر جيڪڏهن عدل نـه ٿا ڪري سگهو تـه پوءِ هڪ شادي رکو يا ٻانهيون استعمال ڪيو جن جا اوهان مالڪ آهيو. اها ڳالهه ان ڪي ويجهي آهي جو هڪ طرف جهڪي پئو ۽ ان سان ئي اوهان ظلم ڪرڻ کان بچي سگهندؤ .

## فائدو

يَتٰمٰى يتيم جو جمع آهي ۽ شرعي اصطلاح ۾ يتيم نياڻيءَان کي چئبو آهي جنهن جي نندي هوندي ئي سندس پيءُ وفات ڪري ويو هجي. انهن سان نڪاح ڪرڻ يا ڪرائڻ جو اختيار انهن جي وارثن کي آهي. جيئن هن آيت ۾ آهي تـه "جيڪڏهن خوف اٿو تـه عدل نـه ڪري سگهندؤ تـه پوءِ ٻيون نڪاح ۾ آڻيو" پر نڪاح تـه هنن سان بـه ٿي سگهي ٿو.

ڇاڻڻ گهرجي تـه ٻئن شادين ڪرڻ تي اعتراض اڄايو آهي اسلام تي تنقيد ڪرڻ وارا قرآن ڪريم جي هن آيت تي شور ڪندا آهن تـه اسلام اها اجازت ڇو ڏني آهي؟ مگر اها انهن جي ڳالهه غلط آهي. هڪ مڙس کي هڪ کان وڌيڪ زالون رکڻ اسلام کان اڳ ۾ بـه ڪيترن ملڪن ۾ مروج ۽ دنيا جي ٻين سڀني مذهبن ۾ جائز هو. عرب، هند، ايران، مصر، بابل وغيره ملڪن جي هر قوم ۾ گهڻين زالن رکڻ جو رواج جاري هو ۽ ان جي فطري ضرورتن کان اڄ بـه ڪو انڪار ڪري نـه ٿو سگهي. هلندڙ دور ۾ يورپ وارن پنهنجن اڳين جي خلاف ٻئن زالن رکڻ کي ناجائز سمجهڻ جي ڪوشش

(١) معارف القرآن ص٢٨٤ جلد٢

ڪئي ته ان جو نتيجو گهڻي زنا جي صورت ۾ ظاهر ٿيو ۽ هاڻي اتي جا باشعور عقلمند ۽ داناءَ خود گهڻن شادين جي حق ۾ آهن. مسٽر ڊيون پورٽ (مشهور عيسائي عالم فاضل) گهڻن زالن رکڻ جي باري ۾ انجيل جون ڪيتريون آيتون نقل ڪرڻ کان پوءِ لکيو آهي ته- هنن آيتن مان ثابت ٿيو ته گهڻي زالون رکڻ صرف پسند ڪيل ناهن، پر الله تعاليٰ ان ۾ ڪيتريون برڪتون به رکيون آهن. نڪسن پادريءَ، جان ملٽن ۽ اِيزڪ ٽيلر به پرزور لفظن ۾ ان جي تائيد ڪئي آهي. ويدڪ تعليم غيرمحدود به گهڻن زالن رکڻ کي نه صرف جائز سمجهيو آهي پر ان مان ته ڏهه ڏهه، تيرهن تيرهن، ستاويهه ستاويهه، عورتون هڪ وقت نڪاح ۾ رکڻ به ثابت آهن. هندن جي واجب التعظيم اوتار ڪرشن وٽ سوين زالون هيون. جيڪو مذهب ۽ قانون پاڪائي ۽ پاڪدامني گهرندو ۽ زناڪاري بند ڪرائڻ چاهيندو ان کي گهڻن زالن رکڻ جي اجازت ڏيڻ کان سواءِ ڪوبه چارو نه آهي ۽ ان سان مردن جي به نسبت عورتن جي گهڻي هجڻ جو به علاج ۽ حل ملي ٿو ۽ جيڪڏهن ان جي اجازت نه ڏني ويندي ته زنا ۽ بدڪاري وڌندي. اهوئي سبب آهي جو يورپ ۽ آمريڪا سائنسي ترقيءَ جي باوجود حرامي ٻارن ۽ ڪنوارين مائرن جي بي حساب تعداد ۾ واڌاري جي ڪري پريشان آهن. يو اين او جي رپورٽ جي مطابق بعضي يورپي ملڪن ۾ ناجائز طريقي سان ٻارن جو وچٿرو تعداد سٺ في صد تائين پهچي ويو آهي. (١) هنن حقيقتن کي ڏسندي ۽ انهن مشڪلاتن جو حل پيش ڪندي اسلام (جيڪو فطري دين آهي) ضرورت جي وقت هڪ کان مٿي عورتن سان نڪاح ڪرڻ جي اجازت ڏني آهي ۽ اها به صرف اجازت آهي ضروري حڪم ناهي ۽ اها به ان شرط سان ته عدل ڪري سگهو ۽ جديد ۽ قديم طب جو متفق فيصلو آهي ته مرد جي طبعي ڪيفيت عورت جي طبعي ڪيفيت کان جدا آهي مرد ۾ جنسي رغبت، هم بستري ٿيڻ جي خواهش عورت کان وڌيڪ آهي. ڇوته جيڪڏهن جنسي عمل کان پوءِ عورت حامله ٿي پوي ته ان کي ڪيترن مرحلن مان لنگهڻو ٿو پوي. پيٽ ۾ ٻار جو رهڻ، ٻار ڄڻڻ، ڄڻڻ کان پوءِ ان کي پالڻ، کير وغيره پيارڻ. پوري پوري تربيت ڪرڻ، اهڙا مرحلا آهن جيڪي عورت کي هرويرو خواهش رکڻ کان روڪي ڇڏين ٿا. پر مرد انهن ذميدارين کان آزاد آهي. گهڻو ڪري مرد جنگين ۾ مارجي وڃن ٿا ۽ عورتون رهجي وڃن ٿيون جيڪڏهن هڪ مرد گهڻي عورتون

(١) ضياءِ القرآن ص٣١٨ ج١

نہ رکي تہ اهي ويچاريون کيڏي وجن. جيڪڏهن ڪا عورت پنهنجي مڙس لاءِ بہ نڪاح واري زال برداشت نہ ٿي ڪري تہ چا ان کي اها ڳالهہ وڻي ٿي تہ سندس مڙس زنا ڪري مال ملڪيت بہ تباهہ ڪري ۽ الله تعالىٰ کي بہ ناراض بنائي جڏهن تہ مرڻ کان پوءِ ڪير بہ ڪجهہ ڪٽي نہ هلندو تہ پوءِ حسد چالاءِ ڪيو وڃي. ڇا ڪا سمجهدار عورت اها ڳالهہ پسند ڪندي تہ سندس مڙس هجي ۽ پاڻ حميت ۽ غيرت سان ان جي گهر ۾ رهي، ان جو مڙس سندس آرام جو ذميدار ۽ سندس ناموس جو محافظ هجي، ان جو اولاد جائز تصور ڪيو وڃي ۽ ڪيس عزت وارو مقام حاصل هجي، پر بہ عورت مڙس نہ ڪري بلڪ اهڙي عورت ٿي رهي جو سندس حسن ۽ جواني بري ڪردار ماڻهن جو رانديڪو رهي نہ ان جي اولاد جو ڪو پيءُ هجڻ گوارا ڪري ۽ نہ ڪو سندس بيون ذميداريون قبول ڪري. صرف نفساني خواهشات پوري ڪندي رهي. نہ هرگز نہ. المقصد تہ اسلام کان پهريان بہ گهڻيون زالون رکڻ جو رواج هو پر انهن ۾ انصاف ۽ عدل نہ هوندو هو. قرآن ڪريم ان ظلم کان روڪيندي وڌ ۾ وڌ چئن زالن رکڻ جي اجازت ڏني آهي ۽ جيڪي زالون نڪاح ۾ هجن، انهن جي حقوق جي ادائگيءَ لاءِ سخت تاڪيد ڪيو آهي. هن آيت جي نازل ٿيڻ کان پوءِ جن وٽ وڌيڪ زالون هيون انهن کي صرف چار رکڻ تي عمل ڪرايو ويو. هڪ شخص غيلان بن اسلمہ ثقفي نالي مسلمان ٿيو ان وقت ان جي نڪاح ۾ ڏهہ زالون هيون ۽ اهي بہ مسلمان ٿيون هيون پر رسول الله صلى الله عليه وسلم جن قرآن پاڪ جي حڪم مطابق ان کي فرمايو تہ ڏهن مان صرف چار چونڊي نڪاح ۾ رک باقي ڇهن کي طلاق ڏي. غيلان بن اسلمہ ثقفيءَ انهن مان چار رکيون باقي ڇهن کي طلاق ڏئي آزاد ڪري ڇڏيو. (١) قيس بن الحارث اسديءَ رضي الله تعالىٰ عنہ فرمايو تہ مان جڏهن مسلمان ٿيس تہ منهنجي نڪاح ۾ اٺ زالون هيون. مون رسول الله صلى الله عليه وسلم جن کي ٻڌايو پاڻ فرمايائون تہ "انهن مان چار رک، باقي چئن کي طلاق ڏي." (٢)

## حضور صلى الله عليه وسلم جن جي گهڻين شادين ڪرڻ ۾ حڪمتون

الله تعالىٰ جي پيارن پيغمبرن عليهم الصلوات والتسليمات سان مخالفت ڪرڻ وارا هر دور ۾ هيا، آهن ۽ ايندا جيئن قرآن ڪريم ۾ الله تعالىٰ

(١) مشڪواة ص٢٧۴ (٢) ابوداؤد ص٣٠۴ تفسير مظهري ص٢١٠ ج٢

فرمايو آهي "وَكَذَالِكَ جَعَلْنَا لِكُلِّ نَبِيٍّ عَدُوًّا مِّنَ الْمُجْرِمِيْنَ وَكَفَىٰ بِرَبِّكَ هَادِيًا وَّنَصِيْرًا" (١) يعني هر نبي جا مجرمن مان دشمن هوندا آهن ۽ تنهنجو رب هدايت ڪندڙ ۽ مددگار ڪافي آهي جن هانئن جوڙ نتوئي پلارن تي اعتراض ڪرڻ آهي. (خداتعالیٰ سندن صحبتن ڪان محفوظ رکي) انهن جو حضور صلي الله عليہ وسلم جن تي هيءَ اعتراض هوندو آهي تہ پاڻ گهڻيون شاديون ڇو ڪيائون؟ ڀيو چوندا آهن تہ حضرت عيسیٰ عليہ الصلواة والسلام حضور صلى الله تعالیٰ عليہ وسلم جن ڪان شان ۾ وڌيڪ آهي جو ان شاديون صفا نہ ڪيون هيون. انهن ڪي سمجهائڻ گهرجيٰ تہ گهڻيون شاديون صرف حضور صلى الله عليہ وسلم جن ڪونہ ڪيون هيون ڪائنن اڳ ۾ جيڪي انبياءِ عليهم الصلواة والسلام آيا هيا، انهن بہ گهڻيون شاديون ڪيون هيون. جيئن رب العزة جل شانہ قرآن ڪريم ۾ ٻڌايو آهي تہ "وَلَقَدْ أَرْسَلْنَا رُسُلًا مِّنْ قَبْلِكَ وَجَعَلْنَا لَهُمْ أَزْوَاجًا وَّذُرِّيَّةً" (٢) يعني اوهان ڪان اڳ ۾ بہ اسان رسول موڪليا هئا ۽ انهن لاءِ زالون ۽ اولاد بہ عطا ڪيو هيوسين، جڏهن انهن تي اعتراض نہ هو تہ صرف خاتم النبيين صلي الله تعاليٰ عليہ وسلم جنّ تي اعتراض ڪرڻ ڪي اندر جي بيماري نہ چئجي تہ ڇا چئجي؟

جيئن علامہ شرف الدين بوصيريءَ قصيده برده ۾ فرمايو آهي:

قَدْ تُنْكِرُ الْعَيْنُ ضَوْءَ الشَّمْسِ مِنْ رَّمَدٍ
وَيُنْكِرُ الْفَمُ طَعَمَ الْمَاءِ مِنْ سَقَمٍ

يعني ڪڏهن اک درد هجڻ جي ڪري سج جي روشنائيءَ جو انڪار ڪندي آهي وات وري بيماريءَ جي ڪري پاڻيءَ جي ذائقي جو انڪار ڪندو آهي (٣) دراصل اهي اندر جي اکين جا انڌا هوندا آهن جن ڪي حق ۽ سچ ڏسڻ ۾ نہ ايندو آهي جيئن الله تعاليٰ فرمايو آهي "فَإِنَّهَا لَا تَعْمَى الْأَبْصَارُ وَلَكِنْ تَعْمَى الْقُلُوبُ الَّتِي فِي الصُّدُوْرِ" (۴) يعني (ظاهري) اکيون انڌيون نہ ٿيون ٿين پر اهي دليون انڌيون ٿين ٿيون جيڪي سندن سينن ۾ آهن. مگر اسلام جي لاءِ وقف ٿيڻ وارن، ملت ۽ مذهب لاءِ جهاد ڪندڙن انهن اعتراضن جا اهڙا عاليشان جواب ڏنا آهن جن ڪي پڙهڻ ڪان پوءِ ڪنهن بہ دشمن ڪي اعتراض ڪرڻ جو موقعو نہ ٿو ملي سگهي. انهن جوابن ڪي سمجهڻ لاءِ هي بہ نڪتا ذهن نشين ڪرڻ ضروري آهن

(١) سورة فرقان آيت ٣١ (٢) سورة رعد آيت ٣٨
(٣) احسن التشريح لبردة المديح ص١٧٦ (۴) سورة حج آيت ۴٦

١- هڪ تہ حضور صلی اللہ عليہ وسلم جن اُبتداءِ ۾ هڪ بيبيءَ سيده خديجه الڪبراى رضي الله تعالىٰ عنها سان شادي ڪئي هئي جنهن جي شاديءَ ڪرڻ وقت عمر چاليهہ (۴۰) سال ۽ سندن عمر مبارڪ پنجويهہ (٢٥) سال هئي. جيڪڏهن پاڻ معاذالله صرف نفساني خواهش پوري ڪرڻ لاءِ شوقيہ شادي ڪن ها تہ ايتريءَ وڏي عمر واريءَ جي بجاءِ ڪنهن ننڍيءَ ۽ نوجوان عورت سان شادي ڪن ها.

٢- ٻيو تہ جيستائين اها سائڻ جيئري هئي پاڻ ٻي شادي نہ ڪيائون، حالانڪ سندن جواني هئي.

٣- ٽيون تہ هڪ سيده عائشہ رضي الله عنها کان سواءِ سندن ٻيون سڀئي گهرواريون اڳ ۾ شادي شدهہ هيون ڪنواريون نہ هيون ۽ شوقيہ شادين ڪرڻ وارو ڪنواريون هٽ ڪندو رنڙن سان شادي نہ ڪندو، جيڪي صحابہ ڪرام پنهنجون جانيون بہ حضور صلی اللہ عليہ وسلم جن کان مٿيون نہ ڪندا هئا اهي نياڻيون مٿيون ڪيئن ڪن ها؟

## حضور صلی اللہ عليہ وسلم جن جي طرفان شادي شده عورتن سان شادي ڪرڻ ۾ حڪمتون

سندن پنجاهہ سال جي عمر کان وڏيءَ عمر ۾ نوجوان ڪنوارين جي بجاءِ اڳ ۾ شادي ڪيلن عورتن سان شادين جي پروگرام ۾ چار حڪمتون هيون.
١- هڪ تعليمي ٢- ٻي تشريعي ٣- ٽين اجتماعي ۴- چوٿين سياسي.

١- پهرين حڪمت هيءَ هئي تہ پاڻ انهن عورتن سان نڪاح ڪرڻ کان پوءِ انهن کي تعليم ڏئي معلم بنايائون تانت اهي ٻين عورتن کي جيڪي انسانيت جي آباديءَ جو اڌ آهن شرعي احڪام پڙهائين. چوتہ عورتن تي بہ ائين ئي شرعي فرض عائد ٿين ٿا جيئن مردن تي ۽ گهڻيون عورتون اهي شرعي امر جيڪي عورتن سان خاص واسطو رکندڙ آهن حضور صلی اللہ عليہ وسلم جن کان پڇڻ ۾ بہ حياءُ ڪنديون هيون جيئن حيض، نفاس جا مسئلا يا ٽڙ پوڙ ۽ زال مڙس جي هڪ ٻئي سان متعلق مسئلا وغيرها ۽ جيڪڏهن عورتن ۾ حياءُ هيو تہ پاڻ ڪريم صلی اللہ عليہ وسلم جن تہ سيني کان وڌيڪ حيادار هيا، تنهن ڪري هر سوال جو جواب هرڪنهن عورت کي کليءَ طرح سمجهائڻ ڪين بہ ڏکيو ٿي لڳو، ان جي ڪري بعضي وقتن ۾ اشارن سان سمجهائيندا هئا ۽ جڏهن تہ هر عورت اشارن سان سمجهي نہ ٿي سگهي تہ پوءِ حضور صلی اللہ عليہ وسلم جن جون گهرواريون جيڪي ساڻن گڏ رهي مسئلا سکيون هيون،

انهن کي سمجهائيندڙ هيون ۽ اهو بہ سمجهڻ گهرجي تہ حضور صلی الله عليہ وسلم جن جي سنت صرف قولي ناهي، پر سندن فعل ۽ تقرير کي بہ سنت سڏيو ويندو آهي، جنهن جي اتباع بہ امت تي لازم آهي تہ پوءِ سندن گهر ۾ ادا ڪيل سنتون سندن گهروارين کان سواءِ ڪير ڏسي ۽ سندن امت تائين ڪير پهچائي ها اها ديني خدمت صرف اهي ڪري سگهيون ۽ اهي ئي ڪامل حفظ، ذڪاءَ ۽ يادگيريءَ واريون هيون.
٢- ٻي تشريعي حڪمت: ۽ اها هيءَ هئي تہ پاڻ انهن شادين جي ذريعي غلط رسمن ۽ رواجن کي ختم ڪيائون. مثلاً ڪنهن ڌارئين کي پنهنجو پٽ سڏڻ جو عرب ۾ پراڻو رواج هو. جو انهن کي ورثي، طلاق، نڪاح مصاهرة جي حرمت، نڪاح جي حرمت وغيره ۾ حقيقي پٽن وانگر سمجهندا هئا ۽ ان ۾ هڪ ٻئي جي تقليد ۽ تابعداري ڪندا ايندا هئا الله تعالیٰ ان مسئلي کي سمجهائڻ ۽ غلط رواج کي ختم ڪرڻ جي لاءِ حضور صلي الله عليہ وسلم جن کي الهام ڪيو تہ پاڻ ڪنهن هڪ ڇوڪري کي پنهنجو پٽ ڪري سڏين ۽ پاڻ نبوت جي اظهار کان اڳ ۾ زيدبن حارثہ کي پنهنجو پٽ ڪري سڏيائون جنهن کي ماڻهو زيد بن محمد (ﷺ) چوندا هئا ۽ حضور صلی الله عليہ وسلم جن پنهنجيءَ ڦڦي زينب بنت جحش الاسديہ سان ان جي شادي بہ ڪرائي هئي. مگر جڏهن ان زال ۽ مڙس جو پاڻ ۾ سلوڪ سٺو نہ رهيو ۽ حضرت زيد بن حارثہ ان کي طلاق ڏني تہ الله تعالیٰ پنهنجي محبوب نبي صلی الله عليہ وسلم کي امر ڪيو تہ اها پٽ سڏڻ واري رسم ختم ڪرڻ لاءِ پنهنجي پٽيلي زيد بن حارثہ جي طلاق ڏنل زال زينب بنت جحش الاسديہ سان شادي ڪن تہ ماڻهن مان اهو رواج نڪري وڃي. حضور صلی الله عليہ وسلم جن ان ۾ ٿوري تاخير ڪئي تہ الله تعالیٰ فرمايو: "أَتَخْشَى النَّاسَ وَاللَّهُ أَحَقُّ أَنْ تَخْشَاهُ" يعني ڇا اوهان ماڻهن جو خوف ٿا رکو تہ (ڇا چوندا) الله تعالیٰ ان ڳالهہ جو وڌيڪ حقدار آهي جو ان کان ڊڄو. زيد پنهنجي حاجت پوري ڪري ان کي طلاق ڏئي ڇڏي آهي تہ اسان اوهان کي ان جي ڪري ان سان شادي ٿا ڪرايون تہ ماڻهن کي جيڪا پنهنجي نام نهاد پٽن جي ڪري تڪليف آهي اها ختم ٿي وڃي ۽ اهي بہ پنهنجن نام نهاد پٽن جي طلاق ڏنل زالن سان شادي ڪري سگهن ۽ اهڙي نموني دنيا مان پٽيلا بنائڻ جي رسم کي روڪي غلط عادتون هميشہ لاءِ ختم ڪيون ويون.
الله تعالیٰ قرآن ڪريم ۾ ان جي متعلق هي ارشاد بہ فرمايو "مَا كَانَ مُحَمَّدٌ أَبَا أَحَدٍ مِّنْ رِّجَالِكُمْ وَلَٰكِنْ رَّسُولَ اللَّهِ وَخَاتَمَ النَّبِيِّينَ وَكَانَ اللَّهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمًا" (١) يعني (حضرت) محمد صلی الله عليہ وسلم اوهان جي مردن مان ڪنهن جو پيءُ ناهي ۽ پر الله

(١) سورة الاحزاب آيت ٤٠

جو رسول ۽ نبين ۾ آخري نبي آهي (جنهن کان پوءِ ڪنهن بہ قسم جو نبي نہ ايندو) قرآن ڪريم مان ثابت ٿيو تہ حضور صلي الله عليہ وسلم جن جي اها شادي الله تعاليٰ جي امر سان ٿي هئي ان ۾ ذاتي خواهشات جي ڪابہ ڳالهہ نہ هئي. جيئن بخاري شريف ۾ آهي تہ: سيده زينب رضي الله عنها حضور صلي الله عليہ وسلم جن جي ٻين گهروارين تي فخر ڪندي انهن کي چوندي هئي تہ "زَوَّجَكُنَّ اَهَالِيْكُنَّ وَزَوَّجَنِيْ رَسُوْلُ اللّٰهِ مِنْ فَوْقِ سَبْعِ سَمٰوَاتٍ" اوهان کي اوهان جي اهل وارن پرڻايو آ ۽ مون کي الله تعاليٰ ستن آسمانن کان مٿان حڪم نازل ڪري پرڻايو آهي. اها آهي تشريعي حڪمت جنهن ڪئين مسئلا حل ڪري ڇڏيا.

٣- ٽين اجتماعي حڪمت: جنهن سان ڪيترن قبيلن کي هڪ رشتي ۾ گڏ ڪري ڇڏيو هيائون ان جو مثال حضرت ابوبڪر صديق ۽ حضرت عمر فاروق رضي الله عنهما جي نياڻين سيده عائشہ ۽ سيده حفصہ رضي الله عنهما ۽ قريشين جي ڪيترن پاڙن مان سندن شاديون ڪرڻ آهي. ڪي سندن صهرا تہ ڪي سندن نياڻا هئا. پاڻ ان حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنہ کان نياڻي ورتائون جنهن جون دين لاءِ عظيم قربانيون قيامت تائين دنيا تي يادگار آهن ۽ سندس حق ۾ فرمايائون تہ: "مَا لِاَحَدٍ عِنْدَنَا يَدٌ اِلَّا وَقَدْ كَافَيْنَاهُ مَا خَلَا اَبَابَكْرٍ فَاِنَّ لَهٗ عِنْدَنَا يَدًا يُكَافِيْهِ اللّٰهُ تَعَالٰي بِهَا يَوْمَ الْقِيَامَةِ" يعني اسان وٽ ڪنهن جو بہ ڪو احسان آهي تہ ان جو بدلو ان کي ڏئي ڇڏيو اٿئون پر ابوبڪر کان سواءِ. ڇوتہ ان جي اسان وٽ ايتري خدمت آهي جنهن جو بدلو ڪيس الله تعاليٰ قيامت جي ڏينهن ڏيندو. حضور صلي الله عليہ وسلم جن سندس قدرداني ڪندي سندس نياڻي قبول ڪري ڪين پنهنجي رشتي جو شرف عطا فرمايو ۽ اعليٰ عزت سان نوازيو ۽ ٻي ان فاروق اعظم رضي الله عنہ جي نياڻي نڪاح ۾ آندائون جنهن کي دعائون گهري اسلام تي آندو هيائون جنهن سان الله تعاليٰ اسلام جي عزت وڌائي ان کي پنهنجو صهرو بنائي سندس ديني خدمتن جو داد ڏنائون ۽ پنهنجن وفادارن سان وفاداري ظاهر فرمايائون ۽ حضرت عثمان ۽ حضرت علي رضي الله عنهما کي وري نياڻيون ڏئي نوازيائون جڏهن تہ اهي چارئي سندن وفادار ۽ ديني دعوت ۾ مخلص رهيا هئا تڏهن پاڻ چئني کي پنهنجي رشتي سان نوازڻ فرمايو هيائون.

۴- چوٿين سياسي حڪمت: اها هيءَ آهي تہ پاڻ ٻين قبيلن مان شاديون ڪري انهن کي بہ پنهنجي قريب ڪيائون. ڇوتہ قانون آهي تہ جيڪڏهن ڪو

ماڻهو ڪنهن قوم يا قبيلي مان شادي ڪندو آهي تہ اهي ان ڪي پنهنجو رشتيدار ۽ هيءُ هنن ڪي پنهنجو رشتيدار تصور ڪندو آهي. ان رشتي، مٽيءَ ۽ مائٽيءَ جي ڪري اهي هڪ ٻئي جي مدد ڪندا ۽ هڪ ٻئي سان ساٿ ڏيندا آهن اهڙا ٻيا بہ ڪيترا فائدا حاصل ٿيندا آهن. جن جو هڪ واضح مثال هي آهي تہ حضور صلي الله عليہ وسلم جن ۽ سندن صحابن رضي الله عنهم جي جڏهن عربن جي جنگجو قبيلي بني مصطلق سان جنگ ٿي ۽ انهن کي شڪست آئي تہ جيڪي ڪافر قيدي ٿي آيا هئا انهن ۾ مذڪوره قبيلي جي سردار حارث جي نياڻي جويريہ بہ پنهنجي قوم ۽ قبيلي جي ماڻهن سان گڏ قيد ٿي آئي هئي ۽ جڏهن مجاهدن ۾ انهن قيدين کي ورهايو ويو تہ اها حضرت ثابت بن قيس رضي الله عنہ جي حصي ۾ آئي، جنهن کيس سون جي نَوَن (٩) اوقين (هڪ اوقيہ تقريباً پوڻا چار تولا ٿيندي آهي) تي آزاد ڪرڻ لاءِ رضامندو ڏيکاريو. اها سڌي حضور صلى الله تعاليٰ عليہ وسلم جن جي خدمت عاليہ ۾ حاضر ٿي ۽ اچي عرض ڪيائين تہ مان پنهنجي قوم جي سردار حارث جي نياڻي آهيان منهنجي آزاديءَ لاءِ ٩ اوقيون سون جون گهريون ويون آهن ڇا ڪيان؟ پاڻ ان کي فرمايائون تہ "توکي ان کان پلي ڳالہ ڪپي؟" پڇيائين تہ ڪهڙي؟ فرمايائونس تہ "تنهنجي آزاديءَ لاءِ اوقيون مان ادا ڪري توسان شادي ڪيان" عرض ڪيائين تہ هائو يا رسول الله! حضور صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو تہ "مون ائين ڪري ڇڏيو" اها ڳالہ بظاهر تہ معمولي آهي پر نتيجو ڇا نڪتو. جڏهن اصحابن سڳورن رضي الله عنهم ٻڌو تہ حضور صلي الله عليہ وسلم جن بني مصطلق قبيلي مان شادي ڪئي آهي تہ ان قبيلي جا جيڪي بہ ماڻهو ڪين غلام ڪري ڏنا ويا هئا ائين چئي تہ "رسول الله ﷺ جن جي صاهرن کي غلام ڪري نہ رکبو" انهن سيني کي آزاد ڪري ڇڏيائون. جڏهن هن قبيلي جي تقريباً هڪ سؤ گهرن جا ماڻهو آزاد ٿي ويا تہ اهي حضور صلى الله عليہ وسلم ۽ سندن اصحابن رضي الله عنهم جي ان شفقت ۽ ڪرمنوازي کي ڏسي سيئي ايمان آڻي الله تعاليٰ جي دين ۾ داخل ٿي مسلمان ٿيا.

حضرت بيبي صفيہ (بنت حيي بن اخطب) سائڻ رضي الله عنها جيڪا خيبر جي جنگ ۾ سندس مڙس جي قتل ٿيڻ کان پوءِ هڪ صحابيءَ رضي الله عنہ جي حصي ۾ آئي. صحابہ ڪرام پاڻ ۾ صلاح، مشورو ڪري فرمايو تہ هي عرب جي بني قريظہ قبيلي جي سردار جي نياڻي آهي اها رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي لاءِ ئي

مناسب آهي ۽ اها صلاح حضور صلی اللہ علیہ وسلم جن جي خدمت ۾ پيش ڪيائون پاڻ ان جي عزت ڪي لحاظ ۾ رکي فرمايائون تہ: توکي اختيار آهي وٽئي تہ آزاد ٿي پنهنجي اهل ۾ مٽن ڏي وڃ وٽئي تہ آزاد ٿي مون سان شادي ڪر. ان سندن عزت، عظمت ۽ معاملات ۾ سهڻي رويي کي ڏسي عرض ڪيو تہ: مون کي اهو پسند آهي تہ مون کي آزاد ڪري مون سان شادي ڪيو. جڏهن پاڻ ان سان شادي ڪيائون تہ اها پاڻ تہ مسلمان ٿي پر سندس اسلام قبول ڪرڻ کي ڏسي ڪيترا پيا ماڻهو بہ مسلمان ٿيا. حالانڪہ سندس پيءُ يهودي ۽ رسول الله صلی اللہ علیہ وسلم جن جو وڏو دشمن هو.

حضرت ام المومنين ام حبيبہ جنهن جو اصل نالو رمله هو، حضرت ابوسفيان جي ڌيءُ هئي (ابوسفيان مسلمان ٿيڻ کان اڳ ۾ ڪافرن جو علمبردار، رسول الله صلی اللہ علیہ وسلم جن جو سخت مخالف ۽ ڪٽر دشمن هو) سندس نياڻيءَ مڪي ۾ اسلام قبول ڪري پنهنجي مڙس سان گڏ حبش ڏانهن هجرت ڪئي جڏهن سندس مڙس حبش ۾ وفات ڪئي تہ سخت پريشان ٿي ۽ ڪوبہ سندس ساٿي ۽ مددگار نہ رهيو. جڏهن اها خبر رسول الله صلی اللہ علیہ وسلم جن تائين پهتي تہ پاڻ حبش جي بادشاهہ نجاشيءَ کي پيغام موڪليائون تہ ام حبيبہ کي ساڻن سان شادي ڪرڻ جو پيغام پهچائي. نجاشيءَ کيس اهو پيغام پهچايو تہ بيحد خوش ٿي ڇوتہ جيڪڏهن مڪي مڪرمہ ۾ مائٽن ڏانهن واپس وڃي ها تہ کيس ٻن ڳالهين مان هڪ کي منهن ڏيڻو پوي ها يا ڪافر ٿي اسلام مان هٿ پٽي ها يا سخت عذاب ۽ سزائون سهي ها. حضور صلی اللہ علیہ وسلم جن جي نڪاح واري پيغام کي قبول ڪرڻ جي ڪري نجاشيءَ بادشاهہ کيس چار سؤ (۴۰۰) دينار مهر ۾ ۽ پيا هديا ۽ سوکڙيون ڏئي مديني منوره پهچائڻ جو انتظام ڪيو ۽ مديني ۾ پهچي حضور صلی اللہ علیہ وسلم جن سان شادي ڪيائين جڏهن ابوسفيان کي مڪي پاڪ ۾ اها خبر پهتي تہ ان بہ ان مٽيءَ کي پنهنجي لاءِ فخر سمجهيو ۽ ان مٽيءَ جي ڪرڻ کان پوءِ ابوسفيان مڪي ۾ رهيلن مسلمانن کي ايذائڻ گهٽايو. جنهن مان ثابت ٿيو تہ سندن اها شادي مظلومن جي مٿان ظلم گهٽ ڪرائڻ لاءِ هئي ۽ ان سان گڏ ام المؤمنين رضي الله عنها مڪي ۾ مسلمان ٿيڻ لاءِ هجرت ڪري سفر جون جيڪي صعوبتون ۽ تڪليفون برداشت ڪيون هيون انهن جي بہ حضور صلی اللہ علیہ وسلم جن قدرداني ڪئي ۽ سائڻ کي مومنن جي ماءُ هجڻ جو شرف ۽ شان مليو. هنن دليلن مان چارئي حڪمتون صحيح ثابت ٿيون جن جي

سمجهڻ کان پوءِ ڪوبہ سمجهدار ماڻهو حضور صلي الله عليہ وسلم جن تي شادين جي باري ۾ اعتراض نہ ڪندو پر ان هوندي بہ هڪ هڪ سائڻ سان نڪاح ڪرڻ ۾ جدا جدا حڪمت لڪجي ٿي اميد تہ اها پڙهڻ وارن لاءِ سيني جو سرور ۽ قلب جو قرار ثابت ٿيندي.

چاڻڻ گهرجي تہ حضور عليہ الصلواة والسلام جن يارهن ٻيبين سان شادي ڪئي هئي. ١- هڪڙي خويلد جي ڌيءَ خديجہ ٢- ٻي زمعه جي ڌيءَ سوده ٣- ٽين ابوبڪر صديق جي ڌيءَ عائشه ۴- چوٿين عمر بن خطاب جي ڌيءَ حفصہ ۵- پنجين جحش اسديءَ جي ڌيءَ زينب ٦- ڇهين خزيمہ جي ڌيءَ زينب ٧- ستين ابواميہ مخزوميءَ جي ڌيءَ هند جيڪا ام سلمہ جي ڪنيت سان مشهور آهي. ٨- اٺين ابوسفيان جي ڌيءَ رمله، جنهن کي ام حبيبہ سڏيندا آهن. ٩- نائين حارث هلاليءَ جي ڌيءَ ميمونہ ١٠- ڏهين حارث جي ڌيءَ جويريہ ١١- يارهين اخطب جي پٽ حيي جي ڌيءَ صفيہ رضي الله عنهن وارضاهن

## سيده خديجہ رضي الله عنها سان شادي ڪرڻ ۾ حڪمت

چاڻڻ گهرجي تہ اها سائڻ مومنن جي ماءُ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن جي پهرين گهرواري آهي. ان سان شادي ڪرڻ وقت حضور صلي الله عليہ وسلم جن جي عمر مبارڪ پنجويهہ (٢٥) سال ۽ سائڻ جي عمر چاليهہ (۴٠) سال هئي. سائڻ جي پهرين شادي ابي هالہ بن زراره سان ٿي. ان کان پوءِ عتيق بن عائذ سان ان کان پوءِ سيدنا ومولٰنا حضرت مصطفىٰ صلى الله عليه وسلم جن سان.(١)

سيده خديجہ رضي الله عنها نهايت ذهين، عقلمند ۽ داناءُ هئي ان جي ڪري ئي حضور صلي الله عليہ وسلم جن ساڻس شادي ڪئي هئي تہ اها پنهنجي عقلمندي، دانائي ۽ ڏاهپ سان سندن ساٿ ڏئي دين جون خدمتون ڪري ان جي عمر جو ايڏو وڏو تفاوت سندن نظر ۾ ئي نہ رهيو هو ڇوتہ سندن ان شاديءَ مان مقصد صرف نفساني خواهش پوري ڪرڻ نہ هئي. جيئن حضور صلي الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جو وجود مسعود رسالت ۽ دين جي دعوت جي ذميوارين پوري ڪرڻ لاءِ ظهور پذير ٿيو هو تيئن سندن تعاون ڪرڻ ۽ ساٿ نڀائڻ لاءِ ڪين گهرواري بہ نهايت ئي پرهيزگار، صالحہ، فرمانبردار، جان نثار عطا ٿي هئي. ان ئي عورتن مان اول ايمان آندو هو ۽ ان ئي دين

(١) الاصابة ص٢٨١ جلد۴

جي دعوت ۽ حق جي پيغام پهچائڻ ۾ سندن مڪمل مدد ۽ ڀرپور خدمتون ڪيون هيون.

## سيده خديجہ رضي الله تعالىٰ عنها جي عقلمند هجڻ جو دليل

جڏهن حضور عليہ الصلواة والسلام جن غار حرا ۾ هيا تہ مٿن وحي جو نزول ٿيو، پاڻ گهر ڏانهن موٽي آيا ۽ پنهنجيءَ گهرواري سيده خديجہ رضي الله عنها کي سمورو احوال ٻڌايائون تہ پاڻ کين هنن لفظن سان عرض ڪيائين "اَبْشِرْ كَلَّا وَاللهِ مَا يُخْزِيْكَ اللهُ اَبَدًا اِنَّكَ لَتَصِلُ الرَّحْمَ، وَتُصَدِّقُ الْحَدِيْثَ وَتَحْمِلُ الْكَلَّ وَتُكْسِبُ الْمَعْدُوْمَ، وَتَقْرِي الضَّيْفَ وَتُعِيْنُ عَلىٰ نَوَائِبِ الْحَقِّ" (١) يعني (اوهان کي مبارڪ آهي) خوش ٿيو الله جو قسم آهي تہ الله تعالىٰ اوهان کي هميشہ خواريءَ کان بچائيندو بلاشڪ اوهان مائٽي ڳنڍيو ٿا، سچ ڳالهايو ٿا، غريبن جا بار کڻو ٿا، مسڪينن جي مدد ڪريو ٿا ۽ مهمان جي عزت ۽ حق وارن جو ساٿ ڏيو ٿا. هنن لفظن تي غور ڪيو تہ سائڻ جي ڪيتري نہ فڪري بلندي آهي. سائڻ جي زندگيءَ ۾ پاڻ ٻي شادي نہ ڪيائون ۽ سندس وفات کان پوءِ بہ پاڻ کيس ياد فرمائيندا ۽ سندس خدمتون بيان ڪندا هئا.

## سيده سوده بنت زمعة رضي الله عنها سان شادي ڪرڻ ۾ حڪمت

سيده خديجہ بنت خويلد رضي الله عنها جي وفات کان پوءِ حضور صلي الله تعالىٰ عليہ وسلم جن هن سائڻ سان ان جي ڪري شادي ڪئي جو اها ايمان آڻي مڙس سان گڏ حبش ڏي هجرت ڪري وئي هئي جڏهن اتاهين موٽي آيا تہ سندس مڙس وفات ڪري ويو ۽ ڪيس ڪوبہ سهارو نہ رهيو هو جيڪڏهن مائٽن ڏانهن واپس وڃي ها تہ اهي ڪيس سخت ايذاءُ ڏين ها ۽ مجبور ڪري مشرڪ بنائين ها. پاڻ ان تي نهايت احسان ۽ ڪرم ڪري ڪيس مومنن جي ماءُ بنايائون ۽ سندس سيني خرچن وغيره جا بار برداشت ڪيائون. حالانڪ هيءَ سائڻ بہ ڪانئن عمر ۾ وڏي هئي ۽ حضور عليہ الصلواة والسلام جن سان شاديءَ وقت ان جي عمر پنجونجاهہ (٥٥) سال هئي. جيڪڏهن يهودين ۽ عيسائين ملعونن جي قولن مطابق معاذالله پاڻ عياش

(١) صحيح بخاري ص٣ جلد ١ مطبوعہ اصح المطابع ڪراچي

هجن هاتہ کا ننڍي نوجوان کنوار هٿ ڪن ها. پنجونجاه (٥٥) سالن جي عمر واريءَ سان نڪاح مان ڇا فائدو؟

## سيده عائشه صديقہ رضي الله عنها سان شادي ڪرڻ ۾ حڪمت

هن سائڻ سان شادي ڪرڻ جي ڪري ١- هڪ تہ سندس والد حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنہ جي ديني خدمتن ۽ اسلام لاءِ ڏنل قربانين جي قدرداني ڪرڻي هئي ٢- ٻيو تہ هيءَ سائڻ نهايت ذهين ۽ قوي حافظي واري هئي جنهن جي ذريعي ڪيترين ديني ڳالهيون مسلمانن تائين پهتيون وڏي علم وارا اصحاب ٻلارا بہ سائڻ کان ديني مسئلا حل ڪرائڻ لاءِ ايندا هئا حضور صلي الله عليہ وسلم جن جي حديثن روايت ڪرڻ ۾ ڪيس وڏو ڪمال حاصل هو ان جي ڪري ان سان شادي ڪيائون تہ اها ديني خدمتون سرانجام ڏي.

## سيده حفصه رضي الله عنها سان شادي ڪرڻ ۾ حڪمت

هيءَ سائڻ حضور صلي الله عليہ وسلم جن جي نڪاح ۾ اچڻ کان اڳ خنيس بن حذافہ انصاري رضي الله عنہ جي نڪاح ۾ هئي جيڪو بدر جي جنگ ۾ وڏو امتحان ڏئي شهيد ٿيو هو نهايت دلير ۽ وڏو بهادر هو. ان جي شهادت کان پوءِ ان سان نڪاح ڪرڻ جي لاءِ حضرت عمر رضي الله عنہ حضرت عثمان ۽ حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنهما کي چيو پر انهن سوچڻ جي لاءِ وقت گهريو تہ تيستائين حضور عليہ الصلواة والسلام جن حضرت عمر رضي الله عنہ جي اسلامي خدمتن کي نظر ۾ رکندي سندس دل کي خوش ڪرڻ جي لاءِ سيده حفصہ رضي الله عنها سان نڪاح ڪرڻ فرمايو.

## سيده زينب بنت خزيمہ رضي الله عنها سان شادي ڪرڻ ۾ حڪمت

سيده حفصہ رضي الله عنها سان شادي ڪرڻ کان پوءِ حضور عليہ الصلواة والسلام جن هن سائڻ سان شادي ڪئي. ۽ اها پهريان اسلام جي غازيءَ ۽ مجاهد، الله تعالىٰ جي واٽ ۾ قربان ٿيڻ واري ٻانهي حضرت عبيده بن حارث بن

عبدالمطلب رضي الله عنه وارضاه جي نڪاح ۾ هئي اهو پيارو جڏهن بدر جي جنگ ۾ شهيد ٿيو هو ته هيءَ سائڻ به بدر جي جنگ ۾ قتيلن جو مرهم پٽي ڪرائي ۽ بيون ضرورتون پهچائي رهي هئي مڙس جي شهيد ٿيڻ کان پوءِ جڏهن ڪوبه سندس سنڀالڻ وارو نه هو ته حضور عليه الصلواة والسلام جن سندس دلجوئي ڪندي ڪيس پنهنجي نڪاح ۾ آندو حالانڪ ان وقت هن سائڻ جي عمر به سٺ (٦٠) سال هئي ۽ حضور صلى الله عليه وسلم جن وٽ صرف به سال جيئري رهي پوءِ وفات ڪري وئي. ڇا هن شاديءَ ۾ حضور عليه الصلواة والسلام جن جي عفاف، عظمت، رحمت، فضل، احسان، شفقت، ۽ رحمة للعالمينيءَ کان سواءِ ٻيو ڪجهه نظر اچي ٿو؟ شال الله تعالىٰ مسلمانن کي يهودين ۽ عيسائين ظالمن جي مڪر کان بچائي جيڪي علم پڙهندا ٿي حضور عليه الصلواة والسلام جن جي مٿان اعتراضن ڪرڻ لاءِ آهن.

## سيده زينب بنت جحش رضي الله عنها سان شاديءَ ڪرڻ ۾ حڪمت

هيءَ سائڻ حضور صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي ڦڦات هئي جنهن سان حضور عليه الصلواة والسلام جن جي پٽيلي زيد بن حارثه شادي ڪئي هئي جڏهن زيد ان کي طلاق ڏني ته الله تعالىٰ ان پٽيلي واريءَ رسم کي ختم ڪرائڻ جي لاءِ حضور عليه الصلواة والسلام جن کي حڪم ڪيو ته زينب بنت جحش رضي الله عنها سان شادي ڪري هميشه لاءِ ان رواج کي ختم ڪن جيئن تشريعي حڪمت ۾ ان جو بيان ٿي چڪو آهي. باقي ڪن مفسرن اهڙيون ڪوڙيون اسرائيلي روايتون آنديون آهن جيڪي الله تعالىٰ جي نبي عليه الصلواة والسلام جي شان ۽ عصمت جي خلاف آهن انهن تي ڪوبه اعتماد ڪرڻ نه گهرجي.

## سيده ام سلم رضي الله عنها سان شاديءَ ڪرڻ ۾ حڪمت

هن سائڻ جي پهرين شادي عبدالله بن عبدالاسد سان هئي جيڪو اسلام ڏي اڳرائي ڪندڙ مهاجرن مان هو. ان حبش ڏانهن هجرت ڪئي هئي ۽ سيده سائڻ به ان سان ان هجرت ۾ گڏ هئي. واٽ ويندي رستي ۾ سلمه کي ڄڻيو هيائين جنهن جي ڪري ام سلمه سڏي وئي. سندس مڙس احد جي جنگ ۾ شهيد ٿيو هو ۽ چار يتيم ٻار ڇڏي ويو جن جي سنڀال ڪرڻ لاءِ ٻيو ڪير ڪونه هو انهن جي سنڀال کي نظر ۾ رکندي حضور عليه الصلواة والسلام جن ان سان شادي ڪئي هئي.

## سيده ام حبيبہ رضي الله عنها سان شادي ڪرڻ ۾ حڪمت

هيءَ مومنن جي ماءُ ابوسفيان جي نياڻي هئي. هن جي پهرين شادي عبيدالله بن جحش رضي الله عنہ سان ٿي هئي. جڏهن هجرت جي دوران ان جي حبش ۾ وفات ٿي هئي تہ نجاشي بادشاهہ ان کي چار سؤ دينار حضور عليہ الصلواة والسلام جن جي طرفان مهر ڏئي حضور عليہ الصلواة والسلام جن سان سندس نڪاح ڪرائي شرحبيل بن حسنه جي قافلي ۾ کيس مديني شريف موڪليو هو. ان سائڻ سان شاديءَ ڪرڻ ۾ اها حڪمت هئي جو ابوسفيان ان مٽيءَ کي نظر ۾ رکندي مکي مڪرمہ ۾ مسلمانن تي تشدد گهٽائي ڇڏيو هو.

## سيده جويريه بنت الحارث رضي الله عنها سان شاديءَ ڪرڻ ۾ حڪمت

هيءَ سائڻ بني مصطلق قبيلي جي سردار حارث بن ضرار جي ڌيءَ هئي. هن جي پهرين شادي مسافع بن صفوان سان هئي جيڪو مريسيع جي جنگ ۾ قتل ٿي ويو هو. هي اسلام جو سخت دشمن ۽ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جو وڏو ويري هو. سندس قتل ٿيڻ کان پوءِ سندس گهرواري سائڻ مسلمانن جي هٿ ۾ قيدياڻي ٿي آئي. هن سان شاديءَ ۾ حڪمت اها هئي جو ان مائٽيءَ جي ڪري هن سائڻ جا ڪيترا مائٽ غلاميءَ کان آزاد ٿي مسلمان ٿيا هئا جيئن ان جو تفصيلي ذڪر سياسي حڪمت ۾ گذري چڪو آهي.

## سيده صفيہ بنت حيي بن اخطب رضي الله عنها سان شادي ڪرڻ ۾ حڪمت

هن سائڻ سان شادي ڪرڻ جي حڪمت، سياسي حڪمتن جي ذڪر ۾ بيان ٿي چڪي آهي.

## سيده ميمونہ بنت الحارث الهلاليه رضي الله عنها سان شادي ڪرڻ ۾ حڪمت

هن سائڻ جو اصل نالو برة هو، پوءِ حضور عليہ الصلواة والسلام جن سندس نالو ميمونہ رکيو ۽ هيءَ سندن آخري شادي هئي. هن سائڻ جو پهريون مڙس

ابورهم بن عبدالعزيٰ هو. هن سائڻ جي قبيلي وارن حضور عليہ السلام جن جي عزت، خدمت ۽ مدد ڪئي هئي پاڻ انهن تي احسان ڪندي هن سائڻ سان شادي ڪري ڪين مائٽ بنايائون.

"فَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا تَعْدِلُوا فَوَاحِدَةً أَوْ مَا مَلَكَتْ أَيْمَانُكُمْ" مقصد تہ جيڪڏهن اوهان ڊڄو ٿا تہ هڪ کان مٿي شادي ڪرڻ جي صورت ۾ عدل، انصاف ۽ مساوات ڪري نہ سگهندؤ تہ پوءِ هڪ زال رکو يا ٻانهي جيڪا شرعي اصول جي مطابق اوهان جي ملڪيت ۽ اوهان جي لاءِ حلال هجي ان سان وقت گذاريو. انصاف نہ ڪرڻ ۽ انهن جي حقوق جو احساس نہ رکڻ وڏو ظلم ۽ وڏو گناهہ آهي. ان جي ڪري هڪ کان مٿي زال رکڻ جو ارادو ڪيو تہ اول سڀ ڳالهيون سوچيو جيڪڏهن عدل ۽ حق رسائيءَ جي طاقت نہ ٿا سمجهو تہ وڌيڪ شاديون نہ ڪيو. حضور عليہ الصلواة والسلام جن هڪ کان مٿي شاديون ڪري انهن ۾ حق رسائي نہ ڪرڻ واري جي لاءِ سخت سزا بيان فرمائي آهي جيئن ترمذيءَ، ابوداؤد، نسائي، ابن ماجه ۽ دارميءَ حضرت ابوهريره رضي الله عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو: إِذَا كَانَتْ عِنْدَ الرَّجُلِ امْرَأَتَانِ فَلَمْ يَعْدِلْ بَيْنَهُمَا جَاءَ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَشِقُّهُ سَاقِطٌ (۱) يعني جنهن وٽ (نڪاح ۾) ٻہ عورتون هونديون ۽ اهو انهن ۾ (حقوق جي برابري ۽) انصاف نہ ڪندو تہ قيامت جي ڏينهن ان حال ۾ ايندو جو سندس جسم جو هڪ حصو ڪِريل هوندو. پر اها مساوات ۽ برابري انهن ڪمن ۾ ضروري آهي جيڪي سندس اختيار ۾ هوندا. مثلاً خرچ ڏيڻ، رات رهڻ وغيرهہ، پر جيڪي ڪم ٻانهي جي اختيار ۾ ئي نہ هوندا مثلاً ڪنهن ڏانهن دل جي لاڙي جو زياده ٿي وڃڻ تہ ان غيراختياري ڪم ۾ ان تي ڪا پڪڙ نہ آهي.

## ٻانهن ۽ ٻانهين رکڻ تي اعتراض ۽ ان جو جواب

ڪي ڪي ڪافر تہ ٺهيو پر مسلمانن جا نوجوان ٻچا ڪافرن جو لٽريچر پڙهي ٻانهن ۽ ٻانهين رکڻ کي ظلم سمجهي اعتراض ڪندا آهن تہ اسلام اهو ڇو جائز ڪيو؟

انهن کي غورڪرڻ گهرجي تہ جنگي قيدين جو معاملو هڪ اهم ۽

(۱) مشڪواة ص۲۷۹

ڏکيو معاملو رهيو آهي جيڪي مرد ۽ عورتون شڪست کائي قيد ٿي اچن ٿا انهن کي ڪٽي ۽ ڪيئن رکجي. ڪن انهن کي زوريءَ مزدوريءَ يا بيگار ۾ رکڻ جو فيصلو ڪيو ته ڪن ڪجهه ٻيو. مگر شريعت پاڪ جو حڪم هي آهي ته ان جي بجاءِ جو انهن سيني جو بار حڪومت تي رکجي انهن کي جنگي مجاهدن ۽ غازين ۾ ورهائجي جيڪي انهن جا مجازي مالڪ هوندا ۽ هر مجاهد ان کي پنهنجي گهر جو هڪ فرد سمجهي ان کي ڪم ڪار ۾ استعمال ڪري پر ان سان گڏ ان جي آرام جو به هرطرح خيال رکي. انهن ۾ جيڪي عورتون هجن انهن سان همبستري به ڪري سگهي ٿو. انهن جو قيدي ٿي اچڻ خود نڪاح جي اعلان جي قائم مقام آهي ۽ ان جي هوندي وڌيڪ ڪنهن ايجاب، قبول ۽ شاهدن جي ضرورت ناهي ۽ انهن قيدين کي ان پنهنجي مجازي مالڪ کي راضي ڪري ڪجهه ڏيڻ سان يا ڏيڻ کان سواءِ آزادي وٺڻ جي به شريعت اجازت ڏني آهي بلڪ قرآن ڪريم ۾ ڪن ڏوهن جي ڪفارت ۾ انهن کي آزاد ڪرڻ مقرر ڪري انهن جي آزاد ڪرڻ ڏانهن رغبت ڏياري وئي آهي. حديث شريف ۾ ان جي رغبت ڏياري ان جون پلايون بيان ڪيون ويون آهن. مسلمانن ۾ ڪيترن غلامن ۽ غلامن جي اولاد بادشاهي ڪئي آهي انهن مان ڪيترا اسلامي لشڪرن جا امير ۽ وڏا وڏا علماء فقهاء ۽ فن جا امام پيدا ٿيا آهن. ان جي ڪري مسلمانن کي ان نظام کان نه ڊڄڻ گهرجي ۽ نه ان کي برو سمجهڻ گهرجي ۽ نه ان تي طعني ڪان مايوس ٿيڻ گهرجي.

## سوال

"فَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا تَعْدِلُوا فَوَاحِدَةً" مان ثابت ٿيو ته جيڪڏهن اوهان کي خطرو ۽ خوف آهي ته ٻن يا ٽن يا چئن زالن ۾ عدل ۽ انصاف ڪري نه سگهندؤ ته پوءِ هڪ شادي ڪيو ۽ ٻيءَ جاءِ تي آهي "وَلَنْ تَسْتَطِيعُوا أَنْ تَعْدِلُوا بَيْنَ النِّسَاءِ" يعني عورتن ۾ حقوق جي برابري ۽ عدل ڪري نه سگهندؤ- جڏهن عدل ڪرڻ ممڪن ئي ناهي ۽ مٿي به اهو ذڪر آهي ته عدل نه ڪري سگهو ته هڪڙي شادي رکو ته نتيجو اهو نڪتو ته وڌيڪ شاديون رکڻ جائز ئي ناهن.

## جواب

اها فتويٰ غلط آهي. ذرا سوچيو ته جيڪڏهن الله تعاليٰ کي هڪ کان

متي شادين کان منع ڪرڻي هئي تہ پوءِ متي ذڪر ڪيل الفاظ "فَانْكِحُوْا مَا طَابَ لَكُمْ مِّنَ النِّسَآءِ مَثْنٰى وَثُلٰثَ وَرُبٰعَ" جي آڻڻ جي ڪهڙي ضرورت هئي؟ ۽ "فَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا تَعْدِلُوْا فَوَاحِدَةً" (جيڪڏهن اهو خطرو ۽ خوف اٿو جو عدل نہ ڪري سگهندؤ تہ پوءِ هڪ زال رکو) ان جو مقصد ڇا؟ ان کان سواءِ سيدنا رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن ۽ اصحاب ڪرام رضي الله عنهم جو قولي بيان ۽ مسلسل عمل بہ ان جو شاهد آهي تہ هڪ کان وڌيڪ زالن رکڻ کان اسلام ڪنهن وقت بہ روڪيو ناهي. مقصد اهوئي آهي تہ پنهنجي وس ۽ اختيار وارن ڪمن ۾ انصاف ڪيو باقي رهيو دلي محبت جو معاملو سو هڪ سان وڌيڪ ٿيندو پر ان لاءِ بہ حڪم آهي تہ "فَلَا تَمِيْلُوْا كُلَّ الْمَيْلِ" يعني هڪ سان محبت ۾ ايترو لهي نہ اچو جو پورو لاڙو ان ڏانهن هجي ۽ ٻيون اوهان جي بي توجهيءَ جو شڪار رهن. اها زيادتي ۽ ظلم الله تعاليٰ کي پسند ناهي.

"ذٰلِكَ اَدْنٰٓى اَلَّا تَعُوْلُوْا" مطلب تہ متي جيڪو بيان ڪيو ويو آهي تہ عدل نہ ڪرڻ جي صورت ۾ هڪ زال رکڻ يا ٻانهين سان وقت گذارڻ اهڙي شيءِ آهي جو ان تي عمل ڪرڻ سان اوهان ظلم ڪرڻ کان بچي پوندؤ. "ادنيٰ" جو لفظ دنو کان ورتل آهي معنيٰ ويجهو ٿيڻ ۽ تعولوا عول کان ورتل آهي جنهن جي معنيٰ آهي لاڙو ڪرڻ پر هتي ظلم جي معنيٰ ۾ استعمال ٿيل آهي. معنيٰ هڪ زال رکڻ ظلم کان بچڻ کي تمام قريب ۽ گهٽي ويجهو آهي نہ تہ ڪي ڪي مرد تہ هڪ زال سان بہ عدل ۽ انصاف سان پيش نہ ايندا آهن صحيح معنيٰ ۾ عدل مڪمل تڏهن ٿيندو جڏهن هڪ سان بہ سٺي طريقي هلي ۽ ان جا حقوق ادا ڪري ۽ جيڪڏهن ان ۾ ڪي هلڪيون خاميون هجن تہ انهن کي بہ شرعي حدن جي اندر رهندي برداشت ڪري.

"وَاٰتُوا النِّسَآءَ صَدُقٰتِهِنَّ نِحْلَةً فَاِنْ طِبْنَ لَكُمْ عَنْ شَيْءٍ مِّنْهُ نَفْسًا فَكُلُوْهُ هَنِيْٓـًٔا مَّرِيْٓـًٔا" يعني عورتن کي سندن مهر خوشيءَ سان ڏيو پوءِ جيڪڏهن اهي ان مان ڪا شيءِ اوهان کي خوشيءَ سان ڇڏي ڏين تہ اها ڇڏيل شيءِ پاڪ، بي ضرر سمجهي پلي کائو اوهان جي لاءِ حلال آهي. حقيقت هيئن هئي تہ مهر جي متعلق عرب ۾ ڪيترا رواج هئا ١- هڪ تہ مهر جيڪو ڇوڪريءَ جو حق آهي ان کي نہ ڏيندا هئا پر ان ڇوڪريءَ جا وارث وصول ڪندا هئا جيڪو سراسر ظلم آهي. قرآن ڪريم ان کي دفع ڪندي حڪم ڪيو تہ "مهر عورتن کي ڏيو" ڏيڻ جي امر ۾ نڪاح ڪرڻ وارو مڙس بہ داخل آهي تہ ڇوڪريءَ جا وارث بہ داخل آهن جو جيڪڏهن مهر انهن جي هٿن ۾

پهچي تہ اهي اهو پرائو حق سمجهي ڇوڪريءَ کي ڏئي ڇڏين. ان جي خوشيءَ ۽ اجازت کان سواءِ پاڻ بالڪل استعمال نہ ڪن.

٢- ٻيو رواج اهو هو تہ مهر خوشيءَ سان ڏيندا ئي نہ هئا. يلا جيڪڏهن ڪٿي ڏيڻو پوندو هون تہ ڪڙي منهن ۽ بي دليو ٿي ڏيندا هئا بلڪ ان کي چٽي سمجهندا هئا ان غلط رواج بلڪ هڪ قسم جي ظلم جو ازالو هن آيت جي لفظ "نِحۡلَةً" سان ڪيو ويو آهي. "نحله" جي معنيٰ آهي دل جي خوشيءَ سان ڪا شيءِ ڏيڻ- الغرض تہ مهر ڏيڻ عورتن جو مردن تي وجوبي حق آهي جنهن جي ادائيگي لازمي ۽ ضروري آهي ۽ جيئن ٻين حقن جو ادا ڪرڻ ضروري ۽ واجب آهي تيئن هن حق جو ادا ڪرڻ بہ ضروري آهي. ٣- ٽيون رواج هي هوندو هو تہ ڪيترا مڙس عورتن کي مجبور ڪري انهن کان مهر جو حق معاف ڪرائيندا هئا پر اها دل سان معاف ڪرڻ جي بجاءِ زبان سان معاف ڪندي هئي الله تعالىٰ "فَإِنۡ طِبۡنَ لَكُمۡ" کان ٻڌايو تہ زوري ۽ زبردستي نہ پر جيڪڏهن پاڻ دل جي خوشيءَ سان اوهان کي مهر مان ڪا شيءِ معاف ڪن تہ اها اوهان ڪائو اها اوهان جي لاءِ حلال ۽ برڪت واري آهي.

ڄاڻڻ گهرجي تہ اهي ظلم واريون ڳالهيون اسلام کان اڳ ۾ تہ گهڻيون هيون پر افسوس آهي جو اڄ جي ڪن مسلمانن ۾ بہ اهي ڳالهيون موجود آهن. انهن کان بچڻ لازم آهي. آيت مبارڪ جي لفظن "طِبۡنَ لَكُمۡ" هڪ وڏو اصول قائم ڪري ڇڏيو يعني ڪنهن جو بہ، ڪهڙو بہ ۽ ڪيترو بہ مال ان جي دل سان ۽ خوشيءَ واريءَ اجازت کان سواءِ استعمال ڪرڻ حرام آهي. رسول الله صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن بہ ان اصول کي بيان فرمايو آهي جيئن بيهقيءَ شعب الايمان ۾ ۽ دارقطنيءَ المجتبىٰ ۾ ابومره رقاشيءَ کان، ان پنهنجي چاچي کان آندو آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو: "اَلَا لَا تَظۡلِمُوا اَلَا لَا يَحِلُّ مَالُ امۡرِءٍ اِلَّا بِطِيۡبِ نَفۡسٍ مِّنۡهُ" (١) يعني خبردار! ظلم نہ ڪندا ڪيو ۽ چڱيءَ طرح سمجهو تہ ڪنهن بہ مرد جو مال ٻئي جي لاءِ ان جي خوشيءَ واري موڪل کان سواءِ حلال ناهي. هي هڪ عظيم اصول آهي جنهن جي هيٺان ڪيتريون جزئون اچي ٿيون وڃن. صحيح طريقو اهو آهي تہ مڙس پنهنجيءَ زال کي يا وارث پنهنجيءَ نياڻيءَ کي مليل مهر ان جي هٿ ۾ ڏي پوءِ اها خوشيءَ سان مڙس کي يا وارث کي موٽائي ڏي يا ڪجهہ ڏي ڪجهہ رکي. ان ۾ الله تعالىٰ بہ راضي آهي تہ ان جو پيارو حبيب ڪريم صلي الله تعالىٰ عليہ وسلم بہ. والله الموفق-

(١) مشڪواة ص٢٥٥

اهو ساڳيو اصول ورثي ۾ به آهي جيڪي عورتون ڪنهن جي ملڪيت جون شرعي وارث ٿين ٿيون انهن کي انهن جو شرعي حصو ڏيڻ فرض آهي جيڪڏهن خوشيءَ سان نه ونن ته پوءِ مردن لاءِ حلال آهي نه ته حرام آهي هلندڙ دور ۾ ته ڪيترا وارث انهن مظلوم عورتن کي جيڪي جيئريون وينيون آهن مئل ڄاڻائي سرڪاري ريڪارڊ ڦيرائي پنهنجي نالي ڪرائي ڇڏين ٿا اهي وڏا ظالم آهن.

## هڪ اهم مسئلو

ڪٿي ڪٿي ڪو ماڻهو مري ويندو آهي ۽ وارثن ۾ يتيم ٻار به ڇڏي ويندو آهي ته ان جي ڇڏيل ملڪيت مان خيرات، فاتحه وغيره ڪرڻ به حرام، ته اهو کائڻ به حرام آهي. ها اول ملڪيت ورهائي يتيمن جو حصو جدا ڪري باقي وڏا پنهنجي رهيل حصي مان خيرات ڪن ته جائز آهي. (١)

## فائدو

آيت ۾ آيل لفظ "صَدُقَاتٍ" صدقه (ص جي زبر ۽ د جي پيش سان) جو جمع آهي ان جو مادو صدق آهي صداق ۽ صدقه عورتن جي مهر کي سڏيو ويندو آهي ڇو ته ان سان ان مرد جي دل جو ان عورت لاءِ لاڙو سچو ثابت ٿيندو آهي. ان مناسبت سان مهر کي صُدَاقٌ يا صَدُقَه سڏيو ويندو آهي.

"هَنِيْئًا مَّرِيْئًا" ٻئي صفت مشبهه جا صيغا آهن هنيئا هنا ۽ هنؤ ۽ هنئ ٽنهي وزنن کان مشتق ٿي سگهي ٿو. هنيئا ان شيءِ کي سڏيو ويندو آهي جيڪا مشقت ۽ محنت کان سواءِ حاصل ٿئي جڏهن هي لفظ طعام جي صفت ٿي ايندو آهي ته ان مان مراد اهو طعام هوندو آهي جيڪو آسانيءَ سان نڙيءَ کان هيٺ لهي وڃي، آسانيءَ سان هضم ٿي جسم جو جزو بنجي وڃي. "مَرِيْئًا" به ان ساڳيءَ معنيٰ ۾ استعمال ٿيل آهي. بعضي علماء لکيو آهي ته جيڪو ڪاڌو لذيذ هجي ۽ ان ڏانهن طبيعت رغبت رکي ان کي هنئ چوندا آهن ۽ جيڪو چڱي طرح هضم ٿي بدن جو جزو ۽ ان جي صحت ۽ قوت جو سبب بنجي اهو مريئ آهي. (٢)

---

(١) نور العرفان في حاشية كنزالايمان ص١٢٢-١٢٤

(٢) زاد المسير ص١٢ جلد ٢

## فائدو

بعضي بزرگن هن آيت جي لفظن "هنيئا مريئا" مان ثابت ڪيو آهي تہ عورت جو مهر نهايت ئي برڪت واري شيءِ آهي جيڪڏهن ڪنهن جي ٻچڙي ڪي بيماريءَ ڪان شفا حاصل نہ ٿئي تہ اها ان مهر جي پئسن مان ان جو علاج ڪرائي اميد آهي تہ الله تعالىٰ جي اذن سان شفاياب ٿيندو. سيني انسانن جي امان سيده حوا رضي الله عنها جو مهر تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن تي درود شريف پڙهڻ هو. (١)

## فائدو

"عَنۡ شَيۡءٍ مِّنۡهُ" جي لفظ مان مراد آهي تہ جيڪڏهن زال مڙس کي مهر مان ڪا بہ شيءِ خوشيءَ سان ڇڏي ضروري ناهي تہ ڪجهہ ڇڏي ڪجهہ وٺي. جيڪڏهن سڀ ڇڏي تہ بہ ان جو اختيار آهي. جيڪڏهن زال مڙس ڪان سمورو مهر هٿ ۾ وٺي ان کي واپس ٿي ڪري تہ ان کي شرعا هبه (بخشش) سڏيو ويندو ۽ ان تي هبہ (بخشش) وارا احڪام جاري ٿيندا ۽ جيڪڏهن وٺڻ ڪان سواءِ ئي بخشي ٿي ڇڏي تہ ان کي ابراءِ سڏيو ويندو آهي. يعني حق ڪان آزاد ڪرڻ شرعا اهي ٻئي صورتون جائز آهن.

## عورتن تي بہ مڙسن جي حقوق جو خيال رکڻ ضروري آهي

جيئن عورتن جا مڙسن تي حقوق آهن تيئن مڙسن جا بہ عورتن تي حقوق آهن جيئن هڪ روايت ۾ آهي تہ "جِهَادُ الۡمَرۡاَةِ حُسۡنُ التَّبَعُّلِ" عورت جو جهاد مڙس کي سهڻي نموني پيش اچڻ آهي. اڳيئن دور ۾ عورتون ايتريون نيڪوڪار ۽ مڙسن جون خدمتگار هونديون هيون جو مڙس ٻاهران اچي گهر ۾ گهڙندو هو تہ ڏسندي ئي چونديون هيون "مرحبا سيدي وسيد اهل بيتي" منهنجي ۽ سڄي گهر ۾ رهڻ وارن جي سائينءَ کي مرحبا- مڙس ڪان چادر لاهيندي ان جي پير مان جتي بہ پاڻ ڪڍنديون هيون. جيڪڏهن ڪا زال مڙس کي غمگين ڏسندي هئي تہ چوندي هيس تہ اي منهنجا مڙس! جيڪڏهن آخرت جو غم اٿئي تہ الله تعالىٰ توکي وڌيڪ صالح بنائي ۽ صلاحيت بخشي ۽ جيڪڏهن دنيا جو غم اٿئي تہ الله تعالىٰ توکي انهن غمن ڪان محفوظ رکڻ لاءِ ڪافي آهي. حقيقتن وارن عارفن، ڪاملن وٽ صالح عورت جي نشاني هيءَ آهي

(١) نور العرفان ص١٢٢

تہ اللہ تعالیٰ جو خوف ان جو حسن ھوندو ۽ قناعت ان جي دولت ۽ پاڪدامن رهڻ ان جا
زيور ۽ خداوندي فرضن کان پوءِ مڙس جي خدمت ۾ مشغول رهڻ ان جي عبادت ۽ موت
لاءِ تيار رهڻ ان جي همت هوندي. (١)

وَلَا تُؤْتُوا السُّفَهَآءَ اَمْوَالَكُمُ الَّتِىْ جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمْ قِيَامًا

۽ نہ ڏيو بيوقوفن کي مال پنهنجا جيڪي بڻايا اللہ اوهان جي لاءِ گذران جو سبب

وَّارْزُقُوْهُمْ فِيْهَا وَاكْسُوْهُمْ وَقُوْلُوْا لَهُمْ قَوْلًا مَّعْرُوْفًا ﴿٥﴾

۽ کارايو انهن کي ان مان ۽ ڍڪايو انهن کي ۽ چئو انهن کي چوڻ چڱو

وَابْتَلُوا الْيَتٰمٰى حَتّٰٓى اِذَا بَلَغُوا النِّكَاحَ ۚ فَاِنْ اٰنَسْتُمْ مِّنْهُمْ

۽ آزمائيندا رهو يتيمن کي تانجو جڏهن پهچن نڪاح (ڪرڻ جي عمر) کي پوءِ جيڪڏهن سمجهو انهن مان

رُشْدًا فَادْفَعُوْٓا اِلَيْهِمْ اَمْوَالَهُمْ ۚ وَلَا تَاْكُلُوْهَآ اِسْرَافًا وَّبِدَارًا

هدايت پوءِ ڏيو انهن کي مال انهن جا ۽ نہ کائو اهي ضرورت کان زياده ۽ تڪڙ

اَنْ يَّكْبَرُوْا ۭ وَمَنْ كَانَ غَنِيًّا فَلْيَسْتَعْفِفْ ۚ وَمَنْ كَانَ فَقِيْرًا

تہ متان وڏا ٿي وڃن ۽ جيڪو آهي شاهوڪار تہ پوءِ پلي بچندو رهي ۽ جيڪو آهي محتاج

فَلْيَاْكُلْ بِالْمَعْرُوْفِ ۭ فَاِذَا دَفَعْتُمْ اِلَيْهِمْ اَمْوَالَهُمْ فَاَشْهِدُوْا

پوءِ پلي کائي مناسب نموني سان پوءِ جڏهن ڏيو انهن کي انهن جا مال پوءِ شاهد ڪيو

عَلَيْهِمْ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ حَسِيْبًا ﴿٦﴾

انهن تي ۽ ڪافي آهي اللہ حساب وٺندڙ

(١) تنوير الاذهان ص٣١٧ ج١

# تفسير

مٿين آيتن ۾ يتيمن جي مال ملڪيت سندن حوالي ڪرڻ ۽ عورتن کي سندن مهر ۽ ورثي مان آيل ملڪيت جي ڏيڻ جو حڪم هو. ان مان متان ڪو ائين سمجهي ويهي ها تہ يتيمن ۽ عورتن کي هر حال ۾ سندن ملڪيت حوالي ڪرڻي آهي پلي ڪين ان جي سنڀالڻ جي لياقت ۽ اهليت نہ بہ هجي ۽ ان ملڪيت جي حفاظت ڪرڻ تي قادر نہ بہ هجن. ان غلط سمجهہ کي ختم ڪرڻ جي لاءِ هنن آيتن ۾ هدايو ويو آهي تہ سفهاءِ (گهٽ سمجهہ وارن) کي هڪدم سندن ملڪيت نہ ڏيو انهن جي تربيت ڪندا رهو جڏهن سمجهو تہ هاڻي ملڪيت ضايع نہ ڪندا تہ پوءِ سندن ذرو پرزو سندن حوالي ڪري ڇڏيو. ها تيستائين کين کاڌو ڪپڙو وغيرهہ آرام سان ڏيندا رهو ۽ ساڻن ڳالهہ ٻولهہ بہ سهڻي انداز ۾ ڪندا رهو ۽ کين سمجهايو تہ هي مال، ملڪيت اوهان جي آهي. اسين اوهان جي ڀلائيءَ لاءِ ان کي سنڀاليون ٿا جڏهن اوهان ان جي سنڀالڻ جا لائق ٿيندؤ تہ اوهان جي شيءِ اوهان جي حوالي ڪئي ويندي.

## فائدو

هتي ٻن لفظن ڏانهن خصوصي توجهہ ڪرڻ گهرجي. ١- هڪ تہ "وَلَا تُؤْتُوا السُّفَهَاءَ أَمْوَالَكُمُ" ۾ جيڪڏهن صرف يتيمن جي ملڪيت جو ذڪر آهي تہ "أَمْوَالَكُمْ" جي جاءِ تي أَمْوَالَهُمْ هجڻ کپي ها. "أَمْوَالَكُمْ" ڇو آيو؟ ان جي جواب ۾ مفسرن بہ ڳالهيون ذهن نشين ڪرايون آهن ١- هڪ تہ الله تعالىٰ "أَمْوَالَكُمْ" (پنهنجن مالن کي) آڻي مسلمانن کي هدايو تہ يتيمن جو مال آهي تہ ڪٿي انهن جو پر جڏهن تہ اوهان ۽ اهي سڀ هڪ ملت جا فرد آهيو ان جي ڪري حفاظت، سنڀال ۽ ذميداريءَ جي لحاظ سان اهي ڄڻ اوهان جا پنهنجا مال ۽ ملڪيت آهن. انهن جي پوري پوري نگهداشت ڪيو. ملت جي وحدت ۽ اجتماعي سنڀال جو هي اهو محبت ۽ پيار وارو سبق آهي جنهن ڏانهن قرآن ڪريم هروقت توجهہ ڏياريندو رهيو آهي يا ان مان مراد هر قسم جا مال آهن يتيمن کان سواءِ بہ ناتجربيڪارن، نابالغن ۽ ناواقف عورتن کي سندن ملڪيت ڏيڻ سندن مال جي بربادي ۽ سندن جلد سڃي ٿيڻ ۽ محتاج بنجڻ جو ذريعو آهي. ابن جرير، ابن المنذر ۽ ابن ابي حاتم حضرت ابن عباس رضي الله عنهما

ڪان روايت آئي لکيو آهي تہ هن آيت ۾ الله تعاليٰ سمجهايو آهي تہ پنهنجو مال ۽ ٻيو جيڪو ڪجهہ اوهان کي الله تعاليٰ عطا ڪيو آهي زال ۽ پٽن جي حوالي ڪري انهن جا محتاج ٿي نہ ويهو پر پنهنجي ملڪيت پاڻ سنڀاليو ۽ انهن کي ڪپڙا ڪاڌو وغيره ڏيندا رهو (١) حضرت ابن عباس رضي الله عنهما جي ان فرمان مان ثابت ٿيو تہ آيت جي هنن لفظن جو مفهوم عام آهي. جيڪو سڀني عورتن، ٻارن ۽ عقل جي ڪوتاهن کي شامل آهي اهي ٻار پنهنجا هجن يا ڪنهن ٻئي جا يتيم ٻار ۽ اهو مال پنهنجو هجي يا يتيمن جي وارثن جو.

"اَمْوَالَكُمْ" ۾ خطاب جو ضمير ان عموم جي لحاظ سان بہ مناسب آهي.

٢- ٻي ڳالهہ جيڪا توجهہ جي لائق آهي سا هن آيت جا هي الفاظ آهن "اَلَّتِيْ جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمْ قِيَامًا" يعني مالن کي الله تعاليٰ اوهان جي زندگيءَ جو سهارو بنايو آهي. انهن لفظن مان مقصد مال جي اهميت، قدر ۽ قيمت جو ظاهر ڪرڻ آهي يعني مال ملڪيت اجائي يا نفرت ڪرڻ جهڙي شيءِ ناهي بلڪ اهو تہ اوهان جي معاشي خوشحاليءَ ۽ ترقيءَ جو ٿنڀو آهي. جيڪڏهن اوهان ان کي اجايو خرچ ڪندئو تہ معاشي ۽ اقتصادي لحاظ سان تباهہ ٿي ويندؤ ۽ الله تعاليٰ وٽ بہ گنهگار ٿيندؤ . پنهنجي حلال مال کي سنڀاليندي جيڪڏهن ڪو قتل ڪيو وڃي تہ اهو ائين شهيد آهي جيئن ڪو جان جي حفاظت ڪندي ڪسي وڃي. حضرت عبدالله بن عمرو رضي الله عنہ کان روايت آهي تہ رسول الله ﷺ جن فرمايو "مَنْ قُتِلَ دُوْنَ مَالِهٖ فَهُوَ شَهِيْدٌ" (٢) جيڪو پنهنجي (حلال) مال جي حفاظت ڪندي ڪٺو وڃي تہ اهو شهيد آهي ۽ حضرت عمروبن عاص رضي الله عنہ کان هڪ ڊگهيءَ روايت ۾ آهي تہ رسول الله صلى الله تعاليٰ عليہ وسلم جن فرمايو: نِعِمَّا بِالْمَالِ الصَّالِحِ لِلرَّجُلِ الصَّالِحِ (٣) يعني پاڪ صاف مال صالح ماڻهوءَ لاءِ ڀلو آهي. ثابت ٿيو تہ متقي ۽ صالح شخص کي پاڻ وٽ مال ملڪيت رکڻ جائز ۽ سهڻو ڪم آهي ڇوتہ اهو الله تعاليٰ کان ڊڄندي ان کي گناهن جي ڪمن ۾ استعمال نہ ڪندو الله تعاليٰ جي جن پيارن ٻانهن کان مال رکڻ جي باري ۾ منع منقول آهي ان مان مراد اهو مال آهي جيڪو گناهن ۾ خرچ ڪيو وڃي ۽ آخرت جي عذاب جو سبب بنجي. سچو ۽ مسڪين ماڻهو بہ جيڪڏهن ديندار ناهي تہ ان جي ڪفر

(١) الدر المنثور ص٤٣٢ جلد٢ جزءِ ۴ (٢) مسلم ص٨١ ج١

(٣) مشڪواة شريف ص٣٢٦

۾ پوڻ جو انديشو آهي جيئن حضرت انس رضي الله عنہ جي روايت ۾ آيو آهي تہ حضور صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "كَادَ الْفَقْرُ اَنْ يَّكُوْنَ كُفْرًا" (۱) يعني مسڪيني بعض اوقات انسان کي ڪافر ڪري سگهي ٿي. حضرت سفيان ثوريءَ فرمايو آهي تہ: كَانَ الْمَالُ فِيْمَا مضىٰ يكره فاما اليوم فهو ترس المؤمن" يعني گذريل وقت ۾ مال هجڻ کي پسند نہ ڪيو ويندو هو پر اڄ جي دور ۾ مال مومن جي ڍال آهي. ان ئي لحاظ سان الله تعالىٰ جي پيارن فرمايو آهي تہ جنهن وٽ مال ملڪيت هجي تہ ان کي چڱي نموني سنڀالي رکي ڇوتہ هينئر حالت اهڙي آهي جو جيڪڏهن ڪنهن کي ڪا ضرورت پئجي وئي تہ ان کي پوري ڪرڻ جي لاءِ پهريان پنهنجي دين کي ڪپائيندو. (۲)

"وَابْتَلُوا الْيَتٰمٰى" يعني يتيمن جي بالغ ٿيڻ کان اڳ ۾ ئي تورو تورو ڪاروبار سندن حوالي ڪري ڪين آزمايو. "حَتّٰى اِذَا بَلَغُوا النِّكَاحَ" تانجو اهي جڏهن نڪاح جي قابل بنجن يعني بالغ ٿين تہ هاڻي وڌيڪ انهن جي ذهن ۽ عقلمنديءَ جو اندازو لڳايو ۽ ڏسو تہ اهي پنهنجن معاملن کي سنڀالڻ جا لائق ٿيا آهن يا نہ. جڏهن انهن ۾ اها لياقت ۽ استعداد ڏسو تہ پوءِ پلي سندن مال سندن حوالي ڪيو.

## مسئلو

هن مان امام اعظم عليہ الرحمۃ دليل ورتو آهي تہ جيڪي نابالغ ٻار واپار ۽ ڏنڌو وغيره پنهنجي وارثن جي اجازت سان ڪن ٿا اهو جائز آهي.

## سوال

ٻار ڪيتريءَ مدت ۾ بالغ ٿيندو آهي؟

## جواب

"فَاِذَا بَلَغُوا النِّكَاحَ" تي غور ڪرڻ سان ثابت ٿيو تہ نابالغ جو بالغ ٿيڻ ڪنهن مدت سان قيد ڪيل ناهي پر ان جو مدار انهن ڳالهين تي آهي جيڪي بالغ ٿيڻ سان واسطو رکنديون آهن جيئن تڙ پوڻ وغيره. ها جيڪڏهن ڪنهن ٻار ۾ اهي آثار صفا ظاهر نہ ٿا ٿين تہ ان جو بالغ هجڻ عمر جي لحاظ سان ڏٺو ويندو پر ان ۾ بہ فقيهن جو اختلاف آهي. ڪن ڇوڪري جي لاءِ ارڙهن (۱۸) سال تہ ڇوڪريءَ لاءِ

(۱) مشڪواة ص۴۲۹ (۲) تنوير الاذهان ص۳۱۷ ج۱

سترهن (۱۷) سال مقرر ڪيا آهن ۽ ڪن ٻنهي لاءِ پندرهن سال چيا آهن. امام اعظم عليہ الرحمة جي فتوىٰ پندرهن سال پوري ٿيڻ تي آهي پلي ٻيا آثار نہ بہ لڀن. (۱)

## داناءُ ۽ عقلمند هجڻ ڪيئن معلوم ٿيندو؟

قرآن پاڪ جو حڪم آهي تہ "فَإِنْ آنَسْتُمْ مِّنْهُمْ رُشْدًا" پوءِ جيڪڏهن انهن مان هدايت محسوس ڪيو تہ "فَادْفَعُوا إِلَيْهِمْ أَمْوَالَهُمْ" پوءِ انهن ڪي سندن مال ڏئي ڇڏيو. اها ڏاهپ ۽ هوشياري ڪيتريءَ مدت ۾ حاصل ٿيندي؟ قرآن پاڪ اها مدت بيان نہ ڪئي آهي ان جي ڪري بعضي فقيهن فرمايو آهي تہ جيڪڏهن ڪنهن ۾ سچي زندگي هوشياري محسوس نہ ڪجي تہ سچي زندگي مال ان جي حوالي نہ ڪجي ۽ حضرت امام اعظم عليہ الرحمة فرمايو آهي تہ پنجويهن سالن جي عمر ڪان پوءِ پلي ٿوري سمجهہ وارو هجي تہ بہ ان ڪي ان جو مال ڏئي ڇڏڻو آهي. (۲) "رُشْداً" ۾ تنوين تنڪير جي آهي يعني ٿوري سمجهہ وارو ٿئي تہ بہ ان ڪي ان جو مال ڏئي ڇڏيو. "وَلَا تَأْكُلُوهَا إِسْرَافًا وَّبِدَارًا أَنْ يَّكْبَرُوا" يعني يتيمن جي مال ملڪيت ڪي ضرورت ڪان وڌيڪ ۽ ان خيال سان تہ هي بالغ ٿيندا تہ سڀ ڪجهہ سندن حوالي ڪرڻو پوندو ڪائي ڪپائي نہ ڇڏيو. "وَمَنْ كَانَ غَنِيًّا فَلْيَسْتَعْفِفْ وَمَنْ كَانَ فَقِيرًا فَلْيَأْكُلْ بِالْمَعْرُوفِ" هنن لفظن ۾ ٻڌايو ويو آهي تہ يتيمن ڪي سنڀالڻ وارا ٻہ قسم آهن. ۱- هڪ شاهوڪار ۲- ٻيا مسڪين. جيڪو شاهوڪار آهي ان ڪي انهن جي مال مان ڪائڻ جي اجازت ناهي پر جيڪو مسڪين آهي اهو يتيمن جي خدمت ۾ وقت لڳائڻ آهر مناسب نموني ڪائي تہ جائز آهي. پر اڪثر علماءِ احتياطي طور فرمايو آهي تہ ان حالت ۾ بہ قرض طور يتيم جو مال ڪڍي ان مان ڪاروبار ڪري وري اصل مال يتيم جي حوالي ڪري. قرآن پاڪ جي مفسرن مجاهد ۽ سعيد بن جبير جو قول اهو آهي ۽ حضرت عمر بن خطاب رضي الله تعالىٰ عنہ جنِ بہ ائين فرمايو آهي. (۳)

"فَإِذَا دَفَعْتُمْ إِلَيْهِمْ أَمْوَالَهُمْ فَأَشْهِدُوا عَلَيْهِمْ" يعني جڏهن يتيمن جو مال سندن وڏي ٿيڻ ۽ سمجهدار هجڻ جي وقت سندن حوالي ڪيو تہ ماڻ مٽ ۽ لڪ ۾ نہ ڏيو پر شاهدن جي موجودگيءَ ۾ هرهڪ شيءِ کولي کولي سندن حوالي ڪيو ان نموني سان تہ ڪا غلط فهمي پيدا ٿيندي ۽ نہ ڪو آئينده ڦڏو يا فساد قائم ٿيندو. پر اهو امر

(۱) معارف القرآن ص۳۰۴ ج۲ (۲) تفسير مدارڪ ص۲۰۸ ج۱
(۳) تفسير مظهري ص۲۱۹ ج۲

وجوبي ۾ لازمي ناهي پلو آهي ته ائين ڪجي. پلا جيڪڏهن ڪنهن مال سنڀالڻ واري
چيو ته مون سڀ مال يتيمن وارو انهن جي حوالي ڪري ڇڏيو آهي ۽ اهي نه ٿا مڃين ۽
سنڀالڻ واري جا شاهد به ناهن ته حضرت امام ابوحنيفه عليه الرحمة جن فرمايو آهي ته
ان ڪان ٿي قسم وٺي ان کي سچو قرار ڏنو ويندو. ان جو دليل پويون جملو "وَكَفَىٰ بِاللَّهِ
حَسِيبًا" آهي. يعني ان جي حساب ڪرڻ لاءِ الله تعالىٰ ڪافي آهي ٻئي ڪنهن شاهد
وغيره جي ضرورت ناهي. (١)

لِلرِّجَالِ نَصِيبٌ مِّمَّا تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْأَقْرَبُونَ وَلِلنِّسَاءِ

مردن جي لاءِ ڀاڱو آهي ان مان جو ڇڏي ويا پيءُ ماءُ ۽ ويجها مائٽ ۽ عورتن لاءِ

نَصِيبٌ مِّمَّا تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْأَقْرَبُونَ مِمَّا قَلَّ مِنْهُ أَوْ كَثُرَ

ڀاڱو آهي ان مان جو ڇڏي ويا پيءُ ماءُ ۽ ويجها مائٽ ان مان جو ٿورو رهيو يا گهڻو رهيو

نَصِيبًا مَّفْرُوضًا ﴿٧﴾ وَإِذَا حَضَرَ الْقِسْمَةَ أُولُوا الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ

ڀاڱو مقرر ڪيل ۽ جڏهن حاضر ٿين ورهائڻ وقت مائٽ ۽ يتيم ۽

وَالْمَسَاكِينُ فَارْزُقُوهُم مِّنْهُ وَقُولُوا لَهُمْ قَوْلًا مَّعْرُوفًا ﴿٨﴾

مسڪين پوءِ ڪارايو انهن کي ان مان ۽ چئو انهن کي چوڻ چڱو

وَلْيَخْشَ الَّذِينَ لَوْ تَرَكُوا مِنْ خَلْفِهِمْ ذُرِّيَّةً ضِعَافًا خَافُوا

۽ گهرجي ته ڊڄن اهي شخص جو جيڪڏهن ڇڏين ها پويان پنهنجي اولاد ضعيف ته خوف ڪن ها

عَلَيْهِمْ فَلْيَتَّقُوا اللَّهَ وَلْيَقُولُوا قَوْلًا سَدِيدًا ﴿٩﴾ إِنَّ الَّذِينَ

انهن تي پوءِ ڪپي ته ڊڄن الله کان ۽ ڪپي ته چون ڳالهه سڌي بيشڪ اهي ماڻهو جو

(١) ساڳيو حوالو

ع ١٠ ١ ١٢

يَاْكُلُوْنَ اَمْوَالَ الْيَتٰمٰى ظُلْمًا اِنَّمَا يَاْكُلُوْنَ فِىْ بُطُوْنِهِمْ نَارًا ط

كائي ٿا وڃن مال يتيمن جا ظلم سان تحقيق کائن ٿا پيٽن پنهنجن ۾ باهه

وَسَيَصْلَوْنَ سَعِيْرًا ﴿١٠﴾

۽ جلدي پهچندا باهه ۾

# تفسير

علامہ ابن الجوزيءَ لکيو آهي تہ مديني منوره جي اصلي رهاڪن انصارن مان جڏهن اوس بن ثابت انصاريءَ وفات ڪئي تہ سندس زال ۽ ٽن نياڻين هوندي سندس سوٽن مان ٻہ ڄڻا قتادة ۽ عرفطه نالي آيا جيڪي سندس سموري ملڪيت کڻي ويا ۽ ان جي زال ۽ نياڻين کي ڪجهہ بہ نہ ڏنائون. ان جي گهرواري نبي ڪريم صلي الله عليہ وسلم جن جي خدمت عاليہ ۾ اچي سمورو احوال ٻڌايو ۽ پنهنجيءَ مسڪينيءَ جو بہ ذڪر ڪيو. تڏهن هيءَ آيت نازل ٿي. (١) جنهن ۾ الله تعالىٰ فرمايو تہ: لِلرِّجَالِ نَصِيْبٌ مِّمَّا تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْاَقْرَبُوْنَ وَلِلنِّسَاءِ نَصِيْبٌ مِّمَّا تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْاَقْرَبُوْنَ مِمَّا قَلَّ مِنْهُ اَوْ كَثُرَ" يعني ماءُ، پيءُ ۽ ٻين قرابتدارن جي ڇڏيل مال ۽ ملڪيت ۾ مرد وڏا هجن يا ننڍا ۽ عورتون ننڍيون هجن يا وڏيون سڀني جو حصو آهي. ٿورو هجي يا گهڻو. "نَصِيْبًا مَّفْرُوْضًا" اهو حصو مقرر ڪيل آهي. جنهن جو ڏيڻ ضروري آهي. چاڻ گهرجي تہ قرآن پاڪ جي نزول کان اڳ ۾ عربن ۾ هي غلط نظام جاري هيو تہ عورتن ۽ ننڍن ٻارن کي مري ويل پنهنجي ماءُ، پيءُ مڙس وغيرهہ جي ملڪيت ۽ مال کان صفا محروم ڪندا هئا ۽ ان جو وجه هي بيان ڪندا هئا تہ عورتون ۽ ننڍا ٻار جنگ جو ميدان ملهائڻ جا لائق ناهن ان جي ڪري اهي ملڪيت ۾ وارث ٿيڻ جا بہ لائق ناهن. اهڙي نموني هندستان ۾ بہ عورت وارث نہ ٿيندي هئي ۽ يورپ ۾ تہ صرف وڏو پٽ وارث ٿيندو هو ننڍا پٽ وارث نہ ٿيندا هئا. هي اسلام جو عدل ۽ انصاف آهي جو قرآن پاڪ جي هن آيت عورتن کي بہ مردن وانگر مري ويلن جو وارث قرار ڏنو وڃي

(١) زاد المسير ص١٨ ج٢

پٹ جي خصوصي وارثي ختم ڪري سيني پٽن ۽ نياڻين کي پنهنجي وفات ڪيل پيءُ جي ملڪيت ۾ حصيدار بنائي نندي يا وڏي ٿوري ۽ گهڻي سموري جائداد ۾ سيني جي حصي کي تسليم ڪرايو ۽ اهو به ٻڌايو ته اهي حصا الله تعالىٰ جي طرفان مقرر ڪيل آهن. انهن ۾ ردوبدل ڪرڻ جو ڪنهن کي به حق ناهي.

## فائدو

"مِمَّا تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْأَقْرَبُونَ" ۾ الْوَالِدَانِ ۽ اَلْأَقْرَبُوْنَ ٻنهي لفظن ورثي جا ٻه بنيادي اصل ٻڌايا آهن. ١- هڪ ولادت جو تعلق، جيڪو اولاد ۽ ماءُ پيءُ جي وچ ۾ آهي اهو "الوالدان" جي لفظ سان بيان ٿيو. ٢- ٻيو عام رشتو ۽ تعلق، جيڪو "الاقربون" جي مفهوم آهي ۽ صحيح هي آهي ته اهو هر قسم جي مٽي ۽ مائٽيءَ تي حاوي آهي. پلي اهو ولادت جو تعلق هجي جيئن ماءُ پيءُ ۽ اولاد جو يا ٻئي قسم جو هجي جيئن عام خانداني مٽي ۽ مائٽيءَ جو يا اهو زال ۽ مڙس وارو رشتو هجي "اَلْأَقْرَبُوْنَ" جو لفظ سيني کي شامل آهي پر والدين جي اهميت کي نظر ۾ رکندي انهن جو ذڪر جدا ۽ اڳ ۾ آندو ويو آهي ۽ "الاقربون" مان اهو به ثابت ٿيو ته وارث هجڻ لاءِ مطلق مائٽي مٽي ڪافي ناهي بلڪ اقرب (تمام ويجهو مائٽ) هجڻ شرط آهي جيڪڏهن ائين نه هجي ها ته مرڻ واري جي وراثت پوري دنيا جي انساني آباديءَ ۾ ورهائڻي پوي ها ڇوته سڀ هڪ پيءُ حضرت آدم (عليه السلام) ۽ ماءُ حضرت بيبي حوا (رضي الله عنها) جو اولاد آهن ۽ پري وارو ڪجهه نه ڪجهه رشتو سيني ۾ موجود آهي ۽ هي اول ته ممڪن ئي ناهي پر جيڪڏهن ڪوشش ڪري سيني ۾ ورهائجي ته اها ملڪيت جزءِ لا يتجزىٰ وانگر ذريون ذريون ٿي ويندي جيڪا ڪنهن ڪم جي نه رهندي ان جي ڪري ضروري ٿيو ته اهو اصول مقرر ڪيو وڃي جو جڏهن رشتي جي لحاظ سان ورثو ورهايو وڃي ۽ مختلف رشتن وارا وارث گڏ ٿين ته قريبي رشتيدار کي بعيد تي ترجيح ڏئي ويجهي مائٽ جي هوندي پرانهين کي حصو نه ڏجي، پر جيڪڏهن اهڙا رشتيدار گڏجي پون جيڪي هڪ ئي وقت سڀ ويجها ۽ قريب آهن پوءِ انهن جي قرابت جا وجه ڪٽي مختلف هجن ته به اهي سيئي ورثي جا مستحق هوندا. جيئن اولاد سان گڏ ماءُ، پيءُ، زال مڙس وغيره جو اهي سيئي ورثو وٺندا ۽ سڀ ويجها مٽ آهن. ڪٽي مائٽيءَ جا وجه مختلف آهن ۽ "اَلْأَقْرَبُوْنَ" مان هڪ ڳالهه هيءَ به ثابت ٿي ته جيئن مردن کي ورثي جو حقدار سمجهيو ٿو وڃي تيئن عورتن ۽ ٻارن کي به حقدار سمجهڻ ۽ انهن

کي سندن حق ڏيڻ ضروري آهي جيڪڏهن پٽ ماءُ پيءُ مان پيدا ٿيو آهي تہ ڌيءُ بہ تہ انهن مان ئي پيدا ٿي آهي ان کهڙو گناهہ ڪيو جو ان کي حصو نہ ٿو ڏنو وڃي. قرآن ڪريم جي بيان جو انداز تہ ڏسو کهڙو پيارو آهي؟ جيڪڏهن ﴿لِلرِّجَالِ وَالنِّسَاءِ نَصِيبٌ مِّمَّا تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْأَقْرَبُونَ﴾ آڻي ها تہ بہ مقصد تہ اهوئي نڪري ها تہ مرد ۽ عورتون ٻئي وارث آهن پر ﴿لِلرِّجَالِ نَصِيبٌ مِّمَّا تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْأَقْرَبُونَ﴾ فرمائي عورتن جي حصي ۽ وارث ٿيڻ جي اهميت بيان ڪرڻ جي لاءِ ﴿وَلِلنِّسَاءِ نَصِيبٌ مِّمَّا تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْأَقْرَبُونَ﴾ جدا آندائين تانت انهن جي حق لاءِ بہ خصوصي توجهہ ڏنو وڃي، ڇوتہ انهن کي محروم رکڻ وڏو ظلم ۽ وڏو گناهہ آهي.

## پٽ جي هوندي يتيم پوٽي جي وارث ٿيڻ جو مسئلو

"الاقربون" جي لفظ کي ذهن ۾ رکندي پوري امت ان تي عمل ڪندي آئي آهي تہ پٽ جي هوندي پوٽو ورثو نہ ٿو لهڻي، ڇوتہ پٽ "الاقربون" مان آهي. ڪي ڪي ماڻهو مغربي تعليم ۽ تهذيب جا شيدائي پوٽي کي پٽ جي هوندي وارثن ۾ شمار ڪرائڻ لاءِ اجايو هٺ پير هڻندا آهن پر اهو قرآن ڪريم ۽ احاديث پاڪ جي خلاف آهي.

## فائدو

بعضي قومن ۾ ورثي جون بعضي شيون بعضي وارثن لاءِ مخصوص ڪيون ونديون هيون مثلاً گهوڙو، تلوار ۽ ٻيا هٿيار وغيره صرف نوجوان مردن جو حق سمجهي ٻين وارثن کي انهن کان محروم ڪيو ويندو هو. قرآن ڪريم جي لفظن ﴿مِمَّا قَلَّ مِنْهُ أَوْ كَثُرَ﴾ (ٿورو هجي يا گهڻو) ان خيال کي ختم ڪندي فرمايو تہ جو ڪجهہ بہ آهي سڀ سيني وارثن جي ملڪيت آهي هر شيءِ انهن کي ورثي طور ڏيڻ فرض آهي. ﴿وَإِذَا حَضَرَ الْقِسْمَةَ أُولُو الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسَاكِينُ فَارْزُقُوهُم مِّنْهُ وَقُولُوا لَهُمْ قَوْلًا مَّعْرُوفًا﴾ يعني ورثي ۾ تہ جيڪي اقرب (وڌيڪ ويجها) هوندا اهي ئي وارث ٿيندا پر ورثي ورهائڻ وقت جيڪي مٽ، مائٽ ۽ ٻيا يتيم ۽ مسڪين حاضر هجن، وارث ٿيڻ وارا انهن کي بہ اوهان پنهنجي حصي ۽ پتيءَ مان ڪجهہ نہ ڪجهہ ڏيوتہ اهي مايوسيءَ مان نڪرن ۽ انهن سان خوش اخلاقيءَ سان ڳالهايو ۽ سٺو رويو رکو.

پر ياد رکڻ گهرجي تہ انهن کي بالغ وارث پنهنجي حصي مان ڏين

نابالغ وارثن جي حصي مان ڏيڻ جائز ناهي. "وَلْيَخْشَ الَّذِيْنَ لَوْ تَرَكُوْا مِنْ خَلْفِهِمْ ذُرِّيَّةً ضِعَافًا خَافُوْا عَلَيْهِمْ" هنن جملن ۾ سمجهايو ويو آهي ته جيڪي ماڻهو اهو ڊپ رکندا آهن ته سندن مري وڃڻ کان پوءِ سندن ضعيف اولاد جي ملڪيت ڪير کائي نه وڃي اهي الله تعالىٰ کان ڊڄن ۽ ٻين يتيمن جي مال کي به چڱي نموني دل سان سنڀالي رکن ۽ حفاظت ڪن. انهن يتيمن کي نه عملي ايذاءُ ڏين نه زباني. انهن جي مال ۽ جان جي هر طرح حفاظت ڪن. ائين ڪرڻ جي برڪت اها ٿيندي جو سندن مرڻ کان پوءِ سندن اولاد جي به قدرتي طرح حفاظت ۽ نگهداشت ڪئي ويندي. "فَلْيَتَّقُوا اللّٰهَ وَلْيَقُوْلُوْا قَوْلًا سَدِيْدًا" يعني الله تعالىٰ کان ڊڄن ۽ سڌي ڳالهه ڪن. "اِنَّ الَّذِيْنَ يَاْكُلُوْنَ اَمْوَالَ الْيَتٰمٰى ظُلْمًا اِنَّمَا يَاْكُلُوْنَ فِيْ بُطُوْنِهِمْ نَارًا وَسَيَصْلَوْنَ سَعِيْرًا" يعني جيڪي ماڻهو ظلم سان يتيمن جي مال ۽ ملڪيت کي هضم ٿا ڪن اهي پنهنجن پيٽن ۾ باهه کائي رهيا آهن ۽ اهي جلد جهنم جي ڀڙڪندڙ باهه ۾ داخل ٿيندا.

## نبوي حديثن ۾ يتيمن جي مال کائيندڙ جي سزا جو بيان

## حديث ۱

بخاريءَ ۽ مسلم حضرت ابوهريره رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "اِجْتَنِبُوا السَّبْعَ الْمُوْبِقَاتِ" قِيْلَ يَا رَسُوْلَ اللّٰهِ! وَمَا هُنَّ؟ قَالَ الشِّرْكُ بِاللّٰهِ، وَالسِّحْرُ، وَقَتْلُ النَّفْسِ الَّتِيْ حَرَّمَ اللّٰهُ اِلَّا بِالْحَقِّ، وَاَكْلُ الرِّبٰوا، وَاَكْلُ مَالِ الْيَتِيْمِ، وَالتَّوَلِّيْ يَوْمَ الزَّحْفِ، وَقَذْفُ الْمُحْصَنٰتِ الْغَافِلَاتِ الْمُؤْمِنَاتِ" (۱) يعني ستن هلاڪ ڪندڙ ڳالهين کان پاسو ڪيو. عرض ڪيو ويو ته يارسول الله! اهي هلاڪ ڪندڙ شيون ڪهڙيون آهن؟ فرمايائون ته: ڪنهن کي الله تعالىٰ سان شريڪ بنائڻ، ۽ جادو ڪرڻ، ۽ ناحق قتل ڪرڻ، ۽ وياج کائڻ، ۽ يتيم جو مال کائڻ ۽ جنگ جي ميدان مان پٺي ڏئي ڀڄڻ، ۽ پاڪ دامن، بيگناهه، ايمان وارين عورتن تي زنا جي تهمت هڻڻ. الله تعالىٰ جي پياري قرآن ڪريم جي مفسر سديءَ فرمايو آهي ته "يتيم جو مال کائيندڙ جڏهن قيامت جي ڏينهن پنهنجي قبر مان اٿندو ته اُن جي وات، ڪنن، نڪ ۽ اکين مان باهه جون چيڀون نڪرنديون ۽ سڀڪو ڏسي سڃاڻندو ته هي يتيمن جي مال کائڻ وارو آهي. (۲)

(۱) ابن ڪثير ص۴۵٦ ج۱ (۲) تفسير ابن ڪثير ص۴۵٦ ج۱

## حديث ٢

ابن حبان ابوبردة رضي الله تعاليٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو "يَبْعَثُ اللّٰهُ قَوْمًا مِّنْ قُبُوْرِهِمْ يَتَاَجَّجُ اَفْوَاهُهُمْ نَارًا فَقِيْلَ مَنْ هُمْ ؟ فَقَالَ اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ يَقُوْلُ "اِنَّ الَّذِيْنَ يَاْكُلُوْنَ اَمْوَالَ الْيَتٰمٰى ظُلْمًا اِنَّمَا يَاْكُلُوْنَ فِيْ بُطُوْنِهِمْ نَارًا" (١) يعني قيامت جي ڏينهن الله تعاليٰ هڪ اهڙي قوم اٿاريندو جن جي وات مان باهہ جا شعلا پيا نڪرندا. عرض ڪيو ويو تہ اهي ڪير هوندا؟ فرمايائون تہ "ڏسين نہ ٿو جو الله تعاليٰ فرمايو آهي تہ: جيڪي ظلم ڪري يتيمن جا مال ٿا کائن اهي پنهنجن پيٽن ۾ باهہ ٿا کائن. مقصد تہ يتيمن جو مال کائيندڙ ظاهر ۾ پلي ڪجهہ بہ محسوس نہ ڪري پر حقيقت ۾ اهو جهنم جي باهہ کائي رهيو آهي.

## حديث ٣

ابن جرير ۽ ابن ابي حاتم حضرت ابوسعيد خدريءَ رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن اسان کي معراج واريءَ رات جون ڳالهيون بيان ڪندي ٻڌايو تہ: نَظَرْتُ فَاِذَا اَنَا بِقَوْمٍ لَّهُمْ مَشَافِرُ كَمَشَافِرِ الْاِبِلِ وَقَدْ وُكِّلَ بِهِمْ مَنْ يَّاْخُذُ بِمَشَافِرِهِمْ ثُمَّ يَجْعَلُ فِيْ اَفْوَاهِهِمْ صَخْرًا مِّنْ نَّارٍ فَتَقْذَفُ فِيْ فِيْ اَحَدِهِمْ حَتّٰى تَخْرُجَ مِنْ اَسَافِلِهِمْ وَلَهُمْ خُوَارٌ وَّصُرَاخٌ فَقُلْتُ يَا جِبْرِيْلُ! مَنْ هٰؤُلَاءِ؟ قَالَ هٰؤُلَاءِ "الَّذِيْنَ يَاْكُلُوْنَ اَمْوَالَ الْيَتٰمٰى ظُلْمًا اِنَّمَا يَاْكُلُوْنَ فِيْ بُطُوْنِهِمْ نَارًا وَّسَيَصْلَوْنَ سَعِيْرًا" يعني معراج واريءَ رات مون هڪ اهڙي قوم ڏٺي جن جا چپ اٺن جي چپن وانگر هئا ۽ انهن جي چپن کان وٺي جهلڻ لاءِ هڪ ملائڪ مقرر ڪيل هو جيڪو سندن واتن ۾ جهنم جي باهہ جا پٿر وجهي رهيو هو ۽ وات ۾ وجهڻ کان پوءِ اهي پٿر سندن هيٺان نڪري رهيا هئا جن جي ڪري رنيون ۽ ريهون ڪري رهيا هئا. مون (جبريل کي) فرمايو تہ "جبرئيل! هي ڪير آهن؟" عرض ڪيائين تہ جيڪي ظلم ڪري يتيمن جو مال کائيندا آهن اهي پنهنجن پيٽن ۾ باهہ کائن ٿا ۽ جلدي جهنم ۾ داخل ٿيندا. (هي اهي آهن)

## حديث ۴

بيهقيءَ شعب الايمان ۾ حضرت ابوهريره رضي الله تعاليٰ عنہ کان

(١) مظهري ص٢٢٢ ج٢

روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "اَرْبَعٌ حَقٌّ عَلَى اللهِ اَنْ لاَّ يُدْخِلَهُمُ الْجَنَّةَ وَلَا يُذِيْقَهُمْ نَعِيْمًا - مُدْمِنُ خَمْرٍ وَآكِلُ رِبًا وَآكِلُ مَالِ الْيَتِيْمِ بِغَيْرِ حَقٍّ وَالْعَاقُّ لِوَالِدَيْهِ" (١) يعني چار ماڻهو اهڙا آهن جو الله تعالىٰ تي حق آهي تہ نہ انهن کي جنت ۾ داخل ڪري ۽ نہ انهن کي ڪا نعمت چکائي، شرابي ۽ وياج خور ۽ يتيم جو ناحق مال کائيندڙ ۽ والدين جو بي فرمان.

## هڪ اهم مسئلو

علامہ مفتي احمد يارخان مرحوم هن آيت جي تفسير ۾ لکيو آهي تہ جب ميت کے يتيم يا غائب وارث هوں تو مال مشترک ميں سے اس کی فاتحہ، تيجہ وغيره کرنا حرام هے کہ اس ميں يتيم کا حق شامل هے بلکہ پهلے تقسيم کرو پهر کوئی بالغ وارث اپنےحصہ سے يہ سارے کام کرے ورنہ وه کهانا کهائے گا دوزخ کی آگ کهائيگا قيامت ميں اس کے مونهہ سے دهواں نکلے گا (٢)

ڄاڻڻ گهرجي تہ وفات ڪندڙ جي مال ملڪيت جي هر شيءِ ۾ ڪٿي ڪيتري ٻہ ننڍي هجي سڀني وارثن جو حق آهي. نابالغ ٻچن، يتيمن سان عام ڪري هر گهر ۾ ظلم ڪيو ٿو وڃي سندن مال تي قابض چاچو يا وڏو ڀاءُ يا ماءُ يا ڀيو ڪو وارث وصي اڪثر ڪري اهي ڪم ڪري ٿو جن جي هن رڪوع ۾ منع آيل آهي. اول تہ سالن جا سال ورثي ۾ آيل مال کي ورهائن ئي ڪونہ ٿا انهن ننڍن ٻچن تي ڪاڏي، ڪپڙي وغيرهہ ۾ ڪجهہ خرچ ڪن ٿا باقي سڀ مال اجاين رسمن ۽ رواجن ۾ ڪپائيندي پنهنجي سر تي بہ ان مان خرچ ڪن ٿا پر ڪيترا تہ انهن يتيمن جي ملڪيت جو سرڪاري ريڪارڊ ئي بدلايو ٿا ڇڏين.

## تنبيه

مدرسن ۽ يتيم خانن ۾ جيڪو چندو يتيمن لاءِ اچي ٿو ان کي يتيمن تي خرچ نہ ڪرڻ بہ يتيمن جي مال کي ظلم سان هضم ڪرڻ جي هڪ صورت آهي.

## مسئلو

ميت جي بدن جا ڪپڙا بہ ترڪہ ۾ شامل آهن ڪٿي ڪٿي اهي حساب ۾ لڳائڻ کان سواءِ ۽ ٽامي ۽ پتل وغيره جا ٿانو بہ ورهائڻ کان سواءِ فقيرن ۽

(١) الدر المنثور ص۴۴۴ جلد ٢
(٢) نورالعرفان ص١٢۴ حاشيہ ٢ تفسير نعيمي ص۵۵۵ ج۴ معارف القرآن ص٣١۵ ج٢

مسڪينن کي ڏئي ڇڏيندا آهن پر انهن سيني ۾ به نابالغن ۽ غائب وارثن جو حصو هوندو آهي اهو ائين ڏيڻ به گناهه ۽ ظلم آهي. اول سڀ مال ۽ ملڪيت ورهائي هرهڪ وارث کي ان جو حصو ڏئي ان کان پوءِ اهي وارث جيڪي عاقل بالغ هجن جيڪڏهن پنهنجي حصي مان صدقات، خيرات کن ته جائز آهي. يتيم، نابالغ ٻار جيڪڏهن خوشيءَ سان اجازت ڏين ته به سندن حصي مان خيرات ڪرڻ جائز ناهي ڇوته سندن اجازت معتبر ناهي.

## مسئلو

ميت کي قبرستان ڏانهن کڻي هلڻ وقت جيڪا چادر مٿان وڌي ويندي آهي اها ڪفن ۾ شامل ناهي اها به ميت جي مال مان خريد ڪرڻ جائز ناهي ڇوته اهو مشترڪ مال آهي جيڪو اجان تقسيم نه ٿيو آهي.

## مسئلو

ڪٿي ڪٿي ميت کي وهنجارڻ جي لاءِ نوان ٿانو خريد ڪري وهنجارڻ کان پوءِ اهي ڀڃي ڇڏيندا آهن اهو ٻن وجهن جي ڪري ناجائز آهي ١- هڪ ته وهنجارڻ لاءِ نون ٿانون وٺڻ جو شرعي حڪم ناهي گهر ۾ استعمال ٿيندڙن ٿانون سان به غسل ڏياري سگهجي ٿو. ٢- ٻيو ته ٿانو ڀڃڻ اجايو مال ضايع ڪرڻ ۽ يتيمن ۽ غائب وارثن جي حق تلفي ڪرڻ جي ڪري سخت گناهه آهي.

## مسئلو

ميت جي ڇڏيل مال ورهائڻ کان سواءِ ان مان مهمانن جي خاطر تواضع ڪرڻ يا صدقو ۽ خيرات وغيره ڪرڻ به جائز ناهي بلڪ ان صدقي وغيره ۾ ثواب جي بجاءِ گناهه آهي ڇوته ميت جي ڇڏيل مال ۾ سيني وارثن جو حق ۽ حصو آهي جن ۾ ڪي يتيم هوندا ته ڪي غائب. يتيمن کان اجازت ورتي وڃي ته به معتبر ناهي ڀلا جيڪڏهن ڪوبه وارث غائب ناهي سيئي حاضر ۽ موجود آهن ته به ممڪن آهي ته اهي دلي طرح خوش نه هجن يا ماڻهن جي طعنن کان بچڻ لاءِ زباني طرح اجازت ڏين ۽ خيرات اها قبول آهي جيڪا دل جي خوشيءَ سان ڪئي وڃي تنهن جي ڪري ميت جي ڪفن دفن ۽ ان تي رهيل قرض جي ادا ڪرڻ کان پوءِ فوراً ان جي ملڪيت ورهائي وارثن کي ڏجي ورهائڻ کان پوءِ جيڪڏهن ڪو وارث پنهنجي حصي مان خير خيرات ڪري ان جو ثواب ميت کي بخشي ٿو ته جائز آهي.

يُوْصِيْكُمُ اللّٰهُ فِيْٓ اَوْلَادِكُمْ ۖ لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ ۚ فَاِنْ

حڪم ٿو ڪري اوهان کي الله اوهان جي اولاد جي باري ۾ مرد لاءِ (حصو) آهي ٻن عورتن جي حصي جيترو پوءِ جيڪڏهن

كُنَّ نِسَآءً فَوْقَ اثْنَتَيْنِ فَلَهُنَّ ثُلُثَا مَا تَرَكَ ۚ وَاِنْ كَانَتْ

آهن رڳي عورتون زياده ٻن عورتن کان ته پوءِ انهن لاءِ ٻه ٽهايون آهن ان جون جو ڇڏي ويو ۽ جيڪڏهن آهي

وَاحِدَةً فَلَهَا النِّصْفُ ۗ وَلِاَبَوَيْهِ لِكُلِّ وَاحِدٍ مِّنْهُمَا السُّدُسُ

هڪڙي ته پوءِ ان لاءِ اڌ آهي ۽ ان جي پيءُ ماءُ هرهڪ جي لاءِ انهن ٻنهي مان ڇهون حصو آهي

مِمَّا تَرَكَ اِنْ كَانَ لَهٗ وَلَدٌ ۚ فَاِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّهٗ وَلَدٌ وَّوَرِثَهٗٓ اَبَوٰهُ

ان مان جو ڇڏي ويو جيڪڏهن آهي ان لاءِ اولاد پوءِ جيڪڏهن ناهي ان لاءِ اولاد ۽ وارث ٿيا ان جا پيءُ ماءُ

فَلِاُمِّهِ الثُّلُثُ ۚ فَاِنْ كَانَ لَهٗٓ اِخْوَةٌ فَلِاُمِّهِ السُّدُسُ مِنْۢ بَعْدِ

ته پوءِ ان جي ماءُ لاءِ ٽيون حصو آهي پوءِ جيڪڏهن آهن ان جا ڀائر پوءِ ان جي ماءُ لاءِ ڇهون حصو آهي

وَصِيَّةٍ يُّوْصِيْ بِهَآ اَوْ دَيْنٍ ۗ اٰبَآؤُكُمْ وَاَبْنَآؤُكُمْ لَا تَدْرُوْنَ

وصيت (ادا ڪرڻ) کان پوءِ جنهن جي وصيت ٿو ڪري يا قرض (ادا ڪرڻ کان پوءِ) پيئر اوهان جا ۽ پٽ اوهان جا نه ٿا ڄاڻو

اَيُّهُمْ اَقْرَبُ لَكُمْ نَفْعًا ۚ فَرِيْضَةً مِّنَ اللّٰهِ ۗ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ

ته ڪهڙو انهن مان وڌيڪ ويجهو آهي اوهان لاءِ نفعي جي لحاظ سان حصو مقرر آهي الله جي طرفان بيشڪ الله آهي

عَلِيْمًا حَكِيْمًا ⑪

ڄاڻندڙ، حڪمت وارو

# تفسير

ڇاڻڻ گهرجي تہ صحيح معاشري قائم ڪرڻ جي لاءِ اسلام هر ماڻهوءَ جي ڪٽنب کي وڏي اهميت ڏني آهي ۽ انهن جي فردن جي مفاد کي هڪ ٻئي سان اهڙو وابستہ رکيو آهي جو سندن هڪ ٻئي سان محبت ۽ قرابت جو رشتو ٽٽڻ کان محفوظ رهي ۽ ان رشتي کي قائم رکڻ جي لاءِ جيڪي وسائل اختيار ڪيا ويا آهن انهن مان هڪڙو ورثي جو نظام بہ آهي. دنيا جي حياتيءَ ۾ جيڪڏهن ڪو شخص غريبيءَ ۽ مسڪينيءَ جو شڪار هجي تہ ٻين کي ان جي خرچ ڏيڻ لاءِ حڪم آهي ان ئي نموني سان مرڻ کان پوءِ مري ويل جي مٽن ۾ ان جي جائيداد تقسيم ڪرڻ جو حڪم آهي تانتہ ان جو سڄو ڪٽنب ان جي مري وڃڻ کان پوءِ بہ محتاجيءَ کان محفوظ رهي. ان ڪٽنب کي متحد رکڻ جي لاءِ ورثي ورهائڻ جي نظام ۾ ٽي اصول آهن

١- هڪ اصول قرابت جو آهي يعني جيڪو مائٽ جيترو قريب ۽ ويجهو هوندو ان جو اوترو حق ۽ حصو وڌيڪ هوندو.

٢- ٻيو اصول ضرورت آهي يعني قريبي مٽن ۾ جنهن جي ضرورت جيتري وڌيڪ آهي اسلام ان کي اوترو وڌيڪ حصو ڏياريو آهي. مثال طور مري ويل جي والدين ۽ اولاد جي قرابت هڪ جهڙي آهي پر جڏهن تہ اولاد جي زندگيءَ جي سفر جي اڃان هاڻي شروعات ٿي رهي آهي ۽ انهن جون ضرورتون والدين جي ضرورتن کان وڌيڪ آهن ڇوتہ والدين زندگيءَ جو سفر ڪجهہ ڪري چڪا آهن ۽ انهن وٽ حياتيءَ ۾ ڪمايل مان ڪجهہ نہ ڪجهہ آهي مگر اولاد بالڪل خالي هٿين آهي. اهوئي فرق پٽ ۽ نياڻيءَ ۾ بہ آهي جو نياڻيءَ تي ايتري ذميداري ناهي جيتري پٽ تي آهي. نياڻيءَ جي شادي ڪرڻ کان اڳ ۾ انَ جي سيني ضرورتن کي والدين پورو ڪن ٿا ۽ شاديءَ کان پوءِ سندس کاڌي، لباس، دوا، رهائش وغيره جو ذميدار سندس مڙس آهي اولاد جي تعليم ۽ زندگيءَ جي ٻين ضرورتن کي مهيا ڪرڻ بہ مڙس جي مٿي تي آهي. انهن حقيقتن کي نظر ۾ رکندي اسلام والدين، اولاد، پٽن ۽ ڌيئرن جي حصن ۾ فرق ڪيو آهي.

٣- ٽيون اصول دولت جي تقسيم آهي. اسلام دولت کي ٿورن ٿورن ۾ رهڻ جو قائل ناهي ورثي جي ورهائڻ ۾ بہ ان اصول کي مد نظر رکيو ويو آهي. ان جي ڪري صرف پٽن يا صرف وڏي پٽ کي وارث نہ بنايو ويو آهي، بلڪ سموري اولاد پٽن، ڌيئرن بلڪ ٻين مٽن کي بہ ورثي ۾ شريڪ ڪيو ويو آهي، تانتہ گهٽي کان گهٽن فردن

۾ هيءَ ملڪيت ورهائي وڃي. اهي ٽي (قرابت، ضرورت، دولت جي صحيح تقسيم) اصول آهن جن تي اسلام جو هي بي مثال وراثت جو نظام قائم آهي ۽ ان لاءِ مري ويل جي ملڪيت مان پهريان شريعت مطابق ان جي ڪفن ۽ دفن جا خرچ ڪڍڻا آهن جن ۾ نه فضول خرچي هجي نه ڪنجوسي. ان کان پوءِ ميت تي رهيل سمورو قرض ادا ڪيو وڃي. جيڪڏهن قرض ايترو آهي جو ان جي ادا ڪرڻ کان پوءِ وارثن جي لاءِ ڪجهه به نه ٿو بچي يا ان جي رهيل ملڪيت کان به قرض گهڻو آهي ته نه ڪنهن وارث کي ڪجهه ملندو، نه ڪا وصيت جاري ڪئي ويندي. ها جيڪڏهن قرض بالڪل ناهي يا قرض لاهڻ کان پوءِ به ملڪيت بچي پئي آهي پوءِ جيڪڏهن شريعت جي مطابق ڪا وصيت ڪئي اٿس ته اها بچيل مال ملڪيت جي ٽئين حصي مان جاري ڪئي ويندي تنهن کان پوءِ باقي رهيل ملڪيت وارثن ۾ ورهائي ويندي. پلا جيڪڏهن سڀ مال جي لاءِ وصيت ڪري ويو آهي تڏهن به اها ٽئين حصي مان جاري ڪئي ويندي.

## مسئلو

وارثن کي محروم ڪرڻ جي نيت سان وصيت ڪرڻ گناهه آهي.

"يُوْصِيْكُمُ اللّٰهُ فِيْٓ اَوْلَادِكُمْ لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ" هيءَ هڪ ڪليو قاعدو ۽ قانون آهي جنهن پٽن ۽ ڌيئرن ٻنهي ٽولن کي وارث قرار ڏيندي ۽ سندن حصو بيان ڪندي ٻڌايو آهي ته جيڪڏهن ڪنهن ميت جو اولاد پٽ ۽ نياڻيون ٻئي قسم آهن ته هڪ پٽ لاءِ ٻن نياڻين جي حصي جيترو حصو رکيو ويندو. يعني پٽ کي نياڻيءَ کان ٻيڻو ڏنو ويندو. مثلاً ڪنهن ماڻهوءَ هڪ پٽ ۽ ٻه نياڻيون ڇڏيون ته مال جا چار حصا ڪري $\frac{2}{4}$ پٽ کي ۽ $\frac{1}{4}$ هرهڪ نياڻيءَ کي ڏنو ويندو.

## نياڻين کي حصي ڏيڻ جي اهميت

قرآن پاڪ نياڻين جي حصي جو ايتري قدر اهتمام ڪيو آهي جو انهن جي حصي کي اصل مقرر ڪندي پٽ کي ٻن نياڻين جيترو حصو ڏياريو آهي.

## مسئلو

جيڪي ماڻهو ڀينرن کي حصو نه ڏيندا آهن يا انهن کي معاف ڪرڻ جي لاءِ مجبور ڪندا آهن ۽ اهي ڀينرون اهو سمجهي ته ڪين ملندو ته اصل ڪونه مجبور ٿي معاف ڪنديون آهن اها معافي ڪارگر ناهي. انهن ڀينرن جو حق ڀائرن جي ذمي

قائم آهي ۽ اهو ورثو نہ ڏيڻ وارا سخت گنهگار آهن نياڻين ۾ کي تہ نابالغ بہ هونديون آهن انهن کي حصي نہ ڏيڻ ۾ بہ گناهہ آهن ١- هڪ شرعي وارث جو حصو هضم ڪرڻ ٢- ٻيو يتيم سان ظلم ڪرڻ. "فَإِنْ كُنَّ نِسَآءً فَوْقَ اثْنَتَيْنِ فَلَهُنَّ ثُلُثَا مَا تَرَكَ" يعني جيڪڏهن ميت کي پٽ جو اولاد ناهي صرف ڌيئرون آهن ۽ اهي ٻہ يا ٻن کان مٿي آهن تہ انهن کي ورثي واري مال مان ٻہ ٽهايون ملنديون ۽ باقي هڪ ٽهائي ٻين وارثن مثلاً مڙس يا زال يا والدين وغيرهم حقدارن ۾ ورهائي ويندي.

# سوال

قرآن پاڪ جي لفظ "فَوْقَ اثْنَتَيْنِ" مان ثابت ٿيو تہ ٻہ ٽهايون نياڻين کي تڏهن ڏنيون وينديون جڏهن ٻن کان مٿي هونديون اوهان ڪٿان آندو آهي تہ ٻن لاءِ بہ ٻہ ٽهايون آهن؟

# جواب

ان جو ثبوت حضور صلى الله عليہ وسلم جن جي حديث شريف ۾ آهي. ابن سعد، ابن ابي شيبہ، احمد، ابوداڻود، ترمذي، ابن ماجہ، حاڪم، ابن حبان ۽ بيهقيءَ ڪتاب السنن ۾ حضرت جابر بن عبدالله رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ حضور صلي الله عليہ وسلم جن وٽ سعد بن ربيع جي گهرواري پنهنجون ٻہ نياڻيون ڪٺي آئي ۽ اچي عرض ڪيائين تہ يارسول الله! هي انهيءَ سعد جون ٻہ نياڻيون آهن جيڪو اوهان سان گڏ احد جي جنگ ۾ هليو هو ۽ اتي شهيد ٿي ويو ۽ هنن جو چاچو سندن مال ۽ ميراث سمورو ميڙي ڪٺي ويو آهي هنن لاءِ ڪابہ شيءِ نہ ڇڏي اٿس ۽ جيڪڏهن هنن وٽ مال نہ هوندو تہ انهن سان ڪوبہ نڪاح ڪرڻ لاءِ تيار نہ ٿيندو. رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو تہ: الله تعالىٰ ان باري ۾ فيصلو ڏيندو. پوءِ ورثي جي آيت "يُوصِيكُمُ اللَّهُ فِي أَوْلَادِكُمْ لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْأُنثَيَيْنِ" لٿي تہ حضور صلي الله عليہ وسلم جن ان عورت ۽ سندس مڙس جي ڀاءُ (جنهن سموري ملڪيت ڪنئي هئي) کي گهرائي فرمايو تہ: هنن نياڻين کي ٻہ ٽهايون ۽ هنن جي ماءُ کي اٺون حصو ڏي باقي جيڪي بچيو اهو تنهنجو آهي. (١) ان حديث مان ثابت ٿيو تہ ٻن نياڻين کي بہ ٻہ ٽهايون ڏنيون ويون ۽ ڏنيون وينديون. "وَإِن كَانَتْ وَاحِدَةً فَلَهَا النِّصْفُ" ۽ جيڪڏهن ميت جي اولاد ۾ صرف هڪ نياڻي آهي پٽ جو اولاد بالڪل ناهي تہ ان کي والد يا والده جي ڇڏيل مال ۽ ملڪيت مان اڌ ملندو باقي ٻين وارثن جي حوالي ڪيو ويندو.

(١) درمنثور ص ۴۴۵ ج٢

"وَلِاَبَوَيۡهِ لِكُلِّ وَاحِدٍ مِّنۡهُمَا السُّدُسُ مِمَّا تَرَكَ اِنۡ كَانَ لَهٗ وَلَدٌ" يعني جيكڏهن ميت جا پيءُ ۽ ماءُ آهن ۽ اولاد به اٿس ڪٿي هڪڙو پٽ يا هڪ نياٽي هجي ته ان صورت ۾ پيءُ ماءُ هرهڪ کي ڇهون ڇهون حصو، باقي ورثو ٻين وارثن کي ملندو ۽ بعضي حالتن ۾ ڪجهه بچيل مال وري پيءُ کي ملي ٿو جيڪو سندس لاءِ مقرر ڪيل ڇهين حصي کان وڌيڪ هوندو آهي ۽ علم الفرائض جي اصطلاح ۾ ان کي عصبو سڏيندا آهن.

"فَاِنۡ لَّمۡ يَكُنۡ لَّهٗ وَلَدٌ وَّوَرِثَهٗۤ اَبَوٰهُ فَلِاُمِّهِ الثُّلُثُ" يعني جيڪڏهن اولاد نه اٿس ۽ سندس وارث پيءُ ماءُ ٻئي آهن ته ان صورت ۾ ورثي واري مال جو ٽيون حصو ماءُ کي ايندو باقي سڀ پيءُ جي حوالي ٿيندو. پر هيءُ ان صورت ۾ آهي جڏهن مري وڃڻ وارو جيڪڏهن عورت آهي ته مڙس وارثن ۾ نه هجيس ۽ جيڪڏهن مرد آهي ته زال وارثن ۾ نه هجيس ۽ جيڪڏهن مڙس يا زال وارثن ۾ آهن ته اول انهن جو شرعي حصو ڪڍي پوءِ باقي جيترو بچيو اهو ٽي حصا ڪيو ويندو ٻه حصا پيءُ کي ۽ هڪ ماءُ کي ملندو.

"فَاِنۡ كَانَ لَهٗۤ اِخۡوَةٌ فَلِاُمِّهِ السُّدُسُ" يعني جيڪڏهن ميت جو اولاد ناهي پر ڀائر يا ڀينرون ٻئي اٿس يا صرف ڀائر يا صرف ڀينرون اٿس جن جو تعداد ٻه يا ٻن کان مٿي آهي ته ان صورت ۾ ماءُ کي ڇهون حصو ملندو ۽ جيڪڏهن ٻيو ڪو وارث ناهي ته باقي پنج حصا پيءُ کي ملندا. ڀائرن ۽ ڀينرن هجڻ جي ڪري ماءُ جو حصو ته گهٽجي ويو پر پيءُ جي هجڻ جي ڪري ڀائرن ۽ ڀينرن کي ڪجهه نه ملندو ڇوته پيءُ اقرب (وڌيڪ ويجهو) آهي جيڪو بچندو ان کي ملندو. ان صورت ۾ ماءُ جو حصو ٽئين حصي مان گهٽجي ڇهون حصو ٿي ويندو. علم الفرائض جي اصطلاح ۾ ان کي "حجب نقصان" سڏيندا آهن. پوءِ اهي ڀائر ۽ ڀينرون جن جي ڪري ماءُ جو حصو گهٽجي ٿو سڳا هجن يا مائيتا يا پئيتا، هر صورت ۾ انهن جي وجود جي ڪري ماءُ جو حصو گهٽجي ويندو، بشرطيڪه هڪ کان مٿي هجن.

"اٰبَآؤُكُمۡ وَاَبۡنَآؤُكُمۡ لَا تَدۡرُوۡنَ اَيُّهُمۡ اَقۡرَبُ لَكُمۡ نَفۡعًا فَرِيۡضَةً مِّنَ اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيۡمًا حَكِيۡمًا" يعني مٿين حصن واري تقسيم الله تعالىٰ ڪئي آهي جنهن ۾ حڪمت ٿي حڪمت آهي. جيڪڏهن حصا ڏيڻ اوهان جي هٿ وس هجن ها ته اوهان ان کي وڌيڪ حصو ڏيو ها جيڪو اوهان لاءِ وڌيڪ نفعو ڏيندڙ هجي ها پر اوهان کي اها ڄاڻ ناهي ته اوهان جي ڀيئرن ۽ پٽن مان اوهان لاءِ وڌيڪ نفعي وارو ڪير آهي؟ الله تعالىٰ پنهنجي طرفان اها تقسيم ڪئي آهي ڇوته اهو ڄاڻندڙ، حڪمت وارو آهي.

وَلَكُمْ نِصْفُ مَا تَرَكَ اَزْوَاجُكُمْ اِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّهُنَّ وَلَدٌ ۚ فَاِنْ

۽ اوهان لاءِ اڌ آهي ان مان جو ڇڏي ويون زالون اوهان جون جيڪڏهن نہ اٿن اولاد پوءِ جيڪڏهن

كَانَ لَهُنَّ وَلَدٌ فَلَكُمُ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْنَ مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُّوْصِيْنَ

اٿن اولاد تہ پوءِ اوهان لاءِ چوٿون حصو آهي ان مان جو ڇڏيائون وصيت جاري ڪرڻ کان پوءِ جو وصيت ڪيائون

بِهَآ اَوْ دَيْنٍ ۭ وَلَهُنَّ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْتُمْ اِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّكُمْ وَلَدٌ ۚ فَاِنْ

ان جي يا قرض (لاهڻ کان پوءِ) ۽ انهن لاءِ چوٿون حصو آهي ان مان جو ڇڏيو اوهان جيڪڏهن نہ هجي اوهان جي لاءِ اولاد پوءِ

كَانَ لَكُمْ وَلَدٌ فَلَهُنَّ الثُّمُنُ مِمَّا تَرَكْتُمْ مِّنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ

جيڪڏهن آهي اوهان جو اولاد پوءِ انهن جي لاءِ اٺون حصو آهي ان مان جو ڇڏيو اوهان وصيت ڪرڻ کان پوءِ جو تا

تُوْصُوْنَ بِهَآ اَوْ دَيْنٍ ۭ وَاِنْ كَانَ رَجُلٌ يُّوْرَثُ كَلٰلَةً اَوِ امْرَاَةٌ

وصيت ڪيو ان جي يا قرض (لاهڻ کان پوءِ) ۽ جيڪڏهن آهي ڪو مڙس جو ٿو وارث ڪيو وڃي ماءُ پيءُ ۽ اولاد کان سواءِ يا زال

وَّلَهٗٓ اَخٌ اَوْ اُخْتٌ فَلِكُلِّ وَاحِدٍ مِّنْهُمَا السُّدُسُ ۚ فَاِنْ كَانُوْٓا اَكْثَرَ

۽ ان جي لاءِ ڀاءُ يا ڀيڻ آهي پوءِ هرهڪ لاءِ انهن مان ڇهون حصو آهي پوءِ جيڪڏهن آهن

مِنْ ذٰلِكَ فَهُمْ شُرَكَاۗءُ فِي الثُّلُثِ مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُّوْصٰى بِهَآ

گهڻا ان کان تہ پوءِ اهي شريڪ آهن ٽئين حصي ۾ وصيت ڪرڻ کان پوءِ جو وصيت ڪئي وئي ان جي

اَوْ دَيْنٍ ۙ غَيْرَ مُضَاۗرٍّ ۚ وَصِيَّةً مِّنَ اللّٰهِ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَلِيْمٌ ﴿١٢﴾

يا قرض (لاهڻ کان پوءِ) نہ نقصان ڏيندڙ. حڪم آهي الله جي طرفان ۽ الله ڄاڻندڙ، بردبار آهي

# تفسير

هن کان اڳ ۾ ورثي جي انهن حقدارن جو ذڪر هو جن جو ميت سان نسب ۽ ولادت جو تعلق هو ۽ هاڻي هن آيت ۾ پهريان ٻين ورثي جي مستحقين جو بيان آهي جن جو نسبي تعلق نہ پر زال ۽ مڙس جو تعلق آهي جنهن کي بيان ڪندي ارشاد ٿيو "وَلَكُمْ نِصْفُ مَا تَرَكَ أَزْوَاجُكُمْ إِنْ لَمْ يَكُنْ لَهُنَّ وَلَدٌ" يعني اوهان جي لاءِ اوهان جي زالن جي ڇڏيل ملڪيت مان اڌ آهي جيڪڏهن انهن جو پوئتي اولاد ناهي. نہ پٽ نہ نياڻي نہ هڪ نہ گهڻا. "فَإِنْ كَانَ لَهُنَّ وَلَدٌ فَلَكُمُ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْنَ مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُوصِينَ بِهَا أَوْ دَيْنٍ" يعني جيڪڏهن انهن زالن جو پوئتي اولاد آهي پوءِ اهو اوهان مان اٿن يا اڳئين مڙس مان تہ پوءِ اوهان کي انهن جي ورثي مان چوٿون حصو ملندو. پر مٿي ذڪر ڪيل ٻنهي تقسيمن کان اول ڪفن دفن جو خرچ ان کان پوءِ انهن جو قرض ادا ڪيو ويندو ۽ ڪفن ۽ قرض ادا ڪرڻ کان پوءِ بچيل ملڪيت جي ٽئين حصي مان اول وصيت جاري ڪري ان کان پوءِ تقسيم ڪئي ويندي. "وَلَهُنَّ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْتُمْ إِنْ لَمْ يَكُنْ لَكُمْ وَلَدٌ" فَإِنْ كَانَ لَكُمْ وَلَدٌ فَلَهُنَّ الثُّمُنُ مِمَّا تَرَكْتُمْ مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ تُوصُونَ بِهَا أَوْ دَيْنٍ" يعني انهن زالن کي اوهان مڙسن جي مرڻ کان پوءِ جيڪڏهن اوهان جو پوئتي موجود زالن يا اڳين زالن مان اولاد ناهي تہ ڪين اوهان جي ڇڏيل ورثي مان چوٿون حصو ملندو پر جيڪڏهن اوهان مڙسن جي وفات کان پوءِ اوهان جو پوئتي اولاد بہ آهي تہ پوءِ زالن کي هڪ هجي يا چار هجن، اوهان جي ڇڏيل ملڪيت جي ٽئين حصي مان وصيت جاري ڪرڻ ۽ قرض ادا ڪرڻ کان پوءِ اٺون حصو ملندو.

## مسئلو

مڙس جي مرڻ کان پوءِ ڪفن دفن جي انتظام ۾ ٿيل خرچ ڪڍي پوءِ جيئن ٻيا قرض سوچي ادا ڪرڻا آهن تيئن زال سان وعدو ڪيل مهر بہ جيڪڏهن نہ ڏنل آهي تہ قرض آهي جيڪو اول ادا ڪري ان کان پوءِ ورثو ورهائڻو آهي ۽ مهر وٺڻ کان پوءِ زال پنهنجي مڙس جي ملڪيت مان شرعي حصو بہ جدا وٺندي ۽ جيڪڏهن ميت جو مال ايترو آهي جنهن مان جيڪڏهن صرف مهر ادا ڪجي ٿو تہ ٻين وارثن جي لاءِ ڪجھ بہ نہ ٿو.

بچي تڏهن به اول مهر ادا ڪيو ويندو پلي ٻين لاءِ ڪجهه به نه بچي. (١)

"وَاِنْ كَانَ رَجُلٌ يُّوْرَثُ كَلٰلَةً اَوِ امْرَاَةٌ وَّلَهٗٓ اَخٌ اَوْ اُخْتٌ فَلِكُلِّ وَاحِدٍ مِّنْهُمَا السُّدُسُ" يعني جيڪڏهن ڪو ميت (مڙس يا عورت) اهڙو آهي، جنهن جو نه اولاد آهي ۽ نه **اصل** ڪو اهڙو مٽ جن جو پاڻ اولاد آهي. پر ڀاءُ يا ڀيڻ اٿس ته انهن ٻنهي مان هرهڪ کي ڇهون حصو ملندو. "فَاِنْ كَانُوْٓا اَكْثَرَ مِنْ ذٰلِكَ فَهُمْ شُرَكَآءُ فِي الثُّلُثِ" يعني جيڪڏهن اهو ڀاءُ يا ڀيڻ هڪ نه پر گهڻا آهن ته اهي سيئي ان جي ملڪيت مان ٽئين حصي ۾ شريڪ ٿيندا ۽ ان ۾ نر ۽ ماديءَ جو حصو هڪ جيترو آهي ۽ باقي ورثو ٻين وارثن کي ملندو پر جيڪڏهن ٻيو ڪوبه ناهي ته اهو وري هنن ڏانهن موٽايو ويندو.

"مِنْۢ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُّوْصٰى بِهَآ اَوْ دَيْنٍ غَيْرَ مُضَآرٍّ وَصِيَّةً مِّنَ اللّٰهِ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَلِيْمٌ" جو پهريان جيڪا وصيت ڪيل آهي اُها ادا ڪئي وڃي ۽ ان جو قرض ڏنو وڃي پر اها وصيت ڪنهن وارث کي حصي ۾ نقصان پهچائيندڙ نه هجي. نه ظاهري طرح نه ارادي سان. هيءُ جيڪو بيان ڪيو ويو الله تعالىٰ جي امر سان آهي ۽ الله "عليم" گهڻو ڄاڻندڙ آهي جنهن کي خبر آهي ته ڪير مجي ٿو ۽ ڪير نه. "حليم" گهڻو بردبار آهي جو نه مڃڻ واري کي به هڪدم سزا نه ٿو ڏي.

## فائدو

هن آيت ۾ "كَلٰلَةً" جو لفظ آيو آهي ان جي تعريف ۾ مختلف قول آهن. علامه نسفيءَ لکيو آهي ته والكلالة تطلق على من لم يخلف ولدا ولا والدا" (٢) يعني ڪلالة اهو آهي جنهن پوئتي نه اولاد ڇڏيو هجي نه پيءُ ۽ ماءُ. مفسر خازن ۽ نورنگ زاده صاحبان لکيو آهي ته اڪثر اصحابن ۽ مفسرن جو قول اهو آهي. (٣)

## فائدو

حضرت جابر رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آهي مان هڪ ڀيري بيمار ٿي پيس ۽ رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن مون کان طبع پرسيءَ لاءِ تشريف فرمايا ٿيا مون ڪين عرض ڪيو ته يارسول الله! مون کي نه اولاد آهي ۽ نه

(١) معارف القرآن ص٣٢٥ ج٢ (٢) المدارك ص٢١٢ ج١
(٣) الخازن ص٣٣٣ ج١ تنوير الايمان ص٧٩ پ۴

منهنجا والدين جيئرا آهن منهنجو ورثو ڪيئن ورهايو ويندو؟ تڏهن هيءَ آيت نازل ٿي. (١)

## ضروري وضاحت

هن آيت ۾ آيل لفظ "وَلَهٗ اَخٌ اَوْ اُخْتٌ" مان مراد مائيتو ڀاءُ يا ڀيڻ آهي. جمهور مفسرن عالمن جو اهو قول آهي (٢) باقي جيڪڏهن سڳا ڀائر ۽ ڀينرون يا پئيتا ڀائر ۽ ڀينرون اٿس ته انهن جو ذڪر هن سورة جي آخر ۾ آيل آهي، جنهن ۾ ٻڌايو ويو آهي ته جيڪڏهن هڪ ڀيڻ آهي ته ان کي اڌ ملندو ۽ جيڪڏهن هڪ ڀاءُ آهي ته اهو پنهنجي ڀيڻ جي سموري مال جو وارث ٿيندو جيڪڏهن ٻه ڀينرون آهن ته اهي ٻه ٽهايون ملڪيت ڪٽنديون ۽ جيڪڏهن ٻه يا ٽي ڀائر ۽ ڀينرون آهن ته نر کي ماديءَ کان ٻيڻو حصو ملندو. سورة جي آخر ۾ آيل بيان حقيقي، عيني (سڳي ڀاءُ يا ڀيڻ) ۽ علاتي (پئيتي ڀاءُ ۽ ڀيڻ) جو آهي جيڪڏهن هن آيت نمبر ١٢ ۾ انهن کي به شامل ڪيو ويندو ته آيتن ۾ تعارض لازم ايندو (جيڪو نه اچڻ گهرجي) ان جي ڪري هن آيت ۾ ڀاءُ يا ڀيڻ مان مراد صرف مائيتا آهن.

## وصيت جي متعلق مسئلا

جاڻڻ گهرجي ته هن رڪوع ۾ ٽي ڀيرا ورثي جا حصا بيان ڪندي ٻڌايو ويو آهي ته اها تقسيم وصيت ۽ قرض ادا ڪرڻ کان پوءِ آهي. سو اها وصيت ڪفن، دفن ۽ قرض ادا ڪرڻ کان پوءِ جيڪو مال بچيو ان جي ٽئين حصي مان ادا ڪئي ويندي. جيڪڏهن ڪنهن ماڻهوءَ ٽئين حصي کان وڌيڪ لاءِ وصيت ڪئي آهي ته اها وڌيڪ نافذ نه ٿيندي ۽ شرعي قانون ۾ وصيت نافذ ڪرڻ کان اول قرض جي ادائيگي آهي جيڪڏهن ڪنهن جو سمورو مال قرض ۾ لڳي ٿو وڃي ته نه وصيت نافذ ٿيندي نه ورثو ورهائبو.

## سوال

هن رڪوع ۾ ٽن جاين تي جتي جتي به ورثي جو ذڪر آهي ته وصيت جو ذڪر قرض ادا ڪرڻ کان اڳ ۾ آيو آهي اهو ڇو؟

(١) روح المعاني ص٢٣٠ ج٢ (٢) ساڳيو حوالو

## جواب

ان جي وضاحت ڪندي قرآن پاڪ جي مفسر علامہ آلوسي عليہ الرحمہ لکيو آهي تہ وتقديم الوصية علي الدين ذکرا مع ان الدين مقدم عليها لاظهار کمال العناية بتنفيذها لکونه مظنة للتفريط في اداءها (١) يعني قرض ادا ڪرڻ کان اول وصيت جو ذڪر آندو ويو آهي حالانڪ حڪم ۾ قرض ادا ڪرڻ اول آهي، سو ان جي لاءِ تہ ماڻهو وصيت جاري ڪرڻ ڏي خاص توجهہ ڪن، ڇوتہ وصيت غيروارث لاءِ هوندي آهي متان وارث ان جي ادا ڪرڻ ۾ دلچسپي نہ رکن ۽ ٻيو تہ هر ميت تي قرض جو هجڻ ضروري ناهي پلا جيڪڏهن ڪنهن تي قرض ڪٽي هجي بہ پر ممڪن آهي تہ اهو ڏئي ڇڏيو هجيس ۽ پلا جيڪڏهن مرڻ تائين ادا نہ ڪري سگهيو آهي تہ ٿي سگهي ٿو جو قرض لهڻندڙ بخشي ڇڏيس. ان جي ڪري ان ۾ ڪوتاهيءَ جو امڪان ٿورو آهي، پر وصيت جو معاملو ان جي خلاف آهي، ڇوجو جڏهن ميت مال ڇڏي ٿو وڃي تہ ان جي دل گهري ٿي تہ ڪجهہ نہ ڪجهہ خيرات بہ ڪري وڃي مگر ان ۾ وارثن جي طرفان ڪوتاهيءَ جو امڪان هوندو آهي، جنهن کي روڪڻ جي لاءِ وصيت کي مقدم ڪري ذڪر ڪيو ويو آهي.

## مسئلو

وارث جي حق ۾ وصيت ڪرڻ باطل آهي جيڪڏهن ڪنهن اهڙي ماڻهوءَ لاءِ وصيت ڪئي وئي آهي جنهن کي ورثي مان حصو ملڻو آهي تہ ان وصيت جو ڪو اعتبار ناهي. وارثن کي صرف ميراث جو حصو ملندو ان کان وڌيڪ جا اهي حقدار ناهن جيئن ابوداؤد ۽ ابن ماجہ حضرت ابوامامہ رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي ان فرمايو تہ مون حجہ الوداع واري سال رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن کان سندن خطبي ۾ ٻڌو پاڻ فرمائي رهيا هئا تہ: اِنَّ اللّٰهَ قَدْ اَعْطٰى كُلَّ ذِيْ حَقٍّ حَقَّهٗ فَلَا وَصِيَّةَ لِوَارِثٍ (٢) يعني بيشڪ الله تعالىٰ هر حقدار کي سندس حق ڏئي ڇڏيو آهي، پوءِ وارث لاءِ ڪابہ وصيت ناهي. ها- جيڪڏهن ٻيا وارث ان کي جاري ڪرڻ جي اجازت ڏين تہ پوءِ جاري ٿي سگهي ٿي.

"غَيْرَ مُضَآرٍّ" (نقصان نہ ڏيندڙ) يعني جيڪو ماڻهو مري رهيو آهي

(١) معارف القرآن ص٣٢٨ ج٢ بحوالہ روح المعاني (٢) مشڪواة ص٢٦٥

اهو وصيت يا هروپرو کنهن جي لاءِ قرض جي اقرار ڪرڻ جي ذريعي وارثن کي نقصان نہ پهچائي. ان ارادي سان وصيت ڪرڻ يا ڪنهن جو قرض نہ هجي تہ بہ ان جي لاءِ قرض جو اقرار ڪرڻ سخت گناهہ آهي "وَصِيَّةً مِّنَ اللّٰهِ" يعني جيڪي حصا مقرر ڪيا ويا آهن ۽ وصيت جاري ڪرڻ يا قرض جي ادائيگيءَ لاءِ تاڪيد ڪيو ويو آهي ان تي عمل ڪرڻ ضروري آهي ڇوتہ اهو الله تعالىٰ جي طرفان تاڪيدي حڪم آهي ان جي خلاف ورزي ڪرڻ ڪڏهن بہ جائز ناهي.

تِلْكَ حُدُوْدُ اللّٰهِ ۗ وَمَنْ يُّطِعِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ يُدْخِلْهُ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ

اهي حدون الله جون آهن ۽ جيڪو فرمانبرداري ڪندو الله جي ۽ ان جي رسول جي تہ داخل ڪندو ان کي بهشتن ۾

مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۗ وَذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ﴿١٣﴾

جو وهن ٿيون هيٺان انهن جي نهرون هميشہ رهندا ان ۾ ۽ اهائي ڪاميابي وڏي آهي

وَمَنْ يَّعْصِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَيَتَعَدَّ حُدُوْدَهٗ يُدْخِلْهُ نَارًا خَالِدًا

۽ جيڪو بي فرماني ڪندو الله جي ۽ ان جي رسول جي ۽ تجاوز ڪندو ان جي حدن کان تہ داخل ڪندو ان کي باهہ ۾ هميشہ هوندو

فِيْهَا ۠ وَلَهٗ عَذَابٌ مُّهِيْنٌ ﴿١٤﴾ ع

ان ۾ ۽ ان لاءِ عذاب خوار ڪندڙ آهي.

## تفسير

قرآن ڪريم جو هي دستور آهي تہ عقيدا ۽ احڪام بيان ڪرڻ کان پوءِ انهن جي مڃڻ وارن لاءِ ثواب ۽ نہ مڃڻ وارن لاءِ عذاب جو ذڪر ڪندو آهي. هنن آيتن ۾ بہ جڏهن مال ملڪيت ورهائڻ ۽ هر حقدار کي ان جي حق ڏيڻ جو بيان آهي تہ آخر ۾ انهن حڪمن تي عمل ڪرڻ واري جو ثواب ۽ نہ عمل ڪرڻ واري جو عذاب بيان

ڪندي ٻڌايو ويو آهي تہ "تِلْكَ حُدُوْدُ اللهِ" اهي مٿي بيان ڪيل الله تعالىٰ جون مقرر ڪيل حدون آهن انهن کان ٻاهر نہ وڃڻ گهرجي "وَمَنْ يُّطِعِ اللهَ وَرَسُوْلَهٗ" ۽ جيڪو بہ الله ۽ ان جي رسول (ﷺ) جي فرمانبرداري ڪندو جو نہ ڪنهن وارث جي حصي کي گهٽائيندو ۽ نہ وڌائيندو نہ اٽڪل بازي ڪندو بلڪ انهن کي الله تعالىٰ جي حڪمن تي رڪندو ۽ مقرر ڪيل حصا ادا ڪندو تہ "يُدْخِلْهُ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا وَذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ" تہ الله تعالىٰ ان کي انهن بهشتن ۾ داخل ڪندو جن جي هيٺان نهرون ٿيون وهن ۽ اهي انهن ۾ هميشہ هوندا نہ اتي موت ايندو ۽ نہ جنتي نعمتون فنا ٿينديون ۽ جنهن کي اها نعمت ملي ان جا مڙئي مطلب ۽ مرادون پوريون ٿيون اها ان جي وڏي ڪاميابي آهي.

"وَمَنْ يَّعْصِ اللهَ وَرَسُوْلَهٗ وَيَتَعَدَّ حُدُوْدَهٗ يُدْخِلْهُ نَارًا خَالِدًا فِيْهَا وَلَهٗ عَذَابٌ مُّهِيْنٌ" يعني جيڪو الله ۽ ان جي رسول جي بي فرماني ڪندو ۽ ان جي مقرر ڪيل حدن کان ٻاهر ويندو، سندس ڏنل حصن تي راضي نہ ٿيندو تہ الله تعالىٰ ان کي هميشہ جي لاءِ باهہ ۾ داخل ڪندو ۽ ان کي خوار ڪندڙ عذاب ملندو، ڇوتہ ان الله تعالىٰ جي حڪم جي مخالفت ڪئي آهي.

## موجوده دور جي انگريزي قانون تي عمل ڪرڻ وارن لاءِ سزا

هن آيت ۾ انهن ماڻهن جي لاءِ بہ عذاب جو ذڪر آهي جيڪي شرعي قانون جي بجاءِ ڪافرن جو قانون قبول ڪرڻ ۾ راضي هوندا آهن ۽ ڪيترا ظالم تہ نياڻين کي ورثو ڏيندا ئي ناهن جيڪڏهن ڪين ڇيو ويندو آهي تہ هنن کي بہ حصو ڏيوتہ وات ڦاڙي دانهن ڪري ڇوندا آهن تہ اسان انهن کي ڏاج وغيرهہ ڏئي پرڻايو آهي هاڻي انهن جو حصو ڇاجو رهيو؟

## ورثو صحيح طور تي نہ ڏيڻ واري جي لاءِ سزا جو ذڪر حديثن مان

### حديث ١

امام احمد محدث عبدالرزاق جي سند سان حضرت ابوهريره رضي الله تعالىٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله تعالىٰ عليہ وسلم جن فرمايو:

"اِنَّ الرَّجُلَ لَيَعْمَلُ بِعَمَلِ اَهْلِ الْخَيْرِ سَبْعِيْنَ سَنَةً فَاِذَا اَوْصٰى وَجَافَ فِيْ وَصِيَّتِهٖ فَيُخْتَمُ لَهٗ بِشَرِّ عَمَلِهٖ فَيَدْخُلُ النَّارَ وَاِنَّ الرَّجُلَ لَيَعْمَلُ بِعَمَلِ اَهْلِ الشَّرِّ سَبْعِيْنَ سَنَةً فَيَعْدِلُ فِيْ وَصِيَّتِهٖ فَيُخْتَمُ لَهٗ بِخَيْرِ عَمَلِهٖ فَيَدْخُلُ الْجَنَّةَ" (١) يعني ان ڳالهہ ۾ ڪوبہ شڪ ناهي تہ ڪو ماڻهو ستر (٧٠) سال ڀلن ماڻهن وارا عمل ڪري ٿو پر جڏهن وصيت ٿو ڪري تڏهن ان ۾ ظلم ٿو ڪري تہ ان بري عمل جي ڪري ان جو خاتمو برو ٿو ٿئي ۽ جهنم ۾ داخل ٿو ٿئي ۽ يقينا ڪو ماڻهو ستر (٧٠) سالن تائين برن ماڻهن وارا عمل ٿو ڪري پر جڏهن وصيت ٿو ڪري تہ ان ۾ عدل ٿو ڪري پوءِ ان جو خاتمو سٺو ٿو ٿئي ۽ ان جي ڪري جنت ۾ داخل ٿئي ٿو.

## حديث ٢

محدث حاڪم حضرت ابن مسعود رضي الله تعالىٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ "اِنَّ السَّاعَةَ لَا تَقُوْمُ حَتّٰى لَا يُقْسَمُ مِيْرَاثٌ" (٢) يعني تيستائين قيامت قائم نہ ٿيندي جيستائين ورثو ورهائڻ بند نہ ڪيو وڃي.

## حديث ٣

ابن ابي شيبه مصنف ۾ ۽ سعيد بن منصور حضرت سليمان بن موسىٰ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو: "مَنْ قَطَعَ مِيْرَاثًا فَرَضَهُ اللّٰهُ قَطَعَ اللّٰهُ مِيْرَاثَهٗ مِنَ الْجَنَّةِ" يعني جنهن الله تعالىٰ جي مقرر ڪيل ورثي کي ڪٽيو تہ الله تعالىٰ جنت مان سندس (حصو) ورثو ڪٽي ڇڏيندو.

## حديث ۴

ابن ماجہ حضرت انس رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو: "مَنْ قَطَعَ مِيْرَاثَ وَارِثِهٖ قَطَعَ اللّٰهُ مِيْرَاثَهٗ مِنَ الْجَنَّةِ يَوْمَ الْقِيَامَةِ" (٣) يعني جنهن پنهنجي وارث جو ورثو ڪٽيو تہ الله تعالىٰ قيامت جي ڏينهن سندس ورثو جنت مان ڪٽي ڇڏيندو. راقم الحروف عرض گذار آهي تہ اهوئي سبب آهي جنهن جي ڪري علم الفرائض (ورثي جي ورهائڻ جو علم) پڙهڻ ضروري آهي ۽ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي حديثن ۾ ان جي پڙهڻ لاءِ تاڪيد ٿيل آهي.

(١) تفسير ابن ڪثير ص۴١١ ج١ (٢) روح المعاني ص٢٣۴ ج٢
(٣) الدرالمنثور ص۴۵۴ ج٢

# نبوي حديثن مان علم الفرائض پڙهڻ جي اهميت

## حديث ۱

حاکم ۽ بيهقيءَ حضرت ابوهريره رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "تَعَلَّمُوا الْفَرَآئِضَ وَعَلِّمُوْهَا النَّاسَ فَاِنَّهٗ نِصْفُ الْعِلْمِ وَاِنَّهٗ يُنْسَىٰ وَهُوَ اَوَّلُ مَا يُنْزَعُ مِنْ اُمَّتِيْ" يعني ورثي ورهائڻ جو علم پڙهو ۽ ماڻهن کي پڙهايو پوءِ بلاشڪ اهو (علم سموري ديني) علم جو اڌ آهي ۽ بيشڪ اهو وساريو ويندو ۽ اهو پهريون علم آهي جيڪو منهنجي امت کان کسيو ويندو.

## حديث ۲

حاکم ۽ بيهقيءَ حضرت عبدالله بن مسعود رضي الله تعالىٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو: تَعَلَّمُوا الْفَرَآئِضَ وَعَلِّمُوْهَا النَّاسَ فَاِنِّيْ اِمْرُؤٌ مَقْبُوْضٌ وَاِنَّ الْعِلْمَ سَيُقْبَضُ وَتَظْهَرُ الْفِتَنُ حَتّٰى يَخْتَلِفَ الْاِثْنَانِ فِي الْفَرَآئِضِ لَا يَجِدَ انِ مَنْ يَّقْضِيْ بِهَا" يعني ورثي ورهائڻ وارو علم پاڻ بہ پڙهو ۽ ٻين ماڻهن کي بہ پڙهايو پوءِ يقيناً مان بہ دنيا تان (آخرت ڏانهن) گهرايل مڙس آهيان ۽ بلاشڪ هي علم جلد واپس کنيو ويندو ۽ فتنا ظاهر ٿيندا تانجو ورثي ورهائڻ جي باري ۾ بہ ڄڻا اختلاف ڪندا تہ اهڙو ماڻهو نہ لهندن جيڪو انهن ٻنهي جو فيصلو ڪري.

## حديث ۳

بيهقيءَ حضرت ابن مسعود رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ "تَعَلَّمُوا الْفَرَآئِضَ وَالْحَجَّ وَالطَّلَاقَ فَاِنَّهٗ مِنْ دِيْنِكُمْ" يعني ورثي ورهائڻ جو علم ۽ حج ۽ طلاق جي (مسئلن جو علم) پڙهو. اهو اوهان جي دين جو (حصو) آهي. (۱)

(۱) ٽئي روايتون الدرالمنثور ص۴۴۹- ۴۵۰ ج۲ ۾ آهن.

وَالّٰتِىْ يَاْتِيْنَ الْفَاحِشَةَ مِنْ نِّسَآءِكُمْ فَاسْتَشْهِدُوْا عَلَيْهِنَّ

۽ جيڪي (عورتون) آڻين ٿيون برائي اوهان جي عورتن مان پوءِ شاهد ڪيو انهن تي

اَرْبَعَةً مِّنْكُمْ ۚ فَاِنْ شَهِدُوْا فَاَمْسِكُوْهُنَّ فِى الْبُيُوْتِ حَتّٰى

چار (مرد) پاڻ مان پوءِ جيڪڏهن شاهدي ڏين ته پوءِ بند رکو انهن کي گهرن ۾ تانجو

يَتَوَفّٰهُنَّ الْمَوْتُ اَوْ يَجْعَلَ اللّٰهُ لَهُنَّ سَبِيْلًا ﴿١٥﴾ وَالَّذٰنِ

وٺي وڃي انهن کي موت يا ڪري الله انهن جي لاءِ ڪو رستو ۽ اهي (مرد) جو

يَاْتِيٰنِهَا مِنْكُمْ فَاٰذُوْهُمَا ۚ فَاِنْ تَابَا وَاَصْلَحَا فَاَعْرِضُوْا

آڻين ٿا اها (برائي) اوهان مان پوءِ ايذايو انهن ٻنهي کي پوءِ جيڪڏهن توبهه ڪن ۽ پاڻ کي سڌارين ته پوءِ منهن موڙيو

عَنْهُمَا ۗ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ تَوَّابًا رَّحِيْمًا ﴿١٦﴾

انهن ٻنهين کان بيشڪ الله آهي توبه قبول ڪندڙ، مهربان

## تفسير

ذهن نشين ڪرڻ گهرجي ته جڏهن الله تعالىٰ هن سورة ۾ عورتن سان احسان ڪرڻ ۽ سندن مهر ڪين ڏيڻ ۽ مردن سان گڏ ميت جي وارثن ۾ ٿيڻ کي بيان فرمايو ته انهن کي برائيءَ کان روڪڻ لاءِ مٿن ڪجهه پابنديون به عائد ڪيون تانت پاڻ کي صفا آزاد نه سمجهن ۽ پنهنجي پاڪدامنيءَ ۽ پردي جو به خيال ڪن ان لاءِ ارشاد ٿيو "وَالّٰتِىْ يَاْتِيْنَ الْفَاحِشَةَ مِنْ نِّسَآءِكُمْ" يعني اوهان جي زالن مان جيڪي زنا ٿيون ڪن ۽ ان گناهه جي اوهان کي خبر پوي ته صرف ٻڌڻ تي اڪتفا نه ڪيو پر "فَاسْتَشْهِدُوْا عَلَيْهِنَّ اَرْبَعَةً مِّنْكُمْ" انهن تي پاڻ مان چار مرد شاهد پيش ڪيو.

## زنا جي ثبوت لاءِ چار شاهد ڇو؟

چئن شاهدن جو وجود ان جي ڪري ضروري آهي جو زنا جي سزا بہ وڏي آهي ۽ اهو چئن شاهدن جي هجڻ جو حڪم صرف مسلمانن لاءِ قرآن پاڪ ۾ آيل ناهي پر اهو حڪم توراة ۽ انجيل ۾ بہ هيو علماء سڳورا فرمائن ٿا تہ زنا ۾ چار شاهد ان جي ڪري ورتا ٿا وڃن جو زاني مرد ۽ زانياڻي عورت ٻئي ڏوهي آهن ۽ هرهڪ جي ڏوھ تي ٻہ شاهد ضرور بيهڻ گهرجن. (١) "مِنْكُمْ" ۾ جمع مذڪر مخاطب جي ضمير "ڪم" مان ثابت ٿيو تہ اهي چارئي شاهد مرد هجن. انهن ۾ عورت شاهد نہ هجي ۽ اهي عادل، نيڪ صالح بہ هجن. "فَإِنْ شَهِدُوْا فَأَمْسِكُوْهُنَّ فِي الْبُيُوْتِ" يعني جيڪڏهن چار شاهد شاهدي ڏئي وڃن تہ اسان ائين ڏنو جيئن سرائي سرميدانيءَ ۾ هوندي آهي تہ پوءِ زنا جو گناھ ثابت ٿي ويو ۽ هاڻي ان عورت ڪي گهرن ۾ مرڻ تائين بند ڪري ڇڏيو.

"حَتّٰى يَتَوَفّٰهُنَّ الْمَوْتُ اَوْ يَجْعَلَ اللّٰهُ لَهُنَّ سَبِيْلًا" يعني اها سزا ۽ حڪم تيستائين آهي جيستائين ڪين موت ماري يا الله تعالىٰ انهن جي لاءِ ٻيو ڪو رستو بيان فرمائي. بعضي مفسرن لکيو آهي تہ اهو حڪم اسلام جي ابتدائي دور ۾ هيو، جيڪو سورة النور ۾ زانين جي سزا بيان ڪرڻ سان منسوخ ڪيو ويو، مگر علامہ ثناءُ الله پاني پتيءَ عليہ الرحمه لکيو آهي تہ اهو حڪم منسوخ ناهي جيڪڏهن ڪا عورت زنا ڪري ٿي تہ ان ڪي بند رکو جهستائين شاهدن جي شاهدي ٻڌي وڃي ۽ ان شاهديءَ سان جڏهن ڏوھ ثابت ٿيو تہ پوءِ انهن زناڪارن ڪي ديڙا هڻي ماري ڇڏيو.

"وَالَّذَانِ يَأْتِيَانِهَا مِنْكُمْ فَاٰذُوْهُمَا" ۽ جيڪو مرد ۽ عورت (زاني ۽ زانياڻي) اهو زنا جو ڪم ڪن ٿا انهن ڪي زبان سان ايذايو. يعني شرمايو ۽ ڪين چئو تہ ڇا اوهان ڪي الله تعالىٰ جو خوف نہ ٿيو ڇا اوهان ڪي حياءُ نہ آيو وغيره وغيره. ڪن بزرگن لکيو آهي تہ "اَلَّذَانِ يَأْتِيَانِهَا" (جيڪي اها برائي ٿا ڪن) مان مراد لونڊي بازي ڪرڻ وارا آهن. قرآن پاڪ جي مفسر مجاهد جو بہ اهو فرمان آهي. قرآن ڪريم ۾ الله تعالىٰ حضرت لوط عليہ الصلواة والسلام جي قوم جي ان لونڊي بازيءَ واري گناھ ڪي بہ ان "اَلْفَاحِشَةَ" جي لفظ سان بيان فرمايو آهي جيئن حڪم آهي "لَتَأْتُوْنَ الْفَاحِشَةَ مَا سَبَقَكُمْ بِهَا مِنْ اَحَدٍ مِّنَ الْعَالَمِيْنَ" (٢) يعني اوهان اها برائي ٿا ڪيو جيڪا اوهان کان اڳ ۾ سيني جهانن مان ڪنهن بہ نہ ڪئي هئي.

(١) القرطبي ص٨٢ ج٥ (٢) سورة العنكبوت آيت ٢٨

## لونڊي بازي ڪندڙ جي سزا

بيهقيءَ شعب الايمان ۾ محمد بن منڪدر ڪان روايت آندي آهي تہ صديقي خلافت واري دور ۾ حضرت خالد بن وليد رضي الله عنہ حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنہ ڪان خط لکي پڇيو تہ عرب جي علائقي ۾ هڪ اهڙو شخص آهي جيڪو عورتن وانگر نڪاح ڪري لونڊي بازي ٿو ڪرائي. ان جي سزا ڇا آهي؟ حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنہ وڏن وڏن اصحابن رضي الله عنهم کي گهرائي مشورو ورتو تہ ان کي ڇا ڪجي؟ حضرت علي رضي الله عنہ فرمايو تہ اهو ماڻهو اهڙو گناهہ ٿو ڪري جو حضرت لوط عليہ السلام جي هڪ امت ڪان سواءِ ٻيءَ ڪنهن بہ امت نہ ڪيو آهي. منهنجي راءِ اها آهي تہ ان کي ساڙي ڇڏجي. ٻين وڏن وڏن اصحابن بہ انهيءَ راءِ سان متفق ٿي اهوئي فيصلو ڏنو. (١) حضور صلى الله عليہ وسلم جن جي حديثن ۾ بہ لونڊي بازي ڪندڙن جي لاءِ سخت سزائون بيان ڪيون ويون آهن جن مان ڪجهہ هتي لکجن ٿيون.

## نبوي حديثن مان لونڊي بازي ڪندڙن جي سزا جو بيان حديث ١

طبرانيءَ اوسط ۾ ۽ حاڪم صحيح سند سان حضرت ابوهريره رضي الله عنہ ڪان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو: لَعَنَ اللّٰهُ سَبْعَةً مِنْ خَلْقِهِ مِنْ فَوْقِ سَبْعِ سَمٰواتِهِ وَرَدَّدَ اللَّعْنَةَ عَلىٰ وَاحِدٍ مِّنْهُمْ ثَلَاثًا وَلَعَنَ كُلَّ وَاحِدٍ مِنْهُمْ لَعْنَةً تَكْفِيْهِ قَالَ: مَلْعُوْنٌ مَنْ عَمِلَ عَمَلَ قَوْمِ لُوْطٍ، مَلْعُوْنٌ مَنْ عَمِلَ عَمَلَ قَوْمِ لُوْطٍ، مَلْعُوْنٌ مَنْ عَمِلَ عَمَلَ قَوْمِ لُوْطٍ - الحديث - يعني الله تعالىٰ پنهنجيءَ مخلوق مان ستن قسمن جي ماڻهن تي پنهنجن ستن آسمانن ڪان مٿان لعنت ڪئي آهي ۽ انهن مان هڪ تي ٽي ڀيرا ۽ ٻين مان هرهڪ تي هڪ ڀيرو لعنت ڪئي اٿس جيڪا انهن لاءِ ڪافي آهي. فرمايائون تہ ان تي لعنت آهي جيڪو (حضرت) لوط (عليہ الصلواة والسلام) جي قوم وارو عمل (لونڊي بازي) ڪري ٿو، ان تي لعنت آهي جيڪو (حضرت) لوط (عليہ الصلواة والسلام) جي قوم وارو عمل (لونڊي بازي) ڪري ٿو، ان تي لعنت آهي جيڪو (حضرت) لوط (عليہ الصلواة والسلام) جي قوم وارو عمل (لونڊي بازي) ڪري ٿو.

(١) مظهري ص٢۴٥ ج٢

## حديث ٢

طبراني شريف ۾ حضرت جابر رضي الله عنه کان هڪ وڏي روايت ۾ آهي ته رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو "اِذَا كَثُرَ اللُّوْطِيَّةُ رَفَعَ اللّٰهُ عَزَّوَجَلَّ يَدَهٗ عَنِ الْخَلْقِ فَلَا يُبَالِىْ فِىْ اَيِّ وَادٍ هَلَكُوْا" يعني جڏهن (دنيا ۾) لونڊي بازيءَ وارا گهڻا ٿيندا آهن ته الله تعالىٰ پنهنجي (رحم ۽ ڪرم وارو) هٿ مخلوق تان ڪٽي ڇڏيندو آهي پوءِ ڪنهن به واديءَ ۾ هلاڪ ٿيندا ته ان ڪي ڪا پرواهه ناهي.

## حديث ٣

ابن حبان، بيهقي ۽ نسائيءَ حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن ٽي ڀيرا فرمايو "لَعَنَ اللّٰهُ مَنْ عَمِلَ عَمَلَ قَوْمِ لُوْطٍ" يعني جنهن لوط (عليه الصلوٰة والسلام) جي قوم وارو عمل (لونڊي بازي) ڪيو ان تي الله تعالىٰ لعنت ڪئي آهي.

## حديث ۴

بيهقيءَ حضرت عڪرمه رضي الله عنه کان روايت ڪئي آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "اُقْتُلُوا الْفَاعِلَ وَالْمَفْعُوْلَ بِهٖ وَالَّذِيْ يَاْتِى الْبَهِيْمَةَ" يعني لونڊي بازي ڪندڙ، ڪرائيندڙ ۽ جيڪو چوپائي مال سان بدفعلي ڪري انهن کي قتل ڪيو.

## حديث ٥

ترمذي، نسائيءَ ۽ ابن حبان حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "لَا يَنْظُرُ اللّٰهُ عَزَّوَجَلَّ اِلٰى رَجُلٍ اَتٰى رَجُلًا اَوِ امْرَاَةً فِيْ دُبُرِهَا" يعني الله تعالىٰ ان مرد ڏانهن (رحم جي) نظر نه ڪندو جيڪو ڪنهن مرد يا عورت سان لونڊي بازي ڪندو.

## حديث ٦

طبرانيءَ اوسط ۾ حضرت ابوهريره رضي الله عنه کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلي الله عليه وسلم جن فرمايو "ثَلَاثَةٌ لَا تُقْبَلُ لَهُمْ شَهَادَةُ اَنْ لَّآ اِلٰـهَ اِلَّا

اللهُ الرَّاكِبُ وَالْمَرْكُوبُ وَالرَّاكِبَةُ وَالْمَرْكُوبَةُ، وَالْإِمَامُ الْجَائِرُ" (١) يعني ٽن صفتن وارن جو شهادت وارو ڪلمو پڙهڻ بہ قبول ناهي. ١- مرد مرد تي سواري ڪندڙ ۽ سواري ڪيل يعني لونڊي بازي ڪندڙ ۽ ڪرائيندڙ. ٢- عورت عورت تي سواري ڪندڙ ۽ سواري ڪرائيندڙ، (ڪٿي ڪٿي عورتون هڪ ٻئي تي سوار ٿي شهوت هلائينديون آهن، هتي اهي مراد آهن) ٣- ظالم بادشاهہ.

هنن ٻنهي آيتن ۾ زنا جي گناهہ جي لاءِ سزا طور حد مقرر ڪيل ناهي بس صرف ايترو ٻڌايو ويو آهي تہ انهن کي ايذاءُ پهچايو ۽ عورتن کي گهرن ۾ بند رکو تانجو مري وڃن يا الله تعالىٰ انهن جي لاءِ ڪو رستو ڪري. حضرت ابن عباس رضي الله عنہ ان جي تفسير ۾ فرمايو آهي تہ "اَلرَّجْمُ لِلثَّيِّبِ وَالْجِلْدُ لِلْبِكْرِ" (٢) يعني پرڻيل جي لاءِ سزا ان کي پٿر هڻي مارڻ آهي ۽ اڻ پرڻيل جي سزا ان کي ديڙا هڻڻ آهي. رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن کان مرفوع حديثن ۾ بہ ان "سبيلا" جو اهوئي بيان ثابت آهي ۽ شادي ڪيل ۽ شادي نہ ڪيل وارو تفصيل بہ سندن فرمانن سان ثابت آهي. حضرت ماعز بن مالڪ ۽ ازد قبيلي جي هڪ عورت تي زنا جي گناهہ ثابت ٿيڻ سان شادي شده هجڻ جي ڪري سنگسار جي حد لڳائي وئي ۽ اهوئي حڪم توراة ۾ آهي جنهن جي مدار تي هڪ يهوديءَ کي سنگسار ڪيو ويو هو ۽ شادي نہ ڪيل جي لاءِ ديڙن هڻڻ جو حڪم بہ قرآن ڪريم ۾ ذڪر ڪيل آهي. "اَلزَّانِيَةُ وَالزَّانِيْ فَاجْلِدُوْا كُلَّ وَاحِدٍ مِّنْهُمَا مِائَةَ جَلْدَةٍ" (٣) يعني زنا ڪندڙ عورت ۽ زنا ڪندڙ مرد هرهڪ کي هڪ سؤ (١٠٠) ديڙا هڻو. باقي سنگسار ڪرڻ وارو حڪم جنهن آيت ۾ نازل ٿيو هو ان جي تلاوت منسوخ ٿي وئي، پر حڪم باقي آهي. (۴)

"فَإِنْ تَابَا وَأَصْلَحَا فَأَعْرِضُوْا عَنْهُمَا إِنَّ اللهَ كَانَ تَوَّابًا رَّحِيْمًا" يعني جيڪڏهن اهي گناهہ ڪرڻ وارا ان گناهہ کان توبه ڪري پاڻ کي سڌارين تہ پوءِ کين ڇڏي ڏيو نہ ايذايو. يقيناً الله توبه قبول ڪندڙ مهربان آهي. مفسر قرطبيءَ لکيو آهي تہ هي حڪم شرعي حدن لڳائڻ جي حڪم نازل ٿيڻ کان اڳ ۾ هو جڏهن حدون نازل ٿيون تہ اهو حڪم منسوخ ٿي ويو. (۵)

(١) هي سڀ روايتون علامہ منذريءَ الترغيب والترهيب ص٢٨٧ کان ٢٨٩ ج٣ تائين آنديون آهن.
(٢) صحيح بخاري ص٦٥٧ ج٢ ڪتاب التفسير (٣) سورة النور آيت ٢
(۴) معارف القرآن ص٣٣٦ جلد٢ (۵) القرطبي ص٩٠ ج۵

اِنَّمَا التَّوْبَةُ عَلَى اللّٰهِ لِلَّذِيْنَ يَعْمَلُوْنَ السُّوْٓءَ بِجَهَالَةٍ ثُمَّ

تحقيق توبه قبول ڪرڻ وارا الله جي بارگاهه ۾ انهن جي لاءِ آهي جيڪي ڪن ٿا بڇڙائي اڻ ڄاڻائيءَ ۾ تنهن ڪان پوءِ

يَتُوْبُوْنَ مِنْ قَرِيْبٍ فَاُولٰٓئِكَ يَتُوْبُ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ

توبه ڪن ٿا جلدي پوءِ اهي توبه قبول تو ڪري الله انهن جي ۽ آهي الله

عَلِيْمًا حَكِيْمًا ﴿١٧﴾ وَلَيْسَتِ التَّوْبَةُ لِلَّذِيْنَ يَعْمَلُوْنَ السَّيِّاٰتِ ۚ

ڄاڻندڙ حڪمت وارو ۽ ناهي توبه (قبول ڪرڻ) انهن جي لاءِ جو ڪن ٿا برايون

حَتّٰٓى اِذَا حَضَرَ اَحَدَهُمُ الْمَوْتُ قَالَ اِنِّىْ تُبْتُ الْاٰنَ وَلَا الَّذِيْنَ

تانجو جڏهن پهتو هڪڙي انهن جي وٽ موت ته چيائين بيشڪ مون توبه ڪئي هاڻي ۽ نه انهن جي لاءِ جو

يَمُوْتُوْنَ وَهُمْ كُفَّارٌ ؕ اُولٰٓئِكَ اَعْتَدْنَا لَهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ﴿١٨﴾

مرن ٿا ان حال ۾ جو اهي ڪافر آهن اهي تيار ڪيوسون انهن جي لاءِ عذاب دردناڪ

## تفسير

هن کان اڳينءَ آيت ۾ توبه جو ذڪر هو هاڻي هنن ٻن آيتن ۾ توبه جي قبول ٿيڻ جا شرط بيان ڪندي ٻڌايو ٿو وڃي ته توبه انهن جي قبول آهي جيڪي جهالت جي ڪري گناهه ڪري ته وهن ٿا پر موت جي اچڻ ۽ عذاب جي ملائڪن ڏسڻ کان اڳ ۾ ئي توبه ڪن ٿا ته وري اهو گناهه نه ڪندا. الله تعالىٰ انهن جي توبه قبول ٿو فرمائي ۽ الله تعالىٰ ڄاڻندڙ آهي ته ڪنهن کان ناداني‌ءَ ۽ جهالت جي ڪري گناهه صادر ٿيو آهي ۽ ڪير ٿو نيڪ نيتيءَ ۽ خلوص سان توبه ڪري. حڪمت وارو آهي جو جنهن جي توبه قبول ڪرڻ سندس حڪمت جي موافق آهي ته ان جي توبه قبول ڪري ٿو. "وَلَيْسَتِ التَّوْبَةُ" کان "عَذَابًا اَلِيْمًا" تائين ٻڌايو ويو آهي ته جيڪي ماڻهو پڇاڙيءَ

کان بي خبر ۽ الله تعالیٰ جي خوف کان بي فکر ٿي رات ڏينهن گناهن ۾ ڦاٿا پيا آهن تانجو جڏهن ملڪ الموت سندن مٿان ٿو اچي بيهي ته پوءِ توبه توبه ٿا چون. يا اهي بدبخت جن جو موت ڪفر تي ٿو ٿئي ېنهي جي توبه قبول ناهي ۽ الله تعالیٰ انهن لاءِ دردناڪ عذاب تيار ڪري ڇڏيو آهي.

## فائدو

توبه جي معنيٰ آهي رجوع ڪرڻ ۽ موٽي اچڻ يعني جنهن طرف ڏانهن ماٺهو وڃي رهيو آهي ان ڪان منهن موڙي ېئي طرف اچي. شرعي توبه ۾ به اهائي ڳالهه لحاظ ۾ رکيل آهي ته انسان ڪم عقلي ۽ بيوقوفيءَ جي ڪري جنهن گناهه ۽ بي فرمانيءَ جي واٽ تي وڃي رهيو آهي ان ڪان منهن موڙي تقوی ۽ پرهيزگاريءَ جو رستو اختيار ڪري. "عَلَى اللهِ" الله جي مٿان. ان جو مطلب هيءُ آهي ته الله تعالیٰ پنهنجي فضل ۽ ڪرم سان ٻانهن جي سچي توبه قبول ڪرڻ جو وعدو ڪيو آهي سندس شان جي لائق به اها ڳالهه آهي ته اهو وعدو پورو ڪري. باقي ڪا شيءِ ائين الله تعالیٰ تي واجب يا فرض هجي سو سندس شان ان ڪان برتر ۽ بالا آهي. رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن به دل سان توبه ڪندڙن جون ڀلايون بيان ڪيون آهن جن مان ڪجهه هتي لکجن ٿيون.

## نبوي حديثن مان توبه ڪرڻ جون ڀلايون

### حديث ١

امام احمد، ترمذيءَ، ابن ماجه، ابن حبان، حاڪم ۽ بيهقيءَ حضرت ابن عمر رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو "اِنَّ اللهَ يَقْبَلُ تَوْبَةَ الْعَبْدِ مَالَمْ يُغَرْغِرْ" يعني جيستائين ٻانهو سڪرات جا غرغرا نه ٿو هڻي (تيستائين جيڪڏهن توبه ڪندو ته) الله تعالیٰ ان جي توبه قبول ٿو ڪري.

### حديث٢

امام احمد ۽ ابويعليٰ حضرت ابوسعيد خدري رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو "اِنَّ الشَّيْطَانَ قَالَ وَعِزَّتِكَ وَجَلَالِكَ لَا اَبْرَحُ اُغْوِیْ بَنِیْ آدَمَ مَا دَامَتِ الْاَرْوَاحُ فِيْهِمْ فَقَالَ لَهٗ رَبُّهٗ فَبِعِزَّتِیْ وَجَلَالِیْ لَا

اَبْرَحُ اَغْفِرُ لَهُمْ مَا اسْتَغْفَرُوْنِيْ" يعني (الله تعالیٰ کي) شيطان چيو تہ تنهنجي عزت ۽ جلال جو قسم آهي تہ جيستائين انسانن جا ارواح انهن ۾ هوندا تہ انهن کي مان گمراهہ ڪندو رهندس. الله تعالیٰ ان کي فرمايو تہ: "مون کي بہ پنهنجيءَ عزت ۽ وڏائيءَ جو قسم آهي تہ جيستائين معافي گهرندا رهندا تہ کين معاف ڪندو رهندس.

## حديث ٣

مسلم شريف حضرت ابوموسیٰ رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله تعالیٰ عليہ وسلم جن فرمايو "اِنَّ اللهَ يَبْسُطُ يَدَهٗ بِاللَّيْلِ لِيَتُوْبَ مُسِيْءُ النَّهَارِ وَيَبْسُطُ يَدَهٗ بِالنَّهَارِ لِيَتُوْبَ مُسِيْءُ اللَّيْلِ حَتّىٰ تَطْلَعَ الشَّمْسُ مِنْ مَّغْرِبِهَا" يعني جيستائين سج اولهہ کان ايري تيستائين الله تعالیٰ پنهنجو (قدرتي) هٿ رات جو کولي ٿو تانتہ ڏينهن جو گناهہ ڪرڻ وارو توبه ڪري (تہ قبول فرمايان) ۽ ڏينهن جو کولي ٿو تانتہ رات جو گناهہ ڪرڻ وارو توبه ڪري تہ (قبول فرمايان)

## حديث ۴

مسلم شريف حضرت ابوهريره رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو "مَنْ تَابَ قَبْلَ اَنْ تَطْلَعَ الشَّمْسُ مِنْ مَّغْرِبِهَا تَابَ اللهُ عَلَيْهِ" (١) يعني سج جي اولهہ طرف ايرڻ کان اڳ ۾ جنهن بہ توبه ڪئي تہ الله تعالیٰ ان جي توبه قبول ڪندو.

## حديث ٥

ابن ماجہ روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله تعالیٰ عليہ وسلم جن فرمايو "اَلتَّائِبُ حَبِيْبُ اللهِ وَالتَّائِبُ مِنَ الذَّنْبِ كَمَنْ لَّا ذَنْبَ لَهٗ" (٢) يعني گناهہ کان توبه ڪندڙ الله تعالیٰ جو حبيب (پيارو) آهي ۽ گناهہ کان توبه ڪندڙ ائين آهي جڻ ان گناهہ ڪيو ئي ڪونہ آهي، مگر اهو ضروري آهي تہ توبه سچي ڪري ۽ ان جا ٽي رڪن آهن. ١- هڪ پنهنجي ڪيل ڪم تي ندامت ۽ شرمساري ٢- ٻيو تہ جنهن گناهہ ۾مبتلا آهي هڪدم ڇڏي ڏي ٣- ٽيون تہ جيڪڏهن ان جو نقصان ۽ ڪمي پوري ڪرڻ جهڙي هجي تہ پوري ڪري. مثلاً نماز يا روزا ڇڏيا اٿس تہ اهي قضا ڪري چڱيءَ طرح

(١) تفسير مظهري ص٢٤٦ جلد ٢ (٢) معارف القرآن ص٣٤٤ ج٢

ياد نہ هجن تہ اندازو لڳائي ۽ ان اندازي آهر قضا ڪري. انهيءَ نموني زڪواة، فطري، اضحیٰ وغيره جو حساب رکي ۽ جيڪڏهن ڪنهن ماڻهوءَ جو حساب يا حق ڪاڏو اٿس تہ اهو ان کي ادا ڪري ۽ انهن سڀني ڳالهين سان گڏ پڪو پهہ ڪري تہ اهي گناهہ وري ڪڏهن بہ نہ ڪندو. جيڪڏهن اڃان بہ انهن گناهن ڪرڻ جو ارادو رکي ٿو تہ پوءِ سندس توبه قبول ناهي. پر جيڪڏهن سندس توبه مٿين لکيلن شرطن جي موافق هوندي تہ اهو الله تعالیٰ جو محبوب ۽ پيارو ٻانهو ٿي ويندو. ها- جيڪڏهن بشريت جي تقاضا موجب ان کان وري بہ ڪو گناهہ ٿي پيو تہ هڪدم توبه ڪرڻ سان وري بہ رب العزة جل شانه وٽان مغفرت جي اميد رکي.

## فائدو

مٿئينءَ آيت جي لفظ "مِنۡ قَرِيۡبٍ" مان ثابت ٿيو تہ توبه جو وقت موت جي اچڻ کان اڳي آهي. ڪفر کان توبه ڪرڻ جو وقت موت جي آثارن ۽ ملائڪن جي ڏسڻ کان اول آهي ۽ گناهن کان توبه ڪرڻ جو وقت ساهہ نڪرڻ کان اول آهي. فرعون ٻڏڻ وقت پنهنجي موت جا آثار ڏسي چيو هو تہ "مون موسیٰ ۽ هارون جي رب تي ايمان آندو." پر اهي سندس الفاظ قبول نہ پيا، بلڪ حضرت جبريل عليہ السلام سمنڊ جي تري واري ڪاري گپ ڪٽي سندس وات ۾ وجهي سندس وات بند ڪري ڇڏيو هو. توبه ڪرڻ ۾ جيترو جلد ٿي سگهي جلدي ڪجي، ڇوتہ خبر ناهي تہ موت ڪڏهن اچي. متان ماڻهو توبه ڪرڻ کان سواءِ ئي مري وڃي. چڱي ڪم ۾ جلدي ڪرڻ ڀلي شيءِ آهي.

يَآاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا لَا يَحِلُّ لَكُمۡ اَنۡ تَرِثُوا النِّسَآءَ كَرۡهًا ؕ وَلَا

اي ايمان وارؤ! نہ ٿو حلال ٿئي اوهان جي لاءِ تہ وارث بڻجو عورتن جا زبردستيءَ سان ۽ نہ

تَعۡضُلُوۡهُنَّ لِتَذۡهَبُوۡا بِبَعۡضِ مَآ اٰتَيۡتُمُوۡهُنَّ اِلَّآ اَنۡ يَّاۡتِيۡنَ

روڪيو انهن کي تانتہ ڪٽي وڃو ڪجهہ ان مان جو ڏنو هيو انهن کي مگر هن ڳالهہ جي ڪري جو آڻين

بِفَاحِشَةٍ مُّبَيِّنَةٍ ۚ وَعَاشِرُوۡهُنَّ بِالۡمَعۡرُوۡفِ ۚ فَاِنۡ كَرِهۡتُمُوۡهُنَّ

برائي پڌري ۽ وقت گذاريو انهن سان چڱي نموني پوءِ جيڪڏهن نہ ٿا پسند ڪيو انهن کي

فَعَسٰۤى اَنْ تَكْرَهُوْا شَيْـًٔا وَّيَجْعَلَ اللّٰهُ فِيْهِ خَيْرًا كَثِيْرًا ﴿١٩﴾ وَاِنْ

تہ پوءِ ويجهي آهي هيءَ ڳالهہ جو نہ پسند ڪيو ڪا شيءِ ۽ ڪري الله ان ۾ ڀلائي گهڻي ۽ جيڪڏهن

اَرَدْتُّمُ اسْتِبْدَالَ زَوْجٍ مَّكَانَ زَوْجٍ ۙ وَّاٰتَيْتُمْ اِحْدٰىهُنَّ قِنْطَارًا

ارادو ٿا ڪيو مٽائڻ هڪ زال جي جو بجاءِ ٻيءَ زال جي ۽ ڏنو هڪڙيءَ کي انهن مان گهڻو مال

فَلَا تَاْخُذُوْا مِنْهُ شَيْـًٔا ۭ اَتَاْخُذُوْنَهٗ بُهْتَانًا وَّاِثْمًا مُّبِيْنًا ﴿٢٠﴾ وَكَيْفَ

پوءِ نہ وٺو ان مان ڪجهہ بہ ڇا وٺو ٿا اهو ناحق ۽ گناهہ چٽي سان ۽ ڪيئن ٿا

تَاْخُذُوْنَهٗ وَقَدْ اَفْضٰى بَعْضُكُمْ اِلٰى بَعْضٍ وَّاَخَذْنَ مِنْكُمْ

وٺو اهو ۽ تحقيق پهتو بعض اوهان مان بعض ڏانهن ۽ ورتائون اوهان کان

مِّيْثَاقًا غَلِيْظًا ﴿٢١﴾

وعدو پڪو

## تفسير

مٿين آيتن ۾ عورت کي ورثي طور سندن حقوق ادا ڪرڻ جي حڪم کان پوءِ وچ ۾ توبہ جو ذڪر آڻي وري انهن عورتن جي سرن تي ناجائز طريقي وارث ٿيڻ کان روڪيو ويو آهي. جاهليت جي دور ۾ جڏهن ڪو شخص مري زال ڇڏي ويندو هو تہ سندس وارثن مان ڪو وارث ان تي ڪپڙو وجهي ٻئي مال ملڪيت وانگر ان جي زال جو بہ وارث ٿي ويهندو هو ۽ جنهن سان بہ ان جي دل گهرندي هئي تہ ان عورت کي زوريءَ نڪاح ڪرائي ڇڏيندو هو ۽ ان کي جيڪو مهر ٻئي مڙس کان ملندو هو ان جو بہ اهو وارث مالڪ ٿي ويهندو هو يا ان کي پاڻهي بنائي پنهنجي گهر ۾ رکندو هو يا ان سان بنامهر جي پاڻ نڪاح ڪندو هو ۽ چوندو هو تہ مون واري مري ويل مائٽ جيڪو

اگ ۾ مهر ادا ڪيو هو اهوئي ڪافي آهي يا ان ڪي سختيون ۽ تڪليفون ڏئي ان وٽ موجود مهر جو مال وغيره ان ڪان واپس وٺندو هو. آيت جو پهريون حصو "كَرْهًا" تائين ان ظالمانہ طريقي ڪان روڪڻ لاءِ نازل ٿيو. (١) ابن المنذر حضرت عڪرمہ ڪان روايت آندي آهي تہ انصارن سڳورن مان هڪ عورت ڪبشه بنت معن بن عاصم حضرت ابوقيس جي نڪاح ۾ هئي جڏهن حضرت ابوقبس وفات ڪري ويو تہ سندس ہي زال مان پٽ حضرت بيبي ڪبشہ رضي الله عنها تي ڪپڙو وجهي ان ڪي پنهنجي ملڪيت بنائي مٿس سختي شروع ڪئي ۽ ان حضور عليہ الصلواة والسلام جن جي خدمت ۾ اچي عرض ڪيو تہ يارسول الله! (صلى الله عليک وسلم) مان بيوه تہ ٿي وئي آهيان پر هاڻي مون ڪي نہ مڙس جي ملڪيت مان ورثو ٿو ملي نہ ٻئي پاسي نڪاح ڪرڻ جي موڪل ٿي ملي. ٻڌايو تہ مان باقي رهيل حياتي ڪيئن گذاريان؟ تڏهن ان آيت جو اهو پهريون جملو نازل ٿيو. (٢) الله تعالىٰ فرمايو تہ اي ايمان وارؤ! اوهان جي لاءِ اهو حلال ناهي جو اوهان زوريءَ ۽ زبردستيءَ عورتن جي ملڪيت مهر وغيره جا وارث بنجو. اهو ظلم آهي جنهن جي اسلام سختيءَ سان منع ڪئي آهي.

"وَلَا تَعْضُلُوْهُنَّ لِتَذْهَبُوْا بِبَعْضِ مَآ اٰتَيْتُمُوْهُنَّ" امام زهريءَ فرمايو آهي تہ: بعضي مڙس جن ڪي سندن زالون پسند نہ هونديون هيون تہ انهن ڪي نہ سٺي نموني رکندا هئا ۽ نہ انهن ڪي طلاق ڏيندا هئا بلڪ انهن جي مرڻ جو انتظار ڪندا هئاتہ اهي سندن گهرن ۾ ئي مري وڃن جيئن سندن مال ملڪيت جا وارث پاڻ بنجن ۽ ڪٿي ڪٿي وري انهن ڪي طلاق تہ ڏيندا هئا پر جڏهن عدت جو وقت پورو ٿيڻ ڪي ويجهو ايندو هو تہ وري رجوع ڪري انهن ڪي تيستائين پاڻ سان رکندا هئا جيستائين مري وڃن. ان ظلم ڪان روڪڻ لاءِ الله تعالىٰ فرمايو تہ "وَلَاتَعْضُلُوْهُنَّ" الخ يعني انهن عورتن ڪي (جيڪي اوهان ڪي پسند ناهن، طلاق ڏئي ڇڏيو ۽) ٻئي پاسي نڪاح ڪرڻ ڪان ان لاءِ نہ روڪيو تہ انهن ڪان ڪين مهر ۾ ڏنل مال واپس وٺو يا اجان ڏنو نہ اٿو تہ مجبور ڪري معاف ڪرايو. اهي ٻئي طريقا ناجائز ۽ حرام آهن. ان ئي نموني سان جيڪو مال انهن ڪي هديہ يا تحفي طور ڏنو اٿو ۽ اهي ان جون مالڪياڻيون ٿي ويون آهن تہ اهوبہ انهن ڪان کسڻ ناجائز آهي. ها جيڪڏهن مڙس زال ڪي ڪو زيور وغيره ڏيندي چيو تہ هيءُ توکي اوڌاري طور صرف پائڻ لاءِ ٿو ڏيان تہ اهو واپس وٺي سگهي ٿو.

(١) تفسيرات احمديہ ص٢٥٦ (٢) تفسير نعيمي ص٦١٦ ج۴

(١) "اِلَّآ اَنۡ يَّاۡتِيۡنَ بِفَاحِشَةٍ مُّبَيِّنَةٍ" يعني جيڪڏهن عورتون ڪا ڪليل بيحيائي ڪن ٿيون تہ پوءِ سندن مڙس ڪين ڏنل مهر يا مال وغيره واپس وٺڻ لاءِ مجبور ڪري سگهن ٿا ڇوتہ ان ۾ قصور انهن عورتن جو آهي مڙسن جو ناهي.

## فائدو

حضرت ابن عباس، حضرت امان عائشہ رضي الله عنهما ۽ حضرت ضحاڪ وٽ هتي "فاحشه" مان مراد بي فرماني ۽ ڳالهائڻ ۾ بدزباني آهي ۽ ابوقلابه ۽ حضرت امام حسن بصريءَ عليہ الرحمه جو فرمان آهي تہ "فاحشه" مان مراد بيحيائي ۽ زنا آهي. المقصد تہ جيڪڏهن عورتون زناڪار آهن يا مڙس سان ڳالهائڻ ۾ بدزبان يا بيحياءِ آهن ۽ مڙس انهن کي طلاق ڏيڻ گهرن ٿا پر ڪين ڏنل مهر ۽ مال وغيره واپس ڪرڻ لاءِ انهن کي مجبور ڪن تہ اهو جائز آهي. (٢) "فاحشة" (برائي) ۾ "مبينة" (ڪليل) جو شرط ان جي ڪري هنيو ويو آهي تہ جيڪڏهن اها برائي ڪليل ۽ مڙس کي خوار ۽ رسوا ڪندڙ آهي تہ پوءِ سختي ڪري پر جيڪڏهن ٿوري گهٽي بدڪلامي ٿي وجي تہ مڙس ان کي برداشت ڪرڻ جي ڪوشش ڪري. "وَعَاشِرُوۡهُنَّ بِالۡمَعۡرُوۡفِ" "عاشروا" امر جو صيغو معاشرة کان ورتل آهي. يعني اوهان مرد تہ انهن سان سٺو ۽ نيڪ برتاءُ ڪيو پر اهي بہ ادب، احترام رکندي، خدمت ڪرڻ ۽ جيءُ ڇوڻ سان اوهان جي دلجوئي ڪن. "فَاِنۡ كَرِهۡتُمُوۡهُنَّ فَعَسٰۤى اَنۡ تَكۡرَهُوۡا شَيۡـًٔـا وَّيَجۡعَلَ اللّٰهُ فِيۡهِ خَيۡرًا كَثِيۡرًا" يعني جيڪڏهن انهن جي اخلاقي عيبن، حسن ۽ سونهن جي گهٽتائي يا مٿن واجب ٿيندڙ خدمت مثلاً گهر جي سنڀال وغيره ۾ ڪوتاهيءَ ڪرڻ جي ڪري انهن کي پسند نہ ٿا ڪيوتہ بہ ڪجهہ صبر ڪيو اهڙيون ڪوتاهيون گهرن ۾ ٿينديون رهنديون آهن. ٿي سگهي ٿو جو الله تعالىٰ ان ۾ اوهان جي لاءِ گهڻيون ڀلايون پيدا ڪري. گهڻو ڪري ڏٺو ويو آهي تہ ڪي ڪي مڙس پنهنجن زالن کان بيزار نظر ايندا آهن پر جڏهن ڪين انهن مان اولاد ٿيندو آهي تہ اهي انهن کان مطمئن ٿي ويندا آهن ۽ زال ۽ مڙس هڪ ٻئي جو احساس رکندا آهن ۽ ڪڏهن ڪڏهن اهي عورتون مڙسن جي صبر ۽ بردباريءَ کي ڏسي پاڻهي شرمسار ٿي ان بداخلاقيءَ کان باز اينديون آهن. "وَاِنۡ اَرَدْتُّمُ اسۡتِبۡدَالَ زَوۡجٍ مَّكَانَ زَوۡجٍ ۙ وَّاٰتَيۡتُمۡ اِحۡدٰٮهُنَّ قِنۡطَارًا فَلَا تَاۡخُذُوۡا مِنۡهُ شَيۡـًٔـا" يعني جيڪڏهن

(١) معارف القرآن ص٥١ ج٢
(٢) معارف القرآن ص٣٥١ جلد ٢ تفسير المراغي ص٢١٣ جلد ٢ جزءُ٤

اوهان هڪ زال کي جنهن کان ڪا ڪليل برائي به ظاهر نہ ٿي آهي . ان جي ناپسند هجڻ جي ڪري ڪيس رکڻ واريءَ تڪليف تي صبر نہ ٿا ڪري سگهو يا ان کي برداشت ڪرڻ اوهان جي طبيعت کان ڳرو آهي ۽ اوهان ان کي طلاق ڏئي ٻي شادي ڪرڻ گهرو ٿا تہ ان کان ڏنل مال پلي ڪيترو بہ گهڻو هجي واپس نہ وٺو. ڇوتہ ان ۾ هن جو قصور ناهي اوهان جي طبع جو معاملو آهي. "أَتَأْخُذُونَهُ بُهْتَانًا وَإِثْمًا مُّبِينًا" بعضي مڙس عورتن کان مال واپس وٺڻ لاءِ انهن تي بهتان هڻندا هئا. الله تعالىٰ فرمايو تہ "ڇا اوهان پنهنجي زال تي بهتان هڻي ۽ کليو گناهہ کٽي اهو مال واپس ٿا وٺو" ائين بالڪل نہ ڪيو. اهو سخت گناهہ آهي. "وَكَيْفَ تَأْخُذُونَهُ وَقَدْ أَفْضَىٰ بَعْضُكُمْ إِلَىٰ بَعْضٍ" يعني اهو مال ڪيئن ٿا واپس وٺو حالانڪ اوهان هڪ ٻئي سان گڏ ٿيا آهيو ۽ اهو ڏنل مال جيڪڏهن مهر جو آهي تہ اهو تہ ملڪيت ئي زال جي آهي ۽ جيڪڏهن هديو يا تحفو ڪري ڏنو اٿو تہ اهو بہ واپس ڪرڻ جائز ناهي ڇوتہ زال ۽ مڙس جيڪو ڪجهہ هڪ ٻئي کي هبي طور ڏين ٿا ان جي واپسي بہ شرعاً منع آهي. (١)

"وَأَخَذْنَ مِنكُم مِّيثَاقًا غَلِيظًا" يعني انهن عورتن اوهان کان نڪاح ڪرڻ وقت الله تعالىٰ جي نالي پڙهيل خطبي سان ماڻهن جي مجمع ۾ پڪو عهد ورتو آهي جنهن جي سهاري اهي والدين، ڀائرن، ڀينرن ۽ سڀي اهل کان جدا ٿي اوهان وٽ پهتيون آهن جيڪي ڏک ۾، سک ۾، سچائيءَ ۾، شاهوڪاريءَ ۾، مطلب تہ هر حال ۾ اوهان کي سنڀالٽيون آهن.

## فائدو

مٿي ذڪر ڪيل "قنطارا" جي لفظ جي معنيٰ آهي گهڻو مال- جنهن مان ثابت ٿيو تہ مڙس زال کي جيڪڏهن گهڻو مهر ڏي تہ بہ جائز آهي. ها- عورت يا عورت جا وارث گهٽي مهر جي گهر ڪرڻ کان پاسو ڪن. جيئن امام احمد، حاڪم ۽ بيهقيءَ حضرت ام المومنين عائشہ رضي الله عنها کان روايت آندي آهي تہ: "إِنَّ مِنْ يُمْنِ الْمَرْأَةِ تَيْسِيرَ خِطْبَتِهَا وَتَيْسِيرُ صُدَاقِهَا" (٢) يعني عورت جي برڪت مان هيءَ ڳالهہ بہ آهي تہ ان جي رشتي جي گهر ڪرڻ آسان هجي ۽ ان جو مهر بہ (مناسب هجي جيڪو ادا ڪرڻ) آسان هجي.

(١) معارف القرآن ص٣٥٢ جلد٢ (٢) تفسير المراغي ص٢١٧ جلد٢ جزءِ ۴

# افسوس هلندڙ دور جا ماڻهو

اسلامي شريعت ته مسلمانن لاءِ هر جاءِ تي آساني ڪئي آهي، پر هن هلندڙ وقت ۾ نياڻين سان جيڪو ظلم سندن ظالم مائٽ ڪري رهيا آهن اهو نهايت ئي افسوس ڪرڻ جهڙو آهي سندن گهڻي مهر گهرڻ جي ڪري ڪيتريون نياڻيون شاديءَ جهڙي نعمت کان محروم رهيون پيون آهن ۽ نتيجو اهو ٿو نڪري جو زنا ۽ فساد وڌيو وڃي بلڪ ڪٿي ڪٿي ته نوجوان نياڻيون مائٽن کان پڇيو وڃيو ٿيون مڙس ڪن.

نبي مڪرم، محبوب معظم صلى الله عليه وسلم جن جو فرمان آهي ته "إِذَا أَتَاكُمْ مَنْ تَرْضَوْنَ دِينَهُ وَخُلُقَهُ فَزَوِّجُوهُ إِلَّا تَفْعَلُوا تَكُنْ فِتْنَةٌ فِي الْأَرْضِ وَفَسَادٌ كَبِيرٌ" رواه الترمذي وقال حديث حسن غريب - يعني جڏهن اوهان وٽ اهو ماڻهو مڱڻي ڪرڻ لاءِ اچي جنهن کان اوهان دين ۽ اخلاق جي لحاظ سان راضي آهيو ته ان جي شادي ڪرايو. جيڪڏهن نه ڪندؤ ته زمين ۾ فتنو ۽ وڏو فساد ٿيندو. مسلم، ابوداؤد ۽ نسائي ابوسلمه بن عبدالرحمن کان روايت آندي آهي ان چيو ته مون سيده عائشه رضي الله عنها کان پڇيو ته: رسول الله صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن جي گهروارين جو مهر ڪيترو هوندو هو؟ سائڻ فرمايو ته ساڍيون ٻارهن اوقيون- (هڪ اوقيه تقريباً پوڻا چار تولا چانديءَ جي هوندي آهي) ۽ اهي پنج سئو درهم يعني سوا سؤ روپيه ٿين ٿا. بخاريءَ ۽ مسلم حضرت سهل بن سعد انصاريءَ رضي الله عنه کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن هڪ مسڪين شخص جي هڪ عورت سان شادي ڪرائي. ان مرد وٽ ٻي ڪابه شيءِ نه هئي صرف قرآن پاڪ ياد هوس. (١) ان جي صدقي اها شادي ٿي هيس ڪمال ته ان عورت جو آهي جنهن دنيا جي ٻي ڪابه شيءِ نه گهري. موجوده دور جي شادين جون تقريبون ته نهايت اسراف ۽ غلط خرچن تي مشتمل آهن. حالانڪ قرآن پاڪ ۾ الله تعاليٰ فرمايو آهي ته "وَلَا تُبَذِّرْ تَبْذِيرًا إِنَّ الْمُبَذِّرِينَ كَانُوا إِخْوَانَ الشَّيَاطِينِ وَكَانَ الشَّيْطَانُ لِرَبِّهِ كَفُورًا" (٢) يعني اصل اجايو خرچ نه ڪر. بلاشڪ اجايو خرچ ڪندڙ شيطانن جا ڀائر آهن ۽ شيطان پنهنجي رب جو بي فرمان (بي شڪر) آهي.

(١) التحذير من المغالات في المهور ص٦-٧
(٢) سورة الاسراء آيت ٢٦- ٢٧

وَلَا تَنْكِحُوْا مَا نَكَحَ اٰبَآؤُكُمْ مِّنَ النِّسَآءِ اِلَّا مَا قَدْ سَلَفَ ؕ اِنَّهٗ

۽ نہ نڪاح ڪيو انهن سان جو نڪاح ڪيو (انهن سان) پيئرن اوهان جي عورتن مان مگر جيڪو اڳ ۾ ٿي چڪو بيشڪ اهو

كَانَ فَاحِشَةً وَّمَقْتًا ؕ وَسَآءَ سَبِيْلًا ﴿۲۲﴾ حُرِّمَتْ عَلَيْكُمْ اُمَّهٰتُكُمْ

آهي بحيائي ڪم ۽ (الله جي) ڪاوڙ (جو سبب) ۽ بري واٽ آهي حرام ڪيون ويون اوهان تي مائرون اوهان جون

وَبَنٰتُكُمْ وَاَخَوٰتُكُمْ وَعَمّٰتُكُمْ وَخٰلٰتُكُمْ وَبَنٰتُ الْاَخِ

۽ ڌيئرون اوهان جون ۽ ڀينرون اوهان جون ۽ ڦڦيون اوهان جون ۽ ماسيون اوهان جون ۽ ڀائٽيون

وَبَنٰتُ الْاُخْتِ وَاُمَّهٰتُكُمُ الّٰتِيْٓ اَرْضَعْنَكُمْ وَاَخَوٰتُكُمْ مِّنَ

۽ ڀاڻيجيون ۽ مائرون اوهان جون جن کير پياريو اوهان کي ۽ ڀينرون اوهان جون

الرَّضَاعَةِ وَاُمَّهٰتُ نِسَآئِكُمْ وَرَبَآئِبُكُمُ الّٰتِيْ فِيْ حُجُوْرِكُمْ

کير جي ڪري ۽ مائرون زالن اوهان جن جون ۽ پاليل ڇوڪريون اوهان جون جيڪي اوهان جي هنجن ۾ آهن،

مِّنْ نِّسَآئِكُمُ الّٰتِيْ دَخَلْتُمْ بِهِنَّ ؗ فَاِنْ لَّمْ تَكُوْنُوْا دَخَلْتُمْ بِهِنَّ

اوهان جي زالن مان جن سان جماع ڪيو اٿو انهن مان پوءِ جيڪڏهن نہ جماع ڪيو هوندو انهن سان

فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ ؗ وَحَلَآئِلُ اَبْنَآئِكُمُ الَّذِيْنَ مِنْ اَصْلَابِكُمْ ۙ وَاَنْ

تہ پوءِ ناهي ڪو گناهہ اوهان تي ۽ زالون پٽن اوهان جن جون جيڪي (پٽ) اوهان جي پٺين مان آهن ۽ هيءَ

تَجْمَعُوْا بَيْنَ الْاُخْتَيْنِ اِلَّا مَا قَدْ سَلَفَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ﴿۲۳﴾ۙ

(بہ حرام آهي) جو گڏيو بہ ڀينرون (نڪاح ۾) مگر جيڪي اڳ ۾ گذري چڪو بيشڪ الله آهي بخشيندڙ مهربان

# تفسير

هن کان اڳ ۾ مري ويلن مٿن مائٽن جي زالن جي زوريءَ وارث ٿيڻ کان روڪيو ويو هو جيئن اڳئين تفسير ۾ بيان ٿي آيو ۽ هتي پڌايو ٿو وڃي تہ جن عورتن سان اوهان جي پيئرن، ڏاڏن، نانن نڪاح ڪيو آهي اهي اوهان جون نڳيون مائرون، ڏاڏيون ۽ نانيون ٿين. اهي ڀلي خوش هجن تہ بہ انهن سان اوهان نڪاح نہ ڪيو. "اِلَّا مَا قَدْ سَلَفَ" يعني باقي جيڪي اوهان جاهليت جي دور ۾ يا هن حڪم جي نازل ٿيڻ کان اڳي ڪري چڪا آهيو ۽ اهي عورتون مري ويون آهن تہ هاڻي اوهان تي انهن جو ڪو ڏوهہ ناهي. ڇوتہ قانون نهڻ کان اڳ ۾ ڪيل عمل تي سزا نہ ملندي آهي. "اِنَّهٗ كَانَ فَاحِشَةً وَّمَقْتًا وَّسَآءَ سَبِيْلًا" يعني پيءُ، ڏاڏي، ناني جي زال سان نڪاح ڪرڻ نهايت بي حيائي ۽ الله تعالىٰ جي ڪاوڙ جو سبب ۽ بري واٽ آهي، ڇوتہ پيءُ جي زال ماءُ سان مشابهہ آهي جنهن ڪي پنهنجي استعمال ۾ رکڻ نهايت برو آهي. ڏاڏي ۽ ناني جي زالن ڪي بہ ائين سمجهڻ گهرجي. علامہ رازيءَ لکيو آهي تہ ڪنهن بہ شيءِ جي خراب ۽ قبيح هجڻ جا ٽي (٣) قسم آهن. ١- هڪ عقلي، جنهن ڏانهن "اِنَّهٗ كَانَ فَاحِشَةً" سان اشارو ڪيل آهي. ٢- ٻيو شرعي، جنهن ڏانهن "ومقتا" سان اشارو ڪيل آهي. ٣- ٽيون عادي ۽ عرفي، جنهن ڏانهن "وَّسَآءَ سَبِيْلًا" سان اشارو ڪيل آهي. (١)

## مسئلو

آيت سڳوريءَ ۾ پيءُ جي نڪاح ڪيل سان نڪاح ڪرڻ حرام ڪيو ويو آهي ان جي ڪري پيءُ جي نڪاح ٿيڻ شرط اها عورت ان جي پٽن، پوٽن تي حرام ٿي وئي. ڀلي پيءُ ان سان جماع نہ بہ ڪيو هجي، ان ئي نموني پٽ جي نڪاح ڪيل سان بہ پيءُ ڪي نڪاح ڪرڻ حرام آهي ڀلي پٽ ان سان جماع نہ ڪيو هجي.

## مسئلو

جيڪڏهن پيءُ ڪنهن عورت سان زنا ڪئي آهي تہ اها بہ پٽ جي لاءِ حرام آهي. (٢) پٽ ان سان نڪاح نہ ڪري.

(١) التفسير الڪبير ص٢۴ جزءُ ١٠ تفسير حسيني فارسي ص١٣٢
(٢) تفسير احمدي ص٢٥٩ تفسير مدارڪ ص٢١٧ ج١

"حُرِّمَتْ عَلَيْكُمْ اُمَّهَاتُكُمْ" اوهان تي اوهان جون مائرون حرام ڪيون ويون آهن، جن اوهان کي ڄڻيو آهي. "اُمَّهَاتُكُمْ" ۾ ڏاڏيون، نانيون بہ داخل آهن. "وَبَنَاتُكُمْ" ۽ اوهان جون ڌيئرون انهن سان بہ نڪاح ڪرڻ حرام آهي. پٽن ۽ ڌيئرن جي ڌيرن سان بہ نڪاح ڪرڻ حرام آهي. اهڙيءَ طرح جيڪڏهن ڪنهن شخص ڪنهن عورت سان زنا ڪئي ۽ ان مان ڇوڪري ڄائي تہ ان سان بہ ان جو نڪاح ڪرڻ حرام آهي. "وَاَخَوَاتُكُمْ" ۽ اوهان جون ڀينرون سڳيون هجن يا پيئيتيون يا مائيتيون، سيني سان نڪاح ڪرڻ حرام آهي. "وَعَمّٰتُكُمْ" ۽ اوهان جون ڦڦيون. سڳيون هجن يا اوهان جي پيئرن جون پيئيتيون ڀينرون يا مائيتيون ڀينرون هجن، سيني سان نڪاح ڪرڻ حرام آهي. "وَخٰلٰتُكُمْ" ۽ اوهان جون ماسيون پوءِ اهي اوهان جي مائرن جون سڳيون ڀينرون هجن يا پيئيتيون يا مائيتيون. انهن سان بہ اوهان جو نڪاح ڪرڻ حرام آهي. "وَبَنٰتُ الْاَخِ" ۽ ڀائٽيون پوءِ اوهان جي سڳن ڀائرن جون ڌيئرون هجن يا پيئيتن جون يا مائيتن جون "وَبَنٰتُ الْاُخْتِ" ۽ اوهان جون ڀاڻيجيون پوءِ اهي اوهان جي سڳين ڀينرن جون ڌيئرون هجن يا پيئيتن جون يا مائيتن جون انهن سان اوهان جو نڪاح شرعاً حلال ناهي "وَاُمَّهٰتُكُمُ الّٰتِيْٓ اَرْضَعْنَكُمْ" ۽ اوهان جون اهي مائرون جن اوهان کي کير پياريو آهي، انهن سان نڪاح ڪرڻ بہ اوهان لاءِ ناجائز آهي. ٿورو کير پيتو اٿو يا گهڻو، هڪ ڀيرو يا بہ ٽي ڀيرا، هر صورت ۾ اهو حڪم آهي.

مسلم شريف ۾ حضرت علي رضي الله تعالىٰ عنہ کان روايت آهي ان حضور صلى الله عليہ وسلم جن جي خدمت ۾ عرض ڪيو تہ يارسول الله (صلى الله عليک وسلم) اوهان پنهنجي چاچي حضرت حمزه (رضي الله عنہ) جي نياڻيءَ سان شادي ڪندؤ؟ جيڪا قريشي نوجوان عورتن ۾ وڏي حسن واري آهي. پاڻ ڪيس فرمايائون تہ: توکي خبر ناهي تہ حمزه منهنجو کير جو ڀاءُ آهي ۽ الله تعالىٰ جيڪي عورتون نسب جي ڪري حرام ڪيون آهن، اهي کير جي ڪري بہ حرام آهن. (١)

## مسئلو

اهو کير جي ڪري حرام ٿيڻ جو حڪم تڏهن آهي جڏهن کير پيئڻ جي مدت ۾ کير پيتو وڃي جيئن ابوداؤد حضرت ابن مسعود رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسوم جن فرمايو "لَا يُحَرِّمُ مِنَ الرَّضَاعِ اِلَّا مَا

(١) مظهري ص٢٥٥ ج٢

اَنۡبَتَ اللَّحۡمَ وَاَنۡشَرَ الۡعَظۡمَ " يعني کير اهو حرام بنائيندو جيکو گوشت پيدا ڪري ۽ هڏا وڌائي. ان ئي مقصد واري هڪ روايت ترمذيءِ سيده ام سلمہ رضي الله عنها کان آندي آهي. (١)

## ٿير پيئڻ جي مدت ڪيتري آهي؟

حضرت امام ابوحنيفہ عليہ الرحمه وٽ ٻار جي ڄمڻ کان وٺي اڍائي سال کير پيارڻ جي مدت آهي ۽ ٻين فقيهن وٽ ٻہ سال. جيڪڏهن ڪنهن ڇوڪري يا ڇوڪريءَ ان مدت کان پوءِ ڪنهن عورت جو کير پيتو تہ پوءِ کير جي حرام ٿيڻ وارو حڪم نہ رهندو. (٢) "وَاَخَوٰتُكُمۡ مِّنَ الرَّضَاعَةِ" ۽ کير جي ڪري جيڪي اوهان جون ڀينرون آهن، انهن سان بہ نڪاح ڪرڻ حرام آهي ان جو تفصيل هن ريت آهي تہ جڏهن ڪنهن ٻار ڪنهن عورت جو کير ان مدت ۾ پيتو تہ اها عورت ان جي کير جي ماءُ ۽ ان جو مڙس ان ٻار جو کير جو پيءُ ۽ ان عورت جو نسبي اولاد ان ٻار جا ڀائر ۽ ڀينرون ۽ ان عورت جون ڀينرون ان ٻار جون ماسيون ۽ ان عورت جي مڙس جون ڀينرون ان ٻار جون ڦڦيون ٿيون ۽ جن عورتن سان نسب جي ڪري نڪاح حرام آهي انهن سان کير جي ڪري بہ نڪاح ناجائز آهي جيئن بخاري شريف حضرت عائشہ رضي الله عنها کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "يَحۡرُمُ مِنَ الرَّضَاعَةِ مَا يَحۡرُمُ مِنَ الۡوِلَادَةِ" (٣) يعني جيڪا (عورت) نسب جي ڪري حرام آهي اها کير جي ڪري بہ حرام آهي.

## مسئلو

کير پيارڻ جي مدت ۾ جيڪڏهن ڪنهن ٻئي رستي سان يا انجيڪشن سان کير ڏنو ويو تہ حرام ٿيڻ وارو حڪم نہ لڳندو.

## مسئلو

جيڪڏهن دوا ۾ يا ٻئي جانور جي کير ۾ ڪنهن عورت جو کير ملائي ٻار کي پياريو ويو تہ ڏسبو جيڪڏهن عورت جو کير ان دوا يا جانور جي کير سان برابر يا ان کان گهڻو آهي تہ حرام هجڻ ثابت ٿيندو جيڪڏهن گهٽ آهي تہ ثابت نہ ٿيندو.

(١) مظهري ص٢٥٥ ج٢ (٢) معارف القرآن ص٣٥٨ جلد٢
(٣) مشڪواة شريف ص٢٧٣

## مسئلو

جيڪڏهن مرد جي سيني وارن ٻبن مان کير نڪري آيو ۽ ڪنهن ٻار پيتو ته حرام هجڻ جو حڪم نه لڳندو.

## مسئلو

جيڪڏهن کير پيئڻ ۾ شڪ آهي پڪ ناهي ته حرام ٿيڻ جو حڪم نه لڳندو.

## مسئلو

جيڪڏهن ڪنهن شخص ڪنهن عورت سان نڪاح ڪيو ۽ ٻيءَ عورت اچي چيو ته مون اوهان ٻنهي کي کير پياريو هو هاڻي جيڪڏهن هي ٻئي نڪاح ڪرڻ وارا مڙس ۽ زال ان کي سچو چون ته نڪاح جي ڀڃڻ جو فيصلو ڪيو ويندو ۽ جيڪڏهن ٻئي ان کي سچو نه ٿا چون پر کير پيارڻ جي دعوىٰ ڪندڙ عورت ديندار آهي ته ڀلو آهي ته مڙس طلاق ڏئي جدا ٿي وڃي.

## مسئلو

کير جي حرمت ثابت ڪرڻ جي لاءِ ٻن مردن جي شاهدي ضروري آهي. هڪ مرد يا هڪ عورت جي شاهديءَ سان حرمت ثابت نه ٿيندي پر جڏهن ته حرام ۽ حلال جو معاملو آهي ان جي ڪري هن ۾ احتياط ڪرڻ ڀلو آهي ان ئي مدار تي بعضي فقيهن لکيو آهي ته جيڪڏهن ڪو ماڻهو ڪنهن عورت سان نڪاح جو ارادو ڪري ۽ هڪ ديندار مرد چوي ته هي ٻئي کير جا ڀاءُ ۽ ڀيڻ آهن ته اهو نڪاح جائز ناهي ۽ جيڪڏهن نڪاح ڪان پوءِ ائين چوي ته احتياط جدا ٿيڻ ۾ آهي بلڪ هڪ ديندار عورت به جيڪڏهن چوي ته احتياطاً جدا ٿي ڪرڻ گهرجي. (١)

## مسئلو

جيئن ٻن دیندارن مردن جي شاهديءَ سان کير جي حرمت ثابت ٿئي ٿي ٿيئن هڪ ديندار مرد ۽ ٻن ديندار عورتن جي شاهديءَ سان به اها حرمت ثابت ٿيندي. هر صورت ۾ احتياط کي نظر ۾ رکڻ گهرجي. (٢)

---

(١) معارف القرآن ص٣٥٩ ج٢ (٢) ساڳيو حوالو

"وَأُمَّهَاتُ نِسَآئِكُمْ" ۾ اوهان جي زالن جون مائرون بہ اوهان تي حرام آهن. ان ۾ زالن جون نانيون، ڏاڏيون، پوءِ اهي نسبي هجن يا کير جون هجن سڀ داخل آهن.

## هڪ اهم مسئلو

جيئن نڪاح واريءَ زال جي ماءُ حرام آهي، تيئن ان عورت جي ماءُ بہ حرام آهي، جنهن سان شبهہ ۾ شڪ ۾ (زال سمجهي) همبستري ٿيو آهي يا جنهن سان زنا ڪئي اٿس يا جنهن کي شهوت سان هٿ لاتو اٿس.

## مسئلو

ڪنهن عورت سان صرف نڪاح ڪرڻ شرط ٿي ان جي ماءُ مڙس تي حرام ٿي وئي. زال سان جماع ڪيو هجيس يا نہ ڪيو هجيس. (۱)

"وَرَبَآئِبُكُمُ الّٰتِيْ فِيْ حُجُوْرِكُمْ مِّنْ نِّسَآئِكُمُ الّٰتِيْ دَخَلْتُمْ بِهِنَّ" يعني اوهان جون اڳ ڄايون بہ اوهان تي حرام آهن جيڪي اوهان جي سنڀال ۾ اوهان جي انهن زالن مان آهن جن سان اوهان جماع ڪيو آهي. اوهان جي انهن زالن جون ڏوهٽيون ۽ پوٽيون بہ اوهان تي حرام آهن پر جيڪڏهن اوهان انهن زالن سان جماع نہ ڪيو آهي تہ پوءِ اوهان تي ڪو گناهہ نہ آهي ۽ انهن جون ڌيئرون، ڏوهٽيون، پوٽيون وغيرهن اوهان تي حرام ناهن، پلا جيڪڏهن نڪاح ڪان پوءِ اوهان انهن سان جماع نہ ڪيو آهي پر ڪين شهوت سان هٿ لڳايو آهي يا شهوت سان سندن اندرئين عضوي ڏي نهاريو آهي تہ اهو بہ جماع جي حڪم ۾ آهي ان سان بہ انهن عورتن جون ڌيئرون، ڏوهٽيون، پوٽيون وغيرهن اوهان تي حرام ٿي وينديون.

"وَحَلَآئِلُ اَبْنَآئِكُمُ الَّذِيْنَ مِنْ اَصْلَابِكُمْ" يعني اوهان جي پٽين مان پيدا ٿيل پٽن جون زالون بہ اوهان تي حرام آهن ۽ پٽن وانگر پوٽن ۽ ڏوهٽن جون زالون بہ اوهان تي حرام آهن. هتي "مِنْ اَصْلَابِكُمْ" (اوهان جي پٺين مان) جي قيد سان نام نهاد، پاليل پٽن جون زالون ان حڪم مان نڪري ويون. انهن جي زالن سان نڪاح حلال آهي باقي کير وارن پٽن جي زالن جو حڪم نسبي پٽن جي زالن وارو آهي.

(۱) معارف القرآن ص۳۵۹ ج۲

"وَاَنْ تَجْمَعُوْا بَيْنَ الْاُخْتَيْنِ" يعني ٻہ ڀينرون نڪاح ۾ گڏي رکو. اهو ٻہ حرام آهي. ڀوءِ سڳيون هجن يا پئيتيون يا مائيتيون هجن، انهن سڀني قسمن جي ڀينرن کي هڪ مڙس جي نڪاح ۾ گڏ رهڻ حرام آهي. جيڪڏهن هڪ ڀيڻ کي طلاق ڏئي ڇڏي اها عدت گذاري پوءِ ٻيءَ ڀيڻ سان شادي ڪري تہ جائز آهي هڪڙي ڀيڻ جي عدت جي اندر بہ ٻئي سان نڪاح ڪرڻ ناجائز آهي.

## مسئلو

جيئن ٻن ڀينرن جو هڪ مڙس جي نڪاح ۾ رکڻ ناجائز آهي تيئن ڀقيءَ ۽ ڀائٽيءَ، ماسيءَ ۽ ڀاڻيجيءَ جو گڏي هڪ نڪاح ۾ رکڻ بہ ناجائز آهي. بخاريءَ ۽ مسلم حضرت ابوهريره رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "لَا يُجْمَعُ بَيْنَ الْمَرْاَةِ وَعَمَّتِهَا وَلَا بَيْنَ الْمَرْاَةِ وَخَالَتِهَا" (١) يعني ڀائٽي ۽ ڀقي ۽ ڀاڻيجي ۽ ماسي (هڪ نڪاح ۾) گڏ نہ رکيون وينديون. ان ئي مدار تي فقيهن هڪ ڪليو قانون ناهيو آهي تہ لا يجمع بين امراتين لو كانت احداهما رجلالم يجز لہ ان يتزوج بالاخرىٰ (٢) يعني اهڙيون ٻہ عورتون هڪ نڪاح ۾ گڏ رکڻ جائز ناهن جو انهن ٻنهي مان جيڪڏهن هڪ مرد هجي تہ ٻيءَ سان نڪاح ڪري نہ سگهي.

"اِلَّا مَا قَدْ سَلَفَ" يعني جيڪو اسلام کان اڳ ۾ ٿي چڪو آهي ٻن ڀينرن کي هڪ مرد جي نڪاح ۾ رکڻ وغيره اهو معاف آهي ان کي ڇڏيو. اسلام کان پوءِ اهڙو ڪوبہ ڪم ڪرڻ حرام آهي ۽ جيڪڏهن ڪنهن ماڻهوءَ اسلام کان پوءِ اهڙو ڪم ڪيو تہ اهو نڪاح ناهي سڌي سنئين زنا آهي ان کي نڪاح ڇوڻ بہ صحيح ناهي ان کان زوريءَ زبردستي اهو ڪم ڇڏايو ويندو. ترمذيءَ ۽ ابودا ؤد حضرت براءِ بن عازب رضي الله تعالىٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن اُبوبرده بن نيار رضي الله عنہ کي ان ماڻهوءَ جي قتل ڪرڻ سندس سر ڪٽي اچڻ لاءِ موڪليو هو جيڪو پنهنجي پيءُ جي زال سان پرڻيو هو. (٣)

(١) تفسير مظهري ص٦٠ ٢ ج٢ (٢) الهدايه ص٢٨٩ ج٢ ڪتاب النڪاح
(٣) مشڪواة ص٣٧۴

## مسئلو

جيڪڏهن ڪافر ڪفر جي وقت پيءُ جي زال سان نڪاح ڪيو يا ٻه ڀينرون هڪ وقت نڪاح ۾ رکيون پوءِ مسلمان ٿيو ته پيءُ جي زال مان ته هڪدم هٿ ڪڍندو ۽ ٻن ڀينرن مان هڪ رکندو ٻي ڇڏيندو. "اِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا" يعني يقيناً الله بخشيندڙ، مهربان آهي، جو اسلام کان اڳ ۾ جيڪي ٻانهن غلط نڪاح ڪيا، اهي ڪين بخش ڪري مٿن مهرباني ڪندو. اسلام کان پوءِ ڪوبه اهڙو غلط ڪم ڪرڻ سزا جو حقدار بنائيندو.

## وارثن جا قسم ۽ انهن جو بيان

ڄاڻڻ گهرجي ته ميت جي ملڪيت جا وارث ٽي (٣) قسم آهن. ١- هڪڙا اهي جن جا حصا قرآن ڪريم بيان فرمايا آهن انهن کي ذووالفروض سڏيو ويو آهي. ٢- ٻيا اهي جن جي لاءِ قرآن ڪريم اڌ يا ٽيون حصو مقرر نه ڪيو آهي پر مٿي ذڪر ڪيل ذووالفروض جي حصن ڏيڻ کان پوءِ جيڪو بچندو سو سڀ انهن جي حوالي ڪيو ويندو انهن کي عصبو سڏيو ويو آهي. جيڪڏهن ڪنهن جا وارث ذووالفروض ناهن ته سڀ ملڪيت عصبا کڻندا ۽ جيڪڏهن ڪنهن جي ملڪيت ذووالفروض ۾ ئي ورهائجي وئي ته عصبن کي ڪجهه به نه ملندو اصل ۾ عصبو مرد آهي. عورت نه پاڻ عصبو ٿيندي ۽ نه اهو مرد عصبو ٿيندو جيڪو عورت جي واسطي سان وارث بڻجي رهيو آهي. عصبن جا چار درجا آهن. پهرئين درجي ۾ پٽ ۽ پوٽا، ٻئي درجي ۾ پيءُ ۽ ڏاڏو، ٽئين درجي ۾ ڀائر ۽ ڀائٽيا، چوٿين درجي ۾ چاچا ۽ سوٽ يا سوٽن جا پٽ - جيڪڏهن عصبا گهڻا آهن ته جيڪو ميت کي وڌيڪ ويجهو هوندو اهو ورثي ونڊ ۾ اڳ ۾ هوندو جيئن پوٽي کان وڌيڪ پٽ آهي ۽ ڀائٽي کان وڌيڪ ڀاءُ آهي ۽ پئيتي ڀاءُ کان وڌيڪ سڳو ڀاءُ آهي. ترمذيءَ، حاڪم ۽ ابن ماجه حضرت علي رضي الله عنه کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلی الله عليه وسلم جن فرمايو "اَعْيَانُ بَنِي الْاَبِ وَالْاُمِّ يَتَوَارَثُوْنَ دُوْنَ بَنِي الْعَلَاتِ يَرِثُ الرَّجُلُ اَخُوْهُ لِاَبِيْهِ وَاُمِّهٖ دُوْنَ اَخِيْهِ لِاَبِيْهِ (١) يعني سڳا ڀائر پئيتن ڀائرن کان سواءِ وارث ٿيندا. مري وڃڻ واري جو وارث ان جو سڳو ڀاءُ آهي پئيتو ڀاءُ ناهي- جيڪا عورت ذووالفروض مان آهي ۽ ان کي اڌ يا ٻه ٽهايون ورثي ۾ ملن ٿيون اها پنهنجي ڀاءُ سان گڏجي عصبو ٿي سگهي ٿي ۽ جيڪا عورت ذووالفروض ۾ ئي ناهي ته اها پنهنجي ڀاءُ سان گڏجي به عصبو نه ٿي سگهندي جيئن پڦي ۽ ڀائٽي- اهو مسئلو اجماع سان ثابت آهي. (٢)

(١) تفسير مظهري ص٢٣٧ (٢) ساڳيو حوالو

ٽئين قسم جا وارث ذووالارحام آهن يعني اهڙا وارث جو انهن ۾ ميت جي وچ ۾ واسطو، عورت آهي جيئن ماما، ياڻيجا، ڏوهٽا، ماسيون، پڦيون ۽ انهن جو اولاد ۽ اهي تڏهن وارث ٿيندا جڏهن ڪنهن ميت جا وارث ذو الفروض ۽ عصبا نه هوندا.

## مسئلو

امت محمديہ علیٰ نبيها الصلواة والسلام جي اجماع سان هي مسئلو ثابت آهي تہ قاتل پنهنجي مقتول ميت جو ڪيڏو بہ ويجهو مٽ ڇونہ هجي وارث نہ ٿيندو ۽ ان ئي نموني سان مسلمان ڪافر جو ۽ ڪافر مسلمان جو وارث نہ ٿيندو. البت نصاريٰ يهودين جا ۽ يهودي نصارن جا وارث ٿي سگهن ٿا ڇوتہ الكفر ملةٌ واحدةٌ- ڪفر هڪ مذهب آهي. (١)

## مسئلو

جيڪڏهن ڪو ماڻهو اصل ڪان ڪافر آهي تہ نہ اهو مسلمان جو وارث ٿيندو ۽ نہ مسلمان ان جو وارث ٿيندو. پر جيڪڏهن ڪو پهريان مسلمان هو ۽ پوءِ (مرتد) ڪافر ٿيو آهي تہ ان جو جيڪو مال اسلام جي وقت ۾ ڪمايل هوندو اهو ان جي مسلمان وارثن کي ملندو ۽ جيڪو مرتد ٿيڻ ڪان پوءِ ڪمايو هوندائين اهو بيت المال ۾ جمع ڪيو ويندو پر جيڪڏهن ڪا مسلمان عورت ڪافرياڻي (مرتده) ٿي آهي تہ ان جو سڀ مال اسلام جي وقت ۾ ڪمايل هجي يا ڪفر جي وقت ۾، اهو سندس مسلمانن وارثن کي ڏنو ويندو ۽ ان ڪافر مرتد ٿيڻ واري کي مرد هجي يا عورت، نہ ڪنهن مسلمان جي مال مان حصو ملندو نہ ڪنهن ڪافر مرتد جي مال مان. (٢)

## پيٽ واري ٻار جي ورثي جو مسئلو

جيڪڏهن ڪنهن ماڻهوءَ ڪجهہ اولاد ۽ زال ڇڏي آهي جنهن جي پيٽ ۾ ٻار آهي پر خبر ناهي تہ پٽ آهي يا ڌيءُ هڪ ٻار آهي يا بہ يا ٽي تہ مناسب ائين آهي تہ انهيءَ ٻار جي جمڻ تائين ورثو نہ ورهائجي. پلا جيڪڏهن ورهائڻ ضروري ٿي پيو آهي تہ پٽ ۽ ڌيءُ ٻنهي جو حصو ناهي ڏسجي تہ ٻين وارثن کي گهٽ حصو ڪهڙيءَ صورت ۾ ٿو اچي پٽ جي صورت ۾ يا ڌيءُ جي صورت ۾، جنهن ۾ بہ گهٽ اچي اها صورت رکي باقي ورثو ٻين وارثن ۾ ورهائي ڇڏجي.

(١) مظهري ص٢۴٢ ج٢ (٢) معارف القرآن ص٣٣١ ج٢

## عدت ۾ ويٺل عورت جي ورثي جو مسئلو

جيڪڏهن ڪنهن مڙس پنهنجيءَ زال کي رجعي طلاق (جنهن ۾ مڙس زال کي وري پاڻ وٽ نڪاح ورائي ڪرڻ کان سواءِ ئي رکي سگهي ٿو) ڏني ۽ رجوع ڪرڻ ۽ عدت ختم ٿيڻ کان اڳ ۾ ئي وفات ڪري ويو تہ اها عورت ورثي مان حصو وٺي سگهندي ڇوتہ ان جو نڪاح اڃان قائم آهي ۽ جيڪڏهن ڪنهن شخص ان مرض ۾ زال کي طلاق ڏني جنهن ۾ وفات ڪري ويو پوءِ اها طلاق بائن هجي يا مغلظہ تہ بہ زال پنهنجي ان مڙس جي ملڪيت مان حصو وٺندي. پر جيڪڏهن ڪنهن شخص صحت ۽ چڱڀلائيءَ جي حالت ۾ زال کي بائن يا مغلظہ ڏني ان کان پوءِ اڃان زال جي عدت پوري نہ ٿي هئي تہ اهو مڙس وفات ڪري ويو تہ زال ان جي ملڪيت مان ڪوبہ حصو وٺي نہ سگهندي. پر جيڪڏهن ڪنهن زال پنهنجي مڙس کان ان جي بيماريءَ جي حالت ۾ پئسا ڏئي خلع (طلاق جو هڪ قسم) ڪرايو آهي ۽ اهو مڙس ان ئي بيماريءَ ۾ وفات ڪري ويو تہ اها زال مڙس جي ملڪيت مان حصو نہ وٺندي. (١)

## نبين عليهم الصلواة والسلام جو ورثو نہ ورهايو ويندو

اصحابن سڀني رضي الله عنهم ۽ (شيعن کان سواءِ) ساري امت جو اجماع آهي تہ انبيائن سڀني عليهم الصلواة والسلام جو ورثو نہ ورهايو ويندو آهي رسول الله صلی الله تعالیٰ عليہ وسلم جن جو فرمان آهي تہ "نَحْنُ مَعَاشِرُ الْاَنْبِيَاءِ لَا نُوْرِثُ مَا تَرَكْنَاهُ صَدَقَةٌ" (٢) اسان نبين (عليهم الصلواة والسلام) جي جماعت وارث نہ بڻائيندا آهيون اسان جيڪو ڪجهہ ڇڏيو اهو صدقو آهي.

## شيعن جي طرفان سوال

قرآن ڪريم جي آيت "يُوْصِيْكُمُ اللّٰهُ فِيْٓ اَوْلَادِكُمْ لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ" مان ثابت آهي تہ اولاد والدين جي ملڪيت جو وارث آهي. ٻي آيت "وَوَرِثَ سُلَيْمٰنُ دَاوٗدَ" (٣) ۽ (حضرت) سليمان (حضرت) داؤد (عليهم السلام) جو وارث ٿيو. ٽين آيت "هَبْ لِيْ مِنْ لَّدُنْكَ وَلِيًّا يَّرِثُنِيْ وَيَرِثُ مِنْ اٰلِ يَعْقُوْبَ" (۴) (اي مولا!) (مون

(١) معارف القرآن ص٣٣٢ ج٢ (٢) مظهري ص٢۴٢ ج٢
(٣) سورة النمل آيت ١٦ (۴) سورة مريم آيت ٦

کي پاڻ وٽان اهڙو وارث عطا کر جيکو منهنجو ۽ يعقوب (عليہ السلام) جي اولاد جو وارث ٿئي.) مان ثابت ٿيو تہ حضرت سليمان، حضرت داؤد عليهما الصلواة والسلام جو وارث ٿيو ۽ حضرت يحيٰی حضرت زکريا عليهما الصلواة والسلام جن جو وارث ٿيو تہ پوءِ هڪ روايت سان جنهن جو راوي بہ پاڻ حضرت ابوبڪر صديق آهي سيده فاطمہ زهرٰا کي ورثو ڇونہ ڏنو ويو؟ قرآن پاڪ جي آيتن جي مقابلي ۾ هڪ روايت جي ڪهڙي اهميت آهي؟

## جواب

جاڻڻ گهرجي تہ مٿي ذکر ڪيل حديث خبر واحد قطعي دليل تڏهن نہ ٿي سگهندي جڏهن وچ ۾ ٻيا راوي هجن جن جي روايت تي مدار هجي پر هتي جڏهن تہ اها حديث حضرت ابوبڪر صديق رضي الله تعالیٰ عنہ حضور عليہ السلام جن جي زبان مبارڪ کان پنهنجن ڪنن سان پاڻ ٻڌي هئي تہ اها سندس حق ۾ متواتر کان بہ وڌيڪ آهي ڇوتہ اها محسوسات مان آهي ۽ قانون آهي تہ ان المحسوسات فوق المتواترات - اکين سان ڏٺل يا ڪنن سان ٻڌل وغيره متواترات کان وڌيڪ آهي ۽ شيعا پاڻ بہ خبر واحد جي ڪري قرآن پاڪ جي حڪم ۾ تخصيص ڪندي ميت جي زال کي زمين مان حصو نہ ٿا ڏين ۽ ميت جي ٻين پٽن ۽ وارثن کان سواءِ وڏي پٽ کي ميت جي تلوار قرآن شريف، منڊي ۽ لباس بلاحساب ٿا ڏين. اها بہ تخصيص آهي جيڪا پاڻ ڪن ٿا. (١) ٻيو تہ اها روايت صرف حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنہ کان ڇوڙ بہ باطل آهي اها روايت ٻين صحابن مثلاً حضرت حذيفه بن اليمان، حضرت ابوهريره، حضرت ابودرداءِ وغيرهم کان بہ ثابت آهي. بخاري شريف ۾ آهي تہ هڪ ڀيري وڏن صحابن جي جماعت جي موجودگيءَ ۾ جن ۾ حضرت علي، حضرت عباس، حضرت عبدالرحمٰن بن عوف، حضرت زبير بن عوام، حضرت سعد بن ابي وقاص وغيرهم رضي الله عنهم حاضر هيا حضرت امير المومنين عمر بن خطاب رضي الله عنہ سيني کي مخاطب ٿيندي فرمايو تہ: انشدکم بالله الذی باذنه تقوم السماءُ والارض" يعني مان اوهان کي ان الله جو قسم ڏئي ٿو پڇان جنهن جي اذن سان آسمان ۽ زمين قائم آهن تہ اوهان کي خبر آهي تہ رسول الله تعالیٰ عليہ وسلم جن فرمايو هو تہ اسان جو ورثو نہ ٿيندو آهي اسان جيڪو ڇڏيو اهو صدقو آهي. ۽ ان ڇڏڻ وارن مان مراد

(١) روح المعاني ص٢١٨ ج٢

سندن ذات هئي؟ سيني چيوتہ "هائو" ان کان پوءِ حضرت عمر رضي الله تعالىٰ عنه حضرت علي ۽ حضرت عباس رضي الله عنهما سان خصوصي طرح مخاطب ٿي قسم ڏيندي وري بہ اها ڳالهہ انهن کان پڇيائين تہ انهن وري بہ فرمايو تہ هائو. رسول الله صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن ائين فرمايو آهي. ۽ ٻين روايتن جي لحاظ سان بہ اها روايت حديث مشهور جي درجي کي پهتل آهي ۽ ان کي سيني صحابن قبول ڪري ان تي اجماع ڪيو آهي جنهن سان "يُوْصِيْكُمُ اللّٰهُ فِيْٓ اَوْلَادِكُمْ لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ" ۾ انبياء ڪرام عليهم السلام کي تخصيص ڪري ڪڍيو ويو آهي. يعني نبين عليهم الصلواة والسلام جي لاءِ اهو حڪم ناهي باقي ٻين جي لاءِ آهي ۽ اها روايت شيعن جي ڪتابن بہ آندي آهي. شيعن جي مشهور ڪتاب الڪافي جي مصنف محمد بن يعقوب پنهنجي سند سان حضرت امام جعفر صادق کان روايت آندي آهي ان فرمايو تہ: اَلْعُلَمَاءُ وَرَثَةُ الْاَنْبِيَاءِ وَذَالِكَ اَنَّ الْاَنْبِيَآءَ لَمْ يُوَرِّثُوْا دِرْهَمًا وَلَا دِيْنَارًا وَاِنَّمَا وَرَّثُوْا اَحَادِيْثَ مِنْ اَحَادِيْثِهِمْ فَمَنْ اَخَذَ بِشَيْءٍ مِّنْهَا فَقَدْ اَخَذَ بِحَظٍّ وَافِرٍ (١) يعني نبين (عليهم الصلواة والسلام) جا وارث (ديني علم جا) علماء آهن ۽ نبين تہ صرف حديثون ورثو ڇڏيون آهن پوءِ جنهن انهن حديثن مان ڪجهہ ورتو ان پورو پورو حصو ورتو. هن روايت ۾ انما جو لفظ آيو آهي جيڪو عربي گرامر ۾ حصر لاءِ ايندو آهي جنهن مان ثابت ٿيو تہ نبين عليهم الصلواة والسلام جو ورثو صرف علم ۽ حديثون وغيره آهي ڪا دنيوي شيءِ سون، چاندي، درهم، دينار، زمين، دڪان، باغ، فدڪ وغيره سندن ورثو ناهي ۽ نہ ورثي طور ورهايو ويندو. رهيو سوال قرآن پاڪ جي آيت "وَوَرِثَ سُلَيْمَانُ دَاوُدَ" (۽ سليمان داؤد جو وارث ٿيو) سو ان مان بہ مراد علم آهي جيئن ان ئي آيت ۾ اڳيان حضرت سليمان جو فرمان آيو آهي "يَا اَيُّهَا النَّاسُ عُلِّمْنَا مَنْطِقَ الطَّيْرِ" اي انسانو! اسان کي پکين جي ڳالهائڻ جو علم ڏنو ويو آهي. جنهن مان ثابت ٿيو تہ اهو ورثو بہ علم جو ورثو هيو ۽ جيڪڏهن مال ملڪيت جو ورثو مراد هجي ها تہ پوءِ حضرت داؤد عليہ الصلواة والسلام جا تہ ٻيا بہ اوڻويهہ (١٩) پٽ هيا (٢) جيئن تاريخن ۾ لکيل آهي پوءِ صرف حضرت سليمان (عليہ السلام) وارث ڪيئن بڻيو؟ ۽ مال جي ورثي کي قرآن پاڪ نبي سڳوري جي فضائل ۾ ڪيئن پيش ڪندو، حالانڪہ مال جا وارث تہ

(١) اصول من الڪافي ص٣٢ جلد ١ باب فضل العلم
(٢) روح المعاني ص٢١٨ ج٢

فاسق ۽ فاجر پڻ ۽ مٽ بہ ٿين ٿا ان جي ڪري هتي صرف علم جو ورثو مراد آهي جيڪو نبي جو شان آهي ۽ حضرت زڪريا عليہ السلام جي دعا "فَهَبْ لِي مِن لَّدُنكَ وَلِيًّا يَرِثُنِي وَيَرِثُ مِنْ آلِ يَعْقُوبَ" مان مراد بہ اهوئي علمي ورثو آهي نہ تہ حضرت زڪريا عليہ الصلواة والسلام جو پڻ حضرت يعقوب عليہ السلام جي اولاد جي مال ملڪيت جو وارث ڪيئن ٿي سگهندو؟ جو انهن جي وچ ۾ ٻن هزارن سالن جو فرق آهي (١) سندس دعا کي سمجهڻ جي ضرورت آهي ڇوتہ انبياءِ ڪرام عليهم الصلواة والسلام دنيا جي محبت کان مڪمل پاڪ آهن انهن جي ذات الله تعالیٰ جي محبت ۾ فنا هوندي آهي ۽ اصول حديث ۾ شيعن ۽ سنين ٻنهي جي علماء جو متفق فيصلو آهي تہ حديث جي تقسيم تہ هيءَ متواتر آهي يا مشهور آهي وغيره انهن جي حق ۾ آهي جن حضور صلی الله عليہ وسلم جن کي ڏٺو ناهي ۽ انهن تائين حديثون راوين جي ذريعي پهتيون آهن پر جنهن حضور صلی الله عليہ وسلم جن جو ديدار ڪري سندن پاڪ زبان مان سندن فرمان روبرو ٻڌو آهي انهن لاءِ اهو فرمان قطعي ۽ يقيني دليل آهي. ان جي ڪري مٿين روايت حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنہ جي لاءِ قطعي ۽ يقيني دليل هئي جنهن سان ٻئي قطعي دليل کي تخصيص ڪرڻ جائز آهي.

## سوال

پوءِ سيده فاطمہ زهراءِ رضي الله عنها فدڪ جي باغ جي گهر ڇو ڪئي هئي ۽ نہ ملڻ تي ناراض ڇو ٿي هئي؟

## جواب

ممڪن آهي تہ سيده سائڻ رضي الله عنها کي اها حديث نہ پهتي هجي يا ذهن مبارڪ مان نڪري وئي هجي ۽ هڪ روايت جو نہ پهچڻ يا ذهن مان نڪري وڃڻ سندس علم جي ڪمال لاءِ نہ خلل انداز آهي ۽ نہ ان سان سندس مرتبي ۾ ڪو فرق پوندو. سرور ڪائنات صلی الله عليہ وسلم جن لاءِ بہ رب ڪريم جو فرمان آهي "وَقُل رَّبِّ زِدْنِي عِلْمًا" ۽ (اي محبوب!) علم جي وڌڻ لاءِ دعا گهرو. ڇا علم جي واڌاري جي دعا سان سندن علمي مقام ۾ گهٽتائي پيدا ٿيندي؟ رهيو سوال طبعي طرح ڪنهن تي ناراض ٿيڻ جو ، سو ان سان بہ ڪو فرق نہ ٿو پوي. حضرت موسیٰ عليہ

(١) ساڳيو حوالو

الصلواة والسلام پنهنجي ڀاءُ حضرت هارون عليہ الصلواة والسلام تي ناراض ٿي سندس مٿي مبارڪ ۽ سونهاري مبارڪ ڪان ورتو هو جيئن قرآن پاڪ جي آيت "لَا تَأْخُذْ بِلِحْيَتِيْ وَلَا بِرَأْسِيْ" (١) مان ثابت آهي جو حضرت هارون حضرت موسىٰ کي فرمايو هو تہ منهنجي ڏاڙهيءَ ۽ مٿي مان نہ وٺ اوهان ٻنهي پائرن مان جيڪي ٻئي نبي هيا ڪنهن کي مجرم چوندؤ؟ (معاذالله) تنهن هوندي بہ محدثن جي تحقيق آهي تہ حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنہ حضرت فاطمہ زهراء رضي الله عنها کي حضرت علي رضي الله عنہ جن جي واسطي ۽ ذريعي راضي ڪيو هو. جيئن مدارج النبوة، ڪتاب الوفا، شرح المشڪواة للدهلوي، سنين جي ڪتابن ۽ محاج السالڪين ۽ ٻين شيعن جي معتبر ڪتابن ۾ لکيل آهي تہ جڏهن حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنہ کي سيده خاتون جنت جي طبعي ناراضپي جي خبر پئي تہ پاڻ سندس خدمت ۾ اچي عرض ڪيائون تہ: اي سيده! اوهان تہ دعويٰ ڪئي پر مون اوهان جي والد، رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن کي ڏٺو هو تہ پاڻ ان فدڪ واري باغ جي آمدني اوهان جي خرچ ڏيڻ کان پوءِ فقيرن، مسڪينن ۽ مسافرن ۾ ورهائيندا هئا. پوءِ هاڻي ٻڌايو تہ اوهان ڇاٿا ڪرڻ چاهيو؟ سائڻ فرمايو تہ ائين ئي ورهايو جيئن منهنجا والد صلى الله عليہ وسلم جن ورهائيندا هئا. حضرت ابوبڪر صديق رضي الله تعالىٰ عنہ فرمايو تہ: الله تعالىٰ شاهد آهي تہ مان بہ ان ۾ ائين ئو ڪيان جيئن اوهان جا والد صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن ڪندا هئا. سائڻ وري تاڪيد ڪرڻ جي لاءِ فرمايو تہ: الله جو قسم ائين ضرور ڪندؤ؟ فرمايائين تہ: الله جو قسم ائين ضرور ڪندس. پوءِ سائڻ فرمايو تہ اي الله! شاهد رهہ. ۽ هاڻي مان راضي آهيان. پوءِ حضرت ابوبڪر صديق رضي الله تعالىٰ عنہ ان مان سندن خرچ ڏيندو هو ۽ اهي راضي ٿي وٺندا هئا ۽ باقي فقيرن، مسڪينن ۽ مسافرن ۾ ورهائيندا هئا. (٢) سيده رضي الله عنها جي راضي ٿيڻ کان پوءِ ڪنهن کي بہ ان مسئلي ۾ چو ۽ چا ڪرڻ جو حق ناهي. والله الموفق - ۽ هي ڳالهہ بہ ذهن نشين ڪرڻ گهرجي تہ جيئن نياڻي پيءُ جي ملڪيت ۾ وارث آهي تيئن گهر واري بہ مڙس جي ملڪيت ۾ حصي وٺڻ جي حقدار هوندي آهي. حضرت ابوبڪرصديق رضي الله عنہ جن جيڪڏهن سيده خاتون جنت رضي الله عنها کي (معاذالله) دشمنيءَ يا بغض جي ڪري ڪجهہ نہ ٿي ڏنو تہ پنهنجيءَ نياڻيءَ

(١) سورة طٰہٰ آيت ٩٤

(٢) روح المعاني ص٢٢١ ج٢ تفسير المنار ص٤٠٨ کان ٤١٤ جلد ٤

سيده عائشہ ۽ حضرت عمر رضي الله عنہ جي نياڻيءَ سيده حفصہ (جيڪي حضور عليہ الصلواة والسلام جن جون گهرواريون هيون) کي تہ ڏي ها پر جڏهن تہ ڪنهن کي بہ ورثي طور شرعاً ڪجهہ ڏيڻو نہ هو ان جي ڪري انهن کي بہ نہ ڏنائين. سمجهو ۽ سوچيو سيرت، تاريخ ۽ حديثن جي علماء سيني لکيو آهي تہ جڏهن حضرت علي ۽ حضرت امام حسن، رضي الله عنهما جي خلافت جو دور آيو ۽ پاڻ شيعن جي بقول گناهن کان معصوم هيا پوءِ سندن خلافت جي دور ۾ حضور عليہ الصلواة والسلام جن جون ڪجهہ گهرواريون ۽ حضور عليہ الصلواة والسلام جن جو چاچو حضرت عباس ۽ ان جو اولاد يا سيده خاتون جنت جو اولاد ورثو گهري ها يا انهن کي ڏين ها تہ ڪنهن کي جهلڻ جي قوت هئي پر سيني حضرت ابوبڪر صديق جي فيصلي کي صحيح سمجهي برقرار ڪيو هو جنهن مان صديقي فيصلي جو حق هجڻ ثابت آهي.

## سوال

ڪنهن جي علم ۾ وارث هجڻ ورثي جي لفظ جي مجازي معنيٰ آهي حقيقي معنيٰ مال ۽ ملڪيت ۾ وارث هجڻ آهي اوهان "وَوَرِثَ سُلَيْمَانُ دَاوُدَ" ۽ "فَهَبْ لِي مِنْ لَدُنْكَ وَلِيًّا يَرِثُنِي" آيتن ۾ حقيقي معنيٰ ڇڏي مجازي معنيٰ ڇوٽا ورتو؟

## جواب

صرف مال ۾ وارث ٿيڻ ورثي جي حقيقي معنيٰ نہ آهي. علم، مال ۽ منصب ۾ بہ ورثو حقيقي معنيٰ سان استعمال ٿيل آهي ۽ جيڪڏهن اوهان هرويرو ان کي مجازي معنيٰ چوندؤ تہ بہ اهو ايترو تہ مشهور ۽ متعارف آهي جيڪو حقيقيءَ سان برابر آهي ۽ قرآن ڪريم ۾ تہ خصوصي طرح استعمال ٿيل آهي جيئن رباني ارشاد آهي. "ثُمَّ أَوْرَثْنَا الْكِتَابَ" (١)

## سوال

جيڪڏهن نبي ڪريم عليہ الصلواة والسلام جن جو ورثو ڪجهہ بہ ورهائڻ لاءِ نہ هيو تہ پوءِ سندن گهروارين کي حجرا ڇو ڏنا ويا؟

(١) سورة فاطر آيت ٣٢

## جواب

اهي حجرا حضور صلى الله عليہ وسلم جن پنهنجي ظاهري زندگيءَ ۾ ئهرائي انهن کي بخشش ڪري ڏئي ڇڏيا هئا جيڪي سندن قبضي ۾ هجڻ جي ڪري سندن ملڪيت ٿي چڪا هئا. قرآن ڪريم ۾ الله تعالىٰ انهن حجرن کي حضور صلي الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جي گهروارين ڏي نسبت ڪندي فرمايو آهي "وَقَرْنَ فِي بُيُوتِكُنَّ" (١) ۽ پنهنجن گهرن ۾ وهو- ۽ شيعن ۽ سنين سيني لکيو آهي تہ جڏهن سيدنا امام حسن رضي الله عنہ جي رحلت جو وقت آيو هو تہ پاڻ سيده عائشہ رضي الله عنها کان سيدنا رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي پر ۾ دفن ٿيڻ جي اجازت گهري هيائون ڇوتہ اهو حجرو سائڻ جي ملڪيت هيو. (سائڻ موڪل بہ ڏني هئي پر مروان وغيره وقت جي حاڪمن ائين ڪرڻ نہ ڏنو هو) ۽ جيئن حضور صلي الله عليہ وسلم جن پنهنجين گهروارين کي حجرا ئهرائي ڏنا هيا ۽ اهي انهن جي ملڪيت هيا تيئن پاڻ ڪريمن صلى الله عليہ وسلم جن حضرت سيده فاطمہ ۽ حضرت اسامہ رضي الله عنهما کي بہ حجرا ئهرائي ڏنا هيا جيڪي انهن جي ملڪيت هيا. (٢)

وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ النِّسَآءِ اِلَّا مَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ ۚ كِتٰبَ

۽ پرڻيلون زالون سواءِ انهن ٻانهين جي جو مالڪ ٿيئو انهن جا حڪم آهي

اللّٰهِ عَلَيْكُمْ ۚ وَاُحِلَّ لَكُمْ مَّا وَرَآءَ ذٰلِكُمْ اَنْ تَبْتَغُوْا

الله جو اوهان تي ۽ حلال ڪيو ويو اوهان جي لاءِ جيڪي انهن کان سواءِ آهن تہ طلب ڪيو

بِاَمْوَالِكُمْ مُّحْصِنِيْنَ غَيْرَ مُسٰفِحِيْنَ ۗ فَمَا اسْتَمْتَعْتُمْ بِهٖ

پنهنجن مالن سان نڪاح ۾ رکندڙ، نہ زنا ڪندڙ. پوءِ جيڪو فائدو ورتوَ ان سان

مِنْهُنَّ فَاٰتُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ فَرِيْضَةً ۗ وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيْمَا

انهن مان پوءِ ڏيو انهن کي مهر انهن جا مقرر ٿيل ۽ ناهي ڪو گناهہ اوهان تي ان ۾ جو

(١) سورة الاحزاب آيت ٣٣ (٢) روح المعاني ص٢١٩ ج٢

تَرَاضَيْتُمْ بِهٖ مِنْۢ بَعْدِ الْفَرِيْضَةِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ﴿۲۴﴾

راضي ٿيئو ان سان مقرر ڪرڻ کان پوءِ بيشڪ الله آهي ڄاڻندڙ، حڪمت وارو

وَمَنْ لَّمْ يَسْتَطِعْ مِنْكُمْ طَوْلًا اَنْ يَّنْكِحَ الْمُحْصَنٰتِ

۽ جيڪو نہ ٿو رکي اوهان مان طاقت هن ڳالهہ جي جو نڪاح ڪري سگهي آزاد عورتن

الْمُؤْمِنٰتِ فَمِنْ مَّا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ مِّنْ فَتَيٰتِكُمُ

ايمان وارين سان تہ پوءِ انهن مان جو مالڪ ٿيئو (انهن جا) پنهنجن نوجوانين

الْمُؤْمِنٰتِ ۭ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِاِيْمَانِكُمْ ۭ بَعْضُكُمْ مِّنْۢ بَعْضٍ ۚ

ايمان وارين مان ۽ الله وڌيڪ ڄاڻندڙ آهي اوهان جي ايمان کي هڪ ٻئي مان آهيو

فَانْكِحُوْهُنَّ بِاِذْنِ اَهْلِهِنَّ وَاٰتُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ

پوءِ نڪاح ڪيو انهن سان انهن جي اهل جي موڪل سان ۽ ڏيو انهن کي مهر انهن جا چڱي نموني

مُحْصَنٰتٍ غَيْرَ مُسٰفِحٰتٍ وَّلَا مُتَّخِذٰتِ اَخْدَانٍ ۚ فَاِذَآ اُحْصِنَّ

پرڻجندڙيون نہ زنا ڪندڙيون ۽ نہ وٺندڙيون ڳجها يار. پوءِ جڏهن نڪاح ۾ ڪيون وڃن

فَاِنْ اَتَيْنَ بِفَاحِشَةٍ فَعَلَيْهِنَّ نِصْفُ مَا عَلَى الْمُحْصَنٰتِ مِنَ

پوءِ جيڪڏهن ڪن بي حيائي پوءِ انهن تي اڌ آهي اُن مان جيڪا آزاد عورتن تي

الْعَذَابِ ۭ ذٰلِكَ لِمَنْ خَشِيَ الْعَنَتَ مِنْكُمْ ۭ وَاَنْ تَصْبِرُوْا خَيْرٌ

سزا آهي اهو (حڪم) ان لاءِ آهي جو ڊڄي ٿو زنا ۾ پوڻ کان اوهان مان ۽ صبر ڪيو تہ ڀلو آهي

لَّكُمْ ۭ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿۲۵﴾ ع

اوهان لاءِ ۽ الله بخشيندڙ، مهربان آهي

# تفسير

شرعي لحاظ سان جيڪي عورتون حرام آهن، انهن جو ذڪر اجان هلي رهيو آهي هتي فرمان آهي "وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ النِّسَآءِ" ۽ پرڻيل عورتون- يعني جيڪي عورتون مڙسن جي نڪاح ۾ آهن جيستائين اهي پهريان مڙس طلاق نہ ڏين يا وفات نہ ڪن ۽ اهي عورتون طلاق ۽ وفات جي عدت پوري نہ ڪن تہ تيستائين انهن سان ٻيو ڪوبہ نڪاح ڪري نہ ٿو سگهي. هن مان معلوم ٿيو تہ هڪ عورت هڪ ئي وقت هڪ کان مٿي مڙس ڪري نہ ٿي سگهي. هن دور جا بعضي جاهل، ملحد چوندا ٿا وتن تہ مڙسن کي جڏهن هڪ زال کان وڌيڪ چئن زالن تائين رکڻ جو حق آهي تہ عورتن کي بہ هڪ کان وڌيڪ مڙسن مان نفعو وٺڻ جي اجازت هجڻ کپي. اهو مطالبو هن آيت مطهره جي بالڪل خلاف آهي. اهي جاهل، احمق، نادان، بيوقوف ۽ بيغيرت اهو نہ ٿا سمجهن تہ مرد جي لاءِ بہ يا ٽي يا چار زالون نعمت آهن جنهن کي هر مذهب ۽ ملت ۾ جائز ۽ سٺو سمجهيو ويو آهي جئين "فَانْكِحُوْا مَا طَابَ لَكُمْ مِّنَ النِّسَآءِ مَثْنٰى وَثُلٰثَ وَرُبٰعَ" جي تفسير ۾ لکيو ويو آهي، پر هڪ عورت جي لاءِ هڪ وقت ۾ ٻن مڙسن جو هجڻ ان لاءِ تہ مصيبت آهي پر ان جي مڙسن جي لاءِ ڪيڏو نہ عار، لڄ ۽ شرم جو باعث آهي جو هرڪو پنهنجي ان زال سان ٻئي ڪي همبستري ٿيندي ڏسي. معاذالله ثم معاذالله - ۽ ٻيو تہ ان صورت ۾ ان عورت کي جيڪو ٻار ٿئي اهو ڪنهن جي نالي سڏيو وڃي ۽ جڏهن نسب جو تحقق نہ ٿيو تہ ان جي لاءِ حقوق جي ذميداري ڪنهن تي رکي ويندي ۽ شاديءَ مان مقصد انساني نسل وڌائڻ ۽ ان جي حفاظت ڪرڻ آهي سو ٻنهي عورتون هڪ مڙس مان تہ حمل واريون ٿي سگهن ٿيون پر هڪ عورت ٻئن مڙسن مان حمل واري نہ ٿيندي ان کي حمل تہ هڪ مڙس جي نطفي مان ٿيندو باقي ٻين جي قوت خواه مخواه ضايع ۽ برباد ٿيندي ۽ شهوت پوري ڪرڻ کان سواءِ انهن کي ڪوبہ فائدو نہ ٿيندو. تجربي ۽ مشاهدي سان ثابت آهي تہ مرد جي مقابلي ۾ عورت نازڪ آهي اُها حيض ۽ نفاس جي صورت ۾ تہ مڙس جي نفعي وٺڻ جي لائق بہ نہ ٿي رهي ۽ بعضي حالتن ۾ اها هڪ مڙس جا حقوق بہ ادا نہ ٿي ڪري سگهي تہ ٻن يا ٽن مڙسن جا حقوق ڪٿان ادا ڪندي؟ ان جي ڪري ان لاءِ هڪ مڙس ڪافي آهي. ان جي ڪري

جيڪڏهن ڪنهن عورت جو مڙس گم ٿي وڃي تہ ان لاءِ حڪم آهي تہ جيستائين ان جي مرڻ جو يقين يا غالب گمان، يقين جي قريب نہ ٿو ٿئي تہ ٻيو مڙس نہ ٿي ڪري سگهي. اهڙيءَ طرح جن عورتن جو نڪاح وقت جا حاڪم ناجائز طريقي سان ٽوڙين ٿا تہ اهو بہ حرام آهي، ڇوتہ انهن کي سندن مڙسن طلاق نہ ڏني آهي. (١) "اِلَّا مَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ" مگر ڪافرن جون اهي عورتون جيڪي اوهان جي ملڪيت ۾ آيون- يعني جيڪي عورتون جنگ جي ميدان ۾ دارالحرب (ڪافرن جي ملڪ مان) قيد ٿي آيون ۽ انهن جا مڙس اتي رهجي ويا تہ انهن جا نڪاح ختم ٿي ويا ۽ اسلامي حڪومت انهن عورتن کي جن بہ مجاهدن سپاهين جي حصي ۾ ڏي اهي انهن سان همبستر ٿي سگهن ٿا. سمجهڻ گهرجي تہ جنگي قيدين جو مسئلو هميشہ کان حڪومت جي لاءِ مٿي جو سور بڻيل رهيو آهي اسلام ان جو فطري حل پيش ڪيو آهي جو جيڪڏهن جنگ ۾ ڪافرن دشمنن جا مرد ۽ عورتون قيدي ٿي اچن تہ انهن جو مسئلو اسلامي حڪومت جي صوابديد ۽ اختيار تي ڇڏيل آهي ملڪي ۽ ملي مفاد کي نظر ۾ رکندي وٽيس تہ انهن کي آزاد ڪري ڇڏي، وٽيس تہ انهن کان فديو (سر جي بها) وٺي انهن کي ڇڏي ڏي، وٽيس تہ جيڪي مسلمان مجاهد دشمنن جي هٿ ۾ قيد ٿي ويا آهن انهن جي عوض ڏئي انهن کي آزاد ڪرائي ۽ جيڪڏهن مصلحت جي تقاضا آهي تہ انهن کي قيدي بڻايو وڃي تہ اهو ڪيئن؟ جپان، جرمني، روس، آمريڪا وانگر قيدين جون ڪيمپون ناهڻ سان نہ، جو اتي بکن، اڃن، مرضن ۽ مصيبتن ۾ ڦاٿا پيا هجن ۽ انهن کي قسمين قسمين اذيتون ڏنيون وڃن ۽ انهن کان رات ڏينهن جبراً مزدوري ڪرائي وڃي پر ان جي صورت هيءَ آهي جو انهن کي مجاهدن، غازين ۾ ورهايو وڃي ۽ هر مجاهد ان قيديءَ جي کاڌي، پيتي، لباس، آرام، رهائش وغيره جو پورو پورو خيال رکي پوءِ ان مجاهد کي سردار ۽ ان قيديءَ کي ٻانهو ۽ جيڪا عورت قيدياڻي بڻجي آئي ان کي ٻانهي سڏيو ويندو. ان سان هڪ مهيني تائين اهو مجاهد سردار جماع نہ ڪندو پلي تسلي ٿئي تہ اها اڳئين مڙس مان حاملہ تہ ناهي جڏهن پڪ ٿي تہ حاملہ ناهي تہ هاڻي ان سان همبستر ٿي سگهي ٿو ۽ جيڪڏهن اهو سردار ان غلام يا ٻانهيءَ کي وڪڻي تہ وڪڻي بہ سگهي ٿو پر جيڪڏهن ان ٻانهيءَ کي سردار مان اولاد ٿيو تہ ان کي ام ولد (ٻار جي ماءُ) سڏيندا آهن ۽ هاڻي ان ٻار جا بہ اهي ئي حقوق هوندا

(١) نورالعرفان ص١٢٩ حاشيہ ١

جيڪي ٻئي اولاد جا هوندا ۽ هاڻي اها ٻانهي وڪرو به نه ٿي سگهندي ۽ ان سردار جي مرڻ کان پوءِ خودبخود آزاد ٿي ويندي.

## مسئلو

جيڪڏهن ڪا عورت دارالاسلام (مسلمانن جي ملڪ) ۾ مسلمان ٿي ۽ ان جو مڙس ڪافر آهي ته شرعي حاڪم ان ڪافر مڙس کي مسلمان ٿيڻ لاءِ چوي جيڪڏهن اهو مسلمان ٿيڻ کان انڪار ڪري ته پوءِ قاضي انهن مڙس ۽ زال ۾ تفريق (جدائي) ڪرائي جنهن کي طلاق شمار ڪيو ويندو جنهن جي عدت پوري ڪري اها عورت ڪنهن به مسلمان سان نڪاح ڪري سگهي ٿي. "كِتٰبَ اللّٰهِ عَلَيۡكُمۡ" يعني جن حرام ڪيل عورتن جو ذڪر ڪيو ويو آهي انهن جو مردن تي حرام هجڻ الله تعاليٰ جي طرفان لکيل ۽ طي ٿيل آهي، جيئن علامه قرطبيءَ لکيو آهي اي حرمت هذه النساءِ كتابا من الله عليكم (١)

"وَاُحِلَّ لَكُمۡ مَّا وَرَآءَ ذٰلِكُمۡ اَنۡ تَبۡتَغُوۡا بِاَمۡوَالِكُمۡ مُّحۡصِنِيۡنَ غَيۡرَ مُسٰفِحِيۡنَ" يعني جن عورتن جو حرام هجڻ بيان ڪيو ويو آهي انهن کان سواءِ باقي ٻيون عورتون چئن شرطن سان اوهان جي لاءِ حلال آهن. ١- هڪ ته طلب ڪيو يعني ٻنهي طرفن کان زبان سان ايجاب ۽ قبول ڪيو وڃي. ٢- ٻيو ته مال ڏيو يعني مهر ادا ڪيو. ٣- ٽيون ته انهن عورتن کي پنهنجي قبضي ۾ رکڻ جو پڪو ارادو رکو صرف مستي ڪڍڻ ۽ شهوت هلائڻ جو ارادو نه ڪيو. "محصنين" معنيٰ اعفاءَ عن الحرام "غير مسافحين" غيرزانين (٢) يعني حرام کان پاڪ رهندڙ، زنا کان بچندڙ. انهن عورتن کي پنهنجو ننگ سمجهي هميشه لاءِ پاڻ وٽ رکڻ جي نيت ڪن. مقصد ته ڪا مدت مقرر نه هجي. ۴- چوٿون شرط هي آهي جيئن ٻين آيتن مان معلوم ٿيو آهي ته لڪل نڪاح ۽ ڳجهي دوستي نه هجي گهٽ ۾ گهٽ به مرد يا هڪ مرد ۽ ٻه عورتون شاهد هجن جن جي روبرو نڪاح ڪيو وڃي نه ته نڪاح صحيح نه ٿيندو (معاذالله) زنا سمجهي ويندي.

(١) القرطبي ص١٢٣ ج٥ (٢) تفسير وبيان كلمات القرآن تحت هذه الايه ص٨٢

## مسئلو

جيڪڏهن مڙس زال سان جماع ڪيو يا اڪيلائيءَ ۾ ويٺا جنهن ڪي خلوت صحيحه سڏيو ويندو آهي تہ ان تي پورو پورو مهر ادا ڪرڻ لازم آهي ۽ جيڪڏهن انهن ٻنهي صورتن کان اڳ ۾ ئي جدائي تي وئي تہ پوءِ مقرر ڪيل مهر جو اڌ ڏيڻ ضروري آهي.

"فَمَا اسْتَمْتَعْتُمْ بِهٖ مِنْهُنَّ فَاٰتُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ فَرِيْضَةً" يعني نڪاح ڪان پوءِ جن عورتن کان نفعو حاصل ڪيو تہ انهن ڪي سندن لاءِ وعدو ڪيل مهر ڏيو اهو اوهان تي فرض ڪيل آهي. هن آيت ۾ مهر ادا ڪرڻ جي لاءِ خصوصي توجهہ ڏياريو ويو آهي تہ جڏهن ڪنهن عورت سان نڪاح ڪري ان مان نفعو ورتو اٿو تہ ان کي مهر ڏيندا ڪيو. ان ۾ ڪوتاهي ڪرڻ اسلامي شريعت جي خلاف آهي ۽ انساني غيرت جي بہ تقاضا اها آهي تہ جڏهن نڪاح جو مقصد حاصل ٿيو تہ عورت جي حق ادا ڪرڻ ۾ سستي نہ ڪيو. عورت کي شريعت اهو حق ڏنو آهي تہ جيڪڏهن مڙس مهر جلدي ادا ڪرڻ جو وعدو ڪيو آهي ۽ اهو ادا نہ ٿو ڪري تہ مهر وصول ڪرڻ تائين مڙس ڏانهن وڃڻ کان انڪار ڪري سگهي ٿي.

## وقتي نڪاح ۽ متعو ڪرڻ حرام آهي

هن آيت جي لفظ "اِسْتَمْتَعْتُمْ" مان شيعن دليل ورتو آهي تہ متعو ڪرڻ حلال آهي پر ان لفظ جو شيعن جي متعي سان ڪوبہ واسطو ناهي ڇوتہ متعہ مان مقصد صرف شهوت پوري ڪرڻ آهي نہ ان عورت جو گهر ٿو نهي نہ ان مان اولاد جي حصول جو ارادو آهي ۽ نہ اها عورت وارث ٿي بڻجي ان جي ڪري اهو قرآن پاڪ جي متي ذڪر ڪيل لفظ "غَيْرَ مُسَافِحِيْنَ" سان حرام آهي. وقتي نڪاح جنهن ۾ مدت مقرر ڪيل هوندي آهي ڏينهن يا مهينو وغيره اهو بہ حرام آهي. متعہ ۾ ۽ وقتي نڪاح ۾ هي فرق آهي تہ وقتيءَ ۾ نڪاح جو لفظ آندو ويندو آهي ۽ متعہ ۾ متعہ جو لفظ ذڪر ڪيو ويندو آهي.

"وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيْمَا تَرَاضَيْتُمْ بِهٖ مِنْ بَعْدِ الْفَرِيْضَةِ" يعني مقرر ڪيل مهر کان پوءِ بہ جيڪڏهن مهر جي گهٽائڻ يا وڌائڻ تي زال ۽ مڙس راضي تي وڃن ٿا تہ ان ۾ اوهان تي ڪو گناهہ ناهي. مڙس وڌائي ڏي يا زال گهٽ ڪري وني يا

مڙس کي سمورو مهر معاف ڪري ڇڏي ته به جائز آهي. ان ۾ ڪوبه ۽ ڪنهن کي به گناهه ناهي.

"إِنَّ اللَّهَ كَانَ عَلِيمًا حَكِيمًا" بيشڪ الله ڄاڻندڙ، حڪمت وارو آهي. مٿي ذڪر ڪيل حڪمن جي جيڪڏهن ڪو مخالفت ڪندو ته ان جي به ان کي خبر آهي ۽ مٿي ذڪر ڪيل حڪمن ۾ جيڪي سندس حڪمتون رکيل آهن. انهن جون علتون ۽ سبب جيڪڏهن ٻانهن کي سمجهه ۾ نه ٿا اچن ته اهو انهن جي سمجهه جو قصور آهي. پر مٿن انهن حڪمن کي مڃڻ ضروري ۽ لازم آهي. موجوده دور جا ڪيترا ماڻهو الله تعالىٰ جي حڪمن جون حڪمتون ۽ علتون پڇڻ جي ڪوشش ڪندا آهن ۽ جيڪڏهن ڪا سمجهه ۾ نه ايندي اٿن ته اعتراض ڪندي ان حڪم کي عقل جي خلاف سمجهي اڇلائي ڇڏيندا آهن. هن آيت ۾ انهن جو منهن بند ڪندي ٻڌايو ويو آهي ته هر شيءِ جي حڪمت اوهان سمجهي نه ٿا سگهو. الله تعالىٰ ئي حڪمتون ڄاڻندڙ آهي اوهان ان جي حڪم تي اکيون ٻوٽي عمل ڪيو ان ۾ ئي اوهان جي ڀلائي آهي.

"وَمَنْ لَّمْ يَسْتَطِعْ مِنْكُمْ طَوْلًا اَنْ يَّنْكِحَ الْمُحْصَنٰتِ الْمُؤْمِنٰتِ فَمِنْ مَّا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ مِّنْ فَتَيٰتِكُمُ الْمُؤْمِنٰتِ" يعني اوهان مان جنهن ۾ به آزاد، مسلمان عورتن سان نڪاح ڪرڻ جي طاقت ناهي (۽ نه صبر ڪري پاڻ کي گناهه کان روڪي ٿو سگهي) ۽ ڪيس گناهن ۾ مبتلا ٿيڻ جو خطرو آهي ته اهو اوهان جي ملڪيت ۾ آيل نوجوان ٻانهين مومنياڻن سان نڪاح ڪري سگهي ٿو ڇوته آزاد عورت جي مقابلي ۾ ٻانهيءَ جو خرچ ۽ مهر وغيره گهٽ هوندو آهي. "طَوْلًا" طاقت ۽ شاهوڪاريءَ کي چوندا آهن. هن مان ثابت ٿيو ته جنهن کي آزاد عورت سان نڪاح ڪرڻ جي وسعت، طاقت ۽ سامان ميسر ناهي اهو ڪنهن مسلمان ياءُ جي ٻانهيءَ سان نڪاح ڪري ته جائز آهي ۽ ان جي ڪري حضرت امام ابوحنيفه عليه الرحمه جو فرمان آهي ته طاقت ۽ وسعت هوندي مسلمان ٻانهيءَ سان يا ڪتابيه يهودياڻي يا عيسائڻ ٻانهيءَ سان نڪاح ڪرڻ مڪروهه آهي. "وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِاِيْمَانِكُمْ بَعْضُكُمْ مِّنْ بَعْضٍ" يعني الله تعالىٰ اوهان جي ايمان کي وڌيڪ ڄاڻندڙ آهي ۽ ايمان جو هجڻ شاندار هجڻ جو سبب آهي ڪڏهن ڪڏهن ڪي، ڪي غلام ۽ ٻانهيون ايماني مرتبي ۾ آزاد مردن ۽ عورتن کان وڌيڪ هوندا آهن ان جي ڪري ايمان وارين ٻانهين سان نڪاح ڪرڻ کان نفرت نه ڪيو بلڪ انهن جي ايمان جو قدر ڪيو. ڇوته سيئي

هڪ ئي جنس انسان مان ۽ هڪ ئي حضرت آدم عليہ السلام جو اولاد آهيو.
"فَانْكِحُوْهُنَّ بِاِذْنِ اَهْلِهِنَّ" يعني ايمان وارين ٻانهين سان سندن مالڪن جي اجازت سان نڪاح ڪيو جيڪڏهن اهي اجازت نہ ڏين تہ پوءِ انهن سان نڪاح ڪرڻ جائز ناهي ڇوتہ اهي ٻانهيون پنهنجي سر جون بہ مالڪياڻيون ناهن. غلام لاءِ بہ حڪم آهي تہ سردار ۽ مالڪ جي اجازت کان سواءِ پنهنجو نڪاح ڪري نہ ٿو سگهي.
"وَاٰتُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ" ۽ انهن کي سندن مهر نيڪ نيتي ۽ فراخدليءَ سان ڏيو انهن کي ٻانهيون سمجهي سندن مهر هضم ڪري نہ ڇڏيو.
"مُحْصَنٰتٍ غَيْرَ مُسٰفِحٰتٍ" نڪاح ۾ ڪيلون هجن زنا ڪندڙيون نہ هجن. "وَّلَا مُتَّخِذٰتِ اَخْدَانٍ" ۽ نہ لڪل يار رکڻ واريون هجن. "اخدان" خدن جو جمع آهي جيئن اتراب ترب جو جمع آهي خدن صحبت واري ساٿيءَ کي چوندا آهن ۽ اڪثر خدن ان کي چوندا آهن جنهن سان لڪل برا تعلقات هجن. (١)
"فَاِذَآ اُحْصِنَّ فَاِنْ اَتَيْنَ بِفَاحِشَةٍ فَعَلَيْهِنَّ نِصْفُ مَا عَلَى الْمُحْصَنٰتِ مِنَ الْعَذَابِ" يعني جڏهن اهي ايماندار ٻانهيون شاديءَ سان قابو ڪيون وڃن پوءِ بہ جيڪڏهن بيحيائي (زنا) ڪن تہ انهن تي آزاد عورتن جي سزا جو اڌ آهي مثلاً آزاد عورت کي هڪ سؤ (١٠٠) ديڙا هنيا ٿا وڃن تہ ٻانهيءَ کي پنجاهہ (٥٠) هيا ويندا.
"ذٰلِكَ لِمَنْ خَشِيَ الْعَنَتَ مِنْكُمْ" يعني ٻانهيءَ سان نڪاح ڪرڻ جو جواز ان لاءِ آهي جنهن کي زنا ۾ ڦاسڻ جو خطرو آهي. ان لحاظ سان جو جوان مڙس آهي ۽ ڪيس شهوت جو غلبو آهي "وَاَنْ تَصْبِرُوْا خَيْرٌ لَّكُمْ" يعني اي نوجوانو! جيڪڏهن اوهان شهوت جي غلبي هوندي صبر ڪندؤ ۽ ٻانهين سان نڪاح نہ ڪندؤ تہ اهو اوهان جي لاءِ ڀلو آهي ڇوتہ ٻانهين سان نڪاح ڪرڻ کان پوءِ جيڪڏهن انهن مان اوهان جو اولاد ٿيو تہ بہ اهو انهن ٻانهين جي سردارن ۽ مالڪن جو غلام هوندو ۽ پنهنجي اولاد کي ٻين جو غلام بنائڻ ڪير بہ پسند نہ ڪندو ۽ ٻيو تہ اهي ئي ٻانهيون پنهنجن مالڪن ۽ سردارن جي خدمت ۾ مشغول هجڻ جي ڪري مڙسن جي صحيح خدمت ڪري بہ نہ سگهنديون.
"وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ" ۽ الله بخشيندڙ، مهربان آهي جو ان اوهان کي ٻانهين سان نڪاح ڪرڻ جي اجازت ڏني آهي.

(١) نعيمي ص١۴ ج٥

## فائدو

هتي ٻن ٽن آيتن ۾ "محصنت" ۽ "محصنين" لفظن جو ٻـ چار ڀيرا ذڪر آيو آهي پر ڪٿي انهن جي معنيٰ شادي ڪيل تـ ڪٿي پاڪ ۽ ڪٿي آزاد تـ ڪٿي ڪنواريون عورتون ڪئي وئي آهي جنهن مان نئين پڙهندڙ جي ذهن ۾ متان شڪ، تردد ۽ شبهو پيدا ٿئي تـ هڪ ئي ماده مان نڪتل لفظ جون معنائون هر هر ڇوٽيون بدلجن ان جي ڪري ضروري آهي تـ انهن لفظن جي تحقيق ڪئي وڃي سو ڄاڻڻ گهرجي تـ انهن لفظن جي مصدر ۽ ماخذ احصان جو لفظ آهي جنهن جي لغوي معنيٰ روڪڻ ۽ حفاظت ڪرڻ آهي ان جي ڪري قلعي کي حصن چوندا آهن ڇوتـ اهو دشمن کي حملي کان روڪي ان ۾ رهندڙن جي حفاظت ڪندو آهي ۽ مضبوط زره کي درع حصينه سڏيندا آهن ڇوتـ اها بـ مخالف جي وار کان جسم جي حفاظت ڪندي آهي. ان ئي لفظ سان جيڪو مرد يا عورت بڇڙائيءَ کان پنهنجي حفاظت ڪري ان کي محصن ۽ محصنه سڏيندا آهن. ان حفاظت جا ٻـ ٽي سبب آهن سلطان هجڻ، آزادي، طبعي گناهن کان نفرت، ڪنوارو هجڻ ۽ شادي ڪرڻ، انهن مان هرهڪ شيءِ انسان کي برائي کان روڪڻ واري آهي ان جي ڪري هي لفظ جتي ذڪر ڪيو ويو آهي ان موقعي ۽ محل جي مناسبت سان سندس معنيٰ مقرر ڪئي ويندي خاص ڪري جيڪا معنيٰ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن جتي مقرر ڪئي آهي اها قطعي هوندي ان ۾ رد وبدل نـ ڪئي ويندي. "فَعَلَيْهِنَّ نِصْفُ مَا عَلَى الْمُحْصَنٰتِ مِنَ الْعَذَابِ" ۾ مُحْصَنٰتِ جي معنيٰ آزاد، ڪنواريون عورتون. رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن جي طرفان مقرر ڪيل آهي ڇوتـ نبوي سنت جي مطابق جيڪڏهن آزاد ۽ ڪنوارين عورتن زنا جو گناهـ ڪيو تـ انهن جي سزا هڪ سؤ (١٠٠) ديڙا آهي جنهن جو اڌ پنجاهـ (٥٠) ديڙا مسلمان ٻانهيءَ جي سزا آهي. دنيا جي ٻين قانونن ۾ مرتبي، دٻدٻي ۽ سوسائٽيءَ ۾ بلند مقام ۽ منصب رکڻ وارن لاءِ خصوصي رعايت ۽ گنجائش هوندي آهي پر هن فطرتي دين، اسلام ۾ انهن جي مرتبن جو لحاظ رکيل ناهي بلڪ انسان جي فطري ڪمزورين کي نظر ۾ رکندي جتي ترڪي وڃڻ جا امڪان گهٽا ۽ بچڻ جا وسائل ٿورا آهن اتي سزا ۾ هلڪائي ڪئي وئي آهي ٻانهن ۽ ٻانهين، شادي ڪيلن ۽ شادي نـ ڪيلن مردن ۽ عورتن جي سزا ۾ گهٽ وڌ هجڻ جو اهوئي راز آهي.

"وَلَا تَتَمَنَّوْا مَا فَضَّلَ اللّٰهُ بِهٖ بَعْضَكُمْ عَلٰى بَعْضٍ" يعني الله تعالىٰ اوهان مان جيڪا هڪڙن کي ٻين تي صحت، صورت، ذهين هجڻ، عقلمندي، حسب، نسب، مرتبي، مان ۽ شان جي لحاظ سان فضيلت ۽ برتري بخشي آهي اها پنهنجي لاءِ تمنا نہ ڪيو ۽ ان فڪر ۾ ڳڻتيءَ ۾ پنهنجي زندگي زهر نہ بنايو اهي ڪم نہ انسان جي لاءِ حقيقي شرف ۽ عزت جو معيار آهن ۽ نہ انهن کي الله تعالىٰ جي قرب ۾ ڪو دخل آهي. عزت ۽ شان جو حقيقي معيار ۽ الله تعالىٰ جي قرب جو صحيح رستو اوهان جي جدوجهد سان ٻڌل آهي اوهان جيڪڏهن صالح عمل ڪري متقي ۽ پرهيزگار ٿيندؤ تہ اوهان ئي بارگاهہ خداونديءَ جا مقرب هوندئو. اوهان جي ظاهري صورت ۽ شباهت، ڪنهن وڏي خاندان سان وابستگي اوهان جي مرد يا عورت هجڻ سان اوهان کي حقيقي بلندي عطا نہ ٿيندي. ان جي ڪري ضرورت هي آهي تہ پنهنجن سهڻن عملن سان پنهنجي برتري ۽ بلندي ثابت ڪيو. ٻين جا ڪمال ڏسي صرف سڙون ڪرڻ تہ اسين بہ انهن جهڙا ٿيون اهو نہ سوچيو صرف اها سوچ رکڻ سان اوهان ۾ ٻين سان حسد ۽ ساڙ پيدا ٿيندو. ترمذيءَ مومنن جي ماءُ سيده ام سلمہ رضي الله عنها کان روايت آندي آهي، ان چيو تہ مرد جهاد ٿا ڪن ۽ عورتون جهاد ڪونہ ٿيون ڪن ۽ اسان کي ورثي جو بہ اڌ ملي ٿو. تڏهن الله تعالىٰ مٿيون فرمان نازل ڪرڻ فرمايو (١) "لِلرِّجَالِ نَصِيبٌ مِّمَّا اكْتَسَبُوْا ۖ وَلِلنِّسَآءِ نَصِيبٌ مِّمَّا اكْتَسَبْنَ" مردن جي لاءِ سندن ڪمائيءَ مان حصو آهي ۽ عورتن جي لاءِ سندن ڪمائيءَ مان حصو آهي. علامہ بيضاويءَ لکيو آهي تہ: اي لكل من الرجال والنساء فضل ونصيب بسبب ما اكتسب ومن اجله فاطلبوا الفضل بالعمل لا بالحسد والتهني (٢) يعني هر مرد ۽ عورت کي بلاامتياز سندس جدوجهد جو فائدو ملندو ان جي ڪري الله تعالىٰ کان سهڻي عمل جي ذريعي سندس فضل طلب ڪيو صرف حسد ۽ سڙن سان اها ڳالهہ حاصل نہ ٿيندي.

هن آيت ۾ عورتن جي هڪ حسرت ( تہ ڪاش اهي مرد هجن ها) کي بہ ختم ڪيو ويو آهي تہ تڪويني مصلحتن جي لاءِ ڪنهن کي مرد تہ ڪنهن کي عورت ٿيڻ ضروري هو ان جي ڪري اهو خام خيال دل مان ڪڍي ڇڏيو ڪمال ۽ الله تعالىٰ جي قرب حاصل ڪرڻ جا دروازا تہ اوهان جي لاءِ بہ کليل آهن. اڳتي وڌي پنهنجي سهڻي ۽ صالح عمل سان بلند کان بلند مقام حاصل ڪري وٺو ۽ مردن ۽

(١) القرطبي ص١٦٢ جلد٥ (٢) بيضاوي ڪامل ص١١٠

عورتن ٻنهي جي لاءِ سندن ڪمائيءَ مان حصي ثابت ڪرڻ سان اها ڳالهہ بہ واضح ٿي تہ جيئن مرد پنهنجي ڪمايل مال جو مالڪ آهي تيئن عورت بہ پنهنجي جائز محنت مان حاصل ڪيل مال جي مالڪياڻي آهي. مالڪ هجڻ جي حيثيت ۾ عورتن جو بہ اسلام مقام برقرار رکيو آهي.

"وَاسْئَلُوا اللّٰهَ مِنْ فَضْلِهٖ" ۽ الله تعالىٰ کان سندس فضل ۽ ڪرم گهرندا رهو. صرف خيالي پلاءُ نہ پچايو ۽ نہ رڳي حسد ڪيو. اهو پنهنجي جود، سخا ۽ ڪرم سان اوهان کي بہ سڀ ڪجهہ عطا ڪرڻ تي قادر آهي نہ ان جا خزانا کٽڻ وارا آهن ۽ نہ اهو سائل جي سوال ڪرڻ کان ڏکجندو آهي بلڪ ٻانهي جي التجائن ۽ عرض تي خوش ٿيندو آهي. "اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمًا" يقيناً الله تعالىٰ هر شيءِ کي ڄاڻندڙ آهي. هنن لفظن ۾ اشارو ڪيو ويو آهي تہ الله تعالىٰ جيڪا نعمتن جي تقسيم ڪئي آهي اها عين حڪمت، عين عدل ۽ انصاف آهي. انسان کي پنهنجي عاقبت ۽ انجام جي ڪا خبر ناهي، تڏهن بي صبري ۽ بي شڪري ڪندو آهي سندس عقل سڄي جهان جي مصلحتن سمجهڻ کان قاصر آهي.

"وَلِكُلٍّ جَعَلْنَا مَوَالِيَ مِمَّا تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْاَقْرَبُوْنَ" حضرت ابوبڪر صديق پنهنجي پٽ عبدالرحمٰن کي اسلام جي دعوت ڏني پر ان قبول نہ ڪئي حضرت ابوبڪر ان کي فرمايو تہ "تون منهنجو وارث نہ ٿيندين" پر جڏهن اهو مسلمان ٿيو تہ الله تعالىٰ فرمايو "والدين ۽ مٽ مائٽ جيڪي ڇڏي وڃن ٿا اسان انهن مان سڀني جا وارث مقرر ڪري ڇڏيا آهن" جيڪي انهن جي ملڪيت (مان) حصن آهر کٽندا تڏهن حضرت ابوبڪر رضي الله عنہ پنهنجي پٽ کي ورثي نہ ڏيڻ جو خيال لاهي ڇڏيو. (١) مقصد اهو آهي تہ ڪنهن سان بہ زيادتي نہ ٿيندي ۽ نہ ڪنهن کي محروم ڪيو ويندو.

"وَالَّذِيْنَ عَقَدَتْ اَيْمَانُكُمْ فَاٰتُوْهُمْ نَصِيْبَهُمْ" ۽ جن سان اوهان پڪا عهد ڪيا آهن انهن کي سندن ڀاڱو ڏيو. ڄاڻڻ گهرجي تہ اسلام کان اڳي جاهليت جي دور ۾ هڪ رسم هيءَ بہ هئي جو جن ماڻهن جي پاڻ ۾ دوستي هوندي هئي يا جن کي پنهنجو زباني پٽ بنائيندا هئا تہ اهي انهن جي مرڻ کان پوءِ سندن وارث ٿي ملڪيت جو حصو کٽندا هئا. هتي ٻڌايو ويو آهي تہ انهن کي سندن ڀاڱو ڏيو. حضرت عڪرمہ ۽ حسن بصري عليهم الرضوان کان روايت آهي تہ جڏهن آيت "وَاُولُوا الْاَرْحَامِ بَعْضُهُمْ

(١) نعيمي ص٤٢ ج٥

اَوۡلٰی بِبَعۡضٍ" (١) نازل ٿي تہ اهو دوستيءَ ۽ هٿرادو پٽ بنجڻ وارن جي حصي وارو حڪم منسوخ ٿي ويو. (٢)

"اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٰى كُلِّ شَيۡءٍ شَهِيۡدًا" يعني الله تعالىٰ هر شيءِ ڪي مشاهدو فرمائي رهيو آهي سنهي يا ٿلهي، ظاهر يا باطن ڪابہ شيءِ ان ڪان لڪل ناهي جيڪڏهن ڪنهن ورثي ۾ ناجائز حرڪتون ۽ ڦيرڦار ڪئي تہ ان کي سخت سزا ڏني ويندي، ڇوتہ اهي ٻانهن جا حقوق آهن جن جو سخت خيال رکڻو آهي.

يُرِيۡدُ اللّٰهُ لِيُبَيِّنَ لَكُمۡ وَيَهۡدِيَكُمۡ سُنَنَ الَّذِيۡنَ مِنۡ قَبۡلِكُمۡ

گهري ٿو الله تانت بيان ڪري اوهان جي لاءِ ۽ هلائي اوهان کي رستن انهن جي تي جو گذريا اوهان ڪان اڳ ۾

وَيَتُوۡبَ عَلَيۡكُمۡ ؕ وَاللّٰهُ عَلِيۡمٌ حَكِيۡمٌ ﴿٢٦﴾ وَاللّٰهُ يُرِيۡدُ اَنۡ يَّتُوۡبَ

۽ توبه قبول ڪري اوهان جي ۽ الله ڄاڻندڙ حڪمت وارو آهي ۽ الله گهري ٿو تہ رحم سان وري

عَلَيۡكُمۡ وَيُرِيۡدُ الَّذِيۡنَ يَتَّبِعُوۡنَ الشَّهَوٰتِ اَنۡ تَمِيۡلُوۡا مَيۡلًا

اوهان تي ۽ ارادو ٿا ڪن اهي ماڻهو جو تابع ٿا ٿين خواهشن جا تہ لڙي وڃو (حق ڪان)

عَظِيۡمًا ﴿٢٧﴾ يُرِيۡدُ اللّٰهُ اَنۡ يُّخَفِّفَ عَنۡكُمۡ ۚ وَخُلِقَ الۡاِنۡسَانُ ضَعِيۡفًا ﴿٢٨﴾

گهڻو لاڙو ارادو ٿو ڪري الله تہ هلڪائي ڪري اوهان تان ۽ پيدا ڪيو ويو انسان هيڻو

## تفسير

هن ڪان اڳ ۾ گهڻي تعداد ۾ احڪام بيان ڪيا ويا هئا جن جي پائبندي ماڻهن لاءِ سخت ڏکي هئي ان جي ڪري هتي تاڪيدي طور فرمان ٿيو تہ "يُرِيۡدُ اللّٰهُ لِيُبَيِّنَ لَكُمۡ وَيَهۡدِيَكُمۡ سُنَنَ الَّذِيۡنَ مِنۡ قَبۡلِكُمۡ وَيَتُوۡبَ عَلَيۡكُمۡ" يعني مٿين حڪمن

(١) سورة الانفال آيت ٧٥ (٢) تفسير الحسن البصري ص٢٧٥ جلد١

جي پائبندي اوهان تي هرويرو ناهي بلڪ الله تعاليٰ جو ارادو آهي تہ اوهان لاءِ اهي احڪام بيان ڪري ۽ اوهان کي اڳين نبين عليهم الصلواة والسلام ۽ صالحن ٻانهن جا رستا ڏيکاري جن رستن تي هلي اهي ٻنهي جهانن جون سعادتون حاصل ڪري ويا ۽ اوهان جي توبه قبول ڪري اوهان کي پنهنجي خصوصي رحمت سان نوازي.

"وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ" ۽ الله تعاليٰ ڄاڻندڙ آهي جو ان کي اوهان جي حالات ۽ مصلحتن جو پورو علم آهي. حڪمت وارو آهي جو سندس هر حڪم حڪمت ۽ تدبير کان خالي ناهي پوءِ جيڪڏهن ان جي حڪم جي اطاعت نہ ڪندؤ تہ هدايت کان محروم ۽ اڳين الله تعاليٰ جي پيارن جا مخالف ۽ الله تعاليٰ جي رحمت ۽ مغفرت کان خالي رهجي ويندؤ.

وَاللّٰهُ يُرِيْدُ اَنْ يَّتُوْبَ عَلَيْكُمْ" يعني الله تعاليٰ گهري ٿو تہ اوهان کي توبه ڪرڻ جي توفيق عطا ڪري ۽ اوهان تي پنهنجي رحمت سان خصوصي توجهہ فرمائي ۽ اوهان کي اهڙن عملن ڪرڻ جي توفيق عطا ڪري جيڪي اوهان جي سعادت جا باعث بنجن. "وَيُرِيْدُ الَّذِيْنَ يَتَّبِعُوْنَ الشَّهَوَاتِ اَنْ تَمِيْلُوْا مَيْلًا عَظِيْمًا" يعني جيڪي شهوتن جا تابع (يهودي ۽ نصارا) آهن انهن جو ارادو آهي تہ اوهان سڌي راهہ کان صفا ٿڙي وڃو ۽ گمراهيءَ جي واٽ تي هلو ۽ اوهان بہ انهن وانگر غلط نڪاح ڪيو "يُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ يُّخَفِّفَ عَنْكُمْ" الله تعاليٰ جو ارادو آهي تہ اوهان تي هلڪائي ڪري. اڳين امتن واريون سختيون اوهان تان هٽائي ڇڏي. "وَخُلِقَ الْاِنْسَانُ ضَعِيْفًا" ۽ انسان ضعيف پيدا ڪيو ويو آهي جيڪو اڪثر مخلوق جنن، ملائڪن، جبلن وغيره کان ڪمزور آهي. اهو پنهنجن خواهشن ۽ مرغوب شين کان سواءِ رهڻ ۽ صبر ڪرڻ ڏکيو سمجهندو آهي. حضرت امام حسن بصري رضي الله عنہ فرمايو آهي تہ المراد بضعف الانسان انه خلق من ماءِ مهين (١) يعني انسان جي ضعيف تي پيدا ٿيڻ مان مراد آهي تہ اهو خراب پاڻيءَ (منيءَ) مان پيدا ڪيو ويو آهي ۽ شام ملڪ جي مشهور علامہ جمال الدين لکيو آهي تہ "خُلِقَ الْاِنْسَانُ ضَعِيْفًا" جو مطلب آهي تہ انسان پنهنجي خواهشات جي اسباب کي دفع ڪرڻ ۽ عورتن جي جدائيءَ تي صبر ڪرڻ کان عاجز آهي ان جي ڪري ضعيف آهي. (٢)

(١) تفسير الامام الحسن البصري ص٢٧١ جزءُ اول
(٢) تفسيرالقاسمي ص١١۴ جلد ٣ جزء٥

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْكُلُوْۤا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ اِلَّاۤ اَنْ

اي ايمان وارؤ! نہ کائو مال پنهنجا پاڻ ۾ غلط نموني سان مگر هيئن جو

تَكُوْنَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْكُمْ ۗ وَلَا تَقْتُلُوْۤا اَنْفُسَكُمْ ۗ اِنَّ اللّٰهَ

هجي واپار خوشيءَ سان اوهان مان ۽ نہ کهو (هڪٻئي کي) پنهنجو پاڻ ۾ بيشک الله

كَانَ بِكُمْ رَحِيْمًا ﴿۲۹﴾ وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ عُدْوَانًا وَّظُلْمًا فَسَوْفَ

آهي اوهان سان مهربان ۽ جيڪو ڪندو اهو ڪم حد کان لنگهڻ ۽ ظلم سان پوءِ جلد

نُصْلِيْهِ نَارًا ۗ وَكَانَ ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ يَسِيْرًا ﴿۳۰﴾ اِنْ تَجْتَنِبُوْا

پهچائيندا سون ان کي باهہ ۾ ۽ آهي اهو الله جي اڳيان آسان جيڪڏهن بچندؤ

كَبَآئِرَ مَا تُنْهَوْنَ عَنْهُ نُكَفِّرْ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ وَنُدْخِلْكُمْ

وڏن گناهن انهن کان جو روڪيا ٿا وڃو انهن کان تہ مٽائي ڇڏينداسون اوهان کان برايون اوهان جون ۽ داخل ڪنداسون اوهان کي

مُّدْخَلًا كَرِيْمًا ﴿۳۱﴾ وَلَا تَتَمَنَّوْا مَا فَضَّلَ اللّٰهُ بِهٖ بَعْضَكُمْ عَلٰى

جاءِ عزت واريءَ ۾ ۽ نہ خواهش ڪيو ان جي جو فضيلت بخشي الله ان سان هڪڙن اوهان جن کي

بَعْضٍ ۗ لِلرِّجَالِ نَصِيْبٌ مِّمَّا اكْتَسَبُوْا ۗ وَلِلنِّسَآءِ نَصِيْبٌ مِّمَّا

ٻين تي مردن لاءِ حصو آهي ان مان جيڪي ڪمايائون ۽ عورتن جي لاءِ حصو آهي ان مان

اكْتَسَبْنَ ۗ وَاسْئَلُوا اللّٰهَ مِنْ فَضْلِهٖ ۗ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُلِّ شَيْءٍ

جو ڪمايائون ۽ گهرو الله کان سندس فضل بيشک الله آهي هر شيءِ جي

عَلِيْمًا ﴿٣٢﴾ وَلِكُلٍّ جَعَلْنَا مَوَالِيَ مِمَّا تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْاَقْرَبُوْنَ ۭ

چاڻ رکندڙ. ۽ هرهڪ لاءِ ڪيا اسان وارث ان مان جو ڇڏي ويا پيءُ ماءُ ۽ مائٽ

وَالَّذِيْنَ عَقَدَتْ اَيْمَانُكُمْ فَاٰتُوْهُمْ نَصِيْبَهُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٰى

۽ اهي جو مضبوط ٿيا (انهن سان) عهد اوهان جا پوءِ انهن کي ڏيو ڀاڱو سندن بيشڪ الله آهي

كُلِّ شَيْءٍ شَهِيْدًا ﴿٣٣﴾ ع

هر شيءِ تي حاضر

## تفسير

سورت جي شروعات ۾ سيني انسانن جو هڪ پيءُ ماءُ مان پيدا ٿيڻ جو ذڪر ڪري عام انسانن جي حقن جي حفاظت جو ذڪر ڪيو ويو پوءِ يتيمن ۽ عورتن جي حقن جو تفصيلي بيان ٿيو. وري ورثي جا احڪام آڻي يتيمن ۽ عورتن کان سواءِ ٻين مائٽن جي بہ حقوق جي ادا ڪرڻ جو تاڪيد ڪيو ويو. ان کان بعد نڪاح جا احڪام آيا تہ ڪهڙيءَ عورت سان نڪاح حلال ۽ ڪهڙيءَ سان حرام آهي چوتہ نڪاح هڪ اهڙو معاملو ۽ معاهدو آهي جنهن سان عورت جي جان ۽ مال ۾ تصرف ڪرڻ جو مڙس کي حق ملي ٿو ۽ هنن آيتن ۾ عام انسانن جي جان ۽ مال جي حفاظت ۽ ان ۾ ڪنهن بہ ناجائز تصرف ڪرڻ کان روڪيندي حڪم ڪيو ويو آهي تہ "يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْكُلُوْۤا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ" يعني ايمان وارؤ! پنهنجا مال پاڻ ۾ باطل طريقي سان نہ کائو. "اموالکم" لفظ جا ٻہ مقصد آهن ١- هڪ تہ امت جي ڪنهن بہ فرد جو مال پرائو نہ پر پنهنجو سمجهي سنڀاليو ان ۾ ناجائز تصرف ڪرڻ، ڌوڪي ۽ فريب سان هضم ڪرڻ چڻ تہ پنهنجو پاڻ سان ڌوڪو ڪرڻ آهي اهو ڪڏهن بہ نہ ڪيو ٢- ٻيو تہ ڪوبہ ماڻهو پنهنجو مال بہ ناجائز طريقي مثلاً گناهہ جي ڪم يا

ع ٥ ٢/٨

اسراف وغيره سان نه کائي اهو به هن آيت جي حڪم سان جائز ناهي. (١) آيت ۾ "لا تاڪلوا" (نه ڪائو) مان مراد عام محاوره جي لحاظ سان هيءَ آهي ته پرائي مال ۾ ناجائز طريقي سان تصرف نه ڪيو پوءِ اهو کائڻ پيئڻ جو هجي يا پائڻ وغيره جو. "بِالْبَاطِلِ" حضرت ابن عباس رضي الله عنهما فرمايو آهي ته بالباطل مان مراد آهي ظلم، غصب، ڪوڙي شاهدي، ڪوڙي قسم وغيره سان پرائو مال کائڻ. (٢) ۽ حضرت ابن مسعود ۽ جمهور اصحابن رضي الله عنهم جو فرمان آهي ته "بِالْبَاطِلِ" سيني ناجائز ۽ ممنوع طريقن چوري، جوا، رشوت، وياج ۽ سيني فاسد معاملن تي حاوي آهي. (٣) ۽ جيڪي تفصيلات ناجائز واپار ۽ اجوري تي ڏيڻ وغيره جا رسول اڪرم صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن حديثن ۾ بيان فرمايا آهن اهي درحقيقت قرآن پاڪ جي هن حڪم جي تشريح آهن ان جي ڪري اهي سيئي هڪ حيثيت سان قرآن پاڪ جا احڪام آهن "اِلَّآ اَنۡ تَكُوۡنَ تِجَارَةً عَنۡ تَرَاضٍ مِّنۡكُمۡ" يعني ٻين جو اهو مال حرام ناهي جيڪو واپار ذريعي هڪ ٻئي جي رضامندي سان حاصل ڪيو وڃي. تجارت کان سواءِ اوڏاري طور بخشش، صدقي ۽ ميراث وغيره سان حاصل ٿيندڙ مال به جائز آهي پر عام مشهور ۽ معروف صورت واپار آهي ان جي ڪري ان جو ذڪر ڪيو ويو آهي.

## تجارت جي ڀلائي ۽ برڪت

ڄاڻ گهرجي ته گذران جي سلسلي ۾ انسان جيڪي ذريعا اختيار ڪري ٿو انهن ۾ تجارت، واپار ۽ محنت سڀ کان سٺو ذريعو آهي. حضور صلى الله عليه وسلم جن جي حديثن ۾ شرعي طريقي سان واپار ڪندڙن جي تعريف ۽ ناجائز طريقي سان واپار ڪندڙن جي مذمت آئي آهي. انهن حديثن مان ڪجهه حديثون هتي لکجن ٿيون.

### حديث ١

رافع بن خديج کان روايت آهي ته حضور صلى الله عليه وسلم جن جي خدمت ۾ عرض ڪيو ويو ته يَارَسُوۡلَ اللّٰهِ! اَيُّ الۡكَسۡبِ اَطۡيَبُ؟ قَالَ عَمَلُ الرَّجُلِ بِيَدِهٖ وَكُلُّ

(١) تفسير البحر المحيط ص٢٣١ جلد٣ (٢) تفسير ابن عباس ص٦٩
(٣) البحر المحيط ص٢٣٠- ٢٣١ ج٣

بَيْعٍ مَّبْرُوْرٍ- رواه احمد- يعني اي الله جا رسول! (صلي الله عليہ وسلم) كمائي جي طريقن مان كهڙو طريقو پاڪ صاف آهي؟ فرمايائون تہ "مرد جي هٿ جي كمائي ۽ هر پاڪ صاف واپار."

## حديث ٢

ترمذي ۽ حاكم حضرت ابوسعيد خدري رضي الله عنہ كان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو "اَلتَّاجِرُ الصَّدُوْقُ الْاَمِيْنُ مَعَ النَّبِيّٖنَ وَالصِّدِّيْقِيْنَ وَالشُّهَدَاءِ" يعني سچو، امانت دار واپاري (قيامت ۾) نبين (عليهم الصلواة والسلام) ۽ صديقن ۽ شهيدن سان گڏ هوندو.

## حديث ٣

اصبهانيءَ حضرت معاذبن جبل رضي الله عنہ كان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو "اِنَّ اَطْيَبَ الْكَسَبِ كَسَبُ التُّجَارِ الَّذِيْنَ اِذَا حَدَّثُوْا لَمْ يَكْذِبُوْا وَاِذَا وَعَدُوْا لَمْ يُخْلِفُوْا وَاِذَا اؤْتُمِنُوْا لَمْ يَخُوْنُوْا وَاِذَا اشْتَرَوْا لَمْ يُذَمُّوْا وَاِذَا بَاعُوْا لَمْ يُمْدَحُوْا وَاِذَا كَانَ عَلَيْهِمْ لَمْ يَمْطُلُوْا وَاِذَا كَانَ لَهُمْ لَمْ يُعَيِّرُوْا" يعني پاڪ صاف كمائي انهن واپارين جي آهي جو جڏهن ڳالهہ كندا تہ كوڙ نہ هڻندا ۽ جڏهن وعدو كندا تہ وعدي برخلافي نہ كندا ۽ جڏهن امانت رکيا ويندا تہ خيانت نہ كندا ۽ جڏهن كا شيءِ خريد كندا تہ جهڻكيا نہ ويندا ۽ جڏهن وكڻندا تہ تعريف نہ كيا ويندا ۽ جڏهن انهن تي (كنهن جو حق حساب) هوندو تہ ادا كرڻ ۾ دير نہ كندا ۽ جڏهن سندن حق كنهن ڏانهن هوندو تہ ان كي عيب نہ لڳائيندا.

## حديث ۴

احمد ۽ حاكم حضرت عبدالرحمٰن بن شبل كان روايت آندي آهي تہ مون رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن كان ٻڌو پاڻ فرمايائون تہ "اَلتُّجَّارُ هُمُ الْفُجَّارُ قَالُوْا يَارَسُوْلَ اللهِ! اَلَيْسَ قَدْ اَحَلَّ اللهُ الْبَيْعَ؟ قَالَ بَلٰى وَلٰكِنَّهُمْ يَحْلِفُوْنَ فَيَاثِمُوْنَ وَيُحَدِّثُوْنَ فَيَكْذِبُوْنَ" يعني واپاري ئي فاجر (گنهگار) آهن عرض كيو ويو تہ اي الله تعالىٰ جا رسول! (صلي الله عليڪ وسلم) ڇا الله تعالىٰ واپار كي حلال نہ كيو آهي؟ فرمايائون تہ "هائو پر اهي (كوڙا) قسم كڻي گناهہ ٿا كن ۽ ڳالهيون كري كوڙ ٿا هڻن.

## حديث ٥

حاڪم صحيح سند سان حضرت رفاعہ بن رافع رضي الله عنہ ڪان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "اِنَّ التُّجَارَ يُبْعَثُوْنَ يَوْمَ الْقِيَامَةِ فُجَّارًا اِلَّا مَنِ اتَّقَى اللّٰهَ وَبَرَّ وَصَدَّقَ" يعني واپاري قيامت جي ڏينهن فاجر (گنهگار) ڪري اٿاريا ويندا. مگر جيڪي الله ڪان ڊڄندا ۽ نيڪي ڪندا ۽ سچ ڳالهائيندا (اهي انهن ۾ داخل نہ هوندا)

"وَلَا تَقْتُلُوْا اَنْفُسَكُمْ" ۽ پنهنجو پاڻ کي قتل نہ ڪيو. هن ۾ مسلمانن کي هڪ ٻئي جو احساس ڏياريو ويو آهي تہ جيڪڏهن اوهان ڪنهن مسلمان ڀاءُ کي ڪنو تہ اهو دراصل اوهان پاڻ کي ڪنو ڇوتہ ان جو نقصان اوهان جو نقصان آهي اوهان جي ٿي هڪ مسلمان ڀيڻ بيوهہ ٿيندي، اوهان جي ٿي ملت ۽ دين رکڻ وارا ٻچا يتيم ٿيندا، اوهان جي مسلم معاشره جو ٿي هڪ گهر غم ۽ ڏک جي انڌيرن ۾ ٻڏي ويندو علامہ بيضاوي هن جي معنىٰ ۾ هڪ عجيب نڪتي ڏي اشارو ڪيو آهي. لکيو اٿس تہ: لا تقتلوا انفسكم باقتراف مايذ للها ويرديها فانه القتل الحقيقى للنفس (١) يعني اهڙيون مذموم حرڪتون ۽ ذليل عمل نہ ڪيو جيڪي اوهان کي ماڻهن جي نگاهن ۾ خوار ۽ رسوا ڪن ڇوتہ اها ذلت ۽ رسوائي اوهان جي نفسن جي حقيقي هلاڪت ۽ تباهي آهي. ۽ نبوي حديثن علىٰ قائلها الصلوات والتسليمات جي روشنيءَ ۾ مفسرن جو اتفاق آهي تہ خودڪشي (پاڻ کي پاڻهي مارڻ) بہ ان ۾ داخل آهي.

## خودڪشي حرام آهي

جيئن محبوب معظم، نبي مڪرم صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن جي هنن پاڪ حديثن مان ثابت آهي.

## حديث ١

بخاري ۽ مسلم حضرت ابوهريره رضي الله تعالىٰ عنہ ڪان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "مَنْ تَرَدّٰى مِنْ جَبَلٍ فَقَتَلَ نَفْسَهٗ فَهُوَ فِيْ نَارِ جَهَنَّمَ يَتَرَدّٰى فِيْهَا خَالِدًا مُّخَلَّدًا فِيْهَا اَبَدًا وَمَنْ تَحَسّٰى سَمًّا فَقَتَلَ نَفْسَهٗ فَسَمُّهٗ

(١) بيضاوي ڪامل ص١٠٩-١١٠

فِيْ يَدِهٖ يَتَحَسَّاهُ فِيْ نَارِ جَهَنَّمَ خَالِدًا مُخَلَّدًا فِيْهَا اَبَدًا وَمَنْ قَتَلَ نَفْسَهٗ بِحَدِيْدَةٍ فَحَدِيْدَتُهٗ فِيْ يَدِهٖ يُجَآءُ بِهَا فِيْ بَطْنِهٖ فِيْ نَارِ جَهَنَّمَ خَالِدًا مُخَلَّدًا فِيْهَا اَبَدًا" يعني جنهن جبل تان ڪري پنهنجي پاڻ کي قتل ڪيو اهو جهنم جي باهہ ۾ هوندو هميشہ هميشہ ان ۾ ڪرندو رهندو ۽ جنهن زهر پي پاڻ کي قتل ڪيو اهو زهر ان جي هٿ ۾ هوندو هميشہ هميشہ جهنم جي باهہ ۾ پيئندو رهندو ۽ جنهن پاڻ کي لوهي اوزار سان قتل ڪيو تہ اهو لوهي اوزار هٿ ۾ هوندس ان کي ان جي پيٽ ۾ هڻي جهنم جي باهہ ۾ آندو ويندو هميشہ هميشہ ان ۾ هوندو.

## حديث ٢

بخاري ۽ مسلم حضرت جندب بن عبدالله رضي الله تعالیٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله تعالیٰ عليہ وسلم جن فرمايو: اڳين امتن ۾ هڪ شخص جو هٿ ڦٽيل هو ۽ ان ايذاء کان تنگ ٿي ڇري ڪٽي پنهنجو اهو ڦٽيل هٿ ڪٽي ڇڏيو، پر ان جو رت جو نہ وهيو تہ مري پيو. الله تعالیٰ فرمايو تہ "منهنجي ٻانهي تڪڙ ڪئي آهي مون ان تي بهشت حرام ڪري ڇڏيو آهي." (١)

## فائدو

هن آيت جي شروعات ۾ عام انسانن جي مالي حقوق ۽ انهن جي حفاظت جو بيان ڪيو ويو. "لَا تَقْتُلُوْا اَنْفُسَكُمْ" ۾ انهن جي جاني حقوق جو بيان آهي مالي حقوق جي حفاظت جو بيان ان جي ڪري اڳ ۾ آندو ويو آهي جو ان ۾ ظلم، زيادتي، حقوق ادا ڪرڻ ۾ ڪوتاهي، سستي ۽ غفلت عام هوندي آهي. باقي قتل ۽ خونريزي جيتوڻيڪ سخت گناهہ آهي پر عادتاً اهو گهٽ واقع ٿيندو آهي. ان جي ڪري انهن کي پوءِ ذڪر ڪيو ويو آهي.

"اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُمْ رَحِيْمًا" بيشڪ الله اوهان تي مهربان آهي جيڪو اوهان جي فائدي ۽ حفاظت لاءِ اهي حڪم جاري ڪري رهيو آهي. "وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ عُدْوَانًا وَّظُلْمًا فَسَوْفَ نُصْلِيْهِ نَارًا" يعني قرآني هدايات جي هوندي جيڪڏهن ڪو ماڻهو زيادتي ۽ ظلم سان اهي ڪم ڪندو جو ڪنهن جو مال ناحق کائي وجي يا ڪنهن کي ناحق قتل ڪري تہ ان کي جلدي جهنم ۾ داخل ڪنداسون. "وَكَانَ ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ

(١) تفسير القاسمي ص١١٦- ١١٧ جلد٣

"يَسِيْرًا" ۽ اهو الله تعالىٰ جي اڳيان آسان ڪم آهي. ڪابہ طاقت ان کي روڪي نہ ٿي سگهي. الله تعالىٰ جيئن بہ ڪري اهو مالڪ آهي سڀ ڪجهہ ڪري سگهي ٿو.

"اِنْ تَجْتَنِبُوْا كَبَآئِرَ مَا تُنْهَوْنَ عَنْهُ نُكَفِّرْ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ وَنُدْخِلْكُمْ مُّدْخَلًا كَرِيْمًا" يعني جيڪڏهن اوهان انهن وڏن گناهن کان جن کان روڪيا ٿا وڃو پاسو ڪندؤ تہ اوهان جون برايون ميٽي اوهان کي عزت واريءَ جاءِ ۾ داخل ڪنداسون.

## فائدو

"تَجْتَنِبُوْا" اجتناب کان ورتل ۽ "كبائر" كبيرة جو جمع ۽ "نكفر" تكفير کان ورتل آهي. ڪنهن اهڙي ڪم کي جنهن جي ڪرڻ لاءِ سڏيندڙ ۽ اسباب موجود هجن پنهنجي ارادي ۽ مرضيءَ سان نہ ڪرڻ کي اجتناب سڏيندا آهن. ڪبيره گناهہ جي متعلق علماءِ دين جا ڪيترائي قول آهن. حضرت علي ۽ حضرت ابن عباس رضي الله عنهما جو فرمان آهي تہ: جنهن بہ گناهہ جي ڪرڻ تي الله تعالىٰ جهنم جي باهہ جو يا غضب يا لعنت يا عذاب جو ذڪر ڪيو آهي اهو ڪبيره گناهہ آهي. (١) علامہ بيضاويءَ لکيو آهي تہ: وڌيڪ ويجهو قول اهو آهي تہ وڏو گناهہ اهو آهي جنهن تي حد مقرر ٿيل آهي يا ان جي لاءِ عذاب جي وعدي جي صراحت آيل آهي. (٢) حضرت علامہ ثناءالله پاني پتيءَ عليہ الرحمه لکيو آهي تہ ڪبيرن گناهن جا ٽي (٣) مرتبا آهن. ١- هڪ اڪبر الڪبائر- وڏن گناهن کان بہ وڏو، اهو الله تعالىٰ سان ڪنهن کي شريڪ بنائڻ آهي ۽ هر اهو حڪم جيڪو الله تعالىٰ جي نبي صلى الله عليہ وسلم جن آندو آهي ۽ اسان وٽ قطعي دليل سان ثابت آهي ان جو انڪار ڪرڻ بہ ان سان شامل آهي پوءِ اهو انڪار جيڪڏهن چٽو ۽ تاويل کان سواءِ هوندو تہ ان کي ڪفر سڏيو ويو آهي ۽ جيڪڏهن تاويل سان هوندو تہ ان کي نفساني خواهش ۽ بدعت سڏيو ويو آهي جيئن رافضين، خارجين، مجسمن ۽ قدرين وغيرهم جا اقوال- ان جي ڪري ئي حضرت علي ۽ حضرت ابن مسعود رضي الله عنهما فرمايو تہ وڏي ۾ وڏا گناهہ هي آهن: الله سان شرڪ ڪرڻ، الله تعالىٰ جي خفيہ تدبير کان امن ۾ رهڻ، الله تعالىٰ جي رحمت کان نااميد رهڻ، جيئن قرآن پاڪ ۾ الله تعالىٰ جو مقدس فرمان آهي "لَا يَاْمَنُ

(١) مظهري ص٢٨٦ جلد ٢ القرطبي ص١٨٩ جلد ٥ (٢) بيضاوي ڪامل ص١١٠

مَكْرَ اللهِ اِلَّا الْقَوْمُ الْخَاسِرُوْنَ" (١) الله جي خفيہ تدبيرن کان امن ۾ صرف خساري وارا ماڻهو رهندا. ٻيو ارشاد آهي "وَمَنْ يَّقْنَطُ مِنْ رَّحْمَةِ رَبِّهٖ اِلَّا الضَّآلُّوْنَ" (٢) ۽ رب جي رحمت کان نااميد صرف گمراهہ رهندا. ٽيون فرمان آهي "اِنَّهٗ لَا يَايْئَسُ مِنْ رَّوْحِ اللهِ اِلَّا الْقَوْمُ الْكٰفِرُوْنَ" (٣) يقيناً الله جي رحمت کان نااميد صرف ڪافر قوم رهندي. ٢- ٻيو مرتبو- وڏن گناهن جو اهو آهي جنهن ۾ ٻانهن جا خونن، مالن ۽ عزتن ۾ حقوق تلف ڪيا تا وڃن. حضرت سفيان ثوري عليہ الرحمہ فرمايو آهي تہ اهي گناهن وارا ظلم جيڪي تنهنجي ۽ ٻين ٻانهن جي وچ ۾ آهن ان کان وڏا آهن جيڪي تنهنجي ۽ الله تعاليٰ جي وچ ۾ آهن. ڇوتہ الله تعاليٰ پاڻ "اَكْبَرُ" سڀن کان وڏو آهي هر شيءِ ان جي بنسبت ننڍي آهي اهو سڀئي گناهہ بخشيندو آهي. سيدنا رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن الله تعاليٰ جي بارگاهہ ۾ دعا گهڻ سيڪاريندي فرمايو "اَللّٰهُمَّ مَغْفِرَتُكَ اَوْسَعُ مِنْ ذُنُوْبِيْ" اي الله! تنهنجي رحمت منهنجي امت جي گناهن کان گهڻو ڪشادي آهي. الله تعاليٰ پاڻ فرمايو آهي "وَرَحْمَتِيْ وَسِعَتْ كُلَّ شَيْءٍ" (۴) ۽ منهنجي رحمت هر شيءِ کان ڪشادي آهي. احمد ۽ حاڪم مومنن جي ماءُ سيده عائشہ رضي الله عنها کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله تعاليٰ عليہ وسلم جن فرمايو تہ الله تعاليٰ وٽ ٽي دفتر آهن. ١- هڪ دفتر ۾ اهي گناهہ آهن، جن ڏانهن الله تعاليٰ ڪو توجهہ نہ ٿو فرمائي. ٻئي دفتر ۾ اهڙا گناهہ آهن جو انهن مان الله تعاليٰ ڪا شيءِ نہ ٿو ڇڏي. ٣- ٽئين دفتر ۾ اهڙا گناهہ آهن جو الله تعاليٰ نہ ٿو بخشي. پوءِ جنهن دفتر وارا گناهہ الله نہ ٿو بخشي سو الله تعاليٰ سان شرڪ ڪرڻ آهي ۽ پر جنهن دفتر ڏانهن الله تعاليٰ توجهہ نہ ٿو فرمائي اهو ٻانهي جو پاڻ تي پاڻهي ظلم ڪرڻ آهي جيئن نماز ڇڏڻ يا روزا رکڻ. الله تعاليٰ جنهن کي گهري ٿو تہ بخشي ٿو ۽ درگذر فرمائي ٿو ۽ پر جيڪو دفتر الله نہ ٿو ڇڏي، اهي ٻانهن جا هڪ ٻئي سان ظلم ۽ حساب آهن. بغويءَ حضرت انس بن مالڪ رضي الله تعاليٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله تعاليٰ عليہ وسلم جن فرمايو "يُنَادِيْ مُنَادٍ مِّنْ بُطْنَانِ الْعَرْشِ يَوْمَ الْقِيَامَةِ يَا اُمَّةَ مُحَمَّدٍ! (صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ) اِنَّ اللهَ عَزَّوَجَلَّ قَدْ عَفَا عَنْكُمْ جَمِيْعًا اَلْمُؤْمِنِيْنَ وَالْمُؤْمِنَاتِ تَوَاهَبُوا الْمَظَالِمَ وَادْخُلُوا الْجَنَّةَ بِرَحْمَتِيْ" يعني قيامت جي ڏينهن عرش جي اندرئين حصي کان

(١) سورة الاعراف آيت ٩٩ (٢) سورة الحجر آيت ٥۴
(٣) سورة يوسف آيت ٨٧ (۴) سورة الاعراف آيت ١٥۴

سڏيندڙ سڏي چوندو تہ اي (حضرت) محمد (صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم) جا امتيو! الله تعالىٰ اوهان مومنن ۽ مومنياڻين کي معاف ڪري ڇڏيو. باقي پنهنجا ظلم هڪ ٻئي کي بخشي منهنجي رحمت سان جنت ۾ داخل ٿيو.

۽ الله تعالىٰ جي فرمان اِنَّ الَّذِيۡنَ يُؤۡذُوۡنَ اللّٰهَ وَرَسُوۡلَهٗ لَعَنَهُمُ اللّٰهُ فِى الدُّنۡيَا وَالۡاٰخِرَةِ وَاَعَدَّ لَهُمۡ عَذَابًا مُّهِيۡنًا وَالَّذِيۡنَ يُؤۡذُوۡنَ الۡمُؤۡمِنِيۡنَ وَالۡمُؤۡمِنٰتِ بِغَيۡرِ مَا اكۡتَسَبُوۡا فَقَدِ احۡتَمَلُوۡا بُهۡتَانًا وَّاِثۡمًا مُّبِيۡنًا (١) (بيشڪ جيڪي الله ۽ ان جي رسول (صلي الله عليہ وسلم) کي ايذائن ٿا انهن کي دنيا ۽ آخرت ۾ الله لعنت ڪئي آهي ۽ انهن لاءِ خوار ڪندڙ عذاب تيار ڪيو اٿس ۽ جيڪي مومن ۽ مومنياڻين کي انهن جي ڪيل گناهہ کان سواءِ (هروڀرو) ايذائن ٿا انهن بهتان ۽ وڏو گناهہ ڪنيو آهي) ۾ انهن مٿي ذڪر ڪيلن ٻنهي مرتبن ۾ ڪفر ۽ ٻانهن تي ظلم جو بيان آهي. ۽ هن آيت ڪي "لَا تَاۡكُلُوۡۤا اَمۡوَالَكُمۡ بَيۡنَكُمۡ بِالۡبَاطِلِ -وَلَا تَقۡتُلُوۡۤا اَنۡفُسَكُمۡ" کان پوءِ آڻڻ ۾ اهو اشارو آهي تہ ٻانهن جي جانين ۽ مالن تي ظلم ڪرڻ ڪبيرن گناهن ۾ بہ وڏو آهي ۽ جن حديثن ۾ وڏن گناهن جو ذڪر آيل آهي گهٽو ڪري انهن ۾ الله تعالىٰ سان شرڪ ڪرڻ ۽ ٻانهن سان ظلم جو ذڪر آهي. ٣- ٽيون مرتبو- ڪبيرن گناهن مان اهو آهي جن جو تعلق الله تعالىٰ جي حقوق سان آهي جيئن زنا، شراب وغيره- ابن ابي حاتم حضرت ابن عمر رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي تہ کانئس شراب جي باري ۾ پڇيو ويو. ان فرمايو تہ مون پاڻ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن کان شراب جي باري ۾ پڇيو پاڻ فرمايائون تہ "هِيَ اَكۡبَرُ الۡكَبَائِرِ وَاُمُّ الۡفَوَاحِشِ مَنۡ شَرِبَ الۡخَمۡرَ تَرَكَ الصَّلٰوةَ وَوَقَعَ عَلٰى اُمِّهٖ وَعَمَّتِهٖ وَخَالَتِهٖ" يعني شراب وڏن گناهن ۾ بہ وڏو گناهہ ۽ براين جو اصل آهي جنهن شراب پيتو تہ نماز ڇڏي ڏيندو ۽ ماءُ ۽ پڦيءَ ۽ ماسيءَ سان زنا ڪندو. اهڙي روايت عبد بن حميد حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان بہ آندي آهي.

## قلب جي صفائيءَ جي اهميت

علامہ پاني پتي عليہ الرحمۃ مٿي ذڪر ڪيل ٽن مرتبن کان پوءِ لکيو آهي تہ سيني گناهن جو اصل قلب جي قساوت (ڪٺيل هجڻ) آهي جيڪا الله تعالىٰ کان غفلت ۽ نفس جي رذيل حرڪتن، درندن ۽ حيوانن وارين شهوتن ڏي

(١) سورة الاحزاب آيت ٥٧- ٥٨

ڇڪيندڙ ڳالهين جو سبب آهي سيدنا رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو آهي ته "اِنَّ فِي الْجَسَدِ لَمُضْغَةً اِذَا صَلُحَتْ صَلُحَ الْجَسَدُ كُلُّهٗ وَاِذَا فَسَدَتْ فَسَدَ الْجَسَدُ كُلُّهٗ اَلَا وَهِيَ الْقَلْبُ" يعني بلاشبه جسم ۾ هڪ ٽڪرو آهي جڏهن صالح رهندو ته سڄو جسم صالح رهندو ۽ جڏهن خراب ٿيندو ته سڄو جسم خراب ٿيندو. خبردار ۽ اها دل آهي. جاڻڻ گهرجي ته انهيءَ حضور قلب ۽ نفس جي صفائيءَ کان سواءِ گناهن کان بچڻ جو تصور ئي نه ٿو ڪري سگهجي ۽ اهو دائمي حضور ۽ صفائي وري الله تعالىٰ جي طرفان ٻانهي کي جذب ڪرڻ سان حاصل ٿيندا آهن جيڪي مشائخ جي واسطي سان ملندا آهن. فعليك بالتثبت باذيا لهم فهم قوم لا يشقىٰ جليسهم ولا يخاب انيسهم (١) يعني انهن مشائخ (الله وارن) جي دامن کي مضبوطيءَ سان چنبڙي پؤ. اهي اهڙي جماعت آهن جو انهن سان مجلس ڪرڻ وارو بدبخت نه هوندو ۽ ساڻن ونڊر ڪرڻ وارو نقصان ۾ نه ويندو.

## تنبيه

بعضي بزرگن جي فرمان: ان العبد يبلغ درجة لا يضره ذنب عمله (ٻانهو اهڙي مقام کي پهچي ٿو جو ان کي سندس عمل وارو گناهه نقصان نه ٿو ڏي) جو مطلب جاهل، بي دين، گمراهه، نالي جا فقير ۽ صوفي سڏائڻ وارا اهو وٺندا آهن ته ان درجي کي پهچڻ کان پوءِ انهن تي ڪا به شرعي پابندي ناهي ۽ انهن لاءِ حرام ڪيل شيون به حلال آهن. العياذبالله ائين چوڻ ۽ اهو عقيدو رکڻ ڪفر آهي. مٿئين قول جا به جواب آهن ١- هڪ ته قرآن ڪريم ۽ نبوي حديثن علىٰ قائلها الصلواة والتسليمات جي روشنيءَ ۾ انسان کي مرڻ تائين الله تعالىٰ جي عبادت ۽ شرعي تڪليفون برداشت ڪرڻ فرض آهن ۽ قرآن پاڪ ۽ حديث جي مقابلي ۾ ڪنهن به بزرگ جي قول کي ڪا اهميت ناهي. ٢- ٻيو ته مٿئين قول جو مطلب اهو ناهي جيڪو انهن بي دينن بلڪ دين جي دشمنن سمجهيو آهي پر ان جي مراد آهي ته ٻانهو قلب جي صفائيءَ ۽ نفس جي تزڪيي کانپوءِ جڏهن دائمي حضور جو صاحب ٿو بڻجي ته ان کان هرويرو گناهه صادر نه ٿيندو آهي ۽ جيڪڏهن ڪو ننڍو يا وڏو گناهه ٿي پوندو آهي ته اهو ان کي وڏو سمجهي ايترو پشيمان ۽ پريشان ٿيندو آهي جڻ ته سندس مال، جان

(١) تفسير مظهري ص٢٨٦ کان ٢٩٠ جلد٢

اهل ۽ عيال سڀ هلاڪ ٿي ويو ۽ اهڙي طرح روئي، رڙي، دل جي خلوص سان سچي توبه ڪندو آهي جو ايزدي فرمان "اُولٰٓئِکَ یُبَدِّلُ اللّٰہُ سَیِّاٰتِھِمْ حَسَنَاتٍ" (الله انهن جون برايون نيڪين سان بدلائيندو آهي. گناهن جي جاءِ تي نيڪيون لکرائيندو آهي) جي مطابق مٿس رحمت نازل ٿيندي ۽ سندس درجا بلند ٿيندا آهن ۽ اهو گناهه ان کي نقصان نه ڏيندو آهي. مٿئين عبارت جو صحيح ۽ اصل مقصد اهو آهي ان کي ذهن نشين ڪيو. گمراهن جي صحبت ۾ اچي گمراهه نه ٿيو. هر حال ۽ هر صورت ۾ شريعت پاڪ تي عمل ڪيو ۽ شرعي حدن کان لنگهي نه وڃو. شريعت کي ڇڏڻ نهايت بدبختي ۽ شقاوت آهي. نيڪ بخت انسان پنهنجي مالڪ جل جلاله ۽ محبوب نبي صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جي احڪام جي خوشيءَ سان اطاعت ۽ اتباع ڪندا آهن ۽ مرڻ تائين پائبند رهندا آهن.

## فائدو

مذڪوره آيت مان ثابت ٿيوته گناهه ٻه قسم آهن. ١- ڪبيرا ٢- صغيرا. ڪبيرا اهي آهن جن کان الله تعالىٰ ۽ ان جي پياري پيغمبر عليه الصلواة والسلام جن روڪيندي ان جي ڪندڙ تي دنيا ۾ حد ۽ آخرت ۾ جهنم جي باهه جي عذاب يا لعنت جو ذڪر ڪيو آهي. اهي جيڪڏهن الله تعالىٰ جي حقن مان آهن ته سچي توبه ڪرڻ سان معاف ٿيڻ جي قوي اميد آهي ۽ جيڪڏهن ٻانهن جا حقوق آهن ته انهن کي سندن حق ادا ڪرڻ يا انهن کان معاف ڪرائڻ سان معاف ٿيندا. ٢- صغيرن جي معاف ڪرڻ جو به ڪبيرن کان بچڻ ۽ پرهيز ڪرڻ سان الله تعالىٰ قرآن ڪريم ۾ وعدو ڪيو آهي جيئن مذڪوره آيت ۾ آهي ته "جيڪڏهن منع ڪيلن وڏن گناهن کان پاسو ڪندؤ ته اوهان جا سَیِّاٰتِ (ننڍا ننڍا) گناهه ميٽي ڇڏينداسون. ٻيءَ آيت ۾ آهي: اَلَّذِیْنَ یَجْتَنِبُوْنَ کَبٰٓئِرَ الْاِثْمِ وَالْفَوَاحِشَ اِلَّا اللَّمَمَ اِنَّ رَبَّکَ وَاسِعُ الْمَغْفِرَۃِ" (١) يعني جيڪي ٻانها ننڍن کان سواءِ وڏن گناهن ۽ بيحيائين کان پاسو ڪن ٿا بيشڪ تنهجو رب ڪشاديءَ مغفرت وارو آهي يا جيئن مسلم ۽ ترمذيءَ حضرت ابوهريره رضي الله عنه کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "اَلصَّلَوَاتُ الْخَمْسُ وَالْجُمُعَۃُ اِلَی الْجُمُعَۃِ وَرَمَضَانُ اِلٰی رَمَضَانَ مُکَفِّرَاتٌ لِّمَا بَیْنَھُنَّ اِذَا اجْتَنَبْتَ الْکَبَآئِرَ" (٢) يعني جيستائين وڏن گناهن کان پاسو ڪندين ته پنج نمازون ۽ هڪ جمعو ٻئي جمعي تائين ۽ هڪ رمضان ٻئي رمضان

(١) سورة النجم آيت ٣٢ (٢) ڪتاب الڪبائر للامام الذهبي ص٦

تائين وچ وارن (ننڍن گناهن) کي ميٽيندڙ آهن. ان مان ثابت ٿيو تہ وضو، نماز وغيره نيڪ عملن جي ذريعي جيڪو گناهہ لهڻ جو حديثن وغيرها ۾ ذڪر آيو آهي ان مان مراد ننڍا گناهہ آهن ۽ صالح عمل انهن جي ميٽڻ لاءِ ذريعو آهن مگر ياد رکڻ گهرجي تہ ننڍا گناهہ بہ گناهہ آهن ننڍا صرف وڏن جي نسبت سان آهن پر انهن کي ننڍو سمجهي ڪرڻ نہ گهرجي ڇوتہ ننڍي گناهہ کي جيڪڏهن ننڍو سمجهيو ويندو تہ اهو بہ وڏو ٿي ويندو. جنهن جو مثال ننڍي وڇونءَ ۽ وڏي وڇونءَ وارو يا باهہ جي ننڍي ٽانڊي ۽ وڏي ٽانڊي وارو آهي ڇا ڪوبہ عقلمند گهرندو تہ وڏو وڇون ڏنگ نہ هڻي ننڍو ڀلي هڻي يا وڏو ٽانڊو گهر تي نہ پوي، ننڍو ڀلي پوي. الله تعالیٰ جي پيارن ٻانهن فرمايو آهي تہ هرهڪ گناهہ ڪفر جو قاصد آهي جيڪو انسان کي ڪافرن وارن ڪمن ۽ عادتن ڏي سڏي ٿو. سيده عائشہ رضي الله تعالیٰ عنها جو فرمان آهي تہ "جڏهن انسان الله تعالیٰ جو بي فرمان ٿيندو آهي تہ ان جا تعريف ڪندڙ بہ برايون بيان ڪندڙ ۽ دوست بہ دشمن ٿيندا آهن گناهن کان بي فڪر رهڻ تباهيءَ جو سبب ٿيندو آهي.

## ڪبيرا گناهہ ڪيترا آهن؟

علماءِ ڪرام ان جا مختلف عدد لکيا آهن علامہ شمس الدين ذهبيءَ ڪتاب الڪبائر ۾ ستر (٧٠) ڪبيرا گناهہ ذڪر فرمايا آهن ۽ علامہ ابن حجر مڪي ڪتاب الزواجر ۾ چار سؤ ستهٺ (٤٦٧) ذڪر فرمايا آهن. حضرت ابن عباس رضي الله عنهما وٽ ڪنهن ماڻهوءَ ڪبيرن گناهن جو تعداد ست بيان ڪيو تہ پاڻ فرمايائون تہ ست نہ پر ست سؤ (٧٠٠) چيا وڃن تہ بہ مناسب آهي. (١) حضور عليہ الصلواة والسلام جن مختلف مقامات ۾ حالات جي مناسبت سان ڪيترن گناهن جو ڪبيرو هجڻ بيان فرمايو آهي. ڪٿي ٽي، ڪٿي ڇهہ، ڪٿي ست، ڪٿي اجان بہ زياده، ان جي ڪري امت جي علماء سمجهيو تہ ڪبيرا گناهہ هڪ عدد ۾ منحصر ناهن ۽ نہ سمجهڻ گهرجن. نبي ڪريم صلی الله عليہ وسلم جن ڪيترين حديثن ۾ ڪبيرن گناهن کان بچڻ لاءِ ارشاد فرمايو آهي جن مان ڪجهہ هتي لکجن ٿيون.

### حديث ١

بخاريءَ ۽ مسلم حضرت عبدالله بن عمر رضي الله عنهما کان روايت

(١) معارف القرآن ص٣٨٤ ج٢

آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو "اَلْكَبَائِرُ اَلْاِشْرَاکُ بِاللّٰهِ وَعُقُوقُ الْوَالِدَيْنِ وَقَتْلُ النَّفْسِ وَالْيَمِيْنُ الْغَمُوْسُ" يعني وڏا گناهہ هي آهن. الله سان ڪنهن کي شريڪ بنائڻ، والدين جي بي فرماني ڪرڻ، ناحق قتل ڪرڻ ۽ ڪوڙو قسم کڻڻ ۽ ابن مردويہ واريءَ حضرت انس رضي الله عنہ کان آندل روايت ۾ هي وڌيڪ آهن "وَقَذْفُ الْمُحْصَنَةِ وَاَكْلُ مَالِ الْيَتِيْمِ وَاَكْلُ الرِّبٰوا وَالْفِرَارُ عَنِ الزَّحْفِ" پاڪدامن عورت کي گار ڏيڻ، يتيم جو مال کائڻ ۽ وياج کائڻ ۽ جنگ کان پٺي ڏئي ڀڄڻ.

## حديث ٢

بخاري ۽ مسلم حضرت ابوهريره رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "اِجْتَنِبُوا السَّبْعَ الْمُوْبِقَاتِ قَالُوْا يَا رَسُوْلَ اللّٰهِ وَمَا هُنَّ؟ قَالَ اَلشِّرْکُ بِاللّٰهِ وَالسِّحْرُ وَقَتْلُ النَّفْسِ الَّتِيْ حَرَّمَ اللّٰهُ اِلَّا بِالْحَقِّ وَاَكْلُ الرِّبٰوا وَاَكْلُ مَالِ الْيَتِيْمِ وَالتَّوَلِّيْ يَوْمَ الزَّحْفِ وَقَذْفُ الْمُحْصَنٰتِ الْمُؤْمِنٰتِ الْغٰفِلٰتِ (١) يعني ستن هلاڪ ڪندڙن شين کان پاسو ڪيو. اصحابن عرض ڪيو تہ يارسول الله اهي ڪهڙيون آهن؟ فرمايائون تہ: الله سان شرڪ ڪرڻ، جادو ڪرڻ، ناحق قتل ڪرڻ، وياج کائڻ، يتيم جو مال کائڻ، جنگ جي ڏينهن پٺي ڏئي ڀڄڻ ۽ پاڪدامن ايمان وارين، بي خبر عورتن کي گار ڏيڻ.

"وَنُدْخِلْكُمْ مُّدْخَلًا كَرِيْمًا" ۽ اوهان کي عزت واريءَ سهڻيءَ جاءِ ۾ داخل ڪنداسون.

اَلرِّجَالُ قَوّٰمُوْنَ عَلَى النِّسَآءِ بِمَا فَضَّلَ اللّٰهُ بَعْضَهُمْ عَلٰى

مرد انتظام سنڀاليندڙ آهن عورتن تي سببان ان جي جو فضيلت ڏني الله هڪڙن کي انهن مان

بَعْضٍ وَّبِمَآ اَنْفَقُوْا مِنْ اَمْوَالِهِمْ ۚ فَالصّٰلِحٰتُ قٰنِتٰتٌ حٰفِظٰتٌ

ٻين تي ۽ سببان ان جي جو خرچ ڪيائون مالن پنهنجن مان پوءِ نيڪ عورتون تابعدار آهن حفاظت ڪندڙيون

لِّلْغَيْبِ بِمَا حَفِظَ اللّٰهُ ۚ وَالّٰتِىْ تَخَافُوْنَ نُشُوْزَهُنَّ فَعِظُوْهُنَّ

پرپٺ (مڙسن کان) سببان ان جي جو حفاظت ڪئي الله ۽ اهي عورتون جو ڊڄو ٿا بي فرماني انهن جي کان پوءِ نصيحت ڪيو انهن کي

وَاهۡجُرُوۡهُنَّ فِى الۡمَضَاجِعِ وَاضۡرِبُوۡهُنَّ‌ۚ فَاِنۡ اَطَعۡنَكُمۡ فَلَا

۽ جدا رکو انهن کي بسترن ۾ ۽ ماريو انهن کي پوءِ جيڪڏهن تابعداري ڪن اوهان جي پوءِ نه

تَبۡغُوۡا عَلَيۡهِنَّ سَبِيۡلًا‌ ؕاِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيًّا كَبِيۡرًا ﴿۳۴﴾ وَاِنۡ خِفۡتُمۡ

طلب ڪيو انهن تي (الزام جو) رستو بيشڪ الله آهي مٿاهون - وڏي شان وارو ۽ جيڪڏهن خوف ٿا رکو

شِقَاقَ بَيۡنِهِمَا فَابۡعَثُوۡا حَكَمًا مِّنۡ اَهۡلِهٖ وَحَكَمًا مِّنۡ اَهۡلِهَا ۚ اِنۡ

ڦوٽ پوڻ جو انهن ٻنهي ۾ پوءِ کڙو ڪيو هڪ فيصلو ڪندڙ ان مرد جي اهل مان ۽ هڪ فيصلو ڪندڙ ان (عورت) جي اهل مان جيڪڏهن

يُّرِيۡدَاۤ اِصۡلَاحًا يُّوَفِّقِ اللّٰهُ بَيۡنَهُمَا‌ ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيۡمًا خَبِيۡرًا ﴿۳۵﴾

ارادو ڪندا صلح ڪرڻ جو ته توفيق ڏيندو الله انهن ٻنهي کي بيشڪ الله آهي ڄاڻندڙ، خبر رکندڙ

## تفسير

حضرت سعدبن ربيع انصاري رضي الله تعالىٰ عنه پنهنجي گهرواريءَ حبيبه بنت زيد رضي الله عنهما کي ڪنهن گهرو غلطيءَ تان لپاٽ هنئي ۽ ان پنهنجي پيءُ سان شڪايت ڪئي ته اهو پنهنجيءَ نياڻيءَ کي رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي خدمت ۾ دانهن ڏيڻ لاءِ وني آيو ان دانهن ڏني ۽ پاڪ ڪريمن صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو ته پلي پنهنجي مڙس کان قصاص (بدلو) وٺي" اجان حضرت زيد ۽ سندس نياڻي حبيبه دربار مان نڪتا ته پاڪ حبيب صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن ڪين سڏي فرمايو "اِرۡجِعُوۡا هٰذَا جِبۡرِيۡلُ اَتَانِيۡ" موٽي اچو هيءُ جبريل (عليه السلام) مون وٽ پهچي ويو آهي پوءِ اها آيت نازل ٿي (١) جنهن ۾ ارشاد ٿيو ته اَلرِّجَالُ قَوَّامُوۡنَ عَلَي النِّسَآءِ" مرد عورتن جو انتظام سنڀاليندڙ آهن. ڪنهن شيءِ جي ضرورتن مهيا ڪرڻ واري، ان جي نگهباني ۽ حفاظت ڪرڻ واري ۽ ان جي اصلاح ۽ درست رکڻ جي ذميدار

(١) تفسير جمل ص٣٧٨ جلد١

کي عربيءَ ۾ قوام يا قيام يا قيم سڏيندا آهن هن آيت ۾ مردن کي عورتن جي مٿان قوام سڏيو ويو آهي. ڇاڪاڻ گهرجي تہ هر اجتماع جي انتظام لاءِ عقلاً ۽ عرفاً ضروري آهي تہ ان جو ڪو اڳواڻ، سربراهہ، امير يا حاڪم هجي جيئن هر فوج لاءِ ڪمانڊر ۽ هر مملڪت جو سربراه ۽ فرمانروا هوندو آهي ۽ اهي ماتحت رهڻ وارا ان حڪم تي هلندا آهن تيئن گهرو رياست لاءِ بہ هڪ اعليٰ حاڪم جي ضرورت آهي جنهن کي عام عرف ۾ گهر جو وڏو سڏيندا آهن جيڪو گهر جي سڀني ضرورتن جو ذميوار هوندو آهي، رهيو سوال تہ اها ذميداري ڪنهن کي ڏني وڃي ۽ ان ڳري بار کڻڻ جي بهترين صلاحيت ڪنهن ۾ آهي شريعت ۾ گهر ۾ رهڻ وارن مڙس ۽ زال مان اها ذميداري مڙس تي رکي وئي آهي جيئن فرمان ايزدي آهي تہ "مرد عورتن جي مٿان منتظم آهن" سڄو معاملو انهن کي سنڀالڻو آهي. ها- عورتن جي نيڪ مشوري تي عمل ڪرڻ يا ان ڪان مشورو وٺي ڪين راضي ڪرڻ بہ قرآن ڪريم بيان فرمايو آهي. جيئن فرمان مقدس آهي "عَنْ تَرَاضٍ مِّنْهُمَا وَتَشَاوُرٍ" (١) يعني مرد ۽ عورت ٻنهي جي رضا ۽ صلاح سان معاملو حل ڪيو وڃي عورتن سان سهڻي سلوڪ رکڻ جو بہ الله تعالىٰ حڪم ڪيو آهي جيئن فرمان رباني آهي "وَعَاشِرُوْهُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ" (٢) ۽ انهن سان سٺو معاشرو ۽ سلوڪ رکو.

"بِمَا فَضَّلَ اللّٰهُ بِهٖ بَعْضَهُمْ عَلٰى بَعْضٍ" يعني مٿيون حڪم ان جي ڪري آهي جو الله تعالىٰ انهن مان هڪڙن کي ٻين تي فضيلت بخشي آهي. هڪڙا ٻين کان وڌيڪ آهن جيئن الله تعالىٰ هڪ گهر کي پنهنجو بيت (بيت الله) بنايو ۽ ماڻهن جي لاءِ قبلو قرار ڏنو آهي يا بيت المقدس کي خاص فضيلت سان نوازيو آهي تيئن مردن جي منتظم هجڻ ۾ بہ الله تعالىٰ جي حڪمت آهي ۽ اها ٻن وجهن جي ڪري آهي. ١- هڪ وهبي، جنهن ۾ ڪنهن جي عمل جو ڪو دخل ناهي. جيئن مٿي بيان ٿيو. ٢- ٻي ڪسبي، جنهن ۾ ڪمائيءَ ۽ نيڪ عملن جو دخل آهي ۽ ان جو ذڪر "وَبِمَآ اَنْفَقُوْا مِنْ اَمْوَالِهِمْ" ۾ ڪيو ويو آهي. يعني مرد ان جي ڪري جيڪي انهن پنهنجا مال وغيره خرچ ڪيا آهن پنهنجي فطري ۽ ڪسبي برتريءَ جا مستحق آهن جو اهي گهر جا امير ۽ وڏا هجن ۽ ان مان ڪوبہ تنگ نظر ۽ محدود ذهن وارو ائين نہ سمجهي تہ عورت جي ڳچيءَ ۾ مرد جي غلاميءَ جو ڳٽ وڌو ويو آهي ڇوتہ گهرو انتظامي امور کان سواءِ عورتن جا ٻيا بہ حقوق آهن جيڪي مردن تي ائين ئي واجب آهن جيئن مردن جا

(١) سورة بقره آيت ٢٣٣ (٢) سورة نساءِ آيت ١٩

عورتن تي- رباني فرمان آهي "وَلَهُنَّ مِثْلُ الَّذِيْ عَلَيْهِنَّ" ۽ انهن عورتن لاءِ به ائين حقوق آهن جيئن انهن تي (مردن جا) حقوق آهن ۽ الله تعالىٰ جي قرب جا دروازا ٻنهي قسمن جي لاءِ کليل آهن اسلام ئي عورتن جي حقوق کي سنڀاليو آهي. حضرت ابن عباس رضي الله عنهما فرمايو آهي ته "قَوَّامُوْنَ عَلَى النِّسَآءِ" جي معنىٰ امراءُ عليهن يعني مرد عورتن تي امير آهن عورتن کي انهن جي اطاعت ڪرڻ ضروري آهي. ترمذيءَ حضرت ابوهريره رضي الله عنه کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلي الله عليه وسلم جن فرمايو: لَوْ كُنْتُ آمِرُ اَنْ يَّسْجُدَ لِاَحَدٍ لَاَمَرْتُ الْمَرْاَةَ اَنْ تَسْجُدَ لِزَوْجِهَا (١) يعني جيڪڏهن مان ڪنهن کي امر ڪيان ها ته (خدا کان سواءِ) ڪنهن کي سجدو ڪري ته زال کي امر ڪيان ها ته اها مڙس کي سجدو ڪري ها. ايترو مڙس جو زال تي حق آهي.

"فَالصَّالِحَاتُ قَانِتَاتٌ حَافِظَاتٌ لِّلْغَيْبِ" يعني صالح عورتون فرمانبردار آهن جيڪي مرد جي منتظم هجڻ ۽ پنهنجي مٿان حاڪم هجڻ کي تسليم ڪري انهن جي اطاعت ڪندڙ آهن ۽ پرپٺ پنهنجي جان ۽ انهن جي مال ملڪيت جي سنڀال ڪنديون آهن. هتي هڪ مسلمان خاتون کي جن خوبين سان سينگارجڻ ۽ جن پاڪيزه صفتن سان موصوف ٿيڻ گهرجي انهن جو ذڪر ڪهڙن دلنشين ڪلمات سان ڪيو ويو آهي جو ڪنهن به عورت جو ان کان مٿي معيار تصور ئي نه ٿو ڪري سگهجي پاڻ سوچيو ته اسلام هڪ عورت کان ڪهڙين سهڻين صفتن جي توقع رکي ٿو ۽ ان نموني سان ان جي مقام کي ڪيترو بلند ڪري ٿو ۽ ان مرد کان وڌيڪ خوشنصيب ڪير ٿي سگهي ٿو؟ جنهن جي حياتي جي رفيقه، پاڪدامن، گهر ۽ مال جي حفاظت ڪندڙ هجي جيئن مڙس جي روبرو هجي تيئن غائبانه "بِمَا حَفِظَ اللّٰهُ" يعني ان حفاظت ۾ الله تعالىٰ انهن جي مدد ڪري ٿو. ان جي ئي امداد ۽ توفيق سان اهي ذمي کي نباهين ٿيون نه ته نفس ۽ شيطان جا مڪر هر وقت هر انسان مرد توڙي عورت کي گهيري ۾ ڪيو بيٺا آهن ۽ عورتون ته خصوصاً پنهنجي علمي ۽ عملي قوتن ۾ مرد جي به نسبت گهٽيون ڪمزور هونديون آهن. ان جي هوندي انهن جو مضبوط رهڻ الله تعالىٰ جي توفيق ۽ امداد سان آهي. اهڙين عورتن جون ڀلايون حديثن ۾ به آيل آهن جن مان ڪجهه هتي لکجن ٿيون.

---

(١) تفسير القاسمي تحت هذه الاية

# ديندار عورتن جون ڀلايون

## حديث ١

"ابن ابي حاتم حضرت ابوهريرة رضي الله عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله ﷺ جن فرمايو: خَيْرُالنِّسَآءِ اِمْرَأَةٌ اِذَا نَظَرْتَ اِلَيْهَا سَرَّتْکَ وَاِذَا اَمَرْتَهَا اَطَاعَتْکَ وَاِذَا غِبْتَ حَفِظَتْکَ فِیْ نَفْسِهَا وَمَالِکَ" يعني عورتن ۾ ڀلي عورت اها آهي جو جڏهن ان ڏانهن نهاريندين تہ توکي خوشي بخشيندي ۽ جڏهن ان کي امر ڪندين تہ تنهنجي اطاعت ڪندي ۽ جڏهن غائب ٿيندين تہ پنهنجي جان ۽ تنهنجي مال جي حفاظت ڪندي.

## حديث ٢

امام احمد حضرت عبدالرحمٰن بن عوف رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله ﷺ جن فرمايو: "اِذَا صَلَّتِ الْمَرْأَةُ خَمْسَهَا وَصَامَتْ شَهْرَهَا وَحَفِظَتْ فَرْجَهَا وَاَطَاعَتْ زَوْجَهَا قِيْلَ لَهَا : اُدْخُلِی الْجَنَّةَ مِنْ اَیِّ الْاَبْوَابِ شِئْتِ" (١) يعني جڏهن زال پنهنجيون پنج نمازون، پڙهيون ۽ رمضان مهيني ۾ روزا رکيا ۽ پنهنجي اگهڙ جي حفاظت ۽ پنهنجي مڙس جي اطاعت ڪئي تہ ان کي (قيامت جي ڏينهن) چيو ويندو تہ جنت ۾ جنهن بہ دروازي کان گهرين داخل ٿيءُ.

## حديث ٣

هڪ روايت ۾ آهي تہ: جيڪا عورت مڙس جي اطاعت ٿي ڪري ان لاءِ پکي هوا ۾ ۽ مڇيون سمنڊ ۾ ۽ ملائڪ آسمان ۾ ۽ درندا ٻرن ۾ الله تعالىٰ کان مغفرت طلب ڪندا آهن. (٢)

## حديث ۴

مؤمنن جي ماءُ سيده ام سلمہ رضي الله عنها کان روايت آهي تہ مون الله تعالىٰ جي رسول صلى الله عليہ وسلم جن جي خدمت ۾ عرض ڪيو تہ "يَا رَسُوْلَ اللّٰهِ! نِسَآءُ الدُّنْيَا اَفْضَلُ اَمِ الْحُوْرُ؟ فَقَالَ "نِسَآءُ الدُّنْيَا اَفْضَلُ مِنَ الْحُوْرِ" قُلْتُ يَا رَسُوْلَ اللّٰهِ! بِمَ؟ قَالَ "بِصَلَوَاتِهِنَّ وَصِيَامِهِنَّ وَعِبَادَتِهِنَّ وَطَاعَةِ اَزْوَاجِهِنَّ" (٣) يعني يارسول الله! دنيا جون عورتون ڀليون يا حورون؟ فرمايائون تہ: "دنيا جون عورتون حورن کان ڀليون آهن" مون عرض ڪيو تہ ڇا جي ڪري؟ فرمايائون تہ "پنهنجين نمازن، روزن ۽ عبادت

(١) تفسيرالقاسمي تحت هذه الاية (٢) البحرالمحيط ص ٢۴١ ج٣ (٣) ساڳيو حوالو

۽ مڙس جي تابعداري ڪرڻ سان."

مٿي فرمانبردار عورتن جو ذڪرڪري هاڻي مڙسن کان ٽهندڙن عورتن جو ذڪر ڪيو ٿو وڃي. "وَالّٰتِیۡ تَخَافُوۡنَ نُشُوۡزَهُنَّ فَعِظُوۡهُنَّ وَاهۡجُرُوۡهُنَّ فِی الۡمَضَاجِعِ" يعني جن عورتن جي ٽهڻ جو ڊپ اٿو انهن کي نصيحت ڪيو ۽ بسترن کان جدا ڪيو. مقصد ته جيڪڏهن اوهان جون زالون تيز طبع، گندي ذهن واريون آهن جن مان نشوز، نافرماني جو خطرو آهي ته انهن جي اصلاح ۽ سڌارڻ جو پهريون درجو هي آهي ته انهن کي نرميءَ سان سمجهايو. هڪدم غصي ۽ ڪاوڙ کان بيوس ٿي ڪو سخت قدم نه کڻو ۽ جيڪڏهن سمجهائڻ مؤثر ثابت نه ٿئي ته پوءِ انهن کان بسترو جدا ڪري سمهو ۽ پيار ۽ محبت واريون ڳالهيون ڪرڻ بند ڪري ڇڏيو تانته انهن کي مڙس جي علحدگيءَ ۽ جدا سمهڻ جو احساس ٿئي ۽ جنهن عورت ۾ شرافت جو ذرو به هوندو سا ان قدم کڻڻ سان پنهنجي اصلاح ڪرڻ ۾ سستي نه ڪندي. "فِی الۡمَضَاجِعِ" جي لفظ مان فقيهن اهو مطلب ورتو آهي ته ٽهڻ وارين زالن کي بسترن ۾ جدا رکو پر گهرن مان جدا نه ڪيو جو انهن کي ڪمري ۾ اڪيلو بند رکو ۽ ان ۾ انهن کي گهڻو ڏک ٿيندو جنهن جي ڪري فساد وڌڻ جو انديشو آهي پر جيڪڏهن اهو طريقو به مفيد ثابت نه ٿئي ته "وَاضۡرِبُوۡهُنَّ" ۽ انهن کي ماريو، پر مار اهڙي سخت نه هجي جنهن سان جسم تي چوٽ اچي وڃي. ابن سعد ۽ بيهقي حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنه جي نياڻيءَ کان روايت آندي آهي ته پهريائين عورتن جي مارڻ کان مردن کي مطلقاً منع ڪيو ويو هو پر پوءِ جڏهن عورتون شينهن بنجي بي خوف ٿي ويون تڏهن اها اجازت ڏني وئي. (۱) ۽ بي فرمان عورت کي مار ڏيڻ جو حڪم ٿيو.

جيئن صحيح مسلم ۾ حضرت جابر رضي الله عنه کان روايت آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو: اِتَّقُوا اللّٰهَ فِی النِّسَآءِ فَاِنَّکُمۡ اَخَذۡتُمُوۡهُنَّ بِاَمَانَةِ وَ اسۡتَحۡلَلۡتُمۡ فُرُوۡجَهُنَّ بِکَلِمَةِ اللّٰهِ وَلَکُمۡ عَلَيۡهِنَّ اَلَّا يُوۡطِئۡنَ فُرُشَکُمۡ اَحَدًا تَکۡرَهُوۡنَهٗ فَاِنۡ فَعَلۡنَ فَاضۡرِبُوۡهُنَّ غَيۡرَ مُبَرِّحٍ (۲) يعني عورتن جي معاملي ۾ الله کان ڊڄو پوءِ يقيناً اوهان اهي الله تعالیٰ جي امانت سان ورتيون ۽ انهن کي الله تعالیٰ جي ڪلمي سان حلال بنايو ۽ اوهان جو انهن تي اهو حق آهي ته توهان جي بسترن تي ڪنهن کي نه آڻين جو اوهان ان کي پسند نه ڪندؤ. پوءِ جيڪڏهن ائين ڪن ته پوءِ انهن کي ماريو پر ڦٽي نه وڃهو. مڙسن کي راضي ڪرڻ عورتن تي حق ۽ وڏو ثواب آهي جيئن هنن

(۱) معارف القرآن ص ۳۹۹ ج۲ (۲) القرطبي ص ۱۷۲ جلد ۵

حديثن مان ثابت آهي.

## حديث ١

ترمذيءَ سهڻي سند سان روايت آندي آهي تہ رسول الله ﷺ جن فرمايو: "اَيُّمَا امْرَأَةٍ مَاتَتْ وَزَوْجُهَا عَنْهَا رَاضٍ دَخَلَتِ الْجَنَّةَ" يعني جيڪا بہ عورت ان حال ۾ مري وئي جو سندس مڙس ان کان راضي آهي تہ جنت ۾ داخل ٿيندي."

## حديث ٢

ترمذيءَ باب الرضاع ۾ سهڻي سند سان روايت ڪئي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو: "لَاتُؤْذِيْ اِمْرَأَةٌ زَوْجَهَا فِى الدُّنْيَا اِلَّاقَالَتْ زَوْجَتُهٗ مِنَ الْحُوْرِ الْعَيْنِ لَاتُؤْذِيْهِ قَاتَلَكِ اللّٰهُ فَاِنَّمَا هُوَ عِنْدَكِ دَخِيْلٌ يُّوْشَكُ اَنْ يُّفَارِقَكِ اِلَيْنَا" (١) يعني ڪا بہ عورت پنهنجي (مسلمان صالح) مڙس کي دنيا ۾ ايذائيندي آهي تہ ان لاءِ مقرر ٿيل جنتي وڏين اکين واريون حورون ان عورت کي چونديون آهن تہ: الله تعالىٰ جي مار پوئي ان کي نہ ايذاءِ اهو تو وٽ ٿوري وقت لاءِ آهي جلد توکان جدا ٿي اسان وٽ ايندو.

"فَاِنْ اَطَعْنَكُمْ فَلَا تَبْغُوْا عَلَيْهِنَّ سَبِيْلًا" يعني مٿين ٽنهي تدبيرن جي ذريعي جيڪڏهن اوهان جي اطاعت ڪن تہ پوءِ انهن تي زيادتي ڪرڻ جي واٽ نہ ڳوليو، پنهنجو رويو مٽائي انهن سان سٺي سلوڪ سان گڏجي گذاريو. "اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيًّا كَبِيْرًا" يقيناً الله (سڀني کان) مٿانهون ۽ سڀني کان) وڏو آهي. "وَاِنْ خِفْتُمْ شِقَاقَ بَيْنِهِمَا فَابْعَثُوْا حَكَمًا مِّنْ اَهْلِهٖ وَحَكَمًا مِّنْ اَهْلِهَا اِنْ يُّرِيْدَا اِصْلَاحًا يُّوَفِّقِ اللّٰهُ بَيْنَهُمَا اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيْمًا خَبِيْرًا" يعني جيڪڏهن صلح جون ڪوششون مفيد ثابت نہ ٿين ۽ خوف اٿو تہ مڙس ۽ زال جي وچ ۾ اختلاف شدت اختيار ڪري ويو آهي جيڪو طلاق تائين ڪم کي پهچائيندو تہ پوءِ هڪ حَكَمُ (فيصلي ڪرڻ وارو امين) مرد جي طرفان ۽ هڪ حڪم عورت جي طرفان مقرر ڪيو ۽ جيڪڏهن انهن مقرر ٿيلن حڪمن اصلاح جي نيت سان فيصلو ڪيو تہ الله تعالىٰ انهن ۾ پنهنجي طرفان صلح جي توفيق پيدا ڪندو ۽ بعض مفسرن جو چوڻ آهي تہ جيڪڏهن زال ۽ مڙس جي اصلاح جو ارادو هوندو تہ الله تعالىٰ ڪين ان جي توفيق عطا ڪرڻ فرمائيندو. هن مان ثابت ٿيو تہ الله تعالىٰ جي پنهنجن ٻانهن تي ڪيتري نہ گهڻي عنايت آهي تہ انهن جا گهرو معاملا سلجهي هلن.

(١) تنويرالاذهان ص ٢٣٦ ج١

## سوال

"يُوَفِّقِ اللّٰهُ" (الله تعالىٰ انهن ۾ توفيق پيدا ڪندو) جي بجاءِ "يفرق الله" (الله تعالىٰ انهن ۾ جدائي ڪرائيندو) چو نه آندائين؟

## جواب.

چو ته تفريق سندس پاڪ ذات کي پسند ناهي. جنهن سان ٻانهن جا گهر ويران ٿين. ان ڪان پوءِ فرمايائين ته "يقيناً الله ڄاڻندڙ خبر رکندڙ آهي." جنهن کي ٻانهي جي احوال ۽ اخلاق جي خبر ۽ ظاهر ۽ باطن جو علم آهي.

وَاعْبُدُوا اللّٰهَ وَلَا تُشْرِكُوْا بِهٖ شَيْـًٔا وَّبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا وَّبِذِى

۽ عبادت ڪيو الله جي ۽ نه شريڪ ڪيو ان سان ڪا شيءِ ۽ پيءُ ماءُ سان احسان ڪيو ۽

الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنِ وَالْجَارِ ذِى الْقُرْبٰى وَالْجَارِ

مائٽن ۽ يتيمن ۽ مسڪينن ۽ پاڙيچي قرابت واري ۽ پاڙيچي

الْجُنُبِ وَالصَّاحِبِ بِالْجَنْۢبِ وَابْنِ السَّبِيْلِ وَمَا مَلَكَتْ

ڌارئين ۽ صحبت ڪندڙ پاسي واري ۽ واٽهڙوءَ ۽ ٻانهن

اَيْمَانُكُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ كَانَ مُخْتَالًا فَخُوْرَاۨ ﴿٣٦﴾ الَّذِيْنَ

سان بيشڪ الله نه ٿو پسند ڪري اُن کي جو آهي آڪڙ ڪندڙ فخر ڪندڙ اهي ماڻهو جو

يَبْخَلُوْنَ وَيَاْمُرُوْنَ النَّاسَ بِالْبُخْلِ وَيَكْتُمُوْنَ مَآ اٰتٰهُمُ اللّٰهُ مِنْ

بخيلي ٿا ڪن ۽ امر ٿا ڪن ماڻهن کي بخيليءَ جو ۽ لڪائين ٿا جيڪو ڏنو انهن کي الله

فَضْلِهٖ ؕ وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا ﴿٣٧﴾

پنهنجي فضل مان ۽ تيار ڪيوسون ڪافرن جي لاءِ عذاب خوار ڪندڙ

# تفسير

هن کان اڳ ۾ مڙس ۽ الله تعاليٰ جي حقوق ۽ پاڻ ۾ سهڻي سلوک ۽ سٺي معاشري قائم ڪرڻ جو بيان ۽ انهن جي اصلاح جون تدبيرون سمجهايون ويون ۽ هتي ٻانهن کي ٻڌايو ٿو وڃي ته اوهان جو تعلق صرف گهر ۽ گهروارين سان ناهي پر اوهان جو حقيقي ۽ اصلي تعلق ته اوهان جي خالق ۽ مالڪ سان آهي ان جي ڪري "وَاعْبُدُوا اللّٰهَ وَلَا تُشْرِكُوْا بِهٖ شَيْئًا" ۽ الله جي عبادت ڪيو ۽ ان سان ڪنهن کي به شريڪ نه بنايو ان جا حقوق ادا ڪرڻ اوهان تي لازم آهن ان جي عبادت، ان جي ذڪر ۽ ياد ۾ سرشار رهو. قرآن پاڪ جي مفسر علامه احمد مصطفيٰ لکيو آهي ته: الله جي عبادت ان جي لاءِ نوڙت ڪرڻ، ان جي هيبت ۽ عظمت پنهنجي جان ۾ وهارڻ، ان جي سلطنت جي اڳيان ڳجهه توڙي ظاهر ۾ نيازمند رهڻ آهي جنهن جي نشاني سندس امر تي عمل ڪرڻ ۽ سندس منع ڪيل ڪمن کان پاڻ پلڻ آهي ۽ ان سان ئي قولي ۽ فعلي صالح عمل حاصل ٿيندا آهن. (١)

## عبادت جا قسم

جاڻڻ گهرجي ته عبادت ٻه قسم آهي ١- هڪ تسخيري- جنهن کان ساري ممڪنات منهن موڙي نه ٿي سگهي. جيئن فرمان ايزدي آهي "وَاِنْ مِّنْ شَيْءٍ اِلَّا يُسَبِّحُ بِحَمْدِهٖ" (٢) ڪابه شيءِ ناهي جيڪا ان جي حمد سان گڏ تسبيح نه پڙهندي هجي.
٢- ٻي اختياري- جنهن جو هن آيت ۾ امر ڪيل آهي. صوفياءِ ڪرام فرمايو آهي ته عبادت هن کي چئبو آهي جو ٻانهو الله تعاليٰ جي اوامر ۽ نواهي ادا ڪرڻ ۾ پنهنجي نفس کي ارادي ۽ اختيار هلائڻ کان ائين خالي رکي جيئن وهنجارڻ واري جي اڳيان ميت بي اختيار هوندو آهي ۽ الله تعاليٰ جي رضا تي اهڙو راضي هجي جو تڪويني ۽ تڪليفي امر سندس اڳيان هڪ هجن. جيئن الله تعاليٰ فرمايو آهي ته "وَمَا كَانَ لِمُؤْمِنٍ وَّلَا مُؤْمِنَةٍ اِذَا قَضَى اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗۤ اَمْرًا اَنْ يَّكُوْنَ لَهُمُ الْخِيَرَةُ مِنْ اَمْرِهِمْ" (٣) يعني مومن ۽ مومنياڻيءَ لاءِ مناسب ناهي جو جڏهن الله ۽ ان جو رسول (صلی الله عليه وسلم) ڪو امر

(١) تفسير المراغي ص٣٣ جزءُ ٥ جلد١ (٢) سورة بني اسرائيل آيت ٤٤
(٣) سورة احزاب آيت ٣٤

فرمائن تہ ھي ان ۾ پنهنجو اختيار ھلائين. بغوي حضرت معاذ بن جبل رضي اللہ عنہ کان روايت آندي آھي تہ مان رسول اللہ صلی اللہ عليہ وسلم جن سان سندن سواريءَ تي پيلھہ چڙھيل ھوس. پاڻ فرمايائون تہ "يَامُعَاذُ! هَلْ تَدْرِيْ مَا حَقُّ اللّٰهِ عَلَى الْعِبَادِ؟" قَالَ قُلْتُ "اَللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ اَعْلَمُ" قَالَ "حَقُّهٗ عَلَيْهِمْ اَنْ يَعْبُدُوْهُ وَلَا يُشْرِكُوْا بِهٖ شَيْئًا" اَتَدْرِيْ يَا مُعَاذُ! مَا حَقُّ النَّاسِ عَلَى اللّٰهِ اِذَا فَعَلُوْا ذَالِكَ؟ قَالَ قُلْتُ "اَللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ اَعْلَمُ" قَالَ "فَاِنَّ حَقَّ النَّاسِ عَلَى اللّٰهِ اَنْ لَّا يُعَذِّبَهُمْ" قَالَ قُلْتُ "يَا رَسُوْلَ اللّٰهِ! اَلَا اُبَشِّرُ النَّاسَ؟ قَالَ "دَعْهُمْ يَعْمَلُوْنَ (١) يعني اي معاذ! توکي خبر آھي تہ اللہ جو حق ٻانھن تي ڪھڙو آھي؟ چيائين مون عرض ڪيو تہ "اللہ ۽ ان جو رسول وڌيڪ ڄاڻندڙ آھن" فرمايائون تہ اللہ جو ٻانھن تي حق ھيءُ آھي تہ ان جي عبادت ڪن ۽ ان سان ڪنھن کي شريڪ نہ بنائين. معاذ! خبر اٿئي تہ جيڪڏھن ماڻھن ائين ڪيو تہ انھن جو اللہ تي ڪھڙو حق آھي؟ چيائين مون عرض ڪيو تہ اللہ ۽ ان جو رسول وڌيڪ ٿا ڄاڻن. فرمايائون تہ ماڻھن جو حق اللہ تي ھي آھي جو انھن کي عذاب نہ ڪري. چيائين مون عرض ڪيو تہ يارسول اللہ! ڇا مان ماڻھن کي خوشخبري نہ ڏيان؟ فرمايائون تہ: ڇڏين تہ عمل ڪندا رھن. ۽ ڪنھن کي ڪنھن بہ حيثيت سان جلي يا خفي نموني سندس ذات، توڙي صفات ۾ شريڪ نہ بنايو، ڇوتہ "اِنَّ الشِّرْکَ لَظُلْمٌ عَظِيْمٌ" (يقيناً شرڪ وڏو ظلم آھي) ان عظيم ظلم کان ھر نموني بچڻ جي سخت ڪوشش ڪيو.

وَبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا" ۽ ماءُ پيءُ سان احسان ڪيو. سندن خدمت ۾ ڪنھن بہ قسم جي ڪوتاھي نہ ڪيو جيڪا شيءِ طلب ڪن حاضر ڪيو، ڇوتہ اھي اوھان جي پيدا ٿيڻ جو ظاھري سبب ۽ علت آھن انھن اوھان کي رحمَ ۽ اخلاص سان پالي اوھان جي تربيت ڪئي آھي. پر ياد رکڻ گھرجي تہ اھو سڀ ڪجھہ تيستائين آھي جيستائين والدين پنھنجي اولاد جي ديني معاملات ۾ دخل انداز ٿي ان کي ديني ڪمن کان نہ روڪين، ڇوتہ والدين جي غلط خواھشات کي پورو ڪرڻ انھن جي خدمت ناھي. ھا- جائز ڪمن ۾ انھن جي اطاعت اھم آھي ڇوتہ اللہ تعالیٰ پنھنجيءَ عبادت کان پوءِ انھن سان احسان ڪرڻ جو حڪم ڪيو آھي. اللہ تعالیٰ انھن جي شڪراداڻيءَ کي پنھنجي شڪر سان گڏ ذڪر ڪيو آھي جيئن سندس فرمان معظم آھي "اَنِ اشْكُرْ لِيْ وَلِوَالِدَيْكَ" (٢) منھنجو شڪر ادا ڪر ۽ پنھنجي والدين جو- حضرت عبداللہ بن

(١) تفسير مظھري ص٩٨ ج٢ (٢) سورة لقمان آيت ١٤

عمرو بن العاص رضي الله عنہ کان روايت آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو: "رِضَى الرَّبِّ فِيْ رِضَى الْوَالِدَيْنِ وَسَخَطُهٗ فِيْ سَخَطِ الْوَالِدَيْنِ (١) والدين جي رضا ۾ رب جي رضا آهي ۽ انهن جي ڪاوڙ ۾ الله تعالىٰ جي ڪاوڙ آهي "وَبِذِى الْقُرْبٰى" ۽ قرابت وارن سان- قربيٰ مصدر جو صيغو قرابت جي معنيٰ ۾ آهي. مقصد تہ قرابتدارن سان بہ احسان ڪيو.

## مائٽن سان احسان ڪرڻ جي پلائي

امام احمد ۽ نسائي وغيرهم حضرت سلمان بن عامر رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو "اَلصَّدَقَةُ عَلَى الْمِسْكِيْنِ صَدَقَةٌ وَهِيَ عَلٰى ذِي الرَّحْمِ صَدَقَةٌ وَّصِلَةٌ" يعني (عام) مسڪين کي صدقو (خيرات) ڏيڻ بہ صدقو آهي پر اهو (مسڪين) مائٽ کي ڏيڻ صدقي سان گڏ مائٽي ڳنڍڻ جي ثواب ۾ بہ داخل آهي.

"وَالْيَتٰمٰى" ۽ يتيمن سان- بہ احسان ڪيو، سندن دل خوش رکو ڇوتہ اهي ٻن پريشانين ۾ هوندا آهن. ١- هڪ تہ پاڻ ننڍا ۽ ڪمائڻ کان عاجز آهن. ٢- ٻيو تہ سنڌن سنڀالڻ وارا بہ ڪونہ آهن.

## نبوي حديثن ۾ يتيمن جي سنڀالڻ جو ثواب

## حديث ١

بخاريءَ حضرت سهل بن سعد رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو "اَنَا وَكَافِلُ الْيَتِيْمِ فِى الْجَنَّةِ هٰكَذَا وَاَشَارَ بِالسَّبَابَةِ وَالْوُسْطٰى وَفَرَّجَ بَيْنَهُمَا شَيْئًا" يعني پاڻ اشهد آڱر ۽ وچينءَ آڱر ۾ ٿورو سنڌو ڪندي ٻنهي سان اشارو ڪري فرمايائون تہ "مان ۽ يتيم جي سنڀالڻ وارو بهشت ۾ هيئن گڏ هونداسون.

## حديث ٢

بغويءَ حضرت ابوامامة رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ نبي ڪريم صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو "مَنْ مَسَحَ رَاْسَ يَتِيْمٍ لَمْ يَمْسَحْهُ اِلَّا لِلّٰهِ كَانَ لَهٗ

(١) تفسير القرطبي ص١٨٣ ج٥

بِكُلِّ شَعْرَةٍ تَمُرُّ عَلَيْهَا يَدُهُ عَشَرُ حَسَنَاتٍ - الحديث (١) يعني جنهن يتيم جي مٿي کي شفقت سان الله جي راضي ڪرڻ لاءِ هٿ لڳايو تہ ان جي لاءِ هٿ لڳايل هر وار جي بدلي ۾ ڏهہ نيڪيون هونديون. "وَالْمَسَاكِيْنَ" ۽ مسڪينن سان احسان ڪيو.

## مسڪينن جا قسم ۽ انهن جو حڪم

مسڪين ٻہ قسم آهن. ١- هڪ جيڪو حقيقي ۽ صحيح معذور، ڪمائڻ ڪان ضعيف ۽ عاجز آهي يا آفتن جي ڪري ان جو مال تباهہ ٿي ويو آهي تہ ان جي مالي مدد ڪري سندس حاجت پوري ڪجي ۽ ان کي مستقل ڪمائيءَ جو ڪو ذريعو هٿ ڪري ڏجي. ٢- ٻيو اهو مسڪين جنهن کي نہ ڪو عذر آهي ۽ نہ ان جي مال کي ڪي آفتون لڳي هلاڪ ڪري ويون آهن پر ان پاڻ برايون، ٻچڙايون ڪري پنهنجي ملڪيت تباهہ ۽ برباد ڪري ڇڏي آهي. ان تي احسان هي آهي جو ان کي نصيحت ڪجي ۽ سٺي رستي تي هلائجي جنهن سان هو حلال روزي ڪمائي پر جيڪڏهن نصيحت نہ ٿو وٺي تہ ان کي حڪومت جي حوالي ڪرائي درست بنائجي.

"وَالْجَارِ ذِي الْقُرْبٰى وَالْجَارِ الْجُنُبِ" ۽ قرابت واري پاڙيسريءَ ۽ ڌارئي پاڙيسري ٻنهي پاڙيسرين سان بہ احسان ڪيو. پاڙيسري ٽي قسم آهن ١- هڪ جيڪو نسب ۽ دين ۾ قريب آهي. ٢- ٻيو جيڪو مٽ ناهي پر دين ۾ قريب آهي يعني مسلمان بہ آهي پاڙي ۾ بہ رهي ٿو. ٣- ٽيون جيڪو نہ مائٽ آهي ۽ نہ دين ۾ قريب يعني مسلمان نہ آهي پر پاڙي ۾ رهي ٿو. ٽنهي قسمن سان احسان ڪرڻ گهرجي. حسن بن سفيان ۽ بزار پنهنجن مسندن ۾ ابوالشيخ ڪتاب الثواب ۾ ۽ ابونعيم الحلية ۾ حضرت جابر بن عبدالله رضي الله عنهما ڪان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "اَلْجِيْرَانُ ثَلَاثَةٌ فَجَارٌ لَّهٗ ثَلَاثَةُ حُقُوْقٍ حَقُّ الْجِوَارِ وَحَقُّ الْقَرَابَةِ وَحَقُّ الْاِسْلَامِ، وَجَارٌ لَّهٗ حَقَّانِ حَقُّ الْجِوَارِ وَحَقُّ الْاِسْلَامِ، وَجَارٌ لَّهٗ حَقٌّ وَاحِدٌ حَقُّ الْجِوَارِ وَهُوَ الْمُشْرِكُ مِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ" يعني پاڙيسري ٽي آهن. ١- هڪ اهو جنهن جا ٽي حق آهن. پاڙي جو حق، مٽيءَ جو حق، اسلام جو حق. ٢- ٻيو اهو جنهن جا ٻہ حق آهن. پاڙي جو حق ۽ اسلام جو حق. ٣- ٽيون اهو جنهن جو هڪڙو پاڙي ۾ رهڻ وارو حق آهيُ اهو پاڻ مشرڪ، اهل ڪتاب مان آهي.

(١) مظهري ص٢٩٨ جلد٢

## حديث ٢

بخاري شريف ۾ حضرت ام المومنين عائشہ صديقہ رضي الله عنها کان روايت آهي ان عرض ڪيو تہ يا رسول الله! منهنجا پاڙيسري ٻہ آهن پوءِ انهن ٻنهي مان ڪهڙي ڏانهن هديا موڪليان؟ فرمايائون تہ "جنهن جي گهر جو دروازو اوهان جي گهر جي دروازي کي وڌيڪ ويجهو هجي، ان کي هديا موڪليو."

## حديث ٣

مسلم شريف حضرت ابوذر رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "اِذَا طَبَخْتَ مَرَقَةً فَاَكْثِرْ مَاءَهَا وَتَعَاهَدْ جِيْرَانَكَ" يعني جڏهن رهو پاڻي رڌين تہ ان ۾ پاڻي گهڻو وجهہ ۽ پاڙي وارن جي بہ سنڀال لهندو ڪر.

## حديث ٤

صحيح بخاري شريف ۾ حضرت ابن عمر رضي الله عنهما کان روايت آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "مَا زَالَ جِبْرَئِيْلُ يُوْصِيْنِيْ بِالْجَارِ حَتّٰى ظَنَنْتُ اَنَّهٗ سَيُوَرِّثُهٗ" (١) يعني جبرئيل (عليہ السلام) مون کي هميشہ پاڙي وارن جي لاءِ ايترو چوندو رهيو جو مون خيال ڪيو تہ اهو جلد انهن کي وارث بنائيندو. يعني وارث بنائڻ جو حڪم کڻي ايندو.

"وَالصَّاحِبِ بِالْجَنْبِ" مجلس ۾ گڏ رهڻ واري سان بہ احسان ڪيو جيڪو مڪتب يا ڪنهن ٻئي ڪم ڪار ۾ ساٿي ۽ شريڪ هجي ۽ بعضي مفسرن جو چوڻ آهي تہ ان مان مراد گهرواري آهي جيڪا پاسي ۾ هوندي آهي. (٢) حضرت ابن عباس، مجاهد، عڪرمہ ۽ قتاده رضي الله عنهم فرمايو تہ ان مان مراد سفر جو رفيق آهي ۽ ابن جريج ۽ ابن زيد رضي الله عنهما فرمايو تہ ان مان مراد اهو ساٿي آهي جيڪو تو مان نفعي حاصل ڪرڻ جي ارادي سان توسان گڏ رهي. ان ۾ شاگرد، گڏ پڙهڻ وارا ۽ مرشد جا مريد سڀ داخل آهن. (٣) "وَابْنِ السَّبِيْلِ" ۽ مسافر يا مهمان تي

(١) الاحاديث المذكورة كلها في التفسير المظهري ص٢٩٩ جلد٢
(٢) تفسير حقاني ص١٨٨ جلد ٣ پ والمحصنت (٣) حوالو ساڳيو

احسان ڪيو. (١) اڪثر مفسرن ان مان مراد مهمان ورتو آهي ۽ مهمان جي خدمت ڪرڻ ۾ دنياوي نالي ۽ ناموس سان گڏ جيڪڏهن نيت ۾ اخلاص آهي تہ ثواب ۽ اجر بہ گهڻو آهي.

## نبوي حديثن مان مهمان نوازيءَ جو ثواب

### حديث ١

امام بغويءَ حضرت ابوشريح خزاعيءَ ڪان روايت آندي آهي تہ نبي اڪرم صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "مَنْ كَانَ يُؤْمِنُ بِاللهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ فَلْيُحْسِنْ اِلٰى جَارِهٖ وَمَنْ كَانَ يُؤْمِنُ بِاللهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ فَلْيُكْرِمْ ضَيْفَهٗ وَمَنْ كَانَ يُؤْمِنُ بِاللهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ فَلْيَقُلْ خَيْرًا اَوْلِيَصْمُتْ (٢) يعني جيڪو الله ۽ قيامت تي ايمان ٿو آڻي اهو پاڙي واري سان احسان ڪري ۽ جيڪو الله ۽ قيامت تي ايمان ٿو آڻي اهو مهمان جي عزت ڪري ۽ جيڪو الله ۽ قيامت تي ايمان ٿو آڻي اهو ڳالهائي تہ ڀلائيءَ جي ڳالهہ ڪري يا تہ چپ رهي.

### حديث ٢

خويلد بن عمرو عدويءَ رضي الله عنہ ڪان روايت آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو "مَنْ كَانَ يُؤْمِنُ بِاللهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ فَلْيُكْرِمْ ضَيْفَهٗ جَائِزَتَهٗ قَالُوْا وَمَا جَائِزَتُهٗ يَا رَسُوْلَ اللهِ؟ قَالَ "يَوْمُهٗ وَلَيْلَتُهٗ" وَالضِّيَافَةُ ثَلَاثَةُ اَيَّامٍ فَمَا كَانَ وَرَآءَ ذَالِكَ فَهُوَ صَدَقَةٌ عَلَيْهِ" الحديث (٣) يعني جيڪو الله ۽ قيامت جي ڏينهن تي ايمان ٿو رکي اهو مهمان جي عزت ڪندي ان کي "جائزة" ڏي اصحابن عرض ڪيو تہ يارسول الله! "جائزة" ڪهڙي شيءِ آهي؟ فرمايائون تہ هڪ ڏينهن ۽ هڪ رات مهماني ڪري. (عام) مهماني ٽي (۴) ڏينهن آهي ۽ جيڪو ان ڪان مٿي آهي اهو ان تي صدقو آهي.

### حديث ٣

بخاري ۽ مسلم حضرت ابوهريره رضي الله عنہ ڪان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "مَنْ كَانَ يُؤْمِنُ بِاللهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ فَلْيُكْرِمْ ضَيْفَهٗ وَمَنْ كَانَ يُؤْمِنُ بِاللهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ فَلَا يُؤْذِ جَارَهٗ وَمَنْ كَانَ يُؤْمِنُ بِاللهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ

(١) تفسير النسفي ص٢٢٥ ج١ — (٢) مظهري ص٢٩٩ جلد ٢
(٣) تفسير خازن ص٢٥٥ ج١ — (۴) مظهري ص٢٩٩ ج٢

فَلْيَقُلْ خَيْرًا اَوْ لِيَصْمُتْ" (١) يعني جيڪو الله ۽ قيامت جي ڏينهن تي ايمان ٿو آڻي اهو پنهنجي پاڙي واري کي نہ ايذائي ۽ جيڪو الله ۽ قيامت تي ايمان ٿو آڻي اهو پنهنجي مهمان جي عزت ڪري ۽ جيڪو الله ۽ قيامت جي ڏينهن تي ايمان ٿو آڻي اهو ڳالهائي تہ ڀلائي ڳالهائي يا تہ چپ ڪري ويهي.

"وَمَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ" ۽ جن جا اوهان مالڪ آهيو انهن سان بہ احسان ڪيو. يعني ٻانهن ۽ ٻانهين سان- ترمذيءَ ۾ حضرت جابر رضي الله عنہ کان روايت آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو: ثَلَاثٌ مَنْ كُنَّ فِيْهِ يَسَّرَ اللّٰهُ حَقَّهٗ وَاَدْخَلَهُ الْجَنَّةَ رِفْقٌ بِالضَّعِيْفِ وَشَفَقَةٌ عَلَى الْوَالِدَيْنِ وَاِحْسَانٌ اِلَى الْمَمْلُوْكِ" (٢) يعني جنهن ۾ ٽي ڳالهيون هونديون الله تعالىٰ ان جي حق کي آسان ڪندو ۽ ان کي جنت ۾ داخل ڪندو. ١- هڪ ضعيف تي نرمي ٢- ڀيو والدين تي شفقت ٣- ٽيون پنهنجي ملڪيت ڪيل ٻانهي تي احسان. ان ئي نموني چوپاين جانورن تي بہ رحم ڪجي. علامہ ثناءالله پاني پتيءَ عليہ الرحمة لکيو آهي تہ "وَمَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ" ۾ چوپايا بہ داخل آهن ڇوتہ اهي بہ اوهان جي ملڪيت آهن.

## چوپاين تي رحم ڪرڻ لاءِ نبوي ارشاد

محدث ابوداؤد حضرت عبدالله بن عمرو ۽ حضرت سهل بن حنظله رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن هڪ اٺ کان لنگهيا جنهن جي (بک جي ڪري) پني پيٽ سان لڳل هئي. پاڻ فرمايائون تہ: هنن بند زبان چوپاين جانورن جي متعلق الله کان ڊڄو انهن تي چڱائيءَ سان سوار ٿيو ۽ انهن کي چڱائيءَ سان ڇوڙي ڇڏيو. (٣) "اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ كَانَ مُخْتَالًا فَخُوْرًا" يقيناً الله تعالىٰ ان سان محبت نہ ٿو رکي جيڪو هٺيلو، فخر ڪندڙ آهي، ڇوتہ هٺ ۽ فخر ان پاڪ ذات کي پسند ناهن. مختال هٺيلي کي فخور ان کي چوندا آهن جيڪو پنهنجي تعريف، ثناءِ، خوبيون ۽ ڪماليتون پاڻ بيان ڪندو رهي. بخاريءَ ۽ مسلم حضرت ابن عمر رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "لَا يَنْظُرُ اللّٰهُ يَوْمَ الْقِيَامَةِ اِلىٰ مَنْ جَرَّ ثَوْبَهٗ خُيَلَاءَ (٤) جنهن پنهنجي ڪپڙي کي هٺ ڪرڻ جي ڪري (پيرن ۾) گهليو الله تعالىٰ قيامت جي ڏينهن ان ڏانهن (ڪرم جي) نظر سان نہ نهاريندو. "اَلَّذِيْنَ يَبْخَلُوْنَ وَيَاْمُرُوْنَ النَّاسَ بِالْبُخْلِ" جيڪي پاڻ تہ بخل ڪندا آهن پر ٻين ماڻهن کي بہ بخيليءَ جو امر ڪندا آهن. هن ۾ اهي شخص

(١) تفسير مظهري ص٣٠٠ ج٢ (٢) مظهري ص ٢٩٩ ج٢
(٣) ساڳيو حوالو (۴) زاد المسير ص٨٢ جلد٢

داخل آهن جيڪي الله تعاليٰ جي ڏنل ملڪيت مان مسڪينن ۽ غريبن کي نہ ڏيندا آهن. "وَيَكْتُمُوْنَ مَا اٰتٰهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ" يعني جيڪو الله تعاليٰ پنهنجي فضل سان ڏنو اٿن اهو لڪائين ٿا. علامہ ابن الجوزيءِ عليہ الرحمہ لکيو آهي تہ جمهور جو قول اهو آهي تہ اهي لڪائڻ وارا يهودي آهن جن کي نبي ڪريم صلى الله عليہ وسلم جن جي صفتن جو علم ڏنو ويو هو پر اهو لڪاياٺون ظاهر نہ ڪياٺون. (١) "وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا" يعني ڪافرن جي لاءِ خوار ڪندڙ عذاب تيار ڪيو اٿئون.

## نبوي حديثن ۾ بخيليءَ جي مذمت

بخيلي نهايت خراب شيءِ آهي، جيئن هنن حديثن مان ثابت آهي.

### حديث ١

ترمذيءَ حضرت ابوهريره رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "اَلسَّخِيُّ قَرِيْبٌ مِّنَ اللّٰهِ، قَرِيْبٌ مِّنَ الْجَنَّةِ قَرِيْبٌ مِّنَ النَّاسِ وَبَعِيْدٌ مِّنَ النَّارِ وَالْبَخِيْلُ بَعِيْدٌ مِّنَ اللّٰهِ بَعِيْدٌ مِّنَ الْجَنَّةِ بَعِيْدٌ مِّنَ النَّاسِ قَرِيْبٌ مِّنَ النَّارِ لَجَاهِلٌ سَخِيٌّ اَحَبُّ اِلَى اللّٰهِ مِنْ عَابِدٍ بَخِيْلٍ" يعني سخي الله کي ويجهو، بهشت کي ويجهو. ماڻهن کي ويجهو ۽ باهہ کان پري آهي، ۽ بخيل الله کان پري، جنت کان پري، ماڻهن کان پري ۽ باهہ کي ويجهو آهي ۽ البت جاهل سخاوت ڪندڙ الله تعاليٰ کي عابد بخيل کان وڌيڪ پيارو آهي.

### حديث ٢

ترمذيءَ حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "لَا يَدْخُلُ الْجَنَّةَ خَبٌّ وَلَا بَخِيْلٌ وَلَا مَنَّانٌ" يعني ماڻهن ۾ فساد پيدا ڪندڙ ۽ بخيل ۽ احسان ڪري ڳائيندڙ بهشت ۾ داخل نہ ٿيندا.

### حديث ٣

ترمذيءَ حضرت ابوسعيد رضي الله عنہ کان مرفوع روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "خَصْلَتَانِ لَا تَجْتَمِعَانِ فِيْ مُؤْمِنٍ اَلْبُخْلُ وَسُوْءُ الْخُلُقِ (٢) يعني ٻہ خصلتون مومن ۾ نہ هونديون. ١- هڪ بخيلي ٢- ٻيو بداخلاقي.

(١) زاد المصير (٢) هذه الاحاديث الثلاثة موجودة في التفسير المظهري ص٣٠١ ج٢

وَالَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ رِئَآءَ النَّاسِ وَلَا يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَلَا

۽ اهي جو خرچ ٿا ڪن مال پنهنجا ماڻهن جي ڏيکارڻ لاءِ ۽ نه ٿا ايمان آڻين الله تي ۽ نه

بِالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَمَنْ يَّكُنِ الشَّيْطَانُ لَهٗ قَرِيْنًا فَسَآءَ قَرِيْنًا ﴿٣٨﴾

ڏينهن قيامت جي تي ۽ اهو جو هوندو شيطان ان جو ساٿي پوءِ بڇڙو آهي اهو ساٿي

وَمَاذَا عَلَيْهِمْ لَوْ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَاَنْفَقُوْا مِمَّا

۽ ڇا هو انهن تي جيڪڏهن ايمان آڻين ها الله تي ۽ ڏينهن قيامت تي ۽ خرچ ڪن ها ان رزق مان جو

رَزَقَهُمُ اللّٰهُ ۗ وَكَانَ اللّٰهُ بِهِمْ عَلِيْمًا ﴿٣٩﴾ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَظْلِمُ مِثْقَالَ

ڏنو انهن کي الله ۽ آهي الله انهن کي ڄاڻندڙ. بيشڪ الله نه ظلم ڪندو آ وزن

ذَرَّةٍ ۚ وَاِنْ تَكُ حَسَنَةً يُّضٰعِفْهَا وَيُؤْتِ مِنْ لَّدُنْهُ اَجْرًا عَظِيْمًا ﴿٤٠﴾

ذري جو ۽ جيڪڏهن هوندي نيڪي ته ٻيڻو ڪندو ان کي ۽ ڏيندو پاڻ وٽان ثواب وڏو

## تفسير

هن ڪان اڳ ۾ انهن بخيلن جو بيان هو جيڪي پاڻ ته بخل ڪندا هئا پر ٻين کي به بخل جي لاءِ امر ڪندا هئا ۽ هتي وري انهن جو بيان آهي جيڪي الله تعالىٰ جي واٽ ۾ ته خرچ نه ٿا ڪن پر "وَالَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ رِئَآءَ النَّاسِ وَلَا يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَلَا بِالْيَوْمِ الْاٰخِرِ" ماڻهن جي ڏيکارڻ لاءِ پنهنجا مال خرچ ڪن ٿا ۽ الله ۽ قيامت جي ڏينهن تي ايمان نه ٿا آڻين. يعني پنهنجي نالي ڪڍڻ، وقت جي حاڪمن کي خوش ڪرڻ لاءِ سنبدن پارٽين ۽ پروگرامن ۾ ۽ ماڻهن جي دلين تي اثر ويهارڻ جي لاءِ بي حساب دولت ضايع ڪندا آهن نه انهن جو الله تعالىٰ تي ايمان آهي نه قيامت جي ڏينهن تي- ظاهر ۾ مومن اندر ۾ بي ايمان آهن. "وَمَنْ يَّكُنِ الشَّيْطَانُ لَهٗ قَرِيْنًا فَسَآءَ قَرِيْنًا" جنهن جو

شيطان ساٿي آهي تہ اهو برو ساٿي آهي يعني ان ازلي بدبخت جي ساٿ ۾ رهڻ ۽ ان جي صلاح سان هلڻ واري کان وڌيڪ نياڳو ڪير ٿي سگهندو؟ هن آيت ۾ اشارو آهي تہ ساٿي هميشہ نيڪ ۽ صالح رکجي جيڪو براين کان نفرت ڏياري، صالحن عملن جي ترغيب ڏياريندي صالحن جي صحبت ۾ رهڻ لاءِ شوق ڏياري.

## ماڻهن تي ڏيکارڻ لاءِ خرچ ڪرڻ وڏو گناهہ آهي

جيئن هنن حديثن مان ثابت آهي.

### حديث ١

مسلم شريف حضرت ابوهريره رضي الله عنہ کان ۽ان رسول الله ﷺ جن کان روايت آندي آهي ته فرمايائون تہ الله تعاليٰ فرمايو آهي: اَنَا اَغْنَي الشُّرَكَاءِ عَنِ الشِّرْكِ مَنْ عَمِلَ عَمَلًا اَشْرَكَ فِيهِ مَعِيَ غَيْرِيْ تَرْكْتُهُ وَشِرْكَهُ" يعني مان شريڪن جي شرڪ کان بي پرواهہ آهيان جنهن ماڻهوءَ ڪو عمل ڪري ان ۾ مون سان منهنجي غير کي شريڪ بنايو تہ مان ان کي شرڪ سان گڏ ڇڏي ٿو ڏيان. يعني اهو عمل قبول نہ ٿو ڪيان.

### حديث ٢

ترمذيءَ حضرت انس کان ۽ احمد ۽ دارميءَ حضرت زيد بن ثابت رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "مَنْ كَانَتْ نِيَّتُهُ طَلَبَ الْاٰخِرَةِ جَعَلَ اللّٰهُ غِنَاهُ فِيْ قَلْبِهِ وَجَمَعَ لَهُ شَمْلَهُ وَاَتَتْهُ الدُّنْيَا وَهِيَ رَاغِمَةٌ وَمَنْ كَانَتْ نِيَّتُهُ طَلَبَ الدُّنْيَا جَعَلَ اللّٰهُ الْفَقْرَ بَيْنَ عَيْنَيْهِ وَشَتَّتَ عَلَيْهِ اَمْرَهُ وَلَا يَاْتِيهِ مِنْهَا اِلَّا مَا كُتِبَ لَهُ" (١) يعني (نيڪ عمل مان) جنهن جي نيت آخرت جي طلب هوندي تہ الله تعاليٰ ان جي غنا (خوشحالي) ان جي دل ۾ پيدا ڪرڻ فرمائيندو ۽ان جي ٽڙيلن عملن کي گڏ ڪندو ۽ ان وٽ دنيا ذليل ٿي ايندي ۽ جنهن جي (نيڪ عمل مان) نيت دنيا جي طلب هوندي تہ الله تعاليٰ محتاجيءَ کي سندس اکين جي اڳيان رکندو ۽ سندس ڪمن کي ٽيڙي ڇڏيندو ۽ ان وٽ ايندو تہ اهوئي جيڪو ان لاءِ لکيل هوندو.

### حديث ٣

امام احمد حضرت شداد بن اوس رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي

(١) مشڪواة شريف ص٤٥٤

تہ مون رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم جن کان ٻڌو پاڻ فرمایائون تہ "مَنْ صَلّٰي يُرَائِيْ فَقَدْ اَشْرَکَ وَمَنْ صَامَ يُرَائِيْ فَقَدْ اَشْرَکَ وَمَنْ تَصَدَّقَ يُرَائِيْ فَقَدْ اَشْرَکَ" (١) يعني جنهن نماز پڙهندي ماڻهن کي ڏيکارڻ جي نيت ڪئي پوءِ يقيناً ان شرڪ ڪيو ۽ جنهن ڏيکاءَ لاءِ روزو رکيو ان يقيناً شرڪ ڪيو ۽ جنهن ڏيکاءَ لاءِ صدقو ڪيو ان بہ يقيناً شرڪ ڪيو. "هن حديث ۾ رياءَ واري عمل کي شرڪ سڏيو ويو آهي ۽ مٿي پڙهي آيا آهيو تہ شرڪ وڏي ۾ وڏو گناهہ آهي جنهن مان نتيجو نڪتو تہ رياءُ وڏو گناهہ آهي.

"وَمَاذَا عَلَيْهِمْ لَوْ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَاَنْفَقُوْا مِمَّا رَزَقَهُمُ اللّٰهُ" يعني انهن تي ڪهڙي تڪليف هئي جيڪڏهن اللہ ۽ قيامت جي ڏينهن تي ايمان آڻين ها ۽ جيڪي اللہ ڏنو اٿن ان مان خرچ ڪن ها. اهي سڀ آسان ڪم انهن جي اختيار ۾ هئا ڪرڻ ۾ ڪين ڇا هو؟ جو بي فرمان بنجي پنهنجي آخرت تباهہ ڪري رهيا آهن. "وَكَانَ اللّٰهُ بِهِمْ عَلِيْمًا" ۽ اللہ انهن کي ڄاڻندڙ آهي ان کان سندن اندر ۾ لڪل رياءُ بہ مخفي ناهي اهو انهن کي ان بدنيتيءَ جي سزا ڏيندو. ان جي ڪري عبادات ۾ غلط مقصد نہ رکن.

"اِنَّ اللّٰهَ لَا يَظْلِمُ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ" يعني اللہ ذري برابر بہ ظلم نہ ڪندو آهي، جو ڪنهن جي سهڻن عملن جي ثواب ۽ خير جي جزا ۾ گهٽتائي ڪري "وَاِنْ تَكُ حَسَنَةً يُّضٰعِفْهَا وَيُؤْتِ مِنْ لَّدُنْهُ اَجْرًا عَظِيْمًا" يعني جيڪڏهن ڪنهن جي ڪا نيڪي هوندي تہ اللہ تعالیٰ ان کي وڌائي ٻيڻو ڪندو ۽ پاڻ وٽان وڏو اجر ڏيندو.

فَكَيْفَ اِذَا جِئْنَا مِنْ كُلِّ اُمَّةٍۢ بِشَهِيْدٍ وَّجِئْنَا بِكَ عَلٰى هٰٓؤُلَآءِ

پوءِ ڪهڙو حال هوندو جڏهن آڻينداسون هر هڪ امت مان شاهد ۽ آڻينداسون توکي هنن تي

شَهِيْدًا ﴿٤١﴾ يَوْمَئِذٍ يَّوَدُّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَعَصَوُا الرَّسُوْلَ لَوْ تُسَوّٰى

شاهد ڪري ان ڏينهن محبت رکندا اهي شخص جو ڪفر ڪيائون ۽ بي فرماني ڪيائون رسول جي تہ جيڪر برابر ڪئي وڃي ها

بِهِمُ الْاَرْضُ ۗ وَلَا يَكْتُمُوْنَ اللّٰهَ حَدِيْثًا ﴿٤٢﴾ ع

انهن تي زمين ۽ نہ لڪائي سگهندا اللہ کان ڪا ڳالهہ

(١) مشڪواة شريف ص٤٥٥

وقف النبي صلي الله عليه وسلم

# تفسير

هن کان اڳ ۾ ٻڌايو ويو هو تہ رياءَ ڪندڙ، ڪافر عذاب ڪيا ويندا ۽ مخلص، دينددار ثواب ڏنا ويندا، پر انهن جي صفائي انبياءِ عظام عليهم السلام جي شاهديءَ سان ٿيندي ان جي ڪري ان کي هتي بيان ڪيو ويو تہ "فَكَيْفَ إِذَا جِئْنَا مِنْ كُلِّ أُمَّةٍ بِشَهِيدٍ وَجِئْنَا بِكَ عَلَىٰ هَٰؤُلَاءِ شَهِيدًا" يعني ڪهڙي حالت هوندي يا ڪيئن ڪم ٿيندو يا اهي ماڻهو ڇا ڪندا جڏهن اسين قيامت ۾ هر امت مان سندن نبي عليہ السلام کي موافقت يا مخالفت ۾ شاهدي ڏيڻ جي لاءِ آڻينداسون. "وَجِئْنَا بِكَ عَلَىٰ هَٰؤُلَاءِ شَهِيدًا" ۽ اوهان کي بہ هنن تي شاهد ڪري آڻينداسون ۽ اوهان خدائي عدالت ۾ شاهدي ڏيندئو تہ انهن اوهان جا ڪليل معجزا ڏسي بہ اوهان کي ڪوڙو چيو ۽ اوهان جي رسالت ۽ منهنجي توحيد تي ايمان نہ آندو هو.

## فائدو

"وَجِئْنَا بِكَ عَلَىٰ هَٰؤُلَاءِ شَهِيدًا" هولاءِ (هنن تي) مان مراد الله تعالىٰ جا نبي عليهم السلام آهن جن جي شاهديءَ جي تصديق ڪرڻ لاءِ حضور عليہ السلام جن شاهدي ڏيندا. علامہ آلوسيءَ عليہ الرحمہ لکيو آهي "وجئنا بک" يا خاتم الانبياء "علىٰ هولاءِ" اشارة الي الشهداءِ (١)

مقصد تہ اوهان انهن جي سچي هجڻ جي شاهدي ڏيندؤ ڇوتہ اوهان کي انهن جي مرسل هجڻ جو علم آهي ۽ اوهان جي شريعت انهن جي شريعتن جي اصول ۽ فروع جي جامع آهي. علامہ پاني پتي ۽ قرطبيءَ عليهما الرحمہ لکيو آهي تہ: "يشهد النبي صلى الله عليه وسلم علىٰ جميع الامة من راه ومن لم يره "يعني حضور صلى الله عليہ وسلم جن پنهنجي سموري امت تي شاهدي ڏيندا جن ڪين ڏٺو آهي يا نہ ڏٺو آهي، ڇوتہ هر روز صبح ۽ شام سندن امت سندن اڳيان پيش ڪئي ويندي آهي پوءِ انهن کي انهن جي نشانين ۽ عملن سان سڃاڻن ٿا ان جي ڪري انهن تي شاهدي ڏيندا. (٢) علامہ عثماني صاحب ۽ علامہ صاويءَ لکيو آهي تہ: ان ۾ هڪ احتمال

(١) روح المعاني ص٣٤ جزءُ ٥ (٢) تفسير مظهري ص٣٠٥ ج٢، تفسير القرطبي ص١٩٨ ج٥

هيءُ بہ آهي تہ جيئن اڳيان انبياءِ عليهم الصلواة والسلام پنهنجين پنهنجين امتن جي فسق، فجور ۽ نافرمانين جا شاهد هوندا اوهان بہ انهن سيني جي بدعملن جا شاهد هوندئو جنهن سان انهن جي برائي وڌيڪ ثابت ٿيندي. (١) تفسير حسينيءَ جي صاحب لکيو آهي تہ: جڏهن حضور صلی الله عليہ وسلم جن امت جا شفاعت ڪندڙ آهن تہ شاهد بہ ڪين بنايو ويو آهي تانت شاهدي اهڙي نموني ڏين جو سندن شفاعت جي مجال بہ باقي رهي. (٢) سيدنا حضرت عبدالله بن عباس رضي الله عنهما هن لفظ جي تفسير بيان ڪندي فرمايو تہ: هر امت مان انهن تي شاهد آڻيندا سون ۽ اوهان کي انهن شاهدن تي بہ شاهد ڪري آڻيندا سون ۽ اوهان جي امت کي شاهد، مزڪي، (صفائي پيش ڪندڙ) معدل (عادل ثابت ڪندڙ) ۽ انهن جو مصدق (تصدق ڪندڙ) سڏيو ويندو. (٣)

هيءَ آيت ٻڌي حضور صلی الله عليہ وسلم جن اکين مبارڪن مان ڳوڙها وهايا هئا جيئن ابن ابي شيبہ، احمد، عبد بن حميد، بخاريءَ، ترمذيءَ، نسائيءَ، وغيرهم مختلف سندن سان حضرت عبدالله بن مسعود رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ مون کي رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو تہ "مون کي قرآن پڙهي ٻڌاءِ" مون عرض ڪيو تہ يارسول الله! مان اوهان جي اڳيان پڙهان حالانڪ قرآن تہ نازل ئي اوهان تي ٿيو آهي؟ پاڻ فرمايائون تہ "هائو پر مون کي هيءَ ڳالهہ وڻي ٿي تہ ٻئي کان ٻڌان." پوءِ مون سورة النساءِ پڙهي تانجو جڏهن فَكَيْفَ إِذَا جِئْنَا مِن كُلِّ أُمَّةٍ بِشَهِيدٍ وَجِئْنَا بِكَ عَلَىٰ هَٰؤُلَاءِ شَهِيدًا" تي پهتس تہ فرمايائون "هاڻي ڪافي ٿي ويو." مون ڏٺو تہ سندن اکين مبارڪن مان ڳوڙها ڳڙي رهيا هئا. (۴) هن حديث شريف مان بہ ڳالهيون ثابت ٿيون. هڪ سندن امت تي شفقت، ٻيو اهو بہ تہ قرآن ڪريم واقعي الله تعالیٰ جو ڪلام آهي، جنهن کي ٻڌي پاڻ روئي رهيا هئا.

## فائدو

علامہ مراد آبادي لکيو آهي تہ پاڻ سيني جا شاهد ان جي ڪري آهن جو پاڻ اڳين نبين عليهم السلام جا بہ نبي آهن. ۽ اهي سڀ سندن امتي آهن. (۵)

(١) حاشيہ شبير احمد عثماني ص١٠٩ حاشيہ ١، صاوي ص٢٠٧ ج ١
(٢) تفسير حسيني فارسي ص١٣٨ (٣) تفسير ابن عباس ص٧٠
(۴) الدر المنثور ص۵۴١ ج٢ (۵) خزائن العرفان مترجم سنڌي ص١٠٣

## ختم نبوت جو دليل

قرآن پاڪ جي هن انداز بيان مان ثابت ٿيو ته حضور عليه الصلواة والسلام جن کان پوءِ ڪوبه نبي نه ايندو جيڪو اچي پنهنجيءَ امت جي شاهدي ڏي ها. آخري شاهد به حضور عليه الصلواة والسلام جن آهن ته آخري نبي به پاڻ آهن. صلى الله عليه وآله واصحابه وبارک وسلم-

## سڀ انبياء عليهم السلام پنهنجي هرهڪ امتيءَ جي احوال کان باخبر هوندا آهن

"وَجِئْنَا مِنْ كُلِّ أُمَّةٍ بِشَهِيدٍ" مان ثابت ٿيو ته سيئي انبياءِ ڪرام عليهم الصلواة والسلام الله تعالىٰ جي عنايت، عطا ۽ ڄاڻائڻ سان پنهنجي هرهڪ امتيءَ جي ظاهري ۽ باطني اعمال کان خبردار آهن. تڏهن ته شاهدي ڏيندا نه ته ڄاڻ ۽ خبر کان سواءِ شاهدي ڪيئن ڏيندا؟

## فائدو

هيءَ امت اڳين نبين عليهم الصلواة والسلام جي به محبوب امت آهي ڇوته هيءَ امت انهن جي ديني دعوت جي شاهد آهي ۽ هرهڪ مدعيءَ کي شاهد محبوب هوندو آهي.

## فائدو

تفسير نعيميءَ لکيو آهي ته حضور عليه الصلواة والسلام جن جي شاهدي عيني (اکين سان ڏسڻ واري) هوندي سمعي (ٻڌل) نه هوندي. ڇوته جيڪڏهن سندن شاهدي به ٻڌل هجي ها ته ان تي به ائين ئي اعتراض ڪيو وڃي ها جيئن سندن امت جي ٻڌل شاهديءَ تي اعتراض ڪيو ويندو هو. (١)

## فائدو

"فَكَيْفَ" پوءِ ڪيئن ڪندا. هن ۾ تنبيه ڪندي سامعين جا ڪن ڪڙڪايا ويا آهن ته ان وقت اهي دين کي، نبين عليهم السلام کي ۽ انهن تي نازل ڪيل ڪتابن کي ڪوڙو چوڻ وارا ڪيئن ڪندا ۽ سندن حال ڪهڙو هوندو؟؟ (٢)

(١) تفسير نعيمي ص٨٧ ج٥ (٢) صفوة التفاسير ص٢٧٦ جلد ١

"يَوْمَئِذٍ يَوَدُّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَعَصَوُا الرَّسُوْلَ لَوْ تُسَوّٰى بِهِمُ الْاَرْضُ وَلَا يَكْتُمُوْنَ اللّٰهَ حَدِيْثًا" يعني ان قيامت جي ڏينهن ڪافر ۽ رسولن (عليهم السلام) جا بي فرمان اها ڳالهہ پسند ڪندا تہ ڪاش اهي زمين ۾ اندر هليا وڃن ها يا مٽي ٿي زمين سان ملي عذاب ڪان نجات حاصل ڪن ها ۽ اهي الله تعالىٰ ڪان ڪا ڳالهہ بہ لڪائي نہ سگهندا. ڇوتہ هڪ پاسي سندن هٿ، پير بيان ڪندا تہ ٻئي پاسي سندن ڳچين ۾ اعمالناما لٽڪيل هوندا ۽ هرهڪ امت جو نبي عليہ السلام بہ انهن تي شاهدي ڏيندو تہ هنن واقعي هي گناهہ ڪيا هئا.

يَا اَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَاتَقْرَبُوا الصَّلٰوةَ وَاَنْتُمْ سُكٰرٰى حَتّٰى

اي ايمان وارؤ! نہ ويجها وڃو نماز ڪي ان حال ۾ جو اوهان نشي ۾ آ هيو تانجو

تَعْلَمُوْا مَا تَقُوْلُوْنَ وَلَا جُنُبًا اِلَّا عَابِرِىْ سَبِيْلٍ حَتّٰى تَغْتَسِلُوْا ۗ

ڄاڻو جيڪي چئوٿا ۽ نہ ٽڙ جي حالت ۾ مگر لنگهندڙ واٽ مان تانجو وهنجو

وَاِنْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى اَوْ عَلٰى سَفَرٍ اَوْ جَآءَ اَحَدٌ مِّنْكُمْ مِّنَ

۽ جيڪڏهن آهيو بيمار يا مسافر يا آيو هڪڙو اوهان مان

الْغَآئِطِ اَوْلٰمَسْتُمُ النِّسَآءَ فَلَمْ تَجِدُوْا مَآءً فَتَيَمَّمُوْا صَعِيْدًا

ضرورت جي جاءِ مان يا صحبت ڪيو زالن سان پوءِ نہ لهو پاڻي پوءِ ارادو ڪيو مٽيءَ صاف، پاڪ جو

طَيِّبًا فَامْسَحُوْا بِوُجُوْهِكُمْ وَاَيْدِيْكُمْ ۗ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا غَفُوْرًا ﴿٤٣﴾

پوءِ مک ڪيو پنهنجن منهن جي ۽ پنهنجن هٿن جي بيشڪ الله آهي معاف ڪندڙ بخشيندڙ

# تفسير

ڇاڻڻ گهرجي تہ اسلام کان اڳ ۾ عرب ۾ شراب جو استعمال ايترو تہ عام هو جو جيڪڏهن ان کي هڪدم حرام ڪيو وڃي ها تہ وڏي آزمائش بنجي وڃي ها ان جي ڪري حڪمتن واري منهنجي مالڪ ان جي پيئڻ کان روڪڻ لاءِ درجي بدرجي احڪام نازل فرمايا. شروع ۾ ٻڌايو ويو تہ شراب نقصان ڏيندڙ شيءِ آهي جنهن جي ٻڌڻ سان سهڻيءَ طبيعت جي مالڪن پيئڻ ڇڏي ڏنو. ان کان پوءِ هي آيت نازل ٿي. "يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَقْرَبُوا الصَّلَاةَ وَأَنتُمْ سُكَارَىٰ حَتَّىٰ تَعْلَمُوا مَا تَقُولُونَ" يعني ايمان وارؤ! نشي جي حالت ۾ نماز کي ويجها نہ وڃو تانجو ايتري هوش ۾ اچو جو سمجهو تہ زبان سان ڇا ٿا چئو. هن آيت ۾ نماز جي وقتن ۾ شراب کان منع ڪئي وئي پر باقي وقتن ۾ ڪي ڪي ماڻهو پيئندا هئا مگر ڪجهہ وقت کان پوءِ سورة مائده جي آيت ۹۰ ۾ شراب قطعي حرام ڪيو ويو جيڪو هميشہ لاءِ حرام آهي. امام احمد حضرت ابوهريره رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو: "مُدْمِنُ الْخَمْرِ كَعَابِدِ وَثَنٍ" شرابي شخص بتن جي پوڄاريءَ جهڙو آهي. نسائي حضرت ابن عمر رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو "لَا يَدْخُلُ الْجَنَّةَ عَاقٌّ وَلَا مُدْمِنُ خَمْرٍ" جنت ۾ ماءُ پيءُ جو بي فرمان ۽ شرابي داخل نہ ٿيندا.

## هر قسم جو نشو حرام آهي ۽ نشي ڪندڙ کي سخت سزا ملندي

مسلم ۽ نسائي حضرت جابر رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو "إِنَّ عَلَى اللهِ عَهْدًا لِّمَنْ شَرِبَ الْمُسْكِرَ أَنْ يَّسْقِيَهُ اللهُ مِنْ طِينَةِ الْخَبَالِ قِيْلَ يَا رَسُوْلَ اللهِ وَمَا طِينَةُ الْخَبَالِ؟ قَالَ عِرْقُ أَهْلِ النَّارِ أَوْ عُصَارَةُ أَهْلِ النَّارِ (١) يعني الله تعالىٰ جو عهد ٿيل آهي تہ نشي ڪندڙ کي طينة الخبال پياريندو. عرض ڪيو ويو تہ يارسول الله! طينة الخبال ڇا آهي؟ فرمايائون تہ جهنم وارن جو پگهر يا انهن جي پيٽ مان نڪتل- (پيشاب وغيره) عبد بن حميد پنهنجي سند سان

(١) ڪتاب الڪبائر للذهبي ص٨٨- ٨٩

حضرت ابوسعيد خدريءَ رضي الله عنه کان روايت آندي آهي ته "طينة الخبال جهنم وارن جو رت ۽ پونئن هوندا." آيت مذڪوره ۾ نمازين کي احکم الحاکمين رب جي دربار ۾ حاضريءَ جا آداب سيکاريا ٿا وڃن ته باادب ۽ باهوش نماز پڙهو بيهوشيءَ جي حالت ۾ حاضري ڏيڻ ادب جي خلاف آهي.

## مسئلو

جيئن نشي جي حالت ۾ نماز پڙهڻ منع آهي تيئن جيڪڏهن ڪنهن کي ننڊ جو غلبو اهڙو آهي جو خبر نه ٿي پويس ته ڇا چئي رهيو آهي ته اهوبه ان حالت ۾ نماز نه پڙهي ٿورو آرام ڪري پوءِ پڙهي. جيئن رسول الله صلی الله عليه وسلم جن جو فرمان آهي ته "اِذَا نَعِسَ اَحَدُكُمْ فِى الصَّلٰوةِ فَلْيَرْقُدْ حَتّٰى يَذْهَبَ عَنْهُ النَّوْمُ فَاِنَّهٗ لَا يَدْرِىْ لَعَلَّهٗ يَسْتَغْفِرُ فَيَسُبَّ نَفْسَهٗ" (١) يعني اوهان مان ڪو هڪڙو جيڪڏهن نماز ۾ اوباسيون ٿو ڏي ته پوءِ جاڳائي ته سمهي رهي تانجو سندس ننڊ وڃي پوري ٿئي اهو خبر نه ٿو رکي ته هو پنهنجي خيال ۾ معافي پيو گهري پر پاڻ کي گاريون ڏئي رهيو آهي.

"وَلَا جُنُبًا اِلَّا عَابِرِىْ سَبِيْلٍ حَتّٰى تَغْتَسِلُوْا" ۽ تڙ جي حالت ۾ به نماز کي ويجها نه وڃو، مگر ان حالت ۾ جو اوهان سفر ڪري رهيا آهيو تانجو وهنجو. مقصد ته جيڪڏهن اوهان تڙ سان آهيو ته ان حالت ۾ وهنجڻ کان سواءِ نماز کي ويجها نه وڃو پر جيڪڏهن مسافر آهيو ۽ پاڻي استعمال ڪرڻ تي (پاڻي نه هجڻ يا ڪنهن عذر جي ڪري) قادر ناهيو ته پوءِ تيمم ڪيو جيئن اڳتي ان جو ذڪر اچي رهيو آهي ۽ ان تيمم سان وقت جي اندر نماز پڙهو.

## غسل ڪرڻ ۾ حڪمت

جاڻڻ گهرجي ته گهرواريءَ سان گڏ ٿيڻ يا ننڊ جي حالت ۾ تڙ پوڻ سان انسان جُنُبُ (مٽي ميرو) ٿي ويندو آهي. ان جي پاڪائي صرف وضوءَ سان نه ٿيندي آهي بلڪ ان تي وهنجڻ فرض هوندو آهي ان جو سبب هي آهي ته ان حالت ۾ انساني جسم جي اعصاب تي ڪمزوريءَ جي ڪيفيت طاري ٿيندي آهي جيڪا پاڻي استعمال ڪرڻ سان ختم ٿيندي ۽ اهڙي خوشي ايندي آهي جو انسان پاڻ ۾ تازگي محسوس ڪندو آهي. "وَاِنْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى" کان "وَاَيْدِيْكُمْ" تائين ڇئن صورتن جو بيان آهي ١- هڪ "وَاِنْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى" جيڪڏهن بيمار آهيو ٢- ٻي "اَوْ عَلٰى سَفَرٍ" يا سفر ۾

(١) القرطبي ص٤٢٣ ج٥

آهيو ٣- ٽين "اَوۡ جَآءَ اَحَدٌ مِّنۡكُمۡ مِّنَ الۡغَآئِطِ" يا اوهان مان کو ڪاڪوس مان پيشاب يا پائخانو ڪري آيو. ۴- چوٿين "اَوۡ لٰمَسۡتُمُ النِّسَآءَ" يا عورتن سان هٿ چراند (جماع) ڪري چڪا آهيو. "فَلَمۡ تَجِدُوۡا مَآءً" پوءِ پاڻي نه ٿا لهو يعني پاڻي ناهي يا آهي ته ان جي استعمال ڪرڻ تي ڪنهن به عذر جي ڪري قادر ناهيو ته "فَتَيَمَّمُوۡا صَعِيۡدًا طَيِّبًا" پوءِ پاڪ صاف مٽيءَ تي تيمم ڪيو. "فَامۡسَحُوۡا بِوُجُوۡهِكُمۡ وَاَيۡدِيۡكُمۡ" پوءِ انهيءَ مٽيءَ سان پنهنجن منهن ۽ هٿن کي مک ڪيو. "اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا غَفُوۡرًا" بيشڪ الله معاف ڪندڙ، بخشيندڙ آهي جنهن مهرباني ڪري ٻانهن کي تيمم جي نعمت عطا ڪئي آهي.

## تيمم ڇاسان ڪجي ۽ ان جي صورت ڪهڙي آهي؟

اهي ٻئي شيون هن آيت ۾ ذڪر ڪيل آهن. ١- پهرين شئي جي متعلق ارشاد آهي "صَعِيۡدًا طَيِّبًا" صعيد جي معنيٰ آهي وجه الارض سواءَ ڪان عليه تراب اولم يکن (١) يعني زمين جي مٿين سطح ان تي مٽي هجي يا نه هجي. حضرت امام ابوحنيفه عليه الرحمه وٽ مٽي ۽ مٽيءَ جي جنس مان سيني شين مثلاً پٿر ۽ ريتيءَ وغيره سان به تيمم ڪرڻ جائز آهي ڀلي ان تي غبار نه هجي. (٢)

## تيمم ڪرڻ جو طريقو

اهو هي آهي ته پهريان تيمم جي نيت ڪري ان ڪان پوءِ ٻئي هٿ زمين تي هڻي جيڪڏهن انهن تي غبار گهڻو لڳل هجي ته انهن کي هڪ ٻئي سان ٽڪائي ڇنڊي يا ڦوڪ سان غبار لاهي ان ڪان پوءِ منهن کي هٿ لڳائي مهٽي ۽ ٻيو ڀيرو وري به ان ئي نموني سان هٿ زمين تي هڻي ڇنڊي ٻنهي ٻانهن جي ٺونٺين تائين مهٽي پر اهڙي ڪوشش ڪري جو انهن مان ڪا ذري به رهجي نه وڃي. اهو آهي تيمم جنهن سان وضو جهڙي ڪامل پاڪائي حاصل ٿيندي آهي.

## مسئلو

جيڪڏهن امام تيمم وارو آهي ته وضوءَ واري جماعتيءَ جي ان جي پويان نماز جائز آهي ۽ وقت جي اندر تيمم سان جيترين به نمازون پڙهي ته پڙهي سگهي ٿو. وڌيڪ تيمم جا مسئلا فقه جي ڪتابن مان ملندا. شائقين پڙهي ياد ڪري سگهن ٿا.

(١) تفسير فتح القدير ص٤٧٢ ج١ (٢) تفسيرات احمديه ص٢٩١

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ اُوْتُوْا نَصِيْبًا مِّنَ الْكِتٰبِ يَشْتَرُوْنَ

ڇا نہ ڏٺو تو انهن ڏانهن جو ڏنا ويا ڀاڱو ڪتاب مان خريد ٿا ڪن

الضَّلٰلَةَ وَيُرِيْدُوْنَ اَنْ تَضِلُّوا السَّبِيْلَ ﴿۴۴﴾ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ

گمراهي ۽ ارادو ٿا ڪن تہ ڦري وڃو (سچ جي) واٽ ڪان ۽ الله وڌيڪ ڄاڻندڙ آهي

بِاَعْدَآئِكُمْ ؕ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَلِيًّا ۙ وَّكَفٰى بِاللّٰهِ نَصِيْرًا ﴿۴۵﴾ مِنَ الَّذِيْنَ

اوهان جي دشمنن ڪي ۽ ڪافي آهي الله حمايت ڪندڙ ۽ ڪافي آهي الله مدد ڪندڙ ڪي ماڻهو

هَادُوْا يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ عَنْ مَّوَاضِعِهٖ وَيَقُوْلُوْنَ سَمِعْنَا

انهن مان جو يهودي ٿيا ڦيرائين ٿا لفظن ڪي سندن جاين ڪان ۽ چون ٿا تہ ٻڌوسون

وَعَصَيْنَا وَاسْمَعْ غَيْرَ مُسْمَعٍ وَّرَاعِنَا لَيًّا ۢ بِاَلْسِنَتِهِمْ وَطَعْنًا

۽ بي فرمان ٿياسون ۽ ٻڌ اڻ ٻڌو ڪري ۽ چون ٿا راعنا مروڙي زبانون پنهنجون ۽ طعني هڻڻ لاءِ

فِى الدِّيْنِ ؕ وَلَوْ اَنَّهُمْ قَالُوْا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا وَاسْمَعْ وَانْظُرْنَا

دين ۾ ۽ جيڪڏهن تحقيق اهي چون ها تہ ٻڌوسون ۽ تابعداري ڪئي سون ۽ ٻڌ ۽ نگاهہ (ڪرم) ڪر

لَكَانَ خَيْرًا لَّهُمْ وَاَقْوَمَ ۙ وَلٰكِنْ لَّعَنَهُمُ اللّٰهُ بِكُفْرِهِمْ فَلَا

تہ هجي ها ڀلو انهن جي لاءِ ۽ وڌيڪ سڌوسنئون ۽ پر لعنت ڪئي انهن ڪي الله سندن ڪفر جي ڪري پوءِ نہ ٿا

يُؤْمِنُوْنَ اِلَّا قَلِيْلًا ﴿۴۶﴾ يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ اٰمِنُوْا بِمَا

ايمان آڻين مگر ٿورا اي ڪتاب وارؤ! ايمان آڻيو ان تي جو نازل ڪيوسون

نَزَّلْنَا مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَكُمْ مِّنْ قَبْلِ اَنْ نَّطْمِسَ وُجُوْهًا فَنَرُدَّهَا

سچو ڪندڙ آهي ان جو جيڪو اوهان سان گڏ آهي ان کان اڳي جو ميٽي ڇڏيون ڪيترن جي منهن کي پوءِ

عَلٰۤى اَدْبَارِهَاۤ اَوْ نَلْعَنَهُمْ كَمَا لَعَنَّاۤ اَصْحٰبَ السَّبْتِ ؕ وَكَانَ

موٽايون انهن کي سندن پٺين ڏانهن يا لعنت ڪيون انهن کي جيئن لعنت ڪئي سون ڇنڇر جي ڏينهن وارن کي ۽ آهي

اَمْرُ اللّٰهِ مَفْعُوْلًا ﴿۴۷﴾

الله جو امر (پڪو) ڪيل.

# تفسير

هنن آيتن ۾ يهودين جي بعضي براين ۽ انهن جي مڪر ۽ فريب کان خبردار ڪندي فرمايو ويو آهي ته: "اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ اُوْتُوْا نَصِيْبًا مِّنَ الْكِتٰبِ يَشْتَرُوْنَ الضَّلٰلَةَ وَيُرِيْدُوْنَ اَنْ تَضِلُّوا السَّبِيْلَ" يعني اوهان انهن کي نه ڏٺو آهي جن کي ڪتاب (توراة، انجيل وغيره) مان حصو ڏنو ويو آهي. جو اهي ان نعمت جو قدر نه ڪندي مال ۽ مرتبي حاصل ڪرڻ جي لاءِ الله جي حڪمن کي جيڪي سندن سعادت ۽ فلاح جا ضامن آهن نظرانداز ڪري ڀاڻ ته گمراهي خريد ٿا ڪن پر اوهان کي به ڦيرائڻ جو ارادو ٿا ڪن. اهي ظاهر ۾ اوهان جا خيرخواه ۽ مخلص دوست آهن پر باطن ۾ اوهان جا بدترين دشمن آهن. "وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِاَعْدَآئِكُمْ" ۽ الله اوهان جي دشمنن کي وڌيڪ ڄاڻندڙ آهي. انهن جي فريب کان هوشيار رهو، انهن جي مڪر ۾ اچي الله تعالىٰ جا بي فرمان نه بنجو. "وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَلِيًّا وَّكَفٰى بِاللّٰهِ نَصِيْرًا" اوهان جي حمايت ڪرڻ ۽ اوهان جي مدد ڪرڻ لاءِ الله ڪافي آهي ان کي پنهنجو حامي ۽ مددگار بنايو ان جي حڪمن جي پيروي ڪيو جيڪڏهن اوهان کي ان جي دوستي ۽ مدد ملي ته پوءِ ڪوبه دشمن اوهان کي ايذاءُ

پهچائي نہ سگهندو. "مِنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ عَنْ مَّوَاضِعِهٖ" يعني "يهودين مان كي اهڙا ماڻهو آهن جو بي پرواهي، گستاخي، چاپلوسي ۾ الله تعالىٰ جي كلام ۾ كٽ، سٽ ۾ پنهنجي خواهشات مطابق تاويلون كرڻ انهن جي خصوصيت آهي. جناب رسالت مآب صلى الله عليہ وسلم جن جي تعريف ۾ توصيف وارا كلمات جنهن سان توراة جا صفحا سينگاريل هئا ڦيرائي اتي ٻيو كجهہ لكي حقيقت جو چاٽي واٽي انكار كري هٽرادو معنائون بيان كندا آهن.

"وَيَقُوْلُوْنَ سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا وَاسْمَعْ غَيْرَ مُسْمَعٍ" يعني الله تعالىٰ جي نبي عليه الصلواة والسلام جي حكم كي ٻڌي زبان سان چوندا آهن تہ اسان ٻڌو آ ۾ اتي جو اتي آهستي چون ٿا تہ اسان بي فرماني كئي آهي. "وَاسْمَعْ غَيْرَ مُسْمَعٍ" جون ٻہ معنائون آهن. ١- هك چڱي- اها هيءَ آهي تہ اوهان تعظيم جا لائق آهيو ٻڌو اوهان كي اوهان جي مرضيءَ جي خلاف ٻڌائي نہ ٿو سگهجي. ٢- ٻي چڱي ناهي. يعني ٻڌو، پر اوهان ٻڌوئي كونہ ٿا. "وَرَاعِنَا لَيًّا بِاَلْسِنَتِهِمْ وَطَعْنًا فِى الدِّيْنِ" "رَاعِنَا" جون بہ ٻہ معنائون آهن. ١- هك تہ اوهان اسان جي رعايت كيوتہ اوهان جي فرمان كي سمجهون. ٢- ٻي معنىٰ اسان جو مال چاريندڙ. هي لفظ زبان وڄڙائي چوندا هئا ۾ هتي مراد سندن اها ٻي معنىٰ هئي ۾ دين ۾ طعنا هڻندا هئا.

"وَلَوْ اَنَّهُمْ قَالُوْا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا وَاسْمَعْ وَانْظُرْنَا لَكَانَ خَيْرًا لَّهُمْ وَاَقْوَمَ" يعني جيكڏهن اهي هيئن چون ها تہ اسان اوهان جو فرمان ٻڌو ۾ ان جي اطاعت كئي سون ۾ اوهان اسان جا عرض ٻڌو ۾ اسان تي نگاه كرم فرمايو تہ انهن جي لاءِ ڀلو هو. "وَلٰكِنْ لَّعَنَهُمُ اللّٰهُ بِكُفْرِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُوْنَ اِلَّا قَلِيْلًا" مقصد تہ انهن تي سندن ئي كفر ۾ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي بي ادبي ۾ گستاخيءَ جي كري الله تعالىٰ لعنت كئي آهي. هدايت جي توفيق انهن جو ساٿ ڇڏي وئي آهي ان جي كري انهن مان تورن كان سواءِ ايمان نہ ٿا آڻين.

## فائدو

هن آيت مان ثابت ٿيو تہ الله تعالىٰ پنهنجي محبوب عليہ الصلواة

والسلام جي گستاخ کي سزا پاڻ ڏيندو آهي جيئن مٿي ذڪر ڪيل گستاخن لاءِ فرمان آهي. "وَلٰكِنْ لَّعَنَهُمُ اللّٰهُ بِكُفْرِهِمْ" يعني اهي گستاخ ڪافر آهن ۽ ان گستاخيءَ واري ڪفر جي ڪري الله تعالىٰ انهن تي لعنت ڪئي آهي.

"يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ اٰمِنُوْا بِمَا نَزَّلْنَا مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَكُمْ مِّنْ قَبْلِ اَنْ نَّطْمِسَ وُجُوْهًا فَنَرُدَّهَا عَلٰۤى اَدْبَارِهَا" هنن لفظن ۾ انهن يهودين کي جن جي اڳيان اسلام ۽ پيغمبر اسلام صلى الله عليه وسلم جن جي صداقت روشن هئي ۽ پوءِ به انڪار ڪري رهيا هئا سڌي متنبه ڪيو ويو آهي ته اي ڪتاب وارؤ! جيڪو قرآن اسان نازل فرمايو آهي ۽ اهو اوهان سان گڏ موجود ڪتاب توراة جي به تصديق ڪندڙ آهي ان تي ان کان اڳ ۾ ايمان آڻيو جو اسين ماڻهن جي منهن کي ميٽي ڇڏيون ۽ انهن کي ڦيرائي پوئتي ڪيون. پوءِ اوهان حق جي قبول ڪرڻ واريءَ صلاحيت کان محروم ڪيا ويندؤ اوهان جون اکيون بظاهر ته ڏسنديون پيون پر انهن ۾ حق سڃاڻڻ جي صلاحيت نه رهندي اوهان جا ڪن بظاهر ٻڌندا ته هوندا پر انهن ۾ حق ٻڌڻ جي لياقت نه هوندي. ڪن مفسرن "وُجُوْهًا" مان مراد انهن جا رئيس ورتا آهن يعني انهن کان بخت، ياڳ، عزت، وجاهت، مرتبو ۽ مان کسي ڪين ذليل ۽ خوار ڪري مديني طيبه مان ڪڍي شام جي ملڪ ۾ سيناءَ جي سڄي ۽ خشڪ علائقيَ ڏانهن موٽائيون سندن منهن مان رونق ۽ تازگي ڪڍي ڪين بي نور ۽ بي رونق بنائي ڇڏيون. (١) "اَوْ نَلْعَنَهُمْ كَمَا لَعَنَّاۤ اَصْحٰبَ السَّبْتِ" يا انهن کي ائين لعنت ڪيون جيئن ڇنڇر جي ڏينهن منع جي باوجود شڪار ڪرڻ وارن تي لعنت ڪئي هئي سون جو انهن جون شڪليون ڦري ويون هيون ۽ ماڻهن مان باندر بنجي ويا هئا (٢). (جيئن سورة اعراف ۾ ايندو. انشاءالله تعالىٰ) "وَكَانَ اَمْرُ اللّٰهِ مَفْعُوْلًا" ۽ الله جيڪو امر قانون مقرر ڪيو آهي اهو ضرور جاري ٿيندو. (٣)

(١) الڪشاف ص٥٣٢ ج١ (٢) نور العرفان ص١٣٥
(٣) ترجمان القرآن ص٣٧٣ ج١

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ

بيشڪ الله نہ ٿو بخشي هي (ڳالهہ) جو شريڪ ڪيو وڃي ان سان ۽ بخشي ٿو اهو جو ان کان سواءِ آهي جنهن کي

يَّشَآءُ ۚ وَمَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدِ افْتَرٰٓى اِثْمًا عَظِيْمًا ﴿۴۸﴾ اَلَمْ تَرَ اِلَى

گهري ۽ جيڪو شرڪ ٿو ڪري الله سان پوءِ تحقيق ٺاهيائين گناهہ وڏو ڇا نہ ڏٺو تو

الَّذِيْنَ يُزَكُّوْنَ اَنْفُسَهُمْ ۚ بَلِ اللّٰهُ يُزَكِّيْ مَنْ يَّشَآءُ وَلَا يُظْلَمُوْنَ

انهن ڏانهن جو پاڪ ٿا سمجهن سرن پنهنجن کي بلڪ الله پاڪ ٿو ڪري جنهن کي گهري ۽ نہ ظلم ڪيا ويندا

فَتِيْلًا ﴿۴۹﴾ اُنْظُرْ كَيْفَ يَفْتَرُوْنَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ ۚ وَكَفٰى بِهٖٓ اِثْمًا مُّبِيْنًا ﴿۵۰﴾ ع

ڌاڳي جيترو ڏس ڪيئن ٿا ٺاهين الله تي ڪوڙ ۽ ڪافي آهي اهو گناهہ پڌرو

## تفسير

هن کان اڳ ۾ ڪفر جي ڪري ڪافرن کي دنياوي عذاب ملڻ جو بيان هو ۽ هتي انهن جي اخروي عذاب جي سبب کي بيان ڪندي ٻڌايو ويو آهي تہ "اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَّشَآءُ" يعني الله تعالىٰ اها ڳالهہ نہ ٿو بخشي جو ان سان ڪنهن کي شريڪ ڪيو وڃي ۽ ان کان سواءِ ٻيا جيڪي بہ گناهہ آهن جنهن کي بہ گهري بخشي ٿو.

## شرڪ جي معنيٰ ۽ ان جا قسم

ڄاڻڻ گهرجي تہ شرڪ جي لغوي معنيٰ آهي حصو ۽ شريڪ جي معنيٰ آهي حصيدار- الله تعالىٰ فرمايو آهي "اَمْ لَهُمْ شِرْكٌ فِى السَّمٰوٰتِ" ڇا انهن جو آسمان ۾ حصو آهي ۽ شرعي اصطلاح ۾ ڪنهن کي الله تعالىٰ جي برابر ۽ ان وانگر عبادت جو حقدار سمجهڻ کي شرڪ سڏيو ويو آهي. پوءِ ان جا گهڻا قسم آهن ١- هڪ

تہ کنهن کي اللہ تعالیٰ وانگر مستقل خالق ۽ مالک سمجهي جيئن مجوسي ٻہ مستقل خدا مڃيندا آهن ١- هڪ اهرمن ٢- ٻيو يزدان. ٢- ٻيو تہ کنهن کي اللہ تعالیٰ جو اولاد مڃي جيئن مشرڪ ملائڪن کي اللہ تعالیٰ جون ڌيئرون سمجهندا هئا ۽ يهودي عزير عليہ السلام کي ۽ نصاري حضرت عيسیٰ عليہ السلام کي اللہ تعالیٰ جو پٽ سمجهيو ويٺا آهن وغيره. (١) علامہ محمد بن احمد انصاريءَ عليہ الرحمة لکيو آهي تہ شرڪ جا ٽي مرتبا آهن ۽ ٽئي حرام آهن. ١- هڪ اللہ تعالیٰ جي الوهيت ۾ کنهن کي شريڪ سمجهڻ ۽ اهو وڏو جاهليت جو شرڪ آهي. جيئن کنهن انسان، جن پٿر، وڻ وغيره کي الہ مڃڻ. ٢- ٻيو اللہ تعالیٰ جي لاءِ سندس ڪم ۾ شريڪ مڃڻ ۽ اهو هيءُ آهي جو کنهن ٻئي کي ڪم ڪرڻ ۾ مستقل سمجهي تہ اهو اللہ تعالیٰ جي امر ۽ اذن کان سواءِ ئي سڀ ڪجهہ ڪري سگهي ٿو. ٣- ٽيون عبادت ۾ شرڪ يعني رياءُ ڪرڻ. (٢) هنن ٽنهي قسمن ۾ غور ڪيو تہ ڪوبہ مسلمان کنهن جي لاءِ بہ پلي ڪٽي حضور صلي اللہ عليہ وسلم جن جي ذات بابرڪات هجي اهڙو عقيدو ڪونہ ٿو رکي. ان جي ڪري هرويرو مسلمانن کي مشرڪ ثابت ڪرڻ لاءِ اجايا زور نہ ڏيڻ گهرجن.

## شرڪ ڇونہ ٿو بخشيو وڃي

ذهن نشين ڪرڻ گهرجي تہ جيئن هر حڪومت ۾ ٻين ڏوهن، گناهن جي معافيءَ لاءِ دروازا کليل هوندا آهن پر ملڪ ۽ حڪومت جي خلاف بغاوت جي لاءِ معافي نہ هوندي آهي تيئن شرڪ بہ اللہ تعالیٰ جي خلاف بغاوت آهي ان جي ڪري مشرڪ لاءِ مغفرت نہ هوندي آهي اللہ تعالیٰ جي بادشاهيءَ ۽ فرمانروائيءَ ۾ کنهن کي شريڪ بنائڻ ان مطلق قادر ۽ حقيقي شهنشاهہ جي حاڪميت اعليٰ ۽ مطلق اقتدار جي منافي آهي. ان حقيقي بادشاهہ، مالڪ، خالق جي الوهيت جي انڪار ڪرڻ يا ان وانگر ٻئي کي سمجهڻ جهڙو ڪوبہ ٻيو جرم ۽ گناهہ ناهي. ان جي ڪري اهل السنة والجماعة جو عقيدو اهو آهي تہ شرڪ، توبہ ڪري ايمان آڻڻ کان سواءِ معاف ناهي ۽ شرڪ کان سواءِ ٻيا گناهہ اللہ تعالیٰ جي مشيت (گهر) جي هيٺان آهن توبہ سان بخشي يا ائين ٻاجهہ ۽ فضل ڪري معاف ڪري تہ ڪري سگهي ٿو. پوءِ اهي ٻيا گناهہ ننڍا

(١) تفسير نعيمي ص١٢٧ ج٥ (٢) تفسير قرطبي ص١٨١ ج٥.

هجن يا وڏا. (١) جيئن الله تعالىٰ جو فرمان آهي "اِنَّ اللهَ يَغْفِرُ الذُّنُوبَ جَمِيْعًا" يقينا الله سيئي گناهہ بخشيندو آهي. ۽ مسلم شريف ۾ روايت آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "مَنْ مَاتَ لَا يُشْرِكُ بِاللهِ شَيْئًا دَخَلَ الْجَنَّةَ" يعني جيڪو شرڪ کان آزاد ٿي مرندو تہ جنت ۾ داخل ٿيندو. (٢) "وَمَنْ يُّشْرِكْ بِاللهِ فَقَدِ افْتَرٰى اِثْمًا عَظِيْمًا" يعني جيڪو الله تعالىٰ سان ڪنهن کي ڪنهن بہ نموني شريڪ ٿو بنائي ان وڏو گناهہ ڪيو آهي. جيئن ابوبڪر بزار پنهنجي مسند ۾ حضرت انس بن مالڪ رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو: اَلظُّلْمُ ثَلَاثَةٌ فَظُلْمٌ لَّا يَغْفِرُهُ اللهُ وَظُلْمٌ يَغْفِرُ اللهُ وَظُلْمٌ لَّا يَتْرُكُ اللهُ مِنْهُ شَيْئًا فَاَمَّا الظُّلْمُ الَّذِيْ لَا يَغْفِرُهُ اللهُ فَالشِّرْكُ وَقَالَ اِنَّ الشِّرْكَ لَظُلْمٌ عَظِيْمٌ (٣) وَاَمَّا الظُّلْمُ الَّذِىْ يَغْفِرُهُ اللهُ فَظُلْمُ الْعِبَادِ لِاَنْفُسِهِمْ فِيْمَا بَيْنَهُمْ وَبَيْنَ رَبِّهِمْ وَاَمَّا الظُّلْمُ الَّذِىْ لَا يَتْرُكُهُ فَظُلْمُ الْعِبَادِ بَعْضِهِمْ بَعْضًا حَتّٰى يَدِيْنَ لِبَعْضِهِمْ مِنْ بَعْضٍ (٤) يعني ظلم ٽي قسم آهي ١- هڪ اهو جيڪو الله نہ ٿو بخشي ٢- ٻيو اهو جيڪو الله بخشي ٿو. ٣- ٽيون اهو جنهن مان ڪابہ شيءِ نہ ٿو ڇڏي. پوءِ جيڪو نہ ٿو بخشي اهو شرڪ آهي جيئن فرمان آهي تہ "يقيناً شرڪ وڏو ظلم آهي ۽ جيڪو بخشي ٿو اهو ٻانهن جو پاڻ تي پاڻهي ظلم آهي جيڪو سندن ۽ رب جي وچ ۾ آهي ۽ جنهن مان ڪجهہ بہ نہ ٿو ڇڏي اهو ٻانهن جو هڪ ٻئي سان ظلم آهي جيستائين هڪ ٻئي کي حساب ڏين.

"اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ يُزَكُّوْنَ اَنْفُسَهُمْ بَلِ اللهُ يُزَكِّيْ مَنْ يَّشَآءُ" يعني ڇا اوهان انهن کي نہ ڏٺو آهي جيڪي پنهنجي پاڻ کي پاڪ صاف ٿا سمجهن. جيئن يهودي ايترين خرابين جي هوندي بہ پاڻ کي پاڪ ۽ مقدس سمجهندا هئا تانجو معاذالله پاڻ تي ابناءالله (الله جا پٽ) يا احباءالله (الله جا پيارا) چورائيندا هئا جيڪو صفا اجايو ۽ بالڪل باطل آهي. پاڪ رکڻ ۽ صاف بنائڻ تہ الله جل شانہ جو شان آهي جنهن کي گهري ٿو ان کي پاڪ صاف رکي ٿو، صرف هٿاڪن سان ڪجهہ نہ ٿي سگهندو آهي. "وَلَا يُظْلَمُوْنَ فَتِيْلًا" ۽ ڪارڪ جي ککڙي جي وچ ۾ جيڪا سنهي تند هوندي آهي، ان جيتروبہ انهن سان ظلم نہ ڪيو ويندو. انهن جو عذاب ۾ وجهڻ سندن بدعقيدن ۽ بڇڙن عملن جو نتيجو هوندو.

(١) تفسيرات احمديہ ص٢٩٢- ٢٩٣ (٢) تنوير الاذهان ص٣٤٤ جلد ١ جزء ٥
(٣) سورة لقمان آيت ٣ (٤) تفسير القاسمي تحت هذه الاية

## پنهنجي يا ٻئي جي تعريف ڪرڻ جو مسئلو

ڇاڪاڻ گهرجي تہ ٽن وجهن جي ڪري پنهنجي يا ٻئي جي تعريف ڪرڻ ناجائز آهي. ١- هڪ تہ مدح ۽ تعريف جي ڪري تڪبر پيدا ٿيندو آهي. ٢- ٻيو تہ ڪنهن جو خاتمو ڪيئن ٿئي ايمان، تقوىٰ ۽ پرهيزگاريءَ تي يا نہ اها خبرالله تعالىٰ کي آهي. ان جي ڪري پاڻ کي پاڪ سمجهڻ يا ٻئي لاءِ پاڪ هجڻ جو فيصلو ڏيڻ الله تعالىٰ جي خوف هجڻ جي خلاف آهي. ٣- ٽيون تہ گهڻو ڪري اهڙيءَ دعوىٰ سان ڪن ماڻهن ۾ وهم پيدا ٿيندو آهي تہ هي ماڻهو الله تعالىٰ وٽ ان جي ڪري مقبول آهي جو سيني عيبن ۽ نقصن کان پاڪ آهي حالانڪ اهو ڪوڙ آهي ڇوتہ ٻانهي ۾ ڪيترا عيب بہ هوندا آهن. پر جيڪڏهن مٿيون ڳالهيون ڪنهن ۾ ناهن ۽ ڪو ٻانهو الله تعالىٰ جي نعمت جي اظهار لاءِ پنهنجون خوبيون بيان ڪري تہ پوءِ جائز آهي. علامہ قرطبيءَ لکيو آهي تہ هڪ شخص جو حضور صلى الله عليہ وسلم جن جي دربار ۾ ذڪر نڪتو تہ ٻئي ان جي ثنا ڪرڻ شروع ڪئي. پاڻ صلى الله عليہ وسلم جن ان کي روڪيندي فرمايو تہ "تو پنهنجي ان ساٿيءَ جو ڪنڌ ڪپي ڇڏيو." جيڪڏهن هرويرو ڪنهن جي مدح ڪرڻي آهي تہ اهو ائين چوي تہ مان سمجهان ٿو تہ فلاڻو هيئن، هيئن آهي وڌيڪ ان جو حساب الله تعالىٰ وٽ آهي ۽ ڪنهن کي پاڪ صاف ڪري پيش نہ ڪيو وڃي ڇوتہ اها ڳالهہ ان کي خودپسنديءَ ۽ تڪبر تي آماده ڪندي ۽ اهو آهستي آهستي هلي نيڪ عمل ڪرڻ ڇڏي ڏيندو ۽ ان جي ڪري رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي فرمان "اُحْثُو التُّرَابَ فِیْ وُجُوْہِ الْمَدَّاحِيْنَ" (ڦندائيندڙن جي منهن ۾ ڌوڙ وجهو) جو علماءِ ڪرام مطلب اهو بيان ڪيو آهي تہ ان مان مراد اهي ماڻهو آهن جيڪي غلط طريقي سان منهن جا مٺڙا تي ڦندائين ٿا ۽ ڪنهن جي لاءِ اهي ڳالهيون ٿا ڪن جن جو ان ۾ وجود ئي ناهي ۽ اهي ان طريقي سان ان کي ڪائيندا ۽ تباهہ ڪندا آهن پلا جيڪڏهن ڪنهن ماڻهوءَ ۾ ڪي سهڻيون صفتون آهن ۽ انهن کي ان نيت سان بيان ڪرڻ تہ ماڻهو انهن مان نصيحت وٺي پاڻ ۾ بہ اهي پيدا ڪن تہ اهو نہ غلط آهي ۽ نہ مٿئين حڪم ۾ داخل پر انهيءَ سڀ جو مدار نيت تي آهي. جيئن مالڪ مٿي جو فرمان آهي "وَاللّٰہُ يَعْلَمُ الْمُفْسِدَ مِنَ الْمُصْلِحِ" (١) ۽ الله ڄاڻي ٿو تہ

(١) سورة البقره آيت ٢٢٠

فسادي ڪير ۽ اصلاح ڪندڙ ڪير آهي. حضور پرنور، شافع يوم البعث والنشور صلى الله عليہ وسلم جن جي مدح ۾ حضرت حسان، حضرت عباس ۽ حضرت ڪعب بن زهير رضي الله عنهم وغيرهم شعر چيا ۽ سندن روبرو پڙهيا پر نہ پاڻ انهن تي ناراض ٿيا ۽ نہ انهن کي منع ڪيائون. (١) ان موضوع تي هن گنهگار جو لکيل ڪتاب "ماڻڪ موتي لال" ڏسو جنهن ۾ قرآن ڪريم ۽ حديث پاڪ جي روشنيءَ ۾ وڏي تحقيق ٿيل آهي. - ولله الحمد-

"اُنْظُرْ كَيْفَ يَفْتَرُوْنَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ" هن لفظن ۾ الله تعالىٰ پنهنجي محبوب نبي صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن کي عجب ڏياريندي فرمايو تہ "ڏس تہ ڪيئن ٿا الله تعالىٰ تي ڪوڙ هڻن. " جو چون ٿا تہ اسين الله جا پٽ يا ان جا پيارا آهيون ۽ اسين گناهن کان ائين صاف آهيون جيئن اسان جا پٽ مائرن جي پيٽن مان پاڪ ڄمندا آهن. معنيٰ اسان تي گناهہ آهن ئي ڪونہ. ڄاڻڻ گهرجي تہ ٻئي ڪنهن ماڻهوءَ تي ڪوڙ هڻڻ بہ گناهہ آهي تہ الله تعالىٰ تي ڪوڙ هڻڻ ڪيترو نہ وڏي ۾ وڏو گناهہ هوندو- هر عقلمند ان جو اندازو لڳائي سگهي ٿو. علامہ حقانيءَ لکيو آهي تہ يهودي چوندا هئا تہ اسين رات جو گناهہ ڪيون ٿا تہ صبح جو خودبخود پاڪ ٿي ٿا وڃون ۽ نصارن ۾ پولوس جو چوڻ آهي تہ حضرت عيسى عليہ السلام اسان سيني جا گناهہ ڪٽي ويو. برهمڻ وغيره ۽ ڪيتريون دنيا جون قومون بہ اهڙا ڪوڙ هڻن ٿيون. ڪيترا جاهل مسلمان سڏائڻ وارا بہ انهن جي تقليد ڪندي چوندا آهن تہ اسين فلاڻيءَ هستيءَ جو اولاد آهيون اسان کي ڪجهہ نہ ٿيندو پر اهو سڀ ڪوڙ ٿا هڻن. (٢) اسلام، ايمان ۽ قرآن ڪريم جي روشنيءَ ۾ تحقيق ڪن ها تہ اهو غلط ذهن نہ رکن ها.

"وَكَفٰى بِهٖٓ اِثْمًا مُّبِيْنًا" يعني ايڏي تهمت ۽ وڏو ڪوڙ هڻڻ کليل گناهہ هجڻ لاءِ ڪافي آهي ۽ ان کليل گناهہ ڪرڻ وارو ۽ ان کان ڪنارو ڪري نہ بچڻ وارو، ڪيئن الله تعالىٰ جو پيارو، برگزيدو، پلارو ۽ پاڪ صاف ٿي سگهندو؟ (٣)

---

(١) تفسير القرطبي ص٢٤٧ ج٥ (٢) تفسير حقاني ص١٩٦ ج سوم پ ٥
(٣) روح المعاني ص٥٥ جلد٢ جزء ٥

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ اُوْتُوْا نَصِيْبًا مِّنَ الْكِتٰبِ يُؤْمِنُوْنَ بِالْجِبْتِ

ڇا نہ ڏٺو تو انهن ڏانهن جو ڏنا ويا هڪ حصو ڪتاب مان ايمان ٿا آڻين بتن تي

وَالطَّاغُوْتِ وَيَقُوْلُوْنَ لِلَّذِيْنَ كَفَرُوْا هٰۤؤُلَاۤءِ اَهْدٰى مِنَ الَّذِيْنَ

۽ شرير قوت تي۽ چون ٿا انهن کي جو ڪفر ڪيائون تہ هي وڌيڪ هدايت وارا آهن انهن کان

اٰمَنُوْا سَبِيْلًا ﴿٥١﴾ اُولٰۤئِكَ الَّذِيْنَ لَعَنَهُمُ اللّٰهُ وَمَنْ يَّلْعَنِ اللّٰهُ فَلَنْ

جو ايمان آندائون سڌي واٽ جي لحاظ سان اهي ئي آهن جو لعنت ڪئي انهن تي الله ۽ جنهن کي لعنت ٿو ڪري الله

تَجِدَ لَهٗ نَصِيْرًا ﴿٥٢﴾ اَمْ لَهُمْ نَصِيْبٌ مِّنَ الْمُلْكِ فَاِذًا لَّا يُؤْتُوْنَ

پوءِ هرگز نہ لهندين ان لاءِ ڪو مدد ڪندڙ ڇا انهن لاءِ حصو آهي بادشاهيءَ مان؟ پوءِ انهيءَ وقت نہ ڏيندا

النَّاسَ نَقِيْرًا ﴿٥٣﴾ اَمْ يَحْسُدُوْنَ النَّاسَ عَلٰى مَاۤ اٰتٰهُمُ اللّٰهُ مِنْ

ماڻهن کي ڪو ذرو ڇا حسد ٿا ڪن ماڻهن سان ان تي جو ڏنو انهن کي الله پنهنجي

فَضْلِهٖ فَقَدْ اٰتَيْنَاۤ اٰلَ اِبْرٰهِيْمَ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَاٰتَيْنٰهُمْ

فضل مان پوءِ تحقيق ڏنوسون اولاد ابراهيمجي کي ڪتاب ۽ حڪمت ۽ ڏني سون انهن کي

مُّلْكًا عَظِيْمًا ﴿٥٤﴾ فَمِنْهُمْ مَّنْ اٰمَنَ بِهٖ وَمِنْهُمْ مَّنْ صَدَّ عَنْهُ

بادشاهي وڏي پوءِ ڪو انهن مان اهو آهي جو ايمان آڻي ٿو ان تي ۽ ڪو انهن مان اهو آهي جو روڪي ٿو ان کان

وَكَفٰى بِجَهَنَّمَ سَعِيْرًا ﴿٥٥﴾

۽ ڪافي آهي جهنم جي باهہ ٻرڪندڙ

# تفسير

چاڻڻ گهرجي تہ هن کان اڳ ۾ "اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ اُوْتُوْا نَصِيْبًا مِّنَ الْكِتَابِ يَشْتَرُوْنَ الضَّلٰلَةَ" کان يهودين جي بدخصلتن ۽ برين عادتن جو ذڪر هلي رهيو هو. هتي بہ انهن جي ٺي غلط ڪردار جو ذڪر ڪندي ٻڌايو ويو آهي تہ: "اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ اُوْتُوْا نَصِيْبًا مِّنَ الْكِتَابِ يُؤْمِنُوْنَ بِالْجِبْتِ وَالطَّاغُوْتِ" يعني اي محبوب عليه الصلواة والسلام! ڇا اوهان انهن يهودين جي عالمن کي نہ ڏٺو جن کي ڪتاب (توراة) جي علم جو حصو ڏنو ويو پر ان هوندي بہ بتن ۽ شر جي قوتن شيطانن وغيرهم کي مڃين ٿا مشرڪن جو دين بت پرستي ۽ شيطان جي پيروي آهي جڏهن ان کي سنو چيائون تہ ڄڻ بتن ۽ شيطانن کي مڃيائون.

## جبت ۽ طاغوت جي معنيٰ

ان ۾ مختلف قول آهن مگر سيني جو مقصد اهو آهي تہ الله کان سواءِ ٻيءَ جنهن بہ شيءِ جي پوڄا ڪئي وڃي ۽ جيڪو انتها درجي جو شرير ۽ فسادي هجي اهو جبت ۽ طاغوت آهي (١)

"وَيَقُوْلُوْنَ لِلَّذِيْنَ كَفَرُوْا هٰٓؤُلَآءِ اَهْدٰى مِنَ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا سَبِيْلًا" يعني اهي اهل ڪتاب، علم وارا ٿي ڪري بہ ڪافرن لاءِ چون ٿا تہ هي مومنن کان وڌيڪ سڌي واٽ تي ۽ هدايت وارا آهن، اصل ۾ اها ڳالهہ هيئن هئي جو جڏهن يهودين جا اڳواڻ مڪي پاڪ ۾ قريشين ڪافرن وٽ آيا ۽ انهن هنن کان پڇيو تہ اوهان اهل علم آهيو ٻڌايو تہ اسين حق تي آهيون يا (حضرت) محمد (ﷺ) جن؟ تہ انهن ڪين راضي ڪندي چيو تہ اوهان حق تي آهيو. تڏهن الله تعاليٰ پنهنجي محبوب نبي ڪريم ﷺ جن سان تعجب جو اظهار ڪندي مٿيون ذڪر فرمايو. "اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ لَعَنَهُمُ اللّٰهُ" يعني اهي ٺي آهن جن تي الله تعاليٰ لعنت ڪئي آهي جو محض دنيوي طمع ۽ خواهشات جي ڪري سچي دين کان پري ٿي ويا آهن. "وَمَنْ يَّلْعَنِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ نَصِيْرًا" ۽ جنهن کي الله تعاليٰ لعنت ٿو ڪري ان لاءِ اوهان کي ڪو بہ مددگار نہ ملندو.

(١) تفسير ڪبير ص١٢٩ جزءُ ١٠)

# لعنت جا حقدار ڪير آهن؟

١- هڪ حديث ۾ آهي تہ: وياج ڏيندڙ، وياج کائيندڙ، وياج لکندڙ ۽ وياج جي شاهد تي رسول الله ﷺ لعنت ڪئي آهي، ٢- ٻيءَ حديث ۾ آهي تہ: لونڊي باز تي لعنت آهي. ٣- ٽينءَ حديث ۾ آهي تہ: چور تي لعنت آهي. ۴- چوٿينءَ حديث ۾ آهي تہ فوٽو ڪيندڙ، سئيءَ سان بدن تي ڪارا داغ ڪيندڙ ۽ داغ ڪيرائيندڙ تي لعنت آهي، ٥- پنجينءَ حديث ۾ آهي تہ شراب پيئندڙ، پيارينندڙ، وڪڻندڙ، خريدار، نپوڙيندڙ، ڪٽي هلندڙ، گهرائيندڙ، سيني تي لعنت آهي. ٦- ڇهين حديث ۾ آهي تہ ڇهہ(٦) ماڻهو اهڙا آهن جن تي مون بہ لعنت ڪئي آهي ۽ الله تعالىٰ بہ لعنت ڪئي آهي، ۽ هر نبي جي دعا قبول هوندي آهي. ١- هڪ الله جي ڪتاب ۾ واڌارو ڪندڙ. ٢- ٻيو زوريءَ اقتدار حاصل ڪري عزت وارن کي بي عزت ڪندڙ ۽ بي عزتن کي عزت ڏيندڙ ٣- ٽيون الله تعالىٰ جي تقدير کي ڪوڙو چوندڙ ۴- چوٿون الله تعالىٰ جي حرام ڪيل شين کي حلال چوندڙ. ٥- پنجون منهنجي اولاد مان اهو شخص جيڪو حرام کي حلال چوي. ٦- ڇهون منهنجي سنت کي ڇڏيندڙ. ٧- ستينءَ حديث ۾ آهي تہ: بري نظر سان ڏسندڙ ۽ بري نظر سان ڏٺل (جيڪو ان ۾ راضي آهي) ٻنهي تي لعنت آهي. ٨- اٺينءَ حديث ۾ آهي تہ: جيڪو مرد عورت جو لباس پڪي ۽ جيڪا عورت مرد جو لباس پڪي انهن ٻنهي تي بہ لعنت آهي (١)

## مسئلو

ڪو ماڻهو ڪيترو بہ گنهگار هجي، پر جيستائين ان جي ڪفر تي مرڻ جو يقين ناهي تيستائين ان تي لعنت ڪرڻ جائز ناهي، پر جيڪڏهن ڪنهن جي ڪفر تي مرڻ جو يقين آهي تہ ان تي لعنت ڪرڻ جائز آهي، لعنت جي لغوي معنىٰ آهي الله تعالىٰ جي رحمت کان پري هجڻ ۽ شرعي معنىٰ- ڪافر جي حق ۾ آهي الله تعالىٰ جي رحمت کان پري هجڻ ۽ مسلمان جي حق ۾ آهي صالحن جي درجي کان هيٺ ڪري پوڻ (٢)

"اَمْ لَهُمْ نَصِيْبٌ مِّنَ الْمُلْكِ فَاِذًا لَّا يُؤْتُوْنَ النَّاسَ نَقِيْرًا" يعني ڇا انهن جي لاءِ الله تعالىٰ جي بادشاهيءَ ۾ ڪو حصو آهي؟ جيڪڏهن ائين هجي ها تہ اهي ٻين ماڻهن کي ڪو ذرو (تر جي برابر) بہ نہ ڏين ها. پر الله جو شڪر جو انهن کي

(١) معارف القرآن ص٤٣٣- ٤٣٤ ج٢ (٢) رد المحتار ص٨٣٦ للعلامة الشامي ج٢

اهڙو اختيار ۽ اقتدار ميسر ناهي. "اَمْ يَحْسُدُوْنَ النَّاسَ عَلٰى مَآ اٰتَاهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ فَقَدْ اٰتَيْنَآ اٰلَ اِبْرَاهِيْمَ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ وَاٰتَيْنَاهُمْ مُّلْكًا عَظِيْمًا" يعني ڇا ماڻهن سان الله تعالىٰ جي ڏنل فضل تي حسد ٿا ڪن، پوءِ يقيناً اسان ابراهيم (عليه الصلواة والسلام) جي خاندان کي ڪتاب ۽ حڪمت ۽ وڏي بادشاهي ڏني هئي،حسد جي معنيٰ آهي ڪنهن لغت جي حقدار کان نعمت جي زوال جي تمنا ڪرڻ. يهودين کي حضور پر نور صلى الله عليہ وسلم جن سان حسد هيو تہ ڪين اها عظيم الشان نبوت ۽ عالمگير پيغمبري ڇو ملي انهن جي لاءِ بيان ڪيو ٿو وڃي تہ حسد ڇو ٿا ڪن حضور صلى الله عليہ وسلم جن بہ تہ حضرت ابراهيم عليه السلام جن جي خاندان مان آهن. جيڪڏهن ڪين اهي نعمتون مليون تہ شور ۽ اعتراض ڇاجو؟

## حسد ڪرڻ گناهہ آهي

حسد مهلڪ مرض ۽ تباهہ ڪندڙ سوچ آهي، جيئن حضور ﷺ جن جي حديثن مان ثابت آهي.

## روايت ١

حضرت زبير رضي الله عنه کان روايت آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو" دَبَّ اِلَيْكُمْ دَاءُ الْاُمَمِ قَبْلَكُمْ اَلْحَسَدُ وَالْبَغْضَآءُ هِيَ الْحَالِقَةُ لَا اَقُوْلُ تَحْلِقُ الشَّعْرَ وَلٰكِنْ تَحْلِقُ الدِّيْنَ" (١) يعني اوهان ڏانهن اڳين امتن جي بيماري چپ چاپ ۾ آئي آهي يعني حسد ۽ بغض رکڻ، ڪوڙيندڙ خصلت آهي. مان نہ ٿو فرمايان تہ وارن ڪوڙڻ واري پر دين کي ڪوڙڻ واري آهي.

## روايت٢

حضرت ابن مسعود رضي الله تعالىٰ عنه فرمايو تہ: الله جي نعمتن سان دشمني نہ رکو ڪيس ڇيو ويو تہ: الله جي نعمتن سان دشمني ڪير رکندو؟ فرمايائين تہ، اهي الله جي نعمتن سان دشمني ٿا رکن جيڪي ماڻهن سان الله تعالىٰ جي طرفان مليل نعمتن تي حسد ٿا ڪن.

## روايت ٣

الله تعالىٰ جي نازل ڪيل بعضي ڪتابن ۾ آهي تہ حسد ڪندڙ،

(١) معارف القرآن ص٤٣٩ جلد٢

منهنجي نعمت جو دشمن، منهنجي قضا تي ڪاوڙ ڪندڙ ۽ منهنجي ورهائڻ تي راضي ناهي. (١) " فَمِنۡهُمۡ مَّنۡ اٰمَنَ بِهٖ وَمِنۡهُمۡ مَّنۡ صَدَّ عَنۡهُ " هنن لفظن ۾ حضور عليه الصلواة والسلام جن کي تسلي ڏيندي ٻڌايو ويو آهي ته انهن اڳين امتن مان به ڪي اهڙا هئا جن حضرت ابراهيم ۽ ٻين نبين عليهم الصلواة والسلام تي ايمان آندو هو ۽ ڪي اهڙا هئا جن حضرت ابراهيم عليه السلام ۽ سندس اولاد مان آيل نبين عليهم الصلوة والسلام تي پاڻ ته ايمان نه آندو پر ٻين کي به روڪيو ٿي، اهو صرف اوهان جو معاملو ناهي، جو انهن مان ڪي ڪي اوهان تي ايمان نه ٿا آڻين هميشه کان ائين ٿيندو ۽ هلندو آيو آهي "وَكَفٰى بِجَهَنَّمَ سَعِيۡرًا" يعني جيڪڏهن انهن کي دنيا ۾ عذاب نه به پهتو ته جهنم جي ساڙيندڙ باهه انهن جي لاءِ ڪافي آهي. ڇو ته اهي باطل جا تابع ۽ نفساني خواهشات جا عامل آهن ۽ ان جي ڪري ٿي جهنم جي باهه ۾ اڇلايا ويندا

اِنَّ الَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا بِاٰيٰتِنَا سَوۡفَ نُصۡلِيۡهِمۡ نَارًا ؕ كُلَّمَا نَضِجَتۡ

بيشڪ جن ڪفر ڪيو اسان جي آيتن جو جلدي داخل ڪنداسون انهن کي باهه ۾ جڏهن به سڙي

جُلُوۡدُهُمۡ بَدَّلۡنٰهُمۡ جُلُوۡدًا غَيۡرَهَا لِيَذُوۡقُوا الۡعَذَابَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ

ويندين کلون سندن ته مٽائينداسون سندن کلون انهن کان سواءِ تانت چکن عذاب بيشڪ الله

كَانَ عَزِيۡزًا حَكِيۡمًا ﴿٥٦﴾ وَالَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ

آهي غالب، حڪمت وارو ۽ جن ايمان آندو ۽ ڪيائون چڱا ڪم

سَنُدۡخِلُهُمۡ جَنّٰتٍ تَجۡرِىۡ مِنۡ تَحۡتِهَا الۡاَنۡهٰرُ خٰلِدِيۡنَ فِيۡهَاۤ

جلد داخل ڪنداسون انهن کي بهشتن ۾ جو وهن ٿيون هيٺان انهن جي نهرون رهندا انهن ۾

اَبَدًا ؕ لَهُمۡ فِيۡهَاۤ اَزۡوَاجٌ مُّطَهَّرَةٌ ۚ وَّنُدۡخِلُهُمۡ ظِلًّا ظَلِيۡلًا ﴿٥٧﴾

هميشه انهن لاءِ انهن ۾ زالون پاڪ آهن ۽ داخل ڪنداسون انهن کي هميشه واريءَ ڇانو ۾

(١) القرطبي ص ٢٥١ جلد ٥

# تفسير

هن کان اڳ ۾ يهودين ۽ ٻين جي ڪفر جو بيان هو هتي انهن ڪافرن جي لاءِ تيار ڪيل سزا کي ذڪر ڪندي ٻڌايو ويو آهي تہ: اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِاٰيٰتِنَا سَوْفَ نُصْلِيْهِمْ نَارًا يعني بيشڪ جن شخصن اسان جي آيتن جو ڪفر ڪيو،پوءِ اهي جن هجن يا انسان انهن کي جلدي باهہ ۾ داخل ڪنداسون. انهن آيتن مان مراد قرآني آيتون، اڳين نبين عليهم السلام تي نازل ڪيل ڪتابن جون آيتون، انبياءِ عظام عليهم الصلواة والسلام جا معجزا، انهن جا ڪمالات ۽ سندن صفتون آهن، جيڪڏهن ڪنهن بہ انهن سڀني جو يا ڪنهن بعض يا هڪ جو انڪار ڪيو تہ اهو ڪافر آهي، خيال ۾ رهي تہ قرآني آيتن جي انڪار جون ٻہ صورتون آهن. ١- هڪ آيتن جي لفظن جو انڪار ٢- ٻيو معنيٰ ۽ احڪام جو انڪار- ٻئي صورتون يا ٻنهي مان هڪ اختيار ڪرڻ بہ ڪفر آهي (١) "كُلَّمَا نَضِجَتْ جُلُوْدُهُمْ بَدَّلْنٰهُمْ جُلُوْدًا غَيْرَهَا" يعني جڏهن بہ جهنم جي باهہ ۾ سندن کلون سڙي وينديون تہ متائي انهن کي ٻيون کلون ڏينداسون، هن جي تفسير ۾ امام حسن بصري عليه الرحمة فرمايو آهي تہ: انهن کي روزانو ستر هزار (٧٠٠٠٠) ڀيرا باهہ ساڙيندي ۽ جيئن سندن کلون سڙنديون وينديون تيئن حڪم ٿيندو تہ وري نهو تہ نهنديون وينديون ۽ ڪافرن جون کلون تمام ٿلهيون ٿي وينديون. (٢) "لِيَذُوْقُوا الْعَذَابَ" يعني اهي کلون ان جي لاءِ متايون وينديون تانتہ عذاب چکن ۽ عذاب جو احساس رکن "اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَزِيْزًا حَكِيْمًا" يعني يقيناً الله تعالیٰ غالب آهي جنهن جي اڳيان اها ڳالهہ مقنع (نہ ٿيڻ جهڙي) نہ آهي، حڪمت وارو آهي، جنهن کي بہ عذاب ڪندو آهي تہ ان ۾ سندس حڪمت هوندي آهي ۽ ان ئي پنهنجي ٻي مثال حڪمت سان ايمان ۽ صالح عمل کي جنت ۾ داخل ٿيڻ جو سبب ۽ ڪفر ۽ گناهن کي عذاب جو سبب بنايو آهي، "وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ سَنُدْخِلُهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا" يعني جن ايمان آندو ۽ صالح عمل ڪيا انهن کي اهڙن بهشتن ۾ داخل ڪنداسون جن جي هيٺان نهرون وهن ٿيون انهن ۾ هميشہ رهيا پيا هوندا، هتي ۽ ٻين بہ ڪيترين جاين تي ايمان سان گڏ صالح عمل مذڪور آهن ڇو

(١) نعيمي ص١٥٦ ج٥ (٢) تفسير امام حسن بصري ص٢٨٥ ج١

تہ صرف ايمان آڻڻ سان نفس جو تزڪيو نہ ٿيندو آهي، تزڪيي حاصل ڪرڻ جي لاءِ عملن صالحن وارو جهاد ضروري آهي جنهن سان رب ڪريم جو قرب، سندس هيبت ۽ جلال جو شعور پيدا ٿيندو آهي. (١)

" لَهُمْ فِيْهَا اَزْوَاجٌ مُّطَهَّرَةٌ" يعني بهشتن ۾ داخل ٿيندڙن لاءِ انهن ۾ پاڪ زالون هونديون، جيڪي جسماني عيبن ۽ اخلاقي ڪوتاهين ڪان صاف هونديون نہ انهن ڪان مڙس نفرت ڪندا ۽ نہ اهي ڪين نفرت جي نگاهہ سان ڏسنديون. حاڪم صحيح سند سان حضرت ابو سعيد خدريءَ رضي الله عنه ڪان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "مُطَهَّرَةٌ" مِنَ الْحَيْضِ وَالْغَائِطِ وَالنُّخَامَةِ وَالْبُزَاقِ" (١) يعني اهي حيض، پائخاني، سنگهہ ۽ ٿڪ ڪان پاڪ هونديون "وَنُدْخِلُهُمْ ظِلًّا ظَلِيْلًا" ۽ انهن ڪي هميشہ واريءَ ڇانو ۾ داخل ڪنداسون. ابن ابي حاتم حضرت انس رضي الله عنه ڪان روايت آندي آهي تہ" ظِلًّا ظَلِيْلًا" مان مراد عرش جي ڇانو آهي جيڪا هميشہ هوندي،صرف ڇانو نہ پر بهشتن جون سموريون نعمتون هميشہ لاءِ هونديون.

## سوال

هتي ڇانو جو لفظ آيو آهي ڇانو اس ۽ گرميءَ جي مقابلي ۾ هوندي آهي،۽ اها گرمي سج جي ڪري ٿيندي آهي. جڏهن بهشت ۾ سج ئي نہ هوندو تہ گرمي بہ نہ هوندي ۽ جڏهن گرمي نہ هوندي تہ ڇانو ڪهڙي ڪم جي؟

## جواب

هتي ڇانو مان مراد آرام ۽ سڪون آهي، جيئن طبراني، بيهقي ۽ ابن النجار روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو: اَلسُّلْطَانُ ظِلُّ اللهِ فِي الْاَرْضِ يَاوِي اِلَيْهِ كُلُّ مَظْلُوْمٍ مِّنْ عِبَادِهِ (٢) يعني بادشاهہ الله تعالىٰ جي زمين ۾ ان جي ڇانو آهي جنهن ڏانهن هرڪو مظلوم پانهو پناهہ وٺندو آهي ان مان مراد بہ سڪون ۽ راحت جو سبب آهي.

(١) تفسير المراغي ص٦٩ جلد٣ جزءِ ٥ (٢) تنويرالاذهان ص٣٤٧ وحاشيہ١

اِنَّ اللّٰهَ يَاْمُرُكُمْ اَنْ تُؤَدُّوا الْاَمٰنٰتِ اِلٰٓى اَهْلِهَا ۙ وَاِذَا حَكَمْتُمْ

بيشڪ الله حڪم ٿو ڪري اوهان کي تہ ادا ڪيو امانتون سندن حقدارن ڏي ۽ جڏهن فيصلو ڪيو

بَيْنَ النَّاسِ اَنْ تَحْكُمُوْا بِالْعَدْلِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ نِعِمَّا يَعِظُكُمْ بِهٖ ؕ اِنَّ

ماڻهن ۾ تہ فيصلو ڪيو عدل سان بيشڪ الله چڱي آهي اها ڳالهہ جو نصيحت ٿو ڪري اوهان کي ان سان بيشڪ

اللّٰهَ كَانَ سَمِيْعًا ۢ بَصِيْرًا ﴿۵۸﴾

الله ٻڌندڙ، ڏسندڙ آهي

## تفسير

هن روايت جي شان نزول متعلق مفسرن لکيو آهي تہ ڪعبة الله شريف جي خدمت اسلام کان پهريان بہ وڏي عزت جو باعث هوندي هئي ۽ جيڪي ماڻهو ان خدمت لاءِ منتخب ٿيندا هئا اهي پوريءَ قوم ۾ معزز ۽ باوقار سمجهيا ويندا هئا. ان جي ڪري بيت الله جون مختلف خدمتون ماڻهن ۾ ورهايل هيون، حج جي ڏينهن ۾ حاجين کي زمزم جي پاڻيءَ پيارڻ جي خدمت حضور صلي الله عليہ وسلم جن جي چاچي حضرت عباس رضي الله عنہ جي حوالي هوندي هئي، جنهن کي سقابہ سڏيو ويندو هو. ڪي خدمتون حضرت ابوطالب جي سپرد هيون ۽ بيت الله شريف جي دروازي کولڻ ۽ بند ڪرڻ واري خدمت عثمان بن طلحہ جي حوالي هئي، عثمان بن طلحة جو پنهنجو بيان آهي تہ جاهليت جي دور ۾ اسين سومر ۽ خميس جي ڏينهن بيت الله جو دروازو کوليندا هياسون ۽ ماڻهو ان ۾ اندر داخل ٿيڻ جي سعادت حاصل ڪندا هئا، هجرت کان اڳ ۾ هڪ ڏينهن رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن ڪجهہ اصحابن سان گڏ بيت الله ۾ داخل ٿيڻ لاءِ تشريف فرما ٿيا (۽ ان وقت تائين اڃان عثمان بن طلحه مسلمان نہ ٿيو هو) ان جي ڪري رسول اڪرم، محبوب مڪرم صلي الله عليہ وسلم جن کي بيت الله شريف ۾ داخل ٿيڻ کان روڪيندي انتهائي سخت گفتا استعمال

ڪيائين،پر پاڻ وڏي بردباري ڪندي اهي برداشت ڪيائون ۽ ان ڪي مخاطب ٿي فرمايائون تہ "تون هڪ ڏينهن اها ڪنجي منهنجي هٿ ۾ ڏسندين ۽ ان وقت مون ڪي اختيار هوندو تہ جنهن ڪي وٽي اها ڏيان" عثمان بن طلحہ چيو تہ جيڪڏهن ائين ٿيو تہ پوءِ قريشي هلاڪ ۽ ذليل ٿيندا. پاڻ فرمايائون تہ نہ ان وقت قريشي آباد ۽ باعزت هوندا پاڻ ائين فرمائيندي بيت الله شريف ۾ اندر ويا ۽ سندن اندر وڃڻ ڪان پوءِ مون دل ۾ سوچيو ۽ مون ڪي يقين ٿيو تہ پاڻ جيڪو فرمايو اٿن اهو ضرور ٿيندو ۽ مون ان وقت ئي مسلمان ٿيڻ جو ارادو ڪري ڇڏيو، پر منهنجي قوم وارن جا نمونا ڦري ويا ۽ سڀئي مون ڪي ملامت ڪرڻ لڳا ان جي ڪري پنهنجو ارادو پورو ڪري نہ سگهيس، جڏهن مڪو پاڪ فتح ٿيو ۽ ڪنجي رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي هٿ مبارڪ ۾ آئي ۽ پاڻ بيت الله ۾ اندر داخل ٿي نماز پڙهي ٻاهر نڪتا تہ اها ڪنجي مون ڪي واپس ڏيندي فرمايائون تہ "وٺ پنهنجي ڪنجي هاڻي اها ڪنجي قيامت تائين تنهنجي ئي خاندان ۾ رهندي جيڪو توڪان اها کسيندو اهو ظالم هوندو" مقصد تہ ٻئي ڪنهن ڪي حق ناهي جو توڪان هيءَ ڪنجي کسي، ان سان گڏ اهو بہ فرمايائون تہ "بيت الله جي هن خدمت جي ڪري جيڪو توڪي مال ملي اهو بہ شريعت موافق ورهائجانءِ" عثمان بن طلحہ فرمايو تہ جڏهن مان ڪنجي وٺي خوشيءَ سان هلڻ لڳس تہ پاڻ مون ڪي سڏ ڪري فرمايائون تہ "عثمان جيڪا ڳالهہ اڳي مون توڪي چئي هئي تہ (ڪنجي منهنجي هٿ ۾ ايندي) سا پوري ٿي يا نہ؟ پوءِ مون ڪي اها ڳالهہ ياد آئي جيڪا پاڻ هجرت ڪان اڳ ۾ ڪئي هيائون، مون عرض ڪيو تہ: بالڪل اوهان جو فرمان حق آهي، ۽ مون ان وقت ڪلمو پڙهي اسلام قبول ڪيو (١) حضرت عمر بن خطاب رضي الله عنہ فرمايو آهي تہ: رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن تان منهنجو پيءُ ۽ ماءُ قربان ٿين پاڻ جڏهن بيت الله مان نڪتا هئا تہ مٿين آيت پڙهي رهيا هئا ۽ مون اها اڳ ۾ نہ ٻڌي هئي (٢) جنهن مان ظاهر آهي تہ هيءَ آيت ان وقت بيت الله شريف ۾ اندر نازل ٿي هئي ۽ حضور ﷺ جن ڪان ڪنجيءَ جي گهر حضرت عباس ۽ حضرت علي رضي الله عنهما بہ ڪئي هئي پر پاڻ انهن جي ان درخواست ڪي قبول نہ ڪري آيت ڪريمہ جي حڪم مطابق امانت امانت واري ڪي ڏنائون (٣) هاڻي هن آيت

(١) مظهري ص٣٣٩ ج٢ (٢) جامع البيان للطبري ص٩٢ جلد٤
(٣) معارف القرآن ص٤٤٤ جلد٢

جو مطلب سمجهو. "إِنَّ اللَّهَ يَأْمُرُكُمْ أَنْ تُؤَدُّوا الْأَمَانَاتِ إِلَىٰ أَهْلِهَا" بلاشڪ الله اوهان کي امر ٿو ڪري تہ امانتون امانتن جي حقدارن کي ادا ڪري ڏيو، حقيقت ۾ هيءَ آيت انهن اهم آيتن مان آهي جنهن جي صفن ۾ ڪيترا شرعي احڪام تفصيل سان اچي ٿا وڃن ڇو تہ امانت ادا ڪرڻ مان مراد صرف اهو ناهي تہ تون ڪنهن شخص وٽ ڪا شيءِ رکين ۽ اهو توکي اها سلامتيءَ سان موٽائي ڏي، بلڪ هن جو مفهوم گهڻو وسيع آهي. عبادتون بہ امانت آهن جيڪي سيني شرطن سان صحيح وقت تي نيت جي اخلاص سان ادا ڪيون وڃن ۽ جيڪڏهن توکي اقتدار ۽ حڪومت هٿ ۾ آهي تہ غريب ۽ امير، قوي ۽ ضعيف ۾ برابري قائم ڪرڻ، عدل جي ساهميءَ کي سيني مخالف رجحانن جي هوندي سڌو رکڻ، حڪومت ۾ اهم عهدن تي مقرر ڪرڻ جي لاءِ اهليت ۽ قابليت کي معيار قرار ڏيڻ بہ هن امانت ۾ داخل آهي.

"أَنْ تُؤَدُّوا" (ادا ڪيو) ۾ خطاب عام ماڻهن کان سواءِ اميرن ۽ حاڪمن کي بہ آهي جن کي سندن رعيت سان صحيح پيش اچڻ واري امانت جي ادا ڪرڻ جو حڪم ڪيل آهي. "وَإِذَا حَكَمْتُمْ بَيْنَ النَّاسِ أَنْ تَحْكُمُوا بِالْعَدْلِ" يعني جڏهن ماڻهن ۾ فيصلا ڪيو تہ عدل سان ڪيو. هن آيت ۾ عدل ۽ انصاف قائم ڪرڻ جو حڪم آهي، پر قرآن پاڪ "بَيْنَ النَّاسِ" (ماڻهن ۾) جو لفظ آڻي ٻڌايو تہ مقدمات جي فيصلن ۾ سڀ انسان برابر آهن، مسلمان هجي يا غير مسلمان، دوست هجي يا دشمن، پنهنجو وطني، هڪ زبان وارو هجي يا غير- سيني ۾ عدل ۽ انصاف قائم ڪرڻ فرض آهي، ۽ عدل ۽ انصاف سان ئي امن قائم ٿيندو آهي. "إِنَّ اللَّهَ نِعِمَّا يَعِظُكُمْ بِهِ" يعني الله تعالىٰ اوهان کي امانتون ادا ڪرڻ، عدل ۽ انصاف سان هلڻ وغيره لاءِ جيڪا نصيحت ٿو ڪري، اها سٺي شيءِ آهي. "إِنَّ اللَّهَ كَانَ سَمِيعًا بَصِيرًا" بيشڪ الله تعالىٰ ٻڌندڙ ۽ ڏسندڙ آهي، ڪا بہ ٻڌڻ ۽ ڏسڻ جهڙي شيءِ ان کان لڪل ناهي، جيڪڏهن عدل ڪندؤ يا امانت صحيح نموني ڏيندؤ تہ الله تعالىٰ ڏسي ۽ ٻڌي ٿو. هنن لفظن ۾ حاڪمن ۽ اميرن کي خصوصي توجهہ ڏياريو ويو آهي تہ امانتون ڏيو ۽ عدل ڪيو.

يَٰٓاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡٓا اَطِيۡعُوا اللّٰهَ وَاَطِيۡعُوا الرَّسُوۡلَ وَاُولِى

اي ايمان وارؤ! تابعداري ڪيو الله جي ۽ تابعداري ڪيو رسول جي ۽ صاحبن

الۡاَمۡرِ مِنۡكُمۡ‌ۚ فَاِنۡ تَنَازَعۡتُمۡ فِىۡ شَىۡءٍ فَرُدُّوۡهُ اِلَى اللّٰهِ وَالرَّسُوۡلِ

امر جي اوهان مان پوءِ جيڪڏهن جهيڙو ڪيو ڪنهن شيءِ (جي باري) ۾ ته پوءِ موٽايو ان کي الله ۽ رسول ڏانهن

اِنۡ كُنۡتُمۡ تُؤۡمِنُوۡنَ بِاللّٰهِ وَالۡيَوۡمِ الۡاٰخِرِ‌ؕ ذٰلِكَ خَيۡرٌ وَّاَحۡسَنُ تَاۡوِيۡلًا ﴿۵۹﴾

جيڪڏهن ايمان ٿا آڻيو الله تي ۽ ڏينهن قيامت تي اهو ڀلو ۽ سهڻو آهي انجام جي لحاظ سان

## تفسير

هن کان اڳ ۾ امانتون ادا ڪرڻ ۽ عدل ۽ انصاف جو ذڪر هو جنهن جو خاص واسطو حاڪمن سان آهي ۽ هتي وري عام مومنن کي سڏي فرمايو ويو آهي ته "يَٰٓاَيُّهَا الَّذِيۡنَ آمَنُوۡٓا اَطِيۡعُوا اللّٰهَ وَاَطِيۡعُوا الرَّسُوۡلَ وَاُولِى الۡاَمۡرِ مِنۡكُمۡ" يعني ايمان وارؤ! الله ۽ رسول ۽ پاڻ مان حاڪمن جي اطاعت ڪيو. اولي الامر جي اطاعت ان جي ڪري ذڪر ڪئي وئي آهي جو دنيوي امرن ۽ ڪمن جو انهن سان به واسطو پوي ٿو، پر رسول الله صلى الله عليه وسلم جن ۽ حاڪمن جي اطاعت ۾ هڪ وڏو فرق آهي نبي سڳورو عليه السلام معصوم هوندو آهي جنهن کان هر ڪم ۾ گناهه جو واقع ٿيڻ ممڪن ٿي ناهي ان جي ڪري ان جي حڪم جي اطاعت جو حڪم غير مشروط ڏنو ويو آهي. جيئن ٻيءَ آيت ۾ آهي "مَآ اٰتٰكُمُ الرَّسُوۡلُ فَخُذُوۡهُ وَمَا نَهٰكُمۡ عَنۡهُ فَانۡتَهُوۡا" (١) يعني رسول الله صلى الله عليه وسلم جن اوهان کي جيڪو حڪم ڏين اهو وٺو ۽ جنهن کان منع ڪن انهيءَ کان رڪجي پئو، رسول الله صلى الله عليه وسلم جن جو هر حڪم واجب التسليم آهي ان ۾ ڪنهن کي به قيل قال جي

(١) سورة الحشر آيت٧

مجال نہ آهي، باقي ٻين حاڪمن جو امر جيڪڏهن الله تعالىٰ ۽ ان جي رسول صلي الله عليہ وسلم جي حڪم جي موافق آهي تہ عمل ڪبو نہ تہ نہ.

## فائدو

"اَطِيْعُوا اللّٰہَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ" مان ثابت ٿيو تہ ڪو بہ ماڻهو ڪيتري بہ اهم مقام کي پهچي تہ بہ الله تعالىٰ ۽ ان جي پياري نبي صلى الله عليہ وسلم جن جي اطاعت کان آزاد ٿي نہ ٿو سگهي، ريل جو ڪو بہ گاڏو فسٽ هجي يا سيڪنڊ انجڻ کان لاپرواهہ رهي نہ ٿو سگهي، سيني مومنن تي الله تعالىٰ ۽ ان جي نبي عليہ السلام جي اطاعت فرض آهي.

## فائدو

اطاعت صرف قرآن پاڪ جي نہ پر "اَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ" جي حڪم موجب حديث شريف جي اطاعت بہ فرض آهي، حديث پاڪ ۽ نبوي سنت جو قرآن پاڪ سان تعلق ائين قائم آهي جيئن پاٽيءَ جو ڪاڏي سان جو پاٽيءَ کان سواءِ نہ ڪاڏو تيار ڪري سگهبو نہ ڪائي سگهبو.

## فائدو

"اَطِيْعُوا اللّٰہَ" کان پوءِ وري ٻيو ڀيرو "اَطِيْعُوْا" جي لفظ کي آڻي ثابت ڪيو ويو آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي اطاعت بہ مستقل فرض آهي ڪنهن کي سمجهہ اچي يا نہ اچي سندن امر تي عمل ڪرڻ ضروري آهي، جنهن جا صحابہ ڪرام رضي الله عنهم جي دور ۾ ڪيترا مثال موجود آهن. ورثي ورهائڻ جو حڪم قرآن ڪريم ۾ آهي، پر حضور صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو تہ "اسان نبين (عليهم الصلواة والسلام) جي جماعت جو ورثو نہ هوندو آهي" تہ سيني اصحابن رضي الله عنهم ان تي بنا اعتراض جي عمل ڪيو. عام طرح هر معاملي ۾ ٻہ شاهد ضروري هوندا آهن، پر حضور صلى الله عليہ وسلم جن حضرت خزيمہ انصاريءَ رضي الله عنہ هڪڙي جي شاهديءَ کي ٻن جي برابر قرار ڏنو تہ سيني قبول فرمايو.

## فائدو

قرآن ۽ حديث کان پوءِ امت جو اجماع بہ قطعي دليل ۽ حجت آهي،

جيڪو "اولي الامر" مان ثابت آهي ۽ ان جو انڪار ڪرڻ بہ ڪفر آهي، صديقي ۽ فاروقي خلافتون بہ قطعي دليل سان ثابت آهن انهن جو انڪار ڪرڻ بہ ڪفر آهي. (۱)

## فائدو

مفسرن ڀلارن لکيو آهي تہ آيت جو حصو "وَأُولِي الْأَمْرِ مِنكُمْ" مڙسن کي شامل آهي سندن زالون سندن اطاعت ڪن، پيءُ کي شامل آهي جو اولاد ان جي اطاعت ڪري، اهڙيءَ طرح فقهاء، علماء، مشائخ وغيرهم کي بہ شامل آهي بلڪ اهي تہ ان اطاعت جا وڏيڪ حقدار ۽ مستحق آهن،ڇو تہ اهي انبياءِ عظام عيلهم الصلواة والسلام جا وارث ۽ الله تعالىٰ ۽ ان جي رسول صلى الله عليہ وسلم جن جي حڪمن جا خزانچي آهن. ابن جرير ۽ حاڪم حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان "اولي الامر" جي معنىٰ ۾ روايت آندي آهي تہ اهي فقه ۽ دين جا صاحب آهن ابن ابي شيبه ۽ حاڪم وغيرهما حضرت جابر بن عبدالله، ابوالعاليہ ۽ مجاهد کان اهائي معنىٰ روايت ڪئي آهي.

## مسئلو

جيڪڏهن قاضي ڪنهن کي ديڙا هڻڻ يا قتل ڪرڻ جو حڪم ڪري تہ مشائخ ڪرام جو فرمان آهي تہ سهڻو اهو آهي جو ان حڪم جي تحقيق ڪجي تہ ڪهڙيءَ حجت يا ڪهڙي دليل سان ڏنو ويو آهي، جيڪڏهن صحيح آهي تہ امر ادا ڪيو ويندو نہ تہ نہ. (۲) "فَإِن تَنَازَعْتُمْ فِي شَيْءٍ فَرُدُّوهُ إِلَى اللَّهِ وَالرَّسُولِ إِن كُنتُمْ تُؤْمِنُونَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ" يعني جيڪڏهن اوهان ڪنهن شيءِ ۾ لڙي پيا آهيو پوءِ جيڪڏهن الله ۽ قيامت تي ايمان رکو ٿا تہ ان کي الله ۽ رسول ڏانهن موٽايو. مقصد تہ ان جو قرآن ۽ سنت جي روشنيءَ ۾ جائزو وٺو جيڪڏهن موافق آهي تہ اڪين تي جيڪڏهن نہ تہ قبول نہ ڪيو "ذَٰلِكَ خَيْرٌ وَأَحْسَنُ تَأْوِيلًا" يعني اختلافي ڳالهہ کي حل ڪرڻ لاءِ الله ۽ رسول صلى الله عليہ وسلم ڏانهن موٽائڻ ڀلو ۽ عاقبت جي لحاظ سان سهڻو آهي. (۳)

(۱) تفسير نعيمي ص۱۷٦ ج۵ (۲) تفسيرمظهري ص۳۴۴ جلد۲
(۳) تفسير المراغي ص۷۴ جلد۲ جزءِ۵

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ يَزْعُمُوْنَ اَنَّهُمْ اٰمَنُوْا بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَ مَآ

ڇا نہ ڏٺو تو انهن ڏانهن جو گمان ٿا ڪن تہ بيشڪ انهن ايمان آندو آهي ان تي جو نازل ڪيو ويو توڏانهن

اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ يُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّتَحَاكَمُوْٓا اِلَى الطَّاغُوْتِ وَقَدْ

۽ ان تي جو نازل ڪيو ويو توکان اڳ ۾ ارادو ٿا ڪن تہ فيصلو ڪٽي وڃن شرير قوت ڏانهن ۽ تحقيق

اُمِرُوْٓا اَنْ يَّكْفُرُوْا بِهٖ وَيُرِيْدُ الشَّيْطَانُ اَنْ يُّضِلَّهُمْ ضَلٰلًا بَعِيْدًا ﴿٦٠﴾

امر ڪيا ويا تہ انڪار ڪن ان جو ۽ ارادو ٿو ڪري شيطان تہ گمراهہ ڪري انهن کي گمراهي گهٽيءَ

وَاِذَا قِيْلَ لَهُمْ تَعَالَوْا اِلٰى مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ وَاِلَى الرَّسُوْلِ

۽ جڏهن چيو ٿو وڃي انهن کي تہ اچو ان ڏانهن جو نازل ڪيو الله ۽ رسول ڏانهن

رَاَيْتَ الْمُنٰفِقِيْنَ يَصُدُّوْنَ عَنْكَ صُدُوْدًا ﴿٦١﴾ فَكَيْفَ اِذَآ

تہ ڏسندين منافقن کي تہ رکجن ٿا توکان رکجڻ پوءِ ڪيئن ٿيندو جڏهن پهچندي انهن

اَصَابَتْهُمْ مُّصِيْبَةٌۢ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيْهِمْ ثُمَّ جَآءُوْكَ يَحْلِفُوْنَ ۖ

کي مصيبت ان سببان جو اڳي ڪري موڪليو هٿن انهن جي تنهن ڪان پوءِ ايندا تو وٽ قسم کڻندي

بِاللّٰهِ اِنْ اَرَدْنَآ اِلَّآ اِحْسَانًا وَّتَوْفِيْقًا ﴿٦٢﴾ اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ يَعْلَمُ اللّٰهُ

الله جو تہ نہ ارادو ڪيوهوسون مگر چڱائيءَ ۽ موافقت ڪرائڻ جو اهي ئي آهن جو ڄاڻي ٿو الله

مَا فِيْ قُلُوْبِهِمْ ۗ فَاَعْرِضْ عَنْهُمْ وَعِظْهُمْ وَقُلْ لَّهُمْ فِيْٓ

اهي (راز) جو انهن جي دلين ۾ آهن پوءِ منهن موڙ انهن کان ۽ نصيحت ڪر انهن کي ۽ فرماءِ انهن کي

اَنۡفُسِهِمۡ قَوۡلًاۢ بَلِيۡغًا ﴿٦٣﴾

انهن جي اندر ۾ ڳالهه اثر ڪندڙ

## تفسير

هن ڪان اڳ ۾ مومنن کي الله تعاليٰ ۽ ان جي پياري رسول (ﷺ) ۽ اولي الامر جي اطاعت جو حڪم هو ۽ هتي منافقن جو ذڪر آڻي ٻڌايو ٿو وڃي ته: اَلَمۡ تَرَ اِلَى الَّذِيۡنَ يَزۡعُمُوۡنَ اَنَّهُمۡ اٰمَنُوۡا بِمَاۤ اُنۡزِلَ اِلَيۡكَ وَمَاۤ اُنۡزِلَ مِنۡ قَبۡلِكَ يُرِيۡدُوۡنَ اَنۡ يَّتَحَاكَمُوۡۤا اِلَى الطَّاغُوۡتِ " يعني اي محبوب! عليه الصلواة والسلام ڇا اوهان انهن (منافقن) کي نه ڏٺو جيڪي دعويٰ ته اها ٿا ڪن ته يقيناً انهن اوهان ڏانهن نازل ڪيل ڪتاب قرآن ڪريم ۽ اوهان ڪان اڳ ۾ نازل ڪيل ڪتاب توراة وغيره تي ايمان آندو آهي ۽ ان دعويٰ جي باوجود سندن ارادو اهو آهي ته پنهنجا فيصلا سرڪش، شرير قوت ڏانهن کڻي وڃن، "وَقَدۡ اُمِرُوۡۤا اَنۡ يَّكۡفُرُوۡا بِهٖ" حالانڪ کين الله تعاليٰ جو امر ڪيل آهي ته ان سرڪش جو انڪار ڪن. "وَيُرِيۡدُ الشَّيۡطٰنُ اَنۡ يُّضِلَّهُمۡ ضَلٰلًاۢ بَعِيۡدًا" ۽ شيطان ته چاهي ٿو ته انهن کي گهڻو گمراهه ڪري ڇڏي، ڇو ته هنن پنهنجي واڳ ان جي هٿ ۾ ڏئي ڇڏي آهي.

## شان نزول

علامه آلوسي بغدادي عليه الرحمة" هن آيت جي شان نزول جي متعلق لکيو آهي ته: بشر نالي هڪ منافق جو هڪ يهوديءَ سان ڪو جهيڙو ٿي پيو، يهوديءَ ان منافق کي ظاهري ڪلمو پڙهندي ڏسي چيو ته هل ته هلي حضرت محمد (ﷺ) جن ڪان فيصلو ڪرايائون پر ان منافق حضور صلى الله عليه وسلم جن جي فيصلي ڪان انڪارڪندي چيو ته نه، فيصلو ڪعب بن اشرف يهوديءَ ڪان ٿا ڪرايون، ڪعب بن اشرف يهودين جو سردار ۽ دين اسلام جو سخت دشمن هيو. ٻنهي ان گفتگوءَ ڪان پوءِ وري گڏجي هڪ راءِ ڏني ته فيصلو رسول الله صلى الله عليه وسلم جن ڪان ٿا ڪرايون،

جڏهن فيصلو رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي خدمت ۾ پهتو، ۽ سندس تحقيق مطابق حق يهوديءَ جو ثابت ٿيو تہ پاڻ فيصلو ان جي حق ۾ ڏنائون، بشر ناراض ٿي چيو تہ مون کي هي فيصلو منظور ناهي. فيصلو عمر بن خطاب رضي الله عنه کان ٿا ڪرايون، يهوديءَ اها ڳالهہ بہ قبول ڪئي ٻئي ڳڏجي حضرت عمر رضي الله عنه وٽ آيا يهوديءَ پورو واقعو حضرت عمر رضي الله عنه کي ٻڌائيندي چيو تہ هي بشر، حضور عليه الصلواة والسلام جن جو فيصلو قبول نہ ٿو ڪري، حضرت عمر رضي الله تعالىٰ عنه بشر منافق کان پڇيو تہ واقعي ڳالهہ ائين آهي؟ ان چيو تہ هائو! حضرت عمر رضي الله عنه فرمايو تہ: ٿوري دير ترسو تہ مان اچان ٿو، ائين چئي گهر ڏانهن ويو، ٿوري دير کان پوءِ تلوار کڻي آيو ۽ منافق کي قتل ڪندي فرمايائين تہ جيڪو رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن جو فيصلو قبول نہ ڪندو ان جو فيصلو عمر وٽ اهو آهي. (١) ان کان پوءِ جڏهن ان منافق جي مائٽن حضرت عمر رضي الله عنه جي خلاف حضور عليه الصلواة والسلام جن وٽ دانهن ڏني تڏهن الله تعالىٰ مٿين آيت نازل ڪري ٻڌايو تہ اهو مقتول منافق ۽ واجب القتل هو. حضرت عمر رضي الله عنه جو ان ۾ ڪو قصور ناهي، ۽ حضور صلى الله عليہ وسلم جن حضرت عمر رضي الله عنه کي فرمايو "اَنْتَ الْفَارُوْقُ" (٢) تون فاروق (حق ۽ ناحق ۾ فرق ڪندڙ) آهين. "وَاِذَا قِيْلَ لَهُمْ تَعَالَوْا اِلٰى مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ وَاِلَى الرَّسُوْلِ رَاَيْتَ الْمُنٰفِقِيْنَ يَصُدُّوْنَ عَنْكَ صُدُوْدًا" يعني جڏهن مخلص مومنن جي طرفان انهن کي چيو ٿو وڃي تہ اوهان جيڪڏهن ايمان وارا آهيو تہ قرآن پاڪ ۽ رسول (ﷺ) جن ڏانهن فيصلي لاءِ اچو تہ اهي اوهان ڏانهن اچڻ کان رڪجي ٿا پون ۽ منهن مٽي ٿا وڃن.

## فائدو

هنن آيتن جي شان نزول پڙهڻ مان ثابت ٿيو تہ حضرت عمر رضي الله عنه اها شخصيت آهي جنهن کي حضور صلى الله عليہ وسلم جن الله تعالىٰ جي اذن سان اهو اهم لقب ڏنو هو.

## فائدو

ان مان معلوم ٿيو تہ منافقن جي اها عادت هوندي هئي تہ جنهن

(١) روح المعاني ص٦٧ جلد٢ (٢) القرطبي ص٢٦۴ جلد٥

مقدمہ جي متعلق کين يقين هوندو هو تہ فيصلو سندن حق ۾ ٿيندو تہ ان جي تصفيہ جي لاءِ نبوي بارگاهہ ۾ حاضر ٿيندا هئا ۽ جنهن جي متعلق سمجهندا هئا تہ اسين ڪوڙا آهيون تہ ان جي لاءِ اهڙي حاڪم وٽ ويندا هئا جتي اثر رسوخ يا رشوت سان پنهنجي حق ۾ فيصلو ڪرائي سگهن. اڄ ڪالهہ بہ ماڻهو جنهن معاملي ۾ شريعت مطهره مان پنهنجو ظاهري فائدو سمجهندا آهن تہ شرعي فيصلو ڪرائڻ تي زور ڏيندا رهندا آهن ۽ پر جتي شريعت جي فتويٰ سندن خلاف ويندي آهي تہ اتي پين قانونن جي تلاش ۾ هوندا ۽ شريعت جي ويجهو بہ نہ ويندا آهن، پوءِ سوچيو تہ انهن ۽ نبوي عهد جي منافقن ۾ ڪهڙو فرق رهيو؟ "فَكَيْفَ إِذَآ أَصَابَتْهُم مُّصِيبَةٌۢ بِمَا قَدَّمَتْ أَيْدِيهِمْ ثُمَّ جَآءُوكَ يَحْلِفُونَ بِاللَّهِ إِنْ أَرَدْنَآ إِلَّآ إِحْسَانًا وَتَوْفِيقًا" يعني جڏهن ڪين سندن ئي ڪيل ڪمن جي ڪري مصيبت پهتي جو حضرت عمر رضي الله عنه جي هٿان منافق قتل ٿي ويو تہ پوءِ ڪيئن اوهان وٽ اچي قسم ٿا کڻن تہ اسان اوهان جي فيصلي جو انڪار ڪرڻ لاءِ نہ پر ان لاءِ ويا هئاسين تہ ڪو صلح جو رستو نڪري پوي ڇو تہ اوهان وٽ تہ صرف قانوني ڪارروائي آهي، اسين ان توفيق ۽ احسان حاصل ڪرڻ جي ارادي سان ٻئي پاسي ويا هئاسين. "أُولَٰٓئِكَ الَّذِينَ يَعْلَمُ اللَّهُ مَا فِي قُلُوبِهِمْ" يعني اهي ئي (منافق) آهن جو جيڪو سندن دلين ۾ آهي اهو الله تعالىٰ ڄاڻي ٿو، اهي پنهنجن قسمن ۽ وٽ سٽ ۾ ڪوڙا آهن. الله تعالىٰ کي خبر آهي تہ انهن جي اندر ۾ ڪفر ۽ منافقيءَ جا مرڪز ۽ اڏا آهن. "فَأَعْرِضْ عَنْهُمْ وَعِظْهُمْ" پوءِ انهن کان منهن موڙ ۽ ڪين نصيحت ڪر، ڇو تہ نصيحت ڪرڻ ڀلي شيءِ آهي. "وَقُل لَّهُمْ فِيٓ أَنفُسِهِمْ قَوْلًۢا بَلِيغًا" يعني انهن کي سندن اندر ۾ اثر پيدا ڪندڙ ڳالهہ فرماءِ، سندن صريح سرڪشيءَ کان پوءِ بہ الله تعالىٰ پنهنجي محبوب ڪريم صلى الله عليہ وسلم جن کي انهن جي غلطين کان منهن موڙڻ ۽ اهڙي نصيحت ڪرڻ جي تلقين ڪري رهيو آهي جيڪا انهن جي اندر ۾ اثر ڪري، يعني آخرت جو خوف ڏياري انهن کي مخلص ٿي اسلام ڏي اچڻ جي دعوت ڏيڻ فرمايو، يا ڪين ٻڌايو تہ جيڪڏهن اوهان منافقيءَ کان نہ مڙيا ۽ اها ڪڏهن ظاهر ٿي پئي تہ پوءِ اوهان کي بہ ان قتل ڪيل منافق وانگر دنيا ۾ سخت سزا ملندي. علامہ آلوسي "فِيٓ أَنفُسِهِمْ" جو تفسير ڪندي لکيو آهي تہ: انهن کي پنهنجي منهن سان اڪيلائيءَ ۾ نصيحت ڪر، ڇو تہ اها گهڻو اثرائتي رهندي (١) ۽ انهن تي حجت بہ قائم ٿيندي.

(١) روح المعاني ص٦٨ ج٢جزءِ٥

## فائدو

مٿي لکيل بيان مان ثابت ٿيو تہ حضرت عمر رضي الله عنه جي طرفان منافق کي قتل ڪرڻ سهڻو عمل هيو جنهن جي تائيد ۾ الله تعالیٰ قرآن پاڪ نازل فرمايو، ۽ اهو بہ ثابت ٿيو تہ ڪن ڪن گناهن جي ڪري دنيا ۾ ئي انسان ذلت ۽ خواريءَ جو شڪار ٿئي ٿو. جيئن "بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيْهِمْ" مان ثابت ٿيو،اهل معرفت جي اڳواڻ حضرت مولانا روميءَ عليه الرحمة جن فرمايو آهي.

هرچہ آيد برتو از ظلمات وغم
اين زبے باکي وگستاخي است هم

يعني جيڪي بہ انڌيرا ۽ ڏک توکي پهچن ٿا اهي تنهنجي بي پرواهيءَ ۽ گستاخيءَ جي ڪري ٿا پهچن، ڪوڙا قسم کڻڻ ۽ پنهنجيءَ ڳالهہ ۽ ڪم جا غلط تاويل ڪرڻ منافقن جو ڏنڌو آهي. اعلیٰ حضرت مولانا شاهہ احمد رضا خان صاحب بريلويءَ عليه الرحمة الله تعالیٰ جي بارگاهہ ۾ هن نموني عرض ڪيو آهي.

عذر بدتر از گنه کا ذکر کيا
هم پہ بے پوچھے هی رحمت کيجئے

يعني گناهہ ڪري پوءِ ڪهڙا عذر پيش ڪيون اسان تي بنا پڇا جي رحم ڪرڻ فرماءِ.

## فائدو

ڪافرن ۽ منافقن جي حمايت ڪرڻ بہ گناهہ ۽ مصيبت ۾ ڦاسڻ جو باعث آهي. ڏسو بشر منافق جا مائٽ حضرت عمر رضي الله عنہ جي خلاف منافق جي حمايت ۾ آيا تہ الله تعالیٰ انهن کي خوار ڪندي فرمايو تہ اوهان منافقيءَ جي ڪمن ڪان پري رهو ۽ پلن ۽ رب جي پيارن جي حمايت ڪرڻ ثواب ۽ برڪت جو باعث آهي. حضرت عمر رضي الله عنہ حضور عليه الصلواة والسلام جي فيصلي جي عزت رکي تہ اهو فاروق بنجي ويو.

"ذَالِکَ خَيْرٌ وَّاَحْسَنُ تَاْوِيْلًا"- "ذَالِکَ" الله تعالیٰ ۽ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن ۽ "اولي الامر" جي اطاعت ڏي اشارو آهي يا "فَرُدُّوْهُ" ڏانهن - يا سيني ڏانهن "خير" مان مراد دنيوي ڀلائي ۽ "اَحْسَنَ تَاْوِيْلًا" مان مراد آخرت جي بهتري آهي،

مقصد تہ اللہ تعالیٰ ۽ ان جي پياري محبوب نبي صلی اللہ عليہ وسلم جن ۽ امت جي نيڪ حاڪمن، فقيهن، پلارن ٻانهن جي اجماع ۽ قرآن ۽ حديث جي روشنيءَ ۾ قياس سان ثابت ٿيندڙ حڪمن جي اطاعت دنيا ۽ آخرت ۾ ڀلي آهي.

## فائدو

شرعي اصول چار آهن، ۱- هڪ قرآن ڪريم ۲- ٻيو حديث شريف ۳- ٽيون امت جو اجماع ۴- چوٿون قياس- قرآن پاڪ جي تفسيرن صاويءَ، ڪبير ۽ روح المعانيءَ لکيو آهي تہ هن آيت ۾ چئني شين جو بيان آهي. "اَطِيْعُوا اللّٰہَ" ۾ قرآن پاڪ جي اطاعت، "وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ" ۾ نبوي حديث ۽ سنت جي اطاعت ۽ وَاُولِي الْاَمْرِ مِنْكُمْ" ۾ امت جي اجماع جي اطاعت ۽ "فَرُدُّوْهُ" ۾ مجتهدين جي قياس جي اطاعت جو حڪم آهي (۱) ڪا بہ ڳالهہ يا مسئلو درپيش اچي تہ ترتيب وار انهن دليلن مان ان کي حل ڪرڻ جي ڪوشش ڪجي، پر افسوس آهي جو هن هلندڙ وقت ۾ تحقيق ڪرڻ وارا تمام ٿورا بچيا آهن، والی اللہ المشتکي

وَمَآ اَرْسَلْنَا مِنْ رَّسُوْلٍ اِلَّا لِيُطَاعَ بِاِذْنِ اللّٰهِ ۗ وَلَوْ اَنَّهُمْ اِذْ

۽ نہ موڪليوسون ڪوبہ رسول مگر تہ ان جي اطاعت ڪيو وڃي اللہ جي حڪم سان ۽ جيڪڏهن تحقيق اهي

ظَّلَمُوْٓا اَنْفُسَهُمْ جَآءُوْكَ فَاسْتَغْفَرُوا اللّٰهَ وَاسْتَغْفَرَ لَهُمُ

جڏهن ظلم ڪيو هيائون پنهنجن سرن تي اچن ها توٽ پوءِ بخشش گهرن ها اللہ کان ۽ بخشش گهري ها انهن لاءِ

الرَّسُوْلُ لَوَجَدُوا اللّٰهَ تَوَّابًا رَّحِيْمًا ﴿۶۴﴾ فَلَا وَرَبِّكَ لَا يُؤْمِنُوْنَ

رسول تہ البت لهن ها اللہ کي توبہ قبول ڪندڙ مهربان پوءِ قسم آهي تنهنجي رب جو تہ نہ ايمان وارا رهندا

حَتّٰى يُحَكِّمُوْكَ فِيْمَا شَجَرَ بَيْنَهُمْ ثُمَّ لَا يَجِدُوْا فِيْٓ

تانجو حاڪم ڪن توکي ان بابت جو جهيڙو ڪيائون ان ۾ تنهن کان پوءِ نہ لهن

(۱) صاوي ص۲۱۲ جلد ۱- تفسير ڪبير ص۱۴۳ جزء ۱۰ روح المعاني ص۶۶ جلد ۲ جزء ۵

اَنۡفُسِهِمۡ حَرَجًا مِّمَّا قَضَيۡتَ وَيُسَلِّمُوۡا تَسۡلِيۡمًا ﴿٦٥﴾

پنهنجن سرن ۾ تنگي ان کان جو فيصلو فرمايو تو ۽ دل سان مڃين دل سان مڃڻ

## تفسير

هن کان اڳ ۾ الله تعالىٰ ۽ ان جي رسول مقبول صلي الله عليہ وسلم ۽ اولي الامر جي اطاعت جو ذکر ۽ ان کي دل سان نہ مڃڻ وارن جي حالت ۽ سزا جو بيان هو ۽ هتي ان اطاعت جي وڏيک اهميت جو بيان کندي ٻڌايو ٿو وڃي تہ "وَمَآ اَرۡسَلۡنَا مِنۡ رَّسُوۡلٍ اِلَّا لِيُطَاعَ بِاِذۡنِ اللّٰهِ" يعني اسان کو بہ پيغمبر (عليه السلام) ان جي لاءِ نہ موڪليو آهي تہ ان جي امت سندس حڪم جي مخالفت ڪري ۽ ان جي مقابلي ۾ ٻين کي پنهنجو حاڪم بنائي پر ان جي لاءِ موڪليو آهي تہ سندس هر امتي الله تعالىٰ جي اذن سان سندس فرمانبرداري ڪري جيئن بادشاهہ ان کان راضي هوندو آهي جيڪو سندن مقرر ڪيل حاڪمن ۽ عهديدارن جي اطاعت ڪندو آهي، تيئن الله تعالىٰ بہ ان کان راضي هوندو آهي جيڪو سندس پيغمبرن عليهم السلام جي اطاعت ڪندو آهي. "بِاِذۡنِ اللّٰهِ" ۾ اهو بہ اشارو آهي تہ الله تعالىٰ جي اطاعت نبي جي واسطي سان ڪري سگهجي ٿي جو الله تعالىٰ جو جيڪو فرمان نبي عليه السلام جي ذريعي پهچندو آهي ان تي عمل ڪرڻ لازم آهي باقي جيڪو خواب يا الهام سان پهچي ان کي نبي عليه السلام جي تعليم جي روشنيءَ ۾ ڏٺو ويندو جيڪڏهن موافق آهي تہ اطاعت ڪبي جيڪڏهن ناهي تہ اطاعت نہ ڪئي ويندي ۽ اهو بہ ثابت ٿيو تہ جيڪو الله تعالىٰ جي رسول مقبول صلى الله عليہ وسلم جن جي اطاعت جو منڪر آهي سو درحقيقت الله تعالىٰ جي اطاعت جو منڪر آهي پوءِ انهن شخصن جو ڇا حال ۽ حشر ٿيندو جيڪي رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي اطاعت کي غيرضروري بلڪ امت جي لاءِ نقصان ڏيندڙ سمجهندا آهن. "وَلَوۡ اَنَّهُمۡ اِذۡ ظَّلَمُوۡٓا اَنۡفُسَهُمۡ جَآءُوۡكَ فَاسۡتَغۡفَرُوا اللّٰهَ وَاسۡتَغۡفَرَ لَهُمُ الرَّسُوۡلُ لَوَجَدُوا اللّٰهَ تَوَّابًا رَّحِيۡمًا" يعني اي مجسم رحمت محبوب! (ﷺ) جيڪڏهن يقيناً اهي منافق جڏهن پنهنجو پاڻ تي ظلم ڪيو هيائون، پشيمان ۽ تائب

ٿي اوهان وٽ اچن ها ۽ پاڻ بہ الله تعالىٰ کان مغفرت طلب ڪن ها ۽ رسول (ﷺ) بہ انهن جي لاءِ مغفرت طلب ڪري ها تہ ضرور الله تعالىٰ کي توبہ قبول ڪندڙ مهربان لهن ها، يعني اوهان جي سفارش جي ڪري کين معافي ملي وڃي ها.

حضور صلي الله عليہ وسلم جن جي رحلت کان پوءِ بہ سندن ظاهري دربار جي حاضريءَ ڏيڻ ۽ مغفرت طلب ڪرڻ سان معافي ملندي آهي. يقين سان ڄاڻڻ گهرجي تہ حضور اڪرم، نور مجسم، محبوب معظم صلي الله عليہ وسلم جن جي هيءَ برڪت صرف سندن ظاهري زندگيءَ سان وابستہ نہ هئي پر اها ابد تائين آهي جو اهل دل ۽ اهل نظر بزرگ هر لمحي ۽ هر وقت ان جو مشاهدو ڪندا رهن ٿا ۽ ان اچڻ ۽ ظلم جي لاءِ بہ ڪو قيد لڳل ناهي ڪيڏو بہ ظالم هجي ۽ ڪڏهن بہ اچي پر اچي ۽ "جاؤڪ" ۾ مديني منوره جو قيد لڳل ناهي. ان جي ڪري جيڪڏهن ڪنهن کي مدينہ منوره ۾ پهچڻ جي طاقت ۽ ذريعو نہ آهي تہ صرف دل جو توجهہ ڪندو تہ اها بہ چڻ اتي جي حاضري آهي (١) پاڻ وڏن گناهن جي لاءِ بہ شفاعت ڪندڙ آهن. مفسر قرآن عبدالله بن عمر شيرازي لکيو آهي تہ: ومن منصبہ ان يشفع لکبائر الذنوب (٢) يعني رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن جو منصب ۽ مرتبو آهي تہ پاڻ وڏن گناهن جي مغفرت لاءِ بہ شفاعت ڪن ٿا.

## هڪ عظيم الشان واقعو

حضرت علي رضي الله عنہ کان روايت آهي تہ: اسان جڏهن رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن کي سندن مزار پرانوار ۾ رکڻ کان واندا ٿياسين تہ ٽن ڏينهن کان پوءِ هڪ ٻهراڙيءَ جو شخص آيو جنهن پنهنجو پاڻ سندن مزار مبارڪ سان لڳائي هي شعر بيهي پڙهيو.

يَا خَيْرَ مَنْ دُفِنَتْ فِي التُّرْبِ اَعْظُمُهٗ
فَطَابَ مِنْ طِيْبِهِنَّ الْقَاعُ وَالْاَكَمُ

اي اها پلي ذات جنهن جي جسم پاڪ کي زمين ۾ رکيو ويو ۽ سندن جسم جي خوشبوءِ سان ميدان ۽ دڙا سڀ خوشبودار ٿي ويا

نَفْسِي الْفِدَاءُ لِقَبْرٍ اَنْتَ سَاكِنُهٗ
فِيْهِ الْعَفَافُ وَفِيْهِ الْجُوْدُ وَالْكَرَمُ

(١) نور العرفان ص١٣٨ (٢) بيضاوي ڪامل ص١١٦

منهنجي جان ان مزار تان قربان آهي جنهن ۾ اوهان سڪونت پذير آهيو ان ۾ پاڪائي آهي ۽ ان ۾ ئي سخا ۽ ڪرم آهي.

ان ڪان پوءِ عرض ڪيائين تہ: يا رسول اللہ! اوهان فرمان ڪيو ۽ اسان اهو پڙهو ۽ اوهان اللہ تعالىٰ ڪان ذهن نشين فرمايو ۽ اسان اوهان ڪان ۽ اللہ تعالىٰ جي نازل ڪيل ڪلام ۾ آهي تہ: جيڪڏهن انهن پانهن جڏهن پاڻ تي ظلم ڪيو آهي اوهان وٽ اچن ها پوءِ اللہ تعالىٰ ڪان مغفرت طلب ڪن ها ۽ رسول بہ انهن لاءِ مغفرت طلب ڪري ها تہ اللہ تعالىٰ کي توبہ قبول ڪندڙ، مهربان لهن ها ۽ مان اوهان وٽ اچي اللہ تعالىٰ ڪان مغفرت طلب ڪيان ٿو پوءِ اوهان بہ مون لاءِ اللہ تعالىٰ ڪان مغفرت طلب ڪيو ان جي ائين چوڻ ڪان پوءِ ڪيس حضور عليہ الصلواة والسلام جن جي مزار اطهر ڪان سڏي چيو ويو تہ "قد غفر لک" يقيناً توڪي معاف ڪيو ويو آهي. (١) ۽ علامہ ابن ڪثير عتبيءَ ڪان روايت آندي آهي تہ مان رسول اللہ صلى اللہ عليہ وسلم جن جي مزار وٽ ويٺو هوس تہ هڪ اعرابي آيو ۽ ان اچي چيو تہ السلام عليک يا رسول اللہ!... ۽ مٿين ساڳي ڳالهہ بيان ڪندي لکيو اٿس تہ: عتبيءَ فرمايو تہ مون رسول اللہ صلى اللہ عليہ وسلم جن کي خواب ۾ ڏٺو ۽ پاڻ مون کي فرمايائون تہ اعرابيءَ کي پهچي چؤ تہ اللہ تعالىٰ توکي بخشي ڇڏيو. (٢) مفتي محمد شفيع ديوبندي لکيو آهي تہ: اور آنحضرت صلى اللہ عليہ وسلم کی خدمت میں حاضری جیسی آپ کی دنیوی حیات کے زمانے میں ہو سکتی تھی اسی طرح آج بھی روضہ اقدس پر حاضری اسی حکم میں ہے (٣)

## فائدو

"وَاسْتَغْفَرَ لَهُمُ الرَّسُوْلُ" مان ثابت ٿيو تہ حضور عليہ الصلواة والسلام جن جي شفاعت ڪان سواءِ مغفرت نصيب نہ ٿيندي ۽ سندن دنيا تان ظاهري رحلت ڪان پوءِ بہ شفاعت جاري آهي ۽ ڪين مغفرت طلب ڪندڙن جي خبر پوي ٿي تڏهن تہ مغفرت طلب ڪن ٿا.

## اعتراض

رسول اللہ صلى اللہ عليہ وسلم جن جي خدمت ۾ گناهن جي معافي وٺڻ لاءِ وڃڻ صرف ان وقت هو، هاڻي اهو حڪم ڪٿان ٿا ثابت ڪيو؟

(١) تفسير البحر المحيط ص٢٨٢ جلد ٣، القرطبي ص٢٦٥ جلد٥- ڪمالين شرح اردو جلالين ص٥٩٢- ٥٩٣ ج١ المدارک ص٢٣۴ ج١ (٢) ابن ڪثير ص٥٢٠ ج١ (٣) معارف القرآن ص۴٥٨ جلد٢

## جواب

ائين چوڻ صحيح ناهي، ڇو ته آيت سڳوريءَ جي لفظن ۾ ڪو به ان وقت جو قيد لڳل ناهي، ڪنهن به آيت جو نازل ٿيڻ ڪنهن هڪ واقعي لاءِ هوندو آهي پر ان جو حڪم عام هوندو آهي پوءِ جيڪڏهن ائين چئو ٿا ته حضور ﷺ جن جي اطاعت ڪي به صرف سندن ظاهري زندگيءَ تائين لازم سمجهو حالانڪ ائين ناهي. جيئن سندن اطاعت هميشه لازم آهي، تيئن سندن دربار جي حاضري به هميشه لاءِ آهي ۽ ڇا الله تعاليٰ به صرف ان وقت تواب، رحيم هو هاڻي ناهي؟ جڏهن نه ته پوءِ حاضري به ان وقت سان مخصوص ناهي، هاڻي به اها ساڳي عنايت ٿيندي آهي.

## اعتراض

جيڪڏهن مغفرت طلبيءَ لاءِ حضور عليه الصلواة والسلام جن وٽ هر مجرم جي حاضري ضروري آهي ته پوءِ اها تڪليف ته طاقت کان ٻاهر آهي هزارين لکين ميلن جي فاصلي تي هر ماڻهو ڪيئن پهچي سگهندو؟

## جواب

ان جي وضاحت اڳ ۾ ٿي چڪي آهي ته ان حاضريءَ مان مراد صرف جسماني حاضري ناهي جسماني هجي يا دلي ۽ روحاني، جيئن نماز جي جائز هجڻ لاءِ پري کان بيت الله شريف واري طرف ڏانهن منهن ڪرڻ ڪافي آهي تيئن ڪٿان به دل جو منهن حضور عليه الصلواة والسلام جن ڏانهن ڪري متوجهه ٿي شفاعت طلب ڪرڻ سان ٻيڙا پار ٿي ويندا آهن سج جي روشني حاصل ڪرڻ لاءِ چوٿين آسمان تي وڃڻ ضروري ناهي، ڪٿي به ماڻهو هجي روشنيءَ لاءِ وڌندو ته روشني حاصل ٿي ويندي، حضور اڪرم صلى الله عليه وسلم جن نبوت جي آسمان جا سراج منير آهن ڪو ڪٿي به هجي نگاهه عنايت سان مرادون حاصل ٿي وينديون. (١)

” فَلَا وَرَبِّكَ لَا يُؤْمِنُوْنَ حَتّٰى يُحَكِّمُوْكَ فِيْمَا شَجَرَ بَيْنَهُمْ ثُمَّ لَايَجِدُوْا فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ حَرَجًا مِّمَّا قَضَيْتَ وَيُسَلِّمُوْا تَسْلِيْمًا “ يعني تنهنجي رب جو قسم آهي ته

(١) نعيمي ص٢٠٦ ج۵

(اهي ماڻهو جيڪي صرف زباني ايمان ظاهر ڪندا ڦرندا وتن ٿا، الله تعالیٰ وٽ تيستائين) مومن نہ ٿيندا جيستائين اهي پنهنجن انهن معاملن ۾ جن ۾ لڙي رهيا آهن اوهان کي حاڪم نہ بنائيندا ۽ جڏهن اوهان فيصلو ڪيو تہ پنهنجين دلين ۾ ڪا بہ ان ڪان تنگي محسوس نہ ڪندا ۽ ان کي خوشيءَ سان تسليم ڪندا، هن آيت ۾ نهايت مؤثر ۽ تاڪيدي لفظن سان قسم جو واو ۽ نفي جي لاءِ بہ پيرا آڻي نہ تسليم ڪرڻ وارن ڪان ايمان جي نفي ڪندي، سرور ڪائنات عليه الصلواة والسلام جن جي حاڪميت کي بيان ڪيو ويو آهي، يعني اوهان جي رب جو قسم تہ اهي اصل مومن نہ ٿي سگهندا، جيستائين ظاهري انقياد ۽ تسليم سان گڏ اوهان جي فيصلي ۽ فرمان کي دل جي گهراين سان نہ مڃيندا ۽ درحقيقت هن آيت ۾ محبوب آقا عليه الصلواة والسلام جن جي عظمت ۽ مرتبي جي بلنديءَ کي بيان ڪندي واضح ڪيو ويو آهي تہ سندن حڪم کي تسليم نہ ڪندڙ مؤمن ناهي ڪافر آهي ڇو تہ پاڻ صرف حاڪم نہ پر معصوم نبي،رحمَةً للعالمين ۽ امت تي پيءُ ڪان بہ وڌيڪ مهربان ۽ مشفق آهن.

## مسئلو

"فِيۡمَا شَجَرَ بَيۡنَهُمۡ" مان مراد صرف معاملات ۽ دنيوي حقوق ناهن پر اهو عقائد، نظريات ۽ ٻين مسئلن کي بہ حاوي آهي، مقصد تہ هر ڪم ۾ حضور عليه الصلواة والسلام جن جي فيصلي کي تسليم ڪن، ان تي مطمئن رهن ڇو تہ سندن فيصلو الله تعالیٰ جي حڪم موافق هوندو آهي،جيئن قرآن پاڪ ۾ آهي "اِنَّاۤ اَنۡزَلۡنَاۤ اِلَيۡكَ الۡكِتَابَ بِالۡحَقِّ لِتَحۡكُمَ بَيۡنَ النَّاسِ بِمَاۤ اَرٰىكَ اللّٰهُ"(١) يعني اسان اوهان تي حق سان ڪتاب نازل ڪيو آهي تانت اوهان ماڻهن ۾ الله تعالیٰ جي ڏيکاريل رستي موافق فيصلا ڪيو.



(١) سورة النساءِ آيت١٠٥

وَلَوْ اَنَّا كَتَبْنَا عَلَيْهِمْ اَنِ اقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ اَوِ اخْرُجُوْا مِنْ

۽ جيڪڏهن تحقيق اسان فرض ڪيون ها انهن تي تہ ڪهو پنهنجي پاڻ کي يا نڪرو پنهنجن

دِيَارِكُمْ مَّا فَعَلُوْهُ اِلَّا قَلِيْلٌ مِّنْهُمْ ۭ وَلَوْ اَنَّهُمْ فَعَلُوْا مَا

گهرن مان تہ نہ ڪن ها اهو مگر ٿورا انهن مان ۽ جيڪڏهن تحقيق اهي ڪن ها اهو ڪم جو

يُوْعَظُوْنَ بِهٖ لَكَانَ خَيْرًا لَّهُمْ وَاَشَدَّ تَثْبِيْتًا ﴿٦٦﴾ وَّاِذًا لَّاٰتَيْنٰهُمْ

نصيحت ٿا ڪيا وڃن ان سان تہ البت هجي ها ڀلو انهن جي لاءِ ۽ وڌيڪ ثابت رکڻ وارو ۽ ان وقت ڏيون ها انهن کي

مِّنْ لَّدُنَّآ اَجْرًا عَظِيْمًا ﴿٦٧﴾ وَّلَهَدَيْنٰهُمْ صِرَاطًا مُّسْتَقِيْمًا ﴿٦٨﴾ وَمَنْ

پاڻ وٽان ثواب وڏو ۽ البت ڏيکاريون ها انهن کي واٽ سڌي ۽ جيڪو

يُّطِعِ اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ فَاُولٰۗىِٕكَ مَعَ الَّذِيْنَ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ مِّنَ

اطاعت ڪندو الله ۽ رسول جي پوءِ اهي انهن سان گڏ هوندا جو نعمت ڪئي الله انهن تي

النَّبِيّٖنَ وَالصِّدِّيْقِيْنَ وَالشُّهَدَاۗءِ وَالصّٰلِحِيْنَ ۚ وَحَسُنَ اُولٰۗىِٕكَ

نبين ۽ صديقن ۽ شهيدن ۽ صالحن مان ۽ سهڻا آهن اهي

رَفِيْقًا ﴿٦٩﴾ ذٰلِكَ الْفَضْلُ مِنَ اللّٰهِ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ عَلِيْمًا ﴿٧٠﴾ ع ٩

رفيق اها مهرباني آهي الله جي طرفان ۽ ڪافي آهي الله ڄاڻندڙ

## تفسير

متي لکيل بشر نالي منافق جي قتل ٿيڻ جو واقعو جڏهن مديني منوره ۾ مشهور ٿي ويو تہ اتي جي يهودين مسلمانن کي شرمائڻ شروع ڪيو تہ اوهان

کھڙا ماڻھو آھيو؟ جو جنھن ھستيءَ کي الله تعاليٰ جو رسول مڃي ان جي اطاعت جي دعويٰ کيو ٿا سندس فيصلن کي تسليم نہ ٿا ڪيو (منافق بہ ظاھر ۾ مسلمان سڏائيندا ھئا تڏھن يھودين طعنا ٿي ھنيا) ڏسو اسان يھودين کي گناھ کان توبہ ڪرڻ جي لاءِ ھڪ ٻئي کي قتل ڪرڻ جو حڪم مليو تہ اسان ان سخت حڪم جي تعميل ڪئي تانجو اسان يھودين جا ستر ھزار (٧٠٠٠٠) ماڻھو مارجي ويا جيڪڏھن اوھان کي ڪو اھڙو حڪم ملي ھا تہ اوھان تہ الاءِ ڇا ڪيو ھا؟ تڏھن ھيءَ آيت نازل ٿي "وَلَوْ اَنَّا كَتَبْنَا عَلَيْهِمْ اَنِ اقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ اَوِ اخْرُجُوْا مِنْ دِيَارِكُمْ مَّا فَعَلُوْهُ اِلَّا قَلِيْلٌ مِّنْهُمْ" جاڻڻ گھرجي تہ عليھم ۾ "ھم" ضمير جي مرجع منافق آھن جن جو ذڪر اڳين آيتن ۾ ھلندو آيو آھي مقصد تہ جڏھن ٿورڙيءَ آزمائش ۾ ئي انھن جي ايمان جي حقيقت کلي پئي تہ جيڪڏھن اسين انھن تي ھي فرض ڪيون ھا تہ پنھنجو پاڻ کي قتل ڪيو يا وطن مان نڪري جلاوطن ٿيو تہ انھن مان ڪي ٿورا ان تي عمل ڪن ھا، باقي گھڻا ان امتحان ۾ ناپاس ٿين ھا. جڏھن اصحابن سڀورن خصوصاً حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنه جن تي ھيءَ آيت ٻڌي تہ انھن ھڪدم چيو تہ: جيڪڏھن اسان کي اسان جو رب اھڙو حڪم ڪندو تہ اسين اطاعت ڪري ڏيکاريندا سون ۽ جڏھن حضور عليه الصلواة والسلام جن اصحابن جو اھو قول ٻڌو تہ ان جي تصديق ڪندي فرمايائون تہ "اَلْاِيْمَانُ اَثْبَتُ فِىْ قُلُوْبِ اَهْلِهٖ مِنَ الْجِبَالِ الرَّوَاسِيْ" يعني ايمان وارن جي دلين ۾ مضبوط ڪتلن جبلن کان بہ وڌيڪ ثابت آھي (١) ھنن لفظن ۾ انھن ماڻھن کي بہ سخت تنبيہ ڪيل آھي جيڪي پنھنجا معاملا رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي حڪم مطابق حل نہ ڪرائڻ جي ڪوشش ڪندا آھن.

## فائدو

مٿي ذڪر ٿي آيو آھي تہ اھا آيت جڏھن نازل ٿي ۽ حضرت ابوبڪر صديق رضي الله تعاليٰ عنه ٻڌي تہ فرمايائين "جيڪڏھن اسان تي اھو حڪم نازل ٿئي ھا تہ الله تعاليٰ جو قسم سيني کان پھريان مان پنھنجي جان ۽ اھل عيال قربان ڪيان ھا (٢) ۽ وطن ڇڏڻ جي قرباني تہ ڪيترا صحابہ ڪرام رضى الله عنھم اجمعين ڪري چڪا ھئا. "وَلَوْ اَنَّهُمْ فَعَلُوْا مَا يُوْعَظُوْنَ بِهٖ لَكَانَ خَيْرًا لَّهُمْ وَاَشَدَّ تَثْبِيْتًا" يعني

(١) ضياءُ القرآن ص٣٦١ ج١ (٢) معارف القرآن ص٤٦٣- ٤٦٤ ج٢

(اهو ڪم آهي تہ بلڪل ڳرو) پر جيڪڏهن ان نصيحت مطابق اهي عمل ڪن ها تہ انهن لاءِ تمام ڀلائي ۽ دين تي گهڻو ثابت رکندڙ شيءِ هجي ها ۽ سندن ايمان وڌيڪ قوي، مضبوط ۽ مستحڪم ٿئي ها.

"وَاِذًا لَّاٰتَيْنَاهُمْ مِّنْ لَّدُنَّا اَجْرًا عَظِيْمًا وَّلَهَدَيْنَاهُمْ صِرَاطًا مُّسْتَقِيْمًا" يعني مٿين حڪم تي عمل ڪرڻ جي ڪري اسين انهن کي پاڻ وٽان وڏو اجر عطا ڪيون ها ۽ کين صراط مستقيم (سڌيءَ واٽ) تي هلايون ها. هن آيت جو تفسير ڪندي مفسر بيضاويءَ لکيو آهي تہ: "يصلون بسلوکه جناب القدس ويفتح عليهم ابواب الغيب قال النبي صلي الله عليه وسلم مَنْ عَمِلَ بِمَا عَلِمَ وَرَّثَهُ اللهُ عِلْمَ مَالَمْ يَعْلَمْ" (١) يعني کين انهيءَ واٽ تي هلايون ها جنهن تي هلڻ سان بارگاهہ اقدس تائين پهچن ها ۽ انهن تي غيب جا دروازا کلي پون ها، نبي ڪريم صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو آهي تہ جنهن پڙهيل علم تي عمل ڪيو ان کي الله تعاليٰ نہ پڙهيل علم جو بہ وارث بنائيندو.

## فائدو

مٿي ذڪر ڪيل لفظ "اَشَدَّ تَثْبِيْتًا" مان ثابت ٿيو تہ الله جل شانہ ۽ ان جي محبوب نبي عليہ الصلواة والسلام جي اطاعت سان دين ۽ دنيا جي ڀلائي، عزت، روزيءَ ۾ برڪت، نيڪنامي، ايمان تي خاتمو ۽ صالحن جي رفاقت نصيب ٿيندي. "اَجْرًا عَظِيْمًا" مان ثابت ٿيو تہ الله جل شانہ ۽ سندس محبوب نبي ڪريم صلي الله عليہ وسلم جي اطاعت سان اهو اجر ملندو جيڪو وهم ۽ گمان کان مٿي آهي، الله تعاليٰ دنيا جي نعمتن کي "قُلْ مَتَاعُ الدُّنْيَا قَلِيْلٌ" فرمائي ٿورو سڏيو آهي پر اطاعت ڪندڙن جي اجر کي عظيم (وڏو) سڏيو آهي، صوفياءِ ڪرام وٽ نفس جون خواهشون پوريون نہ ڪرڻ، ان جي صفتن کي فنا ڪرڻ "اُقْتُلُوْا اَنْفُسَكُمْ" ۾ داخل آهي ۽ دل کي دنيا کان جدا ڪري صبر، توڪل، رضا ۽ تسليم وارو بنائڻ، "اَوِ اخْرُجُوْا مِنْ دِيَارِكُمْ" ۾ داخل آهي.

"وَمَنْ يُّطِعِ اللهَ وَالرَّسُوْلَ" کان "وَحَسُنَ اُولٰئِكَ رَفِيْقًا" تائين آيت ۾ هڪ قاعدو مقرر ڪري الله تعاليٰ ۽ ان جي پياري رسول صلى الله عليہ وسلم

(١) بيضاوي ڪامل ص١١٧

جن جي اطاعت ڪندڙ سان هڪ وعدو ڪيو ويو آهي، يعني جيڪي ماڻهو انهن سڀني حڪمن تي عمل ڪندا جيڪي الله ۽ ان جي رسول صلى الله عليه وسلم ڪين فرمايا آهن ته انهن مان اول درجي وارن کي جنت جي اعلىٰ مقامات ۾ انبياءِ عظام عليهم السلام سان ۽ ٻئي درجي وارن کي صديقن سان ۽ ٽئين درجي وارن کي شهيدن سان ۽ چوٿين درجي وارن کي صالحن سان گڏ رهايو ويندو.

## هن آيت جو شان نزول

طبراني، ابن مردويه، ابونعيم ۽ ضياءَ مقدسي ام المؤمنين سيده عائشه رضي الله عنها کان روايت آندي آهي ته: هڪ شخص نبي ڪريم صلى الله عليه وسلم جن وٽ آيو ۽ عرض ڪيائين ته يا رسول الله! اوهان مون کي پنهنجي سر ۽ اولاد کان وڌيڪ محبوب آهيو ۽ مان گهر ۾ هوندي اوهان کي ياد ڪندو آهيان تيستائين صبر نه ايندو اٿم جيستائين اوهان جي زيارت نه ڪريان ۽ مون کي پنهنجي وفات ۽ اوهان جي رحلت ياد ايندي آهي ته سمجهندو آهيان ته اوهان جنت جي بلند مقام ۾ هوندا ۽ مان جيڪڏهن جنت ۾ داخل ٿيندس ته به ڊڄان ٿو ته اتي اوهان جو ديدار ٿيندو الاءِ نه، پاڻ ان کي ڪو به جواب نه ڏنائون تانجو هيءَ آيت نازل ٿي. (١) ۽ پاڻ ان کي سڏي هيءَ بشارت ٻڌايائون، يعني اطاعت ڪندڙن کي جنت ۾ انبياء عليهم الصلواة والسلام، صديقن، شهيدن ۽ صالحن سان سندن درجات جي گهٽ وڌ هجڻ جي باوجود ملاقاتن ۽ مجلس ڪرڻ جو موقعو ملندو رهندو. (٢)

## اصحاب ڪرام جي دلين ۾ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن سان جنت ۾ گڏ رهڻ جو شوق

ابن جرير ربيع کان روايت آندي آهي ته نبي ڪريم صلى الله عليه وسلم جن جي اصحابن رضي الله عنهم پاڻ ۾ گفتگو ڪئي ته سيدنا رسول الله صلى الله عليه وسلم جن پنهنجن مومنن امتين کان جنت جي درجات ۾ بلند هوندا ۽ ان کان پوءِ اهي هوندا جن مٿن ايمان آڻي، سندن تصديق ڪئي هوندي پوءِ جنت ۾ اهي هڪ ٻئي کي ڪيئن ڏسندا؟ تڏهن الله تعالىٰ اها آيت نازل ڪئي ۽ رسول الله صلى الله عليه

(١) الدرالمنثور ص٥٨٨ ج٢ (٢) معارف القرآن ص٤٦٦ ج٢

وسلم جن فرمايو تہ: جنت جي مٿاهن درجن وارا هيٺين ڏانهن لهي ايندا پوءِ جنت جي باغن ۾ ويهي الله تعاليٰ جي نعمتن کي ياد ڪندا ۽ سندن ثنا ڪندا. مسلم، ابوداؤد، نسائي، ربيعہ بن ڪعبہ اسلميءَ رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ مون نبي ڪريم صلي الله عليہ وسلم جن کي وضوءَ جو پاڻي ۽ ٻيون ضرورتون حاضر ڪري ڏنيون. پوءِ پاڻ مون کي فرمايائون تہ "سَلْنِيْ" مون کان گهر، مون عرض ڪيو تہ: يَا رَسُوْلَ اللهِ! اَسْئَلُکَ مُرَافَقَتَکَ فِی الْجَنَّةِ" مان اوهان کان جنت ۾ اوهان جي رفاقت ٿو گهران، فرمايائون "ان کان سواءِ ٻيو ڪجهہ" مون عرض ڪيو تہ اهوئي آهي. پاڻ فرمايائون تہ "پوءِ ان ۾ منهنجي گهڻن سجدن سان مدد ڪر"

حضرت عڪرمہ رضي الله عنہ کان روايت آهي تہ: هڪ نوجوان نبي پاڪ صلي الله عليہ وسلم جن وٽ آيو ۽ عرض ڪيائين تہ: يا نبي الله! اسان اوهان جو دنيا ۾ ديدار ڪيون ٿا پر قيامت ۾ اوهان بلند درجات ۾ هوندا، اسين اتي تہ اوهان کي ڏسي نہ سگهنداسون. تڏهن الله تعاليٰ اها آيت نازل ڪئي ۽ پاڻ کيس فرمايائون تہ "اَنْتَ مَعِيَ فِي الْجَنَّةِ اِنْشَآءَاللهُ تَعَالىٰ" يعني انشاءَالله تعاليٰ تون مون سان جنت ۾ گڏ هوندين، قرآن پاڪ جي مفسر بغويءَ لکيو آهي تہ مٿين آيت رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي آزاد ڪيل غلام حضرت ثوبان رضي الله عنہ جي باري ۾ لٿي هئي، جنهن جو واقعو هيئن آهي تہ ثوبان سڳورو حضور عليہ الصلواة والسلام جن سان تمام گهڻي محبت رکندو هو ۽ کانئن جدا رهڻ تي صبر ڪري نہ سگهندو هو، هڪ ڀيري رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن وٽ ان حال ۾ آيو جو سندس رنگ ڦريل هو ۽ سندس منهن مان ڏک جا آثار ظاهر ٿي رهيا هئا. حضور عليہ الصلواة والسلام جن کيس فرمايو تہ " تنهنجي رنگ کي ڪنهن ڦيرايو آهي؟" عرض ڪيائين تہ سائين مون کي نہ ڪا بيماري آهي نہ ڪو سور آهي، پر جيڪڏهن اوهان کي نہ ٿو ڏسان تہ سخت بيقرار ٿو بنجان تانجو اوهان سان ملاقات ڪيان، ان کان پوءِ مون آخرت کي ياد ڪيو تہ اوهان جنت جي مٿاهن مقامن ۾ هوندا ۽ مان جيڪڏهن جنت ۾ داخل ٿيس تہ بہ اوهان کان گهٽو گهٽ منزل ۾ هوندس ۽ جيڪڏهن جنت ۾ داخل نہ ٿيس پوءِ تہ اوهان کي هميشہ لاءِ ڪو نہ ڏسندس، تڏهن الله تعاليٰ هيءَ آيت نازل فرمائي(١) ۽ صرف حضرت ثوبان رضي الله تعاليٰ عنہ جي لاءِ نہ پر عام قانون رکيو ويو تہ جيڪو بہ شخص عربي هجي يا

(١) تفسير مظهري ص٣٥١-٣٥٢ ج٢

عجمي ڪارو هجي يا گورو، امير هجي يا فقير اطاعت ڪندو تہ ان کي اها نعمت نصيب ٿيندي.

علامہ ثناءالله پاني پتي عليہ الرحمة لکيو آهي تہ: الله تعالىٰ جي نعمت ڪيل ٻانهن جا چار قسم آهن. ١- پهريان انبياءِ ڪرام (عليهم السلام) جن جي تعينات جون ابتدائي ڳالهيون الله تعالىٰ جون صفتون هونديون آهن ۽ اهي صفات جي حجابات کان سواءِ دائمي، خالص، انهن ذاتي تجليات ۾ مستغرق هوندا آهن، جن کي نبوت جا ڪمالات سڏيو ويندو آهي ان مقام ۾ اصل اهي ئي راسخ ۽ فائز هوندا آهن جيڪي مخلوق کي ڪامل بنائڻ ۽ الله تعالىٰ جي مشيت جي موافق امت جي فردن کي سندن ڪمائيءَ ۽ استعداد آهر قرب جي مرتبن ڏانهن ڇڪي وٺندا آهن، ۽ الله تعالىٰ جا اهي احڪام جن سان ماڻهن جي دنيا ۽ آخرت جي اصلاح ۽ ڀلائي ٿئي انهن تائين پهچائيندا آهن. ٢- ٻيا صديقين- جيڪي سچ ۾ مبالغو ڪندڙ، نبين عليهم الصلواة والسلام جي ظاهري ۽ باطني متابعت جي ڪمال سان موصوف ٿيندڙ، نبوت جي ڪمالات ۽ ذاتي، خالص، دائمي تجليات ۾ حجاب کان سواءِ نبين جي وراثت ۽ تابع جي حيثيت سان مستغرق رهندڙ آهن. ٣- ٽيان شهداء- پنهنجون جانيون الله تعالىٰ جي واٽ ۾ ان لاءِ لٽائيندڙ تہ سندن مٿان ذاتي تجليات جو ڪو قسم پلٽايو وڃي. ۴- چوٿان صالحين، جن پنهنجن نفسن جي گندين عادتن ختم ڪرڻ ۽ قلبن جي محبت جي بحرن مان پيڻ ۽ ان ذڪر جي دوام سان جيڪو غيرالله سان مشغول هجڻ کان روڪي بدنن جي گناهن کان پاڪ ٿيڻ سان اصلاح ڪئي، فنائيت ۽ بقا علي وجه الڪمال جي حاصل ٿيڻ کان پوءِ ظلال ۽ افعال جي تجليات جا لائق ۽ اهل بڻيا ۽ صفاتي حجابات جي پويان ڪجهہ ذاتي تجليات بہ انشاءالله حاصل ڪري ويا ۽ اهي ئي آهن جن کي عام محاوره ۾ اولياءالله جي نالي سان سڏيو ويندو آهي ۽ صديقين ۽ صالحين مان مراد نبين عليهم السلام کان سواءِ ٻيا آهن، ڇو تہ قرآن ڪريم ۾ صديق ۽ صالح جو لفظ نبين عليهم الصلواة والسلام تي بہ ڳالهايو ويو آهي، جيئن حضرت ابراهيم عليہ الصلواة والسلام جي لاءِ آيو، "اِنَّهٗ كَانَ صِدِّيْقًا نَّبِيًّا" (١) يقيناً اهو (صديق) سچو نبي هو ۽ حضرت يحيىٰ عليہ الصلواة والسلام جي لاءِ آيو "وَسَيِّدًا وَّحَصُوْرًا وَّ نَبِيًّا مِّنَ الصّٰلِحِيْنَ" (٢) ۽ سردار ۽ عورتن کان بي رغبت ۽ نبي، صالحن

(١) سورة مريم آيت ۴١ (٢) سورة آل عمران آيت ٣٩

مان هو ۽ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي لاءِ آيو "وَيُكَلِّمُ النَّاسَ فِى الْمَهْدِ وَكَهْلًا وَّمِنَ الصَّالِحِيْنَ" (١) ۽ ماڻهن سان پينگهي ۾ ڳالهيندو ۽ ڪرڙوڊائيءَ ۾ ۽ صالحن مان هوندو (٢) آيت جي آخر ۾ آهي ۽ اهي چارئي ذڪر ڪيل قسم سهڻا رفيق آهن .

## جنت ۾ نبين وغيرهم سان گڏ رهڻ وارن جا ڪجهه عمل

امام احمد بن حنبل پنهنجي مسند ۾ روايت آندي آهي ته هڪ شخص رسول الله صلى الله عليه وسلم جن جي خدمت ۾ آيو ۽ عرض ڪيائين ته يا رسول الله! مان ان ڳالهه جي شاهدي ڏئي چڪو آهيان ته الله تعالىٰ کان سواءِ ڪو به عبادت جو لائق ناهي ۽ اوهان الله جا سچا رسول آهيو ۽ مان پنج وقتيءَ نماز جو پابند، زڪواة ادا ڪندڙ ۽ رمضان جا روزا رکندڙ آهيان اهو ٻڌي پاڻ فرمايائون ته جيڪو شخص ان حالت ۾ مري ويندو اهو نبين عليهم الصلواة والسلام ۽ صديقن ۽ شهيدن سان گڏ هوندو، ان شرط سان جو والدين جي بي فرماني نه ڪري (٣) ترمذي شريف ۾ آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "اَلتَّاجِرُ الصَّدُوْقُ الْاَمِيْنُ مَعَ النَّبِيّٖنَ وَالصِّدِّيْقِيْنَ وَالشُّهَدَاءِ" يعني سچو، امانت وارو، واپاري، نبين، صديقن ۽ شهيدن سان گڏ هوندو. (٤)

## نبين عليهم الصلواة والسلام جي قرب جو شرط انهن سان سچي سڪ ۽ محبت آهي

ذهن نشين ڪرڻ گهرجي ته حبيبن ڪريمن صلى الله عليه وسلم جن سان جنت ۾ رفاقت سندن محبت سان حاصل ٿيندي، جيئن بخاري شريف ۾ اصحابن جي هڪ وڏي جماعت کان متواتر طريقي سان روايت آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن کان عرض ڪري پڇيو ويو ته ان شخص جو درجو ڪهڙو هوندو جيڪو ڪنهن جماعت سان تعلق ۽ محبت رکي ٿو، پر عمل ۾ انهن جي درجي کي نه پهتو آهي؟ پاڻ فرمايائون ته "اَلْمَرْءُ مَعَ مَنْ اَحَبَّ" يعني محشر ۾ هر شخص ان سان گڏ هوندو جنهن سان سندس محبت هوندي. حضرت انس رضي الله عنه فرمايو ته: اصحابن سڀني کي

(١) سورة آل عمران آيت٤٦ (٢) مظهري ص٣٥٢-٣٥٣ ج٢
(٣) الدرالمنثور ص٥٩٠ ج٢ (٤) معارف القرآن ص٤٦٤ ج٢

ڪنهن به شيءِ سان ايتري خوشي حاصل نه ٿي هئي جيتري هن حديث سان ٿيو ته ان ۾ اها خوشخبري آهي ته رسول الله صلي الله عليه وسلم جن سان محبت رکڻ وارا محشر ۾ ساٿن گڏ هوندا. (١)

## رسول الله صلي الله عليه وسلم جن جي رفاقت ڪنهن رنگ ۽ نسل تي موقوف ناهي

طبرانيءَ معجم ڪبير ۾ حضرت عبدالله بن عمر رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي ته هڪ حبشي (شيدي) شخص حضور عليه الصلواة والسلام جن جي خدمت ۾ حاضر ٿيو ۽ عرض ڪيائين ته يارسول الله! (ﷺ) اوهان صورت جي حسن ۽ رنگ جي سونهن ۾ به ممتاز آهيو ته نبوت ۽ رسالت ۾ به، هاڻي جيڪڏهن مان به ان شيءِ تي ايمان آڻيان جنهن تي اوهان آندو آهي ۽ اهي ئي عمل ڪريان جيڪي اوهان ڪيو ٿا ته ڇا مان جنت ۾ اوهان سان گڏ رهي سگهان ٿو؟ پاڻ فرمايائون ته هائو ضرور! قسم آهي ان پاڪ ذات جو جنهن جي قدرتي هٿ ۾ منهنجو ساهه آهي ته جنت ۾ ڪاري رنگ وارا حبشي به گورا ۽ سهڻا ٿي ويندا ۽ هڪ هزار (١٠٠٠) سالن جي پنڌ کان چمڪندي نظر ايندا ۽ جيڪو شخص لا اله الاالله جو قائل هوندو ان جي ڪاميابي ۽ ڇوٽڪارو الله تعالىٰ جي ذمي آهي ۽ جيڪو شخص سبحان الله وبحمده پڙهي ٿو ان جي عملنامي ۾ هڪ لک چوويهه هزار (١٢٤٠٠٠) نيڪيون لکجي وڃن ٿيون، اهو ٻڌي هڪ شخص عرض ڪيو ته: يا رسول الله! (ﷺ) جڏهن الله تعالىٰ جي دربار ۾ نيڪين جي ايتري سخاوت آهي ته پوءِ اسين ڪيئن هلاڪ ٿي سگهنداسين يا عذاب ۾ مبتلا ٿينداسين؟ پاڻ فرمايائون ته (ائين ناهي) حقيقت هيءَ آهي ته قيامت ۾ بعضي ماڻهو ايترا عمل ۽ نيڪيون کڻي ايندا جو جيڪڏهن انهن کي جبل تي رکيو وڃي ته اهو به ايترو بار برداشت ڪري نه سگهي، پر انهن جي مقابلي ۾ جڏهن الله تعالىٰ جون نعمتون ياد اينديون ۽ انهن سان ڀيٽ ڪئي ويندي ته انسان جا عمل ختم ٿي ويندا، مگر هيئن آهي جو الله تعالىٰ ان کي پنهنجي رحمت سان نوازي، ان حبشيءَ جي سوال ۽ جواب تي سورة الدهر جي آيت، "هَلۡ اَتٰى عَلَى الۡاِنۡسَانِ حِيۡنٌ مِّنَ الدَّهۡرِ لَمۡ يَكُنۡ شَيۡـًٔا مَّذۡكُوۡرًا" نازل ٿي. حبشي حيرت ۾ اچي سوال ڪيو ته: يا رسول الله ﷺ! منهنجون

(١) معارف القرآن ص٤٦٤ ج٢

اکيون بہ انهن نعمتن کي ڏسنديون جن کي اوهان جون اکيون مبارڪ مشاهدو فرمائينديون؟ پاڻ فرمايائون تہ: هائو ضرور. اهو ٻڌي نئين مسلمان ٽيندڙ حبشيءَ روئڻ شروع ڪيو ۽ روئندي روئندي اتي ئي سندس ساهہ نڪري ويو ۽ حضور صلی الله عليہ وسلم جن پاڻ ان جي ڪفن دفن جو انتظام فرمايو. (١)

"ذَالِکَ الْفَضْلُ مِنَ اللّٰہِ وَکَفٰی بِاللّٰہِ عَلِيْمًا" يعني الله تعالیٰ جي نعمت ڪيلن ۾انهن سان جنت ۾ رفاقت الله تعالیٰ جي طرفان پلائي آهي ۽ الله تعالیٰ ان رفاقت جي سبب کي ڄاڻڻ لاءِ ڪافي آهي. مقصد تہ نبين عليهم السلام جي عملن جي برابر عمل نہ ڪرڻ جي باوجود انهن سان جنت ۾ گڏ رهائڻ جو سبب محبت آهي جنهن کي الله تعالیٰ ڄاڻي ٿو ۽ اها ڪراماً ڪاتبين جي اڳيان بہ ظاهر نہ هوندي آهي. حضرت انس رضي الله عنہ کان روايت آهي تہ هڪ شخص رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن کان عرض ڪري پڇيو تہ يارسول الله! قيامت ڪڏهن آهي؟ پاڻ ان کي فرمايائون تہ: "قيامت جي لاءِ ڇا تيار ڪيو اٿئي؟" عرض ڪيائين تہ ٻيا گهڻا عمل نہ ڪيا اٿم پر الله ۽ ان جي رسول (ﷺ) سان محبت رکان ٿو. پاڻ فرمايائون تہ "اَنْتَ مَعَ مَنْ اَحْبَبْتَ" تون ان سان گڏ هوندين جنهن سان محبت اٿئي. (٢)

## فائدو

علامہ محمد بن محمد عمادي عليہ الرحمه لکيو آهي تہ: وليس المراد بالمعية الاتحاد فی الدرجة ولا مطلق الاشتراک في دخول الجنة بل کونهم فيها بحيث يتمکن کل واحد منهم من روية الاخر وزيارته متیٰ اراد وان بعد ما بينهما من المسافة (٣) يعني نبين، صديقن، شهيدن، صالحن سان گڏ هجڻ جي مراد اها ناهي تہ هڪ درجي ۾ هوندا پر هر هڪ جڏهن ٻئي کي ڏسڻ يا ان جي زيارت ڪرڻ گهرندو تہ گهڻي پنڌ جي باوجود ڏسي سگهندو يا زيارت ڪري سگهندو. والله اعلم

(١) تفسير ابن ڪثير ص٥٢٣- ٥٢٤ ج١ (٢) مظهري ص٣٥٣ ج٢
(٣) تفسير ابي السعود ص١٩٩ جلد ١ جزءُ ٢

يَآاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا خُذُوْا حِذْرَكُمْ فَانْفِرُوْا ثُبَاتٍ اَوِانْفِرُوْا

اي ايمان وارؤ! وٺو بچاءُ پنهنجو پوءِ نڪرو ٽولا ٽولا ٿي يا نڪرو

جَمِيْعًا ﴿٧١﴾ وَاِنَّ مِنْكُمْ لَمَنْ لَّيُبَطِّئَنَّ ۚ فَاِنْ اَصَابَتْكُمْ مُّصِيْبَةٌ

گڏجي ۽ بيشڪ اوهان مان البت اهو به آهي جو ضرور دير ڪندو پوءِ جيڪڏهن پهتي اوهان کي ڪا مصيبت

قَالَ قَدْ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيَّ اِذْ لَمْ اَكُنْ مَّعَهُمْ شَهِيْدًا ﴿٧٢﴾ وَلَئِنْ

ته چوندو تحقيق نعمت ڪئي الله مون تي جو نه هيس انهن سان گڏ حاضر ۽ البت جيڪڏهن

اَصَابَكُمْ فَضْلٌ مِّنَ اللّٰهِ لَيَقُوْلَنَّ كَاَنْ لَّمْ تَكُنْ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهٗ مَوَدَّةٌ

پهتي اوهان کي مهرباني الله جي طرفان ته البت ضرور چوندو جڻ ته نه هئي اوهان ۽ ان جي وچ ۾ ڪا دوستي

يّٰلَيْتَنِيْ كُنْتُ مَعَهُمْ فَاَفُوْزَ فَوْزًا عَظِيْمًا ﴿٧٣﴾ فَلْيُقَاتِلْ فِيْ

هاءِ جيڪڏهن هجان ها گڏ انهن سان پوءِ ڪامياب ٿيان ها ڪاميابي وڏي پوءِ گهرجي ته جنگ ڪن

سَبِيْلِ اللّٰهِ الَّذِيْنَ يَشْرُوْنَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا بِالْاٰخِرَةِ ۭ وَمَنْ يُّقَاتِلْ

الله جي واٽ ۾ اهي جو وڪڻن ٿا حياتي دنيا واري عوض آخرت جي ۽ جيڪو جنگ ڪري ٿو الله

فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَيُقْتَلْ اَوْ يَغْلِبْ فَسَوْفَ نُؤْتِيْهِ اَجْرًا عَظِيْمًا ﴿٧٤﴾

جي واٽ ۾ پوءِ ڪُٺو ٿو وڃي يا غالب ٿو اچي پوءِ جلدي ڏينداسون ان کي ثواب وڏو

## تفسير

اڳ ۾ ذڪر ڪيل آيتن ۾ الله تعاليٰ ۽ ان جي رسول مقبول صلى الله عليه وسلم جن جي اطاعت جو ذڪر هيو ۽ هتي اسلام جي لاءِ جهاد جي تلقين ڪندي

فرمان ٿيو آهي تہ "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا خُذُوْا حِذْرَكُمْ فَانْفِرُوْا ثُبَاتٍ اَوِ انْفِرُوْا جَمِيْعًا" يعني اي ايمان وارؤ! ڪافرن جي مقابلي ۾ پنهنجو بچاءُ وٺو انهن جي جنگي تيارين کان خبردار رهو پنهنجا هٿيار مضبوط رکو ۽ جهاد لاءِ نڪرو تہ اڪيلا نہ پر ننڍين ننڍين ٽولين جي صورت ۾ يا وڏيءَ جماعت جي صورت ۾ نڪرو. اڪيلو وڃڻ جي صورت ۾ نقصان ٿيڻ جو قوي امڪان ۽ احتمال هوندو آهي ۽ دشمن اهڙي موقعي مان پورو پورو فائدو وٺي سگهي ٿو.

"وَاِنَّ مِنْكُمْ لَمَنْ لَّيُبَطِّئَنَّ" يعني يقيناً اوهان مان ڪي اهڙا آهن جيڪي جهاد لاءِ نڪرڻ ۾ ضرور دير ڪندا. هن مان مراد منافق آهن. (١) جيڪي ظاهر ۾ مسلمانن سان مليل هئا. "فَاِنْ اَصَابَتْكُمْ مُّصِيْبَةٌ قَالَ قَدْ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيَّ اِذْ لَمْ اَكُنْ مَّعَهُمْ شَهِيْدًا" يعني اهي منافق، حيلا بهانا ڪري پوئتي رهڻ وارا ڏسندا آهن جيڪڏهن اوهان کي ڪا تڪليف ۽ مصيبت پهچندي آهي تہ انهن مان هرڪو خوش ٿي چوندو آهي تہ الله تعالىٰ مون تي نعمت ڪئي جو مان انهن سان گڏ جنگ ۾ حاضر نہ هوس. حالانڪ جنگ ۾ نہ وڃڻ نعمت نہ پر الله تعالىٰ جو ناراضپو آهي جو انهن کي شهادت جي سعادت ۽ جهاد جي ثواب کان محروم رکيو ويو آهي. "وَلَئِنْ اَصَابَكُمْ فَضْلٌ مِّنَ اللّٰهِ" ۽ جيڪڏهن اوهان کي جهاد ۾ الله تعالىٰ جو فضل، فتح ۽ ڪاميابي نصيب ٿئي ٿي تہ انهن کي ڏک ٿو ٿئي ۽ "لَيَقُوْلَنَّ كَاَنْ لَّمْ تَكُنْ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهٗ مَوَدَّةٌ يّٰلَيْتَنِيْ كُنْتُ مَعَهُمْ فَاَفُوْزَ فَوْزًا عَظِيْمًا" يعني ضرور چوندو ڄڻ تہ اوهان ۽ ان ۾ ڪا محبت ۽ واسطو نہ هيو تہ هاءِ هاءِ- مان بہ انهن مجاهدن سان گڏ هجان ها تہ وڏي ڪاميابي حاصل ڪيان ها ۽ جهاد کان پوءِ غنيمت جي مال مان حصو وٺان ها. مطلب تہ ان کي جنگ ۾ حصي نہ وٺڻ جو ڏک نہ آهي پر سندس نگاهہ ۾ غنيمت جو مال ملڻ وڏي ڪاميابي آهي.

"فَلْيُقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ الَّذِيْنَ يَشْرُوْنَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا بِالْاٰخِرَةِ" مقصد تہ الله جي واٽ ۾ جهاد اهي ڪن جيڪي دنيوي حياتيءَ کي آخرت جي عوض وڪڻن ٿا. باقي جيڪي دنيا ۽ دنياوي مرتبي ۽ مان جا ڳولا آهن اهي هن ميدان ۾ نہ ايندا ڇوتہ اسلام جي جهنڊي هيٺان مجاهدن جي لشڪر ۾ بي همتن ۽ سستن جي جاءِ ناهي.

"وَمَنْ يُّقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَيُقْتَلْ اَوْ يَغْلِبْ فَسَوْفَ نُؤْتِيْهِ اَجْرًا عَظِيْمًا"

(١) القرطبي ص٢٧٥ ج٥

يعني جيڪو مخلص مومن يا منافق منافقيءَ کان توبه ڪرڻ وارو توبه ڪري الله تعالىٰ جي واٽ ۾ اخلاص ۽ سچائيءَ سان جنگ ٿو ڪري. پوءِ شڪست ڪائي يا زخمي ٿي شهيد ڪيو وڃي يا دشمن تي غالب اچي ۽ فتح ۽ ڪاميابي سندس قدم چمي، ڪجهه به ٿئي هر صورت ۾ اسين ان کي وڏو اجر ڏينداسون. جيڪو ان کي آخرت ۾ حورن، قصورن ۽ الله تعالىٰ جي رضامندي جي صورت ۾ ملندو. دنيا ۾ جهاد جو اجر ادا ٿي نه ٿو سگهي ڇوته دنيا فاني آهي ۽ اجر دائمي ۽ باقي آهي. دنيا ۾ رنج ۽ غم به ايندو ۽ آخرت ۾ راحت ئي راحت آهي. دنيا دارالعمل ۽ آخرت دارالاجر آهي. پوک پوکڻ جو وقت هڪ هوندو آهي ته پيدائش ڪٽڻ جو وقت بيو. الغرض ته رب جي واٽ ۾ وڙهندڙ لاءِ ٻئي صورتون (شهيد ٿيڻ واري يا غالب ٿيڻ واري) ڀليون آهن. مسلم شريف ۾ حضرت ابوهريرة رضي الله عنه کان روايت آهي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو: "تَضَمَّنَ اللّٰهُ لِمَنْ خَرَجَ فِيْ سَبِيْلِهٖ لَا يُخْرِجُهٗ اِلَّا جِهَادٌ فِيْ سَبِيْلِيْ وَاِيْمَانٌ بِيْ وَتَصْدِيْقٌ بِرُسُلِيْ فَهُوَ عَلَيَّ ضَامِنٌ اَنْ اُدْخِلَهُ الْجَنَّةَ اَوْ اَرْجِعَهٗ اِلٰى مَسْكَنِهِ الَّذِيْ خَرَجَ مِنْهُ نَائِلًا مَّا نَالَ مِنْ اَجْرٍ اَوْ غَنِيْمَةٍ" (١) يعني جيڪو الله جي واٽ ۾ جهاد لاءِ نڪري ٿو الله ان جي ضمانت ٿو کڻي (۽ فرمائي ٿو ته) جنهن کي منهنجي واٽ ۾ جهاد ۾ مون تي ايمان، ۽ منهنجي رسولن جي تصديق کان سواءِ ڪوبه غرض ناهي ان جو مون تي ذمو آهي ته مان ان کي بهشت ۾ داخل ڪيان يا ڪيس سندس رهڻ واري جاءِ جتان نڪتو آهي ان ڏانهن اجر يا غنيمت سان موٽايان.

وَمَا لَكُمْ لَا تُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَالْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ

۽ ڇا آهي اوهان کي جو نه ٿا جنگ ڪيو الله جي واٽ ۾۽ ضعيفن جي لاءِ

الرِّجَالِ وَالنِّسَآءِ وَالْوِلْدَانِ الَّذِيْنَ يَقُوْلُوْنَ رَبَّنَآ اَخْرِجْنَا مِنْ

مردن ۽ عورتن ۽ ٻارن مان جيڪي چون ٿا ته اي اسان جا پالڻهار! ڪڍ اسان کي

هٰذِهِ الْقَرْيَةِ الظَّالِمِ اَهْلُهَا ۚ وَاجْعَلْ لَّنَا مِنْ لَّدُنْكَ وَلِيًّا ۚ

هن ڳوٺ مان جو ظلم ڪندڙ آهن رهاڪو ان جا ۽ بڻاءِ اسان جي لاءِ پاڻ وٽان ڪو دوست

(١) القرطبي ص٢٧٧ ج٥

وَّاجْعَلْ لَّنَا مِنْ لَّدُنْكَ نَصِيْرًا ﴿٧٥﴾ اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا يُقَاتِلُوْنَ فِيْ

۽ بڻاءِ اسان جي لاءِ پاڻ وٽان ڪو مددگار، جن ايمان آندو جنگ ٿا ڪن

سَبِيْلِ اللّٰهِ ۚ وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا يُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ الطَّاغُوْتِ

الله جي واٽ ۾ ۽ جن ڪفر ڪيو جنگ ڪن ٿا شر واريءَ قوت جي واٽ ۾

فَقَاتِلُوْٓا اَوْلِيَآءَ الشَّيْطٰنِ ۚ اِنَّ كَيْدَ الشَّيْطٰنِ كَانَ ضَعِيْفًا ﴿٧٦﴾ ع ١٠ ع٦ ٧

پوءِ وڙهو دوستن شيطان جي سان بيشڪ شيطان جي چال آهي ڪمزور.

## تفسير

هنن آيتن ۾ الله تعالىٰ مسلمانن کي مخاطب ٿي سندن همت افزائي ڪرائيندي فرمايو آهي "وَمَا لَكُمْ لَا تُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَالْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَآءِ وَالْوِلْدَانِ" يعني اوهان کي ڇا ٿيو آهي؟ جو الله تعالىٰ جي واٽ ۾ ۽ انهن ضعيفن مردن ۽ عورتن ۽ ٻارن جي ڇڏائڻ لاءِ جهاد نه ٿا ڪيو. مڪي مڪرمه ۾ ڪيترا مرد، عورتون ۽ ٻار اهڙا هئا جيڪي اسلام قبول ڪري مسلمان ته ٿيا هئا پر مڪي جي ڪافرن انهن سان تمام گهڻا ظلم ڪيا هئا نه اهي هجرت ڪري ٿي سگهيا ۽ نه انهن کي امن ۽ سلامتي حاصل هئي. "اَلَّذِيْنَ يَقُوْلُوْنَ رَبَّنَآ اَخْرِجْنَا مِنْ هٰذِهِ الْقَرْيَةِ الظَّالِمِ اَهْلُهَا" يعني اهي ظلم سهندي الله تعالىٰ جي حضور ۾ دعائون گهرندا هئا ۽ چوندا هئا ته اي اسان جا پالڻهار! اسان کي هن ڳوٺ مان ڪڍ جنهن ۾ رهڻ وارا ظالم آهن. مفسرن لکيو آهي ته انهن مسلمانن مان وڏا دعائون گهرندا هئا ۽ ننڍا آمين چوندا هئا ۽ ان "اَلْقَرْيَةِ" مان مراد مڪه معظمه آهي. قريه جو لفظ شهر ۽ ڳوٺ ٻنهي تي ڳالهايو ويندو آهي. (١)

"وَاجْعَلْ لَّنَا مِنْ لَّدُنْكَ وَلِيًّا وَاجْعَلْ لَّنَا مِنْ لَّدُنْكَ نَصِيْرًا" يعني اي

(١) تفسير نعيمي ص٢٣٦ ج٥

اسان جا پالڻهار! اسان کي ڇوٽڪاري لاءِ ظاهري اسباب نہ آهن تون پنهنجي طرفان اسان جي غيبي مدد ڪري اسان جي لاءِ ڪو پنهنجو ڀانهو والي ۽ وارث بناءِ ۽ اسان جي لاءِ پاڻ وٽان ڪو مددگار بناءِ جو اسين هتي مڪه مڪرمه ۾ ئي ان جي حمايت ۾ رهون ۽ اسان کي هجرت ڪرڻ جي ضرورت ئي نہ پوي. خيال ۾ رهي تہ ولي ۽ نصير ٻئي لفظ هڪ معنيٰ ۾ استعمال ٿيندا آهن پر ڪڏهن انهن ٻنهي ۾ هن طرح فرق ڪيو ويندو آهي جو روحاني مددگار کي ولي ۽ ظاهري جسماني مددگار کي نصير چوندا آهن ان جي ڪري روحانيت وارن کي اولياءُالله سڏيو ويندو آهي. نيز مڪي پاڪ ۾ رهندڙن مظلومن جي دعا قبول پئي ۽ سنہ ٨ هجريءَ ۾ حضور عليہ الصلواة والسلام جن مڪي مڪرمه کي فتح ڪيو ۽ پاڻ انهن سيني جا حامي، ناصر بڻيا. پوءِ پاڻ تہ مديني پاڪ ڏانهن واپس ويا پر ارڙهن (١٨) سالن جي نوجوان عتاب بن اسيد کي مڪي مڪرمه جو حاڪم بنائي ويا ۽ ان مظلومن مسلمانن جي سنڀال ڪئي جنهن سان اهي سربلند ٿي نهايت عزت ۽ وقار واري زندگي گذارڻ لڳا. (١)

## فائدو

نيڪ عملن ۾ الله تعاليٰ جي رضا سان گڏ خلق جي خدمت جو جذبو بہ هجڻ کپي جيئن هن آيت ۾ "وَالْمُسْتَضْعَفِيْنَ" جو ذڪر آيو آهي. يعني انهن ضعيفن جي ڇڏائڻ لاءِ بہ جهاد ڪرڻ گهرجي.

"اَلَّذِيْنَ آمَنُوْا يُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللهِ وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا يُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ الطَّاغُوْتِ" يعني ايمان وارا الله تعاليٰ جي واٽ ۾ ان جي ڪلمي کي بلند ڪرڻ، عدل، انصاف، مساوات، آزادي، نيڪي ۽ تقويٰ جي قدرن کي زنده ڪرڻ جي لاءِ جهاد ڪندا آهن ۽ ڪافر شيطان جي واٽ ۾، صرف مادي فائدن، ڪنهن ملڪ تي قبضي ڪرڻ، ڪنهن قوم کي غلاميءَ جي زنجيرن ۾ جڪڙڻ، پنهنجي لاءِ تجارتي مرڪز قائم ڪرڻ، فتح ڪيل ملڪن جي قدرتي ذخيرن مان نفعا حاصل ڪرڻ جي لاءِ لڙندا آهن.

"فَقَاتِلُوْٓا اَوْلِيَآءَ الشَّيْطَانِ اِنَّ كَيْدَ الشَّيْطَانِ كَانَ ضَعِيْفًا" يعني ايمان وارؤ! شيطان جي حامين سان وڙهو تانتہ باطل نيست ۽ نابود ٿئي ۽ حق جو علم بلند ۽

(١) نعيمي ص٢٣٦- ٢٣٧ ج٥

ان جي فتح ۽ ان کي غلبو حاصل ٿئي ۽ ان سان انسانيت جي باغ ۾ بهار ايندي ۽ اعلى اخلاقي قدرن جي بالادستي قائم ٿيندي. نيڪيءَ جي سرهاڻ هر جاءِ پکڙجي ويندي امن ۽ عافيت جو دور قائم ٿيندو. باطل جي سربراهن کان ڊڄڻ جي ڪا ضرورت ناهي يقيناً شيطان جي رٿا ۽ فريب ڪمزور آهي. الله تعالیٰ جي پيارن ٻانهن فرمايو آهي ته تنهنجا دشمن چار آهن. ١- هڪ دنيا، جنهن جو هٿيار ماڻهن سان ميل جول آهي ۽ ان جو قيد گوشه نشيني آهي. ٢- ٻيو شيطان، جنهن جو هٿيار ڍؤ ڪرڻ آهي ۽ ان جو قيد بک آهي. ٣- ٽيون نفس، جنهن جو هٿيار گهٽي ننڊ ڪرڻ آهي ۽ ان جو قيد اوجاڳو آهي ۽ ۴-چوٿون سڌون ڪرڻ، جنهن جو هٿيار گهڻو ڳالهائڻ آهي ۽ ان جو قيد ماٺ ڪرڻ آهي. ڄاڻڻ گهرجي ته شيطان جو مڪر ۽ فريب حقيقي طرح به ڪمزور آهي ڇو ته ان جي مقابلي ۾ الله تعالیٰ پنهنجن پيارن جو مددگار آهي.

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ قِيْلَ لَهُمْ كُفُّوْٓا اَيْدِيَكُمْ وَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ

ڇا نه ڏٺو تو انهن ڏانهن جو چيو ويو انهن کي ته بند رکو هٿن پنهنجن کي ۽ قائم ڪيو نماز

وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ ۚ فَلَمَّا كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقِتَالُ اِذَا فَرِيْقٌ مِّنْهُمْ

۽ ڏيو زڪواة پوءِ جڏهن فرض ڪئي وئي انهن تي جنگ ته ان وقت جماعت هڪڙي انهن مان

يَخْشَوْنَ النَّاسَ كَخَشْيَةِ اللّٰهِ اَوْ اَشَدَّ خَشْيَةً ۚ وَقَالُوْا رَبَّنَا لِمَ

ڊڄن ٿا ماڻهن کان الله کان ڊڄڻ وانگر بلڪ وڌيڪ ڊڄڻ (وارا آهن) ۽ چوڻ لڳا ته اي اسان جا پالڻهار! ڇو

كَتَبْتَ عَلَيْنَا الْقِتَالَ ۚ لَوْلَآ اَخَّرْتَنَآ اِلٰٓى اَجَلٍ قَرِيْبٍ ۭ قُلْ مَتَاعُ

فرض ڪيئي اسان تي جنگ ڇو نه مهلت ڏنئي اسان کي ويجهيءَ مدت جي لاءِ فرماءِ ته دنيا جو

الدُّنْيَا قَلِيْلٌ ۚ وَالْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لِّمَنِ اتَّقٰى ۣ وَلَا تُظْلَمُوْنَ فَتِيْلًا ﴿٧٧﴾ اَيْنَ

سامان ٿورو آهي ۽ آخرت ڀلي آهي ان لاءِ جو پرهيزگار ٿيو ۽ نه ظلم ڪيا ويندؤ ذري جيترو جتي به

مَا تَكُوْنُوْا يُدْرِكْكُّمُ الْمَوْتُ وَلَوْ كُنْتُمْ فِيْ بُرُوْجٍ مُّشَيَّدَةٍ ؕ

هوندؤ ته پهچندو اوهان کي موت توڙيجو هجو مضبوط قلعن ۾

وَاِنْ تُصِبْهُمْ حَسَنَةٌ يَّقُوْلُوْا هٰذِهٖ مِنْ عِنْدِاللّٰهِ ۚ وَاِنْ تُصِبْهُمْ

۽ جيڪڏهن ٿي پهچي انهن کي ڪا ڀلائي ته چون ٿا ته هيءَ الله وٽان آهي ۽ جيڪڏهن ٿي پهچي انهن کي

سَيِّئَةٌ يَّقُوْلُوْا هٰذِهٖ مِنْ عِنْدِكَ ؕ قُلْ كُلٌّ مِّنْ عِنْدِاللّٰهِ ؕ فَمَالِ

ڪا تڪليف ته چون ٿا ته هيءَ تو وٽان آهي فرماءِ ته سڀ الله وٽان آهي پوءِ ڇا حال آهي

هٰٓؤُلَآءِ الْقَوْمِ لَا يَكَادُوْنَ يَفْقَهُوْنَ حَدِيْثًا ﴿٧٨﴾

هن قوم جو جو نه ٿا ويجها ٿين جو سمجهن ڳالهه کي

## تفسير

هن کان اڳ ۾ ٻڌايو ويو هو ته شيطان جنگ ۾ ڪافرن جي حمايت ڪري ٿو پر ان جي حمايت، مڪر، فريب سڀ ڪجهه ڪمزور آهي. ۽ هتي انِ جي ٻئي مڪر (مسلمانن کي ڪمزور بنائڻ) جو بيان ڪندي فرمان ٿيو "اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ قِيْلَ لَهُمْ كُفُّوْا اَيْدِيَكُمْ" يعني (اي محبوب عليہ الصلواة والسلام) ڇا اوهان انهن ماڻهن کي نه ڏٺو (حضور عليہ الصلواة والسلام جن انهن کي يقيناً ڏٺو هو صرف عجب ڏيارڻ لاءِ پڇيو تو وڃي) جيڪي اوهان وٽ جنگ جي موڪل گهرڻ لاءِ آيا هيا ۽ اوهان انهن کي فرمايو هيو ته پنهنجي هٿن کي جنگ کان روڪيو. "وَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ" ۽ نماز قائم ڪيو ۽ زڪواة ڏيو ۽ انهن ڪمن سان مشغول رهو. ڇوته اجان جهاد ڪرڻ جو امر نه ٿيو آهي پر اهي ان اجازت لاءِ زور ڏيندا رهيا. "فَلَمَّا كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقِتَالُ اِذَا فَرِيْقٌ مِّنْهُمْ يَخْشَوْنَ النَّاسَ كَخَشْيَةِ اللّٰهِ اَوْ اَشَدَّ خَشْيَةً" يعني جڏهن مٿن جنگ فرض ڪئي وئي ته ان وقت انهن مان هڪ جماعت ماڻهن کان ائين ڊڄڻ لڳي جيئن الله تعالىٰ کان

ڊڄڻ گھرجي بلڪ اجان بہ وڌيڪ ڊڄڻ لڳا. "وَقَالُوْا رَبَّنَا لِمَ كَتَبْتَ عَلَيْنَا الْقِتَالَ لَوْلَآ اَخَّرْتَنَآ اِلٰٓى اَجَلٍ قَرِيْبٍ" ۽ چوڻ لڳا تہ اي اسان جا پالڻهار! اسان تي جنگ ڇو فرض ڪيئي؟ اسان کي ويجھي مدت تائين مهلت ڇونہ ڏنئي؟ تانت پنھنجي بستري تي عام موت وانگر اسان جوبہ موت اچي ها. اھو سڀ موت کان ڊڄندي، دنيوي حياتيءَ سان محبت رکڻ جي ڪري ٿي چيائون. علامہ محمد بن احمد انصاري عليہ الرحمه هن آيت جي تفسير ۾ لکيو آهي تہ هيءَ آيت منافقن جي حق ۾ نازل ٿي هئي جو اهي نماز ۽ روزي جي حڪم تائين تہ پڪا رهيا هئا پر جڏهن اسلام جي سربلنديءَ لاءِ سر ڪٽائڻ جو وقت آيو تہ گٽيون ڳالهيون ڪرڻ لڳا. باقي اصحاب سڳورا رضي الله عنهم تہ سر جو پڪو سودو ڪيو ويٺا هئا دنيا دارالفناءِ کي ڇڏي آخرت جي ابدي نعمتن سان همڪنار ٿيڻ لاءِ بي تاب هيا. "ومعاذالله ان يصدر هذا القول من صحابي كريم" (١) يعني الله تعالىٰ پناهہ ۾ رکي جو اهڙو قول ڪنهن صحابيءَ سڳوري رضي الله تعالىٰ عنہ کان صادر ٿئي.

"قُلْ مَتَاعُ الدُّنْيَا قَلِيْلٌ" يعني (اي محبوب عليہ الصلواة والسلام! انهن کي) فرمايو تہ: دنيا جو سامان تمام ٿورو آهي هن فنا ٿيندڙ حياتيءَ ۽ ان جي بي وفا سينگارن جي لاءِ آخرت جي ابدي زندگي ۽ اتي جون لازوال نعمتون ڇوٿا نظرانداز ڪيو. "وَالْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لِّمَنِ اتَّقٰى" ۽ تقويٰ اختيار ڪرڻ واري جي لاءِ آخرت ڀلي آهي "وَلَا تُظْلَمُوْنَ فَتِيْلًا" ۽ اوهان سان ڪجور جي ڪڪڙيءَ ۾ هوندڙ اندر سنهي تند جيترو بہ ظلم نہ ڪيو ويندو.

ڄاڻڻ گھرجي تہ آخرت دنيا کان ڇهن وجهن جي ڪري ڀلي آهي. ١- هڪ تہ دنيا جون نعمتون ٿوريون ۽ آخرت جون گھڻيون آهن. ٢- ٻيو تہ دنيا جون نعمتون ڪٽڻ واريون آهن ۽ آخرت جون نعمتون اڻ کٽ آهن
٣- ٽيون تہ دنيا جي نعمتن سان پريشانيون، غم ۽ ڏک بہ شامل آهن پر آخرت جون نعمتون ڏکن کان آزاد آهن. ۴- چوٿون تہ دنيا جون نعمتون مشڪوڪ آهن. خبرناهي تہ اڳتي هلي ڇا ٿئي پر آخرت جون نعمتون يقيني آهن پوءِ عقلمند انسان کي آخرت ئي اختيارڪرڻ گھرجي. الله تعالىٰ جي پياري ولي حضرت ابراهيم بن ادهم عليه الرحمة فرمايو آهي تہ: جيڪڏهن دنيا جي بادشاهن کي انهن نعمتن جو علم هجي ها جنهن ۾ اسين آهيون تہ تلوارون کڻي اسان سان وڙهن ها ۽ جيڪو اها ڄاڻ رکڻ ٿو گھري تہ الله تعالىٰ وٽ سندس مرتبو ڪيترو آهي تہ اهو پنھنجي دل کي ڏسي تہ سندس دل ۾

(١) تفسير القرطبي ص٢٨١ ج۵

الله تعالىٰ جو قدر ڪيترو آهي؟ (١) "اَيْنَمَا تَكُوْنُوْا يُدْرِكْكُّمُ الْمَوْتُ وَلَوْ كُنْتُمْ فِيْ بُرُوْجٍ مُّشَيَّدَةٍ" يعني اوهان ڪٿي به هوندئو ته اوهان وٽ موت پهچندو پلي مضبوط قلعن ۾ هجو. ان جي ڪري موت کان ڊڄي بزدلي ڪرڻ عقلمند انسان جو ڪم ناهي. پنهنجي بچاءَ جا هزار حيلا ڪيو پر موت ضرور ايندو.

"وَاِنْ تُصِبْهُمْ حَسَنَةٌ يَّقُوْلُوْا هٰذِهٖ مِنْ عِنْدِاللّٰهِ وَاِنْ تُصِبْهُمْ سَيِّئَةٌ يَّقُوْلُوْا هٰذِهٖ مِنْ عِنْدِكَ قُلْ كُلٌّ مِّنْ عِنْدِاللّٰهِ" يعني انهن منافقن کي جيڪڏهن ڪا ڀلائي، جنگ ۾ فتح وغيره حاصل ٿئي ٿي ته چون ٿا ته هي الله تعالىٰ وٽان آهي ۽ جيڪڏهن سندن ئي غلطيءَ يا ڪمزوريءَ وغيره جي ڪري ڪين ڪا تڪليف پهچي ٿي ته رسول الله صلى الله عليه وسلم تي اعتراض ڪندي چون ٿا ته هي اوهان وٽان آهي يعني اوهان تدبير وارا نه آهيو تڏهن ٿي تڪليف پهچي يا اوهان جا قدم اهڙا آهن جو معاذالله هر شيءِ مان برڪت نڪري وئي آهي. الله تعالىٰ فرمايو ته: اي محبوب! عليه الصلواة والسلام انهن کي فرمايو ته سڀ ڪجهه الله تعالىٰ وٽان آهي. اهوئي هر ڪم جو حقيقي فاعل ۽ مسبب الاسباب آهي ۽ منافقن جو اهو جملو "مِنْ عِنْدِاللّٰهِ" چوڻ به دل سان نه هو پر محاوري طور زبان تي اچي ويو هو. "فَمَالِ هٰٓؤُلَآءِ الْقَوْمِ لَا يَكَادُوْنَ يَفْقَهُوْنَ حَدِيْثًا" يعني هنن کي ڇا ٿيو آهي جو ڳالهه سمجهڻ کي ويجها به نه ٿا وڃن ۽ جيڪڏهن سمجهن ها ته يقين رکن ها ته سڀ ڪجهه الله تعالىٰ جي طرفان آهي.

مَآ اَصَابَكَ مِنْ حَسَنَةٍ فَمِنَ اللّٰهِ ۚ وَمَآ اَصَابَكَ مِنْ سَيِّئَةٍ فَمِنْ

جيڪا به پهتي تو وٽ ڪا ڀلائي (اي ٻڌڻ وارا) پوءِ (اها) الله وٽان آهي ۽ جيڪا به پهتي توکي ڪا تڪليف پوءِ

نَّفْسِكَ ۚ وَاَرْسَلْنَاكَ لِلنَّاسِ رَسُوْلًا ۚ وَكَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيْدًا (٧٩)

تنهنجي وجود کان آهي ۽ (اي محبوب) موڪليوسون توکي ماڻهن جي لاءِ رسول بنائي ۽ ڪافي آهي الله شاهد

## تفسير

هن کان اول منافقن ۽ يهودين جي غلط عقيدن جو بيان هوته اهي

(١) تنوير الاذهان ص٢٠٦ ج١

مصيبتن اچڻ جي نسبت حضور عليہ الصلواة والسلام جن ڏانهن ڪندا هئا. هاڻي هن آيت ۾ انهن جي اصلاح ڪندي فرمان آيو آهي تہ "مَا اَصَابَكَ مِنْ حَسَنَةٍ فَمِنَ اللّٰهِ وَمَا اَصَابَكَ مِنْ سَيِّئَةٍ فَمِنْ نَّفْسِكَ" اصابڪ ۾ خطاب عام انسان سان آهي- يعني اي انسان! جيڪا بہ نعمت تو وٽ پهتي آهي اها الله تعالىٰ جي ارادي، ان جي پيدا ڪرڻ، فضل ۽ مهربانيءَ سان آهي ۽ دنيا ۾ جيڪي تڪليفون، بلائون، مصيبتون وغيرها پهتيون آهن يا قبر ۾ تنگي ۽ انڌيرو ۽ قيامت ۾ خوف ۽ عذاب پهچندو اهو عموماً تنهنجي بدڪاريءَ، بدعمليءَ، ۽ برائيءَ جي ڪري آهي. پوءِ جيڪڏهن انهن ڏکن ۾ ڦاٿل انسان ڪافر هوندو تہ اهي تڪليفون ان جي لاءِ آخرت واري عذاب جو نمونو هونديون ۽ جيڪڏهن مومن هوندو تہ اهي ڏک ان جي گناهن جي ڪفارت هوندا. (١) "وَاَرْسَلْنَاكَ لِلنَّاسِ رَسُوْلًا" هي جدا مستقل جملو آهي "اَرْسَلْنَاكَ" ۾ خطاب نبي اڪرم صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم جن سان آهي. ۽ للناس ۾ لام- نفعي ڏيڻ جو آهي. (٢) ۽ الف لام استغراق جو آهي. يعني اسان اوهان کي سيني انسانن، هر زماني جي انسانن لاءِ رسول ڪري موڪليو آهي. ڪو رنگ، ڪا زبان، ڪا قوم ۽ ڪو وطن ان ڪان ٻاهر ناهي سيني جي لاءِ اوهان ئي هادي ۽ مرشد آهيو. جڏهن رسول پاڻ آهن ۽ "وَمَا اَرْسَلْنَا مِنْ رَّسُوْلٍ اِلَّا لِيُطَاعَ بِاِذْنِ اللّٰهِ" سان سندن ئي اطاعت ڪرڻ فرض آهي تہ هاڻي ٻيو ڪير آهي؟ جيڪو زبان سان ڪين رسول تسليم ڪري ۽ سندن اطاعت ڪان منحرف ٿي سندن متعلق روشن آيتن ۾ اجايا تاويل ڪري. اهو تہ يهودين جو ڪم هو جيڪي پنهنجي نفساني خواهشات جي مطابق تورات جي هڪڙين آيتن کي برقرار رکندا هئا ۽ ٻين کي ڦيرائي ڇڏيندا هئا "وَكَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيْدًا" مقصد تہ (اي محبوب! عليہ الصلواة والسلام) ان حقيقت جي سچي هجڻ جو الله شاهد آهي تہ اوهان هر انسان، هر زماني واري انسان بلڪ ڪائنات جا هادي ۽ مرشد آهيو ۽ الله تعالىٰ جي شاهدي ڪافي آهي. ان جي شاهديءَ ڪان پوءِ ڪيترا بہ منڪر انڪار ڪن تہ انهن کي ڪا اهميت ناهي.

## سوال

هن آيت ۾ "لِلنَّاسِ" جي لفظ مان ثابت ٿيو تہ پاڻ صرف ماڻهن جا رسول آهن پوءِ ڪيئن ٿا چئو تہ ساري ڪائنات جا رسول آهن؟

(١) مظهري ص٣٥٨ ج٢ (٢) نعيمي ص٢٦٤ ج٥

## جواب

ان ۾ انسانن جو ذڪر ان جي ڪري آهي جو انسان ئي اشرف الخلق ۽ مخصوص مخاطب آهي. جيئن الله تعالیٰ پنهنجي شان ۾ فرمايو آهي "رَبِّ النَّاسِ، مَلِكِ النَّاسِ، اِلٰهِ النَّاسِ" ماڻهن جو رب، ماڻهن جو بادشاهه، ماڻهن جو معبود، حالانڪ پاڻ ساري ڪائنات جو رب به آهي ته بادشاهه به آهي ته معبود به آهي.

مَنْ يُّطِعِ الرَّسُوْلَ فَقَدْ اَطَاعَ اللّٰهَ ۚ وَمَنْ تَوَلّٰى فَمَآ اَرْسَلْنٰكَ

جيڪو فرمانبرداري ٿو ڪري رسول جي پوءِ تحقيق فرمانبرداري ٿو ڪري الله جي ۽ جنهن منهن موڙيو پوءِ نه موڪليوسون

عَلَيْهِمْ حَفِيْظًا ﴿٨٠﴾ وَيَقُوْلُوْنَ طَاعَةٌ ۡ فَاِذَا بَرَزُوْا مِنْ عِنْدِكَ بَيَّتَ

توکي انهن تي نگهباني ڪندڙ ۽ چون ٿا ته (مڃيوسون) مڃڻ پوءِ جڏهن نڪرن ٿا تو وٽان ته رات جو صلاح ٿا ڪن

طَآئِفَةٌ مِّنْهُمْ غَيْرَ الَّذِىْ تَقُوْلُ ۗ وَاللّٰهُ يَكْتُبُ مَا يُبَيِّتُوْنَ ۚ

ڪجهه ماڻهو انهن مان ابتڙ ان جي جو فرمايو ٿا ۽ الله لکي ٿو اهو جو رات جو صلاح ٿا ڪن

فَاَعْرِضْ عَنْهُمْ وَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ ۗ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيْلًا ﴿٨١﴾ اَفَلَا

پوءِ منهن موڙ انهن کان ۽ ڀروسو ڪر الله تي ۽ ڪافي آهي الله ڪم ناهيندڙ ڇا پوءِ

يَتَدَبَّرُوْنَ الْقُرْاٰنَ ۚ وَلَوْ كَانَ مِنْ عِنْدِ غَيْرِ اللّٰهِ لَوَجَدُوْا فِيْهِ

نه ٿا غور سان سمجهن قرآن ۽ جيڪڏهن هجي ها ٻئي وٽان الله کان سواءِ ته البت لهن ها ان ۾

اخْتِلَافًا كَثِيْرًا ﴿٨٢﴾

اختلاف گهڻو

# تفسير

هن کان پهريان رسول الله صلی الله تعالیٰ عليہ وسلم جن جي عام رسالت جو بيان کيو ويو پوءِ هتي سندن اطاعت جي اهميت کي واضح کندي ارشاد ٿيوتہ "مَنْ يُّطِعِ الرَّسُوْلَ فَقَدْ اَطَاعَ اللّٰہَ" يعني جيکو شخص الله تعالیٰ جي رسول عليہ الصلواة والسلام جي اطاعت ٿو ڪري ان حقيقت ۾ الله تعالیٰ جي اطاعت ڪري ڏيکاري آهي. ڇوتہ عام انسانن وٽ الله تعالیٰ جي حڪمن جي معرفت جو ذريعو رسول الله صلی الله تعالیٰ عليہ وسلم جن کان سواءِ ڪوبہ نہ آهي ۽ هن آيت ۾ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن جي اطاعت کي الله تعالیٰ جي اطاعت نہ سمجهڻ وارن جو رد آهي ۽ هن آيت مان رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن جو هر گناهہ کان معصوم هجڻ بہ ثابت آهي.

علامہ رازي عليہ الرحمة لکيو آهي تہ قولہ "مَنْ يُّطِعِ الرَّسُوْلَ فَقَدْ اَطَاعَ اللّٰہَ" من اقوي الدلائل عليٰ انہ معصوم في جميع الاوامر والنواهي وفي کل ما يبلغہ" الخ (١) يعني اها آيت هن ڳالهہ جي قوي دليلن مان آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن سيني حڪمن ۽ هر ان شيءِ ۾ جنهن جي الله تعالیٰ جي طرفان تبليغ ڪن ٿا معصوم (گناهن کان پاڪ) آهن ڇوتہ جيڪڏهن ڪائنڻ ذري برابر بہ غلطيءَ جو امڪان هجي ها تہ سندن اطاعت عين اطاعت الهي نہ بنجي ها ۽ فقهاءِ ڪرام لکيو آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن جي نافرماني بہ عين حق تعاليٰ جي نافرماني آهي. مصر جي معروف عالم سيد قطب شهيد لکيو آهي تہ وليس هناک طريق آخر لطاعة الله غير طاعة الرسول (١) يعني الله تعالیٰ جي رسول صلی الله عليہ وسلم جي اطاعت کان سواءِ ٻيو بہ رستو الله تعالیٰ جي اطاعت لاءِ ناهي. "وَمَنْ تَوَلّٰی فَمَآ اَرْسَلْنٰکَ عَلَيْهِمْ حَفِيْظًا" (٢) يعني جنهن اوهان جي اطاعت کان منهن موڙيو تہ اوهان ان جو ڪوبہ ڏک نہ ڪيو اسان اوهان کي انهن جي اعمال جو محافظ ڪري نہ موڪليو آهي. "اِنَّمَا عَلَيْکَ الْبَلٰغُ وَعَلَيْنَا الْحِسَابُ" (٣) اوهان تي صرف پيغام پهچائڻ آهي حساب وٺڻ تہ اسان جي

(١) التفسير الکبير ص١٩٣ جزء١٠ (٢) في ظلال القرآن ص٧١٩ ج٢
(٣) مظهري ص٣٥٩ ج٢

ذمي آهي. "وَيَقُوْلُوْنَ طَاعَةٌ" يعني منافق اوهان جو امر ٻڌي زبان سان چون ٿا تہ اسان اوهان جا هميشہ تابعدار آهيون "فَاِذَا بَرَزُوْا مِنْ عِنْدِكَ بَيَّتَ طَائِفَةٌ مِّنْهُمْ غَيْرَ الَّذِيْ تَقُوْلُ" اهي جڏهن اوهان وٽان نڪري ٿا وڃن تہ انهن مان هڪڙا رات جو اها صلاح ٿا ڪن جيڪا اوهان نہ فرمائي آهي ۽ اوهان سان ڪيل عهد ڀڃن ٿا. "وَاللّٰهُ يَكْتُبُ مَا يُبَيِّتُوْنَ" مقصد تہ جيڪي رات جو صلاحون، مشورا ڪن ٿا. اهي سڀ الله تعالىٰ جا ملائڪ سندس امر سان لکن ٿا.

"فَاَعْرِضْ عَنْهُمْ وَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ" يعني انهن ڪان منهن موڙي ڇڏيو، انهن جي پرواهہ نہ ڪيو ۽ نہ انهن جا نالا ڪنهن کي ٻڌايو ۽ سيني ڪمن ۾ پوءِ اهي ننڍا هجن يا وڏا الله تعالىٰ تي توڪل ۽ ڀروسو ڪيو ڇوتہ "وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيْلًا" ۽ الله تعالىٰ پنهنجي ٻانهن جو جنهن وقت اهي سيئي ڪم سندس حوالي ڪن ٿا ڪافي ڪارساز آهي. الله تعالىٰ انهن نہ مڃڻ وارن ڪان اوهان جو انتقام وٺندو ۽ اهي اوهان کي ڪجهہ بہ نقصان ڏئي نہ سگهندا.

"اَفَلَا يَتَدَبَّرُوْنَ الْقُرْاٰنَ" ڇا پوءِ قرآن ڪريم ۾ تدبر نہ ٿا ڪن؟ يعني قرآني نظم، معنائون ۽ ان ۾ ذڪر ٿيل عجائب کي نہ ٿا ڏسن تہ يقيناً اهو انسان جو ڪلام ناهي پوءِ ڪين ايمان ڪامل نصيب ٿئي ۽ منافقي نہ ڪن "وَلَوْ كَانَ مِنْ عِنْدِ غَيْرِ اللّٰهِ لَوَجَدُوْا فِيْهِ اخْتِلَافًا كَثِيْرًا" ۽ جيڪڏهن اهو قرآن ڪريم الله تعالىٰ ڪان سواءِ ٻئي ڪنهن جو ڪلام هجي ها جيئن ڪافرن سمجهيو آهي تہ ان ۾ گهڻو اختلاف لهن ها. معنىٰ ۾ تناقض ۽ نظم ۾ تفاوت ڏسن ها.

## فائدو

هن آيت مان فقيهن جي اصطلاح وارو قياس ثابت آهي ڇوتہ حڪم آهي تہ جيڪڏهن ڪو مسئلو قرآن ڪريم ۾ صراحت سان نہ ملي تہ ان جهڙن مسئلن جو اصل قرآن پاڪ ۾ ڏسي غور ۽ فڪر ڪري ان مطابق اهو حل ڪيو. امام قرطبيءَ لکيو آهي تہ: وفيه دليل علىٰ اثبات القياس (١) يعني هن آيت ۾ قياس ثابت ڪرڻ جو دليل آهي.

(١) القرطبي ص٢٩٠ ج٥

وَاِذَا جَآءَهُمْ اَمْرٌ مِّنَ الْاَمْنِ اَوِ الْخَوْفِ اَذَاعُوْا بِهٖ ۭ وَلَوْ رَدُّوْهُ

۽ جڏهن اچي ٿو انهن وٽ ڪو حڪم امن يا خوف جو تہ مشهور ٿا ڪن اهو ۽ جيڪڏهن موٽائين ها ان کي

اِلَى الرَّسُوْلِ وَاِلٰٓى اُولِي الْاَمْرِ مِنْهُمْ لَعَلِمَهُ الَّذِيْنَ يَسْتَنْۢبِطُوْنَهٗ

رسول ڏانهن ۽ حڪم ڪرڻ وارن ڏانهن انهن مان تہ ڄاڻن ها ان کي اهي ماڻهو جو پروڙي سگهن ٿا ان کي

مِنْهُمْ ۭ وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهٗ لَاتَّبَعْتُمُ الشَّيْطٰنَ

ان مان ۽ جيڪڏهن نہ هجي ها مهرباني الله جي اوهان تي ۽ ان جي رحمت تہ البت تابعداري ڪيو ها شيطان جي

اِلَّا قَلِيْلًا ﴿٨٣﴾

مگر ڪي ٿورا (تابعداري نہ ڪن ها)

# تفسير

منافق ماڻهن جي عادت هوندي هئي تہ جيڪا بہ مسلمانن جي خلاف ڳالهہ ٻڌندا هئا اها هڪدم مشهور ڪندا هئا انهن کي ان تنبيه ڪرڻ جي لاءِ فرمان آيو تہ "وَاِذَا جَآءَهُمْ اَمْرٌ مِّنَ الْاَمْنِ اَوِ الْخَوْفِ اَذَاعُوْا بِهٖ" يعني اي محبوب عليہ الصلواة والسلام! انهن باطن جي انڌن منافقن جو حال اهو آهي جو جڏهن انهن کي مسلمانن جي فتح يا شڪست جي ڪا اهم ۽ خفيہ خبر پوندي آهي تہ سمجهڻ ۽ سوچڻ کان سواءِ ان کي مشهور ڪرڻ جي وڏ ۾ وڏ ڪوشش ڪندا آهن حالانڪ انهن ڳالهين جي پبلسٽي ۽ اشاعت مصلحت جي خلاف هوندي آهي ڇوتہ مسلمانن جي فتح جو ٻڌي ڪافر اڳتي جي لاءِ هوشيار ٿي ويندا آهن ۽ انهن جي هار ۽ شڪست جو ٻڌي ڪافرن جا حوصلا بلند ٿي ويندا آهن.

## شان نزول

علامہ ابن ڪثير لکيو آهي تہ هن آيت جي شان نزول ۾ حضرت عمر بن خطاب رضي الله عنہ واري روايت لکڻ گهرجي ۽ اها هيءَ آهي حضرت عمر رضي الله عنہ کي ڪنهن ٻڌايو تہ رسول الله ﷺ جن پنهنجين گهروارين کي طلاق ڏئي ڇڏي آهي. اهو ٻڌي پاڻ گهران نڪري مسجد ڏانهن آيو جڏهن دروازي تي پهتو تہ پاڻ ٻڌائين تہ مسجد ۾ اندر بہ اها ڳالهہ هلي رهي هئي. اهو ڏسي پاڻ فرمايائين تہ ان خبر جي تحقيق ڪجي پوءِ پاڻ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن جي خدمت ۾ آيو ۽ ڪانئن عرض ڪري پڇيائين تہ ڇا اوهان پنهنجين گهروارين کي طلاق ڏني آهي؟ پاڻ فرمايائون تہ "نہ" حضرت عمر رضي الله عنہ فرمايو تہ مان اها تحقيق ڪري موٽيس ۽ اچي مسجد جي دروازي تي اعلان ڪيم تہ حضور عليہ الصلواة والسلام جن پنهنجين گهروارين کي طلاق نہ ڏني آهي اوهان جيڪو ٻڌو آهي اهو غلط آهي. تڏهن اها آيت نازل ٿي هئي. (١)

## هرڪا ٻڌل ڳالهہ ڪرڻ گناهہ آهي

امام مسلم حضرت ابوهريره رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "كَفٰى بِالْمَرْءِ كَذِبًا اَنْ يُّحَدِّثَ بِكُلِّ مَا سَمِعَ" يعني مڙس لاءِ اهوئي ڪوڙ ڪافي آهي جو هرڪا ٻڌل ڳالهہ ڪندو رهي. مقصد تہ غلط افواهہ ۽ بي بنياد خبرن هلائڻ کان پاسو ڪجي ڇوتہ ڪڏهن ڪڏهن انهن ڪوڙين ڳالهين ۽ اجاين خبرن کي ٻڌي دل جا ڪمزور ۽ بيمار فرد هلاڪ ٿي ويندا آهن. "وَلَوْ رَدُّوْهُ اِلَي الرَّسُوْلِ وَاِلٰى اُولِي الْاَمْرِ مِنْهُمْ لَعَلِمَهُ الَّذِيْنَ يَسْتَنْۢبِطُوْنَهٗ مِنْهُمْ" يعني ۽ جيڪڏهن اهي ڳالهيون مشهور ڪرڻ وارا مشهور ڪرڻ جي بجاءِ انهن کي ڪائنات جي امام ۽ قائد حضور عليہ الصلواة والسلام جن جي خدمت ۾ ۽ امر جي صاحبن ڏانهن موٽائين ها تہ علمي نڪتن کي اونهاين مان ڪڍي اچڻ وارا ان کي ڄاڻي وٺن ها. "يَسْتَنْۢبِطُوْنَهٗ" استنباط کان ورتل آهي ۽ اصل ۾ کوهہ جي تري مان پاڻي ڪڍڻ کي استنباط چوندا آهن پر هتي مراد آهي ڪنهن ڳالهہ جي اندر تائين پهچي ان جي صحيح حقيقت معلوم ڪرڻ.

(١) تفسير ابن ڪثير ص٥٣٠ ج١

## فائدو

هن لفظ مان ثابت ٿيو تہ جيڪڏهن ڪنهن مسئلي جي لاءِ نص يا اجماع جو دليل ناهي تہ اهو اجتهاد سان ثابت ڪرڻ جائز آهي.

## هتي اولى الامر مان مراد ڪير آهن؟

علامہ ثناءالله پاني پتيءَ عليہ الرحمه لکيو آهي تہ: اولى الامر مان مراد حضور عليہ الصلواة والسلام جن جا پيارا عقلمند اصحابي آهن جيئن حضرت ابوبڪر، حضرت عمر، حضرت عثمان، حضرت علي رضي الله عنهم ۽ پيا انهن کي اولى الامر ان جي ڪري سڏيو ويو آهي جو اهي هر امر کي سمجهندڙ هيا. حضور عليہ الصلواة والسلام جن پاڻ تہ ساڻن مشورو ڪندا هئا. پر پين کي بہ انهن جي تابعداريءَ جو فرمان ڪيو اٿن جيئن ترمذي شريف ۾ آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "اِقْتَدُوْا بِالَّذَيْنَ مِنْ بَعْدِىْ اَبِيْ بَكْرٍ وَّعُمَرَ" (٢) يعني مون کان بعد ابوبڪر ۽ عمر جي فرمانبرداري ڪجو. ڪن مفسرن فرمايو تہ "اولى الامر" مان مراد علماءِ ۽ فقهاء آهن ۽ ڪن جو چوڻ آهي تہ ان مان مراد امير ۽ حاڪم آهن. علامہ ابوبڪر جصاص فرمايو آهي تہ ان مان مراد ٻئي ٽولا آهن ۽ ٻنهي تي اولي الامر جو اطلاق آيل آهي.

## سوال

اولي الامر ان کي چيو ويندو آهي جن جو حڪم هلي علماء ۽ فقهاء جو حڪم تہ ڪونہ ٿو هلي پوءِ اهي اولى الامر ۾ داخل ڪيئن ٿي سگهندا؟

## جواب

حڪم هلڻ جون ٻہ صورتون آهن. ١- هڪ جبر، تشدد ۽ سختيءَ سان، اهو تہ صرف حڪومت وارا ڪري سگهن ٿا. ٢- ٻيو اعتقاد ۽ اعتماد جي لحاظ سان ۽ اهو علماء ۽ فقهاء ڪرام کي حاصل آهي، جنهن جو مشاهدو عام مسلمانن جي حالات سان ٿي سگهي ٿو جو ديني معاملات ۾ مسلمان علماء جي

(١) القرطبي ص٢٩٢ ج٥ (٢) مظهري ص٣٦١ ج٢

فيصلي کي ٿي اهميت ڏيندا آهن ان وجه سان انهن کي بہ اولي الامر سڏي سگهجي ٿو ۽ اهي بہ هن ۾ داخل آهن.

"وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهٗ لَاتَّبَعْتُمُ الشَّيْطَانَ اِلَّا قَلِيْلًا" هن آيت جي وضاحت ڪندي اشرف علي صاحب ٿانوي لکيو آهي تہ يعني اوهان تي الله تعالىٰ جو هي خاص فضل آهي جو اوهان کي قرآن ڏنائين ۽ اوهان ۾ پنهنجو پيغمبر عليه الصلواة والسلام موڪليائين، جي اهو نہ هجي ها تہ اوهان مان ڪن ٿورن کان سواءِ ٻيا سڀ شيطان جا تابعدار ٿي وڃو ها. پوءِ اوهان کي اهڙي پيغمبر عليہ الصلواة والسلام ۽ اهڙي قران ڪريم کي جن جي معرفت اهڙين مصلحتن وارا احڪام اچن ٿا مٿي ذڪر ڪيل منافقن جي برخلاف غنيمت سمجهڻ گهرجي ۽ پوري اطاعت ڪرڻ گهرجي. (١) هن مان ثابت ٿيو تہ الله تعالىٰ جي فضل مان مراد حضور عليہ الصلواة والسلام جن ۽ رحمت مان مراد قرآن ڪريم آهي ۽ اها ساڳي مراد ٻين مفسرن بہ لکي آهي. علامہ مفتي احمد يار خان عليہ الرحمه لکيو آهي تہ: يهاں فضل سے مراد حضور ﷺ هيں اور رحمت سے مراد قرآن مجيد. (٢) علامہ آلوسي بغدادي عليہ الرحمه لکيو آهي تہ: "لَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ" تعالىٰ بالنبي صلي الله تعالىٰ عليه وسلم ورحمته بانزال القرآن (٣) علامہ قرطبيءَ لکيو آهي تہ: يكون المعني لولا فضل الله عليكم ورحمته بان بعث فيكم رسولا واقام فيكم الحجة لكفرتم واشركتم الا قليلا منكم فانه كان يوحد (۴) ٻنهي عبارتن جو مطلب هي آهي تہ الله تعالىٰ جو فضل حضور عليہ الصلواة والسلام جن آهن جن کي موڪلي الله تعالىٰ پنهنجن ٻانهن تي حجت قائم ڪئي ۽ جيڪڏهن الله تعالىٰ جو اهو فضل ۽ رحمت اوهان تي نہ هجي ها تہ اوهان ڪفر ۽ شرڪ ڪيو ها، پر ڪي ٿورا ٻانها اهڙا بہ هجن ها جيڪي عقل ۽ دانائيءَ سان الله تعالىٰ جي توحيد کي سمجهي ان تي اعتقاد رکن ها.

(١) بيان القرآن مع معارف القرآن ص٤٩٠ جلد٢ (٢) نعيمي ص٢٨٢ ج٥
(٣) روح المعاني ص٩٥ ج٢ جزءُ ٥ (۴) القرطبي ص٢٩٢ ج٥

فَقَاتِلۡ فِیۡ سَبِیۡلِ اللّٰہِ ۚ لَا تُکَلَّفُ اِلَّا نَفۡسَکَ وَحَرِّضِ الۡمُؤۡمِنِیۡنَ ۚ

پوءِ جهاد كر الله جي واٽ ۾ نه تكليف ڏنو وېندين مگر پنهنجيءَ جان جي ۽ حرص ڏيار مومنن کي

عَسَی اللّٰہُ اَنۡ یَّکُفَّ بَاۡسَ الَّذِیۡنَ کَفَرُوۡا ؕ وَاللّٰہُ اَشَدُّ بَاۡسًا

ويجهو آهي (اهو وقت) جو الله بند كري جنگ كافرن جي كي ۽ الله سخت آهي لڙائي كرڻ ۾

وَّاَشَدُّ تَنۡکِیۡلًا ﴿۸۴﴾

۽ سخت آهي عذاب ڏيڻ ۾

## تفسير

جاڻڻ گهرجي ته جڏهن احد جي جنگ شوال مهيني ۾ ختم ٿي ته حضور عليہ الصلواة والسلام جن ذوالقعده مهيني ۾ بدر الصغرىٰ جي ميدان تي ابوسفيان سان وري جنگ جو وعدو كيو هو ۽ جڏهن اهو وقت آيو ۽ پاڻ ميدان ڏانهن نكرڻ لاءِ سڏيائون ته كن ماڻهن ان وڃڻ لاءِ سوچيو ته وڃجي يا نه تڏهن الله تعالىٰ هيءَ آيت نازل كري فرمايو ته: "فَقَاتِلۡ فِیۡ سَبِیۡلِ اللّٰہِ لَا تُکَلَّفُ اِلَّا نَفۡسَکَ" يعني اي محبوب عليہ الصلواة والسلام جيكڏهن ٻيا سستي كن ۽ باطل سان جنگ لاءِ تيار نه ٿين ته اوهان اڳتي وڌو ڀلي اكيلا ڇونه هجو. الله تعالىٰ جي واٽ ۾ لڙو اوهان كي صرف اوهان جي سر جي تكليف ڏني ويندي. ان حكم ملڻ كان پوءِ پاڻ ستر (۷۰) ساٿي پاڻ سان گڏ وٺي بدر صغرىٰ ۾ جتي وعدو كيل هو منزل انداز ٿيا. الله تعالىٰ ابوسفيان ۽ ٻين قريشي كافرن جي دلين ۾ خوف ۽ رعب پيدا كيو ۽ كير به مقابلي جي لاءِ نه آيو ۽ اهي كافر وعدي ۾ كوڙا ٿيا. "وَحَرِّضِ الۡمُؤۡمِنِیۡنَ" ۽ مومنن كي جنگ لاءِ رغبت ڏيار. پوءِ جيكڏهن كو ساٿ نه ڏي ته اوهان تبليغ جو ذمو ادا كيو ۽ اوهان آزاد آهيو نه اوهان ٻيا جو فكر كيو ۽ نه اكيلي هجڻ جو. "عَسَی اللّٰہُ اَنۡ یَّکُفَّ بَاۡسَ الَّذِیۡنَ کَفَرُوۡا" يعني الله تعالىٰ جي رحمت ويجهي آهي جو كافرن جي جنگ كي روكي ۽ بند كري ڇڏي ۽ انهن كي مغلوب ۽ مقهور كري اوهان كي اكيلي سر ئي كاميابي عطا

فرمائي. "وَاللّٰهُ اَشَدُّ بَاْسًا وَّاَشَدُّ تَنْكِيْلًا" هنن لفظن ۾ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن جي ڪاميابيءَ جو دليل بيان ڪندي ٻڌايو ويو آهي تہ: الله لڙائيءَ جي معاملي ۾ بہ زور سخت آهي ۽ سزا ڏيڻ ۾ بہ زور سخت آهي. جڏهن هر ڳالهہ ۾ اهو سيني ڪان قوت وارو ۽ ڏاڍو آهي تہ ان ڪان ئي ڊڄڻ گهرجي. پين ڪان ڊڄي جهاد ۾ نہ وڃڻ عقلمنديءَ جي خلاف ۽ بزدلي آهي.

## فائدو

"لَا تُكَلَّفُ اِلَّا نَفْسَكَ" مان ثابت ٿيو تہ جيڪڏهن ڪنهن ڪم ۾ ٻيا ساڻ نہ ڏين تہ ماڻهو پاڻ ئي ان ڪي شروع ڪري ڇڏي الله تعالیٰ مددگار آهي. اڪيلو هجڻ شرعي عذر ناهي.

## فائدو

حضور عليہ الصلواة والسلام جن الله تعالیٰ جو فضل آهن. سندن تشريف آوريءَ تي الله تعالیٰ جو شڪر ادا ڪندي خوشي ملهائڻ جنهن ڪي عيد ميلاد چئبو آهي سهڻو ڪم آهي.

## فائدو

حضور عليہ الصلواة والسلام جن الله تعالیٰ جي فضل سان دلير، بهادر، وڏا مجاهد ۽ غازي آهن جو اڪيلي سر ميدان ملهائڻ لاءِ بہ تيار هئا.

مَنْ يَّشْفَعْ شَفَاعَةً حَسَنَةً يَّكُنْ لَّهٗ نَصِيْبٌ مِّنْهَا ۚ وَمَنْ يَّشْفَعْ

جيڪو سفارش ڪندو سفارش سهڻي تہ هوندو ان لاءِ ڀاڱو ان مان ۽ جيڪو سفارش ڪندو

شَفَاعَةً سَيِّئَةً يَّكُنْ لَّهٗ كِفْلٌ مِّنْهَا ۗ وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ

سفارش بڇڙي تہ هوندو ان لاءِ ڀاڱو ان مان ۽ آهي الله هر شيءِ تي

مُّقِيْتًا ﴿٨٥﴾ وَاِذَا حُيِّيْتُمْ بِتَحِيَّةٍ فَحَيُّوْا بِاَحْسَنَ مِنْهَآ اَوْ رُدُّوْهَا ۗ

قادر ۽ جڏهن مرحبا ڪيا وڃو ڪنهن مرحبائيءَ سان پوءِ مرحبا ڪيو وڌيڪ سهڻيءَ سان ان ڪان يا موٽايو ان ڪي

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٰى كُلِّ شَیْءٍ حَسِيْبًا ﴿٨٦﴾ اَللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۭ

بيشڪ الله آهي هر شيء جو حساب ڪرڻ وارو سچو معبود ناهي ڪو عبادت جو لائق ان ڪان سواءِ

لَيَجْمَعَنَّكُمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَا رَيْبَ فِيْهِ ۭ وَمَنْ اَصْدَقُ مِنَ

البت ضرور گڏ ڪندو اوهان کي قيامت جي ڏينهن ناهي ڪو شڪ ان ۾ ۽ ڪير آهي وڌيڪ سچو

اللّٰهِ حَدِيْثًا ﴿٨٧﴾ ع

الله کان ڳالهہ ۾

النصف

ع ۱۱ = ۸

# تفسير

هن کان اڳ ۾ حضور صلى الله عليہ وسلم جن کي حڪم ڪيو ويو هو تہ اوهان مسلمانن کي جهاد جي رغبت ڏياريو ۽ هتي ٻڌايو ٿو وڃي تہ ان ترغيب تي اوهان کي وڏو ثواب ملندو ڇوتہ اها ترغيب بہ هڪ شفاعت حسنہ جو قسم آهي "وَمَنْ يَّشْفَعْ شَفَاعَةً حَسَنَةً يَّكُنْ لَّهٗ نَصِيْبٌ مِّنْهَا" يعني جيڪو مسلمان ڪنهن جي لاءِ سٺي ۽ جائز سفارش ۽ شفاعت ڪندو تہ ان کي ان ڪم جي ثواب مان حصو ملندو. "وَمَنْ يَّشْفَعْ شَفَاعَةً سَيِّئَةً يَّكُنْ لَّهٗ كِفْلٌ مِّنْهَا" ۽ جيڪو ڪنهن جي لاءِ برائيءَ ۾ سفارش ڪندو تہ ان لاءِ ان گناهہ مان حصو هوندو. المقصد تہ ڪنهن مشڪل ۾ ڪنهن ڀاءُ جي مدد ڪرڻ، ان کي حقوق ڏيارڻ لاءِ سعيو ڪرڻ، ان کي نفعو پهچائڻ ۽ ان کان تڪليف دور ڪرڻ لاءِ جدوجهد ڪرڻ ان شرط تي جو ان سان ڪنهن ٻئي جو حق تلف نہ ٿئي سٺي سفارش آهي ۽ ان تي سفارش ڪندڙ کي اجر ۽ ثواب ملندو ۽ جيڪڏهن ڪنهن جي حق تلفي ڪئي وئي تہ اها بري سفارش آهي ۽ سفارش ڪرڻ وارو گنهگار ٿيندو. حضور عليہ الصلواة والسلام جن فرمايو آهي تہ: "اَلدَّالُّ عَلَى الْخَيْرِ كَفَاعِلِهٖ" چڱي ڪم جو ڏس ڏيندڙ بہ ڪندڙ جهڙو آهي معنيٰ ان جيترو ثواب ڪٽندو. ڪنهن مسلمان ڀاءُ جي حق ۾

غائبانہ چگي دعا گهرڻ بہ ان شفاعت ۾ داخل آهي. حضرت ابودرداء رضي الله عنہ کان روايت آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو: "اِذَا دَعَا الرَّجُلُ لِاَخِيْهِ بِظَهْرِ الْغَيْبِ قَالَتِ الْمَلَآئِكَةُ آمِيْنَ وَلَکَ بِمِثْلِ ذَالِکَ" (١) يعني جڏهن کو شخص پنهنجي مسلمان ڀاءُ جي لاءِ غائبانہ دعا گهرندو آهي تہ ملائڪ آمين ڪندي چوندا اٿس تہ (اي دعا گهرڻ وارا!) تولاءِ بہ اهڙوئي حصو آهي.

"وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ مُّقِيْتًا" مقيت لفظ جي معنیٰ لغوي لحاظ سان قادر ۽ مقتدر بہ آهي، حاضر ۽ نگران بہ آهي تہ روزي، رزق تقسيم ڪرڻ وارو بہ ۽ هتي ٽئي قسم مراد ٿي سگهن ٿا پهرين معنیٰ جي اعتبار سان مطلب ٿيندو تہ الله تعالیٰ هر شيءِ تي قادر آهي عمل ڪندڙ ۽ سفارش ڪندڙ کي جزا يا سزا ڏيڻ ان جي لاءِ ڏکيو ڪم ناهي ۽ ٻي معنیٰ جي اعتبار سان مطلب هيءُ ٿيندو تہ الله تعالیٰ هر شيءِ تي نگهباني ڪندڙ ۽ حاضر آهي ان کي سڀ ڪجهہ معلوم آهي تہ ڪير ڪهڙيءَ نيت سان سفارش ڪري رهيو آهي خالص خدا ڪارڻ ڪنهن ڀاءُ جي امداد ڪري ٿو يا ڪو ڪم رشوت طور ڪيڻ لاءِ سفارش ڪري رهيو آهي ۽ ٽين معنیٰ جي اعتبار سان مطلب هي ٿيندو تہ رزق، روزيءَ جو ذميوار تہ الله تعالیٰ پاڻ آهي جنهن جي لاءِ جيترو لکيو اٿس ان کي اوترو ملندو ڪنهن جي بہ سفارش جي اڳيان اهو مجبور ناهي پر چگي سفارش ڪندڙ کي ثواب ملندو آهي. حضور صلی الله عليہ وسلم جن جو فرمان آهي تہ "اِنَّ اللّٰهَ فِيْ عَوْنِ عَبْدِهٖ مَا دَامَ الْعَبْدُ فِيْ عَوْنِ اَخِيْهِ" يعني جيستائين ڪو ماڻهو ڪنهن ڀاءُ جي مدد ۾ آهي تہ الله تعالیٰ وري ان جي مدد ۾ آهي. (٢)

"وَاِذَا حُيِّيْتُمْ بِتَحِيَّةٍ فَحَيُّوْا بِاَحْسَنَ مِنْهَآ اَوْ رُدُّوْهَا" هن آيت ۾ سلام ۽ ان جي جواب جي تعليم ڏيندي ارشاد ٿيو آهي تہ جڏهن اوهان کي ڪنهن لفظ سان سلام ڪيو وڃي تہ اوهان بہ ان کان وڌيڪ سهڻي لفظ سان سلام ڪيو يا اهو ساڳيو لفظ ورائي چئو.

## سلام ورائڻ ۽ ان جي جواب ڏيڻ جي تعليم

جاڻڻ گهرجي تہ آيت ۾ ذڪر ڪيل لفظ "تحية" جي معنیٰ آهي ڪنهن کي "حَيَّاکَ اللّٰهُ" چوڻ (الله توکي حياتي بخشي) اسلام کان اڳ ۾ عربن جي عادت

(١) مظهري ص٣٦٣ جلد ٢ (٢) معارف القرآن ص٤٩٨ ج٢

هوندي هئي تہ جڏهن پاڻ ۾ ملندا هئا تہ هڪ ٻئي کي حياڪ الله يا انعم الله بک عينا
ياانعم صباحاً وغيره لفظن سان سلام ڪندا هئا. اسلام ان طرح مرحبا ڪرڻ جي
نموني کي بدلائي السلام عليڪم چوڻ جو طريقو جاري ڪيو جنهن جي معنيٰ آهي
"اوهان تي سلامتي هجي" ابن عربيءَ احڪام القرآن ۾ لکيو آهي تہ "السلام" الله
تعاليٰ جي سهڻن نالن مان هڪ نالو آهي ۽ السلام عليڪم جي معنيٰ آهي تہ "الله
رقيب عليڪم" الله اوهان جو محافظ آهي.

## اسلام جو سيڪاريل سلام ورائڻ جو طريقو دنيا جي مرحبائي وارن سيني طريقن کان ڀلو آهي

ذهن نشين ڪرڻ گهرجي تہ دنيا جي هر قوم ۾ اهو رواج آهي تہ اهي
جڏهن پاڻ ۾ ملاقات ڪندا آهن تہ ڪو جملو پاڻ ۾ دل وندرائڻ ۽ محبت جي اظهار
جي لاءِ چوندا آهن، پر جيڪڏهن انهن وٽ استعمال ڪيل جملي ۽ اسلام واري سلام
جي ڀيٽ ڪئي وڃي تہ خبر پئجي ويندي تہ جيترو السلام عليڪم جو جملو جامع آهي
اهڙو ٻيو ڪوبہ جملو جامع ناهي. ڇوتہ ان ۾ صرف محبت جو اظهار ناهي پر محبت
جي حق جي ادائيگي بہ آهي جو الله تعاليٰ کان اها دعا گهرجي ٿي تہ سلام ورايل کي
الله تعاليٰ سيني آفتن ۽ ايذائن کان سلامت رکي ۽ ان ۾ ان ڳالهہ جو بہ اظهار آهي تہ اسين سڀ
الله تعاليٰ جا محتاج آهيون ان لحاظ سان هي جملو استعمال ڪرڻ هڪ قسم جي
عبادت بہ آهي ۽ هڪ ٻئي کي الله تعاليٰ جي ياد ڏيارڻ جو ذريعو بہ. ۽ ان ۾ سلام
ورائيندڙ جي طرفان سلام ورايل کي اها يقين دهاني بہ ڪرايل آهي تہ تون مون کان
امن ۾ آهين. المقصد تہ اسلام جي مرحبائي جن لفظن سان ڪئي ٿي وڃي اهي
عالمگير جامعيت رکن ٿا. الله تعاليٰ ڪري تہ مسلمان ان جملي جي معنيٰ ۽ مفهوم کي
ذهن نشين ڪري ان جي موافق پنهنجي زندگي بسر ڪن. اهوئي سبب آهي جو رسول
الله صلى الله عليہ وسلم جن سلام ورائڻ جون تمام گهڻيون برڪتون بيان فرمايون
آهن.

## نبوي حديثن مان سلام ورائڻ جون ڀلايون ۽ برڪتون

## حديث ١

بيهقيءَ حضرت حسن بصري رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ

رسول الله صلی الله تعالیٰ عليہ وسلم جن فرمايو "إِنَّ مِنَ الصَّدَقَةِ اَنْ تُسَلِّمَ عَلَى النَّاسِ وَاَنْتَ مُنْطَلِقُ الْوَجْهِ" (١) يعني تون ماڻهن تي ڪليل ۽ خوشيءَ واري منهن سان سلام ورائين تہ اهوبہ صدقو آهي.

## حديث٢

ابوداؤد پنهنجيءَ سند سان حضرت ابوهريرة رضي الله عنہ ڪان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو: "وَالَّذِيْ نَفْسِيْ بِيَدِهٖ لَاتَدْخُلُوا الْجَنَّةَ حَتّٰى تُؤْمِنُوْا وَلَاتُؤْمِنُوْا حَتّٰى تَحَابُّوْا اَفَلَا اَدُلُّكُمْ عَلٰى اَمْرٍ اِذَا فَعَلْتُمُوْهُ تَحَابَبْتُمْ اَفْشُوْا السَّلَامَ بَيْنَكُمْ" (٢) يعني مون ڪي ان ذات جو قسم آهي جنهن جي (قدرتي) هٿ ۾ منهنجو ساهہ آهي تہ اوهان تيستائين جنت ۾ داخل نہ ٿيندؤ جيستائين ايمان نہ آڻيندؤ ۽ تيستائين ايمان نہ آڻيندؤ جيستائين هڪ ٻئي سان محبت نہ رکندؤ. ڇا مان اوهان کي ان جو ڏس نہ ڏيان؟ جو جڏهن اهو ادا ڪندؤ تہ هڪ ٻئي سان محبت رکندؤ. (اهو هي آهي تہ) پاڻ ۾ سلام ورائڻ عام ڪري ڇڏيو.

## حديث ٣

حضرت عبدالله بن سلام رضي الله عنہ ڪان روايت آهي تہ جڏهن رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن مدينہ منوره ۾ تشريف فرما ٿيا تہ ماڻهو سندن خدمت ۾ اچڻ لڳا ۽ چوڻ لڳا تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن آيا آهن. رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن آيا آهن. رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن آيا آهن. پوءِ مان بہ سندن حضور ۾ حاضري ڏني تانتہ سندن ديدار ڪيان. جڏهن سندن منهن مبارڪ کي چڱي طرح ڏٺم تہ سڃاتم تہ سندن منهن مبارڪ ڪوڙ هڻڻ جهڙو ناهي ۽ پهرين پهرين شيءِ جيڪا پاڻ ان وقت بيان فرمايائون سا هيءَ هئي تہ "اَيُّهَا النَّاسُ اَفْشُوا السَّلَامَ، وَاَطْعِمُوا الطَّعَامَ، وَصِلُوا الْاَرْحَامَ، وَصَلُّوا وَالنَّاسُ نِيَامٌ تَدْخُلُوا الْجَنَّةَ بِسَلَامٍ" (١) اي انسانو! سلام عام ورائيندا ڪيو ۽ ڪاڌو کارايو ۽ مائٽيون ڳنڍيو ۽ ماڻهو ننڊ ۾ هجن تہ اوهان (نفلي) نماز پڙهندا رهو تہ جنت ۾ سلامتيءَ سان داخل ٿيندؤ.

(١) روح المعاني ص١٠٢ جزءُ ۵ (٢) تفسير ابن ڪثير ص۵٣٢ ج١
(٣) تفسير القاسمي تحت هذه الاية بحوالہ ترمذي ڪتاب القيامة

## مسئلو

امام فخر الدين رازي عليہ الرحمۃ لکيو آهي تہ سلام ورائڻ ۾ بغير الف لام جي "سلام عليکم" چوي يا الف لام سان "السلام عليکم" چوي ٻئي نمونا جائز آهن. (١)

## فائدو

جڏهن سلام ورائيندڙ السلام عليکم چيو تہ ان جي ابتدا الله تعالیٰ جي نالي "السلام" سان ٿي ۽ جڏهن جواب ڏيڻ واري وعليکم السلام چيو تہ انتها بہ الله تعالیٰ جي نالي سان ٿي ۽ اهو الله تعالیٰ جي فرمان "هُوَ الْاَوَّلُ وَالْاٰخِرُ" جي موافق آهي. (٢)

## سلام جي متعلق مسئلا

١- سوار پيادي تي سلام ورائي. پلي سواريءَ وارو گهڻ سواريءَ واري تي، ننڍو وڏي تي، ٿورا گهڻن تي، بيٺل ويٺل تي. ٢- سنت آهي تہ سلام وڏي آواز سان ۽ هر کنهن مسلمان تي ورائجي. ٣- رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن جو معمول هوندو هو تہ سلام ورائڻ وقت هٿ ملائيندا هئا ۽ سندن فرمان آهي تہ: "اِذَا تَصَافَحَ الْمُسْلِمَانِ تَحَاتَتْ ذُنُوْبُهُمَا كَمَا يَتَحَاتُّ وَرَقُ الشَّجَرِ" (٣) يعني جڏهن بہ مسلمان هٿ ملائيندا آهن تہ انهن جا گناهہ ائين ڪري پوندا آهن جيئن (سخت سرديءَ جي ڪري) وڻ جا پن ڪرندا آهن. ۴- حضرت امام ابويوسف عليہ الرحمه فرمايو آهي تہ جيڪڏهن ڪنهن ماڻهوءَ ڪنهن کي ٻئي تائين سلام پهچائڻ لاءِ چيو آهي ۽ هن اها ڳالهہ قبول ڪئي آهي تہ ان تي سلام پهچائڻ واجب آهي.

## فائدو

جڏهن تنهنجي اڳيان هڪ شخص اچي تہ ان هڪ کي بہ جمع جي لفظ "سلام عليکم" سان سلام وراءِ ۽ ان سان گڏ سندس ڪلهن تي ويٺلن ٻن ملائڪن جي بہ نيت ڪر ۽ جڏهن انهن تي بہ سلام ورائيندين تہ اهي جواب ۾ توتي سلام چوندا ۽ جنهن تي ملائڪن سلام چيو اهو الله تعالیٰ جي عذاب کان سلامتيءَ ۾ رهندو.

(١) تفسير ڪبير ص٢١٢ جزءُ ١٠ (٢) حوالو ساڳيو
(٣) تفسير ڪبير ص٢١٣ جزءُ ١٠

## مسئلو

خالي گهر ۾ بہ ٻن وجهن جي ڪري سلام چوندو ڪر. ١- هڪ تہ الله تعالىٰ جي طرفان پنهنجي مٿان سلامتي سمجهہ. ٢- ٻيو تہ تون انهن مومنن جنن تي سلام ٿو ورائين جيڪي گهر ۾ آهن. ٣- ٽيون تہ سلام ورائڻ جي برڪت سان گهر ۾ جيڪي شيطان وغيره آهن انهن کان سلامتي ۽ بچاءُ ٿو طلب ڪرين. (١)

## فائدو

علامہ قاضي عياض عليہ الرحمه شفاشريف ۾ ۽ علامہ علي قاري ان جي شرح ۾ لکيو آهي تہ: جيڪڏهن گهر ۾ ڪو ماڻهو نہ هجي تہ "السلام على النبي ورحمة الله وبركاته" چؤ چوتہ نبي ڪريم صلى الله عليہ وسلم جن جو روح مبارڪ اهل اسلام جي گهرن ۾ حاضر آهي. (٢) علامہ خفاجي ان مقام تي حضرت سهل بن سعد رضي الله عنهم کان روايت آندي آهي تہ هڪ شخص رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن وٽ مسڪيني ۽ گذران جي تنگيءَ جي شڪايت ڪئي. پاڻ ان کي فرمايائون تہ جڏهن گهر ۾ داخل ٿين تہ ڪو هجي نہ هجي سلام ورائي پوءِ مون تي سلام پڙهي قل هو الله احد هڪ ڀيرو پڙهہ. ان اهو عمل ڪيو تہ الله تعالىٰ رزق پلٽائي ڏنس.

## مسئلو

مٿين آيت جي امر موجب سلام جو جواب ڏيڻ واجب علي الكفاية آهي ۽ جواب نہ ڏيڻ حرام آهي. جيڪڏهن گهڻن تي سلام ورايو ويو ۽ انهن مان ڪن جواب ڏنو ۽ ڪن جواب نہ ڏنو تہ بہ سيني تان وجوب لهي ويو ۽ جواب فوراً ڏيڻ واجب آهي تاخير نہ ڪبي. خط ۾ لکيل سلام جو جواب خط ۾ ڏيڻ واجب آهي.

## مسئلو

جيڪڏهن نوجوان عورت ڪنهن مرد تي سلام ورائي ۽ جواب ڏيڻ ۾ فتني يا تهمت لڳڻ جو انديشو آهي تہ ان جي سلام جو جواب نہ ڏي. (٣) طبراني

(١) التفسير الكبير ص٢١٣ جزءُ١٠
(٢) نسيم الرياض شرح الشفا لعلي القاري ص٤٦٤ جلد٣
(٣) تفسير ڪبير ص٢١٥ جزءُ١٠

شريف ۾ حضرت ابودرداء رضي الله عنہ کان روايت آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو: اَكْثِرُوا الصَّلٰوةَ عَلَيَّ يَوْمَ الْجُمُعَةِ فَاِنَّهٗ مَشْهُوْدٌ تَشْهَدُهُ الْمَلَائِكَةُ لَيْسَ مِنْ عَبْدٍ يُصَلِّيْ عَلَيَّ اِلَّا بَلَغَنِيْ صَوْتُهٗ حَيْثُ كَانَ قُلْنَا وَبَعْدَ وَفَاتِكَ؟ قَالَ وَبَعْدَ وَفَاتِيْ اِنَّ اللّٰهَ حَرَّمَ عَلَى الْاَرْضِ اَنْ تَاْكُلَ اَجْسَادَ الْاَنْبِيَآءِ (١) يعني جمعي ڏينهن مون تي صلواة گهڻي پڙهو ڇوتہ اهو حاضريءَ جو ڏينهن آهي جنهن ۾ ملائڪ حاضر ٿين ٿا ڪوبہ ٻانهو مون تي صلواة پڙهي ٿو تہ اهو ڪٿي بہ هجي ان جو آواز مون وٽ پهچي ٿو. اسان عرض ڪيو تہ اوهان جي وفات کان پوءِ بہ؟ فرمايائون منهنجي وفات کان پوءِ بہ. الله تعالیٰ زمين تي حرام ڪيو آهي جو نبين (سڳورن) جي جسمن کي کائي.

"اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ حَسِيْبًا" يعني الله تعالیٰ هميشہ هر شيءِ جي مٿان نگهباني ڪندڙ ۽ ان جو محاسب آهي هرهڪ کي حساب سان بدلو ڏيندو. اوهان جهڙوبہ سلام ۽ جواب ڪندؤ اهڙوئي حساب ۽ اجر حاصل ڪندئو. "اَللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ" سچو معبود جنهن کان سواءِ ڪوبہ عبادت جو لائق ناهي اهو غني ۽ بي نياز آهي ۽ ٻيا سڀ ان جا محتاج ۽ سندس ٻانها آهن. "لَيَجْمَعَنَّكُمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَا رَيْبَ فِيْهِ" يعني اوهان دنيا ۾ ڪٿي بہ هجو پر اهو ضرور اوهان کي ان قيامت جي ڏينهن ۾ گڏ ڪندو جنهن ۾ ڪوبہ ۽ ڪنهن قسم جو شڪ ناهي. "وَمَنْ اَصْدَقُ مِنَ اللّٰهِ حَدِيْثًا" ۽ الله کان وڌيڪ سچي ڳالهہ وارو ڪير آهي. علامہ رازيءَ لکيو آهي تہ: ان الكذب والخلف في قوله محال (٢) يعني الله جي قول ۾ مخالفت ۽ ڪوڙ محال آهي، ڇوتہ جيڪڏهن ڪوڙ الله تعالیٰ جي صفت هجي ها تہ اها قديم هجي ها ۽ جيڪا قديم هوندي اها زوال قبول نہ ڪندي ۽ جيڪڏهن ڪوڙ جي صفت زوال قبول نہ ڪري دائمي ٿيندي تہ پوءِ الله تعالیٰ جو سچو هجڻ ناممڪن ٿيندو جيڪو سندس ذات پاڪ جي شان جي سراسر خلاف آهي.

(١) نعيمي ص٢٩٦ ج٥ بحوالہ جلاء الافهام
(٢) تفسير ڪبير ص٢١٧ جزء ١٠

فَمَا لَكُمْ فِى الْمُنٰفِقِيْنَ فِئَتَيْنِ وَاللّٰهُ اَرْكَسَهُمْ بِمَا كَسَبُوْا ط

پوءِ ڇا آهي اوهان کي جو منافقن جي بابت ٻه ٽولا ٿي پيا آهيو ۽ الله اونڌو ڪيو انهن کي ان جي ڪري جو ڪيائون

اَتُرِيْدُوْنَ اَنْ تَهْدُوْا مَنْ اَضَلَّ اللّٰهُ ط وَمَنْ يُّضْلِلِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ

ڇا ارادو ٿا ڪيو ته هدايت ڪيو ان کي جو گمراهه ڪيو ان کي الله ۽ جنهن کي گمراهه ٿو ڪري الله پوءِ اصل نه لهندين ان لاءِ

سَبِيْلًا ﴿۸۸﴾ وَدُّوْا لَوْ تَكْفُرُوْنَ كَمَا كَفَرُوْا فَتَكُوْنُوْنَ سَوَآءً فَلَا

ڪو رستو محبت ٿا رکن هن ڳالهه جي ته ڪفر ڪيو جيئن پاڻ ڪفر ڪيائون پوءِ ٿي پئو برابر پوءِ نه

تَتَّخِذُوْا مِنْهُمْ اَوْلِيَآءَ حَتّٰى يُهَاجِرُوْا فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ط فَاِنْ تَوَلَّوْا

وٺو انهن مان دوست تانجو هجرت ڪن الله جي واٽ ۾ پوءِ جيڪڏهن منهن موڙين

فَخُذُوْهُمْ وَاقْتُلُوْهُمْ حَيْثُ وَجَدْتُّمُوْهُمْ ص وَلَا تَتَّخِذُوْا مِنْهُمْ

پوءِ پڪڙيو انهن کي ۽ ڪهو انهن کي جتي به لهو انهن کي ۽ نه وٺو انهن مان

وَلِيًّا وَّلَا نَصِيْرًا ﴿۸۹﴾ لا اِلَّا الَّذِيْنَ يَصِلُوْنَ اِلٰى قَوْمٍۭ بَيْنَكُمْ

دوست ۽ نه مددگار مگر جيڪي پهچن اهڙيءَ قوم وٽ جو اوهان ۽ انهن جي وچ ۾

وَبَيْنَهُمْ مِّيْثَاقٌ اَوْ جَآءُوْكُمْ حَصِرَتْ صُدُوْرُهُمْ اَنْ يُّقَاتِلُوْكُمْ

پڪو عهد آهي يا اچن اوهان وٽ تنگ ٿيا سينا انهن جا (هن ڳالهه کان) جو وڙهن اوهان سان يا

اَوْ يُقَاتِلُوْا قَوْمَهُمْ ط وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ لَسَلَّطَهُمْ عَلَيْكُمْ

وڙهن قوم پنهنجيءَ سان ۽ جيڪڏهن گهري الله ته البت غالب ڪري انهن کي اوهان تي

فَلَقَاتَلُوْكُمْ ۚ فَاِنِ اعْتَزَلُوْكُمْ فَلَمْ يُقَاتِلُوْكُمْ وَاَلْقَوْا اِلَيْكُمُ

پوءِ البت جنگ ڪن اوهان سان ۽ پوءِ جيڪڏهن پاسو ڪن اوهان کان پوءِ نه وڙهن اوهان سان ۽ اڇلائين اوهان ڏانهن

السَّلَمَ ۙ فَمَا جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمْ عَلَيْهِمْ سَبِيْلًا ﴿٩٠﴾

صلح ته پوءِ نه ڪيو الله اوهان لاءِ انهن تي (وڙهڻ جي لاءِ) ڪو رستو

## تفسير

هن آيت جي متعلق مفسرن لکيو آهي ته حضور عليه الصلواة والسلام جن جي وقت مبارڪ ۾ بعضي ماڻهو ظاهري اسلام ته قبول ڪندا هئا پر ٻارن ٻچن جي محبت، مال ۽ جائيداد جو پيار ۽ وطن جي ڪشش انهن کي هجرت ڪرڻ جي اجازت نه ڏيندي هئي ۽ اتي جي رهاڪن، مڪي جي مشرڪن جي سرگرمين ۾ به ڪين شريڪ ٿيڻو پوندو هو ۽ انهن مان ڪي هجرت ڪري مدينه منوره ۾ به ايندا هئا پر اتي جي اخلاقي پابندين، نظام حيات ۽ دشمن جي حملي واري خطري کان ڊڄي اتي نه رهندا هئا ۽ آب هوا جي ناموافقت جا عذر ۽ بهانا ڪري واپس موٽندا هئا. اهڙي قسم جي ماڻهن جي متعلق مسلمانن جا رايا مختلف هيا بعضي انهن کي مسلمان ۽ بعضي انهن کي اسلام کان خارج سمجهندا هئا. الله تعالىٰ انهن جي لاءِ فرمايو ته "فَمَا لَكُمْ فِى الْمُنٰفِقِيْنَ فِئَتَيْنِ" يعني اوهان کي ڇا ٿيو آهي جو منافقن جي باري ۾ ٻه ٽولا ٿي ويا آهيو. "وَاللّٰهُ اَرْكَسَهُمْ بِمَا كَسَبُوْا" يعني انهن کي سندن ڪيل بدعملن ۽ برن عقيدن جي ڪري الله تعالىٰ ڪفر ڏانهن واپس ڪري ڇڏيو آهي اهي گمراهه آهن. "اَتُرِيْدُوْنَ اَنْ تَهْدُوْا مَنْ اَضَلَّ اللّٰهُ" ڇا اوهان ارادو ٿا ڪيو ته جن کي الله تعالىٰ سڌيءَ راهه کان پري رکيو آهي انهن کي هدايت ڪيو. اهو ٿي نه سگهندو. "وَمَنْ يُّضْلِلِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ سَبِيْلًا" يعني جنهن کي الله تعالىٰ گمراهه ڪندو

ته اوهان ان جي لاءِ الله تعاليٰ وٽ پهچائڻ واري واٽ کڏهن به هٽ ڪري نه سگهندؤ جنهن جي واسطي سان ان کي الله تعاليٰ وٽ پهچايو. الله تعاليٰ تائين پهچڻ واري واٽ صرف ۽ صرف محبوب معظم، حضور اڪرم، صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن واري واٽ آهي جيئن حضرت سعدي عليه الرحمه به فرمايو آهي ته

مپندار سعدی که راه صفا

تو ان یافت جز در پئے مصطفیٰ (ﷺ)

يعني سعدي ائين نه سمجهه ته صفائيءَ واري واٽ مصطفيٰ صلي الله عليه وسلم جن جي پويان وڃڻ کان سواءِ حاصل ڪري سگهبي.

"وَدُّوْا لَوْ تَكْفُرُوْنَ كَمَا كَفَرُوْا فَتَكُوْنُوْنَ سَوَآءً فَلَا تَتَّخِذُوْا مِنْهُمْ اَوْلِيَآءَ حَتّٰى يُهَاجِرُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ" يعني اوهان انهن منافقن جي باري ۾ بحث ڪري به حصا ٿي پاڻ ۾ وڙهي رهيا آهيو. حالانڪ انهن جو اهو حال آهي جو اهي ان ڳالهه جي خواهش ۽ محبت ٿا رکن ته اوهان ائين ڪفر ڪيو جيئن پاڻ ڪيو اٿن ان جي ڪري انهن مان تيستائين دوست نه بنايو جيستائين الله تعاليٰ جي واٽ ۾ هجرت نه ڪن. "فَاِنْ تَوَلَّوْا فَخُذُوْهُمْ وَاقْتُلُوْهُمْ حَيْثُ وَجَدْتُّمُوْهُمْ" يعني جيڪڏهن اهي ايمان، هجرت وغيرهه کان منهن ڦيرائين ته پوءِ جتي به لهونِ پڪڙي قتل ڪري ڇڏيونِ. "وَلَا تَتَّخِذُوْا مِنْهُمْ وَلِيًّا وَّلَا نَصِيْرًا" ۽ انهن مان نه ڪنهن کي دوست بنايو ۽ نه مددگار سمجهو. "اِلَّا الَّذِيْنَ يَصِلُوْنَ اِلٰى قَوْمٍۢ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مِّيْثَاقٌ" يعني اهي سيئي منافق مرتد واجب القتل آهن مگر جيڪي ان قوم سان ملن ٿا جن ۾ ۽ اوهان ۾ معاهدو ڪيل آهي ته پوءِ انهن کي ڪجهه نه چئو "اَوْ جَآءُوْكُمْ حَصِرَتْ صُدُوْرُهُمْ اَنْ يُّقَاتِلُوْكُمْ اَوْ يُقَاتِلُوْا قَوْمَهُمْ" يعنى انهن سان به نه لڙو جيڪي اوهان وٽ ان حال ۾ آيا جو انهن جا سينا هن ڳالهه کان تنگ ٿي چڪا آهن جو اوهان سان جنگ ڪن يا پنهنجيءَ قوم سان. هن مان ثابت ٿيو ته لڙائي صرف انهن سان ڪئي ويندي جيڪي اوهان سان لڙن ٿا پر جيڪڏهن اهي جنگ کان بس ڪن ته پوءِ اوهان به انهن کان پنهنجا هٿ روڪي ڇڏيو. "وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ لَسَلَّطَهُمْ عَلَيْكُمْ فَلَقَاتَلُوْكُمْ" يعني اي مسلمانو! هي الله تعاليٰ جو اوهان تي خاص

ڪرم ۽ رحم آهي جو انهن جي دلين ۾ اوهان جي هيبت پيدا ڪيائين ۽ اهي اوهان جي مقابلي ۾ همت ڪرڻ جي بجاءِ اوهان کي صلح جي درخواست ڪن ٿا ۽ جيڪڏهن الله تعالىٰ گهري ها تہ انهن کي جرءَت ڏئي ها ۽ اوهان تي غالب ڪري ڇڏي ها پوءِ اهي اوهان سان لڙائي ڪن ها. "فَاِنِ اعْتَزَلُوْكُمْ فَلَمْ يُقَاتِلُوْكُمْ وَاَلْقَوْا اِلَيْكُمُ السَّلَمَ" مقصد تہ جيڪڏهن اهي ڪافر اوهان کان پاسي تي رهن ۽ اوهان سان جنگ نہ ڪن ۽ اوهان کي صلح جو پيغام موڪلين تہ "فَمَا جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمْ عَلَيْهِمْ سَبِيْلًا" پوءِ الله تعالىٰ اوهان لاءِ انهن سان وڙهڻ جي ڪا واٽ نہ رهائي آهي. تفسير نعيميءَ واري لکيو آهي تہ اهو حڪم منسوخ آهي اسلام جي بادشاهہ تي ضروري ناهي تہ ڪافرن جي طرفان پيش ڪيل صلح کي هروڀرو بہ تسليم ڪري. جيڪڏهن صلح ۾ مصلحت آهي تہ صلح ڪري ۽ جيڪڏهن جنگ ۾ مصلحت آهي تہ جنگ ڪري.

## فائدو

"لَا تَتَّخِذُوْهُمْ اَوْلِيَآءَ" مان ثابت ٿيو تہ ڪافرن سان دوستي رکڻ حرام آهي جيتوڻيڪ ويجها مٽ هجن ۽ انهن کان بلاضرورت ديني ڪمن ۾ بہ مدد وٺڻ ناجائز آهي.

## فائدو

"حَتّٰى يُهَاجِرُوْا" جي لفظ مان ثابت ٿيو تہ مرتد کي اسلام جي تبليغ ضرور ڪئي وڃي ۽ ان کي ڀيو پيرو صحيح مسلمان ٿيڻ جو موقعو ڏنو وڃي. "حَيْثُ وَجَدْتُّمُوْهُمْ" مان ثابت ٿيو تہ مسلمانن جي ايماني قوت ڪافرن جي دلين ۾ رعب پيدا ڪرڻ جو سبب ٿيندي آهي ۽ اهو رعب الله تعالىٰ جي وڏي نعمت آهي ۽ "فَاِنْ تَوَلَّوْا" مان ثابت ٿيو تہ جيڪڏهن ڪو ڪلمي پڙهڻ وارو ڪفر جي رسم اختيار ڪندو تہ ڪافر ٿي ويندو ۽ جهاد جي وقت ماريو ويندو. ڇو تہ ڪفر جي نشاني رکڻ خود ڪفر آهي. (١)

(١) نعيمي ص٣١٠ ج٥

سَتَجِدُوْنَ اٰخَرِيْنَ يُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّاْمَنُوْكُمْ وَيَاْمَنُوْا قَوْمَهُمْ ؕ كُلَّمَا

سگھوئي لھندؤ ٻين کي جو ارادو ٿا ڪن تہ امن ۾ رهن اوهان کان ۽ امن ۾ رهن قوم پنهنجيءَ کان جڏهن بہ

رُدُّوْا اِلَى الْفِتْنَةِ اُرْكِسُوْا فِيْهَا ۚ فَاِنْ لَّمْ يَعْتَزِلُوْكُمْ وَيُلْقُوْا

موٽايا ويا فساد ڏانهن تہ اونڌا ڪيا ويا ان ۾ پوءِ جيڪڏهن نہ پاسو ڪن اوهان کان ۽ (نہ) پيش ڪن

اِلَيْكُمُ السَّلَمَ وَيَكُفُّوْٓا اَيْدِيَهُمْ فَخُذُوْهُمْ وَاقْتُلُوْهُمْ حَيْثُ

اوهان ڏانهن صلح ۽ (نہ) روڪين هٿ پنهنجا پوءِ وٺو انهن کي ۽ ڪهو انهن کي جتي بہ

ثَقِفْتُمُوْهُمْ ؕ وَاُولٰٓئِكُمْ جَعَلْنَا لَكُمْ عَلَيْهِمْ سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا ﴿٩١﴾ ع

لهو انهن کي ۽ اهي ئي آهن جو ڪئي سون اوهان لاءِ انهن تي حجت پڌري

وَمَا كَانَ لِمُؤْمِنٍ اَنْ يَّقْتُلَ مُؤْمِنًا اِلَّا خَطَـًٔا ۚ وَمَنْ قَتَلَ مُؤْمِنًا

۽ ناهي (مناسب) ڪنهن مومن جي لاءِ تہ ڪهي ڪنهن مومن کي مگر غلطيءَ کان ۽ جنهن ڪٺو ڪنهن مومن کي

خَطَـًٔا فَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ وَّدِيَةٌ مُّسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَهْلِهٖٓ اِلَّآ اَنْ

غلطيءَ سان پوءِ آزاد ڪرڻ آهي ٻانهي مومن جو ۽ خون بها ڏنل ان جي وارثن کي مگر هي جو

يَّصَّدَّقُوْا ؕ فَاِنْ كَانَ مِنْ قَوْمٍ عَدُوٍّ لَّكُمْ وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَتَحْرِيْرُ

بخش ڪن پوءِ جيڪڏهن آهي اهڙيءَ قوم مان جو اهي دشمن آهن اوهان جي لاءِ ۽ اهو (پاڻ) ايمان وارو آهي تہ پوءِ آزاد ڪرڻ آهي

رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ ؕ وَاِنْ كَانَ مِنْ قَوْمٍۢ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مِّيْثَاقٌ فَدِيَةٌ

ٻانهي مومن جو ۽ جيڪڏهن آهي اهڙيءَ قوم مان جو اوهان ۽ انهن جي وچ ۾ پڪو عهد آهي تہ پوءِ خونبها

مُّسْلِمَةٌ إِلَىٰٓ أَهْلِهِۦ وَتَحْرِيرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ ۖ فَمَن لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ

ڏنل آهي ان جي وارثن ڏانهن ۽ آزاد ڪرڻ ٻانهي مومن جو پوءِ جنهن نہ لڌو تہ پوءِ روزو رکڻ آهي

شَهْرَيْنِ مُتَتَابِعَيْنِ تَوْبَةً مِّنَ ٱللَّهِ ۗ وَكَانَ ٱللَّهُ عَلِيمًا حَكِيمًا ﴿٩٢﴾

ٻن مهينن لاڳيتن جو. موٽڻ آهي الله جي طرفان ۽ آهي الله ڄاڻندڙ حڪمت وارو

## تفسير

هن ڪان اڳ ۾ انهن ڪافرن جو ذڪر هيو جيڪي صحيح ارادي سان مسلمانن سان صلح جي نيت رکندا هئا پر ڪي ڪي انهن مان مسلمانن کي ڏوکي ڏيڻ جي ڪوشش ڪندا هئا. رب العزة جل شانه انهن جي لاءِ فرمايو آهي تہ "سَتَجِدُونَ آخَرِينَ يُرِيدُونَ أَن يَأْمَنُوكُمْ وَيَأْمَنُوا قَوْمَهُمْ" يعني اوهان اهڙا ماڻهو بہ لهندؤ جيڪي اوهان سان صلح ۽ امن جو عهد ٿا ڪن تہ نہ اوهان سان وڙهندا نہ پنهنجيءَ قوم سان ۽ ان طريقي سان هنن جو ارادو آهي تہ اوهان کان ۽ پنهنجيءَ قوم سان لڙڻ کان امن ۾ رهن. اهي زباني طرح اوهان کي مطمئن ڪرڻ جي ڪوشش ڪن ٿا ۽ دل سان پنهنجي ڪافرن سان ڪٺي آهن. "كُلَّمَا رُدُّوا إِلَى الْفِتْنَةِ أُرْكِسُوا فِيهَا" جڏهن بہ ڪنهن فتني ۽ فساد ڏانهن واپس ڪيا ويندا تہ ان ۾ اونڌا ۽ انڌا ٿي ڪري پوندا. هتي "الْفِتْنَةِ" مان مراد شرڪ يا مسلمانن جي اندروني مخالفت آهي، جنهن ۾ اهي وڌ ۾ وڌ ڪوشان رهندا هئا. "فَإِن لَّمْ يَعْتَزِلُوكُمْ وَيُلْقُوا إِلَيْكُمُ السَّلَمَ وَيَكُفُّوا أَيْدِيَهُمْ فَخُذُوهُمْ وَاقْتُلُوهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوهُمْ" هتي ٽن شرطن ليڻ تي انهن جي قتل ڪرڻ جي اجازت ڏني وئي آهي. ا- هڪ تہ اهي پنهنجو رويو بدلائي اوهان سان جنگ ڪرڻ کان پاسو نہ ڪن ۽ ٻيو تہ اوهان کي صلح جي پيش ڪش نہ ڪن ٽيون تہ پنهنجا هٿ اوهان سان جنگ ڪرڻ کان نہ روڪين. "فَخُذُوهُمْ وَاقْتُلُوهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوهُمْ" تہ پوءِ انهن کي پڪڙيو ۽ جتي بہ لهون تہ کهي ڇڏيون. انهن جي قتل ڪرڻ ۽ کهڻ جي اوهان کي اجازت آهي "أُولَٰئِكُمْ جَعَلْنَا لَكُمْ عَلَيْهِمْ سُلْطَانًا مُّبِينًا" يعني اسان اوهان جي لاءِ انهن تي چٽو دليل ۽ حجت قائم ڪري انهن جي قتل کي جائز قرار ڏنو آهي هاڻي اوهان انهن تي سختي ڪرڻ ۽ وٺ پڪڙ ۾ بالڪل مجرم ناهيو.

## فائدو

هن آيت سان اهي سڀ آيتون منسوخ ٿي ويون جن مان ڪافرن سان نرمي ڪرڻ جو حڪم ملي رهيو هو. (١)

"وَمَا كَانَ لِمُؤْمِنٍ اَنْ يَّقْتُلَ مُؤْمِنًا اِلَّا خَطَـًٔا" هن ڪان اڳ ۾ ان قتل جو ذڪر هو جيڪو جائز هو ۽ هتي ان قتل ڪي جيڪو حرام آهي بيان ڪندي ٻڌايو ٿو وڃي ته "مومن ڪي نه جائز آهي ۽ نه ان لاءِ مناسب آهي جو ٻئي مومن ڪي هوش، حواس جي سلامتيءَ هوندي قتل ڪري مگر هيءَ ڳالهه جدا آهي جو خطا سان، ارادي ڪان سواءِ ان ڪان اهو جرم سرزد ۽ صادر ٿئي. "وَمَنْ قَتَلَ مُؤْمِنًا خَطَـًٔا فَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ وَّدِيَةٌ مُّسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَهْلِهٖٓ اِلَّآ اَنْ يَّصَّدَّقُوْا" يعني جنهن ماڻهو ڪنهن مومن ڪي خطا سان بناارادي جي قتل ڪري وڌو ته ان تي هيو ڏوهه ته ناهي پر پوءِ به ڪفارت طور مومن ٻانهي ڪي آزاد ڪرڻ ۽ ديةَ سندس ذمي آهي جيڪا ان قتل ڪيل جي اهل ڪي ڏني ويندي. دية شرعي اصطلاح ۾ مسلمان جي خون جو اهو معاوضو آهي جيڪو ڪٺل جي وارثن ڪي ڏنو ويندو آهي، مگر جيڪڏهن اهي وارث معاف ڪن ته معاف ڪري سگهن ٿا. پر جڏهن ته ان معاف ڪرڻ ۾ اجر به آهي ان جي ڪري ان ڪي "اَنْ يَّصَّدَّقُوْا" صدقي سان بيان ڪيو ويو آهي. "فَاِنْ كَانَ مِنْ قَوْمٍ عَدُوٍّ لَّكُمْ وَهُوَ مُؤْمِنٌ" يعني جيڪڏهن اهو خطا سان ڪٺل آهي ته اوهان جي دشمن قوم مان آهي پر اهو پاڻ مومن آهي جنهن جي ايماندار هجڻ جي قاتل ڪي خبر ناهي "فَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ" ته پوءِ صرف ڪفارت طور مومن ٻانهي جو آزاد ڪرڻ ان قاتل جي ذمي آهي باقي دية يا خون بها ان تي ناهي ڇوته اها وارثن ڪي ڏني ويندي آهي ۽ جڏهن ته ان ڪٺل مومن جا مائٽ، مٽ ڪافر آهن ته اهي ان جا وارث ٿي نه سگهندا. "وَاِنْ كَانَ مِنْ قَوْمٍۢ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مِّيْثَاقٌ" يعني جيڪڏهن اهو قتل ڪيل اهڙي قوم مان آهي جو انهن ۽ اوهان جي وچ ۾ پڪو عهد ڪيل آهي "فَدِيَةٌ مُّسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَهْلِهٖ وَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ" ته پوءِ اهو قاتل ان مقتول جي اهل ڪي ديت ادا ڪري ۽ مومن ٻانهو به آزاد ڪري ۽ اها ديت مسلم، غيرمسلم سيني جي برابر آهي يعني هڪ سئو اٺ (٢)

"فَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ شَهْرَيْنِ مُتَتَابِعَيْنِ تَوْبَةً مِّنَ اللّٰهِ" يعني جيڪڏهن ڪو شخص غلام آزاد ڪرڻ جي طاقت نه ٿو رکي يا غلام ملي ئي ڪونه ٿو ته پوءِ لاڳيتا ٻه مهينا روزا رکڻ ضروري آهن. جيڪڏهن شرعي عذر مثلاً حيض يا بيماريءَ

(١) تفسير نعيمي ص٣١٦ ج٥ (٢) ضياءُ القرآن ص٣٧٨ ج١

وغيره کان سواءِ ناغو کيائين تہ وري نئين سر روزا رکڻ شروع کندو ۽ اھو غلام آزاد
ڪرڻ ۽ غلام نہ ھجڻ يا طاقت نہ رکڻ جي صورت ۾ ٻہ مهينا لاڳيتا روزا رکڻ جو
حکم ان جي کري آهي تہ اوهان جي ان غلطيءَ کان توبہ ٿي وڃي. اھو حکم اللہ تعالیٰ
جي طرفان آهي. "وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا" ۽ اللہ تعالیٰ علم ۽ حکمت وارو آهي جنھن
جي حکمن ۾ ھزارين حکمتون آھن اوهان کي سمجهہ ۾ اچن يا نہ اچن.

## فائدو

ھن مان ثابت ٿيو تہ ڄاڻي واڻي کنھن کي قتل ڪرڻ مومن جو شان
ناهي. مومن تہ آهي ئي اھو جيکو دنيا ۾ امن، امان قائم کري ۽ اھو بہ ثابت ٿيو تہ
کتل جا وارث جيکڏھن کهندڙ کي معاف کن تہ کري سگهن ٿا.

## مسئلو

مسلمانن جي ملک ۾ امن وني رهندڙ کافر جا حقوق بہ مسلمانن
وانگر ئي هوندا آهن انھن جي جان ۽ مال جي ائين حفاظت ڪرڻي آهي جيئن مسلمان
جي جان ۽ مال جي.

وَمَنْ يَّقْتُلْ مُؤْمِنًا مُّتَعَمِّدًا فَجَزَآؤُهٗ جَهَنَّمُ خَالِدًا فِيْهَا

۽ جيکو کھي ٿو مومن کي ڄاڻي واڻي پوءِ ان جي سزا جهنم آهي هميشہ هوندو ان ۾

وَغَضِبَ اللّٰهُ عَلَيْهِ وَلَعَنَهٗ وَاَعَدَّ لَهٗ عَذَابًا عَظِيْمًا ﴿٩٣﴾

۽ کاوڙيو اللہ ان تي ۽ لعنت کيائين ان کي ۽ تيار کيائين ان لاءِ عذاب وڏو

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا ضَرَبْتُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَتَبَيَّنُوْا وَلَا

اي ايمان وارؤ! جڏھن سفر کيو اللہ جي واٽ ۾ تہ پوءِ جاچ کيو ۽ نہ

تَقُوْلُوْا لِمَنْ اَلْقٰٓى اِلَيْكُمُ السَّلٰمَ لَسْتَ مُؤْمِنًا تَبْتَغُوْنَ عَرَضَ

چئو ان کي جو پيش کيائين اوهان کي سلام تہ ناهين تون مومن طلب ٿا کيو سامان

الحَيواةَ الدُّنيَا فَعِنْدَاللهِ مَغَانِمُ كَثِيرَةٌ كَذٰلِكَ كُنتُمْ مِّنْ

حياتيءَ دنيا جيءَ جو پوءِ الله وٽ غنيمتون گهڻيون آهن ائين ئي هيئو اوهان بہ

قَبْلُ فَمَنَّ اللهُ عَلَيْكُمْ فَتَبَيَّنُوا إِنَّ اللهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرًا ﴿٩٤﴾

اڳ ۾ پوءِ ٿورو ڪيو الله اوهان تي پوءِ جاچ ڪندا ڪيو بيشڪ الله جيڪي ڪيو ٿا (ان جي) خبر رکندڙ آهي

## تفسير

هن کان پهريان خطا سان قتل جي سزا جو ذڪر هيو هاڻي عمداً، جاڻي واڻي قتل ڪرڻ جي سزا جو ذڪر ڪندي ٻڌايو تہ وجي تہ "وَمَنْ يَقْتُلْ مُؤْمِنًا مُّتَعَمِّدًا فَجَزَآؤُهٗ جَهَنَّمُ خَالِدًا فِيْهَا وَغَضِبَ اللهُ عَلَيْهِ وَلَعَنَهٗ وَاَعَدَّ لَهٗ عَذَابًا عَظِيْمًا" يعني جيڪو ڪنهن مومن کي جاڻي واڻي قتل ٿو ڪري تہ ان جي سزا جهنم آهي ان ۾ هميشہ هوندو ۽ ان تي الله جو غضب آهي ۽ ان تي الله تعالىٰ لعنت ڪئي آهي ۽ ان جي لاءِ وڏو عذاب تيار ڪيو اٿس. مسلمان کي ناحق قتل ڪرڻ وڏو ڏوهہ آهي جنهن کي قرآن ڪريم شرڪ سان گڏ ذڪر ڪيو آهي. جيئن رباني فرمان آهي "وَالَّذِيْنَ لَا يَدْعُوْنَ مَعَ اللهِ اِلٰـهًا اٰخَرَ وَلَا يَقْتُلُوْنَ النَّفْسَ الَّتِيْ حَرَّمَ اللهُ اِلَّا بِالْحَقِّ" يعني اهي ٻانها الله سان گڏ ٻئي جي عبادت نہ ٿا ڪن ۽ نہ ان نفس کي ناحق قتل ٿا ڪن جيڪو الله حرام ڪيو آهي. رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن پنهنجي ارشادات ۾ ان کان سختيءَ سان منع ڪئي آهي.

## ناحق قتل ڪرڻ جي سزا جو ذڪر نبوي حديثن مان

### حديث ١

امام بخاري ڪتاب الديات ۾ حضرت عبدالله بن مسعود رضي الله تعالىٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليہ وسلم جن فرمايو "اَوَّلُ مَا يُقْضٰى بَيْنَ النَّاسِ يَوْمَ الْقِيَامَةِ فِى الدِّمَآءِ" يعني قيامت جي ڏينهن ماڻهن ۾ پهريان پهريان خونن جا فيصلا ڪيا ويندا.

## حديث ٢

ترمذي ۽ نسائي حضرت ابن عمر رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو: "لَزَوَالُ الدُّنْيَا اَهْوَنُ عِنْدَاللهِ مِنْ قَتْلِ رَجُلٍ مُّسْلِمٍ" يعني ساريءَ دنيا جو برباد ٿيڻ الله تعالیٰ وٽ هڪ مسلمان مرد جي قتل کان گهٽ آهي.

## حديث ٣

ترمذي حضرت ابوسعيد ۽ ابوهريرة رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلی الله عليہ وسلم جن فرمايو "لَوْ اَنَّ اَهْلَ السَّمَآءِ وَالْاَرْضِ اشْتَرَكُوْا فِيْ دَمِ مُؤْمِنٍ لَاَكَبَّهُمُ اللهُ عَزَّوَجَلَّ فِى النَّارِ" يعني جيڪڏهن آسمان ۽ زمين وارا سيئي هڪ مومن جي خون ۾ شريڪ ٿين تہ الله عزوجل انهن سيني کي باهہ ۾ اونڌو ڪري وجهندو.

## حديث ٤

ابن ماجه حضرت ابوهريرة رضي الله عنہ کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلي الله عليہ وسلم جن فرمايو: "مَنْ اَعَانَ عَلیٰ قَتْلِ مُسْلِمٍ وَلَوْ بِشَطْرِ كَلِمَةٍ جَآءَ يَوْمَ الْقِيَامَةِ مَكْتُوْبًا بَيْنَ عَيْنَيْهِ آيِسٌ مِّنْ رَّحْمَةِ اللهِ" يعني جنهن ماڻهوءَ ڪنهن مسلمان جي قتل ڪرڻ ۾ ڪٺي اڌ گفتي سان مدد ڪئي تہ بہ قيامت جي ڏينهن ان حال ۾ ايندو جو ان جي ٻنهي اکين جي وچ تي لکيل هوندو تہ هي الله جي رحمت کان محروم ۽ مايوس آهي. (١) يعني ان کي رب جي رحمت نصيب نہ ٿيندي.

"يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ آمَنُوْا اِذَا ضَرَبْتُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللهِ فَتَبَيَّنُوْا وَلَا تَقُوْلُوْا لِمَنْ اَلْقٰى اِلَيْكُمُ السَّلَامَ لَسْتَ مُؤْمِنًا" هن آيت جي متعلق مفسرن لکيو آهي تہ رسول الله صلیٰ الله عليہ وسلم جن حضرت غالب بن فضالہ ليثيءَ رضي الله عنہ جي اڳواڻيءَ ۾ هڪ ننڍو لشکر فدڪ جي طرف ڪافرن سان جنگ ڪرڻ جي لاءِ موڪليو جڏهن مسلمانن جو لشڪر اتي پهتو تہ اهي ڪافر ڀڄي ويا پر مرداس بن نهيڪ نالي هڪ شخص جيڪو مسلمان ٿي چڪو هو اهو ان اعتماد تي تہ مان مسلمان آهيان ۽ مون کي مسلمان ڪونہ چوندا پنهنجي ٻڪرين جي ڌڻ سان موجود رهيو جڏهن ڪافرن کي موجود نہ ڏسي مسلمانن الله اڪبر جو نعرو لڳايو تہ مرداس بن نهيڪ بہ اهوئي نعرو

(١) تفسير القاسمي ص٣٦٤ جلد٣

لڳائي جنهن جبل تي هو ان تان لهي آيو ۽ لا اله الا الله پڙهي مسلمانن کي السلام عليڪم چيائين پر ان لشڪر ۾ موجود حضرت اسامةؓ بن زيد رضي الله عنہ ان کي قتل ڪيو ۽ ان جون ٻڪريون ڪاهي مديني منوره پهچي سمورو احوال حبيب ڪريم عليہ الصلواة والسلام جن کي عرض ڪيائين. ڪين ان جو ڏاڍو ڏک ٿيو ۽ پاڻ اسامہ کي فرمايائون تہ "اوهان ڪلمہ پڙهڻ جي باوجود ان کي مال جي لالچ تي قتل ڪيو آهي." ان عرض ڪيو تہ حضور! ان ڊپ ڪان زبان سان ڪلمو پڙهيو هو دل سان نہ پڙهيو هو. پاڻ فرمايائون تہ "تو ان جي دل چيري ڏٺي هئي تہ سچو آهي يا ڪوڙو" پوءِ پاڻ اسامہ کي هي آيت پڙهي ٻڌايائون (١) جنهن ۾ الله تعالىٰ فرمايو آهي تہ "اي مومنو! جڏهن الله تعالىٰ جي واٽ ۾ جهاد وغيره جي لاءِ سفر تي نڪرو تہ جاچ ڪندا ڪيو جيستائين اوهان کي يقين سان معلوم نہ ٿئي تہ هي ڪافر آهي تيستائين ان تي نہ هٿ کڻو ۽ نہ بغير فڪر ۽ تدبر جي ڪو قدم کڻو ۽ جيڪو اوهان تي السلام عليڪم چوي ان کي ائين نہ چئو تہ تون مومن ناهين مڙئي بچاءَ ٿو وٺين، بلڪ ان جي اها ڳالهہ قبول ڪري ان سان مسلمانن وارو معاملو رکو. "تَبْتَغُوْنَ عَرَضَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا فَعِنْدَاللّٰهِ مَغَانِمُ كَثِيْرَةٌ" ان سان اوهان دنيوي حياتيءَ جو سامان طلب ٿا ڪيو ۽ هن فاني دولت جي لاءِ هڪ مومن جي ايمان واري شاهدي رد ٿا ڪيو. پوءِ الله تعالىٰ وٽ غنيمتون گهڻيون آهن. اهو اوهان کي پنهنجي خزانن مان ڏيندو. اوهان هرويرو ماڻهو نہ ماريو. حضرت اسامہ اها آيت ٻڌي حضور عليہ الصلواة والسلام جن کي پنهنجي لاءِ مغفرت طلب ڪرڻ جو عرض ڪيو. پاڻ سندس حق ۾ مغفرت جي دعا فرمايائون ۽ ٻڪريون واپس ڪرايائون ۽ ان غلطيءَ جي ڪفاري لاءِ ڪيس مومن ٻانهي جي آزاد ڪرڻ جو حڪم فرمايائون. (٢)

كَذٰلِكَ كُنْتُمْ مِّنْ قَبْلُ فَمَنَّ اللّٰهُ عَلَيْكُمْ فَتَبَيَّنُوْا" يعني اڳ ۾ اوهان بہ ائين هيئو پوءِ الله تعالىٰ اوهان تي احسان ڪيو ۽ اوهان جي زباني شاهدي قبول ڪئي وئي. ان جي ڪري هر معاملي کي چڱيءَ طرح جاچيندا ڪيو.

اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرًا" يقيناً الله تعالىٰ اوهان جيڪي عمل ڪيو ٿا انهن جي خبر رکندڙ آهي. پوءِ اوهان کي ان جي جزا ڏيندو. جيڪڏهن ڀلا عمل ڪندؤ تہ بدلو بہ ڀلو ملندو ۽ جيڪڏهن برا عمل ڪندؤ تہ سزا بہ سخت ملنديوَ.

## فائدو

امام غزاليؒ عليہ الرحمة لکيو آهي تہ: خَبِيْرُ اهو آهي جنهن کان

(١) روح البيان ص٢٦٣ ج٢ (٢) ساڳيو حوالو

باطني احوال بہ لکل نہ هجن ۽ ملڪ ۽ ملڪوت ۾ ڪا بہ شيءِ هلي يا ڪو ذرو چري يا سڪون وني تہ ان جي علم ۾ هجي. ان جي ڪري انسان کي پنهنجي قلب تي توجهہ ڪرڻ گهرجي تانتہ ان ۾ حسد، بخل، تڪبر، ٺڳي، خيانت ۽ برا فڪر نہ اچن ۽ هميشہ چڱايون سوچيندو رهي. (١)

لَا يَسْتَوِى الْقٰعِدُوْنَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ غَيْرُ اُولِى الضَّرَرِ وَالْمُجٰهِدُوْنَ

نہ ٿا برابر ٿين وهندڙ مومنن مان سواءِ تڪليف وارن جي ۽ جهاد ڪندڙ

فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ ؕ فَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجٰهِدِيْنَ

الله جي واٽ ۾ پنهنجن مالن ۽ پنهنجن جانين سان فضيلت بخشي الله جهاد ڪندڙن کي

بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ عَلَى الْقٰعِدِيْنَ دَرَجَةً ؕ وَكُلًّا وَّعَدَ اللّٰهُ

مالن پنهنجن سان ۽ جانين پنهنجين سان وهندڙن تي درجي ۾ ۽ مڙني سان وعدو ڪيو الله

الْحُسْنٰى ؕ وَفَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجٰهِدِيْنَ عَلَى الْقٰعِدِيْنَ اَجْرًا عَظِيْمًا ﴿٩٥﴾

ڀلائيءَ جو ۽ فضيلت بخشي الله جهاد ڪندڙن کي ويهندڙن تي ثواب وڏي سان

دَرَجٰتٍ مِّنْهُ وَمَغْفِرَةً وَّرَحْمَةً ؕ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ﴿٩٦﴾

درجا (ڏئي) پاڻ وٽان ۽ بخشش ۽ رحمت - ۽ آهي الله بخشيندڙ مهربان

## تفسير

هن ڪان اڳ ۾ مسلمانن کي جهاد جي ترغيب ڏئي پوءِ جهاد جا ڪجهہ احڪام ٻڌايا ويا تہ جهاد جي حالت ۾ بہ تحقيق ڪان سواءِ ڪنهن ڪلمي

(١) ساڳيو حوالو

پڙهندڙ کي قتل نہ ڪيو هاڻي هتي بہ جهاد جي متعلق ڪجهہ احڪام ۽ مجاهدن جا مرتبا بيان ڪندي ارشاد ٿيو آهي تہ "لَا يَسْتَوِي الْقٰعِدُوْنَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ غَيْرُاُولِى الضَّرَرِ وَالْمُجَاهِدُوْنَ فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ" يعني عذر ۽ مجبوريءَ کان سواءِ گهر ۾ ويهي رهندڙ، جهاد تي نہ ويندڙ ۽ پنهنجن مالن ۽ الله جي واٽ ۾ سرن جا سودا ڪري جهاد ڪندڙ برابر ناهن. حضرت ابن عباس رضي الله عنهما فرمايو آهي تہ هيءَ آيت بدر جي جنگ سان متعلق آهي ان جي ڪري ميدان ۾ نڪرڻ وارا ۽ نہ نڪرڻ وارا برابر ناهن علامہ اسماعيل حقي عليہ الرحمة لکيو آهي تہ وهو الظاهر الموافق لتاريخ النزول (١) يعني هن آيت جي نازل ٿيڻ جي تاريخ سان بہ اهو موافق آهي تہ اها بدر جي جنگ ۾ شريڪ ٿيندڙن ۽ نہ ٿيندڙن سان واسطو ٿي رکي.

"فَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجَاهِدِيْنَ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ عَلَى الْقٰعِدِيْنَ دَرَجَةً" يعني پنهنجن مالن ۽ سرن سان جهاد ڪندڙن کي الله تعالىٰ گهرن ۾ وهندڙن تي درجن ڏيڻ سان فضيلت بخشي آهي جيڪي شخص هر وقت سر تريءَ تي رکيو قربان ٿيڻ لاءِ تيار آهن انهن سان الله تعالىٰ جي قرب ۾ اهي ماڻهو مقابلو ڪيئن ڪري سگهندا؟ جيڪي آرام سان گهرن ۾ ويٺا آهن. "وَكُلًّا وَّعَدَ اللّٰهُ الْحُسْنٰى" ۽ الله تعالىٰ سيني سان ڀلائي جو وعدو ڪيو آهي. "اَلْحُسْنٰى" مان مراد جنت آهي. يعني مومنن سيني کي جنت ملندي پر سندن درجن ۾ تفاوت هوندو. "وَفَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجَاهِدِيْنَ عَلَى الْقٰعِدِيْنَ اَجْرًا عَظِيْمًا دَرَجٰتٍ مِّنْهُ وَمَغْفِرَةً وَّرَحْمَةً وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا" يعني الله تعالىٰ مجاهدن کي جهاد نہ ڪندڙن، گهرن ۾ رهندڙن تي اجر وڏي، پاڻ وٽان درجن ڏيڻ، ۽ مغفرت ۽ رحمت سان فضيلت بخشي آهي ۽ الله بخشيندڙ مهربان آهي.

## فائدو

اهي درجا جن جو ذڪر هن آيت ۾ آيو آهي تمام وڏا هوندا جو جيڪڏهن ڀلو گهوڙو هڪ درجي کان ٻئي درجي تائين ڊوڙي تہ ستر سالن ۾ مس پهچي. حديث شريف ۾ آهي تہ الله تعالىٰ پنهنجي واٽ ۾ جهاد ڪندڙن جي لاءِ سؤ درجا تيار فرمايا آهن هڪ درجي کان ٻئي درجي تائين ايترو فاصلو آهي جيترو زمين کان آسمان تائين (٢) مقصد تہ مجاهدن کي اهڙا درجا ملندا جن جو نہ اندازو لڳائي سگهجي ٿو ۽ نہ انهن جي حقيقت دنيا ۾ ذهن ۾ اچي سگهندي.

(١) روح البيان ص٢٩٦ ج٢ (٢) ساڳيو حوالو

اِنَّ الَّذِيۡنَ تَوَفّٰهُمُ الۡمَلٰٓـئِكَةُ ظَالِمِىۡٓ اَنۡفُسِهِمۡ قَالُوۡا فِيۡمَ

بيشڪ اهي ماڻهو جو روح ٽا ڪڍن انهن جو ملائڪ (ان حال ۾ جو) ظلم ڪندڙ هئا پنهنجين جانين تي، چوندن ته ڇا

كُنۡتُمۡ‌ؕ قَالُوۡا كُنَّا مُسۡتَضۡعَفِيۡنَ فِى الۡاَرۡضِ‌ؕ قَالُوۡۤا اَلَمۡ تَكُنۡ

۾ هيئو؟ چوندا ته هياسين ڪمزور زمين ۾ چوندن ته ڇا نه هئي

اَرۡضُ اللّٰهِ وَاسِعَةً فَتُهَاجِرُوۡا فِيۡهَا‌ؕ فَاُولٰٓـئِكَ مَاۡوٰٮهُمۡ جَهَـنَّمُ‌ؕ

زمين الله جي ڪشادي پوءِ هجرت ڪيو ها ان ۾ پوءِ جاءِ انهن جي جهنم آهي

وَسَآءَتۡ مَصِيۡرًا ۙ‏ ﴿۹۷﴾ اِلَّا الۡمُسۡتَضۡعَفِيۡنَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَآءِ

۽ اها بڇڙي موٽڻ جي جاءِ آهي، مگر ڪمزور مردن ۽ عورتن

وَالۡوِلۡدَانِ لَا يَسۡتَطِيۡعُوۡنَ حِيۡلَةً وَّلَا يَهۡتَدُوۡنَ سَبِيۡلًا ۙ‏ ﴿۹۸﴾

۽ ٻارن مان جي نه ٿا ڪري سگهن ڪو حيلو ۽ نه ٿا وٺي سگهن واٽ

فَاُولٰٓـئِكَ عَسَى اللّٰهُ اَنۡ يَّعۡفُوَ عَنۡهُمۡ‌ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَفُوًّا غَفُوۡرًا‏ ﴿۹۹﴾

پوءِ اهي ويجهي آهي (الله جي رحمت) جو معاف ڪري انهن کان ۽ آهي الله معاف ڪندڙ بخشيندڙ

وَمَنۡ يُّهَاجِرۡ فِىۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ يَجِدۡ فِى الۡاَرۡضِ مُرٰغَمًا كَثِيۡرًا

۽ جيڪو هجرت ڪندو الله جي واٽ ۾ ته لهندو زمين ۾ هجرت جون جايون گهڻيون ۽

وَّسَعَةً‌ ؕ وَمَنۡ يَّخۡرُجۡ مِنۡۢ بَيۡتِهٖ مُهَاجِرًا اِلَى اللّٰهِ وَرَسُوۡلِهٖ ثُمَّ

ڪشادگي ۽ جيڪو نڪري ٿو پنهنجي گهر مان هجرت ڪندڙ الله ۽ ان جي رسول ڏانهن ان کان پوءِ

يُدْرِكْهُ الْمَوْتُ فَقَدْ وَقَعَ اَجْرُهٗ عَلَى اللّٰهِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا (١٠٠) ع

پهچي ٿو ان وٽ موت پوءِ تحقيق ثابت ٿيو ثواب ان جو الله وٽ ۽ الله بخشيندڙ مهربان آهي.

## تفسير

هن کان اڳ ۾ انهن شخصن جي پلاين جو بيان هو جيڪي جهاد ۾ وڏ ۾ وڏ حصو وٺن ٿا هاڻي انهن جو بيان ڪيو ٿو وڃي، جيڪي جهاد کان رڪجي ڪافرن جي ملڪ ۾ دٻيا پيا آهن ۽ هجرت نہ ٿا ڪن فرمان آهي تہ "اِنَّ الَّذِيْنَ تَوَفّٰىهُمُ الْمَلٰٓئِكَةُ ظَالِمِيْٓ اَنْفُسِهِمْ قَالُوْا فِيْمَ كُنْتُمْ ؟ قَالُوْا كُنَّا مُسْتَضْعَفِيْنَ فِى الْاَرْضِ" يعني جن ماڻهن پاڻ تي ظلم ڪري هجرت نہ ڪئي يقينا ملائڪ انهن کي وفات ڪرائڻ وقت چوندا تہ ڇا ۾ هيئو؟ عرض ڪندا تہ اسين زمين ۾ ڪمزور هياسين، ان جي ڪري ڪيڏانهن ڪو نہ نڪتاسين، اصل ڳالهہ هيئن هئي تہ جڏهن حضور پرنور ﷺ جن مڪي مان هجرت ڪري مديني منوره ۾ تشريف فرما ٿيا تہ ڪي ڪي مسلمان پنهنجن عزيزن، قريبن وغيره جي ڪري مڪي ۾ ئي رهي پيا هئا، هتي انهن جو بيان ٿي رهيو آهي " قَالُوْٓا اَلَمْ تَكُنْ اَرْضُ اللّٰهِ وَاسِعَةً فَتُهَاجِرُوْا فِيْهَا" يعني ملائڪ سندن (ان ڳالهہ جي تہ اسين زمين ۾ ڪمزور هياسون) جواب ۾ چوندن تہ ڇا الله تعالىٰ جي زمين ڪشادي نہ هئي جو ان ۾ هجرت ڪري وڃو ها ۽ اتي وڃي الله تعالىٰ جا فرائض ادا ڪيو ها، ان چوڻ تي اهي لاجواب ٿي ويندا، ۽ سندن قصور ثابت ٿي ويندو. "فَاُولٰٓئِكَ مَاْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ ۭ وَسَاۗءَتْ مَصِيْرًا" يعني انهن جي جرم ۽ قصور ثابت ٿيڻ جي ڪري سندن جاءِ جهنم آهي ۽ اها موٽڻ جي لاءِ بڇڙي جاءِ آهي " اِلَّا الْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَاۗءِ " وَالْوِلْدَانِ لَا يَسْتَطِيْعُوْنَ حِيْلَةً وَّلَا يَهْتَدُوْنَ سَبِيْلًا" ها جيڪي مرد ۽ عورتون ۽ ٻار ضعيف هوندا جيڪي نہ ڪا تدبير ۽ حيلو ٿا هلائي سگهن ۽ نہ واٽ جا سونهان ٿي سگهن ٿا" فَاُولٰٓئِكَ عَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّعْفُوَ عَنْهُمْ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَفُوًّا غَفُوْرًا" پوءِ انهن جي لاءِ اميد آهي تہ الله تعالىٰ انهن کي معاف ڪري ڇڏي ۽ الله معاف ڪندڙ، مهربان آهي، جو انهن جي مجبوري ۽ صحيح عذر کي ڄاڻي ٿو تہ اهي واقعي بي ميار ۽ بيوس

آهن.
"وَمَنْ يُّهَاجِرْ فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ يَجِدْ فِى الْاَرْضِ مُرَاغَمًا كَثِيْرًا وَّسَعَةً" يعني جيڪو الله جي واٽ ۾ ان جي دين جي لاءِ هجرت ڪندو ته اهو زمين ۾ گهڻي جاءِ ۽ دين جي اظهار لاءِ گهڻي ڪشادگي لهندو ۽ ان سفر ۽ هجرت ۾ ڪاميابي ماڻيندو، پلا جيڪڏهن اتفاقًا اها ڪاميابي نه به حاصل ڪري سگهيو تڏهن به آخرت جي ڪاميابي ان جي لاءِ يقيني آهي جنهن ۾ ڪنهن به قسم جو شڪ يا تردد ناهي، ڇو ته اسان جو قانون آهي ته "وَمَنْ يَّخْرُجْ مِنْۢ بَيْتِهٖ مُهَاجِرًا اِلَى اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ثُمَّ يُدْرِكْهُ الْمَوْتُ فَقَدْ وَقَعَ اَجْرُهٗ عَلَى اللّٰهِ ۭوَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا" جيڪو پنهنجي گهر مان الله ۽ ان جي رسول (ﷺ) ڏانهن هجرت ڪري نڪري ٿو ۽ ان مقصد حاصل ڪرڻ کان اڳ ۾ ان کي موت اچي ٿو پهچي ته به يقينا الله تعالىٰ وٽ ان جو اجر ثابت آهي، ڪٽي اها منزل ماڻي به نه سگهيو آهي پر نيڪ ارادي ۽ نيت جي ڪري اهو درجو ڪيس عطا ڪيو ويندو ۽ الله بخش ڪندڙ،مهربان آهي، جو ڪنهن به ڪم کي چڱيءَ نيت سان شروع ڪرڻ جي ڪري ئي ان جو پورو پورو ۽ سهڻو ثواب عنايت فرمائي ٿو.

## فائدو

هجرت، هجران ۽ هجر جي معنيٰ آهي ڪنهن شيءِ کان بيزار ٿي ان کي ڇڏي ڏيڻ، عام محاوري ۾ وطن ڇڏڻ کي ۽ شرعي اصطلاح ۾ ڪفر جي ملڪ کي ڇڏي اسلامي ملڪ ڏي وڃڻ کي هجرت چوندا آهن. (١)

هجرت جو حڪم ۽ مهاجر جي لاءِ درجو ۽ ثواب ۽ هجرت نه ڪندڙ جي لاءِ عذاب جو بيان قرآن ڪريم جي ڪيترين آيتن ۾ آيل آهي، هجرت ڪرڻ ۾ ظاهري ۽ باطني بيشمار برڪتون آهن، هجرت ڪندڙ کي حلال رزق، سٺي رهائش، مخالفن تي غلبو، عزت، شرف ۽ شان حاصل ٿيندو آهي، هجرت جي شروعات ۾ ڪجهه وقت تڪليف ۽ مشقت برداشت ڪرڻي پوي ٿي ان کان پوءِ سڪون ئي سڪون هوندو آهي.

## فائدو

مفسر قرآن علامه قرطبيءَ هڪ قول هي لکيو آهي ته مٿين آيت

(١) معارف القرآن صـ ٥٢٥ ج١

حضرت جندع بن ضمره رضي الله عنه جي متعلق نازل ٿي هئي، جيڪو مڪي پاڪ ۾ ضعيف هو پر جڏهن هجرت جي متعلق رباني فرمان ٻڌائين ته بستري تي پاڻ ڪٽائي مديني منوره لاءِ روانو ٿيو ۽ مڪي جي ويجهو حرم جي حدود کان ٻاهر حِلّ ۾ مقام تنعيم ۾ سندس وفات ٿي (١) چاڻڻ گهرجي ته پڪي مومن، مسلمان کي ان ڌرتيءَ کان به هجرت ڪرڻ ضروري آهي، جنهن ۾ اصحابن، امامن، سلف صالحن کي گاريون ڏنيون وڃن ۽ هي انهن کي روڪي نه ٿو سگهي يا جتي حرام غالب آهي يا بدني ايذاء ملي رهيا هجن يا بيمار ٿيڻ، يا مال جي ڦرجڻ،لٽجڻ، وغيره جو انديشو آهي ته اتاهين به نڪرڻ ضروري آهي ۽ اهو هجرت کي لازم ڪندڙ اسباب مان آهي. (٢)

وَاِذَا ضَرَبْتُمْ فِى الْاَرْضِ فَلَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَقْصُرُوْا

۽ جڏهن سفر ڪيو زمين ۾ پوءِ ناهي اوهان تي ڪو گناهه جوگهٽ ڪيو

مِنَ الصَّلٰوةِ ۖ اِنْ خِفْتُمْ اَنْ يَّفْتِنَكُمُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ۭ اِنَّ الْكٰفِرِيْنَ

نماز مان جيڪڏهن ڊڄوٿا ته تڪليف ۾ وجهندا اوهان کي ڪافر بيشڪ ڪافر آهن

كَانُوْا لَكُمْ عَدُوًّا مُّبِيْنًا ﴿١٠١﴾ وَاِذَا كُنْتَ فِيْهِمْ فَاَقَمْتَ لَهُمُ

اوهان جا دشمن پڌرا ۽ جڏهن هجين انهن ۾ پوءِ قائم ڪرين اتي

الصَّلٰوةَ فَلْتَقُمْ طَاۗىِٕفَةٌ مِّنْهُمْ مَّعَكَ وَلْيَاْخُذُوْٓا اَسْلِحَتَهُمْ ۣ

نماز ته پوءِ گهرجي ته بيهي هڪ جماعت انهن مان توسان گڏ ۽ گهرجي ته وٺن هٿيار پنهنجا

فَاِذَا سَجَدُوْا فَلْيَكُوْنُوْا مِنْ وَّرَاۗىِٕكُمْ ۠ وَلْتَاْتِ طَاۗىِٕفَةٌ اُخْرٰى

پوءِ جڏهن سجدو ڪن ته گهرجي ته هجن پويان اوهان جي ۽ گهرجي ته اچي جماعت ٻي

(١) تفسير القرطبي ص٣٤٩ ج٥ (٢) تفسير القرطبي ص٣٤٩ ج٥

لَمْ يُصَلُّوْا فَلْيُصَلُّوْا مَعَكَ وَلْيَاْخُذُوْا حِذْرَهُمْ وَاَسْلِحَتَهُمْ ۚ

جن نماز نہ پڑهي آهي پوءِ گهرجي تہ نماز پڙهن توسان گڏ ۽ گهرجي تہ وٺن بچاءُ پنهنجو ۽ هٿيار پنهنجا

وَدَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَوْ تَغْفُلُوْنَ عَنْ اَسْلِحَتِكُمْ وَاَمْتِعَتِكُمْ

پسند ٿا ڪن ڪافر تہ جيڪڏهن غافل رهو هٿيارن پنهنجن کان ۽ سامانن پنهنجن کان

فَيَمِيْلُوْنَ عَلَيْكُمْ مَّيْلَةً وَّاحِدَةً ؕ وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ اِنْ كَانَ

پوءِ حملو ڪن اوهان تي حملو ئي هڪڙو ۽ ناهي ڪو گناهہ اوهان تي جيڪڏهن آهي

بِكُمْ اَذًى مِّنْ مَّطَرٍ اَوْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى اَنْ تَضَعُوْٓا اَسْلِحَتَكُمْ ۚ

اوهان کي تڪليف مينهن جي ڪري يا آهيو بيمار تہ رکو هٿيار پنهنجا

وَخُذُوْا حِذْرَكُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ اَعَدَّ لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا ﴿١٠٢﴾ فَاِذَا

۽ وٺو بچاءُ پنهنجو بيشڪ الله تيار ڪيو ڪافرن جي لاءِ عذاب خوار ڪندڙ پوءِ

قَضَيْتُمُ الصَّلٰوةَ فَاذْكُرُوا اللّٰهَ قِيَامًا وَّقُعُوْدًا وَّعَلٰى جُنُوْبِكُمْ ۚ

جڏهن پوري ڪيو نماز تہ پوءِ ياد ڪيو الله کي بيٺي ۽ ويٺي ۽ پنهنجن پاسن پر

فَاِذَا اطْمَاْنَنْتُمْ فَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ ۚ اِنَّ الصَّلٰوةَ كَانَتْ عَلَى

پوءِ جڏهن تسلي ڪيو تہ پوءِ قائم ڪيو نماز بيشڪ نماز آهي،

الْمُؤْمِنِيْنَ كِتٰبًا مَّوْقُوْتًا ﴿١٠٣﴾ وَلَا تَهِنُوْا فِي ابْتِغَآءِ الْقَوْمِ ؕ اِنْ

مومنن تي فرض مقرر ۽ نہ سستي ڪيو قوم جي پويان پوڻ ۾ جيڪڏهن

تَكُوْنُوْا تَاْلَمُوْنَ فَاِنَّهُمْ يَاْلَمُوْنَ كَمَا تَاْلَمُوْنَ ۚ وَتَرْجُوْنَ مِنَ اللّٰهِ مَا

اوهين ايذائجو ٿا تہ پوءِ بيشڪ اهي بہ ايذائجن ٿا جيئن اوهان ايذائجو ٿا ۽ اميد رکو ٿا الله ۾ اها

لَا يَرْجُوْنَ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ﴿١٠٤﴾ ع

جو نہ ٿا اميد رکن اهي ۽ آهي الله ڄاڻندڙ حڪمت وارو.

## تفسير

هن ڪان اڳ ۾ جهاد ۽ هجرت جو ذڪر هو جڏهن تہ انهن ٻنهي ڪمن جي لاءِ غالبا سفر ڪرڻو پوندو آهي ۽ ان سفر ۾ مخالف جي حملي جو انديشو بہ هوندو آهي ان جي ڪري امت مسلمہ کي سفر ۾ خوف جي حالات ۾ جيڪي رعايتون ۽ سهوليتون ڏنيون ويون آهن هتي انهن جو ذڪر ڪندي ٻڌايو ٿو وڃي تہ "وَاِذَا ضَرَبْتُمْ فِي الْاَرْضِ فَلَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَقْصُرُوْا مِنَ الصَّلٰوةِ اِنْ خِفْتُمْ اَنْ يَّفْتِنَكُمُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا اِنَّ الْكٰفِرِيْنَ كَانُوْا لَكُمْ عَدُوًّا مُّبِيْنًا" يعني جڏهن اوهان جهاد وغيره جي لاءِ زمين ۾ سفر ڪيو ۽ ڪافرن ڪان جيڪي اوهان جا ڇٽا دشمن آهن حملي جو خطرو سمجهو تہ پوءِ اوهان تي ان ۾ ڪو بہ گناهہ ناهي جو نماز ۾ قصر ڪيو، يعني چئن رڪعتن واري فرض کي ٻہ رڪعتون ڪري پڙهو.

## سفر ۾ نماز قصر ڪرڻ جي احڪام جو بيان

ڄاڻڻ گهرجي تہ جيڪڏهن ڪو ماڻهو ٽن منزلن جي سفر جو ارادو ڪري گهر ڪان نڪري ٿو تہ پنهنجي شهر جي ايريا ۽ آبادي نڪرڻ ڪان پوءِ ان کي چئن رڪعتن وارو فرض ٻہ رڪعتون ڪري پڙهڻو آهي ۽ جڏهن پنهنجي منزل مقصود تي پهچي پوءِ جيڪڏهن اتي پندرهن (١٥) ڏينهن جي رهڻ جو ارادو نہ اٿس تہ اتي رهندي بہ ٻہ رڪعتون پڙهندو رهي ۽ ان کي عربي زبان ۾ قصر سڏيو ويندو آهي ۽ جيڪڏهن اتي پندرهن ڏينهن يا ان ڪان وڌيڪ رهڻ جو ارادو رکي ٿو تہ پوءِ چار رڪعتون پوريون

ڪري پڙهندو ۽ ٽن رڪعتن واري فرض يا وتر يا ٻن رڪعتن واري فرض ۽ سنتن ۾ گهٽتائي نہ ڪندو.

## مسئلو

آيت سڳوريءَ ۾ بيان ٿيو تہ جيڪڏهن اوهان کي دشمن جو خوف آهي تہ قصر ڪيو، اهو ان وقت هيو پر جيڪڏهن خوف ناهي تہ بہ قصر جو حڪم قائم آهي،جو تہ حضور ﷺ جن پنهنجن سينـي سفرن ۾ قصر ڪيو آهي، جيئن علامہ قرطبيءَ لکيو آهي تہ! وقصر رسول الله ﷺ من اربع الى اثنين الاالمغرب في اسفاره كلها آمنا لا يخاف الاالله تعالىٰ (١) امام احمد حضرت يعليٰ بن اميہ رضي الله عنه کان روايت آندي آهي تہ مون حضرت عمر بن خطاب رضي الله عنہ کان پڇيو تہ قصر تڏهن ڪجي جڏهن خوف هجي پر هاڻي تہ اسين امن ۾ آهيون، حضرت عمر رضي الله عنہ فرمايو تہ مون کي بہ اها ڳالهہ ذهن ۾ آئي هئي ۽ مون اها ڳالهہ رسول الله ﷺ جن کان پڇي هئي، پوءِ پاڻ فرمايائون تہ: "صَدَقَةٌ تَصَدَّقَ اللّٰهُ بِهَا عَلَيْكُمْ فَاقْبَلُوْا صَدَقَتَهٗ" (٢) يعني سفر ۾ قصر ڪرڻ صدقو آهي، جنهن سان الله تعالىٰ اوهان تي مهرباني ڪئي آهي پوءِ ان جي صدقي کي قبول ڪيو.

"وَاِذَا كُنْتَ فِيْهِمْ فَاَقَمْتَ لَهُمُ الصَّلٰوةَ فَلْتَقُمْ طَآئِفَةٌ مِّنْهُمْ مَّعَكَ" کان "وَاَسْلِحَتَهُمْ" تائين هنن لفظن ۾ خوف جي حالت ۾ نماز پڙهڻ جو بيان آهي. يعني اي (حبيب عليک الصلواة والسلام) جڏهن اوهان انهن مجاهدن اصحابن سڳورن رضي الله عنهم ۾ تشريف فرماهجو ۽ انهن کي جنگ جي حالت ۾ نماز پڙهائڻ جو ارادو فرمايو حالانڪہ دشمن جي حملي ڪرڻ جو سخت خطرو آهي جو متان اوهان کي نماز ۾ مشغول ڏسي حملو ڪري ڏي تہ پوءِ انهن مجاهدن کي ٻن ٽولن ۾ ورهايو هڪ ٽولو انهن مان اوهان سان گڏ بيهي نماز پڙهي ۽ ٻيو دشمن جي مقابلي ۾ بيهي ۽ ٻئي ٽولا هٿيار قابو رکن پوءِ جڏهن اهي اوهان سان گڏ بيهڻ وارا چئن رڪعتن واريءَ نماز ۾ ٻيءَ رڪعت جو آخري يا ٻن رڪعتن واريءَ ۾ پهرين رڪعت جو آخري سجدو ڪن تہ اهي حفاظت لاءِ اوهان جي پويان هليا وڃن ۽ جيڪي پهريان دشمن جي مقابلي ۾ بيٺل هئا، اهي اچي اوهان سان رهيل رڪعتون ۽ باقي نماز پڙهي پوري ڪن ۽ پنهنجو دفاع ۽ هٿيار پاڻ سان گڏ رکن، هي حڪم صرف حضور عليه الصلواة والسلام جن جي

(١) تفسير القرطبي ص٣٥٣ ج٥ (٢) تفسير القاسمي ص٤١٥ ج٣

جهاد ڪرڻ وقت نہ هو پر اهو هميشہ لاءِ آهي ۽ اهو لشڪر جو ورهائجي ان نموني نماز پڙهڻ بہ تڏهن آهي جڏهن سيئي لشڪر ان هڪ امام جي پويان نماز پڙهڻ جي خواهش ۽ شوق رکن جيئن صحابہ ڪرام حضور عليہ الصلواة والسلام جن جي پويان نماز پڙهڻ جو شوق رکندا هئا، پر جيڪڏهن ائين ناهي تہ پوءِ لشڪر جو هڪ حصو پاڻ مان هڪ کي پيش امام بنائي پوري نماز ادا ڪري ۽ ٻيو حصو دشمن جي مقابلي ۾ رهي جڏهن اهي پڙهي پوري ڪن تہ پوءِ نماز پڙهڻ وارا دشمن جي مقابلي ۾ وڃي بيهن ۽ اتي بيٺل اچي پاڻ مان هڪ کي امام بنائي نماز ادا ڪن. پر اهو حڪم بہ تڏهن آهي جڏهن اڃان جنگ جي تياري آهي صفون بيهي ويون آهن، پر جنگ شروع نہ ٿي آهي، پلا جيڪڏهن جنگ شروع ٿي وئي ويڙهہ هلي رهي آهي تہ ان وقت ان طريقي سان جماعت جو اهتمام ضروري ناهي هر هڪ مجاهد جيئن سهوليت سمجهي تيئن نماز جو فرض ادا ڪري وٺي تانجو جيڪڏهن رڪوع ۽ سجدو نہ ٿو ڪري سگهي تہ اشارن سان پڙهي وٺي (١)

"وَدَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَوْ تَغْفُلُوْنَ عَنْ اَسْلِحَتِكُمْ وَاَمْتِعَتِكُمْ فَيَمِيْلُوْنَ عَلَيْكُمْ مَّيْلَةً وَّاحِدَةً" يعني ڪافرن جي اها خواهش آهي تہ جڏهن نماز ۾ پورو پورو توجهہ ڏيڻ جي ڪري اوهان پنهنجن هٿيارن ۽ سامانن کان غافل هجو تہ اوهان تي هڪڙو اهڙو سخت حملو ڪن جو اوهان سجدي ۾ ئي شهيد ڪيا وڃو ۽ مٿو مٿي ڪٽي نہ سگهو، پر اللہ تعاليٰ اوهان جي لاءِ خوف جي حالت ۾ ان طريقي سان نماز ادا ڪرڻ جو حڪم جاري ڪري انهن جي اها خواهش پوري ڪرڻ نہ ڏني، "وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ اِنْ كَانَ بِكُمْ اَذًى مِّنْ مَّطَرٍ اَوْ كُنْتُمْ مَّرْضٰۤى اَنْ تَضَعُوْۤا اَسْلِحَتَكُمْ" هي ٻيو نئون حڪم آهي، جنهن ۾ انهن غازين ۽ مجاهدن لاءِ آساني ڪئي وئي آهي تہ: جيڪڏهن اوهان کي جنگ جي حالت ۾ مينهن جي تڪليف اچي وڃي يا اوهان بيمار آهيو ۽ جسم تي هٿيار ڪٽي نہ ٿا سگهو تہ اهي ڪولي لاهي رکڻ ۾ اوهان تي ڪو ڏوهہ ناهي حضرت عبدالرحمن بن عوف رضي اللہ عنہ فرمايو آهي تہ جڏهن خوف جي حالت واري نماز پڙهي ٿي وئي تہ مان بيمار هوس ۽ منهنجي ڪري اها آيت نازل ٿي هئي (٢)

"وَخُذُوْا حِذْرَكُمْ" يعني ان حالت ۾ پنهنجو دفاع پاڻ سان رکو، ڇو تہ جنگ نيٺ جنگ آهي، بي توجهيءَ ڪرڻ سان خطرناڪ نتيجا نڪري سگهن ٿا "اِنَّ اللّٰهَ اَعَدَّ لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا" يقينا اللہ تعاليٰ ڪافرن جي لاءِ خوار ڪندڙ عذاب تيار

(١) ضياءُ القرآن ص٣٨٤ ج١ (٢) نعيمي ص٣٨٠ ج٥

ڪري ڇڏيو آهي جو دنيا ۾ اوهان جي هٿان قتل ڪيا ٿا وڃن ۽ آخرت ۾ ڪين سخت عذاب ۾ رکيو ويندو، پر مومنن تي الله تعالىٰ جا وڏا احسان آهن ۽ اهو انهن تي نهايت ئي رحم ڪندڙ ۽ مهربان آهي.

## فائدو

الله تعالىٰ پنهنجن پيارن ٻانهن جي لاءِ پنهنجي قانون ۾ تبديلي آڻيندو آهي ڏسو خوف جي حالت ۾ نماز ادا ڪرڻ جي لاءِ نماز ۾ هلڻ ۽ بيت الله شريف ڪان منهن ڦيرائڻ جي به موڪل ڏئي ڇڏيائين ۽ اهو به ثابت ٿيو ته اصحاب ڪرام رضي الله عنهم اسان جا محسن ۽ ڪرم فرما آهن،جو اهو حڪم اول انهن جي ڪري نازل ٿيو هو پوءِ اسان تائين پهتو ۽ مٿي ذڪر ڪيل لفظ "لَوْ تَغْفُلُوْنَ عَنْ اَسْلِحَتِكُمْ وَاَمْتِعَتِكُمْ" مان ثابت ٿيو ته اصحابي سڳورا رضي الله عنهم نماز ۾ اهڙا ته محو ۽ احسان جي مٿاهين مقام تي فائز هوندا هئا جو پنهنجن سامانن ۽ هٿيارن جي به خبر نه رهندي هُيَن پر افسوس انهن ماڻهن جو آهي جيڪي يا ته نماز صفا پڙهن ئي ڪو نه ٿا يا پڙهن ٿا ته اهڙي بي توجهيءَ ۽ غفلت سان جو خدا تعالىٰ پناهه ۾ رکي، مومن کي حقيقي منعم ۽ مالڪ جي حڪم کي دل ۽ جان سان قبول ڪري محبت ۽ پيار واري نماز پڙهڻ گهرجي، شال رب ڪريم سڀني مسلمانن کي اها توفيق عطا ڪري، آمين ثم آمين يا رب العالمين

" فَاِذَا قَضَيْتُمُ الصَّلٰوةَ فَاذْكُرُوا اللّٰهَ قِيَامًا وَّقُعُوْدًا وَّعَلٰى جُنُوْبِكُمْ " يعني خوف جي حالت ۾ جڏهن سڪون ۽ اطمينان سان نماز ادا نه ٿي ڪري سگهجي ته پوءِ بيٺي، ويٺي ۽ پنهنجن پاسن پر ليٽڻ جي حالتن ۾ به الله تعالىٰ جو ذڪر ڪندا رهو، يعني هر حال ۾ ذڪر تي هميشگي ڪندا ڪيو، جيئن ابو داؤد شريف ۾ مومنن جي ماءُ سيده عائشه صديقه رضي الله عنها وعن والديها کان روايت آهي ته "كَانَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يَذْكُرُ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ اَحْيَانِهٖ" يعني رسول الله ﷺ جن پنهنجي سڀني وقتن ۾ الله تعالىٰ جو ذڪر ڪندا هئا، علامه ثناءالله پاني پتي عليه الرحمة هن حديث مبارڪ کي ذڪر ڪرڻ کان پوءِ لکيو آهي ته: والظاهر ان المراد بالآية والحديث دوام الحضور بالقلب اذ لايتصوردوام الذكر باللسان (١) يعني هيءَ ڳالهه ظاهر آهي ته آيت ۽ حديث پاڪ مان مراد هميشه وارو قلبي حضور آهي،ڇو ته زبان سان ذڪر تي هميشگي ڪرڻ جو

(١) تفسير مظهري ص٤٢١ ج٢

تصور بہ نہ ٿو ڪري سگهجي. علامہ محمد بن احمد انصاري لکيو آهي تہ:اي اذ افرغتم من الصلواة فاذكروالله بالقلب واللسان(١) يعني جڏهن خوف جي نماز کان فارغ ٿيو تہ الله تعاليٰ کي دل ۽ زبان سان ياد ڪيو، "فَإِذَا اطْمَأْنَنْتُمْ فَأَقِيمُوا الصَّلٰوةَ" يعني جڏهن اوهان جا قلب خوف ۽ ڊپ لهڻ جي ڪري سڪون ۽ اطمينان وارا ٿين تہ پوءِ نماز ناهي پڙهو نماز جا ارڪان ۽ شرائط پورا پورا ادا ڪيو، پوءِ خوف جي حالت وارو معاملو نہ رکو.

إِنَّ الصَّلٰوةَ كَانَتْ عَلَى الْمُؤْمِنِينَ كِتَابًا مَّوْقُوتًا" مقصد تہ نماز مومنن تي فرض آهي جنهن جو وقت مقرر ڪيل آهي. "كِتَابًا" مان ثابت ٿيو تہ نماز ۾ پنهنجي راءِ نہ هلائي ويندي جو دل چوي تہ پڙهي نہ تہ نهيو ۽ "مَّوْقُوتًا" مان ثابت ٿيو تہ ان جا وقت بہ الله تعاليٰ جي طرفان مقرر ڪيل آهن هر هڪ نماز ان مقرر ڪيل وقت تي پڙهڻ ضروري آهي، هڪ ئي وقت ۾ ٻہ ٻہ نمازون گڏي نہ پڙهجن حضرت ابن عباس، مجاهد، سالم بن عبدالله، علي بن الحسين،محمد بن علي، حسن بصري، مقاتل، سدي ۽ عطيہ عوفي رضي الله عنهم سڀني اها مراد ورتي آهي (٢) المراغيءَ لکيو آهي تہ: اي ان الصلواة كانت فى حكم الله فرضا مؤكدا في اوقات محدودة لا بد من ادائها فيها بقدرالامكان (٣) يعني نماز الله تعاليٰ جي حڪم مطابق تاڪيدي فرض آهي جنهن جا وقت مقرر آهن جو حتى الامكان انهن وقتن ۾ ئي ان جو ادا ڪرڻ ضروري آهي"وَلَا تَهِنُوا فِي ابْتِغَاءِ الْقَوْمِ إِنْ تَكُونُوا تَأْلَمُونَ فَإِنَّهُمْ يَأْلَمُونَ كَمَا تَأْلَمُونَ وَتَرْجُونَ مِنَ اللَّهِ مَا لَا يَرْجُونَ وَكَانَ اللَّهُ عَلِيمًا حَكِيمًا" قرطبيءَ لکيو آهي تہ: جڏهن حضور ﷺ جن احد جي جنگ کان پوءِ مسلمانن کي ڪافرن جي پيرن جا نشان ڏسڻ لاءِ فرمايو تہ ڏسو تہ ڪيڏي ويا پرانهن کي جيئن تہ جنگ ۾ زخم ٿيل هئا ۽ هلڻ ۾ تڪليف محسوس ڪندي سستي ڏيکاريائون، تڏهن الله تعاليٰ فرمايو (۴) " ۽ ڪافر قوم جي جاچ ڪرڻ ۾ سست نہ ٿيو جيڪڏهن اوهان جنگ ۾ ايذائجو ٿا تہ اهي بہ ايذائجن ٿا حالانڪ اوهان کي الله تعاليٰ وٽان انعام، اڪرام ۽ ان جي رضا حاصل ڪرڻ جي اها اميد آهي جيڪا انهن ڪافرن کي قطعي ناهي اهي باطل جي لاءِ سر ڌڙ جي بازي لڳائن ٿا اوهان تہ حق وارا آهيو، بلڪل سستي نہ ڪيو ڇو تہ اوهان جي

(١) تفسير القرطبي ص ٣٧٢ ج٥ (٢) تفسير ابن كثير ص٥٥٠ ج١
(٣) المراغي ص (۴) القرطبي ص٣٧۴ جلد٥

اڳيان نهايت اعليٰ ۽ پاڪ مقصد آهي الله تعاليٰ اوهان جي عملن ۽ دلين جي رازن کي ڄاڻندڙ آهي ۽ جنهن شيءِ جو امر ڪري ٿو يا جنهن ڪان جهلي ٿو ان ۾ سندس ڪيترين حڪمتون آهن،جو ته حڪمت وارو آهي.

## فائدو

هر نماز جو وقت مقرر آهي، ان ئي وقت ۾ پڙهڻ ضروري آهي ڏسو خوف جي حالت ۾ نماز جو ذڪر ڪندي به اللّٰدتعاليٰ فرمايو ته جهڙي صورت ممڪن ٿئي ان مطابق نماز پڙهو پر ائين حڪم ڪو نه ڏيو ته جنگ ڪري پوءِ سيئي يا به ٽي نمازون گڏي پڙهجو خيال ۾ رهي ته پنج فرض نمازون ٻپهري، ٽپهري، سانجهي،سومهڻي، فجر ۽ ٽي واجب نمازون وتر، عيدالفطر، عيدالاضحيٰ ۽ چار نفلي نمازون، تهجد، اشراق، ضحيٰ ۽اوابين، سيني جا وقت مقرر ٿيل آهن ۽ وقت وري ٽي قسم آهن ١-هڪ جائز ٢- ٻيو مستحب ٣- ٽيون مڪروه فجر جي نماز جو وقت باڪ ڦٽڻ ڪان سج ايرڻ تائين ۽ ٻپهريءَ جو وقت سج لڙي وڃڻ ڪانوٹي هر شيءِ جو پاڇو اصلي پاڇي ڪان سواءِ ٻه پاڇاٿيڻ تائين ۽ ٽپهريءَ جو وقت ٻپهريءَ جي وقت ختم ٿيڻ ڪانوٹي سج لهڻ تائين ۽ سانجهيءَ جو وقت شفق (سج لهڻ واريءَ ڳاڙهاڻ ڪان پوءِ جيڪا اڇاڻ ٿيندي آهي ان) جي لهڻ تائين ۽ سومهاڻيءَ جو وقت سانجهيءَ جي وقت ختم ٿيڻ ڪان وٺي باڪ ڦٽڻ تائين آهي، وتر جو وقت ساڳيو سومهاڻيءَ نماز وارو آهي، عيدن ۽ اشراق جو وقت سج ايرڻ ڪان پوءِ آهي ۽ ضحيٰ جو وقت ڏينهن جي چوٿين حصي ڪان وٺي پوري منجهند ٿيڻ تائين آهي، تهجد جو وقت سومهاڻي نماز پڙهي ٿوري ننڊ ڪري اٿڻ ڪان وٺي فجر جي وقت تائين آهي (١)

اِنَّآ اَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ لِتَحْكُمَ بَيْنَ النَّاسِ بِمَآ

بيشڪ لاٿوسون تو ڏانهن ڪتاب حق سان تانت فيصلو ڪرين ماڻهن ۾ ان مطابق

اَرٰىكَ اللّٰهُ ۭ وَلَا تَكُنْ لِّلْخَآئِنِيْنَ خَصِيْمًا ﴿١٠٥﴾ وَّاسْتَغْفِرِ اللّٰهَ ۭ

جو ڏيکاريو توکي الله ۽ نه هج تون خيانت ڪندڙن جي لاءِ جهڳڙو ڪندڙ ۽ بخشش گهر الله ڪان

(١) تفسير نعيمي ص٣٩٠ ج٥

إِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ﴿١٠٦﴾ وَلَا تُجَادِلْ عَنِ الَّذِيْنَ يَخْتَانُوْنَ

بيشڪ الله آهي بخشيندڙ مهربان ۽ نہ جهڳڙو ڪر انهن جي طرفان جو خيانت ڪرڻ وارا آهن پنهنجن

اَنْفُسَهُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ كَانَ خَوَّانًا اَثِيْمًا ﴿١٠٧﴾ يَّسْتَخْفُوْنَ

نفسن کي بيشڪ الله نہ ٿو محبت رکي ان سان جو آهي خيانت ڪندڙ گنهگار لڪ ڪن ٿا

مِنَ النَّاسِ وَلَا يَسْتَخْفُوْنَ مِنَ اللّٰهِ وَهُوَ مَعَهُمْ اِذْ يُبَيِّتُوْنَ مَا لَا

ماڻهن کان ۽ نہ لڪ ڪري سگهندا الله کان ۽ اهو انهن سان گڏ آهي جڏهن رات جو اها صلاح ٿا ڪن جو نہ

يَرْضٰى مِنَ الْقَوْلِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ بِمَا يَعْمَلُوْنَ مُحِيْطًا ﴿١٠٨﴾

ٿو راضي ٿئي ان ڳالھ مان ۽ آهي الله ان کي جو ڪن ٿا گهيرو ڪندڙ

## تفسير

هن کان اڳ ۾ ڪافرن سان جهاد ڪرڻ ۽ جهاد ڪندي هٿيارن ۽ سامان جي سنڀالڻ ۽ جهاد ڪندي نماز جو وقت ٿي وڃي تہ جماعت سان پڙهڻ جي طريقي جو ذڪر ڪيو ويو ۽ هاڻي انهن ڪافرن جي فيصلي ڪرڻ جي متعلق ارشاد ڪندي هدايو ٿو وڃي تہ "اِنَّآ اَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ لِتَحْكُمَ بَيْنَ النَّاسِ بِمَآ اَرٰىكَ اللّٰهُ" يعني اي (محبوب عليڪ الصلواة والسلام) اسان اوهان ڏانهن قرآن ڪريم حق ۽ سچ سان نازل فرمايو آهي، جنهن جو اسان جي طرفان نازل ڪرڻ بہ حق ۽ جبريل عليه السلام جو کڻي اچڻ بہ حق تہ اوهان جي طرفان وٺڻ بہ حق، تانتہ ماڻهن ۾ ان مطابق فيصلا ڪيو جيئن الله تعالىٰ اوهان کي ڏيکاريو آهي.

# شان نزول

هن آيت جي شان نزول جي متعلق مختلف روايتون آهن جن مان هڪ هيءَ به آهي ته هڪ شخص بشير نالي بني ابيرق خاندان مان هو جنهن کي طعمه به سڏيندا هئا نهايت منافق، چور، چالباز ۽ مڪار هو، سندس ڏنڌو ئي خيانت ڪرڻ هو. هڪ رات پنهنجي پاڙيسريءَ حضرت قتاده بن نعمان رضي الله عنه جي گهر ۾ گهڙي ان جو هڪ ٿيلو چوري ڪيائين جنهن ۾ زرهه سان گڏ اٽو به پيل هو جيڪو ٿيلهي ڦاٽل هجڻ جي ڪري، هلندي ان مان وهندو ٿي ويو، طعمه اهو ٿيلو هڪ يهوديءَ جي گهر امانت طور رکي موٽي آيو، صبح جوان ٿيلهي جي جاچ ڪيائون ۽ طعمه ۾ شڪ پيو پڇا ڪيائونس ته قسم کڻي چوڻ لڳو ته "نه مون ٿيلهو ڪنيو آهي نه مونکي ان جي خبر آهي" حضرت قتاده ۽ سندس گهر ۾ رهڻ وارن ان ڪرنڊڙ اٽي جي ذريعي چور جا پير ڪنيا هلندي هلندي ان يهوديءَ جي گهر پهتا جڏهن جاچ ڪرڻ سان اهو ٿيلهو اتائين مليو ته يهوديءَ کي گرفتار ڪيائون ان ٻڌايو ته اهو ٿيلهو طعمه مون وٽ امانت طور رکي ويو آهي ۽ ٻين يهودين به اها شاهدي ڏني جڏهن اهو فيصلو حضور پرنور عليه الصلواة والسلام جن جي خدمت ۾ آندو ويو ته طعمه جي سيني مٽن، مائٽن ان جي پاران ڳالهائيندي يهوديءَ کي سزا ڏيارڻ تي زور ڏنو، چو ته ٿيلهو ان جي گهر مان نڪتو هو ۽ اهوئي سزا جو حقدار آهي جو ان چوري به ڪئي آهي ته چور هجڻ جو انڪار به ڪري ٿو ۽ هڪ مسلمان سڏائيندڙ طعمه تي چوريءَ جو بهتان به هڻي ٿو، حضور پر نور ﷺ جن سيني جون ڳالهيون ٻڌيون ۽ پاڻ ڪو به فيصلو نه ڏنائون پر طعمه جي مٽن مائٽن ۽ سندس حمايت ڪندڙن تي ڪا به جرح نه ڪيائون ڇو ته ظاهر ۾ ٿيلهو ته يهوديءَ جي گهر مان نڪتو هو، پوءِ الله تعالىٰ مٿيون آيتون نازل فرمائي طعمه ۽ ان جي ساٿين جي ڳالهه کي رد ڪندي يهوديءَ ۽ ان جي ساٿين جي ڳالهه کي سچو ڪيو، حضور عليه الصلواة والسلام جن يهوديءَ جي حق ۾ فيصلو صادر فرمايو ۽ طعمه جي هٿ ڪٽڻ جو حڪم ڏنو پر اجان ان جو هٿ ڪٽيو نه ويو هو ته اهو مرتد ڪافر ٿي مديني منوره مان ڀڄي مڪه مڪرمه ۾ اچي ڪافرن سان گڏ رهڻ لڳو في الحال ته ڪافرن سندس عزت، احترام ۽ خدمت ڪئي پر گندي عادت هجڻ جي ڪري اتي به رات جو هڪ ڪافر حجاج بن علاط جي گهر کي ڪاٽ هڻڻ شروع ڪيائين ۽ اجان ڪاٽ هڻي پت پيجي رهيو هو ته سندس مٿان هڪ پٿر ڪريو جنهن سندس مٿو ڦٽي وڌو صبح

جو مڪي مڪرمه جي ڪافرن کي جو خبر پئي ته انهن به اتاهين تڙي ڪڍيس ۽ وڃي هڪ مسافر قافلي سان مليو ۽ کين عرض ڪيائين ته مان هڪ بڪايل پر ديسي آهيان اوهان سان گڏ سفر ڪرڻ جو ارادو رکان ٿو انهن هن تي رحم ڪري ڪيس پنهنجي قافلي ۾ رکيو پر رات جو انهن جي قافلي مان به چوري ڪيائين جنهن جي ڪري ناراض ٿي انهن ڪيس پٿر هڻي ماري ڇڏيو (١) حقيقت هيءَ آهي ته جيڪو بدنصيب حضور عليه الصلواة والسلام جن جي نگاهن ۾ ڪري نڪتو اهو چڙهي نه سگهندو جيئن هڪ اردو زبان واري شاعر چيو آهي.

قسم خدا کي نہ وہ اٹھ سکا قیامت تک
کہ جس کو تو نے نظر سے گرا کے چھوڑ دیا

وَلَاتَكُنْ لِّلْخَآئِنِيْنَ خَصِيْمًا- خائنين جي مٿان لام سببية جو آهي يعني اي محبوب عليڪ السلام اوهان خيانت ڪندڙن جي ڪري ڪنهن سان جهيڙو نه ڪيو، ڇو ته اوهان جي ذات سان عدل ۽ انصاف جون سڀ عظمتون وابسته آهن انصاف ڪرڻ وقت اهو ڏسڻ ته مسلمان ڪير آهي ۽ يهودي ڪير، اوهان جي شان رحمت ڪان تمام گهٽو هيٺ آهي.

## هڪ غلط فهميءَ جو ازالو

هنن لفظن مان ائين ڪير نه سمجهي ته شايد پاڻ خيانت ڪندڙن جا طرفدار هئا، معاذالله ثم معاذالله- پر ان مان مقصد آهي ته جيئن اوهان اڳ ۾ طرفداري نه ڪئي آهي تيئن آينده جي لاءِ به نه ڪجو اهي سڀ احڪام ۽ انتظام سندن عصمت ۽ پاڪدامنيءَ کي علىٰ وجه الڪمال برقرار رکڻ لاءِ ڪيا ويا آهن، " وَاسْتَغْفِرِاللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا " يعني اي محبوب عليڪ الصلواة والسلام امت جي تعليم لاءِ الله تعالىٰ ڪان مغفرت گهرندو رهه، تانت مسلمان اوهان ڪان اهي مغفرت جون دعائون سکن يا طعمه جي واقعي ۾ ان کي سچو سمجهي سندس پاران ڳالهائڻ وارن مسلمانن جي لاءِ مغفرت طلب ڪر، يقيناً الله تعالىٰ هميشه هميشه گناهگارن جا گناهه بخشيندڙ، گناهن جي هوندي انهن تي رحم ڪندڙ آهي " وَلَا تُجَادِلْ عَنِ الَّذِيْنَ يَخْتَانُوْنَ اَنْفُسَهُمْ " يعني جيڪي شخص طعمه جي حمايت ڪري يا هونءَ به ڪا غلطي

(١) نعيمي ص٣٩٥ ج ٥

ڪري پنهنجن سرن تي پاڻ ظلم ڪن ٿا انهن جي پاران بہ اوهان نہ لڙو، علامہ پاني پتيءَ عليه الرحمۃ لکيو تہ :طعمہ جي مائٽن حضور عليه الصلواة والسلام جن کي عرض ڪيو هو تہ طعمہ مسلمان آهي ان جي طرفان اوهان ڳالهايو ۽ بحث ڪرڻ فرمايو الله تعالىٰ پنهنجي حبيب عليه الصلواة والسلام جن کي ان کان منع ڪري رهيو آهي (١)

"اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ كَانَ خَوَّانًا اَثِيْمًا" يعني الله تعالىٰ ان سان محبت نہ ٿو رکي جيڪو خيانت تي هميشگي ڪندڙ، حق جو انڪار ڪري، ڪوڙ هڻندڙ،چوري نہ ڪندڙ انسان ڏانهن چوريءَ ڪرڻ جي نسبت ڪندڙ آهي، مفسرن لکيو آهي تہ مٿي ذڪر ڪيل خطاب مان مراد حضور عليه الصلواة والسلام جن نہ پر عام انسان آهن (٢) "يَسْتَخْفُوْنَ مِنَ النَّاسِ وَلَا يَسْتَخْفُوْنَ مِنَ اللّٰهِ" يعني طعمہ جي حمايت ڪرڻ وارا ماڻهن کان لڪڻ جي ڪوشش ڪن ٿا پر اهي الله تعالىٰ کان لڪي نہ سگهندا.

"وَهُوَ مَعَهُمْ اِذْ يُبَيِّتُوْنَ مَالَا يَرْضٰى مِنَ الْقَوْلِ" يعني اهي جڏهن رات جو اهڙيون صلاحون ۽ ڳالهيون ڪن ٿا جن کان الله راضي ناهي تہ بہ الله انهن سان گڏ آهي جيڪو سندن ڳجهہ ۽ ظاهر کي ڄاڻي ٿو، طعمہ جي مائٽن رات جو صلاح ڪئي هئي تہ فيصلو حضور عليه الصلواة والسلام جن کان وٺبو پاڻ طعمہ جي مسلمان هجڻ جي ڪري ان کي قسم ڏيندا ۽ اهو قسم ڪٽي ويندو،ان جي متعلق مٿيون حڪم نازل ٿيو "وَكَانَ اللّٰهُ بِمَا يَعْمَلُوْنَ مُحِيْطًا" ۽ جيڪي بہ ڪن ٿا الله تعالىٰ ان کي گهيري ۾ ڪري وٺندڙ آهي. ان جو علم وسيع ۽ قدرت نرالي آهي جو ٻانهن جا ڪليل يا لڪل ننڍا يا وڏا قولي يا فعلي بدني يا قلبي عمل ان کان لڪل ناهن ان کي هميشه پنهنجي مٿان محيط، غالب، قوي ۽ قادر سمجهڻ وارا گناهن کان بچڻ جي ڪوشش ڪندو ۽ جڏهن تہ ڪوشش ڪاميابيءَ جي ڪنجي آهي تہ ان جي ڪري ڪاميابي بہ ماڻيندو.

هٰٓاَنْتُمْ هٰٓؤُلَآءِ جَادَلْتُمْ عَنْهُمْ فِى الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا فَمَنْ يُّجَادِلُ

ٻڌو! اوهان اي فلاڻا! جهيڙو ڪيو ٿا انهن جي پاران دنيا جي حياتيءَ ۾ پوءِ ڪير جهيڙو ڪندو

اللّٰهَ عَنْهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ اَمْ مَّنْ يَّكُوْنُ عَلَيْهِمْ وَكِيْلًا ﴿١٠٩﴾ وَمَنْ

الله سان انهن جي پاران قيامت جي ڏينهن يا ڪير هوندو؟ انهن جا ڪم ٺاهيندڙ ۽ جيڪو

(١) مظهري ص٤١٩ ج (٢) روح المعاني ص١٤١ جلد٢ جزءُ ٥

يَّعۡمَلۡ سُوۡٓءًا اَوۡ يَظۡلِمۡ نَفۡسَهٗ ثُمَّ يَسۡتَغۡفِرِ اللّٰهَ يَجِدِ اللّٰهَ غَفُوۡرًا

ڪري ٿو برائي يا ظلم ٿو ڪري پنهنجي پاڻ تي تنهن کان پوءِ مغفرت طلب ڪري ٿو الله کان تہ لهندو الله کي بخشيندڙ،

رَّحِيۡمًا ﴿١١٠﴾ وَمَنۡ يَّكۡسِبۡ اِثۡمًا فَاِنَّمَا يَكۡسِبُهٗ عَلٰى نَفۡسِهٖ ؕ

مهربان ۽ جيڪو ڪري ٿو گناهہ پوءِ تحقيق ڪري ٿو اهو پاڻ تي

وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيۡمًا حَكِيۡمًا ﴿١١١﴾ وَمَنۡ يَّكۡسِبۡ خَطِيۡٓـئَةً اَوۡ اِثۡمًا ثُمَّ

۽ آهي الله ڄاڻندڙ، حڪمت وارو ۽ جيڪو ڪري ٿو خطا يا گناهہ ان کان پوءِ

يَرۡمِ بِهٖ بَرِيۡٓــًٔا فَقَدِ احۡتَمَلَ بُهۡتَانًا وَّاِثۡمًا مُّبِيۡنًا ﴿١١٢﴾ ع

لڳائي ٿو اهو ڪنهن بي گناهہ تي تہ پوءِ تحقيق ڪنيائين بهتان ۽ گناهہ پڌرو

## تفسير

هتي ان طعمہ نالي شخص جي مٽن، مائٽن ۽ ان جي طرفان بحث ڪندڙن سان خطاب ڪندي ارشاد ٿيو آهي تہ "هَاَنۡتُمۡ هٰٓؤُلَآءِ جَادَلۡتُمۡ عَنۡهُمۡ فِي الۡحَيٰوةِ الدُّنۡيَا فَمَنۡ يُّجَادِلُ اللّٰهَ عَنۡهُمۡ يَوۡمَ الۡقِيٰمَةِ اَمۡ مَّنۡ يَّكُوۡنُ عَلَيۡهِمۡ وَكِيۡلًا" يعني اي طعمہ جي حمايت ڪرڻ وارا! ٻڌو ۽ باخبر رهو، اوهان ٿي تہ اهي آهيو جيڪي دنيوي حياتيءَ ۾ انهن غلط ڪمن ڪندڙن جي پاران بحث ٿا ڪيو پر قيامت جي ڏينهن انهن جي پاران الله تعالىٰ سان ڪير بحث ڪندو يا ڪري سگهندو؟ ۽ جڏهن اتي نہ ڪير بحث ڪري سگهندو ۽ نہ ڪير انهن جو محافظ هوندو تہ رسول الله ﷺ جن جي حضور ۾ بہ انهن جي پاران نہ ڳالهايو، المقصد تہ جڏهن اتي الله تعالىٰ کان سواءِ انهن جو ڪو محافظ ۽ ڪارساز نہ هوندو تہ هتي بہ سندن معاملن کي ان جي فيصلي جي حوالي

ڪري ڇڏيو، انهن جي غلط حمايت ڪري پاڻ گنهگار نہ بنجو "وَمَنْ يَّعْمَلْ سُوْٓءًا اَوْ يَظْلِمْ نَفْسَهٗ ثُمَّ يَسْتَغْفِرِ اللّٰهَ يَجِدِ اللّٰهَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا" يعني جيڪڏهن انسان جذبات کان مغلوب ٿي يا ناداني ۽ ناسمجهيءَ جي ڪري ڪا غلطي ڪري ٿو وهي تہ هاڻي ان لاءِ اهو لائق ۽ مناسب ناهي تہ اهو پنهنجن گناهن تي پردو وجهڻ جي ڪوشش ڪري پر ان کي گهرجي تہ پنهنجي مهربان مالڪ جي اڳيان سچيءَ دل سان ندامت ۽پشيمانيءَ جو اظهار ڪندي آينده جي لاءِ ان غلطيءَ نہ ڪرڻ جو پڪو عهد ڪري گناهن جي مغفرت طلب ڪري ۽ جيڪو ائين مغفرت طلب ڪندو تہ الله تعالىٰ کي بخشيندڙ،مهربان لهندو" وَمَنْ يَّكْسِبْ اِثْمًا فَاِنَّمَا يَكْسِبُهٗ عَلٰى نَفْسِهٖ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا" ۽ جيڪو بہ شخص گناهہ ڪري ٿو اهو پنهنجي پاڻ کي تباهہ ۽ برباد ڪري رهيو آهي. ان جو ٻين کي ايذاءَ يا نقصان پوءِ ٿو پهچي اول پاڻ هلاڪت جي لاءِ تيار ٿي رهيو آهي، ۽ الله تعالىٰ ڄاڻندڙ آهي، ان جي ڪري ان کان مجرم لڪي نہ سگهندو، حڪمت وارو آهي جيڪو مجرم کي پنهنجي حڪمت عملي سان ڍر بہ ڏيندو آهي تہ پڪڙ بہ ڪندو آهي، ان جي بي نياز ذات واڻ زاريءَ، عاجزيءَ ۽ مغفرت طلب ڪرڻ کان سواءِ ڪو بہچارو نہ آهي.

وَمَنْ يَّكْسِبْ خَطِيْۤئَةً اَوْ اِثْمًا ثُمَّ يَرْمِ بِهٖ بَرِيْۤئًا " يعني جيڪو شخص گناهہ يا خطا ڪري پاڻ تہ پرهٽي ان تي تہ جيڪو ان گناهہ کان پاڪ آهي" فَقَدِ احْتَمَلَ بُهْتَانًا وَّاِثْمًا مُّبِيْنًا" تہ پوءِ يقينا ان پنهنجي مٿان وڏو بهتان ۽ چٽو ۽ صاف گناهہ ڪنيو آهي، گناهہ ڪرڻ کان پوءِ گهرجي تہ ائين ٿو تہ انسان پشيمان ۽ شرمسار ٿي الله تعالىٰ کان مغفرت جو طالب رهي پر جيڪو ائين نہ ٿو ڪري بلڪ پاڻ کي پاڪ ۽ صاف ثابت ڪرڻ لاءِ اهو ڏوهہ ڪنهن بي ڏوهہ تي ٿو هٽي تہ اهو بهتان هڻندڙن جي ٽولي ۾ شامل ۽ ڪليل گنهگار آهي.هونئن تہ انهن جي غلطيءَ جو وبال دنيا ۾ انهن تي پيو پر قيامت ۾ بہ مٿن ئي پوندو ۽ هتي ٻڌايو ٿو وڃي تہ اوهان تي انهن جي گناهہ جو ڪو اثر نہ پوندو، ڇو تہ اوهان تي الله جو فضل آهي.

وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكَ وَرَحْمَتُهٗ لَهَمَّتْ طَّآئِفَةٌ مِّنْهُمْ اَنْ

۽ جيڪڏهن نہ هجي ها الله جو فضل توتي ۽ ان جي رحمت تہ البت قصد ڪيو هو جماعت هڪڙيءَ انهن مان تہ

يُضِلُّوۡكَ ؕ وَمَا يُضِلُّوۡنَ اِلَّاۤ اَنۡفُسَهُمۡ وَمَا يَضُرُّوۡنَكَ مِنۡ شَىۡءٍ ؕ

غلطي ڪرائين اوهان ڪان ۽ نہ غلطيءَ ۾ وجهن ٿا مگر پنهنجو پاڻ کي ۽ نہ ٿا نقصان ڏئي سگهن توکي ڪجهہ بہ

وَاَنۡزَلَ اللّٰهُ عَلَيۡكَ الۡكِتٰبَ وَالۡحِكۡمَةَ وَعَلَّمَكَ مَا لَمۡ تَكُنۡ

۽ لاٿو الله توتي ڪتاب ۽ حڪمت ۽ ڄاڻايائين توکي اهو (سڀ) جو تو

تَعۡلَمُ ؕ وَكَانَ فَضۡلُ اللّٰهِ عَلَيۡكَ عَظِيۡمًا ﴿۱۱۳﴾

نہ ٿي ڄاتو ۽ آهي ڀلائي الله جي توتي وڏي.

# تفسير

ان کان پهريان طعمہ ۽ ان جي قوم جي حال کي بيان ڪندي ٻڌايو ويو هو تہ انهن جي غلطيءَ جو وبال دنيا ۾ تہ انهن تي پيو پر قيامت ۾ بہ مٿن پوندو ۽ هتي ٻڌايو ٿو وڃي تہ اوهان تي انهن جي گناهن جو ڪو اثر نہ پوندو، ڇو تہ اوهان تي الله جو فضل آهي "وَلَوۡلَا فَضۡلُ اللّٰهِ عَلَيۡكَ وَرَحۡمَتُهٗ لَهَمَّتۡ طَّآئِفَةٌ مِّنۡهُمۡ اَنۡ يُّضِلُّوۡكَ" يعني جيڪڏهن اوهان تي الله تعالىٰ جو فضل ۽ ان جي رحمت نہ هجي ها تہ انهن مان هڪ ٽولي اهو ارادو ڪيو هو تہ اوهان کان غلط فيصلو وٺن، هتي "يُضِلُّوۡكَ" جي معنىٰ آهي غلطيءَ ۾ وجهڻ (١) المقصد تہ اي محبوب! عليڪ الصلواة والسلام، ان ذڪر ڪيل خاص واقعي ۾ جيڪڏهن هميشہ وانگر الله تعالىٰ جو احسان، لطف، فضل ۽ مهرباني اوهان سان شامل نہ هجي ها تہ انهن طعمہ ۽ سندس قوم وارن اوهان کان غلط فيصلو ڪرائڻ جو پڪو پهہ ڪري ڇڏيو هو پر ڪريم رب جي ڪرم نوازيءَ سان اوهان کي جيڪا هر قسم جي ننڍي توڙي وڏي گناهہ کان معصوميت مليل آهي ان جي ڪري اوهان غلط فيصلو نہ ڪيو پر سچ ۽ حق وارو فيصلو ڪيو، "وَمَا يُضِلُّوۡنَ اِلَّاۤ اَنۡفُسَهُمۡ وَمَا

(١) بيان القرآن بمع معارف القرآن ص٥٣٧ ج٢

يَضُرُّوْنَكَ مِنْ شَيْءٍ" يعني اهي اوهان کان غلط فيصلي وٺڻ جو ارادو ڪندڙ پاڻ ڪي غلطيءَ ۾ وجهي پنهنجن سرن کي هلاڪ ۽ برباد ڪري رهيا آهن، ڇو ته ان فيصلي ۾ جيڪڏهن ڪوڙي شاهدي ڏين ها ۽ اوهان ان شاهديءَ جي مطابق ڪٽي بفرض محال فيصلو ڪيو ها ته به ڏوهه ته انهن تي هو جو ڪوڙي شاهدي تي ڏنائون اوهان تي نه هو، اوهان ته ان شاهديءَ جي مدار تي فيصلو ڪيو ها (١) ۽ اهي اوهان کي ڪو به نقصان پهچائي نه سگهندا، اوهان اهڙا ڪائنات کي چمڪائيندڙ سج آهيو جيڪو ڦوڪن سان وسامي نه سگهندو.

" وَاَنْزَلَ اللّٰهُ عَلَيْكَ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ" يعني الله تعاليٰ اوهان تي قرآن ڪريم ۽ حڪمت يعني اهي الفاظ جيڪي حديث طور اوهان جي زبان مبارڪ مان نڪرن ٿا نازل فرمايا آهن، چاڻ گهرجي ته قرآن پاڪ جا الفاظ حضور عليه الصلواة والسلام جن جي ڪن مبارڪ تي ۽ معنیٰسندن دماغ تي ۽ اسرار ۽ حڪمتون سندن دل تي نزول فرما ٿيون هيون ان جي ڪري "عَلَيْكَ" جو خطاب آيو، "وَعَلَّمَكَ مَالَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ" يعني اوهان جو ڪجهه به نه ڄاڻندا هيئو الله تعاليٰ اهو اوهان کي ڄاڻايو آهي ان مان مراد ڇا آهي؟ علامه ابن جرير پنهنجي لاجواب تفسير ۾ لکيو آهي ته "وَمَن فضل الله عليک يا محمد مع سائر ما تفضل به عليک من نعمه انه انزل عليک الکتاب وهو القرآن الذي فيه بيان کل شيء وهدي وموعظة والحکمة يعني وانزل عليک مع الکتاب الحکمة وهي ما کان في الکتاب مجملا ذکره من حلاله وحرامه وامره ونهيه واحکامه ووعده وعيده وعلمک مالم تکن تعلم من خبرالاولين والآخرين وماکان وما هو کائن الخ (٢) يعني اي حبيب پاڪ! (ﷺ) الله تعاليٰ جو اوهان تي ٻين نعمتن سان گڏ هي به وڏو فضل ۽ احسان آهي جو اوهان تي ڪتاب قرآن ڪريم نازل فرمايو اٿس جنهن ۾ هر شيءِ جو بيان، هدايت ۽ نصيحت آهي ۽ اوهان تي ڪتاب سان گڏ حڪمت به نازل فرمائي اٿس يعني جن شين حلال، حرام ،امر، نهي احڪام، بهشت جي وعدي ۽ جهنم جي وعيد وغيره جو قرآن ۾ اجمالي بيان آهي انهن جو تفصيل ۽ تشريح ۽ اوهان کي پهرين ۽پوين جون خبرون ۽ جيڪي ٿيو ۽ جيڪي ٿيندو ان مان جيڪي به اوهان نه ڄاڻندا هيئو، ان سڀ جو علم اوهان کي عطا ڪيائين هي الفاظ بعينه اهي آهن جيڪي امام مسلم پنهنجي ڪتاب صحيح مسلم ۾ حضرت عمرو بن اخطب رضي الله عنه کان روايت

(١) نعيمي ص٤٢٠ جلد٥ (٢) ابن تفسير ابن جرير ص١٧٧ جلد٥

ڪيا آهن تہ رسول الله ﷺ جن اسان کي فجر جي نماز پڙهائي منبر تي تشريف فرما ٿيا ۽ ظهر(ٻپهري) نماز تائين خطاب فرمايائون پوءِ نماز جي لاءِ هيٺ لهي آيا نماز پڙهائي وري منبر تي تشريف فرما ٿيا ۽ خطاب فرمايائون تانجو عصر (ٽپهري) نماز جو وقت ٿيو پوءِ نماز لاءِ منبر تان هيٺ لٿا نماز پڙهائي وري منبر تي تشريف فرما ٿيا ۽ اسان کي خطاب فرمايائون تانجو سج لٿو، "فَاَخْبَرَنَا بِمَا كَانَ وَمَا هُوَ كَائِنٌ" (۱) پوءِ اسان کي جيڪو ٿيو ۽ جيڪو ٿيندو ان سڀ جي خبر ڏنائون.

مدرسن ۾ پڙهايل تفسير جلالين ۽ ان جي حاشيہ ۾علامہ صاوي هن آيت جي وضاحت ڪندي لکيو آهي تہ" وَعَلَّمَكَ مَالَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ" من الاحكام والغيب، اي علم الغيب (۲) يعني الله تعالىٰ اوهان کي شرعي احڪام ۽ غيب جو علم پڙهايو آهي. علامہ آلوسي بغدادي عليه الرحمة لکيو آهي تہ "وعلمک" بانواع الوحي"مالم تكن تعلم" اي الذي لم تكن تعلمه من خفيات الامور وضمائر الصدور(۳) يعني الله تعالىٰ اوهان کي وحي جي مختلف قسمن سان ڳجها امر ۽ سينن جا راز ڄاڻايا ، علامہ محمد عمادي لکيو آهي"وعلمک بالوحي من خفيات الامور التي من جملتها وجوه ابطال كيد المنافقين او من امورالدين (۴) يعني الله تعالىٰ اوهان کي وحي سان اهي ڳجها امر ڄاڻايا جن مان هڪ منافقن جي مڪرکي باطل ڪرڻ بہ آهي يا الله تعالىٰ اوهان کي ديني امر ڄاڻايا، علامہ محي السنة بغدادي لکيو آهي تہ" وَعَلَّمَكَ مَالَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ " يعني من احكام الشرع وامور الدين وقيل" علمک" من علم الغيب" ما لم تكن تعلم " وعلم من خفيات الامور واطلعک علىٰ ضمائر القلوب وعلمک من احوال المنافقين وكيدهم ما لم تكن تعلم (۵) يعني الله تعالىٰ اوهان کي شرعي حڪمن ۽ ديني امرن جو علم ڏنو آهي ۽ ڪن جو چوڻ آهي تہ ان مان مراد آهي تہ الله تعالىٰ اوهان کي غيب جي علم جي تعليم ڏني ۽ ڳجها امر ڄاڻايا ۽ دلين جي رازن تي اطلاع ڏنو آهي ۽ منافقن جا احوال ۽ مڪر جيڪي اڳ ۾ نہ ڄاڻندا هيئو اهي ڄاڻايا آهن، علامہ اسماعيل حقي عليه الرحمه لکيو آهي تہ"وَعَلَّمَكَ" بالوحي من الغيب وخفيات الامور (٦) يعني الله تعالىٰ اوهان کي وحي سان غيب ۽ ڳجهن امرن جي

(۱) صحيح مسلم صہ۲۹۰ جلد۲ مطبوعه اصح المطابع ڪراچي
(۲) تفسير صاوي صہ۲۳۰ جزءُ ۱ (۳) روح المعاني ص۱۴۴ جلد۲ جزءُ ۵
(۴) تفسير ابو السعود ص۲۳۱ الجزءُ الثاني (۵) تفسير خازن ص۴۰۳ ج۱
(٦) روح البيان ص۲۸۲ جلد۲

تعليم ڏني آهي ۽ علامه ابو حيان اندلسي ھين قولن سان گڏ لکيو آهي تہ وقال ابو سليمان الدمشقي اخبار الاولين والآخرين (١) يعني "عَلَّمَكَ مَالَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ" مان مراد آهي تہ الله تعالىٰ اوهان کي پهرين ۽ پوين سيني جون خبرون ڄاڻايون آهن،مکہ مکرمہ جي جامعہ ام القري ۾ کليہ شرعيہ ۾ دراسات اسلاميہ جي موجود استاد محمد علي صابوني لکيو آهي تہ "وَعَلَّمَكَ مَالَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ وَكَانَ فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكَ عَظِيْمًا، اي علمک مالم تکن تعلمہ من الشرائع والامور الغيبيۃ (٢) يعني الله تعالىٰ اوهان کي انهن شرعي حڪمن ۽ غيبي امرن جي تعليم ڏني آهي جيڪي اوهان نہ ڄاڻندا هيئو،عبدالماجد دريا بادي هن آيت جي تفسير ۾ لکيو آهي تہ "وَعَلَّمَكَ مَالَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ "يعني جو علوم عاليہ آپ پر قبل نبوة ونزول قرآن منکشف نہ تھے اب سب منکشف هو گئے (٣) هن عبارت جي لفظ سب منکشف هوگئےتي غور کريو تہ مسئلو حل آهي تفسير حسيني فارسي ۾ کمال الدين حسين الواعظ الهروي لکيو آهي تہ ودر بحرالحقائق ميفرمايد کہ آن علم ما کان وما سيکون است کہ حق سبحانہ درشب اسري بدان حضرت عطا فرموده چنانچہ در احاديث معراجيہ آمده است کہ در زير عرش بودم قطره در حلق من ريختند فعلمت بها ما کان وما سيکون" (٤) يعني بحر الحقائق واري فرمايو آهي تہ "عَلَّمَكَ مَالَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ" مان مراد جيڪي ٿيو ۽ جيڪي ٿيندو ان جو علم آهي جيڪو الله تعالىٰ معراج واري رات حضور عليه الصلواة والسلام جن کي عطا فرمايو هو. جيئن معراج وارين حديثن ۾ رسول الله ﷺ جن جو فرمان آيل آهي تہ: مان عرش جي هيٺان هوس تہ هڪ ڦڙو منهنجي نڙي (مبارڪ) ۾ وڌائون جنهن سان جيڪي ٿيو ۽ جيڪي ٿيندو اهو علم حاصل ڪيم علامہ محمود بن عمر خوارزميءَ لکيو آهي تہ "وَعَلَّمَكَ مَالَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ "من خفيات الامور وضمائر القلوب (٥) يعني اوهان کي ڳجهن امرن ۽ دلين جي رازن جي تعليم ڏنائين جيڪي اوهان اڳ ۾ ڪو نہ ڄاڻندا هيا.

## تنبيه

هنن قرآن پاڪ جي تفسيرن جي حوالن مان ثابت ٿيو تہ الله تعالىٰ

(١) البحر المحيط ص٣٤٧ جلد٣
(٢) صفوة التفاسير ص٣٠٣ جلد١
(٣) حاشيہ القرآن دريابادي ص ٢١٥
(٤) تفسير حسيني ص١٥٦
(٥) تفسير کشاف ص٥٦٣ جلد١

پنهنجي حبيب عليه الصلواة والسلام جن کي پهرين ۽پوين جي خبرن جي جيڪا ڄاڻ ڏني آهي ان کي غيب جو يا ما کان وما سيکون جو علم چوڻ شرڪ يا ڪفر نہ آهي بلڪ اڳين الله تعالىٰ جي پيارن ائين لکيو ۽ چيو آهي، ما کان وما سيکون ۾ الله تعالىٰ جو علم بند نہ آهي ما کان (جيڪي اڳي ٿيو)- کان اول بہ الله تعالىٰ جو علم هو وما سيکون ( ۽ جيڪي ٿيندو) ان کان پوءِ بہ الله تعالىٰ جو علم هوندو ما کان وما سيکون جي علم کي حضور عليه الصلواة والسلام جن لاءِ استعمال ڪرڻ ۾ الله تعالىٰ سان برابريءَ جو ڪو شائبہ بہ نہ آهي وما کان وسيکون جي علم کي الله تعالىٰ جي علم جي اڳيان اها نسبت بہ ناهي جيڪا هڪ ڦڙي کي بي پايان سمنڊ جي اڳيان هوندي آهي حضور عليه الصلواة والسلام جن کي جيڪي علوم ،اسرار ۽ معارف عطا ڪيل آهن انهن جو وڏيڪ ذڪر انشاءالله اڳتي متعدد مقامات ۾ ايندو.

"وَكَانَ فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكَ عَظِيْمًا" هي جملو يا " وَعَلَّمَكَ مَالَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ "جو بيان آهي ۽ الله جي فضل مان مراد غيبي علوم آهن جن جو مٿي هاڻي ذڪر ڪيو ويو آهي يا جدا جملو آهي ۽ الله تعالىٰ جي فضل مان مراد نبوت عام، شفاعت ڪبرىٰ وغيرهما آهن، ڄاڻڻ گهرجي تہ هن آيت ۾ الله تعالىٰ پنهنجي محبوب نبي عليہ الصلواة والسلام جي لاءِ اٺن (٨) خصوصي انعامن جو ذڪر فرمايو آهي ١- الله جو فضل ٢- ان جي خاص رحمت ٣- دنيا ڪين ڏوکو ڏئي نہ سگهندي، ۽ جيڪو ڪين ڏوکي ڏيڻ جي ڪوشش ڪندو اهو پاڻ ڏوکو کائيندو ٤- سڄي دنيا وارا هڪ ٿي ڪين نقصان ڏيڻ جي ڪوشش ڪن تہ بہ نہ ڏئي سگهندا ٥- مٿن ڪتاب (قرآن پاڪ) جو نازل ڪرڻ ٦- مٿن حڪمت جو نازل ڪرڻ ۽ ڪين غيبي علم جو ملڻ ٨- مٿن الله تعالىٰ جي زبردست ۽ عظيم مهربانيءَ جو هجڻ، قرآن پاڪ جي نزول کان اڳ ۾ ٿي سندن مٿان فضل، رحمت ۽ سندن نگاهن جي معصوم ۽ محفوظ هجڻ جي ذڪر سان ثابت ٿيو تہ پاڻ نبوت جي اظهار کان اڳ ۾ بہ هر قسم جي گناهن ۽ ڏوهن کان هر طرح پاڪ ۽ معصوم هئا قرآن ڪريم تہ مٿن سندن زندگيءَ جي چاليهن سالن گذرڻ کان پوءِ نازل ٿيو آهي- يقين رکڻ گهرجي تہ جيڪي ڪمالات ۽ مقامات ٻين نبين عليهم الصلواة والسلام کي مليا هياڪين اهي ۽ انهن سيني کان وڌيڪ عطا ٿيا آهن پاڻ ساري ڪائنات جا رسول، سيني جي لاءِ معلم ۽ رهبر ٿي آيا آهن ۽ قيامت تائين سندن رهبري ۽ فيض جاري رهندو.

لَاخَيْرَ فِيْ كَثِيْرٍ مِّنْ نَّجْوَاهُمْ اِلَّامَنْ اَمَرَ بِصَدَقَةٍ اَوْ مَعْرُوْفٍ

ناهي ڀلائي گهڻين ۾ انهن جي صلاحن مان مگر جيڪو امر ڪري صدقي جو يا چڱي ڪم جو

اَوْ اِصْلَاحٍ بَيْنَ النَّاسِ وَمَنْ يَّفْعَلْ ذَالِكَ ابْتِغَآءَ مَرْضَاتِ اللّٰهِ

يا ماڻهن ۾ صلح ڪرائڻ جو ۽ جيڪو ڪندو اهو الله جي رضا طلبيءَ جي لاءِ

فَسَوْفَ نُؤْتِيْهِ اَجْرًا عَظِيْمًا ﴿١١٤﴾ وَمَنْ يُّشَاقِقِ الرَّسُوْلَ مِنْ بَعْدِ

پوءِ جلد ڏينداسون ان کي ثواب وڏو ۽ جيڪو بي فرماني ڪندو رسول جي ان کان پوءِ

مَا تَبَيَّنَ لَهُ الْهُدٰى وَيَتَّبِعْ غَيْرَ سَبِيْلِ الْمُؤْمِنِيْنَ نُوَلِّهٖ

جو روشن ٿي ان لاءِ هدايت ۽ تابعداري ڪندو مومنن جي واٽ کان سواءِ (ٻي ڪنهن واٽ جي) ته ڦيرائينداسون ان کي

١٧ ع ٣ ١٢ مَا تَوَلّٰى وَنُصْلِهٖ جَهَنَّمَ وَسَآءَتْ مَصِيْرًا ﴿١١٥﴾

جيڏانهن ڦريو ۽ پهچائينداسون ان کي جهنم ۾ ۽ اها بڇڙي موٽڻ جي جاءِ آهي.

## تفسير

ڪيترين ڳالهين ۽ ڪمن جي لاءِ ماڻهو لڪي ميٽنگون ڪندا آهن هتي انهن جي باري ۾ وضاحت ڪندي ٻڌايو ٿو وڃي ته "لَاخَيْرَ فِيْ كَثِيْرٍ مِّنْ نَّجْوَاهُمْ" نجوي مصدر يا اسم مصدر آهي جنهن جي معنيٰ آهي المسارة بالحديث (١) يعني آهستي آهستي ڳالهه ڪرڻ المقصد ته مٿي ذڪر ڪيل طعمه جي مائٽن يا ٻين ماڻهن جي لڪل اجلاسن وغيره ۾ ڀلائي نه آهي گهڻون ڪري اجايو وقت ضايع ڪيو ويندو آهي. "اِلَّا مَنْ اَمَرَ بِصَدَقَةٍ اَوْ مَعْرُوْفٍ اَوْ اِصْلَاحٍ بَيْنَ النَّاسِ" مگر اهي خفيه

(١) المنار ص٤٠٤ ج٥

ميٽنگون جنهن ۾ وهڻ وارا صدقي ڏيڻ يا کنهن چڱائيءَ يا ماڻهن ۾ صلح ڪرائڻ جو هڪ ٻئي کي چون ته اهي ڀليون آهن ان ۾ حڪومتي ڪانفرنسون، اسيمبلي اجلاس قومي پنچائتيون ۽ گهرو ڪمن ۾ مشورا وغيره سڀ داخل آهن ۽ مٿي ذڪر ڪيل ٽئي ڪم سيني ڀلائين جا جامع آهن ۽ لڪل ميٽنگون گهڻو ڪري گناهن جي ڪمن لاءِ ڪيون ويندڙيون آهن ڇو ته نيڪيءَ جي ڪمن کي لڪائڻ جي بجاءِ کلي ڪرڻ ۾ انسان خوشي محسوس ڪندو آهي، "وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ ابْتِغَاۗءَ مَرْضَاتِ اللّٰهِ فَسَوْفَ نُؤْتِيْهِ اَجْرًا عَظِيْمًا" يعني جيڪو شخص مٿي ذڪر ڪيل صدقي ۽ معروف جو امر ۽ ماڻهن ۾ صلح پيدا ڪرڻ وارا ڪم الله تعالىٰ جي راضي ڪرڻ لاءِ ڪندو ته ان کي جلد وڏو اجر ڏينداسون، جنهن مان ثابت ٿيو ته مڙس ۽ زال، پيءُ ۽ پٽ، ساٿين، سنگتين ۽ اسلامي حڪومتن ۾ جيڪڏهن اختلاف ٿي پون ته انهن ۾ ناهه ڪرڻ عبادت آهي جيئن بيهقيءَ حضرت ابو ايوب رضي اللّٰه عنهُ ڪان روايت آندي آهي ته رسول الله ﷺ جن ڪيس مخاطب ٿي فرمايو "اي ابو ايوب! ڇا مان توکي اهڙو خير نه ڏسيان؟ جنهن جي ڪري الله تعالىٰ ۽ ان جو رسول ( ﷺ) راضي ٿين؟ عرض ڪيائين ته "هائو" فرمايائون ته "تُصْلِحُ بَيْنَ النَّاسِ اِذَا تَفَاسَدُوْا وَتُقَرِّبُ بَيْنَهُمْ اِذَا تَبَاعَدُوْا" يعني جڏهن ماڻهو فساد ڪن ته انهن ۾ صلح ڪراءِ ۽ جڏهن هڪ ٻئي کان پري ٿين ته انهن کي هڪ ٻئي ڏانهن ويجهو ڪر، بيهقي شريف حضرت عبدالله بن عمرو رضي الله عنه ڪان روايت آندي آهي ته رسول الله ﷺ جن فرمايو "اَفْضَلُ الصَّدَقَةِ اِصْلَاحُ ذَاتِ الْبَيْنِ" يعني ٻن وڙهيلن جي وچ ۾ ناهه ڪرائڻ ڀلو صدقو آهي، احمد ابو داؤد ۽ ترمذيءَ حضرت ابودرداءِ رضي الله عنه ڪان روايت آندي آهي ته رسول الله ﷺ جن فرمايو ته: ڇا مان اوهان کي روزي، نماز ۽ خيرات کان ڀلو عمل ٻڌايان؟ عرض ڪيائون ته" هائو پاڻ فرمايائون ته: ٻن جي وچ ۾ ناهه ڪرائڻ (الخ-)(١)

" وَمَنْ يُّشَاقِقِ الرَّسُوْلَ مِنْۢ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُ الْهُدٰى وَيَتَّبِعْ غَيْرَ سَبِيْلِ الْمُؤْمِنِيْنَ نُوَلِّهٖ مَا تَوَلّٰى وَنُصْلِهٖ جَهَنَّمَ ۭ وَسَاۗءَتْ مَصِيْرًا "-هن آيت ۾ "يُشَاقِقِ" واحد مذڪر مضارع جو صيغو المشاقة ڪان ورتل آهي جنهن جي معنىٰ آهي المعاداة والمخالفة" (٢) دشمني ۽ مخالفت ڪرڻ، مطلب هي ٿيو ته جو به شخص سنڌس جي لاءِ هدايت جي روشن ٿيڻ ڪان پوءِ به رسول الله (ﷺ) جن جي مخالفت ڪندو ۽ مومنن جي رستي ڪان

(١) الدرالمنثور ص٦٨٥ جلد٢ (٢) فتح القدير ص٥١٤ ج١

سواءِ ھيو رستو وٺندو تہ ان کي اوڏانھن ئي ڦرڻ ڏينداسون جيڏانھن ڦريو آھي يعني اسين ان جي وچ ۾ رڪاوٽ نہ بنجنداسين، اھو بدنصيب رھندو جنھن سان الله تعالىٰ جي رحمت ساٿ نہ ڏيندي ۽ ان کي جھنم ۾ پھچائينداسون جيڪا نھايت بري جاءِ آھي ۽ ان ۾ ان کي موٽي اچڻو آھي.

## امت جو اجماع حجت آھي

ھن آيت ع ١١٥ مان ثابت ٿيو تہ حضور پر نور شافع يوم النشور ﷺ جن جي امت جو اجماع حجت ۽ شرعًا قطعي دليل آھي،جو تہ ھتي ٻن ڪمن کي وڏو گناھ ۽ جھنم ۾ داخل ڪرڻ جو سبب سڏيو ويو آھي، ھڪ رسول الله ﷺ جن جي مخالفت ڪرڻ ۽ ظاھر آھي تہ اھا مخالفت ڪفر ۽ وڏو وبال آھي، پر ان ۾ شرط آھي تہ ڄاڻي واڻي ڪري جيئن "مِنۢ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُ الْهُدٰى" مان ثابت آھي- علماءِ ڪرام لکيو آھي تہ جنھن ماڻھوءَ کي اسلام جي دعوت ئي نہ پھتي آھي تہ ان تي شريعت جي ٻين حڪمن جي اطاعت لازم ناھي ان جي لاءِ صرف توحيد جو عقيدو ڪافي آھي،جو تہ ان کي جڏھن دعوت نہ ملي تہ ان الله تعالىٰ جي رسول عليه الصلواة والسلام جن جي مخالفت نہ ڪئي؟ مخالفت تڏھن چئجي جڏھن ڄاڻي واڻي حبيب عليه الصلواة والسلام جن جي واٽ نہ وٺي، ھيءَ ڳالھ بہ ذھن نشين ڪرڻ گھرجي تہ رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي عقيدن ۾ مخالفت ڪرڻ ڪفر آھي، ۽ عملن ۾ مخالفت ڪرڻ فسق آھي(١) ٢- ٻيو جنھن ڪم تي سڀ مسلمان متفق ھجن ان کي ڇڏي ٻيو رستو اختيار ڪرڻ، مفسرن لکيو آھي تہ: وھو دليل علىٰ ان الاجماع حجة لا تجوز مخالفتھا کما لا تجوز مخالفة الکتاب والسنة لان الله تعالىٰ جمع بين اتباع غير سبيل المؤمنين وبين مشاقة الرسول في الشرط وجعل جزاءه الوعيد الشديد فکان اتباعھم واجبا کموالاة الرسول (٢) يعني "وَيَتَّبِعْ غَيْرَ سَبِيلِ الْمُؤْمِنِينَ" ان ڳالھ جو دليل آھي تہ امت جو اجماع حجت آھي جيئن قرآن پاڪ ۽ سنت جي مخالفت ڪرڻ ناجائز آھي، تيئن اجماع امت جي مخالفت ڪرڻ بہ ناجائز آھي؛ ڇو تہ الله تعالىٰ رسول الله ﷺ جن جي مخالفت ۽ مومنن جي رستي کان سواءِ ٻئي رستي تي ھلڻ کي ھڪ ئي شرط ۾ گڏ بيان ڪري ان جي جزا جھنم ۾ پھچائڻ بيان ڪئي آھي، ان جي ڪري ايمان

(١) نور العرفان ص١٥٢ (٢) المدارڪ ص٢٥١ ج١

وارن جي اجماع جي تابعداري ڪرڻ رسول الله ﷺ جن جي تابعداري ڪرڻ ۽ محبت وانگر آهي، ڇو تہ محمدي امت علىٰ نبيها الصلواة والسلام جو گمراهيءَ جي ڳالهہ تي اجماع نہ ٿيندو جيئن بيهقيءَ ڪتاب الاسماء والصفات ۾ ۽ ترمذي شريف حضرت عبدالله بن عمر رضي الله عنهما ڪان روايت آندي آهي تہ رسول الله ﷺ جن فرمايو" لَا يُجْمِعُ اللّٰهُ هٰذِهِ الْاُمَّةَ عَلَى الضَّلَالَةِ اَبَدًا وَيَدُ اللّٰهِ عَلَى الْجَمَاعَةِ فَمَنْ شَذَّ شُذَّ فِى النَّارِ(١) يعني الله تعالىٰ هن امت کي هميشه گمراهيءَ تي اجماع ڪرڻ نہ ڏيندو ۽ الله تعالىٰ جو (قدرتي) هٿ (مدد ۽ ساٿ) جماعت تي آهي پوءِ جيڪو جدا ٿيو تہ جهنم ۾ داخل ڪيو ويندو، انهن ئي ٻنهي محدثن حضرت ابن عباس رضي الله عنهما ڪان بہ روايت آندي آهي تہ رسول الله ﷺ جن فرمايو، "لَا يُجْمِعُ اللّٰهُ اُمَّتِيْ اَوْ قَالَ: هٰذِهِ الْاُمَّةَ عَلَى الضَّلَالَةِ اَبَدًا وَيَدُ اللّٰهِ عَلَي الْجَمَاعَةِ" (٢) يعني الله تعالىٰ منهنجي امت، يا فرمايائون تہ: هن امت کي گمراهيءَ جي رستي تي گڏ نہ ڪندو ۽ الله تعالىٰ جو قدرتي هٿ جماعت تي آهي،مذڪوره آيت تي حاشيہ عـ٨ لکندي علامہ مفتي احمد يار خان مرحوم لکيو آهي تہ: معلوم ٿيو تہ تقليد ضروري آهي ڇو تہ اڪثر مسلمانن جو اهو طريقو آهي ان ئي نموني سان ختم فاتحه، ميلاد جي محفل، بزرگن جا ساليانا عرس مسلمانن جي اڪثريت جو عمل آهي ۽ مسلمان انهن کي سٺو سمجهي ڪندا آهن ان جي ڪري اهي بهتر آهن رب فرمايو آهي" وَكَذٰلِكَ جَعَلْنٰكُمْ اُمَّةً وَّسَطًا لِّتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَى النَّاسِ" ۽ اسان اوهان کي پلي، وچٿري امت ڪيو آهي تانت ماڻهن تي گواهہ رهو ۽ حضور ﷺ جن فرمايو "اَنْتُمْ شُهَدَآءُ اللّٰهِ فِي الْاَرْضِ" اوهان زمين ۾ الله جا شاهد آهيو ۽ فرمايو اٿن تہ "مَا رَآهُ الْمُؤْمِنُوْنَ حَسَنًا فَهُوَ عِنْدَ اللّٰهِ حَسَنٌ" جنهن ڪم کي مومن سهڻو سمجهن ٿا اهو الله تعالىٰ وٽ بہ سهڻو آهي (٣) حضرت امام شافعي عليه الرحمة ڪان ڪنهن پڇيو تہ امت جي اجماع جي حجت هجڻ جو دليل قرآن ۾ آهي، پاڻ ٽي ڏينهن ۽ ٽي راتيون ان دليل ڳولڻ لاءِ ٽي پيرا ڏينهن جو ۽ ٽي پيرا رات جو سڄو قرآن مطالعو ڪرڻ ڪان پوءِ ان آيت کي دليل سمجهي علماءجي اڳيان پيش ڪيائون ۽ سيني قبول ڪري اقرار ڪيو تہ امت جي اجماع جي دليل هجڻ لاءِ اها آيت ڪافي آهي(۴)

(١) الدرالمنثور ص٦٨٦ ج٢ (٢) الدرالمنثور ص٦٨٦ ج٢
(٣) نورالعرفان ص١٥٢ (۴) معارف القرآن ص٥۴٦ جلد٢

إِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذَالِكَ لِمَنْ يَّشَآءُ ۚ

بيشڪ الله نه ٿو بخشي ھيءَ (ڳالھ) جو شرڪ ڪيو وڃي ان سان ۽ بخشي ٿو جيڪي ان کان سواءِ جنھن کي گھري

وَمَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدْ ضَلَّ ضَلَالًا بَعِيْدًا ﴿١١٦﴾ إِنْ يَّدْعُوْنَ مِنْ

۽ جيڪو شرڪ ٿو ڪري الله سان پوءِ تحقيق گمراھ ٿيو گمراھي پرانھين نه ٿا عبادت ڪن

دُوْنِهٖٓ اِلَّآ اِنٰثًا ۚ وَاِنْ يَّدْعُوْنَ اِلَّا شَيْطٰنًا مَّرِيْدًا ﴿١١٧﴾ لَّعَنَهُ اللّٰهُ ۘ وَقَالَ لَاَتَّخِذَنَّ مِنْ عِبَادِكَ

ان کان سواءِ مگر عورتن جي ۽ نه ٿا پوڄين مگر شيطان سرڪش کي لعنت ڪئي ان کي الله ۽ چيو (شيطان) ته البت ضرور وٺندس تنھن جن

نَصِيْبًا مَّفْرُوْضًا ﴿١١٨﴾ وَّلَاُضِلَّنَّهُمْ وَلَاُمَنِّيَنَّهُمْ

ٻانھن مان ڀاڱو مقرر ڪيل ۽ البت ضرور گمراھ ڪندس انھن کي ۽ البت ضرور خواھشون ڪرائيندس انھن کان ۽ البت ضرور امر

وَلَاٰمُرَنَّهُمْ فَلَيُبَتِّكُنَّ اٰذَانَ الْاَنْعَامِ وَلَاٰمُرَنَّهُمْ فَلَيُغَيِّرُنَّ خَلْقَ اللّٰهِ ۚ

ڪندس انھن کي پوءِ البت ضرور چيرينداڪن چوپاين جا ۽ البت ضرور امر ڪندس انھن کي پوءِ البت ضرور ڦيرائيندا الله جي مخلوق کي

وَمَنْ يَّتَّخِذِ الشَّيْطَانَ وَلِيًّا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ فَقَدْ خَسِرَ خُسْرَانًا

۽ جيڪو وٺي ٿو شيطان کي دوست ڪري الله کان سواءِ پوءِ تحقيق نقصان ۾ پيو نقصان

مُّبِيْنًا ﴿١١٩﴾ يَعِدُهُمْ وَيُمَنِّيْهِمْ ۚ وَمَا يَعِدُهُمُ الشَّيْطَانُ اِلَّا غُرُوْرًا ﴿١٢٠﴾

پڌرو وعدو ٿو ڏي انھن کي ۽ خواھشون ٿو ڏياري انھن کي ۽ نه ٿو وعدو ڏي انھن کي شيطان مگر ٺڳي-

اُولٰٓئِكَ مَاْوٰهُمْ جَهَنَّمُ ۫ وَلَا يَجِدُوْنَ عَنْهَا مَحِيْصًا ﴿١٢١﴾

اھي جاءِ انھن جي جھنم آھي ۽ نه لھندا ان کان ڇٽڻ جي جاءِ.

وقف لازم

# تفسير

هن کان اڳ ۾ غلط مشورن ۽ حضور عليه الصلواة والسلام جن جي مخالفت کان منع جو ذکر هيو جيکي وڏا گناهہ آهن هاڻي انهن گناهن مان هک وڏي ۾ وڏي گناهہ جو ذکر کندي ارشاد ٿي رهيو آهي تہ "اِنَّ اللّٰهَ لَايَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ وَيَغْفِرُ مَادُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَّشَآءُ" يعني الله تعالىٰ اها ڳالهہ نہ ٿو بخشي تہ ان سان کنهن کي شريک بنايو وڃي باقي ان کان سواءِ ٻيا گناهہ جنهن کي بہ گهري تہ بخشي ٿي، چاڻڻ گهرجي تہ هي الفاظ هن سورة جي آيت ع۴٨ ۾ بہ آيل آهن پر اتي آخر ۾ "فَقَدِ افْتَرٰۤى اِثْمًا عَظِيْمًا" آيو ۽ هتي "فَقَدْ ضَلَّ ضَلٰلًاۢ بَعِيْدًا" آيو آهي. ائين ڇو آيو؟ جي متعلق مفسرن جو چوڻ آهي تہ اڳئين آيت جا مخاطب سڌا سنوان اهل کتاب مان يهودي هئا جن کي توراة جي ذريعي توحيد جو حق هجڻ، شرک جو باطل هجڻ ۽ نبي کريم ﷺ جن جو برحق هجڻ سڀ کجهہ معلوم هو ان هوندي بہ شرک ۾ ڦاسي انهن پنهنجي عمل سان ثابت کيو هو تہ ڇڻ تورات جي تعليم بہ اهو شرک آهي ۽ اهو سراسر ڪوڙ ۽ بهتان آهي تڏهن اتي آخر ۾ "فَقَدِ افْتَرٰۤى اِثْمًا عَظِيْمًا" ذکر کيو ويو ۽ هن آيت جا سڌا سنوان مخاطب مکه مکرمه ۾ رهڻ وارا مشکر هيا جن وٽ هن کان اڳ ۾ نہ کو نبي آيو هو ۽ نہ کين کو کتاب پهتو هو پر جڏهن تہ توحيد جا عقلي دلائل بلکل واضح ۽ پنهنجن هٿن سان گهڙيلن پٿرن کي پنهنجو معبود بنائڻ عقلمند انسان جي لاءِ بلکل باطل ۽ لغو هيو ان جي کري هتي "فَقَدْ ضَلَّ ضَلٰلًاۢ بَعِيْدًا" آيو آهي.

## سوال

مشرکن ۽ کافرن جيکو کفر ۽ شرک جو گناهہ کيو اهو سندن حياتيءَ جي محدود مدت تائين هو ۽ جڏهن انهن جو گناهہ محدود آهي تہ ان جي سزا بہ محدود وقت تائين هجڻ گهرجي، سزا دائمي ۽ ابدي ڇو مقرر کئي وئي آهي؟

## جواب

کفر ۽ شرک کرڻ وارو جڏهن تہ ان کي گناهہ نہ پرن کي ڀلائي سمجهي ان تي هميشہ قائم رهڻ جو عزم مصمم ۽ پکو عقيدو ٿو رکي ۽

مرڻ تائين ان کان توبه جو ارادو نه ٿو ڪري ۽ ان ئي عقيدي سان وابسته رهندي مري ٿو وڃي ته ڇڻ ان پنهنجي اختيار جي حد تائين اهو دائمي ۽ ابدي جرم ڪيو آهي جنهن جي سزا به دائمي ۽ ابدي مقرر ڪئي ويئي آهي.

## شرڪ جي حقيقت

الله تعالىٰ سان عبادت جي مستحق هجڻ ۽ محبت رکڻ ۾ ٻئي ڪنهن کي برابر سمجهڻ شرڪ آهي، قرآن ڪريم مشرڪن جي ان قول کي جيڪو جهنم ۾ پهچي چوندا نقل ڪندي ارشاد فرمايو آهي ته: "تَاللّٰهِ اِنْ كُنَّا لَفِیْ ضَلٰلٍ مُّبِیْنٍ اِذْ نُسَوِّیْكُمْ بِرَبِّ الْعٰلَمِیْنَ" يعني الله تعالىٰ جو قسم آهي ته اسين کلئي گمراهيءَ ۾ هياسين جو اوهان کي رب العالمين سان برابر سمجهندا هياسين، ظاهر آهي ته مشرڪن جو به هي عقيدو هو ته اسان جا هٿن سان گهڙيل پٿر هن جهان جا خالق ناهن پر انهن ۾ غلط فهمين جي مدار تي انهن کي عبادت جو مستحق ۽ الله تعالىٰ سان محبت ۾ برابر ٿي سمجهيو ۽ اهوئي شرڪ هيو جنهن انهن کي جهنم ۾ پهچايو.

## فائدو

هن مان ثابت ٿيو ته الله تعالىٰ سان برابر سمجهڻ کان سواءِ حضور پر نور ﷺ جن سان محبت رکڻ، سندن معجزات، ڪمالات ۽ مٿن رب جي عنايات جو ذڪر ڪرڻ شرڪ ناهي پر سندن شان لڪائڻ، نهن يهودين جي واٽ آهي جيڪي توراة ۾ لکيل سندن تعريف جون آيتون ڊاهي ڇڏيندا هئا، مفتي محمد شفيع ديوبندي صاحب لکيو آهي ته معلوم هوا ڪه الله تعالىٰ کي مخصوص صفات خالق، رازق، قادر مطلق عالم الغيب والشهادة وغيره مين ڪسي مخلوق ڪو الله ڪے برابر سمجهنا شرڪ هے (١) راقم عرض ٿو ڪري ته جڏهن پڪو سني مسلمان اهو عقيدو رکڻ کان سواءِ حضور عليه الصلواة والسلام جن جي محبت ۾ سندن ساراه ۽ ثنا ڪري ٿو ته ان کي مشرڪ يا بدعتي قرار ڏيڻ نه صرف وڏو گناهه پر ڪفر ۽ الحاد آهي.

## هڪ اهم مسئلو

هن آيت مان اهو به ثابت ٿيو ته مري ويل ڪافر جي لاءِ مرحوم، مغفور، غفرله يا رحمة الله عليه چوڻ، ان جي لاءِ مغفرت جي طلب ڪرڻ، ان کي

(١) معارف القرآن ص٥٥٠ ج٢

ثواب پهچائڻ لاءِ خيرات وغيره ڪرڻ سڀ حرام آهي، ڇو تہ مشرڪ ۽ ڪافر جي مغفرت ناممڪن آهي ۽ ناممڪن لاءِ دعا گهرڻ حرام آهي.

## تنبيه

ان مان اهي مسلمان عبرت حاصل ڪن جيڪي مشرڪن ۽ ڪافرن جي خوشامد ۾ ڪافرن ليڊرن جي لاءِ مرحوم جو لفظ ڳالهائيندا آهن يا انهن جي لاشن يا ساڙيل جسمن جي مٽيءَ وغيره وارين جاين ۽ قبرن جي مٿان وڃي گلن جون چادرون چاڙهيندا آهن.

## فائدو

هن مان ثابت ٿيو تہ شرڪ صرف الله تعالىٰ کان سواءِ ٻئي جي عبادت ۽ پوڄا ڪرڻ نہ پر الله تعالىٰ جي حڪم جي مقابلي ۾ ٻئي ڪنهن جي حڪم کي پسند ڪرڻ بہ هڪ قسم جو شرڪ آهي.

## حضرت علي رضي الله تعالىٰ عنه جي پياري آيت

محدث ترمذيءَ حضرت علي رضي الله عنه کان روايت آندي آهي تہ ان فرمايو" ما في القرآن آية احب الي من هذه الاية اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ" الايه (١) يعني مون کي قرآن پاڪ ۾ هن آيت کان وڌيڪ پياري ڪا بہ آيت ناهي، راقم عرض ٿو ڪري تہ اهو ان جي ڪري جو هن ۾ شرڪ کان سواءِ ٻين گناهن جي مغفرت جي اميد نظر اچي رهي آهي "اِنْ يَّدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِهٖٓ اِلَّآ اِنٰثًا" عرب جا ڪافر ملائڪن کي الله تعالىٰ جون نياڻيون سڏي انهن جي پوڄا ڪندا هئا ۽ عورتن جا نالا عزيٰ، لات، نائله وغيرها بتن تي رکي انهن کي زيور پارائي انهن جي عبادت ڪندا هئا، انهن جي متعلق هي جملو نازل ٿيو تہ "اهي ڪافر الله تعالىٰ کان سواءِ جن جي عبادت ڪن ٿا اهي تہ عورتون آهن "وَاِنْ يَّدْعُوْنَ اِلَّا شَيْطٰنًا مَّرِيْدًا لَّعَنَهُ اللّٰهُ" ۽ صرف شيطان سرڪش جي عبادت ڪن ٿا جنهن تي الله تعالىٰ لعنت ڪئي آهي.

## فائدو

هتي "اِنْ يَّدْعُوْنَ" بہ پيرا آيو آهي اڪثر مفسرن سڀورن هتي "يَدْعُوْنَ" جي معنيٰ يعبدون لکي آهي مقصد تہ ڪافر عورتن جي نالن تي ٺاهيلن ۽ سينگاريلن

(١) تفسيرالقاسمي ص٤٧٦ ج٣

بتن ۾ سرڪش شيطان جي عبادت ڪن ٿا جنهن تي الله تعالیٰ لعنت ڪئي آهي. شام ملڪ جي مشهور علامه جمال الدين قاسميءَ هن آيت جي معنيٰ ڪندي لکيو آهي ته ”اِنْ يَّدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِهٖٓ“ ما يعبدُ مشرکو مکة ونحوهم من دون الله (١) يعني مڪي جا مشرڪ ۽ انهن جهڙا ٻيا الله تعالیٰ کان سواءِ صرف عورتن جي عبادت ڪن ٿا، فارسي زبان ۾ تفسير حسيني هن لفظ جي معنيٰ ڪندي لکيو آهي ته ”ان يدعون من دونه“ نمي پرستندبدون حق تعالیٰ (٢) يعني الله تعالیٰ کان سواءِ عورتن جي نالن رکيلن بتن جي پوڄا ڪن ٿا، مڪي مڪرمه جي اسلامي يونيورسٽيءَ ۾ کلية الشريعة والدراسات الاسلاميه جي استاد محمد علي صابونيءَ هنن لفظن جي معنيٰ بيان ڪندي لکيو آهي ما يدعو هؤلاء المشرکون وما يعبدون من دون الله- ٿورو اڳتي لکيو اٿس، اي وما يعبدون الا شيطانا متمردا (٣) علامه ابو السعود لکيو آهي ته: ان يدعون من دونه اي ما يعبدون (٤) علامه ابو حيان اندلسي لکيو آهي ته المعني ما يعبدون من دون الله (٥) مقصد ته يدعون جي معنيٰ يعبدون(عبادت ڪن ٿا) آهي ان جي ڪري هر جاءِ تي ان لفظ جي معنيٰ سڏين يا پڪارين ڪرڻ مشهور مفسرن جي ڪيل معنيٰ جي خلاف آهي ڪٿي سڏين ٿا معنيٰ آهي ته ڪٿي عبادت ڪن ٿا. ”وَقَالَ لَاَتَّخِذَنَّ مِنْ عِبَادِكَ نَصِيْبًا مَّفْرُوْضًا“ ۽ يعني جڏهن شيطان سجدي نه ڪرڻ جي ڪري لعنتي بڻيو ۽ تڙجي ويو ته انهيءَ وقت چيو هيائين ته مان ته تباهه ٿي ويس پر تنهنجن ٻانهن مان به جيڪي حضرت آدم عليه السلام جو اولاد هوندا هڪ تعدد حصو پاڻ سان وٺي رکندس، ”وَّلَاُضِلَّنَّهُمْ وَلَاُمَنِّيَنَّهُمْ“ ۽ مان انهن کي ضرور گمراهه ڪندس ۽ ضرور سڏون ڏياريندس ته دنيا ۾ هيئن ٿيندو، هيئن ٿيندو ۽ آخرت ۾ اوهان کي ڪجهه به نه ٿيندو، ”وَلَاٰمُرَنَّهُمْ فَلَيُبَتِّكُنَّ اٰذَانَ الْاَنْعَامِ وَلَاٰمُرَنَّهُمْ فَلَيُغَيِّرُنَّ خَلْقَ اللّٰهِ“ ۽ مان انهن کي ضرور امر ڪندس پوءِ بتن جي نالن تي چوپاين جا ڪن چيريندا ۽ الله تعالیٰ جي ٺاهيل مخلوق ۾ سندن مقرر ڪيل فرمانن جي صورتن کي مٽائيندا، ڪافرن جو قانون هوندو هو جو ڳئون، اٺ ۽ ٻڪريءَ وغيرها جي ڪن کي چير ڏيئي بتن جي نالي ڪري ڇڏيندا هئا يا انهن جي ڪنن ۾ ڪا اهڙي نشاني وجهي ڇڏيندا هئا جنهن سان خبر پوي ته هي جانور بتن جي نالي ڪيل آهي ۽ ”الله جي مخلوق کي ڦيرائيندا“ ان جون مختلف صورتون آهن

(١) تفسير القاسمي ص٤٧٦ جلد٣ (٢) تفسير حسيني ص١٥٨
(٣) صفوة التفاسير ص٣٠٥ جلد١ (٤) تفسير ابو السعود ص٢٣٣جلد١جزء٢
(٥) البحر المحيط ص٣٥٠جلد٣

ڪنهن ڪي ڪدڙو بنائڻ، يا بدن تي سوئيءَ سان ڪارا داغ ۽ نشان ڪيرائڻ وغيره، حضرت علامه مفتي أحمد يار خان نعيمي عليہ الرحمة لکيو آهي تہ ڏاڙهي ڪوڙائڻ بہ ان ۾ داخل آهي جيئن عورت ڪي مٿو ڪوڙائڻ حرام آهي تيئن مردن ڪي ڏاڙهي ڪوڙائڻ بہ حرام آهي (١) علامه ابو محمد عبدالحق حقاني صاحب "فَلَيُغَيِّرُنَّ خَلْقَ اللّٰهِ" جي تفسير ۾ لکيو آهي تہ مفسرن جا هن جي مطلب ۾ بہ قول آهن ١- پهريون سعيد بن عبير ۽ سعيد بن مسيب، حسن بصري، ضحاڪ، مجاهد ۽ سدي جو ۽ اهو هي آهي تہ الله جي خلق ۾ تغير (ڦيرڦارڪرڻ) جو مطلب هي آهي تہ هر انسان جي فطرت ۾ الله تعالىٰ جي جيڪا توحيد ۽ سچائي رکيل آهي (جيئن حديث شريف ۾ آيو آهي تہ هر ٻار فطرت (واري دين) تي ڄمندو آهي پر ان جا ماءُ پيءُ ان ڪي يهودي يا نصارو يا مجوسي بنائيندا آهن، ان فطرت واري دين ڪي اسلام سڏيو ويو آهي) شيطان ڪين وهم، شڪ ۽ شبها پيدا ڪري ان ڪان ڦيرائيندو آهي هتي ڦيرائڻ مان اها مراد آهي ۽ ممڪن آهي تہ ان مان مراد حلال ڪي حرام ڇوڻ ۽ حرام ڪي حلال ڇوڻ هجي،٢- ٻيو قول آهي تہ ان مان مراد ظاهري طرح ڦيرڦار ڪرڻ آهي جيئن عورتون وار ڪوڙائين يا مرد ڏاڙهيون ڪوڙائين، اهڙيءَ طرح جيڪي انساني ارواح هن جهان ۾ سفر جي نموني تي ان لاءِ آيا آهن تہ ٻلن ۽ سهڻن عقيدن سان گڏ نيڪن عملن جي ذريعي ڪمالات حاصل ڪري وري عالم قدس سان وڃين ملن انهن ارواحن ڪي غضب، شهوت ۽ وهم جي ذريعي ڦٽڻ ۽ گندو بنائڻ بہ تغيير خلق الله آهي. (٢) مفسر نعيميءَ ۽ علامه آلوسي عليهما الرحمة لکيو آهي تہ،ڏاڙهيءَ ڪي ڪارو رنگ هڻڻ بہ ان ۾ داخل آهي (٣) ان جي ڪري ڏاڙهي ڪوڙائڻ يا ان ڪي ڪارو رنگ ڪرڻ سخت گناهہ آهي "وَمَنْ يَّتَّخِذِ الشَّيْطٰنَ وَلِيًّا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ" ۽ جيڪو الله ڪان سواءِ شيطان ڪي دوست ٿو بنائي.

## "من دون الله" جي تحقيق ۽ سمجهاڻي

ڄاڻڻ گهرجي تہ "دون" لفظ جي لغوي معنىٰ آهي ڪنجڻ ۽ ان جون اصطلاحي معنائون مختلف آهن- الا، غير ۽ دون ٽنهي لفظن جي معنىٰ "سواءِ" ڪئي ويندي آهي، جتي الا- جو لفظ ايندو اتي سواءِ مان مراد آهي سڀ ڪنهن ڪان سواءِ" پنهنجو هجي يا پرائو.جيئن فرمان رباني آهي، "لَا تَعْبُدُوْٓا اِلَّآ اِيَّاهُ" (٤) ان ڪان سواءِ

(١) نور العرفان ص١٥٣ (٢) تفسير حقاني ص٢٢٨ ج٣
(٣) تفسير نعيمي ص٤٤٩ جلد٥ (٤) سورة بني اسرائيل آيت ٢٣

ڪنهن جي بہ عبادت نہ ڪيو پوءِ اهو بت هجي يا سج، چنڊ، تارا وغيره هجن ها يا نبي ۽ ولي، يا- لا اله الاالله، الله کان سوا ڪو بہ عبادت جو لائق ناهي، نبي،ولي هجي يا بت وغيره، ۽ "غير" جي معنىٰ بہ سواءِ آهي پرا ها پراون جي لاءِ استعمال ٿيندي آهي، جيئن قرآني قول آهي، "أَفَغَيْرَ اللَّهِ تَأْمُرُونِّي أَعْبُدُ أَيُّهَا الْجَاهِلُونَ" (١) يعني جڏهن الله تعالىٰ جا پيارا ٻانها عبادت جا لائق ناهن تہ پوءِ اي جاهلو! مون کي الله کان سواءِ ٻين جي عبادت جو چو ٿا چئو؟ ۽ "دون" جي معنيٰ بہ سوا آهي پر اها غالبا مقابل ۽ دشمن لاءِ استعمال ڪئي ويندي آهي جيئن ايزدي ارشاد آهي "وَادْعُوا شُهَدَاءَكُمْ مِنْ دُونِ اللَّهِ إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ (٢) يعني جيڪڏهن اوهان قرآن پاڪ جي ڪلام الله هجڻ ۾ شڪ ٿا ڪيو تہ پوءِ ان جهڙي هڪ سورة ناهي ڏيڪاريو ۽ جيڪڏهن سچا آهيو تہ الله جي مقابلي ۾پنهنجن مددگارن کي سڏيو، هتي "دون" جي معنىٰ الله جي مقابلي ڪرڻ وارا ۽ ان جا دشمن آهن، ان جي ڪري "من دون الله" جي لفظ واريون آيتون نبين سڳورن عليهم الصلواة والسلام ۽ ولين پيارن تي لڳائڻ نہ گهرجن (٣) "فَقَدْ خَسِرَ خُسْرَانًا مُبِينًا" يعني جنهن شيطان کي الله تعالىٰ جي مقابلي ۾ دوست بنايو اهو يقينا کليل نقصان ۾ پيو ۽ سندس دنيا، قبر ۽ قيامت اهڙا برباد ٿيا جو اها بربادي هر سمجهدارا نسان جي اڳيان کليل ۽ ظاهر آهي، "يَعِدُهُمْ وَيُمَنِّيهِمْ" يعني شيطان انهن کي وعدا ڏيندو آهي تہ اوهان عيش ڪيو بدمعاشي ۽ برائيءَ ۾ خرچ ڪريو تہ نالي وارا ٿيندؤ، ۽ سڌون ڪرائيندو آهي تہ اوهان کي اجان جواني، صحت مال ۽ ملڪيت آهي اهي هتي براين ۽ بچڙاين ۾ اڏايو اڳتي بہ الله تعالىٰ ڏيندو ڪو نہ ڇڏيندو، "وَمَا يَعِدُهُمُ الشَّيْطَانُ إِلَّا غُرُورًا" يعني شيطان جيڪي انهن سان وعدا ڪري ٿو اهي ٺڳيءَ کان سواءِ ڪجهہ ناهن اهو مردود عين وقت تي ڏک ڪڍندو آهي، "أُولَٰئِكَ مَأْوَاهُمْ جَهَنَّمُ" يعني شيطان کي دوست رکڻ وارن جي آخري جاءِ جهنم آهي،انهن مان اهي سيئي جن ۽ انسان مراد آهن جيڪي ان ملعون،مردود شيطان جي چڪر ۾ رهيا يا رهندا جهنم انهن جي دائمي قيامگاهہ ۽ هميشہ رهڻ واري جاءِ آهي، "وَلَا يَجِدُونَ عَنْهَا مَحِيصًا" يعني شيطان جا تابعدار، دوست، جن توڙي انسان جهنم ۾ پهچڻ کان پوءِ ان کان بچاءِ جي ڪا بہ جاءِ نہ لهندا، ان ۾ هميشه سڙندا ۽ سزا کائيندا رهندا.

(١) سورة زمر آيت ٣٤ (٢) سورة بقره رکوع٣آيت٢٣

(٣) تفسير نعيمي ص٤٥٠ ج٥

وَالَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ سَنُدۡخِلُهُمۡ جَنّٰتٍ تَجۡرِىۡ مِنۡ

۽ جن ايمان آندو ۽ ڪيائون صالح عمل جلد داخل ڪنداسون انهن کي بهشتن ۾ جو وهن ٿيون

تَحۡتِهَا الۡاَنۡهٰرُ خٰلِدِيۡنَ فِيۡهَاۤ اَبَدًا ؕ وَعۡدَ اللّٰهِ حَقًّا ؕ وَمَنۡ

هيٺان انهن جي نهرون رهندا انهن ۾هميشه الله جو وعدو سچو آهي ۽ڪير آهي

اَصۡدَقُ مِنَ اللّٰهِ قِيۡلًا ﴿۱۲۲﴾ لَيۡسَ بِاَمَانِيِّكُمۡ وَلَاۤ اَمَانِيِّ اَهۡلِ

وڌيڪ سچو الله کان فرمان ۾ ، ناهي اوهان جي سڌن تي ۽ نہ اهل ڪتاب جي سڌن تي جيڪو

الۡكِتٰبِ ؕ مَنۡ يَّعۡمَلۡ سُوۡٓءًا يُّجۡزَ بِهٖ وَلَا يَجِدۡ لَهٗ مِنۡ دُوۡنِ اللّٰهِ

ڪندو برائي تہ سزا ڏنو ويندو ان جي ۽ نہ لهندو پنهنجي لاءِ الله کان سواءِ

وَلِيًّا وَّلَا نَصِيۡرًا ﴿۱۲۳﴾ وَمَنۡ يَّعۡمَلۡ مِنَ الصّٰلِحٰتِ مِنۡ ذَكَرٍ اَوۡ اُنۡثٰى

ڪودرست ۽ نہ ڪو مددگار ۽ جيڪو ڪندو صالح عمل مرد يا عورت

وَهُوَ مُؤۡمِنٌ فَاُولٰٓئِكَ يَدۡخُلُوۡنَ الۡجَنَّةَ وَلَا يُظۡلَمُوۡنَ نَقِيۡرًا ﴿۱۲۴﴾

۽ اهو ايماندار آهي پوءِ اهي داخل ٿيندا بهشت ۾ ۽ نہ ظلم ڪيا ويندا ذري جيترو

وَمَنۡ اَحۡسَنُ دِيۡنًا مِّمَّنۡ اَسۡلَمَ وَجۡهَهٗ لِلّٰهِ وَهُوَ مُحۡسِنٌ وَّاتَّبَعَ

۽ ڪير وڌيڪ سهڻو آهي دين ۾ ان کان جو جهڪايائين منهن پنهنجو الله ڏانهن ۽ اهو نيڪوڪار آهي ۽پيروي

مِلَّةَ اِبۡرٰهِيۡمَ حَنِيۡفًا ؕ وَاتَّخَذَ اللّٰهُ اِبۡرٰهِيۡمَ خَلِيۡلًا ﴿۱۲۵﴾ وَلِلّٰهِ مَا فِى

ڪيائين ابراهيم جي ملت جي حق ڏي ورندڙ باطل کان منهن موڙيندڙ ۽ بڻايو الله ابراهيم کي دوست

ع ١٨ ١١ ١٥

السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الْاَرْضِ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ بِكُلِّ شَىْءٍ مُّحِيْطًا ﴿۱۲۶﴾

۽ الله جو ئي آهي جيڪو آسمانن ۾ آهي ۽ جيڪو زمين ۾ آهي ۽ آهي الله هر شيء کي گهيري ۾ وٺندڙ

# تفسير

هن کان اڳ ۾ ڪافرن ۽ انهن جي بدڪردارن جو ذڪر هو هاڻي مومنن ۽ انهن جي نيڪ عملن جي بدلي جو ذڪر ڪندي ارشاد ٿيو آهي "وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا- کان "وَعْدَاللّٰهِ حَقًّا" تائين، يعني جن ايمان آندو ۽ صالح عمل ڪيائون اسين تمام جلد انهن کي اهڙن بهشتن ۾ داخل ڪنداسون جن جي هيٺان نهرون وهن ٿيون انهن ۾ هميشہ رهيا پيا هوندا، نہ اتاهين ٻاهر ڪڍيا ويندا ۽ نہ اتي انهن لاءِ موت ايندو هميشہ پيا مزا ماڻيندا، اهو الله تعالىٰ جو پڪو وعدو سچ ۽ حق آهي، شيطان جي وعدي وانگر ٺڳي ۽ ڌوڪو ناهي ان جي ڪري نيڪ عملن ڪرڻ وارن مومنن جو جنتي هجڻ يقيني آهي خصوصًا اهي پيارا جن کي حضور ﷺ جن جنتي هجڻ جي بشارت ڏني هئي جيئن حضرات چار يار ۽ ٻيا صحابي رضي الله عنهم- انهن کي جيڪو جنتي نہ مڃي اهو الله تعالىٰ جي وعدي ۽ نبي مڪرم صلي الله تعالىٰ عليه وسلم جن جي ڏنل بشارت کي ڪوڙو چوڻ جي ڪري ڪافر آهي" وَمَنْ اَصْدَقُ مِنَ اللّٰهِ قِيْلًا" ۽ الله تعالىٰ کان وڌيڪ ڳالهہ ۾ ڪير سچو آهي؟ يعني ڪير بہ ان کان وڌيڪ سچو ناهي ان کان ڪوڙ جو صادر ٿيڻ ناممڪن ۽ محال بالذات آهي، ڇو تہ ڪوڙ عيب آهي ۽ عيب جو هجڻ سندس شان الوهيت جي خلاف آهي، "لَيْسَ بِاَمَانِيِّكُمْ وَلَآ اَمَانِيِّ اَهْلِ الْكِتٰبِ".

## شان نزول

مفسرن جا هن آيت جي شان نزول ۾ ٻہ قول آهن، ١- هڪ ابن جرير ۽ ابن ابي حاتم مفسر قرآن سدي عليه الرحمه کان روايت ڪيو آهي تہ هڪ ڀيري مسلمانن ۽ اهل ڪتاب يهودين ۽ نصارن ۾ مناظرو ٿيو يهودين چيو تہ اسان جو نبي حضرت موسىٰ عليه السلام اوهان جي نبي حضرت محمد مصطفىٰ ﷺ جن کان اول ۽ افضل آهي ۽ اسان جو ڪتاب توراة اوهان جي ڪتاب قرآن مجيد کان اول ۽ اسان جو قبلو

بيت المقدس اوهان جي قبلي بيت الله کان اول آهي ان جي ڪري اسين هر حال ۾ ڪٿي ڇا بہ ڪيون جنتي آهيون ۽ تقريبًا عيسائين بہ اهڙي نموني ڳالهايو. مسلمانن سندن جواب ۾ چيو تہ اسان جو نبي آخري نبي ۽ اسان جو ڪتاب قرآن مجيد، ٻئي ڪنهن ڪتاب سان منسوخ نہ ٿيڻ وارو آخري ڪتاب ۽ اسان جو قبلو ڪعبہ شريف اوهان جي قبله بيت المقدس کان اعلیٰ، افضل ۽ گهڻو اڳ ۾ آهي ان جي ڪري اسين اوهان کان پلا، بهتر ۽ بخشش جي لائق آهيون، انهن جي متعلق هيءَ آيت نازل ٿي (١)

٢- ٻيو قول هي آهي تہ مڪي جي مشرڪن چيو هو تہ نہ قيامت ٿيندي نہ حساب ٿيندو۽ اهل ڪتاب يهودين چيو هو تہ "لَنْ تَمَسَّنَا النَّارُ إِلَّا أَيَّامًا مَّعْدُودَاتٍ" اسان کي صرف ڳاڻي جي پوڄا وارا ڳڻيل ڏينهن جهنم جي باهہ ونندي، ٻيو ڪو ڏوهہ اسان جي لاءِ عذاب جو سبب نہ ٿيندو ڪٿي ڇا بہ ڪيون انهن جي جواب ۾ هي آيت نازل ٿي. (٢) الله تعالیٰ فرمايو تہ اي مسلمانو! ۽ اي مشرڪو! جن ثوابن ۽ سهڻن بدلن جو ذڪر ٿيو آهي اهي نہ اوهان جي سڪڻين سڌن سان هٿل آهن ۽ نہ اهل ڪتاب جي سڌن سان، پر اهي ايمان ڪامل ۽ عمل صالح سان ملندا جيڪڏهن اوهان کي بہ ان ثواب ۽ سهڻي بدلي جي خواهش آهي تہ ايمان ڪامل سان گڏ صالح عمل ڪيو. "مَنْ يَعْمَلْ سُوءًا يُجْزَ بِهِ وَلَا يَجِدْ لَهُ مِنْ دُونِ اللَّهِ وَلِيًّا وَلَا نَصِيرًا" يعني جيڪو بہ شخص جن يا انسان ڪفر جهڙي برائي ڪندو تہ ان جي ڪيس سخت سزا ڏني ويندي ۽ جيڪڏهن ٻيو ڪو گناهہ ڪندو تہ ان جي بہ ڪيس دنيا ۾ برڪت ۽ رحمت گهٽائڻ سان ۽ آخرت ۾ نيڪين گهٽائڻ سان سزا ڏني ويندي ۽ اهو پنهنجي لاءِ الله تعالیٰ جي مقابل ڪو دوست ۽ مددگار نہ لهندو،احمد، هناد،عبد بن حميد، حڪيم ترمذي، ابن جرير، ابو يعلي، ابن منذر، ابن حبان،عمل اليوم والليلة ۾ ابن السني،حاڪم، بيهقي ۽ المختارة ۾ ضياءالمقدسي حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنه کان روايت آندي آهي، ان فرمايو تہ مون رسول الله ﷺ جن جي خدمت ۾ عرض ڪيو تہ يا رسول الله! هن آيت "مَنْ يَعْمَلْ سُوءًا يُجْزَ بِهِ" (جيڪو ڏوهہ ڪندو تہ ان جي سزا ڏنو ويندو) کان پوءِ جيڪڏهن هر گناهہ جي سزا ڏنا ويندا سون تہ ڇوٽڪارو ڪيئن ٿيندو؟ پاڻ فرمايائون تہ الله تعالیٰ توکي مغفرت نصيب ڪري ڇا توکي تڪليف، بيماري،غم ۽ ڏک نہ پهتا

(١) تفسير خازن ص٤٠٦ جلد١ روح المعاني ص١٥٢ جلد٢ جزءُ ٥

(٢) تفسير خازن ص٤٠٦ جلد١ روح المعاني ص١٥٢ جلد٢ جزءُ ٥

آهن عرض ڪيم، هائو، فرمايائون تہ "اهائي جزا آهي" جنهن جو هن آيت ۾ ذڪر ڪيو ويو آهي، اهڙي طرح احمد، بزار، ابن جرير، ابن مردويہ، ۽ "المتفق والمفترق ۾ خطيب حضرت ابن عمر رضي الله عنهما. ڪان روايت آندي آهي تہ مون حضرت ابوبڪر ڪان ٻڌو، جنهن چيو تہ رسول الله ﷺ جن فرمايو "مَنْ يَعْمَلْ سُوْٓءً يُجْزَ بِهٖ فِی الدُّنْيَا" جيڪو برائي ڪندو تہ ان جي جزا دنيا ۾ ڏنو ويندو) اها ساڳي مٿي ذڪر ڪيل حضرت ابوبڪر رضي اللهعنہ جي روايت عبد بن حميد، ترمذي ۽ ابن المنذر آندي آهي جنهن جي آخر ۾ آهي تہ حضور پور نور ﷺ جن حضرت ابوبڪر صديق رضي الله عنہ کي فرمايو تہ" ابوبڪر تون ۽ تنهنجا مومن ساٿي دنيا ۾ ئي تڪليفن سان اها جزا ڏنا ويو ٿا. جڏهن قيامت ۾ الله تعاليٰ جي دربار ۾ پيش ٿيندؤ تہ "لَيْسَ لَكُمْ ذُنُوْبٌ" اوهان جي لاءِ ڪو گناهہ رهيل ئي نہ هوندو(١)

وَمَنْ يَّعْمَلْ مِنَ الصّٰلِحٰتِ مِنْ ذَكَرٍ اَوْ اُنْثٰى وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَاُولٰٓئِكَ يَدْخُلُوْنَ الْجَنَّةَ وَلَا يُظْلَمُوْنَ نَقِيْرًا" يعني جيڪي بہ شخص ايماندار هجڻ سان گڏ نيڪ عمل ڪندا پوءِ مرد هجن يا عورتون تہ اهي جنت ۾ داخل ٿيندا، ۽ ذري جي برابر بہ ظلم نہ ڪيا ويندا.

## صالح عمل لاءِ ايمان ڪامل اولين شرط آهي

چاٽڻ گهرجي تہ هتي "وَهُوَ مُؤْمِنٌ" آٿي واضح ڪيو ويو آهي تہ صالح عمل جي قبوليت جي لاءِ ايمان جو هجڻ اولين شرط آهي اوهان پاڻ سوچيو تہ جيڪڏهن ڪو ماڻهو ڪنهن زمين جي ٽڪريءَ کي ليول ڪرائي ان مان ڪانيون، گند وغيره ڪڙائي ڪيرائي اچلرائي ڇڏي، ان کي پاڻي بہ پياري پر ان ۾ ٻج نہ ڇٽي تہ ان جي ايڏيءَ وڏيءَ محنت جو ڪو نتيجو نڪرندو؟ نہ هرگز نہ، جڏهن ٻج ئي ناهي تہ سموري محنت اجائي ويندي، ان ئي نموني سان جيڪڏهن صالح عمل جي زمين ۾ ايمان جو ٻج نہ هوندو تہ سموري محنت بي فائده هوندي، پر جيڪڏهن ٿوري اونهي نظر ڪجي تہ ايمان ڪان سواءِ صحيح نموني صالح عمل ٿي بہ نہ سگهندو، ڇو تہ بنا ايمان جي عمل صالح دنيوي نفعي، شهرت ۽ نالي ڪيرائڻ وغيره لاءِ هوندو پر خالص عمل صرف ۽ صرف ايماني قوت سان ٿيندو، ۽ ان تي جيڪي نتيجا مرتب ٿين ٿا ان سان عمل ڪندڙ جي حياتيءَ کي تہ چار چنڊ لڳي وڃن ٿا پر سندس ملڪ ۽ قوم جو بہ نالو روشن

(١) الدرالمنثور ص٦٩٦ جلد٢

رهي ٿو "وَمَنْ اَحْسَنُ دِيْنًا مِّمَّنْ اَسْلَمَ وَجْهَهٗ لِلّٰهِ" يعني ان کان وڌيڪ دين جي لحاظ سان ڪير سهڻو آهي؟ جنهن پنهنجي منهن (سر) کي الله تعاليٰ جي لاءِ جهڪايو، هتي "وجه"جو لفظ ذڪر ڪيل آهي، جنهنجي لغوي معنيٰ تہ منهن آهي پر هن مان هتي مراد انسان جي ذات آهي، ڇو تہ ڪنهنجي اڳيان منهن جهڪائڻ ڇڻ پنهنجي ذات ان جي حوالي ڪرڻ آهي "وَهُوَ مُحْسِنٌ" ۽ اهو احسان ڪندڙ، نيڪوڪار ۽ سچو اطاعت ڪندڙ اطاعت آهي.

## شان نزول

ابن ابي حاتم حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي تہ مسلمانن چيو هو تہ سچو دين صرف اسلام آهي ۽ اسان کي مليل ڪتاب قرآن سيني ڪتابن کي منسوخ ڪري ڇڏيو آهي ۽ اسان جو نبي خاتم النبيين، آخري نبي (عليه الصلواة والسلام) آهي ۽ اسان جو دين سيني دينن کان پلو دين آهي تڏهن الله تعاليٰ هي الفاظ "وَمَنْ اَحْسَنُ دِيْنًا مِّمَّنْ اَسْلَمَ وَجْهَهٗ لِلّٰهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ" نازل فرمايا (١)

"وَاتَّبَعَ مِلَّةَ اِبْرٰهِيْمَ حَنِيْفًا" يعني (حضرت) ابراهيم (عليه الصلواة والسلام) جي دين جو تابع ٿيو جيڪو حق ڏانهن ورندڙ، باطل کان منهن موڙيندڙ هو،هن مان معلوم ٿيو تہ الله تعاليٰ جي اطاعت ابراهيمي دين ۾ آهي، جيڪو بعينه محمدي دين اهي ان کان روگرداني ڪرڻ ۽ منهن موڙڻ سان صدقا ،خيرخيراتون سڀ برباد آهن جيڪڏهن ڪنهن وڻ جي پاڙ ڪٽيل آهي تہ ان جي ٽارين ۽ شاخن کي پاڻي ڏيڻ اجايو آهي، "وَاتَّخَذَ اللّٰهُ اِبْرٰهِيْمَ خَلِيْلًا" يعني الله تعاليٰ حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام کي گهاٽو دوست بنايو آهي.

## خليل جي لغوي ۽ اصطلاحي معنيٰ

هن آيت ۾ الله تعاليٰ حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جن کي پنهنجو خليل سڏيو آهي، خليل خلة کان ورتل آهي خلة جي لغوي معنيٰ المودة (٢) پيار ۽ دوستي رکڻ آهي يا خلة جي معنيٰ آهي غير کان ڪٽجي وڃڻ (٣) ۽ اصطلاح ۾ خليل ان حبيب يا محبت واري تي ڳالهايو ويندوآهي جنهن کي اهڙي خالص محبت هجي جو غير جي ان ۾ ڪا گنجائش نہ رهي (٤) مفسرن جي اڳواڻ علامه ابن جرير طبري

(١) درمنثور ص٧٠٤ ج٢
(٢) المفردات للراغب ص١٥٣
(٣) نورالعرفان ص١٥٤
(٤) تفسير المنار ص٤١٤ جلد٥

عليه الرحمة هن آيت جي تفسير ۾ لکيو آهي تہ: جيڪڏهن ڪو چونڊ چوي تہ ان "خلة" (دوستيءَ) جي معنيٰ ڪهڙي آهي؟ جيڪا حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جي ذات عالي صفات لاءِ قرآن ڪريم بيان ڪئي آهي؛اها هڪ طرف کان هئي يا ٻنهي طرفن کان؟ ان کي جواب ڏنو ويندو تہ دوستي ٻنهي طرفن کان هئي، حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جي طرفان هيئن هئي تہ پاڻ الله تعاليٰ جي راضي ڪرڻ لاءِ دوستي ۽ انهيءَ لاءِ دشمني، انهيءَ لاءِ محبت ۽ انهيءَ لاءِ بغض رکندا هئا ۽ الله تعاليٰ جي طرفان هيئن هئي جو الله تعاليٰ مخالفن جي مقابلي ۾ سندس مدد ڪئي،نمرود ڪيس باهہ ۾اڇلايو تہ الله تعاليٰ باهہ مان باغ بنايو، نمرود ساڻس بحث ڪيو تہ الله تعاليٰ ڪيس دليلن ڏيڻ جي ذريعي نمرود تي حجت قائم ڪرڻ ۾ ڪاميابي عطا ڪئي، مصر جي بادشاهہ سندس اهل سان غلط ارادو ڪيو تہ الله تعاليٰ ان جا هٿ ۽ پير سڪائي سندس عزت محفوظ رکي، ۽ "اِنِّىۡ جَاعِلُكَ لِلنَّاسِ اِمَامًا" فرمائي ڪيس سندس پويان اچڻ وارن جي اڳواڻي عطا ڪئي.

## هڪ عجيب روايت

چيو ويو آهي تہ هڪ ڀيري حضرت ابراهيم عليه السلام جي علائقي ۾ڏڪار پيو ۽ پاڻ خالي ٻوري کڻي موصل شهر يا مصر مان هڪ دوست کان ان وٺڻ لاءِ ويو، پر ان وٽ ان يا اٽو نہ هجڻ جي ڪري جڏهن ڪيس نہ مليو تہ سوچيائين تہ خالي ٻوري کڻي وڃڻ جي ڪري اهل عيال وارن کي مايوسي ٿيندي في الحال انهن کي مايوسيءَ کان بچائڻ جي لاءِ اها ٻوري واريءَ مان ڀري کڻي ٿو وڃان، جڏهن اها ٻوري واريءَ مان ڀري ۽ کڻي گهر پهتو تہ گهر وارا آرامي هئا، ماٺ ڪري پاڻ بہ آرامي ٿيو جڏهن گهر وارا اٿيا ۽ ان ٻوريءَ کي کوليائون تہ واريءَ جي بجاءِ اٽي سان ڀريل ڏٺائون ان مان اٽو ڪڍي ڳوهي ماني پچايائون تہ پوءِ پاڻ سجاڳ ٿيو ۽ پڇا ڪيائين تہ هي اٽو ڪٿان آيو جنهن مان ماني پچائي اٿو؟ عرض ڪيائون تہ ان ٻوريءَ واري اٽي مان ڪڍيو اٿئون جيڪو اوهان پنهنجي خليل(دوست) وٽان آندو آهي، حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام سمجهي ويو ۽ فرمايائين تہ: هائو اهو منهنجي خليل، الله تعاليٰ وٽان آيو آهي، اهو لفظ الله تعاليٰ کي پسند آيو ۽ پاڻ ڪيس پنهنجي "خليل" سان ياد فرمايائين(١) ۽ ٻيءَ روايت ۾ آهي تہ پاڻ ڪافرن مان ڪجهہ وڏن رئيسن جي دعوت ڪري انهن کي ڪجهہ تحفا ۽ هديا ڏنائون، جڏهن خوش ٿيا تہ حضرت ابراهيم عليه

(١) جامع البيان للطبري ص١٩١ جلد٤ القرطبي ص٤٠٠ جلد ٥

الصلواة والسلام کي چيائون تہ: کوکر کار؟ فرمايائين تہ" منھنجو اوھان ۾ اھو کر آھي تہ اللّٰہ تعالىٰ جي بارگاھہ ۾ سجدو کيو" جڏھن سجدو کيائون تہ پاڻ اللہ تعالىٰ کان دعا گھريائين تہ: ياالله! جيکو منھنجيءَ وس ۾ ھيو سو مون کيو ھاڻي جيکو تنھنجي شان جي لائق آھي اھو تون کر" ان دعا جي برکت سان اللہ تعالىٰ انھن کي اسلام لاءِ توفيق ڏني اھي مسلمان ٿيا ۽ اللہ تعالىٰ کيس پنھنجو خليل کري سڏيو.

٣- ٽين روايت ۾ آھي تہ جڏھن اللہ تعالىٰ جا ملائڪ انساني صورت ۾ ٿي سندس خدمت ۾ لھي آيا تہ پاڻ انھن لاءِ ھڪ سگھو سٺيو گابو کھي پچائي کڻي آيو ۽ کين کائڻ لاءِ ڏني فرمايائين تہ کائو، انھن کائڻ کان انکار کندي چيو تہ" اسين مفت جي شيءِ نہ کائيندا آھيون" پاڻ فرمايائين تہ پلا ملھہ ڏئي کائو، پڇيائونس تہ"ملھہ ڪھڙو آھي؟" فرمايائين تہ"اول ۾ بسم الله ۽ آخر ۾ الحمد للہ" ملائڪن پاڻ ۾ گفتگو ڪندي چيو تہ" اللہ تعالىٰ جي شان جي لائق آھي تہ ھن پياري کي پنھنجو خليل بنائي" تڏھن اللہ تعالىٰ کين پنھنجو خليل کري سڏيو، ٤- چوٿين روايت جيکا حضرت جابر بن عبدالله رضي اللہ عنھما رسول اللہ ﷺ جن کان آندي آھي پاڻ فرمايائون تہ: اِتَّخَذَاللّٰهُ اِبْرَاهِيْمَ خَلِيْلًا لِاِطْعَامِهِ الطَّعَامَ وَاِفْشَآءِ السَّلَامَ وَصَلٰوتِهٖ بِاللَّيْلِ وَالنَّاسُ نِيَامٌ" يعني اللہ تعالىٰ حضرت ابراھيم عليہ الصلواة والسلام کي طعام کارائڻ، ۽ سلام عام کرڻ ۽ رات جو نماز پڙھڻ جيڪري حالانڪ ماڻھو ننڊ ۾ ھوندا ھئا خليل بنايو آھي.

٥- پنجين روايت- حضرت عبدالله بن عمرو بن العاص رضي اللہ عنھما کان روايت آھي تہ نبي کريم صلى اللہ تعالىٰ عليہ وسلم جن حضرت جبرئيل عليہ السلام کي فرمايو تہ" يَا جِبْرِيْلُ لِمَ اتَّخَذَاللّٰهُ اِبْرَاهِيْمَ خَلِيْلًا" اي جبرئيل! اللہ تعالىٰ (حضرت) ابراھيم عليہ السلام کي خليل ڇو بنايو؟ عرض کيائين تہ" لِاِطْعَامِهِ الطَّعَامَ يَا مُحَمَّدُ!" (اي محبوب) محمد (ﷺ) کاڌي کارائڻ جي کري. (١) مقصد تہ خليل ۾ وڏيڪ محبت ۽ محبت جو تاثير ھوندو آھي، ان جي کري شرعي حکم آھي تہ کنھن کي خليل (دوست) بنايو تہ سوچي بنايو جيئن ابو داؤد شريف، حضرت ابو ھريرة رضي اللہ تعالىٰ عنہ کان روايت آندي آھي تہ نبي کريم ﷺ جن فرمايو" اَلرَّجُلُ عَلٰى دِيْنِ خَلِيْلِهٖ فَلْيَنْظُرْ اَحَدُكُمْ مَنْ يُّخَالِلُ" (٢) يعني مرد پنھنجي دوست جي دين تي ھلندو آھي ان جي کري سوچي تہ کنھن سان ٿو دوستي رکي. علامہ احمد مصطفىٰ مراغيءَ لکيو آھي تہ حضرت ابراھيم عليہ الصلواة والسلام جن کي اللہ تعالىٰ خليل

(١) تفسير قرطبي ص٤٠٠-٤٠١ جلد ٥ (٢) ساڳيو حوالو

بنايو ان جو مطلب آهي تہ الله تعالىٰ کين پنهنجي دين کي قائم ڪرڻ جي لاءِ اهڙن شهرن ۾ منتخب ڪيو هو جتي بت پرستي غالب هئي جنهن اتي رهڻ وارن جا عقل ئي خراب ڪري ڇڏيا هئا الله تعالىٰ کين ايترو دين جي دعوت جو درد ۽ ڪم ڪرڻ جو سليقو ۽ ان لاءِ تڪليفون برداشت ڪرڻ واري دل ۽ پنهنجو قرب ڏنو جو خليل واري لقب کي ماڻيائون الله تعالىٰ مٿن اها خاص مهرباني ڪئي هئي جو پاڻ فطرت جي سلامتي، عقل جي قوت، روح جي صفائي، معرفت جي ڪمال ۽ توحيد ۾ فنا جا صاحب هئا (١).

٦- ڇهين روايت حافظ الحديث علامه اسماعيل قريشي دمشقي عليه الرحمة ابن ابي حاتم جي حوالي سان عبيد بن عمير کان آندي آهي تہ حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جن مهمان نواز هوندا هئا هڪ ڏينهن ان ارادي سان گهر کان ٻاهر نڪتا تہ ڪو مهمان ڏسن جنهن کي گڏ کاڌو کارائين، جڏهن مهمان نہ ملڻ جي ڪري گهر ڏانهن موٽيا تہ پنهنجيءَ جاءِ ۾ هڪ شخص بيٺل ڏٺائون پڇيائونس تہ اي الله جا ٻانها! توکي منهنجي موڪل کان سواءِ ڪنهن منهنجي جاءِ ۾ داخل ڪيو آهي؟ ان چيو تہ مان جاءِ جي حقيقي مالڪ رب العالمين جي اذن سان داخل ٿيو آهيان، پڇيائونس تہ تون ڪير آهين؟ چيائين تہ "ملڪ الموت" الله تعالىٰ مون کي پنهنجن ٻانهن مان هڪ ٻانهي ڏانهن موڪليو آهي تہ مان ان کي خوشخبري ڏيان تہ الله تعالىٰ ان کي پنهنجو خليل بنايو آهي، حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جن فرمايو "اهو ڪير آهي؟" الله تعالىٰ جو قسم جيڪڏهن مون کي ان جي خبر ٻڌائيندي تہ پوءِ اهو دنيا جي ڪنهن پري کان پري شهر ۾ بہ هوندو تہ مان ان وٽ ضرور ويندس ۽ جيستائين ان ۽ مون ۾ موت جدائي نہ وجهي تہ ان جي پاڙي ۾ رهيو پيو هوندس، ملڪ الموت عليه السلام فرمايو تہ "اهو ٻانهو تون آهين" حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام فرمايو تہ "اهو مان آهيان"؟ چيائين هائو، حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جن فرمايو تہ" مون کي الله تعالىٰ ڇاجي ڪري پنهنجو خليل بنايو آهي؟ چيائين" ان جي ڪري جو اوهان ماڻهن کي ڏيندا آهيو انهن کان گهرندا ناهيو، علامه موصوف هن واقعي لکڻ کان پوءِ اسحاق بن يسار کان هيءَ روايت آندي آهي تہ "جڏهن الله تعالىٰ حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام کي پنهنجو خليل بنايو تہ ان

(١) تفسيرالمراغي ص١٧٧ جلد٢ جزءُ ٥

جي دل مبارڪ ۾ پنهنجو تمام گهڻو خوف به پيدا ڪيائين جنهن جي ڪري ان جي اندر مان ائين آواز ٻڌڻ ۾ ايندو هو جيئن ڪني کي چاڙهڻ کان پوءِ باهه ڏبي آهي ۽ ان مان ٽڇڪڻ جو آواز پري کان ٻڌڻ ۾ ايندو آهي (١) علامه محمد جمال الدين القاسمي لکيو آهي ته" جڏهن الله تعالىٰ حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام کي آسمان ۽ زمين جا ملڪوت ڏيکاريا ۽ پاڻ پنهنجيءَ قوم کي تارن، چنڊ، سج ۽ بتن جي عبادت جو باطل هجڻ سمجهايائون پنهنجي سر کي باهه ۾ وجهڻ لاءِ ۽ پٽ کي قربانيءَ لاءِ ۽ مال کي مهمانن جي لاءِ حاضر ڪيائون ته الله تعالىٰ کين اها بشارت ڏيندي ته ملوڪيت ۽ نبوت سندس ئي اولاد ۾ رهندا پنهنجو خليل بنايو (١) علامه ابن القيم پنهنجي ڪتاب"الجواب الڪافي" ۾ لکيو آهي ته: جڏهن حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام کي الله تعالىٰ سندس دعا سان پٽ ڏنو ۽ سندس پاڪ قلب ۾ ان پٽ جي محبت پيدا ٿي ته الله تعالىٰ ان محبت کي به غير جي محبت قرار ڏيندي سندس قلب مبارڪ کي ان کان خالي ڪرڻ جي لاءِ کيس ننڊ ۾ حڪم ڪيو ته ان پٽ کي ڪهو، پوءِ جڏهن حضرت ابراهيم عليه‌الصلواة والسلام جن ان حڪم ادا ڪرڻ ۾ جلدي ڏيکاري ۽ ثابت ڪيائون ته سندس دل ۾ الله تعالىٰ جي محبت پٽ جي محبت کان وڌيڪ آهي ته الله تعالىٰ سندس پٽ کي بچايو ۽ قربانيءَ لاءِ جنت مان دنبو موڪليو،جو ته مقصد پٽ جو ڪهڻ نه پر دل مان ان جي محبت کي ڪڍي ڇڏڻ هو جيڪو حاصل ٿيو، ذهن نشين ڪرڻ گهرجي ته الله تعالىٰ کو امر ڪندو آهي ته ان کي صفا ختم نه ڪندو آهي پر ان جو ڪجهه حصو يا ان جو عوض باقي رکندو آهي جيئن پٽ جي قربانيءَ جي بدلي ۾ چوپائي مال جي قرباني رکيائين ۽ پنجاهه (٥٠) نمازن جي جاءِ تي پنج نمازون باقي رهايائين ته ان قربانيءَ ۽ انهن پنجاهه نمازن وارو ثواب محمدي امت علىٰ نبيها الصلواة والسلام کي ملندو رهي(٢) علامه رازي عليه الرحمة لکيو آهي ته: حضرت ابراهيم عليه الصلواة والسلام جن کي خليل سڏڻ جو مون وٽ هيو وجه هي آهي ته جڏهن روح جو جوهر چمڪندڙ، روشني ڪندڙ، بلنديءَ وارو، جسماني لذتن ۽ بدني احوال سان ٿوري تعلق وارو هوندو، ۽ ان مقدس، شريف جوهر سان اهڙا نيڪ اعمال ڳنڍجندا جيڪي کيس ڪدورتن کان بچائي روشني وڌائيندا ۽ اهڙا فڪر عطا ٿيندا جيڪي کيس قدسي معرفتن ۽ الهي تجليات ۾ چمڪارا وڌائيندا ته اهو پاڪائيءَ ۽ قدس جي جهان ۾ واڌارو ڪندو ۽ جسماني ۽ حسي تعلقات کان آزاد

(١) تفسير ابن ڪثير ص٥٦٠ جلد١ (٢) الجواب الڪافي ص

رهندو ۽ انهن مقامن ۾ وڌندي ايترو مٿي ويندو جو ڏسندو تہ صرف الله کي، ٻڌندو تہ صرف الله جو فرمان، چرندو تہ صرف الله جي حڪم سان سڪون وٺندو تہ صرف الله جي ياد سان ۽ هلندو تہ صرف الله جي رضا لاءِ پوءِ الله تعالىٰ جي جلال جو نور سندس جسماني قوتن ۾ داخل ٿي ويندو ۽ ان جي جوهرن جي درياءَ ۾ ٽوٻو ٿي اندر وڃڻ جي ڪوشش ڪندو پوءِ اهڙي پياري جو حق آهي تہ ان کي خليل سڏيو وڃي، ڇو تہ الله تعالىٰ جي محبت ان جي سيني قوتن ۾ اهڙي گهڙي وئي آهي جو غير لاءِ ڪا جاءِ نہ رهي آهي ۽ انهيءَ ڏانهن حضور ﷺ جن جي دعا ۾ اشارو آيل آهي" اَللّٰهُمَّ اجْعَلْ فِيْ قَلْبِيْ نُوْرًا وَفِيْ سَمْعِيْ نُوْرًا وَفِيْ بَصَرِيْ نُوْرًا وَفِيْ عَصَبِيْ نُوْرًا (١) اي الله منهنجي دل ۾ نور پيدا ڪر ۽ منهنجي ڪنن ۾ نور پيدا ڪر ۽ منهنجي اکين ۾ نور پيدا ڪر ۽ منهنجي ٻڌين ۾ نور پيدا ڪر.

**اسان جو نبي صلى الله عليه وآله وسلم الله تعالىٰ جي حبيب هجڻ سان گڏ خليل بہ آهي جيئن هنن حديثن مان ثابت آهي.**

## حديث ١

ترمذي شريف ڪتاب المناقب باب في فضل النبي ﷺ ۾ ۽ ابن مردويہ حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي تہ حضور عليه الصلواة والسلام جن جي اصحابن مان ڪجهہ اصحاب سندن ٻاهر اچڻ جي انتظار ۾ ويٺا هئا پاڻ نڪتا تہ انهن جو ڳالهائڻ ٻڌائون ۽ پاڻ سندن ڳالهين ٻڌڻ ڏي متوجه ٿيا انهن مان ڪي چون پيا تہ: عجب آهي جو الله تعالىٰ پنهنجي مخلوق مان خليل بنايو آهي (حضرت) ابراهيم (عليه الصلواة والسلام) ان جو خليل آهي، ٻئي چيو تہ اهو ان ڪان وڌيڪ عجب جهڙو ناهي جو الله تعالىٰ حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام سان ڳالهايو هو. ٽئين چيو تہ پوءِ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام الله جو روح ۽ ان جو فرمان آهي،چوٿين چيو تہ حضرت آدم عليه الصلواة والسلام کي الله تعالىٰ پنهنجو صفي (برگزيدو) بنايو هو، اهو ٻڌي پاڻ انهن جي اڳيان اچي مٿن سلام ورائي فرمايائون تہ "مون اوهان جي ڳالهائڻ ۽ عجب ڪائڻ کي ٻڌو آ بيشڪ ابراهيم الله جو خليل آهي ۽ اهو آهي بہ اهڙو- ۽ موسىٰ ان جو ڪليم ۽ عيسىٰ ان جو روح ۽ فرمان آهي ۽ آدم کي الله تعالىٰ برگزيده بنايو آهي ۽ اهو آهي بہ اهڙو، پر خبردار يقينًا- مان الله جو حبيب

(١) التفسير الڪبير ص٥٩ جزءُ ١١

آهيان ۽ فخر ناهي ۽ پهريون شفاعت ڪندڙ، ۽ پهريون شفاعت قبول پيل آهيان ۽ فخر ناهي ۽مان اها پهرين (هستي) آهيان جو جنت جي ڪڙي کي ڪڙڪائيندس پوءِ الله تعاليٰ مون لاءِ جنت کوليندو ۽ مون کي ان حال ۾ ان ۾ داخل ڪندو جو مون سان فقير مومن گڏ هوندا ۽ فخر ناهي ۽ مان قيامت جي ڏينهن پهرين ۽ پوين کان وڌيڪ عزت وارو آهيان ۽ فخر ناهي (١)

## حديث ٢

ابن ماجه باب فضائل اصحاب رسول الله ﷺ ۾ حضرت عبدالله کان هڪ ڊگهي روايت آندي آهي جنهن جي آخر ۾ آهي تہ: "اِنَّ صَاحِبَكُمْ خَلِيْلُ اللهِ" يعني اوهان جو ساٿي (مراد سندن پاڪ ذات آهي) الله جو خليل آهي

## حديث ٣

ابوالحسن حربيءَ فوائد ۾ روايت آندي آهي تہ" اَلَا وَاِنَّ اللهَ قَدِ اتَّخَذَنِيْ خَلِيْلًا كَمَا اتَّخَذَ اِبْرَاهِيْمَ خَلِيْلًا (٢) يعني خبردار الله تعاليٰ مون کي ائين خليل بنايو آهي جيئن (حضرت) ابراهيم (عليه الصلواة والسلام) کي

## حديث ۴

حاڪم صحيح سند سان حضرت جندب رضي الله عنه کان روايت آندي آهي تہ مون رسول الله ﷺ جن کان سندن دنيا تان (ظاهري) رحلت کان اڳ ۾ ٻذو پاڻ فرمايائون تہ: اِنَّ اللهَ اتَّخَذَنِيْ خَلِيْلًا كَمَا اتَّخَذَ اِبْرَاهِيْمَ خَلِيْلًا يعني الله تعاليٰ مون کي ائين خليل بنايو آهي جيئن ابراهيم کي خليل بنايو هيائين.

## حديث ۵

حڪيم ترمذي نوادرالاصول ۾، بيهقي شعب الايمان ۾، ابن عساڪر ۽ ديلميءَ حضرت ابوهريرة رضي الله عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله ﷺ جن فرمايو" الله تعاليٰ ابراهيم کي خليل بنايو ۽ موسيٰ کي نجي بنايو ۽مون کي حبيب بنايو". (عليهم الصلواة والسلام)

ان کان پوءِ (الله تعاليٰ) فرمايو تہ" وَعِزَّتِيْ لَاُوْثِرَنَّ حَبِيْبِيْ عَلٰى خَلِيْلِيْ وَنَجِيِّيْ" يعني مون کي پنهنجي عزت جو قسم آهي تہ مان پنهنجي خليل ۽ نجيءَ کان

(١) تفسير القاسمي ص۴۹۵ جلد٣ (٢) تفسير القاسمي ص۴۹٣ جلد٣

وڏيک پنهنجي حبيب کي اختيار کندس (١)

## هڪ عجيب ۽ اهم فائدو

علامه ثناءالله پاني پتيءَ عليه الرحمة هن آيت جي تفسير ۾ لکيو آهي ته حضور عليه الصلواة والسلام جن جو درجو خليل جي مقام کان گهٽو مٿي آهي، ڇو ته پاڻ خالص محبوبيت جي مقام ۾ مستقر آهن پر پاڻ خليل جي مقام کان گذر فرمايو هيائون جيئن کو واٽ وٺي ويندو آهي تڏهن پاڻ کي خليل کري سڏيو اٿن جيئن مسلم شريف حضرت ابن مسعودؓ کان روايت آندي آهي ته پاڻ فرمايائون "وَقَدِ اتَّخَذَاللهُ صَاحِبَکَ خَلِيلاً" الله تعالىٰ اوهان جي ساٿيءَ (مراد سندن پاک ذات آهي) کي خليل بنايو آهي ۽ ترمذي حضرت ابوهريره کان روايت آندي ته :اَلاَ وَصَاحِبُکُمْ خَلِيْلُ اللهِ" وغيره وغيره. ٿورو اڳتي لکيو اٿس ته پر پاڻ سندن بلند شان ۽ محبوبيت خالص جي خواهش مطابق ان مقام ۾ جڏهن رهڻ لاءِ تيار نه هيا ته سندن خواهش ۽ طلب اها هئي ته اهو خليل هجڻ وارو مقام سندن تابعدارن مان کنهن کي ملي تانت اهو به سندن کمال ۾ شمار کيو وڃي، ڇو ته تابعداري کندڙ جو کمال اصل ۾ جنهن جي تابعداري کري ٿو ان جو کمال آهي، ڇو ته ان تابعداريءَ جي صدقي ان کمال کي پهتو آهي ۽ اهل السنة جي علما جو اجماع آهي ته ولين جون کرامتون سندن نبين عليهم السلام جا معجزا هوندا آهن.

## امام رباني مجدد الف ثاني عليه الرحمة جو مقام

علامه موصوف لکيو آهي ته الله تعالىٰ حضور عليه الصلواة والسلام جن جي اها طلب پوري کندي ان خليل هجڻ واري مقام تي حضرت مجدد عليه الرحمة کي رکيو هو جيکو ان جي تفصيل سان موصوف ڏيو هو.(٢)

"وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ" لله ۾ لام تمليک جو آهي ۽ آسمان ۽ زمين جڏهن ته جسماني جهان جا به پاسا آهن جيکي ڏسڻ ۾ اچن ٿا ان جي کري الله تعالىٰ فرمايو ته جو کجهه آسمانن ۽ زمين ۾ آهي سڀ الله تعالىٰ جي حقيقي ملکيت آهي کو به ان ۾ ان جو ڀائيوار ناهي ۽ ڏسڻ ۾ جڏهن ته اهيئي اچن ٿا ان جي کري انهن جو ذکر کيو ويو نه ته ٻيا به کيترا جهان آهن جيکي سڀ سندس

(١) الدر المنثور ص٧٠٥- ٧٠٦ ج٢ (٢) تفسير مظهري ص٤٣٤ جلد٢

ملڪيت آهن "وَكَانَ اللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ مُّحِيْطًا" يعني هر شيءِ الله تعالىٰ جي گهيري ۾ هئي، آهي ۽ رهندي، سندس علم، سندس قدرت ۽ سندس قبضي کان ڪا به شيءِ ٻاهر ناهي.

وَيَسْتَفْتُوْنَكَ فِى النِّسَآءِ ؕ قُلِ اللّٰهُ يُفْتِيْكُمْ فِيْهِنَّ ۙ وَمَا يُتْلٰى

۽ فتويٰ ٿا پڇن توکان عورتن جي بابت چؤ ته الله فتويٰ ٿو ڏي اوهان کي انهن جي باري ۾ جيڪو تلاوت ڪيو ٿو وڃي

عَلَيْكُمْ فِى الْكِتَابِ فِيْ يَتٰمَى النِّسَآءِ الّٰتِىْ لَا تُؤْتُوْنَهُنَّ مَا

اوهان تي ڪتاب ۾ يتيم عورتن جي باري ۾ آهي، جو نه ٿا ڏيو انهن کي جيڪو

كُتِبَ لَهُنَّ وَتَرْغَبُوْنَ اَنْ تَنْكِحُوْهُنَّ وَالْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ

لکيو ويو انهن جي لاءِ ۽ خواهش ٿا رکو ته نڪاح ڪيو انهن سان ۽ ڪمزور ٻارن

الْوِلْدَانِ ۙ وَاَنْ تَقُوْمُوْا لِلْيَتٰمٰى بِالْقِسْطِ ؕ وَمَا تَفْعَلُوْا مِنْ خَيْرٍ

بابت ۽ قائم رهو يتيمن جي لاءِ انصاف تي ۽ جيڪا به ڪندؤ ڀلائي

فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِهٖ عَلِيْمًا ﴿١٢٧﴾

پوءِ بيشڪ الله آهي ان کي ڄاڻندڙ.

## تفسير

هن کان اڳ ۾ بيان ٿيو ته آسمانن ۽ زمين ۾ جو ڪجهه به آهي الله تعالىٰ جي حقيقي ملڪيت آهي، هاڻي ان حقيقي مالڪ جي ٻانهين عورتن جي حقوق جي متعلق بيان ڪندي ٻڌايو ٿو وڃي ته "وَيَسْتَفْتُوْنَكَ فِى النِّسَآءِ" ۽ اوهان کان عورتن جي باري ۾ فتويٰ پڇن ٿا.

## شان نزول

ابن المنذر ۽ ابن جرير کان روايت آهي تہ اسلام کان اڳ ۾ ميت جي ملڪيت ۾ ننڍو ٻار ۽ عورت وارث نہ ٿيندا هئا جڏهن انهن جي وارث ٿيڻ جوحڪم نازل ٿيو تہ ماڻهن سوچيو تہ شايد اهو حڪم جلد منسوخ ٿي ويندو، ڇو تہ ننڍو ٻار نہ ٿو ملڪيت سنڀالي سگهي ۽ نہ ٿوڪنهن جنگ ۾ لڙي سگهي، عورت جو بہ ساڳيو حال آهي، ڪافي انتظار ڪرڻ کان پوءِ جڏهن ان حڪم کي منسوخ ڪرڻ لاءِ ڪا آيت نازل نہ ٿي تہ پاڻ ۾ صلاح ۽ مشورو ڪيائون تہ هلو تہ سيدنا رسول الله ﷺ جن کان ان جي باري ۾ عرض ڪري پڇون، جڏهن پڇيائون تڏهن هيءَ آيت نازل ٿي (١) "قُلِ اللّٰهُ يُفْتِيْكُمْ فِيْهِنَّ" يعني اي محبوب! عليه الصلواة والسلام انهن کي فرمايو تہ" انهن عورتن جي ورثي متعلق اوهان کي الله تعالىٰ پاڻ فتوىٰ ڏي ٿو" جنهن مان ثابت ٿيو تہ ميراث جا مسئلا نهايت ئي اهم آهن جو جيترو تفصيل سان اهي بيان ٿيا آهن ٻيا بيان نہ ٿيا آهن، ۽ هن آيت جي شان نزول تي غور ڪرڻ سان اهو بہ ثابت ٿيو تہ نياڻين کي ورثي کان محروم ڪرڻ مڪي جي مشرڪن جو ڪم هو، "وَمَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ فِي الْكِتٰبِ فِيْ يَتٰمَى النِّسَآءِ الّٰتِيْ لَا تُؤْتُوْنَهُنَّ مَا كُتِبَ لَهُنَّ" هي"ما" جو لفظ مرفوع محلا"الله" جي لفظ تي يا "يفتيڪم" ۾ لڪل ضمير هو تي عطف آهي، ٻنهي صورتن ۾ معنىٰ هيئن ٿيندي تہ: الله تعالىٰ ۽ سندس ڪتاب جيڪو اوهان جي اڳيان تلاوت ڪيو ٿو وڃي اوهان کي انهن يتيم نياڻين جي باري ۾ فتوىٰ ٿا ڏين جن کي ورثي مان سندن لاءِ مقرر ڪيل حصو اوهان نہ ٿا ڏيو، انهن لاءِ اهوئي حڪم قائم آهي، جيڪو سورة جي شروعات ۾ بيان ٿي چڪو آهي عورتن ۽ ٻارن کي سندن حق ضرور ڏيندا ڪيو، ڇو تہ اهي وڏن ۽ مردن کان مال ۽ ملڪيت جا وڌيڪ محتاج آهن"وَتَرْغَبُوْنَ اَنْ تَنْكِحُوْهُنَّ" يعني انهن يتيم نياڻين سان انهن جي حصي ۾ آيل مال کي هضم ڪرڻ جي لاءِ نڪاح ڪرڻ جي خواهش رکو ٿا، سيده عائشه صديقه رضي الله عنها کان روايت آهي تہ جاهليت جي زماني ۾ جيڪڏهن ڪا يتيم نياڻي رهجي ويندي هئي تہ ان جو وارث ڏسندو هو جيڪڏهن حسن ۽مال ملڪيت واري هوندي‌هئي تہ پاڻ ان سان نڪاح ڪندو هو ۽ ان جا حق ادا نہ ڪندو هو، پر جيڪڏهن اها حسن واري نہ پر مال ۽ملڪيت واري هوندي هئي تہ ان سان نہ پاڻ پرڻجندو هو ۽نہ ان کي ٻئي سان پرڻجڻ

(١) روح المعاني ص١٥٩ جلد٢ جزءُ ٥

ڏيندو هو تہ متان ان جو مڙس ملڪيت ۽ مال جي گهر ڪري پر پاڻ ئي ان جي ملڪيت هضم ڪرڻ جي ڪوشش ڪندو هو پلاجيڪڏهن اها نہ سهڻي هوندي هئي ۽نہ مال ملڪيت واري تہ اهو وارث ان جي ڪنهن نہ ڪنهن سان شادي ڪرائيندو هو پر ان ويچاريءَ کي جيڪو مڙس جي طرفان مهر وغيره ملندو هو اهو بہ پاڻ کائي ويندوهو، هتي انهن سڀني شين کان منع ڪئي وئي اهي "وَالْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الْوِلْدَانِ وَاَنْ تَقُوْمُوْا لِلْيَتٰمٰى بِالْقِسْطِ" يعني ضعيفن، ننڍن ٻارن کي بہ سندن حقوق ڏيو ۽ يتيمن جي معاملي ۾ انصاف سان هلو ۽ عدل تي قائم رهو، هتي يتمٰي ۾ يتيم ڇوڪرن جو ذڪر آهي مقصد تہ يتيم نياڻين وانگر يتيمن پٽن جو بہ حق ادا ڪندا ڪيو انهن کي ضعيف ۽ ڪمزور سمجهي سندن حق تلفي نہ ڪيو اهي ويچارا جيڪڏهن پاڻ اوهان جي خلاف آواز اٿاري نہ سگهندا تہ انهن جو الله تعالىٰ تہ قادر ۽ قدير آهي ان جي پڪڙ ۽ عذاب کان ڊڄو ۽ انصاف ۽ عدل تي قائم رهو، ان ۾ ڪيتريون صورتون داخل آهن، يتيمن جو ورثي مان حصو پورو ڏيو، بهانا ڪري انهن جو مال ناحق سان نہ کائو، انهن تي ظلم نہ ڪيو، انهن جي تربيت ۽ تعليم ائين ڪيو جيئن پنهنجن ٻچن جي ڪندا آهيو" وَمَا تَفْعَلُوْا مِنْ خَيْرٍ فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِهٖ عَلِيْمًا" ۽ اوهان جيڪا ڀلائي ڪندؤ الله تعالىٰ ان کي ڄاڻندڙ آهي مقصد تہ جيترو بہ يتيم پٽن ۽ يتيم نياڻين سان سهڻو سلوڪ رکندؤ انهن جي مال ۽ ملڪيت جي سنڀال ڪندؤ انهن جي تربيت ۽ تعليم کي سهڻو بنائيندؤ تہ اهي پاڻ ڪٿي اوهان جي احسانن جو بدلو ڏيڻ کان قاصر آهن، پر الله تعالىٰ اوهان کي ان جو وڏو اجر ڏيندو، ڇو تہ اهو اوهان جي انهن چڱاين کي چڱيءَ طرح ڄاڻي ٿو اهو ڪريم آهي اوهان کي انهن ڀلاين جو بدلوبہ ڀلو عطا ڪرڻ فرمائيندو، ان جي ڪري يتيمن کي سندن واجب حقوق کان بہ وڌيڪ نوازيو ۽ هر نموني سندن سنڀال لهو.

وَاِنِ امْرَاَةٌ خَافَتْ مِنْۢ بَعْلِهَا نُشُوْزًا اَوْ اِعْرَاضًا فَلَا جُنَاحَ

۽ جيڪڏهن ڪا عورت خوف ٿي رکي پنهنجي مڙس کان تهڻ جو يا منهن موڙڻ جو پوءِ ناهي ڪو گناهہ

عَلَيْهِمَآ اَنْ يُّصْلِحَا بَيْنَهُمَا صُلْحًا ۭ وَالصُّلْحُ خَيْرٌ ۭ وَاُحْضِرَتِ

انهن ٻنهي تي جو صلح ڪن پاڻ ۾ صلح ڪرڻ ۽ صلح ڀلو آهي ۽ لڳايل آهن

الۡاَنۡفُسُ الشُّحَّ ؕ وَاِنۡ تُحۡسِنُوۡا وَتَتَّقُوۡا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعۡمَلُوۡنَ

نفس حرص سان ۽ جيڪڏهن نيڪي ڪندؤ ۽ پرهيزگار ٿيندؤ پوءِ بيشڪ الله آهي جيڪي ڪيو ٿا (ان جي)

خَبِيۡرًا ﴿۱۲۸﴾ وَلَنۡ تَسۡتَطِيۡعُوۡۤا اَنۡ تَعۡدِلُوۡا بَيۡنَ النِّسَآءِ وَلَوۡ

خبر رکندڙ ۽ هرگز نہ ڪري سگهندؤ، هيءَ ڳالهہ جو عدل ڪيو گهڻين، زالن ۾ توڙي جو

حَرَصۡتُمۡ فَلَا تَمِيۡلُوۡا كُلَّ الۡمَيۡلِ فَتَذَرُوۡهَا كَالۡمُعَلَّقَةِ ؕ وَاِنۡ

ڪوشش ڪيو پوءِ نہ لاڙو ڪيو پورو لاڙو ڪرڻ پوءِ ڇڏيو ان هڪ کي ٽنگيل وانگر ۽ جيڪڏهن

تُصۡلِحُوۡا وَتَتَّقُوۡا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوۡرًا رَّحِيۡمًا ﴿۱۲۹﴾ وَاِنۡ يَّتَفَرَّقَا

سڌارو ڪندؤ ۽ پرهيزگار ٿيندؤ پوءِ بيشڪ الله آهي بخشيندڙ مهربان ۽ جيڪڏهن جدا ٿيندا تہ

يُغۡنِ اللّٰهُ كُلًّا مِّنۡ سَعَتِهٖ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ وَاسِعًا حَكِيۡمًا ﴿۱۳۰﴾

محتاجيءَ کان بچائيندو الله هر هڪ کي پنهنجيءَ ڪشادگيءَ سان ۽ آهي الله ڪشادگيءَ وارو حڪمت وارو

# تفسير

ڪڏهن ڪڏهن ڪا عورت دائمي مريض هوندي آهي يا ان مان اولاد ٿيڻ جو امڪان نہ هوندو آهي يا شڪل جي سادي هوندي آهي يا طبيعت جي تيز هوندي آهي يا تمام وڏي عمر جي هوندي آهي ۽ انهن سببن مان ڪنهن سبب جي ڪري مڙس جي دل ان کان نفرت ڪندي آهي ۽ اهو سوچيندو آهي تہ ان کي طلاق ڏئي ٻي ڪا شادي ڪري يا ان کي ٻہ زالون آهن ۽ انهن سببن مان ڪنهن هڪ سبب واريءَ کي طلاق ڏيڻ ٿو گهري، جو تہ هن کي هو پنهنجي مٿان وبال ۽ مصيبت ٿو سمجهي ان جي لاءِ هي حڪم آهي "وَاِنِ امۡرَاَةٌ خَافَتۡ مِنۡۢ بَعۡلِهَا نُشُوۡزًا اَوۡ اِعۡرَاضًا فَلَا جُنَاحَ عَلَيۡهِمَاۤ اَنۡ

يُصْلِحَا بَيْنَهُمَا صُلْحًا" يعني جيكڏهن ڪا عورت پنهنجي مڙس ڪان ٿهڻ، جهيڙي ڪرڻ يا منهن موڙڻ جو خطرو ٿي محسوس ڪري تہ ان مڙس ۽ زال مان ڪنهن تي بہ ڪو گناهہ ناهي جو اهي پاڻ ۾ صلح ڪن جو اها عورت پنهنجو مهر معاف ڪري يا گهٽائي يا ٻيءَ زال جي حق ۾ پنهنجن حقن تان دستبردار ٿئي يا پنهنجو خرچ وغيره گهٽ ڪري ۽ مڙس انهن سهوليتن ڪي نظر ۾ رکندي طلاق ڏيڻ جو ارادو لاهي ڇڏي ڪجهہ گذري آهي ڪجهہ گذري ويندي جي مطابق ان ڪان جدائي اختيار نہ ڪري "اَنۡ يُّصۡلِحَا بَيۡنَهُمَا صُلۡحًا" يعني زال ۽ مڙس پاڻ ۾ پاڻ صلح ڪن، ٽيون ماڻهو انهن جي معاملن ۾ دخل نہ ڏئي تہ ڀلو آهي، ڇو تہ ڪڏهن ڪڏهن ٽئين ماڻهوءَ جي مداخلت جي ڪري رهندو ڪم ڦٽي ويندو آهي ڀلا ڪٽي نہ بہ ڦٽي تڏهن بہ ٻنهي جا عيب تہ ان جي اڳيان ظاهر ٿيندا، "وَالصُّلۡحُ خَيۡرٌ" يعني زال ۽ مڙس جو پاڻ ۾ ناهہ ڪرڻ ڀلو آهي ۽ ان ڪان الله تعاليٰ راضي آهي ان رعايت جي ڪري عورت ڪي ثواب عطا ڪندو ۽ عورت ڪي گهر ۾ رکڻ جي ڪري مرد ڪي اجر ڏيندو جو سندن صلح جي ڪري طلاق جو خطرو ٽري ويو. "وَاُحۡضِرَتِ الۡاَنۡفُسُ الشُّحَّ" يعني فطرتي طرح انساني نفسن ڪي مرد هجن يا عورتون بخيلي، ڪنجوسائپ ۽ حرص لڳايل آهن،ڪو بہ انسان پنهنجن حقن ڇڏڻ لاءِ تيار نہ هوندو آهي پر عورت جي طرفان پنهنجن حقن ۾ رعايت ڪرڻ ۽ مرد جي طرفان طلاق ڏيڻ جو ارادو ڇڏي ڏيڻ ڀلو ڪم آهي، "وَاِنۡ تُحۡسِنُوۡا وَتَتَّقُوۡا" هي جملو شرطيہ آهي جنهن جي جزا محذوف آهي ۽ هن ۾ خطاب مردن سان آهي يعني اي مردو! جيڪڏهن اوهان رعايتون نہ گهرڻ ۽ عورتن تي مهربانين ڪرڻ سان احسان ڪندؤ تہ اهو اوهان جي لاءِ ڀلو آهي ۽ الله تعاليٰ اوهان ڪي ان تحمل ۽ سهڻي سلوڪ جو اهڙو بدلو عطا ڪندو جو اوهان جي خيال، خواب، وهم ۽ گمان ۾ بہ ناهي" فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعۡمَلُوۡنَ خَبِيۡرًا" ف تعليليہ آهي هي جملو حذف ڪيل جزا جي علت آهي يعني اوهان جيڪي بہ عمل ڪيو ٿا الله تعاليٰ انهن جي خبر رکندڙ آهي ان جي ڪري پنهنجا سيئي معاملا صحيح رکو عورتن ڪي غلطيون بخشڻ جي ڪوشش ڪيو تہ اللّٰه‌تعاليٰ بہ اوهان جون غلطيون بخشيندو، "وَلَنۡ تَسۡتَطِيۡعُوۡۤا اَنۡ تَعۡدِلُوۡا بَيۡنَ النِّسَآءِ وَلَوۡ حَرَصۡتُمۡ فَلَا تَمِيۡلُوۡا كُلَّ الۡمَيۡلِ فَتَذَرُوۡهَا كَالۡمُعَلَّقَةِ" يعني جيڪڏهن هڪ ڪان وڌيڪ زالون اٿو تہ انهن ۾ برابري ڪڏهن بہ ڪري نہ سگهندؤ،ڇو تہ انهن جي پنهنجي پاڻ ۾ بہ حيثيت برابر نہ هوندي شڪل ۽ صورت، چڱڀلائي ۽ بيماري، سهڻا اخلاق ۽ برا اخلاق ڪئين اهڙيون

صفتون آهن، جن جي ڪري انهن ۾ تفاوت رهي ٿو ۽ مڙس جي دل بہ سيني سان هڪ جهڙي نہ رهندي پر تڏهن بہ صرف هڪ زال ڏانهن سڄو جهڪاءُ نہ ڪيو جو ٻيءَ کي ايئن ڇڏي ڏيو جڻ ويچاري ٽنگيل آهي، ان ٻيءَ کي بہ رات رهڻ جو وارو ۽ خرچ ڪپڙو، ڪاڌو، جاءِ وغيره صحيح ڏيندا ڪيو "وَاِنْ تُصْلِحُوْا وَتَتَّقُوْا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا" يعني جيڪڏهن هن حڪم کان اڳ ۾ ڪيل ڪوتاهين جي اصلاح ڪندؤ ۽ آينده جي لاءِ تقويٰ اختيار ڪري اهڙيون ڪوتاهيون نہ ڪندؤ تہ پوءِ اوهان جا گناهہ بخش ڪيا ويندا، ڇو تہ يقيناً الله بخشيندڙ، مهربان آهي" وَاِنْ يَّتَفَرَّقَا يُغْنِ اللّٰهُ كُلًّا مِّنْ سَعَتِهٖ وَكَانَ اللّٰهُ وَاسِعًا حَكِيْمًا" المقصد تہ جيڪڏهن زال ۽ مڙس ۾ صلح جون سڀئي تدبيرون ناڪام وڃن ۽ طلاق ضروري ٿي وڃي، جنهن جي ذريعي هڪ ٻئي کان جدا ٿا ٿين تہ غمگين ٿيڻ جي ڪا ضرورت ناهي الله تعالىٰ ڪريم آهي، اهو ٻنهي کي محتاجيءَ کان بچائيندو ۽ اهڙي صورت پيدا ڪندو جو مرد کي اڪين جي ٺار زال ملي ويندي ۽ طلاق ڏنل زال کي نهايت مهربان، محبت رکندڙ ۽ اهڙو مشفق مڙس ملي ويندو، جيڪو سندس هر ممڪن سنڀال لهندو ۽ الله تعالىٰ واسع، ڪشادگيءَ وارو، غني، مخلوق جي لاءِ ڪافي ٿيندڙ، قادر، هر شيءِ ڄاڻندڙ، حڪيم، هر شيءِ ۾ حڪمت وارو آهي جنهن جو ڪو بہ ڪم حڪمت کان خالي ناهي جيڪڏهن زال ۽ مڙس ۾ طلاق جي ذريعي جدائي ٿي وئي تہ ان ۾ بہ ڪا حڪمت آهي لهذا ٻنهي ڌرين کي صبر ۽ اللهتعالىٰ تي ڀروسو ڪرڻ گهرجي.

وَلِلّٰهِ مَا فِى السَّمٰوَاتِ وَمَا فِى الْاَرْضِ ۗ وَلَقَدْ وَصَّيْنَا الَّذِيْنَ

۽ الله جي لاءِ آهي جيڪو آسمانن ۾ ۽ جيڪو زمين ۾ آهي ۽ البت تحقيق حڪم ڪيو سون انهن کي

اُوْتُوا الْكِتَابَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَاِيَّاكُمْ اَنِ اتَّقُوا اللّٰهَ ۗ وَاِنْ تَكْفُرُوْا

جو ڏنا ويا ڪتاب اوهان کان اڳي ۽ اوهان کي تہ ڊڄو الله کان ۽ جيڪڏهن ڪفر ڪندؤ تہ

فَاِنَّ لِلّٰهِ مَا فِى السَّمٰوَاتِ وَمَا فِى الْاَرْضِ ۗ وَكَانَ اللّٰهُ غَنِيًّا

پوءِ بيشڪ الله جي لاءِ آهي جيڪو آسمانن ۽ زمين ۾ آهي، ۽ آهي الله بي نياز،

حَمِيْدًا ﴿١٣١﴾ وَلِلّٰهِ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الْاَرْضِ وَكَفٰى بِاللّٰهِ

ساراهيل ۽ الله جي لاءِ آهي جيڪو آسمانن ۾ آهي، ۽جيڪو زمين ۾ آهي ۽ ڪافي آهي الله

وَكِيْلًا ﴿١٣٢﴾ اِنْ يَّشَاْ يُذْهِبْكُمْ اَيُّهَا النَّاسُ وَيَاْتِ بِاٰخَرِيْنَ ؕ وَكَانَ

ڪم ناهيندڙ جيڪڏهن گهري ته وٺي وڃي اوهان کي اي انسانؤ! ۽ آڻي ٻين کي ۽ آهي

اللّٰهُ عَلٰى ذٰلِكَ قَدِيْرًا ﴿١٣٣﴾ مَنْ كَانَ يُرِيْدُ ثَوَابَ الدُّنْيَا

الله ان تي قادر جيڪو ارادو ٿو ڪري دنيا جي ثواب جو

فَعِنْدَ اللّٰهِ ثَوَابُ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ سَمِيْعًا ۢ بَصِيْرًا ﴿١٣٤﴾ ع

پوءِ الله وٽ آهي دنيا ۽ آخرت جو ثواب ۽ آهي الله ٻڌندڙ ڏسندڙ

## تفسير

هن ڪان اڳ ۾ بيان ڪيو ويو هو ته جيڪڏهن زال ۽ مڙس طلاق جي ذريعي جدائي ڪندا ته ٻنهي کي الله تعاليٰ محتاجيءَ کان بچائيندو هاڻي ان جو دليل ڏنوتو وڃي، ”وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الْاَرْضِ“ يعني جو ڪجهه آسمانن ۾ ۽ جو ڪجهه زمين ۾ آهي سڀ الله تعاليٰ جو مملوڪ، مقبوض، مقهور، مرزوق ۽ مقدور آهي، اهڙو حقيقي بادشاهه بلڪ شهنشاهه ڪنهن کي محتاجيءَ کان بچائي ته ڪهڙي دير آهي ”وَلَقَدْ وَصَّيْنَا الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَاِيَّاكُمْ اَنِ اتَّقُوا اللّٰهَ“ يعني جيڪي ڪتاب مختلف زمانن ۾، مختلف زبانن ۾، نبين ۽ رسولن عليهم الصلواة والسلام جي مٿان اوهان ڪان اڳ ۾ نازل ڪيا ويا هئا، انهن امتن کي ۽ اوهان سڀني کي اسان حڪم ڪيو آهي ته الله تعاليٰ کان ڊڄندا رهو، جيڪڏهن غور ٿو ڪجي ته ان ۾ ڪو به شڪ ناهي ته الله تعاليٰ جي پياري دين جو دارومدار ئي تقويٰ تي آهي جيڪڏهن دل ۾

تقوىٰ ۽ الله تعالىٰ جو خوف پيدا ٿي ويو ته انسان جو ظاهر ۽ باطن ٻئي سينگارجي ويندا، ۽ جيڪڏهن دل ۾ الله تعالىٰ جو خوف ناهي ته نفس جي اصلاح ناممڪن آهي، ڇو ته جن شين ۾ روحاني، جسماني ۽ سوين تمدني فائدا ۽ مصلحتون آهن الله تعالىٰ انهن کي اوهان تي فرض يا واجب ڪيو آهي ۽ جن ڪمن ۽ شين ۾ دنيا ۽ آخرت جا هزارين نقصان ۽ خرابيون آهن الله تعالىٰ انهن کي اوهان تي حرام يا مڪروهه ڪيو آهي "وَإِنْ تَكْفُرُوا فَإِنَّ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ" يعني جيڪڏهن اوهان الله تعالىٰ جي حڪم کي نه مڃيندؤ ته الله تعالىٰ کي ڪا پرواهه ناهي اوهان جي نه مڃڻ سان ان جي مالڪ الملڪ هجڻ ۾ ڪو فرق نه پوندو ڇو ته آسمان ۽ زمينون ۽ جوڪجهه انهن ۾ آهي سڀ ان جي ملڪيت آهن اوهان جي اطاعت نه ڪرڻ جي ڪري ان جي شان الوهيت ۾ ڪو فرق نه پوندو "وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيْلًا" ۽ جيڪو به آسمانن ۽ زمين ۾ آهي سڀ الله تعالىٰ جي ملڪيت آهي اهو سيني تي قابض سيني جو مالڪ ۽ خالق آهي ۽ "وَكَانَ اللّٰهُ غَنِيًّا حَمِيْدًا" ۽ الله بي پرواهه، ساراهيل آهي، پنهنجن ٻانهن جي ڪارسازيءَ ۽ ڪمن ٺاهڻ لاءِ ڪافي آهي.

## سوال

هتي ٻن آيتن ۾ ٽي ڀيرا "وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ" ڇو آيو آهي؟

## جواب

عرب جا مشرڪ گهڻن وقتن کان جن رسمن ۽ رواجن جا پائبند هيا انهن کي ڇڏي بلڪل نون قاعدن ۽ قانونن جو پابند ٿيڻ کو آسان ڪم نه هيو ان جي ڪري الله تعالىٰ ورائي ورائي، پنهنجي مالڪ الملڪ هجڻ ۽ زمين ۽ آسمان ۽ انهن ۾ موجود هر شيءِ تي قادر هجڻ ۽ ڪنهن جي محتاج نه هجڻ جو ذڪر ڪري انهن کي تنبيه ڪري رهيو آهي ته انهن قاعدن ۽ قانونن جي پائبندي ڪرڻ ۾ اوهان جو فائدو آهي جيڪڏهن اوهان انهن کان منهن موڙي بي فرماني ڪندؤ ته نقصان به اوهان جو آهي ۽ ان جي سزا به اوهان کي ملندي.

## مسلمانو! هوشيار رهو

اسان جي هن ملڪ ۾ جنهن کي اسلامي جمهوريه پاڪستان سڏيو

ٿو وڃي انگلينڊ کان آيل عيسائي مسلمانن جي سچن عقيدن کي خراب ڪري عيسائي بنائي رهيا آهن (۽ اسان جي حڪمرانن کي جيڪي سني ۽ حق وارن عالمن تي پابنديون وجھڻ ۽ انهن کي ديني ڪمن کان روڪڻ ۾ پنهنجو مٺ پاڻ آهن انهن عيسائين لاءِ ڪو به فڪر ڪو نه آهي) چوندا آهن ته اسلام ماڻهن جي اصلاح لاءِ دوزخ جي ڏڪي ۽ عذاب جو سهارو ورتو آهي پر عيسائيت جو انحصار الله تعالىٰ جي خالص محبت تي آهي، مگر اهو انهن جو چوڻ ڍنگ، مڪر ۽ مسلمانن کي اسلام کان بدظن ڪرڻ لاءِ هڪ فريب آهي، عذاب جو ذڪر ۽ جهنم جو بيان ته سندن بائيبل ۾ به آهي جنهن ۾ لکيل آهي ته جيڪي بدن کي قتل ڪن ٿا ۽ روح کي قتل ڪري نه ٿا سگهن انهن کان نه ڊڄو پر ان کان ڊڄو جيڪو روح ۽ بدن ٻنهي کي جهنم ۾ وجهي هلاڪ ڪري ٿو- (متي- ١٠: ٢٨) ان کان ڊڄو جنهن کي اختيار آهي ته قتل ڪرڻ کان پوءِ جهنم ۾ وجهي، هائو مان اوهان کي چوان ٿو ته ان کان ڊڄو (لوقا: ١٢- ٥) "اِنۡ يَّشَاۡ يُذۡهِبۡكُمۡ اَيُّهَا النَّاسُ وَيَاۡتِ بِاٰخَرِيۡنَ وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰى ذٰلِكَ قَدِيۡرًا" يعني اهو خيال پنهنجي دل مان ڪڍي ڇڏيو ته جيڪڏهن اوهان الله تعالىٰ جي دين کي ڇڏي ڏنو ته دين ختم ٿي ويندو، يا ڪائنات جون رونقون صرف اوهان جي ڪري آهن جيڪڏهن اوهان نه رهيئو ته هي بي رونق ٿي ويندي، بلڪ جيڪڏهن اوهان هن سونهري موقعي مان فائدو نه ورتو، الله تعالىٰ جي دين جي رسيءَ کي مضبوطيءَ سان نه جهليو ۽ ان جي پياري رسول مقبول صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جي دامن کي محبت سان قابو نه ڪيو ته اهو اوهان کي هن شرف ۽ شان واري مقام کان هٽائي ٻين کي پنهنجي نوازشن سان نوازيندو، ڇو ته اهو جيڪڏهن گهري ته اي انسانو! اوهان کي نيست ونابود ڪري ۽ ٻين کي آڻي ۽ الله تعالىٰ ان تي قادر آهي- اوهان کان اڳ ۾ ڪيترين امتن ائين ڪيو هو ته الله تعالىٰ انهن کي برباد ڪري ٻين کي سندن جاءِ تي آندو ۽ الله تعالىٰ جي بادشاهيءَ ۾ نه زوال آيو ۽ نه ڪجهه فرق پيو، جڏهن بني اسرائيل حد کان وڌي ويا ۽ بي فرمان ٿيا ته الله تعالىٰ انهن کي برباد ڪري حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن کي موڪلي سندن تابعدارن ۽ حوارين کي سرفراز فرمايو وري جڏهن انهن قسمين قسمين برايون ڪيون ته اللّٰه تعالىٰ عرب جي واريا سي ۽ غيرآباد علائقي ۾ پنهنجي آخري نبي حضرت محمد مصطفىٰ صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن کي اهڙيءَ قوم مان موڪليو جيڪي دنيا جي نگاهن ۾ ڪريل هئا پر انهن حضور عليه الصلواة والسلام جن

تي ايمان آڻڻ ۽ سندن تابعداريءَ ڪرڻ جي صدقي روم ۽ ايران جهڙين ان وقت جي سپر طاقتن کي ختم ڪري زمين تي آسماني قانون واري حاڪميت قائم ڪري ڏيکاري "مَنْ كَانَ يُرِيْدُ ثَوَابَ الدُّنْيَا فَعِنْدَاللهِ ثَوَابُ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَكَانَ اللهُ سَمِيْعًام بَصِيْرًا" يعني نيڪ عملن مان جيڪڏهن ڪو دنيا جي ثواب ۽ نعمتن جي ملڻ جو ارادو ٿو ڪري ته (اهو همت جو ڪريل آهي ان کي الله تعالىٰ، ڪان صرف دنيا جون نعمتون نه پر ٻنهي جهانن جون پلايون ۽ درجا گهرڻ کپن) ڇوته الله تعالىٰ وٽ دنيا ۽ آخرت ٻنهي جو ثواب آهي ۽ اهو ٻڌندڙ ۽ ڏسندڙ آهي، ان ڪان رياءَ ڪرڻ وارا، محبت ڪان سواءِ رهڻ وارا، خالص دنيا جي طلب ڪرڻ وارا لڪل نه آهن، اهو دل جي رازن ۽ لڪل ارادن ڪان با خبر آهي اهو هميشه ٻڌندڙ ۽ ڏسندڙ آهي ۽ هي ان جون قديم صفتون آهن.

## فائدو

هن مان ثابت ٿيو ته عبادت سان صرف دنيا کي اصل مقصد نه بنائجي پر جيڪڏهن آخرت جي ثواب سان گڏ دنيوي برڪتن حاصل ڪرڻ ۽ مصيبتن جي دفع ڪرڻ جي نيت هجي ته صحيح آهي (١)

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ بِالْقِسْطِ شُهَدَآءَ لِلّٰهِ وَلَوْ

اي ايمان وارؤ! هجو قائم رهندڙ انصاف تي شاهدي ڏيندڙ الله جي لاءِ توڙي هجي

عَلٰٓى اَنْفُسِكُمْ اَوِالْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِيْنَ ۚ اِنْ يَّكُنْ غَنِيًّا اَوْ فَقِيْرًا

اوهان جي سرن تي يا پيءُ ماءُ تي ۽ مائٽن تي جيڪڏهن هوندو شاهوڪار يا مسڪين

فَاللّٰهُ اَوْلٰى بِهِمَا ۖ فَلَا تَتَّبِعُوا الْهَوٰٓى اَنْ تَعْدِلُوْا ۚ وَاِنْ

پوءِ الله وڌيڪ آهي انهن ٻنهي جو پوءِ نه پيروي ڪيو خواهشن جي جو (حق ڪان) منهن موڙيو ۽ جي زبان

تَلْوٗٓا اَوْ تُعْرِضُوْا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرًا ﴿١٣٥﴾

وچڙائي ڳالهائيندؤ يا منهن موڙيندؤ پوءِ بيشڪ الله جيڪي ڪيو ٿا (ان جي) خبر رکندڙ آهي.

(١) نورالعرفان ص١٥٧

# تفسير

هن آيت ۾ الله تعالىٰ ايمان وارن کي صحيح شاهدي ادا ڪرڻ لاءِ سڌي ارشاد فرمايو آهي تہ "يَاأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُونُوا قَوَّامِينَ بِالْقِسْطِ شُهَدَاءَ لِلَّهِ" يعني اي ايمان وارو! مضبوطيءَ سان بيهندڙ، خالص الله جي لاءِ شاهدي ڏيندڙ هجو. مقصد تہ اوهان جي ايمان جي تقاضا ۽ خواهش اها آهي تہ عدل ۽ انصاف قائم ڪرڻ جي لاءِ وڏي همت ۽ مضبوطي ڏيکاريو، قوام، اسم مبالغي واحد جو صيغو آهي قوامين ان جو جمع آهي هتي ان مان مراد عدد وڌائڻ نہ پر استحڪام ۽ مضبوطي آهي جنهن مان مقصد شاهدي ڏيڻ ۾ تاڪيد ڪرڻ آهي، هن کان اڳ ۾ زال ۽ مڙس جي حقوق جو بيان هيو پر ان معاملي ۾ ڪڏهن ڪڏهن ڪورٽ جو دروازو ڪڙڪائڻو پوندو آهي جتي شاهدن جي شاهديءَ جي ضرورت هوندي آهي پوءِ جيڪڏهن شاهد سچي شاهدي نہ ڏي تہ عدل جي بجاءِ ظلم کي ٽيڪ ملي ويندي آهي تڏهن الله‌تعالىٰ فرمايو تہ شاهدي خدا واسطي ۽ مضبوط ٿي ڏيو. "وَلَوْ عَلَىٰ أَنفُسِكُمْ أَوِ الْوَالِدَيْنِ وَالْأَقْرَبِينَ" يعني اها شاهدي پلي اوهان جي سرن يا پيءُ ماءُ ۽ ويجهن مائٽن تي هجي ڪنهن جو بہ لحاظ نہ رکو، "إِن يَكُنْ غَنِيًّا أَوْ فَقِيرًا فَاللَّهُ أَوْلَىٰ بِهِمَا" ڪڏهن ڪڏهن هيءُ خيال بہ انسان کي سچي شاهديءَ ڏيڻ کان روڪيندو آهي تہ مان جنهنجي خلاف شاهدي ٿو ڏيان اهو وڏو امير آهي مون کي تنگ ۽ پريشان ڪندو يا وري هي خيال ٿيندو آهي تہ مان جنهن جي خلاف شاهدي ٿو ڏيان تنگدست، مسڪين ۽ غريب آهي، تباهہ ٿي ويندو انهن ٻنهي سببن جي ڪري بہ شاهدي نہ ڏني ويندي آهي، الله تعالىٰ ٻنهي صورتون بيان ڪندي ارشاد فرمايو تہ: جنهن جي مٿان شاهدي ٿا ڏيو جيڪڏهن شاهوڪار يا مسڪين هوندو تہ اوهان شاهدي نہ لڪايو، الله تعالىٰ انهن ٻنهي جو وڌيڪ خيرخواهہ آهي جنهن کي وڌيڪ علم آهي تہ ان ۾ ئي انهن جي اصلاح آهي جيڪڏهن ائين نہ هجي ها تہ الله تعالىٰ شاهدي ڏيڻ جي لاءِ ايترو تاڪيد نہ فرمائي ها "فَلَا تَتَّبِعُوا الْهَوَىٰ أَن تَعْدِلُوا" يعني تعصبءَ ڪنهن تي ڪاوڙ هجڻ جي ڪري نفساني خواهشن جي تابعداري نہ ڪيو تانتہ عدل ڪري سگهو (١) هر ڳالهہ ۾، هر حال ۾ عدل تي قائم رهو.

(١) تفسير نعيمي ص٥٠٩ جلد ٥

## هڪ اعليٰ مثال

امام احمد پنهنجي مسند ۾ حضرت جابر بن عبدالله رضي الله عنه کان روايت آندي آهي ته جڏهن الله تعاليٰ حضور عليه الصلواة والسلام جن کي خيبر فتح ڪرائي ڏنو ته پاڻ اتي جي رهاڪن کي اتي ئي رهايائون . جڏهن فصل جي لهڻ جو وقت آيو ته پاڻ ان جي پيدائش جي ماپ ڪرڻ ۽ اڌ ونڊ جي لاءِ حضرت عبدالله بن رواحه رضي الله عنه کي موڪليائون جڏهن حضرت عبدالله بن رواحه ان پيدائش جي ماپ ڪئي (ته انهن ڪيس نرمي ڪرڻ جي لاءِ رشوت باسي پاڻ اها قبول نه ڪندي ڪين) فرمايائين ته: اي يهودين جي جماعت! الله تعاليٰ جي خلق مان وڌ ۾ وڌ مون وٽ بغض وارا اوهان آهيو جو اوهان الله تعاليٰ جي نبين عليهم الصلواة والسلام کي شهيد ڪيو ۽ الله تعاليٰ تي ڪوڙ هنيا پر ان ڪاوڙ هوندي به مان اوهان تي ظلم نه ڪندس مون ويهه هزار وسق (هڪ وسق ۾ سٺ ٽويا هوندا آهن) ڪارڪن جا ماپيا آهن جي ڪٽو ته اوهان لاءِ آهن ۽ جي انڪارٽا ڪريو ته مون لاءِ آهن،انهن يهودين اهو عدل ڏسي چيو ته ان انصاف جي ڪري ته آسمان ۽ زمين بيٺا آهن، اسان اهو ونون ٿا اوهان پنهنجو حصو ڪيو(١) "وَاِنْ تَلْوُا اَوْ تُعْرِضُوْا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرًا" يعني جيڪڏهن سچيءَ شاهديءَ ۾ ڦيرڦار ڪندؤ يا منهن موڙي لڪائيندو ته الله تعاليٰ کي جيڪو به ڪجهه ڪيو ٿا ان جي خبر آهي اوهان کي ان جي سخت سزا ڏيندو ان جي ڪري ڪا لڪ نه ڪيو جيڪا به سچي ڳالهه هجي بيان ڪري ڏيو.

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ وَالْكِتٰبِ الَّذِيْ نَزَّلَ

اي ايمان وارؤ! ايمان آڻيو الله تي ۽ ان جي رسول تي ۽ ڪتاب تي جو نازل ڪيائين

عَلٰى رَسُوْلِهٖ وَالْكِتٰبِ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ مِنْ قَبْلُ ؕ وَمَنْ يَّكْفُرْ بِاللّٰهِ

پنهنجي رسول تيءَ (ان) ڪتاب تي جو نازل ڪيائين اڳ ۾ ۽ جيڪو انڪار ٿو ڪري الله جو

(١) مسند امام احمد ص٣٦٧ جزءِ ٣

وَمَلَآئِكَتِهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ فَقَدْ ضَلَّ ضَلٰلًا

۽ ان جي ملائڪن ۽ ان جي ڪتابن ۽ ان جي رسولن ۽ ڏينهن قيامت جو پوءِ تحقيق گمراهه ٿيو گمراهي

بَعِيْدًا ﴿١٣٦﴾ اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ثُمَّ كَفَرُوْا ثُمَّ اٰمَنُوْا ثُمَّ كَفَرُوْا

پرانهين بيشڪ جن ايمان آندو ان ڪان پوءِ ڪفر ڪيائون وري ايمان آندائون وري ڪفر ڪيائون

ثُمَّ ازْدَادُوْا كُفْرًا لَّمْ يَكُنِ اللّٰهُ لِيَغْفِرَ لَهُمْ وَلَا لِيَهْدِيَهُمْ

ان ڪان پوءِ وڌ يا ڪفر ۾ نہ آهي الله تانت بخشي انهن کي ۽ نہ تانت هدايت ڪري انهن کي

سَبِيْلًا ﴿١٣٧﴾

(سڌي) واٽ ڏانهن.

## تفسير

جڏهن تہ اسلام قبول ڪرڻ کان پوءِ بہ مسلمان کي ڪيترن ڏکين مرحلن مان لنگهڻو پوندو آهي ان جي ڪري هن آيت ۾ ايمان وارن کي سڌي حڪم ڪيو ويو آهي تہ "يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ وَالْكِتٰبِ الَّذِيْ نَزَّلَ عَلٰي رَسُوْلِهٖ وَالْكِتٰبِ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ مِنْ قَبْلُ" يعني ايمان وارؤ! ان ايمان تي ثابت قدم رهو جيڪو الله ۽ ان جي رسول ۽ ان ڪتاب تي آندو اٿو جيڪو الله تعالىٰ پنهنجي رسول ( عليه الصلواة والسلام ) تي لاٿو آهي ۽ ان ڪتاب تي جيڪو الله تعالىٰ، ان کان اڳ ۾ لاٿو آهي ۽ هڪ قول آهي تہ هي خطاب اهل ڪتاب سان آهي ڇو تہ انهن بعضي ڪتابن ۽ رسولن تي ايمان آندو هو، انهن کي سڌي حڪم ڪيو ٿو وڃي تہ: اي اهي شخص جن بعضي ڪتابن ۽ رسولن (عليهم الصلواة والسلام) تي ايمان آندو آهي الله تعالىٰ، تي ۽ ان جي هن پياري رسول (عليه الصلواة والسلام) ۽ هن ڪتاب تي جيڪو الله تعالىٰ

پنهنجي هن رسول (عليه الصلواة والسلام) تي لاٿو آهي ۽ انهن سيني ڪتابن تي جيڪي الله تعاليٰ هن کان اڳ ۾ لاٿا هيا، ايمان آڻيو، روايت ۾ آهي ته حضرت عبدالله بن سلام سندس ڀاڻيجو سلام، ڀائٽيو سلمه، ڪعب جا پٽ اسد ۽ اسيد، ثعلبه بن قيس ۽ ويامين بن يامين رسول الله صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن جي خدمت عاليه ۾ آيا ۽ عرض ڪيائون ته يا رسول الله!(ﷺ) اسان اوهان تي ۽ اوهان تي نازل ڪيل ڪتاب قرآن ڪريم ۽ حضرت موسيٰ عليه الصلواة والسلام ۽ ان تي نازل ڪيل ڪتاب توراة ۽ حضرت عزير عليه الصلواة والسلام جن تي ايمان آڻيون ٿا، باقي ٻين ڪتابن ۽ رسولن عليهم الصلواة والسلام جو انڪار ڪيون ٿا. حضور عليه الصلواة والسلام جن ڪين فرمايو ته "مون تي، منهنجي مٿان نازل ڪيل ڪتاب قرآن تي ۽ ان کان اڳ ۾ نازل ڪيل سيني ڪتابن تي ايمان آڻيو" چيائون ته، ائين نه-تڏهن مٿين آيت نازل ٿي جنهن ۾ الله تعاليٰ جو حڪم آهي ته ايمان آڻيو ته سيني تي آڻيو، جڏهن اها آيت ٻڌائون ته سيني تي ايمان آندائون، ڪن مفسرن جو قول آهي ته اها آيت منافقن جي ٻاري ۾ لٿي هئي انهن کي الله تعاليٰ حڪم ڪيو ته "اي ظاهري طرح ايمان آڻڻ وارو! دل سان ۽ سچائيءَ سان ايمان آڻيو" (١) "وَمَنْ يَّكْفُرْ بِاللّٰهِ وَمَلٰٓئِكَتِهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ فَقَدْ ضَلَّ ضَلٰلًاۢ بَعِيْدًا" ڄاڻڻ گهرجي تي گمراهي ٻه قسم آهي ١- هڪ اها جنهن جي ڪري ماڻهو گنهگار ٿئي ٿو پر ڪافر نه ٿو ٿئي. ٢- ٻي اها جنهن جي ڪري ماڻهو اسلام کان نڪري ٿو وڃي ان کي ئي گمراهي بعيد (تمام پرانهين) سڏيو ويندو آهي جيڪا هتي بيان ٿي آهي ته" جيڪو به شخص الله ۽ ان جي ملائڪن ۽ ان جي ڪتابن ۽ ان جي رسولن ۽ قيامت جي ڏينهن جو انڪار ڪندو اهو گمراهيءَ ۾ تمام پري وڃي پيو.

## فائدو

جيئن الله تعاليٰ جي ذات جو انڪار ڪرڻ ڪفر آهي تيئن سندس صفتن مان ڪنهن صفت جو انڪار به ڪفر آهي قرآن پاڪ جي هنن لفظن ۾ "و" او جي معنيٰ ۾ آيل آهي يعني انهن مان ڪنهن هڪ جو به انڪار ڪيائين ته ڪافر ٿي ويندو علامه نسفي عليه الرحمه لکيو آهي ته اي ومن ڪفر بشيء من ذالک لان الڪفر ببعضه ڪفر بڪله (٢) يعني مٿي ذڪر ڪيلن مان ڪنهن به شيءِ جو انڪار ڪندو ته ڪافر آهي، ڇو ته انهن مان بعض جو ڪفر ڄڻ سيني سان ڪفر آهي"اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ثُمَّ كَفَرُوْا ثُمَّ

(١) الڪشاف ص٥٧١ جلد١ (٢) المدارڪ ص٢٥٦ ج١

آمَنُوْا ثُمَّ كَفَرُوْا ثُمَّ ازْدَادُوْا كُفْرًا لَّمْ يَكُنِ اللّٰهُ لِيَغْفِرَ لَهُمْ وَلَا لِيَهْدِيَهُمْ سَبِيْلًا" حضرت ابن عباس رضي الله عنهما جو فرمان آهي ته هيءَ آيت مرتدن جي باري ۾ نازل ٿي هئي جن اسلام جي ٿوري کاميابي ڏٺي ته ايمان آندائون ٿوري سختيءَ جو وقت آيو ته ڪافر ٿي ويا وري ڪو معجزو يا مسلمانن جي غالب ٿيڻ جا آثار ڏٺائون ته مسلمان ٿيا وري ڪنهن وسوسو وڌن يا مسلمان ڪنهن آزمائش ۾ مبتلا ٿيا ته اسلام کان تعلق ٽوڙي ڪفر سان وڃي مليا ، انهن لاءِ فيصلو آهي ته" نه الله تعالىٰ انهن کي مغفرت نصيب ڪندو ۽ نه انهن کي سڌيءَ واٽ ڏانهن هدايت ڪندو.

بَشِّرِ الْمُنَافِقِيْنَ بِاَنَّ لَهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ﴿١٣٨﴾ الَّذِيْنَ يَتَّخِذُوْنَ

بشارت ڏي منافقن کي ته يقينًا انهن لاءِ دردناڪ عذاب آهي جيڪي بڻائين ٿا

الْكَافِرِيْنَ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ اَيَبْتَغُوْنَ عِنْدَهُمُ الْعِزَّةَ

ڪافرن کي دوست مومنن کان سواءِ ڇا طلب ڪن ٿا انهن وٽ عزت؟

فَاِنَّ الْعِزَّةَ لِلّٰهِ جَمِيْعًا ﴿١٣٩﴾ وَقَدْ نَزَّلَ عَلَيْكُمْ فِى الْكِتٰبِ اَنْ

پوءِ بيشڪ عزت الله وٽ آهي سموري ۽ تحقيق لاٿائين اوهان تي ڪتاب ۾ ته جڏهن

اِذَا سَمِعْتُمْ آيٰتِ اللّٰهِ يُكْفَرُ بِهَا وَيُسْتَهْزَءُ بِهَا فَلَا تَقْعُدُوْا

ٻڌو الله جون آيتون جو ڪفر ڪيو وڃي انهن جو ۽ چٿر ڪئي وڃي انهن سان پوءِ نه وهو

مَعَهُمْ حَتّٰى يَخُوْضُوْا فِىْ حَدِيْثٍ غَيْرِهٖٓ ۡ اِنَّكُمْ اِذًا مِّثْلُهُمْ ۭ

انهن سان تانجو شروع ٿين ڪنهن ڳالهه ۾ ان کان سواءِ بيشڪ اوهان ان وقت انهن جهڙا آهيو

اِنَّ اللّٰهَ جَامِعُ الْمُنَافِقِيْنَ وَالْكَافِرِيْنَ فِىْ جَهَنَّمَ جَمِيْعًا ﴿١٤٠﴾

بيشڪ الله گڏ ڪندڙ آهي منافقن ۽ ڪافرن کي جهنم ۾ سيني کي

الَّذِيْنَ يَتَرَبَّصُوْنَ بِكُمْ ۚ فَاِنْ كَانَ لَكُمْ فَتْحٌ مِّنَ اللّٰهِ قَالُوْٓا اَلَمْ

جيڪي انتظار ۾ ٿا ڪن اوهان جو پوءِ جيڪڏهن هوندي اوهان جي فتح الله وٽان ته چوندا ته ڇا نه

نَكُنْ مَّعَكُمْ ۖ وَاِنْ كَانَ لِلْكٰفِرِيْنَ نَصِيْبٌ ۙ قَالُوْٓا اَلَمْ نَسْتَحْوِذْ

هئاسون اوهان سان گڏ ۽ جيڪڏهن آهي ڪافرن جو ڀاڱو ته چوندا ته ڇا غالب نه هياسون

عَلَيْكُمْ وَنَمْنَعْكُمْ مِّنَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ فَاللّٰهُ يَحْكُمُ بَيْنَكُمْ يَوْمَ

اوهان تي ۽ بچايوسون اوهان کي مومنن کان پوءِ الله فيصلو ڪندو اوهان جي وچ ۾ ڏينهن

٢٠ ع ٧ ١٧ الْقِيٰمَةِ ۭ وَلَنْ يَّجْعَلَ اللّٰهُ لِلْكٰفِرِيْنَ عَلَي الْمُؤْمِنِيْنَ سَبِيْلًا ﴿١٤١﴾

قيامت جي ۽ هرگز نه ڪندو الله ڪافرن جي لاءِ مومنن تي (غلبي جي) واٽ.

# تفسير

مٿي لکيل آيت ۾ ”بشر“ امر جو صيغو تبشير کان ورتل آهي عام طور ان جي معنيٰ، ڪنهن چڱيءَ ڳالهه جي خبر ڏيڻ ڪئي ويندي آهي پر هتي معنيٰ ٿيندي طنز طور ڪنهن کي ڪجهه چوڻ جيئن ڪو ماڻهو گناهن جي مار کائي رهيو آهي ان کي چئجي ته مزو وٺ، تماشو ڏس وغيره (١) ۽ اصل ۾ بشارت جي معنيٰ آهي اهڙي ڳالهه ڪرڻ جنهن جو اثر منهن تي ظاهر ٿئي پوءِ اها خوشي ڏيندڙ هجي يا غم (٢)

هتي الله تعاليٰ انهن زبان سان ڪلمي پڙهندڙ ۽ دل سان انڪار ڪندڙن جي لاءِ ارشاد فرمايو آهي ته ”بَشِّرِ الْمُنٰفِقِيْنَ بِاَنَّ لَهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا“ يعني منافقن کي بشارت ڏي ته انهن جي لاءِ سندن ٿي منافقيءَ جي ڪري دردناڪ عذاب يقينًا تيار آهي، چو ته اهي

(١) التفسير الڪبير ص٨٠ جزء ١١ (٢) مظهري ص٤٤٦ جلد٢

ڪفر ۾ وڌندڙ ۽ فساد ڪرائڻ ۾ پڪا آهن.

" اَلَّذِيۡنَ يَتَّخِذُوۡنَ الۡكٰفِرِيۡنَ اَوۡلِيَآءَ مِنۡ دُوۡنِ الۡمُؤۡمِنِيۡنَ " هي جملو ترڪيب ۾ "المنافقين" جي صفت آهي يعني دردناڪ عذاب جي بشارت انهن منافقن کي ڏي جيڪي ايمان وارن کان سواءِ ڪافرن کي پنهنجو دوست بنائين ٿا " اَيَبۡتَغُوۡنَ عِنۡدَهُمُ الۡعِزَّةَ فَاِنَّ الۡعِزَّةَ لِلّٰهِ جَمِيۡعًا " ڇا انهن ڪافرن وٽ عزت طلب ڪن ٿا؟(انهن کي ٻڌڻ کپي ته) عزت ته سموري الله تعالىٰ جي آهي، منافق ڪافرن سان ان جي لاءِ محبت رکندا هئا جو انهن وٽ مال، ملڪيت،خزانا، دولت ۽ دٻدٻو هيو ان جي خلاف مسلمان مسڪين ۽ غريب هوندا هئا. الله تعالىٰ فرمايو ته ائين ڪرڻ سان منافقن کي عزت نه ملندي ڇو ته عزت ته الله تعالىٰ جي قدرتي هٿ ۾ آهي، اهو جنهن کي عزت ڏيندو اهوئي عزت وارو هوندو ۽ سيئي ٿوري وقت ۾ ڏسندا ته ڪنهن جي بخت جو سج پوري دنيا کي منور ڪري رهيو آهي ۽ دنيا ۽ دولت ٻانهي ٻنجي ڪنهن جا قدم چمي رهي آهي " وَقَدۡ نَزَّلَ عَلَيۡكُمۡ فِي الۡكِتٰبِ اَنۡ اِذَا سَمِعۡتُمۡ اٰيٰتِ اللّٰهِ يُكۡفَرُ بِهَا وَيُسۡتَهۡزَاُ بِهَا فَلَا تَقۡعُدُوۡا مَعَهُمۡ حَتّٰى يَخُوۡضُوۡا فِيۡ حَدِيۡثٍ غَيۡرِهٖٓ " هتي مسلمانن کي خبردار ڪيو ٿو وڃي ته اي مسلمانو! الله تعالىٰ " اڳ ۾ ئي اوهان تي قرآن ڪريم ۾ حڪم نازل ڪري ڇڏيو آهي ته جنهن جنهن مجلس ۾ الله تعالىٰ جي آيتن جو انڪار ۽ انهن سان چٿر ڪئي وڃي ان مجلس ۾ وهڻ وارن سان گڏ نه وهو تانجو اهي ڪنهن ٻيءَ ڳالهه ۾ مشغول ٿين، جنهن ۾نه الله تعالىٰ جي آيتن جو انڪار هجي ۽نه انهن تي چٿر " اِنَّكُمۡ اِذًا مِّثۡلُهُمۡ " يعني جيڪڏهن اهڙين غلط ڳالهين وارين مجلسن ۽ ڪچهرين ۾ وهندؤ ته پوءِ پڪ اوهان به انهن جهڙا آهيو.

## فائدو

هن مان ثابت ٿيو ته ڪفر ڪرڻ، ڪفر ڪرائڻ ۽ ڪفر کان راضي رهڻ سڀ برابر آهي،بلڪ ڪفر جي مجلس ۾ شريڪ ٿيڻ جي ارادي سان وڃڻ به حرام آهي، ان جي ڪري بد مذهبن،حبيب پاڪ عليه الصلواة والسلام جن جي گستاخن، اصحابن سڳورن جي بي ادبن، حبيب ڪريم عليه الصلواة والسلام جن جي اولاد، ازواج مطهرات رضي الله عنهن سان بغض رکندڙن، الله تعالىٰ جي ولين صالحن جي فيوضات،برڪات ۽ ڪرامتن جي انڪار ڪندڙن جي مجلسن، ماتمي پروگرامن وغيره

۾ وجھڻ بلڪل حرام، قطعي حرام بلڪ ڪفر يا ڪفر جي قريب آهي، انهن کان پاڻ بچڻ ۽ ٻين کي بچائڻ فرض آهي، ها جيڪڏهن ڪو علم جو صاحب انهن اعتراضن ۽ سوالن جا جواب ڏيڻ، انهن کي سڌي واٽ وٺائڻ لاءِ وڃي تہ اهو نہ صرف جائز پر هڪ قسم جو وڏو جهاد آهي، "اِنَّ اللّٰهَ جَامِعُ الْمُنَافِقِيْنَ وَالْكَافِرِيْنَ فِيْ جَهَنَّمَ جَمِيْعًا" يعني الله تعاليٰ منافقن ۽ ڪافرن سڀني کي جهنم ۾ گڏ ڪندو، جيتوڻيڪ اتي بہ انهن جون حالتون تہ انهن جي بدعقيدگيءَ ۽ بداخلاقيءَ جي لحاظ سان مختلف هونديون جيئن منافقن جي لاءِ رب العزة جل مجده جو ٻيو فرمان آهي تہ "اِنَّ الْمُنَافِقِيْنَ فِي الدَّرْكِ الْاَسْفَلِ مِنَ النَّارِ" (١) يقينا منافق جهنم جي (طبقن مان) نهايت هيٺاهين طبقي ۾ هوندا "اَلَّذِيْنَ يَتَرَبَّصُوْنَ بِكُمْ فَاِنْ كَانَ لَكُمْ فَتْحٌ مِّنَ اللّٰهِ قَالُوْۤا اَلَمْ نَكُنْ مَّعَكُمْ" يعني اهي جنگ جي وقت هوندا بہ مسلمانن سان گڏ آهن پر هڪ تہ ڪافرن سان ڪليءَ دل سان وڙهن نہ ٿا پلا جي وڙهيا تہ بہ نالي خاطر" اهي اوهان کي مصيبت ۽ تڪليف پهچڻ جو انتظار ٿا ڪن، پر جيڪڏهن سندن خواهش جي برخلاف الله تعاليٰ اوهان کي فتح ٿو عطا ڪري تہ اوهان وٽ اچي پنهنجي شرڪت، معيّت ۽ رفاقت جو حق ڄڻائي ۽ غنيمت جي مال وغيره مان حصو گهرندي چون ٿا تہ ڇا اسين اوهان سان گڏ نہ هياسون؟ "وَاِنْ كَانَ لِلْكَافِرِيْنَ نَصِيْبٌ قَالُوْۤا اَلَمْ نَسْتَحْوِذْ عَلَيْكُمْ وَنَمْنَعْكُمْ مِّنَ الْمُؤْمِنِيْنَ" ۽ جيڪڏهن ڪافرن کي اتفاق سان ميدان ملي ويو تہ هڪدم انهن وٽ وڃي انهن کي پنهنجو احسان ڄڻائيندي چوڻ لڳن ٿا تہ" ڇا اسين اوهان تي غالب نہ هئاسون ۽ اسان اوهان کي مؤمنن کان نہ بچايو هو؟ اسان جي تدبير ۽ اوهان کي بچائڻ جي ڪوشش نہ هجي ها تہ مسلمان اوهان تي غالب ۽ حاوي ٿي وڃن ها. تنهنجي ڪري اوهان کي هٿ آيل مسلمانن جي سامان مان اسان کي بہ حصو ڏيو" "فَاللّٰهُ يَحْكُمُ بَيْنَكُمْ يَوْمَ الْقِيَامَةِ" يعني هتي تہ اهي منافق ظاهري مسلمان سڏائي بچاءُ حاصل ڪري ٿا وڃن ۽ مسلمانن جي گرفت کان محفوظ ٿا رهن پر قيامت ۾ ڇا ڪندا؟ "الله تعاليٰ اوهان ۾ فيصلو ڪندو" پوءِ هنن جو لڪل ڪفر ڪلي، ظاهر ٿي ويندو. راقم محمد ادريس عفي عنہ قارئين ڪرام ۽ عام مسلمانن جي خدمت ۾ عرض ٿو ڪري تہ اها منافقن واري ھٺي پاليسي هن هلندڙ دور جي ٽورن کان سواءِ گهڻن وڏن اميرن نام نهاد پيرن، سياست جي ٺيڪدارن ڪرسيءَ جي پوڄارين آفيسرن، وزيرن، صدرن ۽

(١) سورة النساءِ آيت ١٤٥

حڪمرانن جي بہ آهي، جن جو ڪو بہ پڪو عقيدو ناهي جنهن جي لاءِ سر جو سودو، يا گهٽ ۾ گهٽ مالي يا دنيوي عهدن جي قرباني ڏيڻ لاءِ تيار هجن انهن جو دين، انهن جي قلب جو ڪعبو صرف دنيا آهي جو جيڪڏهن ان جي حاصل ڪرڻ لاءِ ڪين وعدا ٽوڙڻا پون، ضمير فروشي ڪرڻي پوي، تہ ان جي ڪا بہ پرواهہ نہ اٿن ڪين صرف دولت ڪپي، جيڪو دنيا پرستن جو هميشہ شيوو رهيو آهي. وڏو ظلم تہ اهو آهي جو سيدنا ابوبڪر صديق رضي الله عنہ جو اولاد سڏائڻ وارا، حضرت ابوبڪر رضي الله عنہ جي شان ۾ گستاخي ڪرڻ ۽ ڪيس معاذالله ڪافر چوڻ وارن سان گڏ تاڙا ملائي خوش ويٺا آهن، سيدنا عبدالقادر جيلاني عليه الرحمہ جي اولاد هجڻ تي فخر ڪرڻ وارا، ماٹهن کي مريد بنائڻ وارا، جيلاني، جيلاني نسبت کي ناز سان بيان ڪرڻ وارا، حضرت غوث پاڪ عليه الرحمۃ کي حضرت امام حسن عليه الرضوان جو اولاد نہ مڃڻ وارن، ڪيس گاريون ڏيڻ وارن تان قربان ٿي رهيا آهن، ٻڌايو تہ اهي ظالم قيامت جي ڏينهن حضرت صديق اڪبر ۽ حضرت بغدادي بادشاهہ رضي الله عنهما جي اڳيان ڪهڙو ڪنڌ ڪڻندا؟"

"وَلَنْ يَّجْعَلَ اللّٰهُ لِلْكَافِرِيْنَ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ سَبِيْلًا" ۽ الله تعالىٰ ڪڏهن بہ ڪافرن جي لاءِ مومنن تي (غالب ٿيڻ جو) رستو نہ ڪندو هن مان مراد يا آخرت وارو فيصلو آهي جيڪو فيصلو بہ آخري فيصلو هوندو ۽ اتي ڪو التباس، منجهہ، اشتباهہ ۽ پل نہ هوندي هر ڳالهہ ظاهر ۽ ڪليل ٿي بيهندي يا هيءُ مراد آهي تہ دليل، برهان ۽ حجۃ جي ميدان ۾ ڪافر مسلمان کي هار ڏئي نہ سگهندو، پر مفسر قرآن علامہ قرطبي عليه الرحمۃ لکيو آهي تہ "وَلَنْ يَّجْعَلَ اللّٰهُ لِلْكَافِرِيْنَ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ سَبِيْلًا" جو مطلب آهي تہ الله تعالىٰ ڪافرن کي اهڙي طاقت نہ ڏيندو جنهن جي ذريعي دنيا تان مسلمانن جو نالو، نشان ۽ حاڪميت ختم ٿي وڃي، جيئن صحيح مسلم شريف ۾ حضرت ثوبان رضي الله تعالىٰ عنہ کان روايت آهي تہ رسول الله ﷺ جن فرمايو" وَاِنِّيْ سَاَلْتُ رَبِّيْ اَنْ لَّا يُهْلِكَهَا بِسَنَةٍ عَامَّةٍ وَاَلَّا يُسَلِّطَ عَلَيْهِمْ عَدُوًّا مِنْ سِوَى اَنْفُسِهِمْ فَيَسْتَبِيْحَ بَيْضَتَهُمْ وَاِنَّ رَبِّيْ قَالَ: يَا مُحَمَّدُ! اِنِّيْ اِذَا قَضَيْتُ قَضَاءً فَاِنَّهُ لَا يُرَدُّ وَاِنِّيْ قَدْ اَعْطَيْتُكَ لِاُمَّتِكَ اَلَّا اُهْلِكَهُمْ بِسَنَةٍ عَامَّةٍ وَاَلَّا اُسَلِّطَ عَلَيْهِمْ عَدُوًّا مِنْ سِوَى اَنْفُسِهِمْ فَيَسْتَبِيْحَ بَيْضَتَهُمْ وَلَوِ اجْتَمَعَ عَلَيْهِمْ مَنْ بِاَقْطَارِهَا حَتّٰى يَكُوْنَ بَعْضُهُمْ يُهْلِكُ بَعْضًا وَيَسْبِيْ بَعْضُهُمْ بَعْضًا"(١)

يعني مون پنهنجي رب کان پنهنجيءَ امت لاءِ سوال ڪيو تہ انهن کي عام ڏڪار

(١) مسلم شريف مع شرح النووي ص٣٩٠ ج٢

جي حالت سان هلاڪ نہ ڪري ۽ انهن جي مٿان سندن سرن ڪان سواءِ ڪنهن اهڙي دشمن کي مسلط نہ ڪري جو انهن جي نشان ۽ وجود کي ختم ڪري ڇڏي منهنجي ان سوال جي جواب ۾ منهنجي رب فرمايو تہ: اي محمد! (ﷺ) منهنجي جڏهن بہ ڪا قضا جاري ڪئي ويندي آهي تہ اها رد نہ ٿيندي آهي ۽ مون توکي تنهنجي امت لاءِ اها مهرباني عطا ڪئي آهي تہ نہ انهن کي عام ڏڪار جي حالت سان هلاڪ ڪندس ۽ نہ انهن تي انهن جي سرن ڪان سواءِ ڪنهن اهڙي دشمن کي غالب ڪندس جيڪو سندن نشان ۽ وجود ختم ڪري ڇڏي ڪٺي دنيا جي ڇئن ئي طرفن وارا انهن کي هلاڪ ڪرڻ جي لاءِ گڏ ٿي وڃن، تانجو پاڻ ۾ هڪ ٻئي کي هلاڪ ڪن يا هڪ ٻئي کي قيدي بنائين ها جيڪڏهن پاڻ باطل جي لاءِ هڪ ٻئي کي وصيت ڪندا، براين ڪان نہ روڪيندا، توبہ ڪان سستي ڪندا، الله تعالىٰ جي بي فرماني ڪري سندس سنتن ڪان اکيون ٻوٽي منهن موڙيندا تہ پوءِ جيڪڏهن ڪين ڪافرن جي هٿان شڪست ايندي تہ اها سندن ڪيل ڪمائي هوندي، جيئن رب العزة جل مجده جو فرمان آهي تہ "وَمَآ اَصَابَكُمْ مِّنْ مُّصِيْبَةٍ فَبِمَا كَسَبَتْ اَيْدِيْكُمْ "(١) يعني اوهان کي جيڪا بہ مصيبت پهتي آهي اها اوهان جي ڪمائيءَ جي ڪري آهي ۽ هن دور ۾ مسلمانن تي جيڪو ڪافرن جو تسلط ۽ غلبو آهي سو بہ سندن ئي ويڙهين جي ڪري آهي جيڪي انهن جون پاڻ ۾ ٿيون ۽ ٿينديون رهن ٿيون.

## فائدو

آيت مبارڪ جي جملي "وَلَنْ يَّجْعَلَ اللّٰهُ لِلْكَافِرِيْنَ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ سَبِيْلًا" مان فقهاءِ ڪرام هي مسئلا استنباط ڪيا آهن، ١- هڪ تہ ڪافر جي شاهدي مسلمان جي نقصان ۾ قبول ناهي ٢- ٻيو تہ مسلمان نابالغ جي نڪاح ۾ ڪافر جي وارث هجڻ واري ڳالهہ بہ قبول ناهي ٣- ٽيون تہ ڪافر پلي ڪيترو بہ ويجهو مٽ هجي مسلمان جو وارث نہ ٿيندو (٢)

إِنَّ الْمُنَافِقِيْنَ يُخَادِعُوْنَ اللّٰهَ وَهُوَ خَادِعُهُمْ ۚ وَإِذَا قَامُوْٓا إِلَى

بيشڪ منافق چالبازي ٿا ڪن الله سان ۽ اهو چالبازيءَ جي سزا ڏيندڙ آهي انهن کي ۽ جڏهن اٿن ٿا

(١) سورة شوريٰ آيت ٣٠ (٢) حاشيہ دريا بادي ص ٢٢٣

الصَّلوٰةِ قَامُوْا كُسَالٰى ۙ يُرَآءُوْنَ النَّاسَ وَلَا يَذْكُرُوْنَ اللّٰهَ اِلَّا

نماز ڏانهن ته اٿن ٿا سستي ڪندڙ ڏيکارين ٿا ماڻهن ڪي ۽ نه ٿا ياد ڪن الله کي مگر

قَلِيْلًا ۝١٤٢ مُّذَبْذَبِيْنَ بَيْنَ ذٰلِكَ ۖ لَآ اِلٰى هٰٓؤُلَآءِ وَلَآ اِلٰى هٰٓؤُلَآءِ ۚ

ٿورو حيران ٿيل ان وچ ۾ نه هنن ڏانهن ۽ نه هنن ڏانهن

وَمَنْ يُّضْلِلِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ سَبِيْلًا ۝١٤٣ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا

۽ جنهن کي گمراهه ٿو ڪري الله پوءِ اصل نه لهندين ان لاءِ ڪو رستو اي ايمان وارؤ!

تَتَّخِذُوا الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ اَتُرِيْدُوْنَ اَنْ

نه بڻايو ڪافرن کي دوست مومنن کان سواءِ ڇا ارادو ٿا ڪيو ته

تَجْعَلُوْا لِلّٰهِ عَلَيْكُمْ سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا ۝١٤٤ اِنَّ الْمُنٰفِقِيْنَ فِى

قائم ڪيو الله جي لاءِ پاڻ تي حجت پڌري بيشڪ منافق درجي

الدَّرْكِ الْاَسْفَلِ مِنَ النَّارِ ۚ وَلَنْ تَجِدَ لَهُمْ نَصِيْرًا ۝١٤٥ ۙ اِلَّا الَّذِيْنَ

هيٺاهين ۾ هوندا، باهه ۾ ۽ هرگز نه لهندين انهن لاءِ مددگار مگر جن

تَابُوْا وَاَصْلَحُوْا وَاعْتَصَمُوْا بِاللّٰهِ وَاَخْلَصُوْا دِيْنَهُمْ لِلّٰهِ

توبه ڪئي ۽ سڌارو ڪيائون ۽ مضبوطيءَ سان ورتائون الله (جي حڪم کي) ۽ خالص رکيائون دين پنهنجو الله جي لاءِ

فَاُولٰٓئِكَ مَعَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ وَسَوْفَ يُؤْتِ اللّٰهُ الْمُؤْمِنِيْنَ اَجْرًا

پوءِ اهي مومنن سان گڏ آهن ۽ جلد ڏيندو الله ايمان وارن کي ثواب

عَظِيمًا ﴿١٤٦﴾ مَا يَفْعَلُ اللّٰهُ بِعَذَابِكُمْ اِنْ شَكَرْتُمْ وَآمَنْتُمْ

وڏو چا ڪندو الله اوهان کي عذاب ڏئي جيڪڏهن شڪر ڪندا رهندؤ ۽ ايمان آڻيندئو

وَكَانَ اللّٰهُ شَاكِرًا عَلِيمًا ﴿١٤٧﴾

۽ آهي الله قدردان ڄاڻندڙ.

# تفسير

هن ڪان اڳ ۾ منافقن جي ان ڏوڪي ۽ ٻٽي پاليسيءَ جو ذڪر هو جيڪا اهي جنگين ۾ ڪندا هئا هاڻي ٻڌايو ٿو وڃي تہ انهن جي هر عبادت، هر قول، هر عمل ۽ هر ڳالهہ ۾ ڏوڪو ۽ فريب آهي فرمان رباني آهي" اِنَّ الْمُنَافِقِيْنَ يُخَادِعُوْنَ اللّٰهَ وَهُوَ خَادِعُهُمْ " يعني منافق الله تعاليٰ جي ذات پاڪ سان ڏوڪو ٿا ڪن جو ظاهر ۾ مسلمان سڏائي انهن ڪان بچاءُ حاصل ڪن ٿا ۽ دل ۾ ڪفر رکي ڪافرن کي راضي ڪري انهن ڪان تحفظ وٺن ٿا پر الله تعاليٰ انهن کي ان ڏوڪي جي دنيا ۾ ئي سزا ڏيندڙ آهي ۽ ڏنائين بہ جو سندن سڀ شرارتون ۽ مخفي خباثتون پنهنجي محبوب نبي عليہ الصلواة والسلام کي کولي کولي ٻڌايائين جنهن جي ڪري خوار ۽ ذليل ٿيا ، ۽ ڪنهن بہ ڪم جا نہ رهيا ، باقي انهن کي آخرت ۾ جيڪا سزا ملندي ان جو بيان اڳتي اچي رهيو آهي" وَاِذَا قَامُوْا اِلَى الصَّلٰوةِ قَامُوْا كُسَالٰى يُرَاءُوْنَ النَّاسَ وَلَا يَذْكُرُوْنَ اللّٰهَ اِلَّا قَلِيْلًا" يعني جڏهن نماز لاءِ اٿن ٿا تہ سست ٿي اٿن ٿا (اهو بہ) ماڻهن کي ڏيکارين ٿا ۽ الله جو ذڪر تمام ٿورو ٿا ڪن مقصد تہ منافقن جي جان عجيب عذاب ۾ مبتلا هئي حقيقت هيئن آهي تہ جڏهن انسان جي دل ايمان ڪان ئي خالي هوندي تہ نماز ڪيئن پڙهندو؟ پر انهن کي مجبوري هئي جو اسلام جو هي ظاهري لباس جيڪو انهن پاڻ تي ڍڪيو هو جيڪڏهن نماز نہ پيا پڙهن ۽ مسلمانن سان جماعت ۾ شامل نہ پيا ٿين تہ هو ختم پيو ٿي ۽ سندن منافقي کليو پٽي پوي، ان جي ڪري پڳيءَ دل سان جماعت

۾ شريڪ ٿي ٿيندا هئا، جيڪا لِلّهيت، جذب، ڪيف، ذوق ۽ شوق نماز ۾ هجڻ کپي اهو ته انهن کي نصيب نه هو پر ان روحاني لذت جي هوا به ڪين نه لڳي هئي، بس نماز پڙهائڻ واري امام سلام ڦيرايو ۽ هي جوتيون هٿن ۾ ڪٽي پڳا.

## نبوي حديثن مان ثبوت ته نماز ۾ سستي ڪرڻ منافقن جو ڪم آهي

### حديث ١

بخاري ۽ مسلم حضرت ابو هريرة رضي الله عنه کان روايت آندي آهي ته رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو ”إِنَّ أَثْقَلَ الصَّلٰوةِ عَلَى الْمُنَافِقِيْنَ صَلٰوةُ الْعِشَآءِ وَصَلٰوةُ الْفَجْرِ وَلَوْ يَعْلَمُوْنَ مَا فِيْهِمَا لَأَتَوْهُمَا وَلَوْ حَبْوًا وَلَقَدْ هَمَمْتُ أَنْ آمُرَ بِالصَّلٰوةِ فَتُقَامَ ثُمَّ آمُرَ رَجُلًا فَيُصَلِّيَ بِالنَّاسِ ثُمَّ أَنْطَلِقَ مَعِيَ بِرِجَالٍ مَعَهُمْ حُزَمٌ مِنْ حَطَبٍ إِلٰى قَوْمٍ لَّا يَشْهَدُوْنَ الصَّلٰوةَ فَأُحَرِّقَ عَلَيْهِمْ بُيُوْتَهُمْ بِالنَّارِ- يعني منافقن تي ڳري ۾ ڳريون نمازون سومهاڻي ۽ فجر آهن ۽ جيڪڏهن ڪين انهن ۾ ثواب جو علم هجي ها ته انهن ٻنهي نمازن لاءِ ريڙهيون پائي به اچن ها ۽ تحقيق مون پڪو ارادو ڪيو هو ته مان نماز جي لاءِ امر ڪيان پوءِ تڪبير چئي وڃي ۽ ان کان پوءِ ڪنهن کي امر ڪيان ته جماعت کي نماز پڙهائي ۽ مان پاڻ سان گڏ اهڙا مڙس وٺان جن سان ڪاٺين جون ڀريون هجن ۽ انهن ماڻهن ڏانهن وڃان جيڪي نماز تي حاضر نه ٿا ٿين پوءِ انهن جا گهر (انهن ڪاٺين سان) باهه ڏئي ساڙي ڇڏيان.

### حديث ٢

محدث ابو يعلىٰ حضرت عبدالله بن مسعود رضي الله عنه کان روايت آندي آهي ته رسول الله ﷺ جن فرمايو ”مَنْ أَحْسَنَ الصَّلٰوةَ حَيْثُ يَرَاهُ النَّاسُ وَأَسَآءَهَا حَيْثُ يَخْلُوْا فَتِلْكَ إِسْتِهَانَةٌ إِسْتَهَانَ بِهَا رَبَّهٗ عَزَّ وَجَلَّ“ يعني جنهن اهڙيءَ جاءِ تي نماز ناهي سهڻي ڪري پڙهي جتي ڪيس ماڻهو ڏسن ٿا ۽ اڪيلائي ۾ نماز ناهي سهڻي ڪري نه پڙهيائين ته پوءِ اهو (سندس ڪم) توهين آهي جنهن سان پنهنجي رب عز وجل جي (شان ۾) توهين ڪري رهيو آهي.

### حديث ٣

موطا ۾ امام مالڪ عليه الرحمة حضرت انس بن مالڪ رضي الله

عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول اللہ ﷺ جن فرمايو، " تِلْكَ صَلواةُ الْمُنَافِقِ، تِلْكَ صَلواةُ الْمُنَافِقِ، تِلْكَ صَلواةُ الْمُنَافِقِ يَجْلِسُ يَرْقُبُ الشَّمْسَ حَتّٰى اِذَا كَانَتْ بَيْنَ قَرْنَي الشَّيْطَانِ فَنَقَرَ اَرْبَعًا لَا يَذْكُرُ اللهَ فِيهَا اِلَّا قَلِيْلًا" (١) يعني اها منافق جي نماز آهي،اها منافق جي نماز آهي، اها منافق جي نماز آهي جيکو ويٺو هوندو ويٺو سج جو انتظار کندو تانجو جڏهن (سج لهڻ جي وقت هيٺبو ٿي) شيطان جي ٻن سڱن جي وچ ۾ ايندو تہ پوءِ اٿي چار ٺونگا (ککڙ وانگر) هڻندو ۽ اللہ تعالیٰ جو ذکر تمام ٿورو کندو.

## فائدو

جيئن ٿورو ذکر کرڻ منافقن جو کم آهي تيئن اٿندي، وهندي،گهمندي، ڦرندي، کائيندي،پيئندي اللہ تعالیٰ جو گهڻو ذکر کرڻ انهن پکن مومنن ۽ مسلمانن جو کم آهي، جن کي اللہ تعالیٰ اخلاص، کامل يقين ۽ مستحکم عقيدي جي دولت سان مالا مال کري دنيا ۽ آخرت کي انهن لاءِ ۽ انهن جي صدقي ٻين لاءِ سنواريو ۽ سينگاريو آهي "مُذَبْذَبِيْنَ بَيْنَ ذَالِكَ" حيران ۽پريشان آهن (کفر ۽ ايمان جي) وچ ۾، جو نہ ايمان تي قائم آهن نہ کفر سان وفادار " لَآ اِلٰى هٰٓؤُلَآءِ وَلَآ اِلٰى هٰٓؤُلَآءِ" يعني نہ مومنن جي جماعت ۾ داخل آهن نہ کافرن جي ٽولي ۾-کٿي جا بہ نہ رهيا آهن "وَمَنْ يُّضْلِلِ اللهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ سَبِيْلًا" "لن تجد "هرگز نہ لهندين جو خطاب يا تہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ عليه وسلم جن سان آهي يا هر هڪ مومن قرآن پڙهندڙ سان "سَبِيْلًا"مان مراد آهي حق ۽ ثواب کي پهچائڻ وارو رستو (٢) يعني اي محبوب! (عليه الصلواة والسلام) يا اي قرآن پڙهڻ وارا مومن! جنهن شخص جي دل ۾ سندس ئي غلطين جي کري گمراهي ويهي وئي آهي، سندس ئي کيل کمن جي کري اللہ تعالیٰ ان کي گمراهہ کيو آهي ان لاءِ اوهان هدايت وارو رستو اصل هٿ کري نہ سگهندو.

## فائدو

هن مان ثابت ٿيو تہ عقيدن ۾ شڪ، تردد ۽ حيراني منافقن جوکم آهي، ڇو تہ انهن کي شڪ هوندو آهي تہ الاءِ کهڙو عقيدو سچو، صحيح ۽ حق آهي سچي پکي سني مسلمان کي پنهنجي عقيدي جي حقانيت تي پورو پورو يقين هوندو آهي شڪ ۽ شبهي رکڻ وارو نہ پاڻ کي پکو مسلمان سمجهي ۽ نہ آهي پکو سني

(١) تفسير القاسمي ص٥٢١- ٥٢٢ جلد٣ (٢) تفسير نعيمي ص٥٤٢ جلد٥

مسلمان ڏک ۾ خوشيءَ، غم ۾ راحت ۾ پنهنجي ايمان کي محفوظ ۽ مضبوط رکندو، "يَآاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ" اولياءَ، ولي جو جمع دوست، همراز ۽ مددگار جي معنيٰ ۾ استعمال ٿيندو آهي مطلب هي آهي تہ - اي مومنوا! مومنن کان سواءِ ڪافرن کي پنهنجو دوست نہ بنايو "اَتُرِيْدُوْنَ اَنْ تَجْعَلُوْا لِلّٰهِ عَلَيْكُمْ سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا" يعني ڪافرن سان قريبي مراسم ۽ پڪا تعلقات رکڻ کليل منافقت جو دليل آهي جيڪڏهن اهي قائم ڪيوَ ۽ ان کان پوءِ اوهان تي الله تعالىٰ جي طرفان پڪڙ، عذابۓ ڪا مصيبت آئي تہ پوءِ اوهان کي عرض ڪرڻ ۽ ان جي مقبول ٿيڻ جو موقعو نہ ملندو، " ڇا اِوهان اهو ارادو ٿا ڪيو تہ پنهنجي مٿان الله تعالىٰ جي حجت ۽ دليل قائم ڪيو؟" "اِنَّ الْمُنٰفِقِيْنَ فِي الدَّرْكِ الْاَسْفَلِ مِنَ النَّارِ وَلَنْ تَجِدَ لَهُمْ نَصِيْرًا" يعني هيءَ ڳالھ پڪي آهي تہ منافق باھ جي هيٺئين کان هيٺئين طبقي ۾ هوندا ۽ اوهان انهن لاءِ ڪو بہ مددگار نہ لهندؤ، هي منافقن جي اخروي سزا جو ذڪر آهي تانت اهو ٻڌي پڪا مسلمان انهن کان بچن، درک ر جي جزم ۽ زبر ٻنهي سان استعمال ٿيل آهي درک ۽ درجة . ٻنهي جي معنيٰ ڏاڪا آهي فرق هيءُ آهي تہ مٿان کان هيٺئين طرف ڏانهن ترتيب جي لحاظ سان درک سڏيو ويندو آهي ۽ هيٺان کان مٿئين طرف ڏانهن ترتيب جي لحاظ سان درجة سڏيو ويندو آهي. (١)

خيال ۾ رکڻ گهرجي تہ دوزخ جا ست طبقا آهن ١- جهنم ٢- لظيٰ ٣- حطمة ٤- سعير ٥- سقر ٦- جحيم ٧- هاوية- هي سيني کان هيٺ آهي ۽ اهائي منافقن جي جاءِ آهي ۽ مٿئين طبقي جهنم جي نالي مان سيئي مراد ورتا ويندا آهن، حضرت ابن مسعود رضي الله عنه کان روايت آهي تہ هيٺئين طبقي ۾ لوھ جون وڏيون صندوقون آهن جن ۾ منافقن کي وجهي تالا لڳايا ويندا (٢) اهي لوهي پيتيون باھ ۾ ڪيئن ٿينديون؟ الله تعالىٰ پناھ ۾ رکي، جڏهن تہ منافق دراصل ڪافر بہ هيا تہ ڏوکيباز بہ، اسلام سان مذاق ڪرڻ وارا بہ ،تہ ڪافرن جي ڇمچا گيري ڪرڻ وارا بہ ، تڏهن ان سخت عذاب ۾ وڌا ويندا" اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا وَاَصْلَحُوْا وَاعْتَصَمُوْا بِاللّٰهِ وَاَخْلَصُوْا دِيْنَهُمْ لِلّٰهِ فَاُولٰٓئِكَ مَعَ الْمُؤْمِنِيْنَ وَسَوْفَ يُؤْتِ اللّٰهُ الْمُؤْمِنِيْنَ اَجْرًا عَظِيْمًا" هي اڳئين جملي کان استثنا آهي، يعني منافقن جا ڏوھ آهن تہ تمام وڏا ۽ سخت پر ان هوندي بہ جن ان غلط رستي کان سچي توبہ ڪئي ۽ پاڻ کي سڌاريو، صالح بنايو ۽ متقي ۽

(١) تفسير مظهري ص٣٤٩ جلد٢ (٢) القرطبي ص٤٢٥ جلد٥

پرهيزگار ٿيا ۽ الله تعالىٰ جي وحي (قرآن ڪريم) کي چنبڙي پيا ۽ پنهنجو دين الله تعالىٰ جي لاءِ خالص رکيائون ان ۾ ڪا نگي يا فريب نه سوچيائون ته پوءِ اهي ايمان وارن سان گڏ آهن ۽ ڪين انهن پڪن مومنن مان شمار ڪيو ويندو ۽ سگهوئي الله تعالىٰ مومنن کي وڏو اجر ڏيندو. هن جملي جي "ف" ۽ "سوف" جي لفظن مان ثابت ٿيو ته اهو اجر جلد ملڻ شروع ٿيندو ڪجهه دنيا ۾ ڪجهه مرڻ وقت، ڪجهه قبر ۽ برزخ ۾ ،ڪجهه قيامت ۾ ته ڪجهه جنت ۾ داخل ٿيڻ ڪان پوءِ (١)

" مَا يَفۡعَلُ اللّٰهُ بِعَذَابِكُمۡ اِنۡ شَكَرۡتُمۡ وَاٰمَنۡتُمۡ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ شَاكِرًا عَلِيۡمًا "

يعني جيڪڏهن اوهان شڪر گذار ۽ مومن ٿانها ٿي رهندؤ ته الله تعالىٰ اوهان کي عذاب ڏئي ڇا ڪندو؟ الله تعالىٰ قدردان ۽ سڀ ڪجهه ڄاڻندڙ آهي جيڪو ٻانهو سهڻي نيت سان سهڻا عمل ڪندو آهي ته الله تعالىٰ پنهنجي ڪرم سان قبول ڪندو،ٿوري عبادت تي گهڻو ثواب ڏيندو ۽ ٻانهن جي محدود ۽ ٿورن عملن تي دائمي نعمتون بخشيندو آهي اهو ٻي خبر ناهي جو ٻانهن جي عملن ۽ انهن ۾ اخلاص جي خبر نه هجيس هر شيءِ هر وقت ان جي علم ۾ آهي.

## تنبيه

ڪن گمراهن ماڻهن جو عقيدو هوندو آهي ته الله تعالىٰ کي اڳ ۾ خبر نه پوندي آهي جڏهن ڪو ڪم ٿيندو آهي پوءِ خبر پوندي اٿس سو اهو عقيدو صريح ڪفر آهي هتي "كَانَ اللّٰهُ" ۾ "ڪان" جي اچڻ سان ماضي استمراريءَ جو صيغو ٿي ويو جنهن جي معنىٰ آهي (٢) ته الله تعالىٰ هميشه قدردان ۽ ڄاڻندڙ آهي ٻانهي جي ڪم ڪرڻ ڪان اڳ ۾ به ان کي علم آهي.

لَا يُحِبُّ اللّٰهُ الۡجَهۡرَ بِالسُّوۡٓءِ مِنَ الۡقَوۡلِ اِلَّا مَنۡ ظُلِمَ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ

نه ٿو پسند ڪري الله وڏي آواز سان بڇڙي ڳالهائڻ کي مگر جنهن تي ظلم ڪيو ويو ۽ آهي الله

سَمِيۡعًا عَلِيۡمًا ﴿۱۴۸﴾ اِنۡ تُبۡدُوۡا خَيۡرًا اَوۡ تُخۡفُوۡهُ اَوۡ تَعۡفُوۡا عَنۡ سُوۡٓءٍ

ٻڌندڙ ڄاڻندڙ، جيڪڏهن ظاهر ڪندؤ ڪا نيڪي يا لڪائيندؤ ان کي يا معاف ڪندؤ برائي

(١) نعيمي ص٥٥٠ جلد٥ (٢) نعيمي ص٥٥٨ جلد٥

فَإِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا قَدِيرًا ﴿١٤٩﴾

پوءِ بيشڪ الله آهي معاف ڪندڙ، قادر.

## تفسير

هن ڪان اڳ ۾ الله تعاليٰ منافقن جي منافقت ڪولي ڪولي بيان ڪئي ۽ انهن جيڪو پنهنجي مٿان ڪلمي شريف جو پردو لڳايو هو اهو ڦاڙي سندن اندر واري ڪفر ڪي پڌرو ڪيو . هاڻي ان جو وجه بيان ڪندي پڌايو ٿو وجي تہ "لَا يُحِبُّ اللّٰهُ الْجَهْرَ بِالسُّوْءِ مِنَ الْقَوْلِ اِلَّا مَنْ ظُلِمَ" يعني الله تعاليٰ بري ڳالهہ وڏي آواز سان بيان ڪرڻ ڪي پسند نہ ٿو ڪري مگر ان ڪان جنهن سان ظلم ڪيو ويو آهي، اهو جيڪڏهن پنهنجي مظلوميت ۽ ظالم جي ظلم ۽ براين ڪي وڏي آواز سان بيان ڪري تہ جائز آهي، منافق جڏهن تہ ظالم هيا ۽ مسلمان مظلوم تڏهن الله تعاليٰ انهن ظالمن جي براين بيان ڪرڻ جي مومنن ڪي موڪل ڏئي ڇڏي.

## دنيا تان ظلم ۽ ستم هٽائڻ جو هڪ قانون

سمجهڻ گهرجي تہ هنن آيتن ۾ الله تعاليٰ دنيا تان ظلم ختم ڪرڻ جو هڪ قانون بيان فرمايو آهي، پر اهو دنيا جي عام قانونن وانگر ناهي جنهنجي حيثيت صرف آمرانہ هجي بلڪ رغبت ڏيارڻ ۽ ڊيڄارڻ وارن پنهي پاسن ڪي نظر ۾ رکيو ويو آهي. هن ۾ هڪ طرف اجازت ڏني وئي آهي تہ جنهن سان ظلم ڪيو وڃي اهو ان ظلم جي ماڻهن سان شڪايت يا عدالت ۾ حق طلبيءَ لاءِ ڪوشش ڪري تہ جائز آهي، انصاف جي تقاضا ۽ براين ڪي روڪڻ لاءِ اهو هڪ اهم ذريعو آهي ۽ ظاهر آهي تہ مظلوم عدالت ۾ بہ ظالم جا ظلم، ڏوهہ،عيب ۽ گناهہ بيان ڪندو. پر ان موڪل سان گڏ سورة نحل ۾ هڪ قيد لڳايو ويو آهي تہ "وَاِنْ عَاقَبْتُمْ فَعَاقِبُوْا بِمِثْلِ مَا عُوْقِبْتُمْ بِهٖ وَلَئِنْ صَبَرْتُمْ لَهُوَ خَيْرٌ لِّلصّٰبِرِيْنَ" (١) يعني جيڪڏهن ظلم ڪندڙ ڪي سزا ڏيو يا عذاب ڪيو تہ بہ اوتري ڏيو جيترو اوهان ڪي ڏنو ويو آهي، ۽ البت جيڪڏهن صبر

(١) سوره نحل آيت ١٢٦

ڪندو ته اهو صبر ڪندڙ لاءِ ڀلو آهي،مقصد ته سزا ايتري نه ڏيو جو رهندو اوهان ظالم بنجي وڃو. ظلم جي بدلي ۾ ظلم نه ڪيو پر انصاف سان حساب ڀلي وٺو، ڀلا جيڪڏهن صبر ڪندو ته اهو ته سڀ ڳالهه کان وڌيڪ آهي"وَكَانَ اللّٰهُ سَمِيْعًا عَلِيْمًا" ۽ الله تعالىٰ ٻڌندڙ، ڄاڻندڙ آهي، هتي الله تعالىٰ جي انهن ٻنهي ٻڌڻ ۽ ڄاڻڻ وارين صفتن کي بيان ڪري ظالم ۽ مظلوم ٻنهي کي احساس ڏياريو ويو آهي ته ظالم ائين نه سمجهي ته ان جي ظلمن جو ڪنهن کي علم ئي ناهي يا دنيا جي ڪا به طاقت ڪيس ڪجهه ڪري نه سگهندي، پر ان کي يقين رکڻ گهرجي ته الله تعالىٰ سندس ڪردار کي ڄاڻي ٿو، جيڪڏهن دنيا جي ڪا عدالت ان کي سزا نه ڏيندي ته الله تعالىٰ جي عدالت مان ان کي سخت سزا ضرور ملندي ۽ مظلوم کي تسلي ڏني وئي آهي ته گهبراءِ نه، جيڪڏهن ٻيو ڪو تنهنجي مدد ۽ انصاف نه ٿو ڪري ته الله تعالىٰ تنهنجي دانهن ٻڌندڙ آهي تنهنجي مظلوميت ۽ مجبوريءَ جو ان کي پورو پورو علم آهي،"اِنْ تُبْدُوْا خَيْرًا اَوْ تُخْفُوْهُ اَوْ تَعْفُوْا عَنْ سُوْءٍ فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا قَدِيْرًا" يعني جيڪڏهن ڀلو ڪم ظاهر ڪري يا لڪائي ڪندؤ يا (ڪنهن کي ان جي) برائي معاف ڪندؤ ته پوءِ يقينا الله به معاف ڪندڙ، قادر آهي، هن آيت ۾ اصل مقصد ته ظلم جو معاف ڪرڻ آهي،پر ان سان گڏ ظاهر ۽ لڪل نيڪيءَ جو به ذڪر آڻي ان طرف اشارو ڪيو ويو آهي ته اهو معاف ڪرڻ ۽ درگذر فرمائڻ به هڪ وڏي نيڪي آهي جيڪو ان کي اختيار ڪندو ته اهو الله تعالىٰ جي عفو ۽ رحمت جو حقدار ٿيندو، ظالم کان حساب وٺڻ رخصت (ان جي موڪل آهي) ۽ عوام لاءِ آهي جن ۾ ايتري اخلاقي بلندي ناهي جو جذبات جي مشتعل ٿيڻ وقت ضبط ۽ تحمل کان ڪم وٺن ۽ ظالم کي معاف ڪرڻ عزيمت آهي جنهن تي الله تعالىٰ جا خواص ۽ اخص الخواص ڀانها عمل ڪندا آهن. مومن جيڪڏهن نيڪ عمل ڪندو ته ان کي ڏهه (١٠) درجا ملندا ۽ جيڪڏهن دل ۾ نيڪيءَ جو صرف ارادو ڪندو ته به هڪ درجو ملندس (١).

بدمذهب،بدمعاش، فاسق ۽ فاجر جون برايون کولي کولي بيان ڪجن ته ماڻهن جو بچاءُ ٿئي جيڪڏهن ڪو ماڻهو فاسق، فاجر، ظالم، بدمعاش يا برن عقيدن وارو آهي ته ان جي بڇڙن عقيدن ۽ براين کان ٻين کي بچائڻ لاءِ ان جون براين ۽ بدعقيدا دنيا جي اڳيان ظاهر ڪجن تانته ماڻهو ان جي شر کان محفوظ رهن، حضور

(١) تنويرالايمان ص٢ پ٦

عليه الصلواة والسلام جن فرمايو آهي تہ "اُذْكُرُوْ الْفَاجِرَ بِمَا فِيْهِ يَحْذَرُهُ النَّاسُ" (١) يعني فاجر (بدڪردار) ماڻهوءَ ۾ جيڪي برايون آهن اهي کولي کولي بيان ڪيو تانت ماڻهو ان کان ڊڄي بچاءُ وٺن، آخر ۾ "فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا قَدِيْرًا" آڻي سمجهايو ويو آهي تہ الله جل شانہ جيڪو مطلق قادر آهي جنهن کي بہ، جهڙي بہ، سزا ڏيڻ گهري تہ ڏئي سگهي ٿو، تڏهن بہ ٻانهن جا گهڻا ڏوهہ معاف ڪندو آهي تہ انسان جنهن کي مطلق قدرت ناهي جيڪڏهن ڪنهن کي معاف ڪري تہ ڀلو آهي. حضرت عبدالله بن مبارڪ حضرت امام حسن بصريءَ رضي الله تعالىٰ عنہ کان روايت آندي آهي تہ جڏهن قيامت ۾ ماڻهون الله تعالىٰ جي بارگاهہ ۾ ڪري پوندا تہ سڏڻ وارو سڏي اعلان ڪندو تہ جنهن جو بہ ثواب الله تعالىٰ جي ذمي آهي اهو اٿي (بهشت ڏانهن هلي) پوءِ دنيا ۾ ماڻهن کي معاف ڪرڻ واري کان سواءِ ڪير بہ نہ اٿندو ۽ ان روايت جي تصديق قرآن پاڪ جي هن آيت مان ٿي رهي آهي "فَمَنْ عَفَا وَاَصْلَحَ فَاَجْرُهٗ عَلَى اللّٰهِ" (٢) يعني جنهن معاف ڪيو ۽ اصلاح ڪيو ان جو اجر الله تعالىٰ جي ذمي آهي.

اِنَّ الَّذِيْنَ يَكْفُرُوْنَ بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَيُرِيْدُوْنَ اَنْ يُّفَرِّقُوْا بَيْنَ اللّٰهِ

بيشڪ اهي (ماڻهو) جو انڪار ٿا ڪن الله جو ۽ ان جي رسولن جو ۽ ارادو ٿا ڪن تہ جدائي وجهن الله

وَرُسُلِهٖ وَيَقُوْلُوْنَ نُؤْمِنُ بِبَعْضٍ وَّنَكْفُرُ بِبَعْضٍ ۙ وَّيُرِيْدُوْنَ اَنْ

۽ ان جي رسولن ۾ ۽ چون ٿا تہ ايمان آڻيون ٿا ڪن تي ۽ انڪار ڪيون ٿا ڪن جو ۽ ارادو ڪن ٿا

يَّتَّخِذُوْا بَيْنَ ذٰلِكَ سَبِيْلًا ﴿١٥٠﴾ اُولٰٓئِكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ حَقًّا ۚ

تہ وٺن ان جي وچ ۾ ڪو رستو اهيئي ڪافر آهن پڪا

وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا ﴿١٥١﴾ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ

۽ تيار ڪيوسون ڪافرن جي لاءِ عذاب خوار ڪندڙ ۽ جن ايمان آندو الله تعالىٰ تي

(١) تنوير الاذهان ص٣٩٠ ج١ (٢) القرطبي ص٤ جلد٦

وَرُسُلِهٖ وَلَمْ يُفَرِّقُوْا بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْهُمْ اُولٰٓئِكَ سَوْفَ يُؤْتِيْهِمْ

۽ ان جي رسولن تي ۽ نہ فرق ڪيائون ڪنهن هڪ ۾ انهن مان اهي جلد ڏيندو انهن کي

اُجُوْرَهُمْ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ﴿١٥٢﴾ ع ٢١ ١١ ١

ثواب سندن ۽ آهي الله بخشيندڙ، مهربان.

# تفسير

منافقن ۽ مشرڪن جي عادتن کي بيان ڪرڻ کان پوءِ هاڻي ڪافرن جو حال ٻڌايو ٿو وجي ۽ ڪافرن جا بہ ڪيترا قسم آهن ڪي الله تعالىٰ کي مڃين ٿا پر نبوت ۽ رسالت جا قائل ناهن، ڪي بعضي نبين عليهم الصلواة والسلام جي نبوت کي مڃين ٿا تہ بعض کي نہ، جيئن يهودي حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام کي مڃين ٿا ۽ حضرت عيسىٰ ۽ حضور پر نور صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن کي نہ، عيسائي بہ ڪن کي مڃين ٿا تہ ڪن کي نہ- هتي انهن سڀني لاءِ فيصلو ڏنو ويو آهي "اِنَّ الَّذِيْنَ يَكْفُرُوْنَ" کان "عَذَابًا مُّهِيْنًا" تائين، يعني جيڪي شخص الله تعالىٰ ۽ ان جي رسولن عليهم الصلواة والسلام سان ڪفر ٿا ڪن، الله تعالىٰ جي وحدانيت ۽ ان جي رسولن جي رسالت جو انڪار ٿا ڪن ۽ الله ۽ ان جي رسولن ۾ فرق ڪرڻ جو ارادو ٿا رکن جو الله کي مڃين ۽ رسولن عليهم الصلواة والسلام کي نہ ٿا مڃين يا چون ٿا تہ هڪڙن تي ايمان آڻيون ٿا ۽ هڪڙن جو انڪار ڪيون ٿا، جيئن يهودين ۽ نصارن ڪيو آهي ۽ ايمان ۽ ڪفر جي وچ تي واٽ ٺاهڻ جو ارادو ڪن ٿا جو الله کي مڃين ۽ رسولن عليهم الصلواة والسلام کي نہ ٿا مڃين اهي پڪا ڪافر آهن ۽ اسان ڪافرن جي لاءِ خوارڪندڙ عذاب تيار ڪيو آهي.

## سوال

جيڪو شخص الله تعاليٰ تي ايمان آڻي ٿو ۽ نبين عليهم الصلواة والسلام کي نہ ٿو مڃي اهو ڇا جي ڪري ڪافر آهي؟

## جواب

ان جي ڪري جو وحي ۽ نبوت جي سلسلي کي نہ مڃڻ واري کي نہ الله تعاليٰ جي ڪمال وارين صفتن جو علم هوندو ۽ نہ ان کي الله تعاليٰ وٽ عبادت جو مقبول طريقو معلوم هوندو، جنهن سان الله تعاليٰ جو قرب نصيب ٿئي، جڏهن ان نہ الله تعاليٰ جي تقدس ۽ ڪمال وارين صفتن کي سڃاتو ۽ نہ ان جي بارگاهہ ۾ مقبول عبادت کي معلوم ڪيو تہ اهو الله تعاليٰ کي ڪيئن سڃاڻيندو؟ اوهان انهن قومن جي عبادتن جون رسمون ۽ رواج جيڪي ڪنهن نبي سڳوري جي مڃڻ ۽ پيروي ڪرڻ کان سواءِ الله تعاليٰ تي ايمان آڻڻ ۽ ان کي مڃڻ جي دعويٰ ڪندا آهن ڏسندؤ تہ حيران ٿيندو، اهڙيءَ طرح قديم ۽ جديد فلاسفرن الله تعاليٰ جي جن صفتن کي ثابت ڪيو آهي انهن جو سمجهڻ بہ سخت ڏکيو ۽ مشڪل آهي ۽ ان ئي نموني سان اهي ماڻهو آهن جيڪي بعضي نبين عليهم الصلواة والسلام کي مڃين ٿا ۽ بعض کي نہ ٿا مڃين، حالانڪ جن دليلن، حجتن ۽ معجزن جي ڪري بعض کي مڃيو اٿن انهن کان وڌيڪ روشن دليل، حجتون ۽ معجزا انهن ٻين وٽ بہ آهن جن کي نہ ٿا مڃين، انهن جو بعضي نبين عليهم الصلواة والسلام تي ايمان نہ آڻڻ ڄڻ سڀني جو انڪار ڪرڻ آهي، خصوصًا حضور عليه الصلواة والسلام جن جي ذات جي نبوت جو انڪار ڪرڻ (جن جي اچڻ جي بشارت ۽ مٿن ايمان آڻڻ جو تاڪيد هر زماني ۾ اچڻ واري هر نبي ڪيو هو) نہ صرف سندن انڪار آهي پر اڳين سڀني نبين عليهم الصلواة والسلام جو بہ انڪار آهي.

## فائدو

"يُرِيْدُوْنَ اَنْ يُّفَرِّقُوْا بَيْنَ اللّٰهِ وَرُسُلِهٖ" جو مطلب آهي تہ الله تعاليٰ جي وجود جي اقرار ڪرڻ کان پوءِ اهي پنهنجي عقل، دانشمنديءَ تي اڪتفا ڪندي نبين عليهم الصلواة والسلام جي تعليم کي ناقابل عمل ٿا سمجهن انهن ۾ اهي بہ داخل آهن جيڪي قرآن پاڪ تي عامل هجڻ جي دعويٰ ڪندي نبي مڪرم، محبوب معظم صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن جي لکين حديثن جا منڪر آهن.

## صرف الله تعالىٰ جي توحيد جو قائل تہ شيطان بہ هو

"مفتي محمد شفيع ديوبندي صاحب لکيو آهي تہ: قرآن جي اصطلاح ۾ الله تعالىٰ تي ايمان اهو معتبر آهي جيکو رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن تي ايمان آڻڻ سان گڏ آهي جيکڏهن نہ تہ "محض خدا کے اقرار اور توحيد کا تو شيطان بهی قائل هے" (١)

## اعتراض

جڏهن يهودي ۽ عيسائي پڪا ڪافر آهن تہ انهن جي عورتن سان مسلمانن مردن جو نڪاح ڇاجي ڪري جائز ۽ انهن جي ڪٺي ڇو حلال آهي؟

## جواب

انهن حڪمن ۾ عيسائين ۽ يهودين جي مڃيلن نبين حضرت عيسىٰ ۽ حضرت موسىٰ عليهما الصلواة والسلام جن جي عظمت ۽ محبوبيت جو اظهار آهي تہ جيڪو پاڻ ڪي انهن جو امتي سڏرائي ۽ پنهنجي نسبت انهن ڏانهن ڪري ڪٺي باقاعدي صحيح نہ بہ هجي تڏهن بہ ان جو ڪجهہ فائدو انهن کي پهچندو، جو هنن جي لاءِ شرعي احڪام ٻين ڪافرن کان ڪجهہ هلڪا هوندا.

سوچڻ گهرجي تہ عيسائي يا يهودي عورتن سان نڪاح ڪرڻ جائز آهي سنت ناهي، حضور عليه الصلواة والسلام جن ۽ خلفاءِ راشدين رضي الله عنهم مان ڪنهن بہ اهل ڪتاب عورت سان نڪاح نہ ڪيو هو.

## اهل ڪتاب مان ڪنهن عورت سان مسلمان مرد کي نڪاح ڪرڻ جي اجازت ٻن شرطن سان آهي

ياد رکڻ گهرجي تہ قرآن پاڪ جيڪا اهلِ ڪتاب مان عورتن سان مسلمانن مردن کي نڪاح ڪرڻ جي اجازت ڏني آهي ان ۾ ٻہ شرط آهن ١- هڪ تہ اهي مذهبي لحاظ سان يهودي يا عيسائي هجن پر جيڪڏهن اقوام عالم ۾ يهودي يا عيسائي ليکيا ٿا وڃن ۽ عقيدتًا دهريا آهن جيئن اڄ ڪالهہ جا گهڻا انگريز وغيره تہ پوءِ انهن مان عورتن سان نڪاح ڪرڻ حرام آهي، ٢- ٻيو تہ نڪاح ڪرڻ واري مسلمان ۾ ان عورت کي اسلام ڏانهن ڇڪڻ جي قوت هجي ائين نہ ٿئي جو ان مان

(١) معارف القرآن ص٥٩٥ جلد٢

پيدائيڻ وارو سندس اولاد ڦري وڃي ماءُ جو مذهب وٺي تنهنجي ڪري هن هلندڙ دور جي مسلمانن کي جيڪي هونئن ئي عيسائيت ڏانهن مائل آهن اهل ڪتاب مان ڪنهن عورت سان نڪاح ڪرڻ حرام آهي (١)

## اعتراض

يُرِيدُونَ أَن يُفَرِّقُوا بَيْنَ اللَّهِ وَرُسُلِهِ مان ثابت ٿيو ته الله تعالىٰ ۽ ان جي رسولن عليهم الصلواة والسلام ۾ فرق ڪرڻ ڪفر آهي ته پوءِ ڇا رسولن عليهم الصلواة والسلام کي الله ڪري مڃيون؟ حالانڪ اهو به توحيد جي خلاف شرڪ ۽ ڪفر آهي.

## جواب

جدائي گهڻا قسم آهي، جسماني طرح جدا ڪرڻ، مڪان ۽ زماني ۾ جدا ڪرڻ، مرتبي ۾ جدا ڪرڻ، ايمان ۾ جدا ڪرڻ، عداوت ۾ جدا ڪرڻ وغيره مگر هتي مراد آهي اطاعت، ادب،احترام ۽ محبت ۾ جدا ڪرڻ، يعني الله تعالىٰ کي مڃي، ان جي اطاعت، ادب ۽ احترام ڪن ٿا پر رسولن عليهم الصلواة والسلام کي نه مڃين ٿا نه انهن جي اطاعت ڪن ٿا نه انهن جي ادب، احترام ۽ محبت جو لحاظ رکن ٿا، رهيو اهو چوڻ ته اهو توحيد جي خلاف آهي، سو به غلط آهي،مٿي لکيل مفتي محمد شفيع ديوبندي صاحب جي عبارت وري پڙهو ته "محض خدا کے اقرار اور توحيد کا تو شيطان بھي قائل هے (٢)

حضرت آدم عليه الصلواة والسلام کان وٺي حضور عربي عليه الصلواة والسلام جن تائين سڀني نبين عليهم الصلواة والسلام پنهنجين امتن کي ايمان جي دعوت ڏني هئي ان ۾ توحيد جو لفظ به ذڪر ڪيل ناهي، حضور پر نور عليه الصلواة والتسليمات جن فارس ۽ روم جي بادشاهن کي جيڪي خط لکيا هئا انهن ۾ به "اسلم تسلم" (اسلام قبول ڪر ته سلامت رهندين) جا الفاظ هيا وحد تسلم جو لفظ نه هو.

ايمان ئي الله تعالىٰ وٽ قبول پيل آهي، ڇو ته ان جي حقيقت آهي رب العزة جل شانه جي ذات ۽ صفات کي نبي عليه السلام جي ڏسيل طريقي سان مڃڻ،قرآن ڪريم ۾ الله تعالىٰ پنهنجن سچن ٻانهن کي مومن سڏيو آهي (يَاأَيُّهَا الَّذِينَ

(١) نعيمي ص١٦ جلد٦ (٢) معارف القرآن ص٥٩٥ جلد٢

آمَنُوا) ۽ ان ئي سندن نالو مسلمان رکيو آهي( هُوَ سَمَّٰكُمُ الْمُسْلِمِينَ ) (١).

پوري قرآن ڪريم ۾ توحيد جو لفظ مصدر جي حيثيت سان يا ان مان نڪتل اسم فاعل، اسم مفعول، فعل مضارع، امر يا نهي جو هڪ صيغو آيل نه آهي، ان جي برعڪس ايمان مصدر جو صيغو ۽ ان مان نڪتل مضارع "يؤمنون" اسم فاعل "هم المؤمنون" ۽ امر "آمنوا" ماضي "آمنوا" وغيره سڀ صيغا قرآن پاڪ ۾ آيل آهن، بلڪ صوفياءِ ڪرام فرمايو آهي ته الوهيت، نبوت ۽ قيامت وغيره ڪي مڃڻ ايمان آهي ۽ الله تعالىٰ ۽ رسول عليه السلام کي جدا نه سمجهڻ، اطاعت، محبت، ادب ۽ احترام جي لحاظ سان ملائڻ ايمان جو روح آهي، جيئن ڊاڪٽر اقبال صاحب چيو آهي.

مغز قرآن، جان ايمان، روح دين
هست حب رحمة للعالمين

مگر ياد رکڻ گهرجي ته الله تعالىٰ سان ملائڻ جو مطلب اهو هرگز ناهي ته نبي عليه الصلواة والسلام الله آهي يا الله نبي آهي (معاذالله ثم معاذالله) اهو ته نجو شرڪ آهي.

## اعتراض

اوهان لکيو آهي ته الله تعالىٰ ۽ ان جي رسولن عليهم الصلواة والسلام جي اطاعت ۾ فرق ڪفر آهي ٻنهي جي اطاعت ڪرڻ ضروري آهي، حالانڪ الله تعالىٰ جا احڪام فرض ۽ حضور عليه الصلواة والسلام جن جا احڪام سنت آهن فرق ته آهي.

## جواب

اهو چوڻ به صحيح ناهي، ڇو ته نه الله تعالىٰ جا سيئي احڪام فرض آهن نه حضور عليه الصلواة والسلام جن جا سيئي احڪام سنت، جنهنجي لاءِ به قطعي حڪم آهي اهو فرض آهي اهو الله تعالىٰ جي طرفان هجي يا حضور عليه الصلواة والسلام جن جي طرفان، ڏسو نماز جي فرضيت الله تعالىٰ جو حڪم آهي پر هر هڪ نماز ۾ هيترين رڪعتون فرض آهن حضور عليه الصلواة والسلام جن جو حڪم آهي، زڪواة جي فرضيت الله تعالىٰ جي طرفان حڪم آهي پر ڪنهن شيءِ تي ڪيتري زڪواة فرض آهي رسول الله ﷺ جن جي طرفان حڪم آهي، سوئر حرام آهي، الله تعالىٰ

(١) سورة الحج آيت ٧٨

جو حڪم آهي پر ڪتيءَ گڏهه جوحرام هجڻ، رسول الله ﷺ جن جي حڪم سان آهي ۽ جن لاءِ قطعي حڪم ناهي پوءِ پلي الله تعاليٰ جو حڪم هجي يا رسول الله ﷺ جن جو اهو فرض ناهي،واجب يا مستحب آهي،جيئن قرآن پاڪ ۾ آهي تہ "اِذَا تَدَايَنْتُمْ بِدَيْنٍ اِلٰى اَجَلٍ مُّسَمًّى فَاكْتُبُوْهُ(١)" جڏهن قرض ڏيو تہ لکو، پر اهو لکڻ فرض ناهي مستحب آهي، يا احرام واري لاءِ حڪم آهي تہ "اِذَا حَلَلْتُمْ فَاصْطَادُوْا(٢)" جڏهن احرام کوليو تہ پوءِ شڪار ڪيو اهو شڪار ڪرڻ فرض نہ آهي پر جائز آهي "وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَلَمْ يُفَرِّقُوْا بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْهُمْ اُولٰٓئِكَ سَوْفَ يُؤْتِيْهِمْ اُجُوْرَهُمْ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا" هن ڪان اڳ ۾ ڪافرن جي لاءِ تيار ڪيل عذاب جو ذڪر هو ۽ هتي مومنن لاءِ تيار ڪيل نعمتن جو بيان ڪندي ٻڌايو ويو آهي تہ جن الله تعاليٰ ۽ ان جي سڀني رسولن عليهم الصلواة والسلام تي ايمان آندو ۽ انهن مان ڪنهن هڪ ۾ بہ نبي هجڻ ۽ مڃڻ جي لحاظ سان فرق نہ ڪيو تہ انهن کي الله تعاليٰ سندن ثواب جلد ڏيندو، اهو ثواب ملندن تہ قيامت ۾ پر اها بہ جڏهن تہ جلد اچڻ واري آهي، انجي ڪري "سوف" جو لفظ آندو ويو آهي ۽ الله تعاليٰ بخشيندڙ، مهربان آهي جو جيڪڏهن انهن مومنن ڪان ڪي گناهہ صادر ٿيا هوندا تہ اهي بہ انهن کي بخشي انهن تي رحم ڪندو.

## فائدو

"اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ" مان ثابت ٿيو تہ اصل ايمان الله تعاليٰ ۽ ان جي رسولن عليهم الصلواة والسلام کي مڃڻ آهي ۽ قيامت وغيره تي ايمان آڻڻ ان ۾ داخل آهي ۽ جنهن ايمان جي رڪنن مان ڪنهن هڪ رڪن جو بہ انڪار ڪيو تہ ان ڄڻ الله تعاليٰ ۽ ان جي سڀني رسولن عليهم الصلواة والسلام جو انڪار ڪيو، ڇو تہ اهو ايمان جو رڪن بہ الله تعاليٰ ۽ ان جي رسولن عليهم الصلواة والسلام جي فرمان مان ثابت آهي.

يَسْئَلُكَ اَهْلُ الْكِتَابِ اَنْ تُنَزِّلَ عَلَيْهِمْ كِتَابًا مِّنَ السَّمَآءِ

گهر ٿا ڪن توکان اهل ڪتاب تہ لاهين انهن تي ڪتاب آسمان ڪان

فَقَدْ سَاَلُوْا مُوْسٰٓى اَكْبَرَ مِنْ ذٰلِكَ فَقَالُوْٓا اَرِنَا اللّٰهَ جَهْرَةً

پوءِ تحقيق گهر ڪيائون موسيٰ کان وڏي ڳالهہ،ان ڪان پوءِ چيائون تہ ڏيکار اسان کي الله کلئي نموني

(١) سورة بقرة آيت ٢٨٢ (٢) سورة نساءِ آيت١٥٢

فَاَخَذَتۡهُمُ الصّٰعِقَةُ بِظُلۡمِهِمۡ ۚ ثُمَّ اتَّخَذُوا الۡعِجۡلَ مِنۡۢ بَعۡدِ مَا

پوءِ پڪڙيو انهن کي آسماني وڄ سندن ئي ظلم جي ڪري ان ڪان پوءِ بڻايائون ڳابي کي (الله) ان ڪان پوءِ

جَآءَتۡهُمُ الۡبَيِّنٰتُ فَعَفَوۡنَا عَنۡ ذٰلِكَ ۚ وَاٰتَيۡنَا مُوۡسٰى سُلۡطٰنًا

جو آيا انهن وٽ چٽا دليل پوءِ معاف ڪيوسون اهو به ۽ ڏنوسون موسيٰ کي دليل

مُّبِيۡنًا ﴿۱۵۳﴾

پڌرو.

## تفسير

ڪعب بن اشرف پاڻ سان ٻه ٽي يهودي وٺي حضور عليه الصلواة والسلام جن جي بارگاهه ۾ حاضر ٿيو ۽ اهي چوڻ لڳا ته اسين اوهان تي ايمان آڻڻ جي لاءِ تيار آهيون، پر اوهان اسان جو صرف هڪ شرط پورو ڪيو، اهو هيءُ آهي ته جيئن اسان جي نبي حضرت موسيٰ عليه الصلواة والسلام تي لکيل توراة آسمان کان لٿو هو تيئن اوهان به هڪ لکيل ڪتاب آسمان کان لاهي ڏيو ته اسين اڄ ئي ڪلمو پڙهي ڏيکاريون، يهودين جو اهو مطالبو صرف حجت بازيءَ لاءِ هيو جنهن جا هو پراڻا عادي هيا تڏهن الله تعاليٰ هيءَ آيت نازل فرمائي (١) حضرت امام حسن بصري عليه الرحمة فرمايو آهي ته يهودين جو اهو سوال صرف هٺ ڌرمي هئي، جيڪڏهن اهو سوال هدايت حاصل ڪرڻ لاءِ هجي ها ته جيڪي طلب ڪن ها اهو ملين ها (٢) الله تعاليٰ، پنهنجي حبيب عليه الصلواة والسلام کي تسلي ڏيندي فرمايو ته "يَسۡـَٔلُكَ اَهۡلُ الۡكِتٰبِ اَنۡ تُنَزِّلَ عَلَيۡهِمۡ كِتٰبًا مِّنَ السَّمَآءِ" يعني اهل ڪتاب يهودي اوهان ڪان سوال ڪن ٿا ته انهن تي آسمان ڪان لکيل، تيار ڪيل، ڪتاب لاهيو ته پوءِ ايمان آڻيندا، پر پيارا حبيب عليڪ الصلواة والسلام اوهان انهن جي سوال ڪان عجب

(١) ضياءُ القرآن ص٤١٢ جلد١ (٢) روح المعاني ص٥ جزءُ٤ جلد٢

۽ حيرت ۾ نہ پئو اهي انهن سوالن ڪرڻ جا پراڻا عادي آهن جو سندن وڏن "فَقَدْ سَأَلُوا مُوسَىٰ أَكْبَرَ مِنْ ذَٰلِكَ" (حضرت) موسىٰ (عليه الصلواة والسلام جن) ڪان ان ڪان بہ وڏو سوال ڪيو هو ۽ اهو هي هيو "فَقَالُوا أَرِنَا اللَّهَ جَهْرَةً" چيائون تہ اسان ڪي الله تعالىٰ جو ڪليل ديدار ڪراءِ (تہ پوءِ ايمان آڻينداسون) "فَأَخَذَتْهُمُ الصَّاعِقَةُ بِظُلْمِهِمْ" يعني ان گستاخيءَ واري سوال جي سزا اها ملين جو انهن ڪي آسماني وڄ مٿان ڪري پڪڙيو ۽ اهي تباھ ٿي ويا پر اهو بہ سندن ئي ظلم جو بدلو هيو، "ثُمَّ اتَّخَذُوا الْعِجْلَ مِنْ بَعْدِ مَا جَاءَتْهُمُ الْبَيِّنَاتُ" يعني الله تعالىٰ جي طرفان ظاهر ڪيلن دليلن ۽ حجتن جي اچڻ ڪان پوءِ بہ ڄاڻي واڻي هٺرادو گابي ڪي پنهنجو معبود بنائي ويٺا، فَعَفَوْنَا عَنْ ذَٰلِكَ وَآتَيْنَا مُوسَىٰ سُلْطَانًا مُبِينًا" يعني انهن سڀني زيادتين ۽ ظلمن جي باوجود بہ اسان انهن ڪي معاف ڪيو ۽ حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام ڪي انهن تي ڪليل ۽ صريح غلبو عطا ڪيو ۽ نہ مڃڻ وارا نهايت ذليل ۽ خوار ٿيا.

وَرَفَعْنَا فَوْقَهُمُ الطُّورَ بِمِيثَاقِهِمْ وَقُلْنَا لَهُمُ ادْخُلُوا الْبَابَ

۽ ڪنيوسون مٿان انهن جي طور سندن عهد جي ڪري ۽چيوسون انهن ڪي تہ داخل ٿيو دروازي مان

سُجَّدًا وَقُلْنَا لَهُمْ لَا تَعْدُوا فِي السَّبْتِ وَأَخَذْنَا مِنْهُمْ

سجدا ڪندي ۽ چيوسون انهن ڪي تہ نہ تجاوز ڪيو ڇنڇر جي ڏينهن ۽ ورتوسون انهن ڪان

مِيثَاقًا غَلِيظًا ﴿١٥٤﴾ فَبِمَا نَقْضِهِمْ مِيثَاقَهُمْ وَكُفْرِهِمْ بِآيَاتِ اللَّهِ وَ

عهد مضبوط پوءِ سببان ڀڃڻ انهن جي عهد ڪي ۽ سببان ڪفر ڪرڻ انهن جي الله جي آيتن سان ۽

قَتْلِهِمُ الْأَنْبِيَاءَ بِغَيْرِ حَقٍّ وَقَوْلِهِمْ قُلُوبُنَا غُلْفٌ ۚ بَلْ

سببان قتل ڪرڻ انهن جي نبين ڪي ناحق ۽چوڻ انهن جي تہ دليون اسان جون ڍڪيل آهن، بلڪ مهر

طَبَعَ اللَّهُ عَلَيْهَا بِكُفْرِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُونَ إِلَّا قَلِيلًا ﴿١٥٥﴾

هنئي الله انهن تي انهن جي ڪفر جي ڪري پوءِ نہ ٿا ايمان آڻين مگر ٿورا.

# تفسير

مٿينءَ آيت ۾ الله تعالىٰ بني اسرائيلن جا اهي ٽي گناهہ بيان فرمايا آهن جيڪي ڪائنن مختلف زمانن ۾ صادر ٿيا هئا ، ١- پهريون هي جو جڏهن حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام جن الله تعالىٰ جي طرفان عطا ڪيل ڪتاب توراة شريف طور جبل تان ڪٺي اچي ڪين ٻڌايو تہ چيائون" سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا " يعني اهو ٻڌو سو پر ان تي عمل نہ ڪنداسون بي فرماني ڪنداسون الله تعالىٰ ڪين مڃڻ لاءِ مجبور ڪرڻ جو طريقو جيڪو رکيو ان جو بيان هي آهي تہ" وَرَفَعْنَا فَوْقَهُمُ الطُّورَ بِمِيْثَاقِهِمْ " يعني انهن عهد ڪيو هو تہ اسين توراة تي عمل ڪنداسون ۽ ان عهد کي پوري نہ ڪرڻ جي ڪري اسان انهن جي مٿان طور جبل ڪنيو، جنهن جو تفصيل سورة بقره جي آيت عـ٦٣ جي تفسير ۾ لکي آيا آهيون اتي ڏسڻ گهرجي. ٢- ٻيو جرم هي هيو جيڪو الله تعالىٰ بيان فرمايو آهي"وَقُلْنَا لَهُمُ ادْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا" يعني انهن کي چيوسون تہ دروازي کان سجدا ڪندي اندر داخل ٿيو، هن واقعي جي متعلق بہ مفسرن جا بہ قول آهن١- هڪ هيءُ تہ اهو واقعو حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام جن جي دور ۾ ان وقت پيش آيو جڏهن بني اسرائيل تيه نالي ميدان ۾ قابو لڳا پيا هئا ان وقت انهن کي حڪم ڪيو ويو هو تہ اريحا نالي شهر ۾ وڃي توبہ ڪن،ان صورت ۾ "اَلْبَابَ" مان مراد اريحا شهر جو دروازو ۽ "سُجَّدًا" مان مراد ادب سان جهڪي داخل ٿيڻ يا نفل پڙهندي داخل ٿيڻ آهي ۽ اهو سجدو توبہ جي لاءِ هيو. ٢- ٻيو قول هي آهي تہ اهو واقعو حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام جن جي وفات کان پوءِ سيدنا يوشع عليه السلام جي دور ۾ ان وقت پيش آيو جڏهن بني اسرائيل تيه نالي ميدان مان آزاد ٿي ٻاهر آيا تہ انهن کي بيت المقدس ۾ داخل ٿيڻ جي لاءِ حڪم ڪيو ويو هو ۽ ان صورت ۾ "الباب" مان مراد بيت المقدس جي شهر جو دروازو ۽ اهو سجدو شڪراني جو سجدو هو، ڪن جو قول آهي تہ اهو توبہ جو سجدو هو ۽ قوي قول بہ اهو آهي جيئن ٻيءَ آيت ۾ آهي"اُدْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا وَّقُوْلُوْا حِطَّةٌ" (١) يعني دروازي اندر سجدا ڪندي داخل ٿيو ۽ چئو تہ "گناهہ ڪيرائڻ، لاءِ عرضگذار آهيون، جيڪڏهن شڪراني جو سجدو هجي

(١) سورة البقره آيت ٥٨

ها تہ "حطة" جي بجاءِ، الحمد لله وغيره چيو وڃي ها (١) پر انهن بي فرماني کندي "حطة" جي بجاءِ "حبة" چيو معنيٰ اناج ڏيار، ٣- ٽيون سندن جرم الله تعاليٰ بيان کندي فرمايو تہ " وَقُلْنَا لَهُمْ لَا تَعْدُوْا فِي السَّبْتِ " يعني اسان انهن يهودين کي فرمايوهو تہ ڇنڇر جي ڏينهن حد کان نہ لنگهو، حقيقت هيئن هئي تہ الله تعاليٰ کين حڪم ڪيو هو تہ ڇنڇر جي ڏينهن نہ دنياوي ٻيو ڪاروبار ڪيو ۽ نہ مڇيءَ جو شڪار، اهو ڏينهن خالص الله تعاليٰ جي عبادت لاءِ مقرر ڪري ڇڏيو پر انهن حضرت داؤد عليه السلام جي دور ۾ ڇنڇر جي ڏينهن مڇيءَ جو شڪار ڪري ان ڏينهن جو احترام برقرار نہ رکيو جنهنجي ڪري کين سزا ملي جنهنجو ڪجھ بيان سورة بقره آيت عـ٦٥ جي تفسير ۾ لکي آيا آهيون (وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ) ۽ ڪجھ ذڪر سورة الاعراف ۾ ايندو، انشاءالله تعاليٰ "وَاَخَذْنَا مِنْهُمْ مِّيْثَاقًا غَلِيْظًا" ۽ اسان انهن کان مضبوط ۽ پڪو عهد ورتو هو، چاڻ گهرجي تہ ان عهد مان مراد اهو عهد آهي جيڪو بني اسرائيل جي مٿان طور جبل ڪٽائي، کين ڊيڄاري، توراة تي عمل ڪرڻ لاءِ ورتو ويو هو تہ جيڪڏهن عمل نہ ڪندؤ تہ سخت کان سخت سزا جا حقدار ٿيندؤ ۽ اهو عهد جيتوٽيڪ الله تعاليٰ جي نبي حضرت موسيٰ عليه الصلواة والسلام جن جي واسطي سان ورتو ويو هو پر جڏهن تہ الله تعاليٰ جي امر سان ورتو ويو هو تڏهن الله تعاليٰ ان کي پاڻ ڏي نسبت ڪندي ارشاد فرمايو تہ" اسان انهن کان پڪو وعدو ورتو هو يهودين جا اهي ٽئي گناهہ بيان ڪري الله تعاليٰ پنهنجي نهايت ئي پياري ۽ محبوب نبي عليه الصلواة والسلام جن کي مطمئن بنايو تہ: اهي يهودي اصل کان ضدي آهن جن اڳين نبين سڳورن عليهم الصلواة والسلام جي بہ ايتري بي فرماني ڪئي هئي جيڪڏهن اوهان کان اڻنگا سوال ٿا ڪن يا ايمان نہ ٿا آڻين تہ پنهنجي لاءِ عذاب جا سبب اختيار ڪن ٿا اوهان کو فڪر يا غم نہ ڪيو.

"فَبِمَا نَقْضِهِمْ مِّيْثَاقَهُمْ" يعني انهن يهودين جي طرفان الله تعاليٰ سان ڪيلن عهدن ۽ وعدن ڀڃڻ جي ڪري " وَكُفْرِهِمْ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ" ۽ الله تعاليٰ جي آيتن ۽ احڪام جي انڪار ڪرڻ جي ڪري "وَقَتْلِهِمُ الْاَنْۢبِيَاۗءَ بِغَيْرِ حَقٍّ" ۽ الله تعاليٰ جي پيارن پيغمبرن عليهم الصلواة والسلام کي ناحق شهيد ڪرڻ جي ڪري چاڻڻ گهرجي تہ نبين عليهم الصلواة والسلام جو قتل تہ ناحق ئي هوندو پر هي پاڻ بہ ان کي

(١) تفسير نعيمي ص٣٨ جلد٦

ناحق سمجهندا هيا) "وَقَوۡلِهِمۡ قُلُوۡبُنَا غُلۡفٌ" ۽ سندن ان چوڻ جي ڪري تہ اسان جون دليون پردن سان ڍڪيل آهن، (اسين پنهنجي يهوديت تي مضبوط، مستحڪم ۽ پڪا آهيون ان جي ڪري اسلام اسان جي دلين ۾ نٿو داخل ٿئي ۽ نہ اسلام ڏانهن سڏڻ واري نبي عليه الصلواة والسلام جي دعوت اسان کي متاثر ٿي بنائي) اسان انهن کي لعنت، غضب، ذلت ۽ سندن شڪليون ڦيرائي ڀولا،باندروغيره بنائڻ جي سزا ڏني هئي، باقي انهن جو چوڻ تہ "اسان جون دليون پردن سان ڍڪيل آهن" پورو ناهي "بَلۡ طَبَعَ اللّٰهُ عَلَيۡهَا بِكُفۡرِهِمۡ فَلَا يُؤۡمِنُوۡنَ اِلَّا قَلِيۡلًا" بلڪ الله تعالىٰ سندن ئي ڪفر ۽ بي قدريءَ جي ڪري سندن دلين تي مهر هڻي ڇڏي آهي، پوءِ ٿوري قدر ايمان آڻين ٿا ، ۽ ٿورو ايمان آڻڻ ۽ گهڻو ڪفر ڪرڻ بہ ڄڻ سڄو ڪفر ڪرڻ آهي ان جي ڪري اهو ٿورو بہ قبول ناهي، يا معنىٰ آهي تہ يهودي گهڻا ايمان نہ ٿا آڻين، ٿورا آڻين ٿا جيئن حضرت عبدالله بن سلام ۽ ان جا ساٿي وغيره (١)

وَبِكُفۡرِهِمۡ وَقَوۡلِهِمۡ عَلٰى مَرۡيَمَ بُهۡتَانًا عَظِيۡمًا ﴿١٥٦﴾ وَقَوۡلِهِمۡ اِنَّا

۽ سببان ڪفر انهن جي ۽ چوڻ انهن جي مريم تي بهتان وڏو ۽ سببان چوڻ انهن جي تہ بيشڪ

قَتَلۡنَا الۡمَسِيۡحَ عِيۡسَى ابۡنَ مَرۡيَمَ رَسُوۡلَ اللّٰهِ ۚ وَمَا قَتَلُوۡهُ وَمَا صَلَبُوۡهُ

شهيد ڪيو اسان مسيح عيسىٰ پٽ مريم الله جي رسول کيءِ نہ ڪنائون ان کي ۽ نہ سوريءَ تي

وَلٰكِنۡ شُبِّهَ لَهُمۡ ؕ وَاِنَّ الَّذِيۡنَ اخۡتَلَفُوۡا فِيۡهِ لَفِىۡ شَكٍّ

چاڙهيائون ان کي پر هڪ شڪل ڪيو ويو (هيوماڻهو) انهن لاءِ ۽ بيشڪ جن اختلاف ڪيو ان جي باري ۾ البت شڪ ۾

مِّنۡهُ ؕ مَا لَهُمۡ بِهٖ مِنۡ عِلۡمٍ اِلَّا اتِّبَاعَ الظَّنِّ ۚ وَمَا قَتَلُوۡهُ يَقِيۡنًا ۙ ﴿١٥٧﴾

آهن ان مان ناهي انهن کي ان جو ڪو علم مگر پيروي گمان جي ۽ نہ ڪنائون ان کي يقين سان

بَلۡ رَّفَعَهُ اللّٰهُ اِلَيۡهِ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيۡزًا حَكِيۡمًا ﴿١٥٨﴾

بلڪ کنيو ان کي الله پاڻ ڏانهن ۽ آهي الله غالب،حڪمت وارو.

(١) تفسير مظهري ص۴٥۴ جلد٢

# تفسير

جيئن هن کان اڳ ۾ يهودين جا گناهہ ۽ وڏا ڏوهہ بيان ڪيا ويا هئا تيئن هنن آيتن ۾ بہ انهن جي برائين ڪي بيان ڪندي ٻڌايو ويو آهي تہ "وَبِكُفْرِهِمْ وَقَوْلِهِمْ عَلَىٰ مَرْيَمَ بُهْتَانًا عَظِيمًا" هي "بڪفرهم" جو لفظ هن کان اڳ ۾ ذڪر ڪيل "فبما كفرهم" تي عطف ڪيل آهي،اتي حضرت موسىٰ ۽ ٻين نبين عليهم الصلواة والسلام سان انهن جي ڪفر جو بيان هو ۽ هتي حضرت عيسىٰ عليه السلام سان سندن ڪفر جو بيان ڪندي ارشاد ٿيو آهي تہ اسان انهن يهودين کي حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام سان ڪفر ڪرڻ ۽ بيبي مريم عليها السلام جي مٿان وڏي بهتان واري ڳالهہ (١) چوڻ جي ڪري بہ لعنت واري عذاب ۾ مبتلا رکيو آهي" بُهْتَانًا عَظِيمًا" مان ثابت ٿيو تہ جيئن ڪفر ڪبيرو گناهہ آهي تہ الله تعالىٰ جي پيارن تي بهتان هڻن بہ عظيم گناهہ آهي "وَقَوْلِهِمْ إِنَّا قَتَلْنَا الْمَسِيحَ عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ رَسُولَ اللَّهِ" هي "قولهم" جو لفظ هن کان اڳ ۾ آيل، "قولهم" تي معطوف آهي، ۽ "هم" ضمير جي مرجع اهي ساڳيا يهودي آهن، مطلب هي آهي تہ اهي يهودي سندن "ان چوڻ جي ڪري بہ تہ" يقيناً اسان مسيح، عيسىٰ ،مريم جي پٽ، الله تعالىٰ جي رسول (عليه الصلواة والسلام) کي قتل ڪري ڇڏيو"، لعنت جي عذاب ۾ مبتلا رهيا ۽ رهندا، مسيح جي معنىٰ هٿ لڳائي مريض کي صحت وني ڏيندڙ، مئلن کي جيئرو ڪندڙ، زمين ۾ سير ڪندڙ، ڪٿي گهر نہ ناهيندڙ، (٢) "ابن مريم" مريم جو پٽ حضرت عيسىٰ عليه السلام کان سواءِ ٻئي ڪنهن بہ نبي کي ماءُ جي نسبت سان ذڪر نہ ڪيو ويو آهي، ڇو تہ حضرت عيسىٰ عليه السلام جو پيءُ نہ هيو، "رسول الله" الله جو رسول يهودين حضرت عيسىٰ کي دل سان مڃيو ئي ڪو نہ هو باقي سندس حق ۾ "رسول الله" جو لفظ مذاق طور چوندا هئا.

"وَمَا قَتَلُوهُ وَمَا صَلَبُوهُ" هن عبارت ۾يهودين جي مٿئين دعوىٰ (تہ اسان مسيح ،مريم جي پٽ، الله جي رسول، کي قتل ڪيو آهي) جي ترديد آهي، الله تعالىٰ فرمايو تہ "نہ ان کي قتل ڪيائون ۽ نہ سوريءَ تي چاڙهيائون"، هتي قتل مان مراد ساهہ ڪڍڻ آهي تلوار وغيره سان ڪهڻ ناهي ڇو تہ ان طريقي سان ڪهڻ جي تہ

(١) مظهري ص٤٥٤ جلد٢ (٢) نعيمي ص٤٨ جلد٦

ڪنهن بہ دعويٰ نہ ڪئي هئي، الله تعاليٰ جي ارشاد جو مطلب آهي تہ حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جو ساهہ مبارڪ ڪڍڻ تہ نهيو پر ان ڪي سوريءَ تي ئي ڪو نہ چاڙهي سگهيا هئا.

## مرزائين ۽قادياني ڪافرن جو رد

مرزائي ۽ قادياني معلون چوندا آهن تہ يهودين حضرت عيسيٰ عليه السلام ڪي سوريءَ تي چاڙهيو هو پر ساهہ ڪو نہ نڪتو هوس، هن آيت انهن جي ڳالهہ ڪي رد ڪندي ٻڌايو تہ يهودي حضرت عيسيٰ عليه السلام جو ساهہ مبارڪ تہ ڪڍي ڪو نہ سگهيا پر ڪين سوريءَ تي بہ چاڙهي نہ سگهيا هئا "وَلٰكِنْ شُبِّهَ لَهُمْ" ۽پر انهن جي لاءِ هيو ماڻهو (حضرت عيسيٰ عليه الصلواة والسلام جو) هم شڪل بنايو ويو يا هنن ڪي شبهي ۾ وڌو ويو "شبہ" ماضي مجهول جو صيغو تشبيه ڪان ورتل آهي، ان جون ٻہ معنائون آهن جيڪي هاڻي لکيون اٿئون، مقصد تہ اهي شبهي ۾ وڌا ويا هئا جو جيڪو منافق حضرت عيسيٰ عليه السلام ڪي شهيد ڪرڻ يا قيد ڪرڻ لاءِ اندر گهڙيو هو ان ڪي حضرت عيسيٰ سمجهي قتل ڪري ڇڏيو هيائون، يا ان جو هم شڪل بنايو ويو ۽ ان جو تفصيل هيئن آهي تہ جڏهن يهودين حضرت عيسيٰ عليه السلام ڪي شهيد ڪرڻ جو پروگرام ٺاهيو، ڪين خبر پئي تہ سندن ٻڌائڻ ڪان پوءِ مٿن ايمان آڻڻ وارا حواري وٽن گڏ ٿيا، اهليس نالي هڪ يهوديءَ هين يهودين ڪي حضرت عيسيٰ عليه السلام جي ان جاءِ جو ڏس ڏنو جنهن ۾ پاڻ رهيل هيا ۽ چار هزار (٤٠٠٠) يهودي سندن جاءِ ڪي گهيرو ڪري بيهي رهيا، حضرت عيسيٰ عليه السلام انهن (پنهنجن) حوارين ڪي فرمايو تہ: اوهان مان ڪو ان ڳالهہ لاءِ تيار آهي تہ اهو ٻاهر نڪري منهنجي پاران قربان ٿئي ۽ پوءِ جنت ۾ مون سان گڏ رهي، هڪ حواريءَ وڏي قربان ٿيڻ لاءِ پاڻ ڪي پيش ڪيو پاڻ ان ڪي پنهنجو ڪڙتو ۽ پڳ عطا ڪيائون ۽ قدرت واري ان ڪي سندن هم شڪل بنايو ٻاهر نڪتو تہ يهودين ان ڪي شهيد ڪري سوريءَ تي چاڙهيو ۽ حضرت عيسيٰ عليه السلام ڪي الله تعاليٰ مٿي ڪڻائي ڇڏيو (١)

"وَاِنَّ الَّذِيْنَ اخْتَلَفُوْا فِيْهِ لَفِيْ شَكٍّ مِّنْهُ ۚ مَا لَهُمْ بِهٖ مِنْ عِلْمٍ اِلَّا اتِّبَاعَ الظَّنِّ" يعني يهودي ڪٿي دعويٰ تہ ڪن ٿا تہ اسان (حضرت) عيسيٰ (عليه السلام) ڪي ڪنو ۽ سوريءَ تي چاڙهيو آهي پر اهي پاڻ بہ اختلاف ۽ شڪ ۾ آهن گمان ۽ وهم ڪان سواءِ ڪو بہ ان ڳالهہ جو يقيني علم نہ اٿن "وَمَا قَتَلُوْهُ يَقِيْنًا" يعني پڪي ۽ يقيني ڳالهہ هيءَ آهي تہ

(١) معارف القرآن ص٦٠١ جلد٢

ان کي قتل نہ ڪيو ھيائون "بَلْ رَّفَعَهُ اللّٰهُ اِلَيْهِ" بلڪ الله تعالىٰ ان کي پاڻ ڏانھن آسمانن تي کڻي ورتو. "وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا" ۽ الله غالب- زبردست، قدرت وارو آھي.

يھودي حضرت عيسىٰ عليہ الصلواۃ والسلام جن جي شھيد ڪرڻ لاءِ ڪيتريون بہ ڪوششون ڪن ھا تہ بہ ڪامياب نہ ٿين ھا ڇو تہ حضرت عيسىٰ عليه السلام جو محافظ الله تعالى پاڻ ھيو ۽ آھي. جيڪڏھن ماده پرست انسان ان کي نہ ٿا سمجھن تہ اھو سندن سمجھہ جو قصور آھي "حَكِيْمًا" حڪمت وارو آھي. جنھن جو ھر ڪم حڪمت کان خالي نہ ھوندو آھي.

## فائدو

پاڪدامن عورت کي تھمت لڳائڻ وڏو گناھہ آھي خصوصًا جڏھن اھا الله تعالىٰ وٽ وڏي مرتبي ۽ شان واري آھي ۽ ان تھمت ھڻڻ واري گناھہ جي ڪري خدائي عذاب بہ ايندو آھي، اھڙي طرح جيڪي مومنن جي ماءُ سيده عائشہ صديقہ رضي الله عنھا جي مٿان گند اڇلائيندا يا ان سائڻ جي گلا ڪندا تہ اھي انھن يھودين ملعونن کان بہ بدتر ھوندا ڇو تہ حضرت بيبي مريم رضي الله عنھا سيدنا عيسىٰ عليه السلام جي امان آھي ۽ ھيءُ قرآن پاڪ جي قطعي نص مطابق مومنن جي ماءُ سرور ڪائنات، فخر موجودات، سيدالمرسلين حضرت محمد مصطفىٰ، احمد مجتبىٰ صلوات الله وسلامہ عليه وعليھم اجمعين جو ننگ ۽ دنيا ۽ آخرت ۾ سندن ڪنوار آھي. جنھن جي جنتي ھجڻ جي بشارت جبريل امين رب العزة جل شانہ جي حڪم سان حبيبن جي دربار ۾ کڻي آيو. ڏسو ھن گنھگار جو لکيل ڪتاب "مومنن جي ماءُ سيده عائشہ صديقہ رضي الله عنھا جي سيرت"

وَاِنْ مِّنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ اِلَّا لَيُؤْمِنَنَّ بِهٖ قَبْلَ مَوْتِهٖ ۚ وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ

۽ ناھي ڪو اھل ڪتاب مان مگر ضرور ايمان آڻيندو ان تي ان جي فوت ٿيڻ کان اڳي ۽ قيامت جي ڏينھن

يَكُوْنُ عَلَيْهِمْ شَهِيْدًا ﴿١٥٩﴾ فَبِظُلْمٍ مِّنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا

ھوندو انھن تي شاھد پوءِ سببان ظلم ڪرڻ جي انھن جي طرفان جو يھودي ٿيا

حَرَّمْنَا عَلَيْهِمْ طَيِّبٰتٍ اُحِلَّتْ لَهُمْ وَبِصَدِّهِمْ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

حرام ڪيوسون انهن تي پاڪ شيون جي حلال ڪيون ويون هيون انهن جي لاءِ سببان روڪڻ انهن جي الله جي واٽ ڪان

كَثِيْرًا (١٦٠) وَّاَخْذِهِمُ الرِّبٰوا وَقَدْ نُهُوْا عَنْهُ وَاَكْلِهِمْ اَمْوَالَ

گهڻن کي ۽ سببان وٺڻ انهن جي وياج کي ۽ تحقيق روڪيا ويا ان کان ۽ سببان کائڻ انهن جي مالن

النَّاسِ بِالْبَاطِلِ ۭ وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ مِنْهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا (١٦١)

ماڻهن جي کي ناحق سان ۽ تيار ڪيوسون ڪافرن جي لاءِ انهن مان عذاب دردناڪ

لٰكِنِ الرّٰسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ مِنْهُمْ وَالْمُؤْمِنُوْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِمَآ

پر مضبوط هوندڙ علم ۾ انهن مان ۽ مومن ايمان ٿا آڻين ان تي جو

اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ وَالْمُقِيْمِيْنَ الصَّلٰوةَ

نازل ڪيو ويو اوهان ڏانهن ۽ ان تي جو نازل ڪيو ويو اوهان کان اڳي ۽ قائم ڪندڙ نماز

وَالْمُؤْتُوْنَ الزَّكٰوةَ وَالْمُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ۭ اُولٰۗىِٕكَ

۽ ڏيندڙ زڪواة ۽ ايمان آڻيندڙ الله تي ۽ ڏينهن قيامت تي اُهي

سَنُؤْتِيْهِمْ اَجْرًا عَظِيْمًا (١٦٢) ع ٢٢ / ١٠ / ٢

جلد ڏينداسون انهن کي ثواب وڏو.

## تفسير

هن کان اڳ ۾ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جي زنده آسمان تي کڄي وڃڻ جو ۽ ان وقت پيش اچڻ وارن واقعن جو ذڪر هو ۽ هاڻي

سندس آسمانن کان واپس لهڻ ۽ ان وقت پيش ايندڙن واقعن جو بيان ڪندي ارشاد ٿيو آهي

"وَاِنۡ مِّنۡ اَهۡلِ الۡكِتَابِ اِلَّا لَيُؤۡمِنَنَّ بِهٖ قَبۡلَ مَوۡتِهٖ" يعني اهل ڪتاب عيسائين ۽ يهودين مان ڪو بہ اهڙو ماڻهو نہ رهندو مگر حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام تي سندس دنيا تي آسمان کان لهي اچڻ کان پوءِ ۽ وفات ڪرڻ کان اڳ ايمان آڻيندو هن مان ثابت ٿيو تہ حضرت عيسىٰ عليه السلام آسمانن تي زنده آهي جيڪو قيامت جي اچڻ کان اڳ ۾ دنيا تي لهي ايندو ۽ ان وقت جيڪي بہ يهودي ۽ عيسائي ڪيس اڳ ۾ (معاذالله) مئل يا ڦاسي ڏنل وارو عقيدو رکندا هئا اهي سيئي مٿس ايمان آڻيندا اهو عقيدو قرآن پاڪ جي آيتن سان گڏ حضور عليه السلام جن جي متواتر حديثن مان بہ ثابت آهي ۽ سيني مفسرن، محدثن، محققن، عام ۽ خاص مسلمانن جو اهو ايمان ۽ پڪو عقيدو آهي جنهن کان پوءِ غير مسلمانن يهودين، عيسائين، قاديانين ۽ مرزائين جي ڳالهہ تي ڪو بہ عقلمند اعتبار نہ ڪندو. "وَيَوۡمَ الۡقِيٰمَةِ يَكُوۡنُ عَلَيۡهِمۡ شَهِيۡدًا" يعني جن ظالمن بي وفائيءَ واريون حرڪتون ڪري حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن کي ايذايو، مٿن ظلم ۽ ستم ڪيا، ڪين شهيد ڪرڻ جي ڪوشش ڪئي يا جيڪي بہ بني اسرائيل وغيره سندن متعلق غلط عقيدو رکندا هئا پاڻ انهن سيني جي مٿان سندن غلط عقيدن ۽ گندن ڪردارن جا شاهد هوندا.

## مرزا قاديانيءَ ملعون جو نسورو ڪوڙ

چڱيءَ طرح ياد رکڻ ۽ ذهن ۾ ويهارڻ گهرجي تہ مرزا ملعون انهن سيني حديثن جي لاءِ (جيڪي حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن جي آسمان کان لهڻ جي باري ۾ آيل آهن) چيو تہ اهي منهنجي باري ۾ وارد ٿيل آهن، ڇو تہ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام تہ وفات ڪري ويو آهي. پر مسلمانو! غور ڪيو تہ اسان جي پياري نبي ﷺ جن جيڪي حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جن جون صفتون بيان ڪيون آهن انهن مان هڪ صفت بہ قاديانيءَ ۾ ڪا نہ آهي. حضرت عيسىٰ عليه السلام جو نالو مبارڪ حضرت عيسىٰ ۽ هن جو نالو غلام احمد، حضرت

عيسىٰ عليه السلام جي والده جو نالو مريم هن جي ماءُ جو نالو چراغ بيبي، حضرت عيسىٰ عليه السلام جي اچڻ کان پوءِ اسلام کان سواءِ سڀ دين دنيا تان ختم ٿي ويندا ۽ هن جي وقت ۾ سڀ کفر وارا عقيدا موجود ۽ عيسائيت جو زور. حضرت عيسىٰ عليه السلام جي زماني ۾ مال ملکيت ماڻهن جي هٿن ۾ پاڻيءَ وانگر وهندو ۽ هن جي دور ۾ ايتري غريبي جو خود مرزا جو گذر بہ چندي تي ۽ هٽرادو بهشتي مقبري ۾ قبرن جي جاين وڪڻڻ تي. حضرت عيسىٰ عليه السلام جي دور ۾ ساري دنيا ۾ امن امان بحال ٿيندو ۽ هن جي دور ۾ بدامنيءَ جي حد ئي نہ رهي، حضرت عيسىٰ عليه السلام جي وفات مديني منوره ۾ ٿيندي ۽ هن جي وفات لاهور جي هڪ پائخاني ۾، حضرت عيسىٰ عليه السلام جن حضور عليه السلام جن جي روضہ اقدس ۾ دفن ٿيندا ۽ هن جي تدفين قاديان ۾ ٿي.

ايمان وارا پائرو! هي ڳالهيون غور ڪري پڙهو، وري وري پڙهو، ڇا ان کان وڌيڪ ڪوڙو، بهتان ۽ افتراءِ ٻڌنڌڙ ٻيو ڪو ٿي سگهي ٿو؟ نہ- هرگز نہ، "لَعْنَةَ اللّٰهِ عَلَى الْكَاذِبِيْنَ" ڪوڙن تي الله جي لعنت آهي.

چہ نسبت خاک را باعالم پاک
کجا عيسیٰ (علیہ السلام) کجا دجال ناپاک

## فائدو (١)

هن آيت مان ثابت ٿيو تہ حضرت عيسىٰ عليه السلام جن اڃان آسمان تي زنده آهن نہ لٿا آهن ۽ نہ سندن وفات ٿي آهي، ڇو تہ سندن وفات کان اڳ سڀ يهودي ۽ عيسائي اسلام قبول ڪندا ۽ اڃان اهي ظالم پنهنجي انڌي ۽ غلط عقيدي تي هلي رهيا آهن.

## فائدو (٢)

الله تعالىٰ جا پيارا پيغمبر عليهم الصلواة والسلام پنهنجين امتن جي عقيدن ۽ عملن کان بخوبي واقف هوندا آهن پوءِ اعمال ڪليل هجن يا لڪل، نبين عليهم الصلواة والسلام جي نگاهن کان لڪل نہ هوندا آهن، ڇو تہ هي پيارا انهن جا

شاهد هوندا ۽ كامل شاهدي اها. آهي جيكا ڏسي ڏني وجي انهن ٻڌارن جي شاهدي اڻ ڏٺي ۽ ناقص نہ هوندي. سيدنا عيسىٰ عليه السلام جي علمي معجزي جو ذكر قرآن كريم هنن لفظن ۾ كيو آهي "وَأُنَبِّئُكُمْ بِمَا تَأْكُلُوْنَ وَمَا تَدَّخِرُوْنَ فِيْ بُيُوْتِكُمْ (١) يعني جيكو كائو ٿا ۽ جيكو گهرن ۾ رکو ٿا ان سڀ جون خبرون مان اوهان كي ٻڌايان ٿو.

## فائدو (٣)

الله تعالىٰ جي پيارن نبين، برگزيده پيغمبرن ۽ مٿن مرسلن عليهم السلام جو يادگيروءِ حافظہ جي قوت ايتري قوي آهي جو هزارين سالن گذرڻ،بلك دنيا تان ظاهري رحلت كرڻ جي باوجود امتن جا اعمال انهن جي ذهن مبارك مان نہ نكرندا ۽ قيامت جي ڏينهن كنهن لكت وغيره جي ڏسڻ كان سواءِ ئي مٿن شاهدي ڏيندا پر ٻيا ماڻهو پنهنجا كيل عمل بہ ياد نہ ركندا ان جي كري انهن كي لكت ۾ سندن عملناما پيش كري گناه ياد ڏياريا ويندا.

## فائدو (٤)

الله تعالىٰ جا رسول سڳورا عليهم الصلواة والسلام قيامت جي ڏينهن امت جي هر فرد جون صفتون ۽ حالات ۽ ان جي سر كي سڃاڻندا، ڇو تہ ان سڃاڻپ كان سواءِ شاهدي ممكن نہ هوندي. جڏهن ٻين نبين عليهم السلام جو اهو مقام هوندو تہ سيني جي سردار، يتيمن جي يار رسول الله ﷺ جن جو مقام تہ الاءِ كيترو بلند هوندو؟

## اعتراض

جيكڏهن ائين آهي تہ پوءِ حضور اكرم ﷺ جن ڇو فرمايو آهي؟ تہ "مان پنهنجيءَ امت كي وضوءَ ۾ استعمال ٿيلن عضون جي نورانيت ۽ چمك سان سڃاڻندس"

(١) سورة آل عمران آيت ٤٩

## جواب

اها وضوءَ وارن سان خصوصي عنايت جي ڳالهہ آهي نہ تہ جيڪي ماٺهو ڪلمي پڙهڻ شرط مري ويا نہ نماز جو وقت ملين ۽ نہ وضوءَ جو- يا نماز ۽ وضوءَ جي فرضيت کان اڳ ۾ صرف حبيب پاڪ عليه الصلواة والسلام جن کان ڪلمو پاڪ سکي اسلام قبول ڪري مري ويا تہ ڇا انهن لاءِ حضور عليه الصلواة والسلام جن شاهدي نہ ڏيندا؟ يا انهن کي ڪو نہ سڃاڻيندا؟ يا ڪيترا بي نمازي جن سڄي زندگي نہ وضو ڪيو نہ سجدو ڪيو ائين مري ويا پر ڪلمو پڙهندا هئا جيڪڏهن حضور عليه السلام جن انهن کي نہ سڃاڻندا تہ سندن شفاعت ڪيئن ڪندا؟ (١)

## فائدو (٥)

مٿينءَ آيت جي اها معنىٰ تہ حضرت عيسىٰ عليه السلام جن آسمان کان هيٺ لهي ايندا اصحابن سڀني رضي الله عنهم حضور ﷺ جن کان روايت ڪئي آهي . حضرت ابو هريرة رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آهي تہ حضور ﷺ جن فرمايو.

" لَيَنْزِلَنَّ اِبْنُ مَرْيَمَ حَكَمًا عَدْلًا، فَلَيَقْتُلَنَّ الدَّجَالَ وَلَيَقْتُلَنَّ الْخِنْزِيْرَ وَلَيَكْسِرَنَّ الصَّلِيْبَ وَتَكُوْنَ السَّجْدَةُ وَاحِدَةً لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِيْنَ ثُمَّ قَالَ اَبُوْ هُرَيْرَةَ وَاقْرَاُوْا اِنْ شِئْتُمْ "وَاِنْ مِّنْ اَهْلِ الْكِتَابِ اِلَّا لَيُؤْمِنَنَّ بِهٖ قَبْلَ مَوْتِهٖ" قال ابو هريرة قبل موت عيسىٰ- يعيدها ثلاث مرات (٢) يعني (حضرت عيسىٰ بن مريم عليه الصلواة والسلام ) جن عادل، حاڪم ٿي ضرور لهندا ۽ ضرور ضرور دجال کي قتل ڪندا. (۽ عيسائي سڏائڻ وارن جي) صليب کي ڀڃندا ۽ سجدو صرف جهانن جي پالڻهار، الله تعالىٰ جي لاءِ هوندو. ان کان پوءِ حضرت ابو هريره رضي الله عنه فرمايو تہ: جيڪڏهن (دليل) گهرو ٿا تہ (آيت مبارڪ) "وَاِنْ مِّنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ اِلَّا لَيُؤْمِنَنَّ بِهٖ قَبْلَ مَوْتِهٖ" پڙهو- (۽ هر اهل ڪتاب ان تي سندس وفات کان اڳ ۾ ضرور ضرور ايمان آڻيندو) حضرت ابو هريرة رضي الله عنه فرمايو تہ "قَبْلَ مَوْتِهٖ" مان مراد آهي حضرت عيسىٰ عليه السلام

(١) نعيمي ص٦٦ ج٦ (٢) تفسيرالقرطبي ص١١ جلد٦

جي وفات کان اڳ ۾- اهو پاڻ ۾ ئي پيرا ورائي ورائي چوندو رهيو. " فَبِظُلْمٍ مِّنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا حَرَّمْنَا عَلَيْهِمْ طَيِّبٰتٍ اُحِلَّتْ لَهُمْ " "فَبِظُلْمٍ" جو تعلق ۽ واسطو مٿي ذڪر ڪيل "فبما نقضهم" سان آهي. يعني يهودين جي ظلم ۾ وڌن، وڏن گناهن جي ڪري (جن مان ڪيترن جو ذڪر سورة بقره ۾ گذري چڪو آهي) اسان انهن جي مٿان اهي پاڪ شيون جيڪي سندن لاءِ (۽ سندن وڏن لاءِ اڳ ۾) حلال هيون مٿن حرام ڪري ڇڏيون جن جو تفصيل انشاءالله تعالىٰ سورة الانعام ۾ ايندو ۽ انهن جو ڪو هڪ گناهه نه هو پر اهي وڏا مجرم هيا جو پاڻ ته نه سهڻا عقيدا رکندا هئا ۽ نه صالح عمل ڪندا هئا پر "وَبِصَدِّهِمْ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ كَثِيْرًا" گهڻن (ٻين) ماڻهن کي به الله تعالىٰ جي واٽ، حق واري رستي صراط مستقيم کان روڪيندا هئا. جيڪڏهن ڪو ماڻهو پاڻ الله تعالىٰ جي اطاعت کان محروم ٿو رهي مالڪ مٿي جي فرمانبرداري نه ٿو ڪري ته اهو به ڪو ننڍو گناهه ناهي پر جيڪو شخص ٻين کي هدايت جي رستي تي هلڻ ۽ حق جي قبول ڪرڻ کان روڪي ٿو ته ان کان وڌيڪ ڪير مجرم هوندو ئي ڪو نه.

## "دين کان روڪڻ جا ٻه رستا"

ڄاڻ گهرجي ته دين کان روڪڻ ۽ منع ڪرڻ جا ٻه رستا آهن ١- هڪ هي جو ماڻهن کي زبان ۽ طاقت استعمال ڪري حق جي قبول ڪرڻ کان روڪيو وڃي.

٢- ٻيو جيڪو پهرئين کان به وڌيڪ خطرناڪ آهي اهو هيءُ آهي جو انسان ڪلمو پڙهي، حق واري دين کي قبول به ڪري پر ان جي احڪام، اخلاقي ضابطن، ۽ معاشرتي قاعدن وغيرها تي نه عمل ڪري ۽ نه پنهنجي حالت سڌاري ته ان کي ڏسي ٻيون غير مسلم قومون هن دين کان متنفر ٿي وينديون، چوندا ته جڏهن ان جا پراڻا مڃڻ وارا ڪنهن حيثيت سان به ٻين کان اخلاق ۽ ڪردار ۾ ڀلا ناهن ته ان دين کي ڇو مڃيو وڃي؟

## تنبيه

مسلمانو! سوچيو ته ڇا هن وقت اسان جا اخلاق، اعمال ٻين کي ته

حق کان روکي نہ رهيا آهن ۽ پين لاءِ رکاوٽ نہ ناهن؟ "وَّاَخْذِهِمُ الرِّبٰوا وَقَدْ نُهُوْا عَنْهُ" يعني انهن کي وياج کائڻ کان روکيو ويو هو تنهن هوندي بہ سندن طرفان وياج وٺڻ سندن دنيوي تکليفن ۽ پريشانين جو سبب هو. سمجهڻ گهرجي تہ وياج وٺڻ هر حال ۾ هر نموني، کائڻ، پيئڻ، گڏ کري رکڻ، کنهن کي ڏيڻ، خيرات کرڻ، يا کنهن فلاح وبهبود جي کم ۾ لڳائڻ هر لحاظ سان حرام آهي. "وَقَدْ نُهُوْا عَنْهُ" (۽ تحقيق روکيا ويا ان کان) هن مان ثابت ٿيو تہ وياج حضرت موسيٰ عليه الصلواة والسلام جن جي شريعت موسويہ کان اڳ ۾ ابراهيمي ملت ۾ بہ حرام هيو "وَاَكْلِهِمْ اَمْوَالَ النَّاسِ بِالْبَاطِلِ" هي" اخذهم" تي معطوف آهي جنهن ۾ خاص حرام (وياج) جي ذکر کان پوءِ عام حرام کي بيان کيو ويو آهي. يعني ۽ انهن جي طرفان ماڻهن جو مال باطل طريقي سان کائڻ (بہ سندن هلاکت جو باعث بڻيو هو.

باطل سان کائڻ ۾ رشوت سان پئسا وغيره وٺڻ، زنا جي ذريعي کمائڻ، ناچ کرڻ، ملاوٽ سان مال وڌائڻ، مطلب تہ هر ناجائز طريقي سان کمائي کرڻ داخل آهي (١) "وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ مِنْهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا" يعني دنيا ۾ تہ انهن تي عذاب ۽ مصيبتون آيون پر انهن مان مري ويلن جي لاءِ بہ اسان دردناک عذاب تيار کري رکيو آهي "لٰكِنِ الرّٰسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ مِنْهُمْ وَالْمُؤْمِنُوْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِمَا اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَا اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ" يعني انهن (يهودين مان بہ سيئي هڪجهڙا ناهن) کي انهن مان جيکي علم ۾ پکا ۽ مومن آهن اوهان ڏانهن يا اوهان کان اڳ ۾ نازل کيل تي ايمان آڻين ٿا، علامہ آلوسي "الراسخون" جي مراد بيان کندي لکيو آهي تہ: الثابتون المتقنون منهم في العلم المستبصرون فيه غير التابعين للظن کاولئک الجهلة- يعني انهن مان علم ۾ ثابت رهندڙ، مضبوط ٿيندڙ ۽ بصيرت رکندڙ ۽ انهن جاهلن وانگر گمان جي تابعداري نہ کندڙ، هتي انهن مان مراد حضرت عبدالله بن سلام، اسيد، ثعلبہ ۽ انهن جهڙا بيا آهن (٢) خيال ۾ رکڻ گهرجي تہ سهڻي ۽ صحيح عقيدي وارا يا باعمل علماءِ بہ ان ۾ داخل آهن.

"وَالْمُقِيْمِيْنَ الصَّلٰوةَ وَالْمُؤْتُوْنَ الزَّكٰوةَ" ۽ نماز قائم کندڙ ۽ زکواة ڏيندڙ، هي بہ مٿي ذکر کيل پانهن جون صفتون آهن جيکي علم ۾ راسخ هجڻ

(١) نعيمي ص٧٣ جلد٤ (٢) روح المعاني ص١٤ جلد١ جزءِ ٦

۽ قرآن پاڪ ۽ اڳين ڪتابن تي ايمان آڻڻ سان گڏ نہ بي نمازي هوندا ۽ نہ زڪواة ڏيڻ کان پاسو ڪندا، بلڪ سخي هوندا. "وَالْمُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ" ۽ الله تعالىٰ ۽ قيامت جي ڏينهن تي ايمان آڻيندڙ جيتوڻيڪ الله تعالىٰ ۽ قيامت تي ايمان- مٿي ذڪر ڪيل "الْمُؤْمِنُوْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ" ۾ داخل آهي پر ان جي اهميت کي ظاهر ڪرڻ جي لاءِ هتي جدا بيان ڪيو ويو آهي، ڇو تہ ٻين سيني تي ايمان آڻڻ الله تعالىٰ تي ايمان آڻڻ جي ڪري تہ آهي ۽ اهوئي اصل مقصود آهي "اُولٰٓئِكَ سَنُؤْتِيْهِمْ اَجْرًا عَظِيْمًا" يعني انهن اڳيان ذڪر ڪيل مومنن کي جلدي وڏو ثواب ڏينداسون، جڏهن تہ ايمان ۽ صالح عمل جو اجر آخرت ۾ ملندو ۽ اها جلد اچڻ واري آهي، تڏهن ارشاد ٿيو تہ اسين انهن کي جلد وڏو اجر ڏينداسون جيڪو بيان کان ٻاهر آهي.

اِنَّآ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ كَمَآ اَوْحَيْنَآ اِلٰى نُوْحٍ وَّالنَّبِيّٖنَ مِنْۢ بَعْدِهٖ ۚ وَاَوْحَيْنَآ

بيشڪ اسان وحي ڪيوسون تو ڏانهن جيئن وحي ڪيو هوسون نوح ڏانهن ۽ نبين ڏانهن ان کانپوءِ ۽ وحي ڪيوسون

اِلٰٓى اِبْرٰهِيْمَ وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ وَالْاَسْبَاطِ وَعِيْسٰى

ابراهيم ۽ اسمٰعيل ۽ اسحاق ۽ يعقوب ۽ ان جي اولاد ۽ عيسىٰ

وَاَيُّوْبَ وَيُوْنُسَ وَهٰرُوْنَ وَسُلَيْمٰنَ ۚ وَاٰتَيْنَا دَاوٗدَ زَبُوْرًا ﴿١٦٣﴾

۽ ايوب ۽ يونس ۽ هارون ۽ سليمان ڏانهن ۽ ڏنوسون داؤد کي زبور

وَرُسُلًا قَدْ قَصَصْنٰهُمْ عَلَيْكَ مِنْ قَبْلُ وَرُسُلًا لَّمْ نَقْصُصْهُمْ عَلَيْكَ ۭ

۽ رسول جو بيان ڪياسون اهي اوهان جي اڳيان ۽ رسول جي نہ بيان ڪياسون اهي اوهان جي اڳيان

وَكَلَّمَ اللّٰهُ مُوْسٰى تَكْلِيْمًا ﴿١٦٤﴾ ۚ رُسُلًا مُّبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ لِئَلَّا

۽ ڳالهايو الله موسىٰ سان، خاص ڳالهائڻ، رسول بشارت ڏيندڙ ۽ ڊيڄاريندڙ تانت نہ

اسان (حضرت) موسىٰ (عليه السلام) جي ماءُ کي الهام ڪيو ٣- الله تعالىٰ جي طرفان طبعي فرضن کي پورو ڪرڻ لاءِ جيڪا هدايت ڪنهن کي فطري طور ملندي آهي ان کي بہ وحي سڏيو ويندو آهي. جيئن قرآن ڪريم ۾ آهي "وَاَوْحٰى رَبُّكَ اِلَى النَّحْلِ" (١) ۽ تنهنجي رب ماکيءَ کي وحي ڪيو ٣- ڪنهن کي ڳجهي نموني ڪنهن ڪم جي تعليم ڏيڻ کي بہ وحي سڏيو ويو آهي. جيئن ڪلام ڪريم ۾ آهي "يُوْحِيْ بَعْضُهُمْ اِلٰى بَعْضٍ زُخْرُفَ الْقَوْلِ (٢) پر جيڪو وحي نبين عليهم الصلواة والسلام ڏانهن ڪيو ويندو آهي ان جي تعريف هيءَ آهي: وحي الله الي انبيائه هو ما يلقيه اليهم من العلم الضروري الذي يخفيه عن غيرهم بعد ان يكون اعد ارواحهم ليلقيه بواسطة الملک او بغير واسطة"(٣)

يعني ان يقيني ۽ قطعي علم کي وحي چوندا آهن جيڪو الله تعالىٰ ٻين کان لڪائي پنهنجن نبين عليهم السلام جي دلين ۾ القاءِ فرمائيندو آهي جن جي پاڪ روحن کي ان پهريان کان ئي ان جي قبول ڪرڻ جي لاءِ تيار ڪري ڇڏيو آهي. ۽ اهو القاءُ ڪڏهن ملائڪ جي واسطي سان هوندو آهي تہ ڪڏهن واسطي کان سواءِ.

آيت جو مطلب هي آهي تہ اي حبيب! عليه الصلواة والسلام "اسان اوهان ڏانهن بہ ائين وحي ڪيو آهي جيئن نوح ۽ ان کان پوءِ ٻين نبين عليهم السلام ڏانهن وحي ڪيو هوسين، ۽ جڏهن انهن جي نبوت ۽ مٿن وحي جي نزول کي تسليم ڪن ٿا تہ اوهان تي ايمان ڇو نہ ٿا آڻين؟ حالانڪ انهن مان بہ ڪيترن کي نهيل، تيار ٿيل، سڄو ڪتاب آسمان تان لاهي نہ ڏنو ويو هو. "وَاَوْحَيْنَآ اِلٰٓى اِبْرٰهِيْمَ وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ وَالْاَسْبَاطِ وَعِيْسٰى وَاَيُّوْبَ وَيُوْنُسَ وَهٰرُوْنَ وَسُلَيْمٰنَ وَاٰتَيْنَا دَاوٗدَ زَبُوْرًا" يعني اسان جيئن اوهان ڏانهن وحي ڪيو آهي تيئن ابراهيم ۽ اسمٰعيل ۽ اسحاق ۽ يعقوب ۽ اسباط ۽ عيسىٰ ۽ ايوب ۽ يونس ۽ هرون ۽ سليمان ڏانهن بہ وحي ڪيو هيوسين ۽ داؤد کي زبور ڏنو هوسين، (علىٰ نبينا وعليهم السلام) هن آيت ۾ "اَلْاَسْبَاطِ" جو لفظ آيل آهي. اسباط سبط جو جمع آهي معني اولاد- جيئن عرب ۾ قبيله جو لفظ خاندان تي ڳالهايو ويندو آهي تيئن بني اسرائيل ۾ سبط جو لفظ خاندان لاءِ استعمال ڪيو ويندو آهي ۽ هتي انهن جي خاندان مان پيدا ٿيڻ وارا نبي

(١) سورة النحل آيت ٦٨ (٢) سورة الانعام آيت ١١٢ (٣) تفسير المنار ص٦٨ جلد٦

مراد آهن جن کي واحد جي جاءِ تي شمار ڪيو ويو آهي. ڀيو لفظ "زَبُوْرًا" آهي جيڪو فعول جي وزن تي مزبور جي معنيٰ ۾ آهي، يعني ڪتاب- الله تعاليٰ حضرت داؤد عليه السلام کي ٻه ڪتاب ڏنو هو جنهن جو نالو زبور هو ان ۾ مناجات، دعا، عاجزي، الهي احڪام، شريعت جي پابندي جي ترغيب، عمديون ۽ پليون نصيحتون هيون (١)

" وَرُسُلًا قَدْ قَصَصْنٰهُمْ عَلَيْكَ مِنْ قَبْلُ وَرُسُلًا لَّمْ نَقْصُصْهُمْ عَلَيْكَ " يعني ۽ اهڙن رسولن کي ٻه موڪليوسون جن جا احوال هن کان اڳ ۾ سورة انعام وغيرها مڪي سورتن ۾ اوهان کي ٻڌايا اٿئون ۽ کي اهڙا رسول ٻه موڪليا هياسون جن جو اجان اوهان سان احوال نه ڪيو هيوسون (٢) ياد رکڻ گهرجي ته هن جملے ۾ نبين عليهم السلام جي قصي کي قرآن پاڪ ۾ بيان ڪرڻ جي نفي آهي حضور عليه الصلواة والسلام جن جي علم جي نفي ناهي. ڪين سڀني نبين عليهم الصلواة والسلام جو تفصيلي علم ڏنو ويو هو. معراج واري رات سڀني نبين عليهم الصلواة والسلام سندن پويان نماز پڙهي هئي ۽ حضور عليه الصلواة والسلام جن جي مٿان صرف قرآن پاڪ جو وحي نه پر ٻيا وحي ٻه ڪيا ويا هئا جن مان ڪيترن جي ته جبريل عليه السلام کي ٻه خبر نه هئي جيئن فرمان مقدس آهي "فَاَوْحٰۤى اِلٰى عَبْدِهٖ مَاۤ اَوْحٰى" (٣) يعني پوءِ پنهنجي ٻانهي ڏانهن جيڪو وحي ڪرڻو هوس ڪيائين.....

مٿئين جملي ۾ انهن ماڻهن جي غلط فهميءَ جو ٻه ازالو ڪيو ويو جيڪو چوندا آهن ته انبياء عليهم الصلواة والسلام صرف اهي ٿيا جن جا نالا قرآن پاڪ ۾ ذڪر ڪيا ويا آهن. الله تعاليٰ فرمايو ته ٻيا رسول ٻه گذريا آهن جن جو قرآن ڪريم ۾ اوهان سان احوال نه ڪيو اٿئون.

علامه آلوسي عليه الرحمة لکيو آهي ته حضور عليه الصلواة والسلام جن کي سڀني نبين عليهم الصلواة والسلام جو علم ڏنو ويو هو. "لَمْ نَقْصُصْهُمْ عَلَيْكَ" ۾ ماضي ۾ بيان ڪرڻ جي نفي آهي مستقبل ۾ علم عطا ڪرڻ جي نفي ناهي. لان نفي قصهم من قبل لا يستلزم نفي قصهم مطلقا.

---

(١) تفسير حقاني ص٢٤٩ جلد سوم (٢) بيان القرآن ص٦١٠ جلد٢ مع معارف القرآن
(٣) سورة النجم آيت ع-١٠

علامه موصوف لکيو آهي تہ رسولن عليهم الصلواة والسلام جو تعداد ٽي سؤ تيرنهن (٣١٣) هيو ۽ انبياءِ ڪرام عليهم الصلواة والسلام جو تعداد هڪ لک چو ويهہ هزار (١٢۴٠٠٠) هيو (١) ڪي روايتون عدد گهٽ وڌ بہ بيان ڪن ٿيون وَاللّٰهُ اَعْلَمُ (٢) "وَكَلَّمَ اللّٰهُ مُوسٰى تَكْلِيمًا" هن جملي ۾ حضرت موسىٰ عليه السلام جي خصوصي صفت جو ذڪر ڪندي ٻڌايو ويو آهي تہ : اللّٰہتعاليٰ حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام سان بار بار ڳالهايو ۽ فرشتي جي واسطي کان سواءِ ڳالهايو تانجو سندن لاءِ وحي جي ابتداءِ بہ الله تعاليٰ ساڻن ڳالهائڻ سان ڪئي.

## قاديانين جي طرفان معنوي تحريف

جاڻڻ گهرجي تہ حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام سان الله تعاليٰ جي ڳالهائڻ واري معجزي جو قاديانين انڪار ڪيو آهي ۽ هن جي معنيٰ ۾ چون ٿا تہ بنا واسطي جي ڳالهائڻ نہ پر ملائڪ جي واسطي سان ڳالهائڻ مراد آهي مگر اهو چوڻ سندن بي علمي ۽ بي عقليءَ جو کليو ثبوت آهي. انهن کي ذهن نشين ڪرڻ گهرجي تہ جيڪڏهن ملائڪ جي واسطي سان ڳالهائڻ مراد آهي تہ پوءِ اهو تہ ٻين نبين عليهم الصلواة والسلام سان بہ هيو پوءِ حضرت موسىٰ عليه الصلاة والسلام جن جي ان ۾ خصوصيت ڪهڙي؟

## محبوب عليه الصلواة والسلام سان الله تعاليٰ پردي کان سواءِ ڳالهايو

قرآن ڪريم جي مفسرن ڀلارن لکيو آهي تہ الله تعاليٰ حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام سان حجاب ۽ پردي جي پويان ڳالهايو مگر حضور عليه الصلواة والسلام جن سان پردي کان سواءِ کين پنهنجو ديدار ڪرائيندي ڳالهايو ۽ موسىٰ عليه الصلواة والسلام سان طور جبل جي برڪت واريءَ واديءَ ۾ ڳالهايو حبيب ڪريم عليه الصلواة والسلام جن سان عرش کان مٿان- علامه آلوسي عليه الرحمة هن آيت جو تفسير لکندي فرمايو آهي تہ: وقد وقع التكليم ايضا لنبينا محمد صلى الله عليه وسلم فى الاسراءِ مع زيادة رفعه بل ما من معجزة لنبي من الانبياءِ عليهم الصلواة والسلام

(١) روح المعاني ص١٧ جلد٢ جزءِ٦ (٢) مسند امام احمد ص٢٦٦ جلد٥

الا لنبينا صلى الله عليه تعالىٰ عليه وسلم مثلها مع زيادة شرف له شرفه الله تعاليٰ بل ما من ذرة نور شعت في العالمين الا تصدقت بها شمس ذاته صلى الله عليه وسلم ولله سبحانه درالبوصيري حيث بقول-

وَكُلُّ اٰيٍ اٰتَی الرُّسُلُ الْكِرَامُ بِهَا
فَاِنَّمَا اتَّصَلَتْ مِنْ نُوْرِهٖ بِهِمُ

فصلى الله تعالىٰ عليه وسلم تسليما كثيرا (١)

يعني اهو ڳالهائڻ وارو معاملو تہ اسان جي نبي محمد صلي الله تعاليٰ عليه وسلم جن لاءِ معراج ۾ واقع ٿيو هو بلڪ ڪو بہ معجزو ڪنهن نبي عليه السلام کي مليو هو تہ ان جهڙو بلڪ ان ڪان زياده شرف سان اسان جي نبي عليه الصلواة والسلام جن کي مليو هو بلڪ جيڪو بہ نور جو ذرو دنيا تي شعاع ڪري رهيو آهي اهو سندن ئي ذات جي سج جو صدقو ڪڍيل آهي ۽ علامه شرف الدين بوصيريءَ عليه الرحمة جو الله ڀلو ڪري جو فرمايو اٿس تہ- جيڪي معجزا بہ اڳيان رسول عليهم الصلواة والسلام ڪٺي آيا اهي انهن وٽ حضور عليه الصلواة والسلام جن جي نور ڪان پهتا هئا- علامه ثناءُ الله پاني پتي عليه الرحمة لکيو آهي تہ واعطاه مثل ما اعطي كل واحد من الانبياء مع مزيد فضل (٢) يعني الله تعاليٰ حضور عليه الصلواة والسلام جن کي ٻين نبين عليهم الصلواة والسلام کي ڏنل معجزن جهڙا بلڪ انهن ڪان وڌيڪ بہ ڏنا آهن.

روايت ۾ آيو آهي تہ جڏهن حضرت موسيٰ عليه الصلواة والسلام طور سينا وٽ آيو تہ الله تعاليٰ اتاهين شيطان کي ۽ جيتن کي بہ تڙائي ڇڏيو هو ۽ الله تعاليٰ ان جي لاءِ آسمان جو پردو کوليو تہ اتي ملائڪن کي بيٺل ڏنائين ۽ الله تعاليٰ کيس پنهنجو قدرتي ڪلام ٻڌايو (٣) ابن مردويہ حضرت ابو هريره رضي الله عنه ڪان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله عليه وسلم جن فرمايو "لما كلم الله موسىٰ كان يبصر دبيب النمل على الصفا في الليلة الظلماء (۴) يعني جڏهن الله تعاليٰ (حضرت) موسيٰ (عليه الصلواة والسلام) سان ڳالهايو تہ انڌيريءَ رات ۾ سنهڙي ڪول جو جبل

(١) روح المعاني ص١٨ جلد٢ جزء ٦ (٢) مظهري ص٤٥٩ جلد٢
(٣) تنويرالاذهان ص٢٩٦ جلد١ (۴) ابن كثير ص٥٨٨ ج١

تي هلڻ ۽ چرڻ ڏسندو هو.

محدث حاکم پنهنجي مستدرڪ ۾ ۽ ابن مردويه حضرت عبدالله بن مسعود رضي الله تعالىٰ عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم جن فرمايو تہ جنهن ڏينهن موسىٰ عليه السلام الله تعالىٰ سان ڳالهايو هو تہ سندس جسم مبارڪ تي صوف جو جبو، صوف جي چادر ۽ صوف جي ڪائنچ ڍڪيل هئي. ابن مردويہ حضرت ابن عباس رضي الله عنهما کان روايت آندي آهي تہ: الله تعالىٰ حضرت موسىٰ عليه الصلواة والسلام کي ٽن ڏينهن ۾ هڪ لک چاليهہ هزار (١٤٠٠٠٠) ڪلمات ارشاد فرمايا جن سيني ۾ احکام هيا. ان کان پوءِ جڏهن موسىٰ عليہ السلام ماڻهن جو ڳالهائڻ ٻڌو تہ اهو ان کي بلڪل نہ وڻيو ڇو تہ رب العالمين جي ڪلام جوا ثر ان تي ويٺو هو (١) "رُسُلًا مُّبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ" يعني اسان انهن رسولن کي مومنن جي لاءِ اخروي ڇوٽڪاري ۽ ڪاميابيءَ جي خوشخبريءَ ڏيندڙ ۽ مشرڪن ۽ بدڪارن کي ان جي سخت سزا کان ڊيڄاريندڙ بنائي موڪليو هو. اي منڪرو! اها خوشخبري ڏيڻ ۽ ڊيڄارڻ واري صفت نبين ۾ آخري نبي عليه وعليهم الصلواة والسلام ۾ ڏسو تہ عليٰ وجه الڪمال آهي يا نہ- جيڪڏهن آهي ۽ يقينًا آهي تہ پوءِ ڪيس الله تعالىٰ جو نبي ڪري نہ مڃڻ جو وجه ڇا؟ ۽ جن کي اوهان نبي ڪري مڃيو ٿا انهن جي مڃڻ لاءِ انهن جي مڃڻ جو وجه ڇا؟ ۽ ٻيا ڪهڙا دليل آهن؟ جيڪي انهن لاءِ قائم ڪندؤ اهي سمورا هن ذات عالى صفات ۾ مڪمل طور موجود آهن. "لِئَلَّا يَكُوْنَ لِلنَّاسِ عَلَى اللّٰهِ حُجَّةٌ بَعْدَ الرُّسُلِ" يعني رسول سڳورا عليهم الصلواة والسلام دنيا تي ان لاءِ موڪلياسون تانت ماڻهن جي لاءِ الله تعالىٰ جي اڳيان رسولن عليهم الصلواة والسلام جي موڪلڻ کان پوءِ ڪا حجت قائم نہ رهي. نہ تہ چون ها تہ يا الله! اسان جو ناقص عقل اخروي امرن، سهڻن ۽ غير سهڻن عملن ۽ تنهنجي راضي يا ناراض رهڻ کي سمجهڻ لاءِ ڪافي نہ هو تو پنهنجي طرفان پيغمبر ڇو نہ موڪليا؟

پيغمبرن ڀلارن کي موڪلي انهن جي اها حجتءِ دليل بازي ختم ڪئي وئي.

---

(١) ابن ڪثير ص٥٨٨ ج١

يَكُوْنَ لِلنَّاسِ عَلَى اللّٰهِ حُجَّةٌۢ بَعْدَ الرُّسُلِ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا حَكِيْمًا ﴿١٦٥﴾

هجي ماڻهن جي لاءِ ڪو دليل رسولن کان پوءِ ۽ آهي الله غالب حڪمت وارو.

لٰكِنِ اللّٰهُ يَشْهَدُ بِمَآ اَنْزَلَ اِلَيْكَ اَنْزَلَهٗ بِعِلْمِهٖ ۚ وَالْمَلٰٓئِكَةُ

پر الله شاهدي ٿو ڏي ان جي جو لاٿائين تو ڏانهن ته لاٿائين ان کي پنهنجي علم سان ۽ ملائڪ

يَشْهَدُوْنَ ؕ وَكَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيْدًا ﴿١٦٦﴾

شاهدي ڏين ٿا ۽ ڪافي آهي الله شاهد.

## تفسير

هن ڪان پهريان يهودين جي ان مطالبي جو ذڪر ٿيو ته اوهان سڄو قرآن پاڪ ڪتابي صورت ۾ هڪ وقت لاهيو ته اسين ايمان آڻينداسون نه ته نه- ان ڪان پوءِ ارشاد ٿيو ته انهن جو اهو مطالبو محض ضد ۽ سرڪشيءَ جي ڪري هيو ۽ انهن جي عناد ۽ سرڪشيءَ جا ڪجهه واقعا بيان ڪيا ويا- هاڻي هتي وري به انهن جي ان مطالبي جو (ته اسان تي ڪتابي صورت ۾ پورو قرآن لاهيو) جواب ڏيندي ٻڌايو ٿو وڃي ته- "اِنَّآ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ كَمَآ اَوْحَيْنَآ اِلٰى نُوْحٍ وَّالنَّبِيّٖنَ مِنْۢ بَعْدِهٖ" اَوْحَيْنَا جمع مثلڪم ماضيءَ جو صيغو آهي جنهن جو مادو وحي آهي، وحي جي لغوي معنيٰ اشارو ڪرڻ آهي جيئن فرمان ايزدي آهي "فَاَوْحٰٓى اِلَيْهِمْ اَنْ سَبِّحُوْا بُكْرَةً وَّعَشِيًّا" (١) (پوءِ انهن ڏانهن اشارو ڪيائين ته صبح ۽ شام الله تعاليٰ جي تسبيح پڙهو) ۽ اصطلاح ۾ ان جو اطلاق مختلف معنائن تي ٿيندو آهي ١- الهام جي طريقي سان ڪنهن شيءِ کي ڪنهن جي دل ۾ وجهڻ، جيئن الله تعاليٰ جو ارشاد آهي "وَاَوْحَيْنَآ اِلٰٓى اُمِّ مُوْسٰٓى" (٢) ۽

(١) سورة مريم آيت عـ١١ (٢) سورة القصص آيت عـ٧

" وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا حَكِيْمًا " هن جملي ۾ الله تعالىٰ جي نبين عليهم الصلواة والسلام جو مختلف قومن، ٻولين ۽ زمانن ۾ اچڻ جي حڪمت ڏي اشارو آهي يعني الله تعالىٰ هميشہ غالب آهي جيڪي گهري ڪري سگهي ٿو- جيڪڏهن صرف هڪ نبي موڪلي ها تہ بہ مرضي وارو آهي پر ان سان گڏ حڪمت وارو بہ آهي. ان جي طرفان مختلف نبين عليهم السلام کي مختلف شانن وارو بنائي موڪلڻ ۾ بہ لکين حمڪتون آهن. "لٰكِنِ اللّٰهُ يَشْهَدُ بِمَا اَنْزَلَ اِلَيْكَ اَنْزَلَهٗ بِعِلْمِهٖ" جڏهن منڪرن مٿين سڀني بيانن کان پوءِ بہ شڪ ڪيو نہ مڃيو تڏهن الله تعالىٰ پنهنجي پياري نبي عليه الصلواة والسلام کي تسلي ڏيندي فرمايو تہ اهي جيڪڏهن اوهان جي پيغمبر هجڻ جي شاهدي نہ ٿا ڏين تہ ڪا ڳالهہ ناهي پر اللهتعالىٰ ان جي شاهدي ڏي ٿو تہ جيڪو قرآن اوهان ڏانهن نازل ڪيو اٿس اهو ان پنهنجي علم سان نازل ڪرڻ فرمايو آهي سوچ ۽ سمجهہ کان سواءِ نازل ڪيل ناهي. "وَالْمَلٰٓئِكَةُ يَشْهَدُوْنَ وَكَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيْدًا" ۽ ان قرآن پاڪ جي حق هجڻ واريءَ الله تعالىٰ جي شاهديءَ تي ملائڪ بہ شاهدي ڏين ٿا. ۽ملائڪن جي اها شاهدي انسانن کان اڳ ۾ آهي ڇو تہ انهن جو وجود بہ انسانن جي وجود کان لکين سال اڳ ۾ آهي سمجهڻ گهرجي تہ الله تعالىٰ جي شاهديءَ ۽ ملائڪن جي شاهديءَ جي نوعيت ۽ مقصد ۾ وڏو فرق آهي ان جي ڪري الله تعالىٰ جي لاءِ "يشهد" جو لفظ جدا ۽ ملائڪن جي لاءِ "يشهدون" جدا آندو ويو آهي.

"وَكَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيْدًا" ۽ الله تعالىٰ شاهد هجڻ لاءِ ڪافي آهي. ٻيا شاهدي ڏين يا نہ ڏين اوهان جي رسالت، نبوت، عزت، مرتبي ۽ مان ۾ ڪو فرق نہ پوندو جنهن جو شاهد الله پاڻ آهي ان کي ڪا پرواهہ ڪا نہ آهي.

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَصَدُّوْا عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ قَدْ ضَلُّوْا ضَلٰلًا

بيشڪ جن ڪفر ڪيو ۽ روڪيائون الله جي واٽ کان تحقيق گمراهہ ٿيا

بَعِيْدًا ﴿١٦٧﴾ اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَظَلَمُوْا لَمْ يَكُنِ اللّٰهُ لِيَغْفِرَ لَهُمْ

گمراهي پرانهين بيشڪجن ڪفر ڪيو ۽ ظلم ڪيائون ناهي الله تانت بخشي انهن کي

وَلَا لِيَهْدِيَهُمْ طَرِيقًا ﴿١٦٨﴾ اِلَّا طَرِيْقَ جَهَنَّمَ خَالِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ۭ

۽ نہ تانت ڏيکاري انھن کي واٽ مگر واٽ جھنم جي رھندڙ ھوندا ان ۾ ھميشه

وَكَانَ ذَالِكَ عَلَى اللّٰهِ يَسِيْرًا ﴿١٦٩﴾ يَآاَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَآءَكُمُ

۽ آھي اھو الله تعالىٰ جي اڳيان آسان- اي انسانو! تحقيق آيو اوھان وٽ

الرَّسُوْلُ بِالْحَقِّ مِنْ رَّبِّكُمْ فَاٰمِنُوْا خَيْرًا لَّكُمْ ۭ وَاِنْ تَكْفُرُوْا فَاِنَّ لِلّٰهِ مَا

رسول حق سان پوءِ ايمان آڻيو تہ ڀلو آھي اوھان جي لاءِ ۽ جيڪڏھن ڪفر ڪندؤ پوءِ بيشڪ الله جي لاءِ آھي جيڪو

فِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ﴿١٧٠﴾

آسمانن ۾ ۽ زمين ۾ آھي ۽ آھي الله ڄاڻندڙ حڪمت وارو-

## تفسير

هن کان اڳ حضور عليه الصلواة والسلام جن کي تسلي ڏيارينديءَ ٻڌايو ويو هو تہ الله تعالىٰ ۽ ان جا ملائڪ اوھان جي مٿان قرآن پاڪ جي نازل هجڻ ۽ حق هجڻ جا شاهد آهن هاڻي ان قرآن ڪريم ۽ صاحب قرآن کان منهن موڙيندڙن، ڪفر ڪندڙن جي گمراهي ۽ عاقبت کي بيان ڪندي ٻڌايو ويو آهي تہ "اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَصَدُّوْا عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ" يعني جيڪي شخص پاڻ ڪافر ٿيا ۽ ٻين کي بہ الله جي واٽ کان روڪيائون. نہ پاڻ مسلمان ٿيا ۽ نہ ٻين کي مسلمان ٿيڻ ڏنائون" قَدْ ضَلُّوْا ضَلٰلًا بَعِيْدًا " اهي يقينا گمراھ ٿيا پر نهايت پرانهين گمراهي- جو سندن هدايت وارو ٿيڻ مشڪل آهي. انهن جي مسلمان ٿيڻ جي اميد ئي نہ ڪرڻ گهرجي، ڇو تہ اهي ڪافر بہ آهن تہ ڪافر بنائيندڙ بہ- "اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَظَلَمُوْا لَمْ يَكُنِ اللّٰهُ لِيَغْفِرَ لَهُمْ " بيشڪ جن شخصن

ڪفر ڪيو ۽ بدڪارين ۽ بي ايمانيءَ سان پاڻ تي ظلم ڪيائون يا اسلام ڪان ٻين ڪي روڪي انهن تي ظلم ڪيائون يا اسلام جي باري ۾ ماڻهن ۾ شڪ ۽ شبها پيدا ڪري اسلام تي ظلم ڪيائون. الله تعاليٰ نہ انهن جا گناهہ بخشيندو نہ سندن عيبن ڪي لڪائيندو نہ ڪين ڪنهن قسم جي معافي ڏيندؤ ۽ نہ دنيا ۾ ڪين ذلت ۽ خواريءَ ڪان بچائيندو.

"وَلَا لِيَهْدِيَهُمْ طَرِيْقًا اِلَّا طَرِيْقَ جَهَنَّمَ" يعني الله تعاليٰ اهڙن ڪافرن، ظالمن ڪي نہ دنيا ۾ نيڪ عملن جي رهنمائي ڪندو ۽ نہ آخرت ۾ جهنم جي واٽ ڪان سواءِ ٻي واٽ (جنت واري) ڏيکاريندو "خَالِدِيْنَ فِيْهَا اَبَدًا" ان ۾ هميشہ رهيا پيا هوندا نہ اتي مرندا نہ اتاهين نڪرندا "وَكَانَ ذَالِكَ عَلَى اللهِ يَسِيْرًا" ۽ اهو الله تعاليٰ جي لاءِ آسان آهي. ڪنهن ڪي ڪيتري بہ سزا ڏي يا ڪنهن تي ڪيترو رحم ڪري ان جي لاءِ ڪو مشڪل نہ آهي، علامہ رازي عليه الرحمة لکيو آهي تہ مٿي ذڪر ڪيل صفتون سڀ يهودين جون آهن، جيڪي اهي سيئي شيطاني ڪم ڪندا هيا. (١)

"يَا اَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَاءَكُمُ الرَّسُوْلُ بِالْحَقِّ مِنْ رَّبِّكُمْ فَاٰمِنُوْا خَيْرًا لَّكُمْ" جاڻن گهرجي تہ الله تعاليٰ يهودين جي شبهات جا گهڻن وجهن سان جواب ڏئي، انهن جي طريقي جون خرابيون بيان ڪري هاڻي محمدي دين ڏانهن دعوت لاءِ عام خطاب فرمايو آهي جيڪو انهن ۽ ٻين سيني ڪي شامل آهي، يعني- اي انسانو! بلاشڪ اوهان وٽ رسول (ﷺ) حق واري دين، هدايت، شافي ۽ ڪافي بيان سان آيو آهي. پوءِ ايمان آڻيو تہ اوهان لاءِ ڀلو آهي خيال ۾ رکڻ گهرجي تہ "يَا اَيُّهَا النَّاسُ" ۾ خطاب قيامت تائين اچڻ وارن سيني انسانن سان آهي. جيئن "اَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ، وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ" ۾ حڪم قيامت تائين اچڻ وارن سيني مسلمانن لاءِ آهي تانجو حضرت الياس عليه السلام ۽ خضر سڳورو جيڪو ان آيت جي نازل ٿيڻ وقت زمين تي موجود هيو. اهي بہ ان ۾ داخل آهن (٢) "وَاِنْ تَكْفُرُوْا فَاِنَّ لِلّٰهِ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا" يعني جيڪڏهن اوهان سيئي ڪفر ڪندؤ، ايمان نہ آڻيندؤ تہ الله تعاليٰ ڪي ڪا پرواهہ ناهي، ڇو تہ يقينًا جو ڪجهہ آسمانن ۽ زمين ۾ آهي ان جي ملڪيت آهي ۽ الله تعاليٰ ڄاڻندڙ، حڪمت وارو آهي جنهن پنهنجيءَ حڪمت سان حضور عليه الصلواة والسلام

(١) تفسير ڪبير ص١١٢ جزء١١ (٢) نعيمي ص١١٦ ج٦

جن کي ساري ڪائنات لاءِ آخري ۽ دائمي نبي بنائي موڪليو آهي.

يَآاَهْلَ الْكِتَابِ لَا تَغْلُوْا فِیْ دِيْنِكُمْ وَلَا تَقُوْلُوْا عَلَى اللّٰهِ اِلَّا الْحَقَّ ؕ

اي اهل ڪتاب! نہ وڌاءُ ڪيو دين پنهنجي ۾ ۽ نہ چئو الله جي بابت حق کان سواءِ

اِنَّمَا الْمَسِيْحُ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ رَسُوْلُ اللّٰهِ وَكَلِمَتُهٗ ۚ

تحقيق مسيح عيسىٰ پٽ مريم جو الله جو رسول ۽ ان جو حڪم آهي

اَلْقٰهَآ اِلٰى مَرْيَمَ وَرُوْحٌ مِّنْهُ فَاٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ ۚ وَلَا تَقُوْلُوْا

جاري ڪيائين ان کي مريم ڏانهن ۽ روح آهي ان جي طرفان پوءِ ايمان آڻيو الله تي ۽ ان جي رسولن تي ۽ نہ چئو

ثَلٰثَةٌ ؕ اِنْتَهُوْا خَيْرًا لَّكُمْ ؕ اِنَّمَا اللّٰهُ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ ؕ سُبْحٰنَهٗٓ اَنْ

تہ ٽي (خدا) آهن رڪجو (ٽن خدائن چوڻ کان) تہ ڀلو آهي اوهان جي لاءِ تحقيق سچو معبود. معبود هڪڙو آهي پاڪ آهي

يَّكُوْنَ لَهٗ وَلَدٌ ۘ لَهٗ مَا فِی السَّمٰوٰتِ وَمَا فِی الْاَرْضِ ؕ وَكَفٰى

ان کان جو هجي ان جي لاءِ اولاد- ان جي آهي اها شيءِ جو آسمانن ۾ آهي ۽ اها جو زمين ۾ آهي ۽ ڪافي آهي

بِاللّٰهِ وَكِيْلًا ﴿١٧١﴾ ع

الله ڪم ٺاهيندڙ.

وقف لازم

## تفسير

هن ڪان اول حضرت عيسىٰ عليه السلام جن جي بي ادبي ڪرڻ جي ترديد ڪئي وئي هاڻي ان جي شان ۾ غلو (تجاوز ڪرڻ) کان روڪيندي ارشاد ٿيو آهي

تہ "يَآ اَهْلَ الْكِتَابِ لَا تَغْلُوْا فِيْ دِيْنِكُمْ وَلَا تَقُوْلُوْا عَلَى اللّٰهِ اِلَّا الْحَقَّ" يعني اي اهل كتاب! پنهنجي دين ۾ غلو نہ ڪيو جو حضرت عيسىٰ عليه السلام کي خدا يا خدا جو پٽ سڏي رهيا آهيو ۽ الله تعالىٰ جي باري ۾ حق کان سواءِ ڪجهہ بہ نہ چئو، جيئن کي چون ٿا تہ "اِنَّ اللّٰهَ ثَالِثُ ثَلَاثَةٍ" الله ٽن ۾ ٽيون آهي ۽ باقي ٻہ هڪ حضرت عيسىٰ ۽ ٻيو جبرئيل عليهما السلام آهن اهو چوڻ غلط آهي "اِنَّمَا الْمَسِيْحُ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ رَسُوْلُ اللّٰهِ وَكَلِمَتُهٗ اَلْقٰهَآ اِلٰى مَرْيَمَ وَرُوْحٌ مِّنْهُ"، يعني مريم جو پٽ مسيح نہ خدا آهي نہ خدا جو پٽ - اهو تہ صرف الله جو رسول ۽ ان جو ڪلمہ آهي جنهن کي مريم ڏانهن (جبرئيل عليه السلام جي واسطي سان) پهچايو هيائين هتي "كَلِمَةٌ" جي لفظ ڏانهن توجهہ ڏيڻ گهرجي، حضرت امام غزالي عليه الرحمہ حضرت عيسىٰ عليه السلام جي مثان ڪلمة جي لفظ ڳالهائڻ جو وجه بيان ڪندي فرمايو آهي تہ دنيا ۾ جيڪو بہ ٻچو ڄمندو آهي ان جي وجود جا ٻہ سبب هوندا آهن ١- هڪ تہ الله تعالىٰ ان جي پيدا ڪرڻ جو ارادو فرمائي ۽ پنهنجي قدرتي زبان سان "كُنْ" چئي ان جي ظهور جي اجازت ڏي. ٢- ٻيو مني جو مادو جيڪو ماءُ جي پيٽ ۾ قرار وٺي ۽ مقرر وقت گذرڻ کان پوءِ ان جي ولادت ٿئي. حضرت عيسىٰ عليه السلام جي معاملي ۾ جڏهن قطعي دليلن سان منيءَ جو مادو ثابت ناهي تڏهن پهرئين سبب ڪلمہ "كُنْ" ڏانهن ان جي نسبت ڪري ٻڌايو ويو آهي تہ حضرت عيسىٰ عليه السلام الله تعالىٰ جو ڪلمہ آهي ۽ ان لحاظ سان کيس ڪلمة الله يا "ڪلمةمنه" سڏيو ويندو آهي. "وروح منه" ۽ ان جي طرفان روح آهي روح اها شيءِ آهي جنهن سان حياتي قائم رهي ۽ حياتي ٻہ قسم آهي ١- هڪ حسي- ٢- ٻي معنوي.

حسي اها آهي جنهن سان گهمڻ، ڦرڻ، ڳالهائڻ ٻولهائڻ، ٻڌڻ ۽ سمجهڻ وغيره جهڙا ڪم صادر ٿين ۽ معنوي اها آهي جنهن سان سٺا اخلاق، رحم، سخاوت، محبت وغيره ظاهر ٿين.

ان جي ڪري قرآن پاڪ کي روح سڏيو ويو آهي ڇو تہ اهو بہ معنوي حياتيءَ جو سبب آهي.

حضرت عيسىٰ عليہ الصلواة والسلام جڏهن تہ حسي، معنوي ٻنهي حياتين جو اتم ۽ اڪمل مظهر آهي، ان جي ڪري ان کي مبالغي طور روح سڏيو ويو

آهي.جيئن گھٽي حسين کي حسن مجسم سڏبو آهي (١)

## فائدو

روح جي اضافت الله تعاليٰ ڏانهن جزءِ هجڻ جي لحاظ سان نہ پر ان جي شرف ۽ ڀلائي بيان ڪرڻ جي لاءِ آهي ۽ اها اضافت عرب جي ٻوليءَ ۾ گھڻي هوندي آهي. جيئن الله تعاليٰ شيطان کي تنبيہ ڪندي فرمايو هو تہ "اِنَّ عِبَادِيْ لَيْسَ لَکَ عَلَيْهِمْ سُلْطَانٌ" يقينن منهنجي ٻانهن تي تنهنجو غلبو ناهي هتي "عبادي" ۾ نيڪن ٻانهن جي نسبت الله تعاليٰ پاڻ ڏي انهن جي مخصوص ۽ مقبول هجڻ جي ڪري ڪئي آهي، نہ تہ مؤمن، ڪافر نيڪ ۽ گنهگار سيئي ٻانها تہ ان جا آهن.

اهڙي نموني روح الله يا روح منه واري نسبت آهي، ان مان اهو سمجهڻ تہ حضرت عيسيٰ عليه السلام الله تعاليٰ جو جزءِ آهي، بلڪل ناحق آهي، قرآن ڪريم ۾ حضرت آدم عليه السلام جي لاءِ آيو آهي "نَفَخْتُ فِيْهِ مِنْ رُّوْحِيْ" مون ان ۾ پنهنجو روح ڦوڪيو صرف حضرت آدم عليه السلام جي لاءِ نہ پر ساري اولاد آدم لاءِ آيو.

"ثُمَّ جَعَلَ نَسْلَهٗ مِنْ سُلٰلَةٍ مِّنْ مَّآءٍ مَّهِيْنٍ ثُمَّ سَوّٰهُ وَنَفَخَ فِيْهِ مِنْ رُّوْحِهٖ" يعني الله تعاليٰ (آدم عليه السلام جي) نسل کي مني جي ناپسند ڪيل پاڻيءَ مان ٺاهي ان کان پوءِ سندن عضون کي برابر بنائي ان ۾ پنهنجو روح ڦوڪيو. صرف حضرت آدم (عليه السلام) ۽ ان جو نالو نہ پر الله تعاليٰ ڪائنات جي هر شيءِ کي پاڻ ڏانهن نسبت ڪندي ارشاد فرمايو آهي "وَسَخَّرَ لَکُمْ مَّا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ جَمِيْعًا مِّنْهُ" ۽ جيڪي آسمانن ۾ ۽ جيڪي زمينن ۾ آهي اوهان جي لاءِ مسخر ڪيائين سڀ ان کان آهي جيئن انهن قرآني آيتن ۾ "من روحي "، يا "من روحه " يا "منه" جي لفظن سان آيل مٿيون شيون الله تعاليٰ جو جزءِ ناهن تيئن حضرت عيسيٰ عليه السلام جن بہ الله جو جزءِ ناهن.

## هڪ عيسائيءَ جو اسلام قبول ڪرڻ

هڪ ڀيري خليفہ هارون رشيد جي دربار ۾ هڪ عيسائي طبيب جو

هڪ مسلمان عالم علي بن حسين واقديءَ سان مناظرو ٿيو. عيسائيءَ چيو تہ اوهان مسلمانن جي ڪتاب قرآن ۾ اهڙو لفظ موجود آهي جنهن مان ثابت ٿئي ٿو تہ حضرت عيسىٰ الله تعالىٰ جو جزءُ آهي ۽ دليل ۾ مٿي لکيل آيت جو لفظ "وَرُوْحٌ مِّنْهُ" پڙهيائين.

علامه واقدي آيت مبارڪه "وَسَخَّرَ لَكُمْ مَّا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الْاَرْضِ جَمِيْعًا مِّنْهُ" پڙهي ان کي فرمايو تہ جيڪڏهن "روح منه" سان حضرت عيسىٰ عليہ السلام کي الله تعالىٰ جو جزءُ هجڻ ثابت ٿا ڪيو تہ پوءِ هن آيت ۾ "جَمِيْعًا مِّنْهُ" سان ثابت ڪيو تہ ساري ڪائنات الله جو جزءُ آهي. اهو جواب ٻڌي اهو عيسائي طبيب لاجواب ٿيو ۽ ڪلمو پڙهي اسلام قبول ڪيائين (١)

" فَاٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَلَا تَقُوْلُوْا ثَلٰثَةٌ اِنْتَهُوْا خَيْرًا لَّكُمْ " يعني پوءِ الله تعالىٰ ۽ ان جي رسولن عليهم السلام تي ايمان آڻيو ۽ ٽي خدا نہ چئو، ان چوڻ کان رڪجو ۽ ٻين کي بہ روڪيو تہ اوهان لاءِ ڀلو هوندو.

"اِنَّمَا اللّٰهُ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ سُبْحٰنَهٗٓ اَنْ يَّكُوْنَ لَهٗ وَلَدٌ" سچو معبود صرف هڪ الله آهي. اهو ان ڳالھ کان هر نموني پاڪ آهي جو ان لاءِ اولاد هجي. "لَهٗ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الْاَرْضِ" جو ڪجھ آسمانن ۽ زمين ۾ آهي سڀ ان جي ملڪيت آهي ۽ اهو سڀني جو مالڪ آهي. "وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيْلًا" ۽ الله تعالىٰ ڪمن ناهڻ ۾ بہ پنهنجن ٻانهن لاءِ ڪافي آهي ان کي ئي حقيقي ڪارساز سمجهو ۽ ان تي ئي توڪل ڪيو.

لَنْ يَّسْتَنْكِفَ الْمَسِيْحُ اَنْ يَّكُوْنَ عَبْدًا لِّلّٰهِ وَلَا الْمَلٰٓئِكَةُ

هرگز نہ حياءُ ڪندو مسيح هن ڳالھ کان جو هجي ٻانهو الله جي لاءِ ۽ نہ ملائڪ

الْمُقَرَّبُوْنَ ۗ وَمَنْ يَّسْتَنْكِفْ عَنْ عِبَادَتِهٖ وَيَسْتَكْبِرْ

مقرب ۽ جيڪو حياءُ ڪندو ان جي عبادت کان ۽ هٺ ڪندو

فَسَيَحْشُرُهُمْ اِلَيْهِ جَمِيْعًا ﴿١٧٢﴾ فَاَمَّا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا

پوءِ جلد اٿاريندو انهن کي پاڻ ڏانهن مڙني کي پوءِ پر جن ايمان آندو

وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ فَيُوَفِّيْهِمْ اُجُوْرَهُمْ وَيَزِيْدُهُمْ مِّنْ فَضْلِهٖ ۚ

۽ڪيائون سٺا ڪم پوءِ ڏيندو انهن کي ثواب انهن جا ۽ وڌائيندو انهن کي پنهنجي فضل سان

وَاَمَّا الَّذِيْنَ اسْتَنْكَفُوْا وَاسْتَكْبَرُوْا فَيُعَذِّبُهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ۙ

۽ پر جن حياءُ ڪيو ۽ وڏائي ڪيائون پوءِ عذاب ڪندو انهن کي عذاب دردناڪ

وَّلَا يَجِدُوْنَ لَهُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلِيًّا وَّلَا نَصِيْرًا (١٧٣)

۽ نہ لهندا پنهنجي لاءِ الله کان سواءِ ڪو دوست ۽ نہ ڪو مددگار

## تفسير

هن ڪان اڳ ۾ ٻڌايو ويو تہ حضرت عيسىٰ عليه الصلواة والسلام جا وڏا درجا ۽ بلند مقام آهن اهو روح الله، كَلِمَةُ اللّٰهِ وغيره جهڙن سهڻن لقبن جو صاحب آهي هاڻي هتي بيان ڪيو ٿو وڃي تہ اهو انهن سيني عزتن ۽ عظمتن جي هوندي الله تعالىٰ جو ٻانهو آهي ۽ "لَنْ يَّسْتَنْكِفَ الْمَسِيْحُ اَنْ يَّكُوْنَ عَبْدًا لِّلّٰهِ" يعني عيسىٰ (عليه السلام) الله تعالىٰ جي ٻانهي هجڻ کي ڪڏهن بہ عيب نہ سمجهندو. ڇو تہ انسان جي حقيقي سعادت تہ آهي ئي اها جو پنهنجي حقيقي معبود کي سڃاڻي ۽ ان جي معرفت حاصل ڪري، حضور پر نور ﷺ جن جڏهن معراج واري رات الله تعالىٰ جي قرب جي انتها کي پهتا تہ الله تعالىٰ ڪائنس پڇيو تہ "بما اشرفک يا محمد!" اي خوبين ۽ تعريف جا صاحب! توکي ڪهڙي اعزاز سان مشرف بنايان؟ پاڻ عرض ڪيائون تہ: "بنسبتي اليک بالعبودية" مون کي پنهنجي ٻانهي سڏڻ جي نسبت سان- شرف عطا فرماءِ شايد اهائي حڪمت آهي جو معراج واريءَ آيت ۾ سندن ذڪر "عبده" سان ڪيو ويو آهي (١)

(١) ضياءُ القرآن ص٤٢٨ ج١

"وَلَا الْمَلَآئِكَةُ الْمُقَرَّبُوْنَ" يعني مقرب ملائڪ بہ الله تعالىٰ جي ٻانهي هجڻ کي عيب نہ سمجهندا.

## سوال

هتي ملائڪن جي "المقربون" صفت جو ذڪر ڇو آندو ويو آهي تہ مقرب ملائڪ الله تعالىٰ جي ٻانهي هجڻ کي عيب نہ سمجهندا حالانڪ جيڪي ملائڪ انهن کان مرتبي ۾ گهٽ آهن اهي بہ الله تعالىٰ جي لاءِ ٻانهي هجڻ کي عيب نہ سمجهندا آهن.

## جواب

مقربن جو ذڪر ان جي ڪري آندو ويو آهي جو ڪافر انهن جي عبادت ڪندا هئا. الله تعالىٰ انهن کي متنبہ ڪيو تہ جن جي اوهان پوڄا ٿا ڪيوءِ جن کي اوهان معبود بنايو آهي اهي پاڻ ئي الله تعالىٰ جا ٻانها آهن تہ اوهان الله تعالىٰ جي ٻانهپ ڇو نہ ٿا ڪيو؟ (١) "وَمَنْ يَّسْتَنْكِفُ عَنْ عِبَادَتِهٖ وَيَسْتَكْبِرْ فَسَيَحْشُرُهُمْ اِلَيْهِ جَمِيْعًا" يعني جيڪو ان جي عبادت کي عيب سمجهندو ۽ تڪبر ڪندو تہ الله تعالىٰ انهن سيني کي جلد پاڻ ڏانهن اٿاري پنهنجي بارگاهہ ۾ گڏ ڪندو ۽ انهن جو انجام خراب ٿيندو. "فَاَمَّا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ" پوءِ جن سيني ايمان آڻڻ وارين شين تي ايمان آندو ۽ صالح عمل ڪيائون" فَيُوَفِّيْهِمْ اُجُوْرَهُمْ وَيَزِيْدُهُمْ مِّنْ فَضْلِهٖ" تہ اللہ‌تعالىٰ انهن کي سندن اجر ۽ ثواب پورا پورا ڏيندو ۽ پنهنجي فضل سان انهن کي وڌائي ڏيندو.

"وَاَمَّا الَّذِيْنَ اسْتَنْكَفُوْا وَاسْتَكْبَرُوْا فَيُعَذِّبُهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا" ۽ جن الله تعالىٰ جي ٻانهپ کي عيب سمجهيو ۽ تڪبر ڪيائون انهن کي دردناڪ عذاب ڪندو.

"وَلَا يَجِدُوْنَ لَهُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلِيًّا وَّلَا نَصِيْرًا" ۽ اهي پنهنجي لاءِ الله تعالىٰ کان سواءِ نہ ڪو دوست ۽ نہ ڪو مددگار لهندا.

## فائدو

هن آيت جي جملہ "فَيُوَفِّيْهِمْ اُجُوْرَهُمْ وَيَزِيْدُهُمْ مِّنْ فَضْلِهٖ" جي تفسير

(١) روح المعاني ص٣٨ جلد٢ جزءُ ٦

۾ ابن المنذر، ابن ابي حاتم، طبراني، ابن مردويه ۽ الحلية ۾ ابو نعيم، حضرت ابن مسعود رضي الله عنه کان روايت آندي آهي تہ رسول الله ﷺ جن فرمايو "وَيُوَفِّيهِمْ أُجُورَهُمْ يدخلهم الجنه ويزيدهم من فضله الشفاعه فيمن وجبت لهم النار ممن صنع اليهم المعروف فی الدنيا (١) يعني انهن کي پورا اجر ڏيندو جو انهن کي بهشت ۾ داخل ڪندو ۽ انهن کي پنهنجي فضل سان وڌائيندو جو ڪين انهن لاءِ شفاعت ڪرڻ جي موکل ڏيندو جن لاءِ جهنم جي باهہ واجب ٿي چڪي هوندي پر انهن ساڻن دنيا ۾ نيکي ڪئي هوندي.

يَآاَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَآءَكُمْ بُرْهَانٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَاَنْزَلْنَآ اِلَيْكُمْ

اي انسانو! تحقيق آيو اوهان وٽ روشن دليل اوهان جي رب وٽان ۽ لاٿوسون اوهان ڏي

نُوْرًا مُّبِيْنًا ﴿١٧٤﴾ فَاَمَّا الَّذِيْنَ آمَنُوْا بِاللّٰهِ وَاعْتَصَمُوْا بِهٖ

چٽو نور پوءِ پر جن ايمان آندو الله تي ۽ مضبوطيءَ سان ورتائون ان کي

فَسَيُدْخِلُهُمْ فِىْ رَحْمَةٍ مِّنْهُ وَفَضْلٍ وَّيَهْدِيْهِمْ اِلَيْهِ صِرَاطًا

پوءِ سگهوئي داخل ڪندو انهن کي رحمت ۾ پاڻ وٽان ۽ ڀلائيءَ ۾ ۽ ڏيکاريندو انهن کي پاڻ ڏانهن واٽ

مُّسْتَقِيْمًا ﴿١٧٥﴾

سڌي.

## تفسير

هن ڪان اڳ ۾ الله تعالىٰ جي توحيد جو ذڪر ڪندي حضرت عيسىٰ ۽

(١) روح المعاني ص٤٢ جلد٢ جزءِ٦

ان جي والده کي الہ چوڻ کان روڪيو ويو هو. هاڻي هتي حضور ﷺ جن جي سهڻين صفتن جو ذڪر ڪيو ويو آهي ۽ توحيد ڪان پوءِ رسالت جو ذڪر ڪندي ارشاد ٿيو آهي " يَا أَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَاءَكُمْ بُرْهَانٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ " اي انسانو! يقيناً اوهان وٽ اوهان جي رب وٽان برهان آيو آهي: برهان جي معنيٰ اهڙو مضبوط ۽ قوي دليل جنهن سان دعوىٰ کي اهڙو پڪو ۽ مضبوط ڪيو وڃي جو مخالف ان کي پيچي نہ سگهي ۽ هتي ان مان مراد حضور ﷺ جن آهن، جيئن ابن عساڪر سفيان الثوريءَ کان آندو آهي ۽ حضرت ابن عباس رضي الله عنهما ڪان بہ اها روايت آهي (١) ڇو تہ پاڻ الله تعالىٰ جي توحيد، ذات ۽ صفات کي اهڙي نموني سان ثابت ڪندڙ آهن جو سبحان الله "برهان" ۾ تنوين تعظيم جي آهي مقصد تہ پاڻ عظيم الشان دليل آهن سندن پيامعجزا بہ تہ تمام گهڻا ۽ ٻين نبين عليه والصلواة والسلام جي معجزن کان گهڻو زياده آهن پر سندن وجود مبارڪ ۽ پياري شخصيت خود ئي معجزو ۽ ڪيترن معجزن تي مشتمل آهي. سندن وار مبارڪ معجزو، پيشاني پاڪ معجزو، ڀرون ڀلارا معجزو، عاليشان اکيون معجزو، ڳل مبارڪ معجزو، نوراني نڪ معجزو، چمڪدار چپ معجزو، ڏيہ کي روشن ڪندڙ ڏند مبارڪ معجزو، زبان فيض ترجمان معجزو، زبان مبارڪ تي لڳل لب معجزو، نور واري نڙي معجزو امت جي بارن کي کڻڻ وارا ڪلها معجزو، سهڻو سينو معجزو،سيني ۾ اندر رب جي رازن کي ۽ ڪائنات جي علم رکڻ واري دل معجزو، ٻہ ٻہ مهينا ڪاڌي کان سواءِ رهڻ وارو پرينءَ جو پيٽ پاڪ معجزو، پاڪ ڄنگهون معجزو، آسمانن کي چمڻ جو موقعو ڏيندڙ قدم مبارڪ معجزو. المقصد تہ سندن هر ذرو ذرو معجزو آهي ان جي ڪري پاڻ برهان آهن.

مڪه مڪرمه جي اسلامي يونيورسٽي ۾ قرآني علوم جي استاد محمد علي صابوني صاحب لکيو آهي تہ "واعلم ان النبي ﷺ صورة النور الغيبى المرسل الى الاجساد (٢) يعني يقين سان ڄاڻ تہ نبي ﷺ جن ان غيبي نور جي صورت آهن جيڪو جسمن ڏانهن موڪليل آهي "وَأَنزَلْنَا إِلَيْكُمْ نُورًا مُّبِينًا" ۽ اسان اوهان ڏانهن چٽو نور نازل ڪيو آهي.ان مان قرآن پاڪ مراد آهي، جڏهن تہ حضور ﷺ جن پهريان آيا ۽ قرآن پاڪ پوءِ نازل ٿيو ان جي ڪري هتي اول برهان جي لفظ سان

(١) روح المعاني جلد٢ ص٤٢ جزءِ ٦ تفسيرمظهري ص٤٦٥ ج٢
(٢) تنويرالاذهان ص٣٩٧ ج١

سندن ذڪر ڪري پوءِ قرآن پاڪ جي نزول جو بيان آندو ويو آهي.
"فَاَمَّا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا بِاللّٰهِ وَاعۡتَصَمُوۡا بِهٖ" هن جملي ۾ مٿي ذڪر ڪيل برهان ۽ نازل ڪيل نور مبين جو مقصد بيان ڪندي ارشاد ٿيو آهي ته- جن الله تعالىٰ تي ايمان آندو ۽ ان کي مضبوطيءَ سان ورتو "فَسَيُدۡخِلُهُمۡ فِىۡ رَحۡمَةٍ مِّنۡهُ وَفَضۡلٍ" ته الله تعالىٰ انهن کي جلد پنهنجيءَ رحمت ۽ فضل ۾ داخل ڪندو ان رحمت ۽ فضل مان مراد جنتون ۽ انهن ۾ ملڻ واريون نعمتون آهن. "وَّيَهۡدِيۡهِمۡ اِلَيۡهِ صِرَاطًا مُّسۡتَقِيۡمًا" ۽ الله تعالىٰ انهن کي پاڻ ڏانهن سڌي واٽ جي هدايت ڪندو. مٿي لکيل رحمت ۽ فضل مان مراد جسماني نعمتون آهن ۽ هتي صراط مستقيم مان مراد روحاني نعمتون ۽ مهربانيون آهن.

## فائدو

"فَاَمَّا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا بِاللّٰهِ وَاعۡتَصَمُوۡا بِهٖ" مان ثابت ٿيو ته ڇوٽڪاري ۽ ڪاميابي جو مدار ايمان ۽ ان کي مضبوطيءَ سان وٺڻ تي آهي ۽ سڀني نعمتن کان وڏيڪ نعمت صراط مستقيم تي هلڻ آهي. ان تي هلڻ جي لاءِ "اِهۡدِنَا الصِّرَاطَ الۡمُسۡتَقِيۡمَ" ۾ دعا گهري وئي آهي.

يَسۡتَفۡتُوۡنَكَ ؕ قُلِ اللّٰهُ يُفۡتِيۡكُمۡ فِى الۡكَلٰلَةِ ؕ اِنِ امۡرُؤٌا هَلَكَ

فتويٰ پڇن ٿا توکان فرماءِ ته الله فتويٰ ڏئي ٿو ته اوهان کي بي اولاد جي باري ۾ جيڪڏهن ڪو مڙس مري وڃي

لَيۡسَ لَهٗ وَلَدٌ وَّلَهٗۤ اُخۡتٌ فَلَهَا نِصۡفُ مَا تَرَكَ‌ۚ وَهُوَ يَرِثُهَاۤ اِنۡ لَّمۡ

جو ناهي ان جو اولاد ۽ ان جي ڀيڻ آهي پوءِ ان جي لاءِ اڌ آهي. ان مان جيڪو ڇڏيائين ۽ اهو وارث ٿيندو ان جو جيڪڏهن

يَكُنۡ لَّهَا وَلَدٌ‌ ؕ فَاِنۡ كَانَـتَا اثۡنَتَيۡنِ فَلَهُمَا الثُّلُثٰنِ مِمَّا تَرَكَ‌ ؕ

ناهي ان جو اولاد پوءِ جيڪڏهن آهن ٻه پوءِ انهن ٻنهي لاءِ ٻه ٽهايون آهن ان مان جو ڇڏيائين

وَاِنۡ كَانُوۡۤا اِخۡوَةً رِّجَالًا وَّنِسَآءً فَلِلذَّكَرِ مِثۡلُ حَظِّ الۡاُنۡثَيَيۡنِ‌ ؕ

۽ جيڪڏهن آهن ڀائر ڀينرون مرد ۽ عورتون پوءِ مرد لاءِ ٻن زالن جي حصي برابر آهي

يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمۡ اَنۡ تَضِلُّوۡا‌ ؕ وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَىۡءٍ عَلِيۡمٌ ﴿١٧٦﴾

بيان ڪري ٿو الله اوهان جي لاءِ متان ڀلجي وڃو ۽ الله هر شيءِ کي ڄاڻندڙ آهي

# تفسير

متي بيان ٿيو تہ جن الله تي ايمان آندوءِ انکي مضبوطيءَ سان ورتو اهي الله جي رحمت ۽ فضل ۾ داخل ٿيندا هتي بيان کيو ٿو وڃي تہ اهو ايمان جو حکم صرف جيئرن سان واسطو نہ ٿو رکي پر جيڪڏهن کو مري ٿو وڃي تہ ان سان بہ انهن حکمن جو تعلق قائم آهي. ارشاد آهي "يَسْتَفْتُوْنَكَ" اوهان کان فتويٰ ٿا پڇن، اهو سوال ڪلاله (بي اولاد) جي ملکيت ورهائڻ جي باري ۾ هو جيئن "قُلِ اللّٰهُ يُفْتِيْكُمْ فِى الْكَلٰلَةِ" مان معلوم ٿي رهيو آهي. يعني اي حبيب! ﷺ اوهان انهن کي فرمايو تہ: بي اولاد جي باري ۾ الله تعالىٰ اوهان کي فتويٰ ڏي ٿو "اِنِ امْرُؤٌ هَلَكَ لَيْسَ لَهٗ وَلَدٌ وَّلَهٗٓ اُخْتٌ فَلَهَا نِصْفُ مَا تَرَكَ" يعني جيڪڏهن کو ماڻهو مري وڃي ٿو ان جو اولاد ناهي ۽ ان جي ڀيڻ آهي تہ ان کي اڌ ملکيت ايندي. هتي ڀيڻ مان مراد سڳي ڀيڻ آهي يا پئيتي ڀيڻ، ڇو تہ مائيتي ڀيڻ جو ذکر اڳ ۾ سورة النساءِ جي شروع ۾ اچي چکو آهي "وَهُوَ يَرِثُهَآ اِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّهَا وَلَدٌ" يعني جيڪڏهن اها ڀيڻ بي اولاد مري وئي تہ اهو سڳو ڀاءُ ان جي سموري ملکيت جو وارث ٿيندو، ان ۾ اهو بہ شرط آهي تہ ان مري وڃڻ واري ڀيڻ جو پيءُ ۽ ماءُ بہ جيئرا نہ هجن، اهو نکتو ڪلاله جي لفظ مان سمجهہ ۾ اچي ٿو (١) "فَاِنْ كَانَتَا اثْنَتَيْنِ فَلَهُمَا الثُّلُثٰنِ مِمَّا تَرَكَ" يعني جيڪڏهن مري وڃڻ واري بي اولاد ڀاءُ جون بہ يا ٻن کان متي ڀينرون آهن تہ انهن کي ان جي ڇڏيل ملکيت مان بہ ٽهايون ملنديون. "وَاِنْ كَانُوْٓا اِخْوَةً رِّجَالًا وَّنِسَآءً فَلِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ" ۽ جيڪڏهن ان مري ويل بي اولاد جا ڀائر ۽ ڀينرون مرد عورتون گهڻا آهن تہ مرد کي عورتن کان ٻيڻو حصو ملندو "يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اَنْ تَضِلُّوْا" يعني الله تعالىٰ اوهان جي لاءِ اهي احکام بيان ٿو کري تہ متان پنهنجين مصلحتن تي هلي گمراهہ ٿي وڃو "وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَىْءٍ عَلِيْمٌ" ۽ الله تعالىٰ هر شيءِ کي ڄاڻندڙ آهي ۽ ان ئي اوهان جي لاءِ اهو قانون نازل فرمايو آهي.

الحمد لله جو اڄ اربع جي ڏينهن مورخ ٢٥ ربيع الاول ١٤١٦هـ مطابق ٢٣ آگسٽ ١٩٩٥ع مون گنهگار جي هٿان "احسن البيان في تفسيرالقرآن" جو ٻيو جلد لکجي پورو ٿيو.

الفقير
محمد ادريس ڏاهري نقشي طاهري نقشبندي عفي عنہ

# ساٿي سونهان

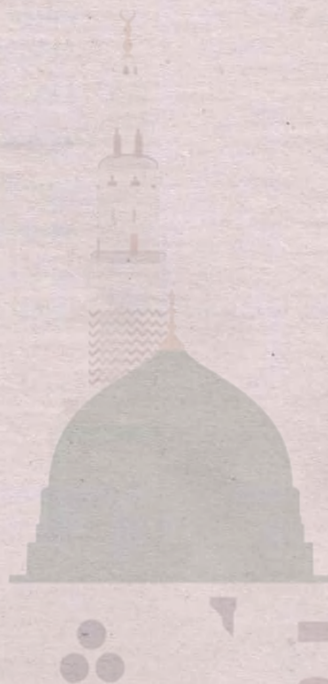
| | | |
|---|---|---|
| ١- | قرآن عظيم | كريم رب جو ڪلام |
| ٢- | تفسير ابن ڪثير | علامہ اسماعيل دمشقي |
| ٣- | تفسير ڪبير | علامہ فخرالدين رازي |
| ۴- | تفسير مظهري | علامہ ثناءالله پاني پتي |
| ۵- | تفسير الدرالمنثور | علامہ جلال الدين سيوطي |
| ٦- | تفسير فتح القدير | علامہ محمد بن علي شوڪاني |
| ٧- | تفسير الجامع لاحڪام القرآن | علامہ محمد بن احمد انصاري القرطبي |
| ٨- | تفسير الڪشاف | علامہ جارالله زمخشري |
| ٩- | تفسير نعيمي | علامہ مفتي احمد خان گجراتي |
| ١٠- | تفسير مدارڪ التنزيل | عبدالله بن احمد بن محمود نسفي |
| ١١- | تفسير جامع البيان | ابوجعفر محمد بن جرير طبري |
| ١٢- | تفسير ڪمالين شرح جلالين | نعيم الدين ديوبندي |
| ١٣- | تفسير المراغي | احمد مصطفيٰ المراغي |
| ١۴- | تفسير تنويرالاذهان | علامہ محمد علي صابوني |
| ١۵- | تفسير خازن | علي بن محمد بن ابراهيم بغدادي |
| ١٦- | تفسير الصاوي علي الجلالين | أحمد بن محمد صاوي |
| ١٧- | تفسير روح البيان | علامہ محمد اسماعيل حقي |
| ١٨- | تفسير معارف القرآن | علامہ مفتي محمد شفيع ديوبندي |
| ١٩- | تفسير زادالمسير | علامہ عبدالرحمان ابن الجوزي |
| ٢٠- | تفسير روح المعاني | علامہ شهاب الدين آلوسي بغدادي |
| ٢١- | تفسير ضياء القرآن | علامہ پير محمد ڪرم شاه الازهري |
| ٢٢- | التاريخ الصغير | علامہ محمد بن اسماعيل بخاري |
| ٢٣- | مواهب لدنيہ | علامہ احمد قسطلاني |
| ٢۴- | فيوض الحرمين | علامہ شاه ولي الله محدث دهلوي |
| ٢۵- | الحاوي للفتاويٰ | علامہ جلال الدين سيوطي |
| ٢٦- | ابوداؤد | علامہ سليمان بن اشعث سجستاني |
| ٢٧- | عون المعبود شرح ابوداود | شرف الحق عظيم آبادي |
| ٢٨- | نيل الاوطار | علامہ محمد بن علي شوڪاني |
| ٢٩- | اشعة اللمعات | علامہ شيخ عبدالحق محدث دهلوي |
| ٣٠- | مظاهر حق | مولوي قطب الدين صاحب |

| | | |
|---|---|---|
| ٣١- | مرقاة شرح مشكواة | علامہ علي قاري |
| ٣٢- | فتاوىٰ همايوني | علامہ مولانا عبدالغفوري همايوني |
| ٣٣- | طحطاوي | احمد طحطاوي حنفي |
| ٣٤- | آب حيات | علامہ قاسم نانوتوي |
| ٣٥- | شرح العقائد النسفيةً | علامہ تفتازاني |
| ٣٦- | نسيم الرياض شرح شفاءِ قاضي عياض | علامہ شهاب الدين خفاجي |
| ٣٧- | تفسير تنوير الايمان | علامہ محمد عثمان نورنگ زاده |
| ٣٨- | تحذير الناس | علامہ قاسم نانوتوي |
| ٣٩- | تفسير عثماني | علامہ شبير احمد عثماني |
| ٤٠- | تفسير ابوالسعود | محمد بن احمد عمادي |
| ٤١- | تفسير في ظلال القرآن | سيد قطب شهيد |
| ٤٢- | تفسير خزائن العرفان | علامہ نعيم الدين مرادآبادي |
| ٤٣- | مشكواة شريف | علامہ ولي الدين الخطيب |
| ٤٤- | فضائل القرآن | علامہ زكريا كاندلوي |
| ٤٥- | تفسير المنار | علامہ رشيد رضا |
| ٤٦- | تفسير البيضاوي | عبدالله بن عمر بيضاوي |
| ٤٧- | الفتح السماوي في تخريج احاديث البيضاوي | احمد مجتبىٰ سلفي |
| ٤٨- | تفسير جمل | سليمان بن عمر شافعي |
| ٤٩- | تفسير جلالين | علامہ جلال الدين محلي ۽ جلال الدين سيوطي |
| ٥٠- | تفسير البحر المحيط | علامہ ابوحيان اندلسي |
| ٥١- | المفردات | امام راغب اصفهاني |
| ٥٢- | كشف الاسرار | ايراني اڳواڻ خميني |
| ٥٣- | التحفةً المرضيةً | محمد ادريس الداهري |
| ٥٤- | الكاشف عن حقائق السنن | شرف الدين حسين بن محمد طيبي |
| ٥٥- | نور العرفان حاشيةً كنز الايمان | مفتي احمد يارخان گجراتي |
| ٥٦- | مسند امام احمد بن حنبل عليه الرحمةً | |
| ٥٧- | خصائص كبرىٰ | علامہ سيوطي |
| ٥٨- | بردة المديح مع شرح احسن التشريح | امام شرف الدين بوصيري |
| ٥٩- | تفسير القاسمي | علامہ جمال الدين شامي |
| ٦٠- | اليواقيت والجواهر | علامہ شعراني |
| ٦١- | التحفةً المستطابةً | علامہ محمد يوسف نبهاني |
| ٦٢- | شرح العقيدة الطحاويةً | ابن ابي العز حنفي |
| ٦٣- | رد المحتار | علامہ ابن عابدين شامي |
| ٦٤- | البدايةً والنهايةً | علامہ ابوالفداءِ اسماعيل دمشقي |

| | |
|---|---|
| ٦٥- جواهر البحار | علامہ محمد یوسف نبهاني |
| ٦٦- احكام القرآن | ابوبكر احمد بن علي جصاص |
| ٦٧- تنوير المقياس | سيدنا ابن عباس رضي الله عنهما |
| ٦٨- تاج العروس | محمد مرتضیٰ زبيدي |
| ٦٩- نزول عيسیٰ ابن مريم عليه وعلیٰ امه السلام | علامہ جلال الدين سيوطي |
| ٧٠- صحيح مسلم شريف | مسلم بن حجاج قشيري |
| ٧١- حاشيه درياباذي | عبدالماجد درياباذي |
| ٧٢- تفسير حقاني | عبدالحق حقاني |
| ٧٣- بيان القرآن | اشرف علي ثانوي |
| ٧٤- النهايه | علامہ ابن الاثير |
| ٧٥- صحيح بخاري | محمد بن اسماعيل بخاري |
| ٧٦- الترغيب والترهيب | امام منذري |
| ٧٧- التفسيرات الاحمديه | ملا احمد جيون دهلوي |
| ٧٨- التحذير من المغالات في المهور | عبدالعزيز بن باز سعودي |
| ٧٩- تفسير حسيني فارسي | كمال الدين حسين الواعظ |
| ٨٠- هدايه | برهان الدين علي بن ابي بكر مرغيناني |
| ٨١- اصول كافي | يعقوب كليني شيعي |
| ٨٢- تفسير وبيان كلمات القرآن | حسنين محمد محلوف |
| ٨٣- تفسير الحسن البصري | تحقيق: ڈاكٹر عبدالرحيم مطبوعہ مكه مكرمه |
| ٨٤- كتاب الكبائر | علامہ ذهبي |
| ٨٥- صفوة التفاسير | علامہ محمد علي صابوني |
| ٨٦- ترجمان القرآن | ابوالكلام آزاد |
| ٨٧- الجواب الكافي | ابن قيم الجوزي |
| ٨٨- تقويه الايمان | اسماعيل دهلوي |
| ٨٩- شاه جو رسالو | سيد عبداللطيف ڀٽائي عليه الرحمة |
| ٩٠- قصيدة النعمان مع شرح منحة المنان | سيدنا امام ابوحنيفه عليه الرحمة |






www.maktabah.org

